

श्रीः भूमिका

विफलान्यन्यशास्त्राणि विवादस्तेषु केवलम् ।
प्रत्यक्ष ज्योतिष शास्त्र चन्द्राकौ यत्र साक्षिणी ॥

सूर्य, चन्द्र, तारा आदि ज्योतिषिण्डो के विज्ञान का प्रदर्शक होने से इस शास्त्र का नाम 'ज्योतिष' शास्त्र है। सूर्य एव भौमादि ग्रह तथा चन्द्र आदि उपग्रहों की गति, ग्रहण आदि का ज्ञान एव दिन, मास आदि समय का ज्ञान इसी के द्वारा होने से इसकी सार्थकता है (यद्यपि चन्द्रमा को फलित एव गणित ज्योतिष में 'ग्रह' ही कहा गया है 'उपग्रह' नहीं, तथापि आधुनिक विज्ञान द्वारा यह सिद्ध है कि-चन्द्रमा पृथ्वी का 'उपग्रह' है) तथा अमावास्या पूर्णिमा आदि यज्ञ के समय का निर्णायक होने से वैदिक धर्म का अंग है। मनुष्यों के शुभाशुभ का सूचक होने से तो इस शास्त्र की विशेष सार्थकता है तथा मुहूर्तों का निर्णायक होने से भी। यह ज्योतिष शास्त्र 'सिद्धान्त, संहिता, होरा' इन तीन विभागों में विभक्त है। गणित भाग के प्रदर्शक 'सूर्य सिद्धान्त, मिद्धान्तशिरोमणि' आदि ग्रन्थ सिद्धान्त विषय के जापक हैं, तथा ग्रह आदि के लक्षण, स्वरूप आदि प्रकीर्ण विषयों के संग्रह ग्रन्थ 'वाराही संहिता' आदि संहिता ग्रन्थ हैं, एव मनुष्यों के शुभाशुभ का परिचायक 'होरा' भाग है, यह 'वृहत्पाराशर होराशास्त्र' ग्रन्थ इस विषय का सर्वग्रन्थ है यह विदितप्राय है। 'अहोरात्र' शब्द जो कि 'दिनरात्रि' का अर्थ वाचक है, इसी के आदि और अन्त के लोप से 'होरा' शब्द की उत्पत्ति हुई है, यथा- 'होरेत्यहोरात्रविकल्पमेकं बाह्यन्ति पूर्वापर-वर्ण लोपात्।' इस शास्त्र के प्रवर्तक सूर्य आदि १८ ऋषि सुने जाते हैं। यथा-

सूर्य, पितामहो ध्यासो वसिष्ठोऽत्रि पराशरः ।

कश्यपो नारदो गणौ मरीचिर्मनुरगिराः ॥

लोमश, पौलिशश्चैव स्यवनो यवनो मनुः ।

शौनकोऽष्टावशश्चैते ज्योतिष शास्त्र प्रवर्तकाः ॥

इस शास्त्र की प्रवर्तन परम्परा भी प्राचीन काल से इस प्रकार सुनी जाती है—

'ज्योतिष शास्त्र' समग्र प्रथमपुरुषत्वं स्वर्णगर्भाद्विदित्वा

पूर्वं ब्रह्मा, ततोऽयं निखिलमुनिगणं प्रार्थनाद्यन्वकारः ।

तच्चैवं सुप्रसन्नं मृदुपदनिकरैर्गुह्यमध्यात्मरूपम्

शब्दद्विभक्त्यैव प्रकाशं प्रह्वचरितविदां निर्मितं ज्ञानचक्षुः ॥

और वर्तमान कलियुगमें तो सर्वमान्य फलानुबन्धि होने में पाराशर्यसंहिता ही सर्वतः प्रचलित है।

कृते तु मानवं शास्त्रं त्रेतायां बादरायणिः ।

द्वापरे शक्यलिखितः कर्त्तौ पाराशर्यो स्मृता ॥

इस कथन से स्पष्ट बोधित होता है कि वर्तमान समय में यह 'पाराशर होराशास्त्र' ही फजादेश के लिए सर्वोपकारी शास्त्र है इसका प्रकाशन प्रायः सौ वर्ष से श्रीसेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी मालिक-श्रीवेकेश्वर प्रेस द्वारा होता आया है।

इधर कुछ वर्ष से इस ग्रन्थ का १ संस्करण भापा टीका युक्त काशी से भी प्रकाशित होता है उसके विषय में यहाँ दा शब्द लिखना अप्रासंगिक नहीं होगा। यद्यपि मेरा अभिप्राय किसी दुर्भावनामूलक नहीं है मेरा उन टीकाकार महानुभाव से कोई परिचय भी नहीं है तथापि उनकी प्रसार प्रतिभा की प्रशंसा बौन नहीं करेगा, किन्तु बम्बई की प्रकाशित पुस्तक में एक स्थान पर पूर्व प्रकाशित पृ० १३ में प्राणपदसाधन शीर्षक में कुछ भ्रामक पाठ जो कि प्रेस के भूतो की कृपा से असली पाठ छूट कर इधर उधर का छप गया था आपने उसको लेकर तिल का ताड़ बना डाला वहाँ का उद्धरण देकर यहाँ तब लिखने में भी सकोच नहीं किया कि-दृष्टशोधन नामकी कोई वस्तु ही नहीं है आदि २। इस पर भी सन्तोष न हुआ तो 'भूमिका' का भी कुछ भाग डगो बात से भर दिया अस्तु वे महामहिमशाली हैं उनको सब शोभा देता है परन्तु इस बार वे दृष्टशोधन देखें जो कि, अत्यन्त गवेषणा से प्राप्त करके समुक्त किया गया है और इसी दृष्टशोधन का विशेषविस्तार ज्योतिस्तत्त्व आदि बृहद् ग्रन्थों में देखें कि यह वस्तु होराशास्त्र में है या नहीं। परन्तु वास्तव में जब मनुष्य दूसरे के दूषण देखने में तल्लीन होता है तब 'आत्मनो वित्त्वमात्राणि पश्यन्नि न पश्यति' यहाँ हमें तत्सम नहीं होना है तथापि पाठकों को मशय न हो इस लिए काशी की प्रकाशित पुस्तक के कुछ भ्रामक स्थलों का दिग्दर्शन कराते हैं।

१-अन्तर्दशा (विशोत्तरी) प्रकरण में सूर्यान्तर में बुध को त्रिकोण या ६।८ आदि म्यानों में तथा शुक्र को भी ६।८ त्रिकोण आदि स्थान में होता और उनका फल कहा गया है इसी प्रकार बुधान्तर में सूर्य तथा शुक्र एवं शुक्रान्तर में बुध तथा सूर्य का उपर्युक्त म्यानों में होना और उनका शुभाशुभफल भी उन्होंने लिखा है और भूमिका में उन्होंने यह भी लिखा है कि-बहुत वर्षों तक इसको जुड़ बगने में व्यतीत विये एवं अन्य भी महान् २ विद्वानों द्वारा संशोधित कराया गया है तो भी यह अत्यन्त मोटी भून पैम रह गई? क्योंकि-सूर्यमण्डल के अति समीप बुध का परिभ्रमण मार्ग है और बुध के पश्चात् शुक्र का, अब सूर्य में बुध २८ अंश और शुक्र ४८ अंश में अधिक दूर हो ही नहीं सकते तब सूर्य, बुध और शुक्र के परस्पर उपर्युक्त म्यानों में हो ही नहीं सकते और यह भी समझ लेना चाहिए कि-बुध और शुक्र भी परस्पर ७५ अंश में अधिक दूर नहीं हो सकते।

२-पृ० १८२ में जो विषय है, बह बम्बई की प्रकाशित पुस्तक के गद्यभाग का साराण मात्र है।

३-पाराशर मत में चन्द्रमा को मारकता मान्य नहीं है, तो भी पृ० २०२ में मिथुन लग्न में मारक कहा है।

४-पृ० ६५३ में प्रश्नोत्तर में प्रतिभास १ लग्न ही कयनानुसार सभ्य है।

ये केवल दिग्दर्शन मात्र है, मनुष्यसे भूल होना असंभव नहीं कहा जा सकता, फिर किसी एक बात को लेकर इतना बतगड नहीं बनाना चाहिए, प्रत्युत उसका अन्वेषण करके समाधान करना चाहिए। प्रथम भूमिका में तो आप लिखते हैं कि - श्री ५० अमुकजी के पास से दक्षिणा देकर सकल प्राप्त की और अन्त में कुछ और ही लिखते हैं कि - इधर उधर से खण्डश प्राप्त करके और उसका जोड़ तोड़ करके निर्माण किया, सैर जो भी हो प्रयत्न स्तुत्य है और सराहनीय है, श्रीमानजी कुछ स्पष्टोक्ति के लिए क्षमा करेंगे।

जन्येष्ट काल के शोधन के श्लोक हमबो, ज्योति शास्त्र प्रेमी श्रीकुमारसाहब तुषारनाथ मिश्र, सुपुत्र श्रीराजा कन्हैयालालजी बहादुर के प्राचीन ग्रन्थ सग्रहालय में सुरक्षित 'वृ०पा०हो०शा०' की अति प्राचीन प्रति में मिले, केवल मूल श्लोक थे हमन भाषा टीका तथा उदाहरण सहित इस ग्रन्थ में दयावत् सयुक्त किये हैं। इसके लिए हम कुमार साहब के आभारी हैं। बम्बई में प्रकाशित पुस्तक से अधिक विस्तृत कोई प्रति देखने में नहीं आई। काशी में प्रकाशित पुस्तक में भी आद्यन्त श्लोक स० ४००१ है जब कि-मूलशान्ति आदि अनेक प्रकीर्णक जो कि होराशास्त्र का विषय न होकर संहिता का विषय है, उनका सग्रह किया गया है। क्योंकि—

‘ग्रहाणान्त्रैव भावाना बलावत्-विवेकत ।

दशादिना फल यत्र होराशास्त्रं तदुच्यते ॥’

यद्यपि उन्होंने व्यर्थ का सग्रह करके ९७ अध्याय कर दी है तथापि बम्बई की प्रकाशित पुस्तक में ५७८१ श्लोक है, जो कि-काशी की प्रकाशित से १७८१ श्लोक अधिक है, प्रति पाद्य विषय का सर्वोच्च और विस्तार तथा उत्तरखण्ड में अनावश्यक सग्रह प्रायः दोनों में ही है, विन्तु काशी की में अविषय का सग्रह और बम्बई की पुस्तक में शास्त्रीय विषय का सग्रह है इस होराशास्त्र के ही कारण भारत विचार को तथा गुलिकादि विचार को लेकर जैमिनीय सूत्र की रचना हुई अस्तु यह स्वतन्त्र विवेचना का विषय है। केवल कारण मारक विचार को तथा धनयोगों को लेकर लघु और मध्य पाराशरी का निर्माण हुआ। हमबो बम्बई की प्रकाशित पुस्तक में अधिक भाग अब तक नहीं प्राप्त हुआ है, यदि किसी के पास हो तो देने को कृपा करेंगे।

एक विषय विवेचनीय और है, वह है जन्मवालीन मूर्ध के राश्यादि के समान राश्यादि के समय वर्ष गणना की परिपाटी जिस सबलना को लेकर 'ताजिक' जी 'वक्छी' आदि ग्रन्थ बने, 'इसका विचार होराशास्त्र में नहीं है' यह कहने में भी चर सबलता है, यद्यपि 'वर्षवर्षा' 'मासवर्षा' में दिग्दर्शन मात्र है तथापि प्रधान तथा जन्मवात को लेकर ही विचार किया गया है। इन विषय का तात्त्विक गूढ़ विचार साम्प्रतिक पाश्चात्य ज्योतिर्विदों ने दृष्टि योगों (Aspects) के माध्यम से बहुत अच्छा किया है उस विषय के जिज्ञासुओं की अभिलाषापूर्ति के निमित्त अंग्रेजी में ही मक्षिन् (उदाहरण महिन) प्रकार आगे दे रहे हैं -

English Method of Casting Horoscope (with delineations to Hindu Method)

Horoscope-is the position of the planets and signs of the zodiac in relation to a particular place at a particular time. It foretells, after being finally cast, the regular and irregular movements of planets and their good and bad effects on human beings and earth.

In order to prepare the said map, the following should be born in mind -

| Planets- | | |
|--------------------|-------------|---------|
| English Names | Hindi Names | Symbols |
| Sun | सूर्य | ☉ |
| Moon | चन्द्रमा | ☾ |
| Mars | मंगल | ♂ |
| Mercury | बुध | ♀ |
| Jupiter | बृहस्पति | ♃ |
| Venus | शुक्र | ♀ |
| Saturn | शनि | ♄ |
| Dragon's Head | राहु | ♁ |
| Dragon's Tail | केतु | ♂ |
| Uranus or Hershell | इन्द्र | ♅ or ♁ |
| Neptune | बरन | ♆ |
| Pluto | वज्र | ♇ |

The last three planets are newly invented, not given in Hora Shastra

Signs

| English Names | Hindi Names | Symbols |
|---------------|-------------|---------|
| Aries | मेघ | ♈ |
| Taurus | वृष | ♉ |
| Gemini | मिथुन | ♊ |
| Cancer | कर्क | ♋ |
| Leo | सिंह | ♌ |
| Virgo | कन्या | ♍ |
| Libra | तुला | ♎ |
| Scorpio | वृश्चिक | ♏ |
| Sagittarius | धनु | ♐ |
| Capricorn | मकर | ♑ |
| Aquarius | कुम्भ | ♒ |
| Pisces | मीन | ♓ |

Aspects

| English Names | Hindi Names | Degrees | Symbols |
|------------------------------|---------------------------|---------|---------|
| Semi- Sextile | द्विर्दश योग | 30 | ♎ |
| Semi Square or Semi-Quadrate | अविन्दयोग | 45 | ♎ |
| Sextile | त्रिदश योग | 60 | ♎ |
| Square or Quadrate | चन्द्र योग | 90 | ♎ |
| Trine | त्रिजोष योग | 120 | ♎ |
| Sesqui-Quadrate | साधविन्दयोग | 135 | ♎ |
| Injunct or Quincunx | पचादश योग | 150 | ♎ or ♎ |
| Opposition | प्रतियोग या रात्मन्दर योग | 180 | ♎ |
| Conjunction | युति | 0 | ♎ |
| Parallel | जातिमाप्य | --- | P |
| Mutual Disposition | पारस्पररति मापन | --- | M.D. |

Aspects are nothing but only the inter-relation of positions and sights of the planets in 12 houses. This has more elaborately been dealt in 'Drishiti Adhyaya' of Parasara Shastra in Hindi. These aspects are only few of them.

Method of casting—Western astronomers adopt the moving zodiac (Sayan system), while the Hindu astronomers go by the fixed zodiac (Nirayan system) for the calculation of the positions of the planets. But the Hindu positions of the planets may be obtained from the Western positions by subtracting the Ayanamsa from the western positions. Similarly, the western positions may be found out by adding Ayanamsa to the Hindu positions of the planets. Here Nirayan method will be taken into consideration. The ephemeris by Mr. N. C. Lahiri, M. A., which is being published in Calcutta, is preferable for the calculation. This ephemeris (Indian Ephemeris) is calculated for the central meridian of India, 5 h 30 m or 82½° E Long.

It will be seen in the ephemeris of any particular year that the sidereal time is given just opposite to the dates. The S. T. of the birth date is to be taken for the calculation and minus or plus in it the number of hours back or advance will bring the exact S. T. at birth. It should not be forgotten that the S. T. is given at 12 h Noon.

After that, from the Ascendant Chart (given in the last pages) take the S. T. at birth from the S. T. Column and see the opposite end column of Ascendant and take the longitude of the ascending sign and prepare the map of Heavens posting the ascending sign in the map. From this chart too, the longitude of the tenth house is ascertained from the column provided for from the same S. T. After preparing Ascendant and the tenth house, the other remaining houses might easily be found out by Hindu method given in Hindi Translation. Thus with the longitude of the ascendant or lagna, the longitude of the different houses are ascertained easily.

In Western method, the map is prepared with the longitude of the houses and no other map (Bhava Chakra) is required. Westerners ascertain from the Tables of Houses with the S. T. at birth, the longitude of the sign in the different six houses (Ascendant 2nd 3rd,

10th, 11th and 12th) The other six are very easy to find out by adding 180 degrees to every realised longitude of the signs, or in other words, the opposite signs of those with the same degrees are the other six houses' longitudes

Longitude of the planets

In the ephemeris, the longitude of the planets are calculated at 5h 30m a.m. I S T. This has to be corrected for the time before or after 5h 30m a.m. I S T at which the birth took place. For the calculation, the daily motion of every planet is to be taken which is given in the middle pages of the ephemeris. The motion of the planets should be divided by 24 to get the motion per hour, and this after being multiplied by the number of hours before or after 5h 30m a.m. I S T at birth. The result being added or subtracted to or from the positions at 5h 30m I S T becomes the planets' positions at the time of birth. By the use of Diurnal Logarithms, (given in the last pages of the ephemeris) the longitude of the planets might be calculated easily. This use reduces the work of elaborate calculations. The method of calculations is- Add the logarithm of the planets' motion to the logarithm of the time (before or after 5h 30m a.m. I S T) and get the logarithm of the motion for that time, and this being applied to the longitude of the planet at 5h 30m a.m. I S T will give the true place for the hour and minute required.

Dasha Period or Timing Events

In the middle pages of the ephemeris, the Balance of Vimsottari Dasha Chart is given. From this Chart, the balance of Dasha for the particular planet concerned can easily be found out at a glance with the longitude of the moon. Take the degrees and minutes at birth and see opposite to that in the column of the sign concerned (the sign of the moon) and the balance of Dasha in years, months and days is ascertained. Add this balance to the birth date, month and year, the result is the ending point of the balance of Dasha and the starting point of the next coming Dasha period. The other periods and sub-periods can be found out by adding the different days, months and years provided for the different planets. This will be clear from the example which is given at the end. The Hindu method can be understood from the Hindi translation.

Westerners follow the "Directional" system for the timing events. They adopt the rule of "One day for one year". That is to say, they measure one day for one year and the predictions for a day is the predictions for the year. In this way the following formula is to be taken into considerations -

One month is equal to two hours

One week is equal to thirty minutes

One day is equal to four minutes

Six hours is equal to one minute.

From this, weekly and even hourly predictions might be made. But this is possible only if "Progressed Horoscope" is made for each year. Thus the system is progressed direction. Next to progressed direction the influence of transits is to be considered. Direction indicate the general nature of the period and predict the nature and source of good and bad effects in life. Transits define the exact time at which these predictions will come into play. This method is found to be purely imaginary and fictitious and has not been giving such astonishing results as the Indian method is giving. If the exact calculations on correct birth time are made no doubt, the most astonishing and wonderful results can be had from this Hindu method. Thus it can be said that the Hindu method positively score over the Western method.

Example

Baby born on the 13th August, 1957 Tuesday at 9h 10m a.m.
 1 S.T. in Calcutta, the Long 88 deg 24 ms E and Lat 22 deg 34 ms N

Now, the 1 S.T. is 9h 10m a.m.

Calcutta Time is 9h 33m

Cal Mean Time is 9h 25m

12h Noon - 9h 25m a.m. equal to 2h 32m difference

Now, again S.T. for 13th August, 1957 is 9h 26m 35s

- minus the number of hours back

from Noon up to birth 2h 32m 0s

S.T. at birth 6h 54m 35s

With this S T at birth the longitude of the Ascendant and the tenth house from the ascendant chart in the ephemeris comes as under -

| | S | Deg | Ms | Sec |
|-------------|---|-----|----|-----|
| Ascendant | 6 | 16 | 17 | 19 |
| Tenth House | 3 | 14 | 8 | 25 |

Taking this Ascendant the map is to be erected as follows

| | | | |
|--------|-----------|---------------|--------|
| | ♈ | | ♐ |
| ☾ ☿ | R A S H I | | ☿ ☼ |
| | | | ♀ ♂ |
| | ♊ | Ascend ♋ ♀ | ♈ |

Longitude of Planets

| Planets | Signs | Degrees | Minutes | Seconds |
|---------------|-------|---------|---------|---------|
| Sun | 4 | 23 | 28 | 18 |
| Moon | 10 | 26 | 30 | 33 |
| Mars | 4 | 27 | 45 | 38 |
| Mercury | 4 | 21 | 34 | 45 |
| Jupiter | 5 | 13 | 27 | 36 |
| Venus | 6 | 1 | 58 | 34 |
| Saturn | 7 | 15 | 5 | 12 |
| Dragon s Head | 6 | 20 | 5 | 15 |
| Dragon s Tail | 0 | 20 | 5 | 15 |
| Uranus | 10 | 24 | 11 | 20 |
| Neptune | 3 | 24 | 45 | 15 |
| Pluto | 2 | 18 | 36 | 11 |

Longitude of Houses

| Houses | Signs | Degrees | Minutes | Seconds |
|--------|-------|---------|---------|---------|
| 1st | 6 | 16 | 17 | 19 |
| 2nd | 7 | 15 | 34 | 21 |
| 3rd | 8 | 14 | 51 | 23 |
| 4th | 9 | 14 | 8 | 25 |
| 5th | 10 | 14 | 51 | 23 |
| 6th | 11 | 15 | 34 | 21 |
| 7th | 0 | 16 | 17 | 19 |
| 8th | 1 | 15 | 34 | 21 |
| 9th | 2 | 14 | 51 | 23 |
| 10th | 3 | 14 | 8 | 25 |
| 11th | 4 | 14 | 51 | 23 |
| 12th | 5 | 15 | 34 | 21 |

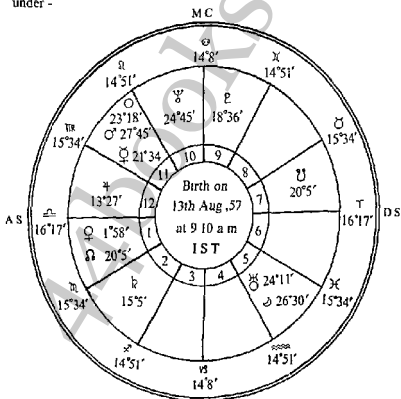
| | | | |
|---|-------|--------|----|
| 6 | u | | 2 |
| 7 | 7 | 8 | 9 |
| 2 | HOUSE | | 10 |
| 5 | | | 11 |
| 4 | | Ascend | 12 |
| 3 | 2 | Q R | 1 |

Dasha Period -

| | |
|------------|---------------------------|
| 13-8-1957 | Date Of birth |
| 12-2- 8 | Balance of Jupiter Period |
| 25-10-1965 | |
| 19 | Period of Saturn |
| 25-10-1984 | |
| 17 | Period of Mercury |
| 25-10-2001 | |
| 7 | Period of Dragon's Tail |
| 25-10-2008 | |

Sub-periods are also calculated in this way

The same thing can be shown in Western position as under -



Some of the aspects calculated approximately:-

| | | |
|-----------|----------|---------|
| U Δ ♀:♂:♂ | ♀ P, ♂:♂ | ♂ P ♂:♀ |
| U Ω ♄ | ♀ ✕ Ω | ♂ ✕ ♀ |
| U ♀ Ω | ♀ Δ ♂:♂ | ♂ Δ Ω |
| P ✕ ♀:♂:♂ | ♂ P ♂:♀ | ♂ Δ ♂:♂ |
| P Δ Ω | ♂ ✕ Ω | ♀ ✕ ♄ |
| ♀ ✕ ♀:♂:♂ | ♂ Δ ♂ | ♀ Δ ♂:♂ |
| ♀ Δ ♄ | | ♀ Δ ♄ |
| ♀ Δ ♄ | | ♀ Δ ♄ |

The predictions according to the Hindu method (Dasha system) have been given in the Hindi Translation. According to the Western method the followings are the rules which should be born in mind before making predictions:-

- 1 Summary of Houses dealing with matters
- 2 Good and bad aspects

1. Summary of the Houses dealing with matters:-

First house life, health, character, personality, temperament

Second house wealth and property, death also in number one

Third house valour, neighbour and journey, mental condition

Fourth house pleasure, mother too, inheritance and family

Fifth house children, love matter, contemplation and pleasure

Sixth house enemy, servants, aunts, uncle, death, indication

Seventh house wife, partner, law, death also in number two

Eighth house death in number three, mysticism, partner's death

Ninth house fate and Voyages,
 religion, science matter too
 Tenth house honours, professions,
 employment and morality
 Eleventh house profits, wishes too,
 friends and acquaintances
 Twelfth house expenditure, death,
 confinement, aunt, uncle too

2. Good and bad aspects:-

Good aspects -

- (i) Sextile 60 deg \times
- (ii) Semi-sextile 30 deg \sphericalangle
- (iii) Trine 120 deg Δ

Bad aspects -

- (i) Opposition 180 deg \oslash
- (ii) Sesqui-Quadrate 135 deg \square
- (iii) Square 90 deg \square
- (iv) Semi-square 45 deg \angle
- (v) Quincunx 150 deg ∇

Parallel, conjunction and mutual disposition are neither good nor bad, as these are only positions and not aspects

Now, if the aspects are good good results concerning those houses and if bad, ill results are account for

For timing events, the transits aspects are given in the ephemeris on which the comparison to the progressed horoscope's aspects, the predictions might be given following the formula "one day for one year" which has been clarified before.

By- Pt Kamakhya Prasad Sharma, B Com ,
 Jyotirbhushan

Son of Sri Pt Tarachand Shastri, Jyotishacharya

तथा यह भी सूचित कर देते हैं कि-इस ग्रन्थ में अनेक स्थान पर पुराने ही उदाहरण रख दिये गये हैं, वे इस लिए कि-वे स्वयं प्रायः अनुपयुक्त और अन्वहारिक हैं, किन्तु जिनका व्यवहार चालू है वहां नवीन उदाहरण ही रखे गये हैं।

अन्त मे एक स्थल विवेचनीय और रह जाता है, वह है शनि की महादशा के शुकान्तर मे पदखण्ड-“गुरुचारवशाद् भाग्यं सौख्यं च धनसम्पदः ॥ शनिचारान्मनुष्योऽसौ योगमाप्नोत्यसंशयम् ॥” अध्याय ३८ श्लो० २७/२८ इसका अर्थ काशी की प्रकाशित पुस्तक मे यह किया है-‘उस समय वृहस्पति अनुकूल हो तो भाग्योदय सम्पत्ति की वृद्धि, शनिगोचर से अनुकूल हो तो राजयोग ।’ पृष्ठ ४४५ इसके अर्थ करने मे ‘चार’ का अर्थ ‘अनुकूल’ किस आधार पर किया सो तो वे ही जाने, किन्तु यदि वे थोड़ा विचार करते तो और अच्छा होता। यह विषय असल मे ‘देवकेरलम्’ तथा नाडी ग्रन्थो का है। चन्द्रकलानाडी मे सूर्यादि ग्रहचार का फल कहते हुए उपर्युक्त श्लोक आया है, यह ग्रन्थ मद्रास सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा एक बार प्रकाशित भी हुआ था, उसका विषय अति गहन एवं प्रत्यक्ष फल प्रदर्शक तथा मननीय है, शुभाशुभ फलके घटित होने का समय जानने की सरल सुस्पष्ट रीति है। पाठको के ध्यानार्थ मारूप मे यहाँ लिखते है। जन्म काल के भावस्पष्ट तथा ग्रह स्पष्ट करके चरकारक स्थापित करे, अर्थात् सर्वाधिक अश वाला आत्मकारक, उससे न्यून अश वाला ‘अमात्यकारक’ है उससे कम अशवाला भ्रातृकारक आदि कारक अध्यायोक्त रीति से लिखे और मालिनी-मुलिक लघु भी लिखे नीचे उनकी राशि त्याग कर अशादि लिखे, अब यह चक्र तैयार है, इसमे गुरु का चार=भ्रमण तथा शनि का चार=भ्रमण देखना चाहिए। अर्थात् गुरु और शनि जिस जिस कारक के अशादि पर से जिस जिस मास और तिथ्यादि को संचार करेगा, उस समय उपर्युक्त श्लोकोक्त फल होगा, इस विषय मे विशेष देखना हो तो नाडी ग्रन्थो मे देखना चाहिए, हमने केवल दिग्दर्शन मात्र कर दिया है। वास्तव मे उपर्युक्त श्लोक खण्ड कित्ती ने नोटरूप से अपनी पुस्तक मे लिखा होगा और कालान्तर मे सम्मिलित हो गया, नहीं तो ९५ ९ = ८१ अन्तरो मे केवल मात्र शनिदशा के शुकान्तर मे ही ये ग्रह फल देने आये तथा अन्य दशा और अन्तरो मे कहीं भी दर्शन देने नहीं गये। अन्त मे एक बात और कह कर इस भूमिका को समाप्त करते है। इस ग्रन्थ मे ‘लोभशसंहिता’ का एक अध्याय ‘क्षेपक’ रूप से पूर्वखण्ड मे उसका वास्तविक रहस्य स्पष्ट लिख कर रखा दिया है, उसके रहस्य प्रकाशन मे हमारे खेही मित्र ज्योतिर्विन् श्री प० चिरञ्जीवलालजी ने सहायता की है उसके लिये वे धन्यवाद के पात्र है।

शेष मे विद्वद्बरो से यही कहना है कि-इसके अनुवाद मे जो भूल या त्रुटि रही हो उसे सुधार ले और हमें सूचित करे ताकि अगले संस्करण मे सुधार किया जा सके।

इति

ज्योतिर्विन् कृपाभिलाषी

ताराचन्द्र शास्त्री,

ज्योतिषाचार्य

सलकिया (हावड़ा)

दीपावली

स० २०१८ वि०

बृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखंडसारांशस्थ- विषयानुक्रमणिका

| प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० |
|--|-------|---------------------------------|-------|
| प्रथमोऽध्यायः १ | | प्राणपदस्योदाहरणम् | १७ |
| स्वतृप्तमगसाचरणम् | १ | इष्टशोधनम् | १८ |
| मैत्रेयकृतपराशरस्तुतिपूर्वकज्योतिः शास्त्र | | इष्टशोधनोदाहरणम् | २० |
| सारप्रदम् | | तृतीयोऽध्यायः ३ | |
| पराशरकृतमगसाचरणम् | | मेपादिराशिस्वरूपम् | २२ |
| श्याग्रधिवासी | | नियेकशोधनम् | २४ |
| श्याग्रधिकारी | | अयनाशा | २५ |
| शास्त्रावतीर्ण | २ | फलभाजानम् | २६ |
| द्वितीयोऽध्यायः २ | | सकोदयानुसारेण वा स्वदेशानुसारेण | |
| जन्ममुण्डलीस्वरूपम् | | वा लग्नसाधनम् | |
| मूर्धादिग्रहाणां स्वरूपम् | | नतोत्तसाधनम् | |
| पञ्चागस्थितग्रहेषु धातनम् | ८ | चतुर्थदशमसाधनम् | २७ |
| ग्रहाणां तात्त्विकविवरणम् | १ | भावगणितसाधनम् | " |
| भयातभभोगसाधनम् | ९ | श्रीस्यवालाद्व्यष्टेलशसाधनम् | " |
| चन्द्रस्वाटीकरणम् | " | सारणीयवैशद्योक्त | २८ |
| उष्मन्तीचग्रहा | ११ | लग्नपदम् | " |
| ग्रहाणां मूलनिकोपसाधनम् | १ | भावपत्रम् | २९ |
| मूर्धादिग्रहाणां मित्रादिभेदकथनम् | १२ | भावपत्रचक्रम् | ३० |
| मैत्रोचक्राणि | १३ | मेपादिनामसज्ञा | ३२ |
| अस्योदाहरणम् | " | मेपादिस्वाभिन | ३४ |
| शुभाशुभफलचक्रम् | १४ | पुनर्मोपादिस्वामिन | " |
| ग्रहाणां बलाभि | १५ | गौडशर्वाभिनमसज्ञा | ३५ |
| धूम्राद्यप्रकाशग्रहस्पष्टीकरणम् | १५ | होरासाधनम् | " |
| अस्योदाहरणम् | " | अस्योदाहरणम् | ३५ |
| धूमादिशेषचक्रम् | " | होराचक्रम् | ३५ |
| धूमादिस्पष्टचक्रम् | " | द्रेक्काणसाधनम् | ३६ |
| किञ्चित्कलपितार | " | अस्योदाहरणम् | " |
| शुक्लसाधनम् | १६ | द्रेक्काणचक्रम् | " |
| गुलिकोदाहरणम् | १ | चतुर्थांश | ३६ |
| गुलिकाधूमाचक्रम् | १७ | अस्योदाहरणम् | " |
| प्राणपदसाधनम् | " | चतुर्थांशचक्रम् | ३७ |

| प्रतिपाद्यविषया. | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषया | पृ०स० |
|-------------------------|---------|--------------------------|-------|
| कारकाशे चतुर्थभाव | ८७ | षष्ठ्यभाव फलम् | ११८ |
| कारकाशे नवमभाव | ८८ | सप्तमभाव फलम् | १२० |
| कारकाशे सप्तमभाव | ८९ | अष्टमभाव फलम् | १२३ |
| कारकाशे तृतीयभाव | " | नवमभाव फलम् | १२४ |
| कारकाशे द्वादशभाव | " | दशमभाव फलम् | १२७ |
| कारकाशे त्रिकोणादि | ९० | एकादशभावफलम् | १२८ |
| दशमोऽध्यायः १० | | द्वादशभावफलम् | १२९ |
| भावलक्षणम् | ९३ | पंचदशोऽध्यायः १५ | |
| अस्योदाहरणम् | | परजातादियोग | १३० |
| होरात्वप्रम् | ९४ | लग्नेशद्वादशभावस्थितफलम् | १३१ |
| अस्योदाहरणम् | | घनेशद्वादशभावस्थितफलम् | १३२ |
| वर्णवत्प्रम् | ९५ | तृतीयेशद्वादशभावस्थित | १३३ |
| अस्योदाहरणम् | " | चतुर्थेशद्वादशभावस्थित | १३३ |
| वर्णद्विविचार | " | मुतेशद्वादशभावस्थित | १३४ |
| पटीलक्षणम् | " | षष्ठेशद्वादशभावस्थित | " |
| अस्योदाहरणम् | " | सप्तमेशद्वादशभावस्थित | १३५ |
| एकादशोऽध्यायः ११ | | अष्टमेशद्वादशभावस्थित | १३६ |
| आरुढत्वप्रम् | ९६ | भाग्येशद्वादशभावस्थित | " |
| अस्योदाहरणम् | " | दशमेशद्वादशभावस्थित | १३७ |
| आरुढकुडली | ९७ | लाभेशद्वादशभावस्थित | " |
| तन्वाहृदफलम् | " | व्ययेशद्वादशभावस्थित | १३८ |
| अथैनादशाहृदफलम् | ९८ | षोडशोऽध्यायः १६ | |
| द्वादशस्थानाहृदफलम् | " | पूर्वजन्मशापघोतकम् | १३९ |
| द्वादशोऽध्यायः १२ | | सर्वशापान्मुक्तशय | " |
| उपपदेशहृदफलम् | १०० | पितृशापान्मुक्तशय | १४० |
| अस्योदाहरणम् | " | मातृशापान्मुक्तशय | १४१ |
| त्रयोदशोऽध्यायः १३ | | भ्रातृशापान्मुक्तशय | १४२ |
| कारकमारकाविविचार | १०५ | मातुलशापान्मुक्तशय | १४३ |
| केपादिनारवमारकाविविचार | १०६-१०८ | बह्मशापान्मुक्तशय | १४४ |
| चतुर्दशोऽध्यायः १४ | | पत्नीशापान्मुक्तशय | " |
| द्वादशभावनिरोधणप्रमाणम् | १०९ | प्रेमशापान्मुक्तशय | १४५ |
| प्रथमभावफलम् | १११ | बह्वृष्ययोगा | १४६ |
| द्वितीयभाव फलम् | ११० | अनायवयोगा | " |
| तृतीयभाव फलम् | ११३ | चिरान्मृत्युयोगा | १४७ |
| चतुर्थभाव फलम् | ११४ | दण्डमुपयोगा | १४८ |
| पञ्चमभाव फलम् | ११६ | | |

| प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० |
|---------------------------|-------|-------------------------------|-------|
| सप्तदशोऽध्यायः १७ | | वेतियोगफलम् | १६३ |
| नाभगादियोगनामसज्ञा | १४९ | उभयचरोफलम् | १६४ |
| आधययोगा | | पुस्त्रीनपुत्रवयोगा | " |
| दणयोगी | १५० | पट्टस्त्रीवयोगा | " |
| आवृत्तियोगा | | प्राणिना वृत्तिनिर्णय | १६५ |
| सप्तसख्यायोगनामानि | १५१ | | |
| एतेषां फलानि व्रजेण | | ऊनविंशोऽध्यायः १९ | |
| अष्टादशोऽध्यायः १८ | | अनेकविधमागभेदाध्याय | १६६ |
| गजवेसरीयोग | १५६ | विंशोऽध्यायः २० | |
| भ्रमलायोगफलम् | | आयुर्दायाध्याय | १७० |
| शुभाशुभयोग | १५५ | दीर्घायुनेत्रभेदानामायुभ्रजम् | १७३ |
| गर्वतपोम | | एकविंशोऽध्यायः २१ | |
| काहलयोग | | पुन आयुर्दायाध्यायस्य द्वितीय | |
| सायिकयोग | १५६ | प्रकार | १८१ |
| चामरयोग | | द्वाविंशोऽध्यायः २२ | |
| शमयोगफलम् | १५७ | रश्मिरक्षणम् | १९० |
| भेरीयोगफलम् | १५७ | मृधरक्षणम् | |
| मृदगयोगफलम् | | बलघ्नरक्षणम् | १९८ |
| श्रीनाभयोगफलम् | | बलघ्नभारघ्नरक्षणम् | १९९ |
| शारदायोग | | त्रयोविंशोऽध्यायः २३ | |
| शतययोग | १५८ | चिन्तनियोगम् | २०० |
| सूर्ययोग | | मातृनिर्णयम् | |
| शङ्खयोग | १५९ | भ्रातृनिर्णयम् | |
| सहजयोग | | भगिनोपुत्रनिर्णयम् | |
| कुम्भयोग | | कन्यनिर्णयम् | २०२ |
| पारिव्रजयोग | | भग्यनिर्णयम् | |
| कन्यानिर्णययोग | १६० | सप्तर्षिर्षमादि | २०३ |
| पारिव्रजार्तियोग | | निर्णये | |
| महाधिर्णयफलम् | | चतुर्विंशोऽध्यायः २४ | |
| चन्द्रयोग | १६१ | सप्तर्षिर्षमादि | २०४ |
| भगिनोपुत्रम् | | सप्तर्षिर्षमादि | २०५ |
| गुनराशिफलम् | १६२ | चतुर्विंशोऽध्यायः | |
| भवनराशिफलम् | | सप्तर्षिर्षमादि | २०६ |
| दुष्टराशिफलम् | १६३ | सप्तर्षिर्षमादि | २०७ |
| केयुपुत्रफलम् | | सप्तर्षिर्षमादि | २०८ |
| केयुपुत्रफल | १६४ | सप्तर्षिर्षमादि | २०९ |

| प्रतिपाद्यविषया | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषया | पृ०स० |
|----------------------------------|-------|--------------------------|-------|
| पञ्चविंशोऽध्यायः २५ | | केतुफलम् | २४२ |
| पुना राजयोगादिकम् | २०९ | सर्वभाव | २४४ |
| राजचिह्नयोग | २१२ | एकविंशोऽध्यायः ३१ | |
| धीयोगा | २१३ | दशाना सता | २४४ |
| मुक्तयोगा | | विशोत्तरी दशा | २४५ |
| सेनाधीशयोगा | | गोडशोत्तरी दशा | २४७ |
| प्रधानयोगा | | अस्या उदाहरणम् | |
| राजयोगरसायनम् | २१५ | अस्याश्रकम् | २४८ |
| षड्विंशोऽध्यायः २६ | | द्वादशोत्तरी दशा | २४९ |
| धनयोगविचार | २१६ | अस्या उदाहरणम् | " |
| सप्तविंशोऽध्यायः २७ | | अस्याश्रकम् | " |
| दरिद्रयोग | २१७ | अष्टोत्तरी दशा | " |
| वधनयोगविचार | २१८ | अस्या उदाहरणम् | " |
| अष्टविंशोऽध्यायः २८ | | अस्याश्रकम् | २५१ |
| पूर्वजन्मवर्णनाध्याय | २१९ | षोडशोत्तरी दशा | |
| ऊनविंशोऽध्यायः २९ | | अस्या उदाहरणम् | २५२ |
| मुक्तदुःखादिकथनाध्याय | २२१ | अस्याश्रकम् | " |
| त्रिंशोऽध्यायः ३० | | शताब्दिकदशा | " |
| जाग्रदाद्यवस्थाकथनम् | २२८ | अस्या उदाहरणम् | " |
| दीप्ताद्यवस्था | | अस्याश्रकम् | |
| बालाद्यवस्था | २२९ | चतुरशीत्यब्दिकादशा | २५३ |
| प्रवासाद्यवस्था | २३० | अस्या उदाहरणम् | |
| वज्रिताद्यवस्था | | अस्याश्रकम् | |
| शयनाद्यवस्था | २३२ | द्विसप्ततिका दशा | २५४ |
| अस्योदाहरणम् | | अस्या उदाहरणम् | |
| स्वराष्ट्रमूर्त्यादिक्षेपाकचक्रे | २३३ | अस्याश्रकम् | |
| दृष्टिभेद | २३३ | षष्टिहायनी दशा | २५४ |
| सूर्यफलम् | २३४ | अस्या उदाहरणम् | २५५ |
| चन्द्रफलम् | | अस्याश्रकम् | " |
| भौमफलम् | २३६ | षड्विंशतिकादशा | " |
| बुधफलम् | २३७ | अस्याश्रकम् | २५६ |
| शुक्रफलम् | २३८ | नवमाशनवदशा | " |
| गुरुफलम् | २३९ | अस्या उदाहरणम् | २५७ |
| मनिफलम् | २४० | राश्याशनवदशा | २५८ |
| राहुफलम् | २४१ | वाकदशा | " |
| | | अस्या उदाहरणम् | " |

| प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० |
|--------------------------------|-------|------------------------------|-------|
| राहुदशा | ३०० | कुजमध्येगुर्वन्तरम् | ३२९ |
| गुरुदशा | ३०१ | कुजमध्येशन्यतरम् | ३३० |
| शनिदशा | " | कुजमध्येबुधातरम् | ३३० |
| बुधदशा | ३०२ | कुजमध्येकेवतरम् | ३३१ |
| केतुदशा | ३०३ | कुजमध्येगुहातरम् | ३३२ |
| शुक्रदशा | ३०४ | कुजमध्येमूर्णान्तरम् | ३३३ |
| द्वादशभावाधीशदशाफलम् | ३०५ | कुजमध्येचक्रातरम् | " |
| त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३ | | | |
| अतर्दशाप्रकरणम् | ३१२ | राहुमध्येराहुतरम् | ३३४ |
| अस्योदाहरणम् | " | राहुमध्येगुर्वन्तरम् | ३३५ |
| विशोत्तर्पतर्दशाचक्राणि | ३१३ | राहुमध्येशन्यतरम् | " |
| अतर्दशाशुभाशुभविचार | ३१४ | राहुमध्येबुधातरम् | ३३६ |
| द्वादशभावाधीशशुभाशुभम् | " | राहुमध्येकेवतरम् | ३३७ |
| रवेरन्तरफलम् | ३१५ | राहुमध्येगुहातरम् | ३३८ |
| रविमध्ये चक्रातरम् | " | राहुमध्येमूर्णान्तरम् | " |
| रविमध्येभीमातरम् | ३१७ | राहुमध्येचक्रातरम् | ३३९ |
| रविमध्येराहुतरम् | ३१७ | राहुमध्येकुजातरम् | ३४० |
| रविमध्येगुर्वन्तरम् | ३१८ | सप्तत्रिंशोऽध्यायः ३७ | |
| रविमध्येशन्यतरम् | ३१९ | गुरुमध्येगुर्वन्तरम् | ३४० |
| रविमध्येबुधातरम् | " | गुरुमध्येशन्यतरम् | ३४१ |
| रविमध्येकेवतरम् | ३२० | गुरुमध्येबुधातरम् | ३४२ |
| रविमध्येगुहातरम् | ३२१ | गुरुमध्येकेवतरम् | ३४३ |
| चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ३४ | | | |
| चन्द्रान्तरफलम् | ३२२ | गुरुमध्येगुहातरम् | " |
| चद्रमध्ये भीमातरम् | " | गुरुमध्येमूर्णान्तरम् | ३४४ |
| चद्रमध्येराहुतरम् | ३२३ | गुरुमध्येचक्रातरम् | ३४५ |
| चद्रमध्येगुर्वन्तरम् | ३२४ | गुरुमध्येभीमान्तरम् | " |
| चद्रमध्येशन्यतरम् | " | गुरुमध्येराहुतरम् | ३४६ |
| चद्रमध्येबुधातरम् | ३२५ | अष्टत्रिंशोऽध्यायः ३८ | |
| चद्रमध्येकेवतरम् | ३२६ | शनिमध्येशन्यतरम् | ३४७ |
| चद्रमध्येगुहातरम् | ३२६ | शनिमध्येबुधातरम् | ३४८ |
| चद्रमध्येमूर्णान्तरम् | ३२७ | शनिमध्येकेवतरम् | " |
| पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ३५ | | | |
| कुजमध्येगुहातरम् | ३२८ | गुरुमध्येगुहातरम् | ३४९ |
| कुजमध्येराहुतरम् | " | शनिमध्येगुहातरम् | ३५० |
| | | शनिमध्येचक्रातरम् | " |
| | | शनिमध्येभीमातरम् | ३५१ |
| | | शनिमध्येराहुतरम् | ३५२ |

| प्रतिपाद्यविषया | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषया. | पृ०स० |
|----------------------------|-------|---------------------------|-------|
| शक्तिमध्येगुर्वन्तरम् | ३५२ | विशोक्तसुषुप्तज्ञानप्राणि | ३७३ |
| ऊनचत्वारिंशोऽध्यायः ३९ | | विदज्ञापनम् | ३७३ |
| बुधमध्येबुधांतरम् | ३५४ | सूर्यफलम् | ३९४ |
| बुधमध्येवैतवतरम् | | चंद्रफलम् | |
| बुधमध्येशुक्रांतरम् | ३५५ | भौमफलम् | ३९५ |
| बुधमध्येसूर्यान्तरम् | | राहुफलम् | ३९६ |
| बुधमध्येचंद्रांतरम् | ३५६ | गुरुफलम् | ३९७ |
| बुधमध्येकुजांतरम् | | शनिफलम् | |
| बुधमध्येराह्वांतरम् | ३५७ | बुधफलम् | ३९८ |
| बुधमध्येगुर्वन्तरम् | ३५८ | वैतुफलम् | ३९९ |
| बुधमध्येन्यतरम् | ३५९ | शुक्रफलम् | ४०० |
| चत्वारिंशोऽध्यायः ४० | | | |
| वैतुमध्येवैतवतरम् | ३५९ | त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ४३ | |
| वैतुमध्येशुक्रांतरम् | ३६० | सूक्ष्मज्ञानरणम् | ४०१ |
| वैतुमध्येसूर्यान्तरम् | ३६१ | अस्याउदाहरणम् | |
| वैतुमध्येनद्रांतरम् | | अस्याश्रकम् | |
| वैतुमध्येकुजांतरम् | ३६२ | सूक्ष्मज्ञापनम् | ४०२ |
| वैतुमध्येराह्वांतरम् | ३६३ | सूर्यफलम् | |
| वैतुमध्येगुर्वन्तरम् | ३६३ | चंद्रफलम् | ४०३ |
| वैतुमध्येन्यतरम् | ३६४ | भौमफलम् | ४०४ |
| चतुस्रचत्वारिंशोऽध्यायः ४१ | | राहुफलम् | |
| शुक्रमध्येशुक्रांतरम् | ३६६ | गुरुफलम् | ४०५ |
| शुक्रमध्येसूर्यान्तरम् | | शनिफलम् | ४०६ |
| शुक्रमध्येसूर्यान्तरम् | | बुधफलम् | ४०७ |
| शुक्रमध्येभीमांतरम् | ३६८ | वैतुफलम् | |
| शुक्रमध्येराह्वांतरम् | ३६८ | शुक्रफलम् | ४०८ |
| शुक्रमध्येगुर्वन्तरम् | ३६९ | चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ४४ | |
| शुक्रमध्येन्यतरम् | ३७० | प्राणदशानयनम् | ४०९ |
| शुक्रमध्येबुधांतरम् | ३७१ | अस्या उदाहरणम् | |
| शुक्रमध्येवैतवतरम् | | अस्याश्रकम् | |
| | | प्राणदशापनम् | |
| | | सूर्यफलम् | ४११ |
| | | चंद्रफलम् | ४१२ |
| | | भौमफलम् | ४१३ |
| | | राहुफलम् | |
| | | गुरुफलम् | ४१४ |
| द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ४२ | | | |
| उपदशानयनम् | ३७२ | | |
| अस्याउदाहरणम् | | | |

| प्रतिपाद्यविषया. | पृ०सं० | प्रतिपाद्यविषया | पृ०सं० |
|-------------------------------|--------|--------------------------|--------|
| शनिफलम् | ४१५ | गतीना फलानि | ४८१ |
| बुधफलम् | ४१६ | सिंहावनोक्तादिगतिफलम् | |
| केतुफलम् | ४१७ | पुनर्गतिफलम् | ४८२ |
| शुक्रफलम् | ४१७ | महादशाफलम् | ४८३ |
| पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ४५ | | अशायुनिर्णय | " |
| कालचक्रदशानयनम् | ४१८ | अन्तर्दशाफलम् | ४८४ |
| सव्यापसव्यत मेयादिवृत्तिकारणश | | नवांशफलम् | ४८८ |
| शातव्या | ४२० | षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ४६ | |
| अस्या उदाहरणम् | | चरदशाफलम् | ४९० |
| कालचक्रसव्यमार्गदशाचक्रम् | ४२३ | सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ४७ | |
| कालचक्राऽपसव्यमार्गदशाचक्रम् | ४२४ | दशावाहनफलम् | ४९५ |
| कालचक्रसव्याऽपसव्यातरचक्राणि | ४२६ | मुदर्शनचक्रफलम् | ४९६ |
| कालचक्राशफलम् | ४८० | अस्त्योदाहरणम् | ४९७ |
| उदयफलम् | " | राहुदृष्टिकथनम् | ४९८ |
| देहजीवफलम् | | ग्रहानामुदयदर्पाणि | " |
| मतिभेदा | ४८१ | | |

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखंडस्यविषयानुक्रमणिका समाप्ता

बृहत्पाराशरहोराशास्त्रजतरखंडसारांशस्य- विषयानुक्रमणिका

| प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० |
|--------------------------------------|-------|-----------------------------------|-------|
| प्रथमोऽध्यायः १ | | तृतीयोऽध्यायः ३ | |
| मैत्रेयमुनिवृत्ता पराशरमहर्षिप्रश्ना | ४९९ | एकाग्रिपत्यशोधनम् | ५२७ |
| पराशरमुने वृत्तप्रश्नाभिनन्दपुर सरो | " | अस्योदाहरणम् | |
| त्तरदानम् | | चतुर्थोऽध्यायः ४ | |
| ज्योतिः शास्त्रस्य सम्म्यग्ज्ञानोपाय | ५०० | विद्योत्पत्ति | ५२७ |
| वर्णनम् | | ध्रुवाका | ५२७ |
| ज्योतिः शास्त्रस्य वेदसाम्यम् | | चक्रं | ५२८ |
| शुभाशुभफलव्यनरीति | | अस्योदाहरणम् | |
| मूर्धाष्टकवर्गविदुविचार | ५०१ | पचमोऽध्यायः | |
| चन्द्राष्टकवर्गविदुविचार | | अष्टवर्गफलानि | ५२८ |
| भौमाष्टकवर्गविदुविचार | ५०२ | सूर्यफलम् | ५२९ |
| बुधाष्टकवर्गविदुविचार | ५०३ | चन्द्रफलम् | ५३१ |
| शुक्राष्टकवर्गविदुविचार | ५०४ | श्रीगफलम् | |
| शनिभ्राष्टकवर्गविदुविचार | ५०५ | बुधफलम् | ५३२ |
| अथ रेखाविचार | ५०६ | गुरुफलम् | ५३२ |
| मूर्धाष्टकवर्गरेखाविचार | ५०६ | शुक्रफलम् | ५३३ |
| चन्द्राष्टकवर्गरेखाविचार | ५०७ | शनिफलम् | ५३५ |
| भौमाष्टकवर्गरेखाविचार | ५०८ | गुप्त भौमफलम् | ५३७ |
| बुधाष्टकवर्गरेखाविचार | ५०९ | शुभाशुभफलम् | |
| शुक्राष्टकवर्गरेखाविचार | ५१० | मूर्धाष्टकवर्गफलम् | ५३८ |
| शनिभ्राष्टकवर्गरेखाविचार | ५११ | भावफलम् | ५३९ |
| तत्प्रत्य विदुविचार | ५१२ | राहुयुक्तगुरुफलम् | ५४० |
| तत्प्रत्य रेखाविचार | ५१३ | लघुदुयुतगुरौ विग्रतभेदेऽप्राणफलम् | ५४० |
| करणस्थाननिवर्तनम् | ५१४ | निघ्नार्थ | ५४० |
| सूर्यादिषडभेदादिराशिपर्णाणाकवि० | ५१४ | अस्योदाहरणम् | |
| करणस्थानषडभेदप्रकार | | निघ्नचक्र | ५४१ |
| द्वितीयोऽध्यायः २ | | निघ्नलक्षम् | ५४१ |
| त्रिकोणशोधनम् | ५१५ | शानुदाष्टकवर्गफलम् | ५४१ |
| अथ चक्राणि | | मासफलम् | ५४३ |
| अस्योदाहरणम् | ५२६ | रेखाशानिफलम् | ५४४ |

| प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषयः | पृ०स० |
|---------------------------------------|-------|---|-------|
| षष्ठोऽध्यायः ६ | | तथा फलप्रदज्ञानम् | ५६४ |
| पह्वलावल | ५४५ | एतच्छ्रुतत्राधिकारीलक्षणम् | " |
| अपभ्रवसाधनप्रकार | ५४६ | सप्तमोऽध्यायः ७ | |
| सधिसाधनम् | " | अधोन्वरज्ञानयनविचार | ५६४ |
| दृष्टिसाधनम् | " | चेष्टारज्ज्यायनसाधनीभूतचेष्टाकेन्द्र- | |
| शनिदेवेत्यभौमाना विशेषदृष्टि- | | विचार | " |
| सत्कार | " | चेष्टारश्मिशुभाशुभरश्मिविचार | ५६५ |
| उच्चयनसाधनम् | ५४८ | ग्रहाणामिष्टकष्टविचार | ५६५ |
| सूर्योदितग्राहाणा सप्तवर्गबलविचार | ५४८ | इष्टकष्टसप्तवर्गेषु स्वोच्चादिस्थानानि० | " |
| शुभाशुभबलविचार | ५५१ | सर्ववर्गैः फलमध्ये शुभाशुभविभाग | ५६६ |
| केन्द्रादिवलविचार | ५५१ | शुभाशुभसहितदिवकलदिनफल- | |
| ट्रेन्काणबलविचार | ५५२ | विचार | ५६६ |
| दिक्कलविचार | ५५२ | सविस्तारदिवकलदिनफलशुभा- | |
| मनोप्रवृत्तबलविचार | ५५३ | शुभफलविचार | ५६७ |
| पञ्चबलविचार | ५५३ | सप्तहाराशिकलसाधनम् | " |
| दिनरात्रिभागबलविचार | ५५४ | स्थानकरणविचार | " |
| वर्षभासदिनहोरेक्षलविचार | ५५४ | अष्टमोऽध्यायः ८ | |
| अयनबलविचार | ५५७ | अथ शुभाशुभसूचकललाटारफल- | |
| चेष्टाबलक्रमप्राप्तभौमादिपह्लुद | | विचार | ५६८ |
| यत्नम् | ५५७ | द्वादशभादविचारिणीयविचार | ५६९ |
| गतिबलम् | " | विशेषसत्कारातरेण रज्ज्यायनविचार | ५६९ |
| चेष्टाबलम् | " | मूलत्रिकोणादिवक्ष्यनागस्थितविशेष- | |
| नैसर्गिकबलविचार | ५५८ | रश्मिसत्कारातविचार | ५७० |
| उत्तररविधबलाना दृष्टिबलेन | | प्रकारातरेण रश्मिविचार | ५७१ |
| सत्कार | ५५९ | मन्त्रातरेण गतिवशादश्मिहासवृद्धि- | |
| भाबबलानयनप्रकार | ५६० | विचार | ५७१ |
| ग्रहविशेषेण नु कालविशेषेण बलाधि- | | ग्रहसंज्ञारूपतो रश्मिफलनिर्णय | ५७१ |
| नयनयनविचार | ५६१ | योगविशेषेण रश्मिहासवृद्धिविचार | ५७२ |
| भाबाना दिग्बलम् | ५६१ | उच्चपापरश्मिनिर्णय | " |
| बलप्रकरणोपसंहार | ५६१ | राजयोगकारक रश्मिविचार | " |
| ग्रहाबोभयाना श्रोतमन्त्रैस्त्वै | | द्विग्रहादियोगे रश्मिकयनिर्णय | " |
| मुखात्त्वपूर्णबलरविगमनसंख्या | ५६२ | रश्मिप्रयोजनम् | " |
| अवातरस्यानादिपञ्चरत्नाना गृहपत- | | एकादिरश्मिसंख्यातारत्नम्येन रश्मीना | |
| रत्नापरिगणनम् | ५६३ | शुभ फलम् | " |
| बलानामुगमपरिज्ञानाय नियतकलत्रम् | | चतुर्दशादिरश्मिसंख्यातारत्नम्येन | |
| बहुयोगहेतुषु प्राप्तेषु विशेषयोगकर्त- | | रश्मीना शुभ फलम् | ५७३ |

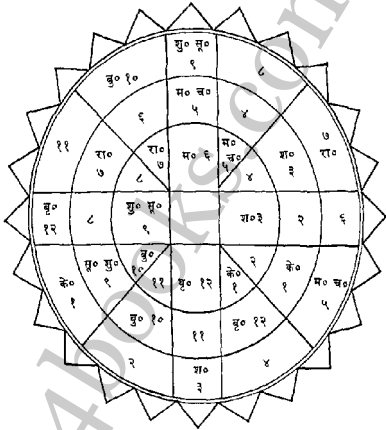
| प्रतिपाद्यविषयः | पृ०सं० | प्रतिपाद्यविषयः | पृ०सं० |
|---------------------------------------|--------|---------------------------------|--------|
| आरभतो यावद्रश्मिसमापनं सति- विचार | ५७४ | स्थानविशेषेण रव्यादीनां पाचकादि | ५८० |
| रश्मिवशादैर्धर्मविचार | " | सञ्ज्ञा | " |
| बहुषोषकत्वयोग | " | स्थानसंबन्धेन पाचकादिग्रहा | ५८१ |
| परतो देशाधिपत्ययोग | " | रव्यादीनां दशागोचारादिफलकात् | ५८२ |
| राजयोग | " | एकादशोऽध्यायः ११ | |
| सार्वभौमपराप्तियोग | " | अथ मासचर्यायां शुभाशुभ- | |
| नरादिषोध्यसंख्याविचार | " | विवरणं ज्ञानम् | ५८३ |
| कलां शूद्राणामेव राज्ययोगकथनम् | " | द्वादशोऽध्यायः १२ | |
| भाम्यादिफलानां व्यवस्था | ५७५ | पूर्वाध्यायोक्तप्रयोगभगपरंपरा | ५८३ |
| षड्वलव्यवस्था | " | स्थानविशेषाकरणाधिपसंभवेन भग | " |
| अध्यायोपसंहार | " | राशमानयनेन भगवत्तन्त्रम् | " |
| नवमोऽध्यायः ९ | | राशिप्रयोजनम् | ५८४ |
| अथ सैशास्थानादिविचारेण शुभाशुभ- | | प्रकारादरेण भावभग | " |
| फलम् | ५७६ | भगयोजना | " |
| भावफलानां बलहानिफलनाशविचार | " | त्रयोदशोऽध्यायः १३ | |
| पूर्वभागोक्तयोगानां व्यवस्था | ५७६ | अथ द्वादशभावनामानि | ५८५ |
| भावविचार | " | रविग्रहविचार | " |
| पितृमातृरिष्टविचार | " | चन्द्रग्रहविचार | " |
| स्थानकरणतारतम्येन त्रिकोणजोघन- | " | मौलविचार | " |
| प्रकार | " | बुधविचार | " |
| एकसिध्पत्यसोघनप्राप्तेस्तारणेष्वध्या- | | गुरुविचार | ५८६ |
| नयनम् | ५७७ | शुक्रविचार | " |
| मूर्त्यन्तर्बुधभ्यामायु कथनम् | " | शनिविचार | " |
| रश्मिविचारेण पितृमातृरिष्टम् | ५७८ | उक्तानां फलविचार | " |
| देशस्थाने रेशाभावे आयु कथनम् | " | | |
| करणादिविचारेण भावविचार | " | चतुर्दशोऽध्यायः १४ | |
| दशमोऽध्यायः १० | | अयसिदाशवादिभेदवर्णनम् | ५८६ |
| अथाब्दचर्यायां भाम्यादिवर्णनम् | ५७९ | पिङ्गामुध्रुवाचर्याणाम् | " |
| भावफलज्ञाने नालचर्या | ५८० | पुष्यामुर्दमध्रुवाचर्या | " |
| भावफलज्ञाने शुभग्रहापग्रहभेदेन | | रश्म्यामुर्दमध्रुवाचर्या | ५८७ |
| विशेष | " | वर्षमासाद्यामुत्पादनप्रकार | " |
| कारकसंज्ञाग्रहविचार | " | नवशिशुत्पादनप्रकार | ५८८ |
| भावेषु शुभाशुभग्रहविचार | " | प्रश्नानुगतामुर्दमोत्पादनप्रकार | " |
| दुर्बलसिद्धग्रहव्यवस्था | " | अष्टकवर्गामुर्दमोत्पादनप्रकार | " |
| स्त्रीपुंस्वभावविचार | " | ध्रुवाकमहितनवाणामुर्दमवर्णनम् | ५८९ |

| प्रतिपाद्यविषया | पृ०स० | प्रतिपाद्यविषया | पृ०स० |
|---|-------|--------------------------------------|-------|
| नक्षत्रायुर्दाय | ५८९ | ग्रहत्वारतम्येनाश्रयन्त्यमायुर्दाय | |
| आयुर्दामकयनहेतूपन्यास | " | ग्रहणम् | ५९६ |
| भावायुर्दायवर्णनम् | " | स्वोच्चाद्यधिकारत्वारतम्येन- | " |
| आयुर्दामस्य मुख्यत्वेन पाद्द्विध्य- | " | आयुर्दायग्रहणविशेष | " |
| वर्णनम् | " | लग्नगतबलवद्ग्रहत्वारतम्येना- | " |
| पंचदशोऽध्यायः १५ | | सुग्रहणम् | " |
| अथ भारकयोगविचार | ५९० | उच्चाद्यधिकारव्यक्तास्लग्नगतानामायु- | |
| आयुयोगविचार | " | क्रम द्वादशभावेषु ग्रहणा मिधा- | |
| गुरुबुधशुक्रज्योषामुर्दानम् | ५९१ | युर्दामग्रहणम् | ५९७ |
| दापहरणप्रकार | " | उत्तःपुर्दामगणना | " |
| व्ययादिहरणप्रकार | " | अमित्रायुर्दामभेदा | ५९८ |
| भावाधिगतायुर्हरणम् | " | मित्रायुर्दानदशाग्रहणरीति | " |
| आयुर्हरणप्रक्रिया | " | नक्षत्राद्यायुर्दायेषु पिडायुर्दाय | " |
| अनेकग्रहयोगे विशेषवर्तव्यम् | " | ग्रहणस्थलानि | " |
| ग्रहद्वययोगे कर्तव्यम् | " | प्रकारातरेण पैदायुर्ग्रहणम् | " |
| गुप्तद्वययोगे विशेष | " | ध्रुवायुर्ग्रहणम् | " |
| अस्तगतग्रहाणा दापहरणप्रकार | " | योगविशेषेण बलवत्तरसप्तमगृहेषु | |
| नक्षत्रायुर्दायहरणरीति | " | पृथक्पृथग्दामविशेषग्रहणम् | ५९९ |
| नक्ष्रे ब्रूयग्रहयोग आयुर्हरणसंस्कार | ५९३ | रश्मिब्रूयादायुर्ग्रहणम् | " |
| सचन्द्रराह्यायुर्दाय | " | अत्रार्थे गर्गावकाशप्रमाणम् | ६०० |
| नक्षत्रतसचन्द्रराह्यायुर्दाय | " | सप्तदशोऽध्यायः १७ | |
| द्रेष्काणवशात्स्थानवद्विधायी | | अथ मन्त्रव्यवहारमाधनीभूत- | |
| अस्तगतग्रहायुर्दानि | | भाग्यादिविचारोपक्रम | ६०० |
| शत्रुज्योत्पन्नग्रहायुर्दानि नच मुहुर्द्वय- | | भाग्यविचाररीति | " |
| गताना विशेष मित्रादीना | " | स्वदेशपरदेशभाग्योदयविचार | " |
| वृद्धि शत्र्वादीनाहरणम् | " | भावाफलनभोपदेश | " |
| अतर्दशाभागा | " | प्रकारातरेण ममास्थानयनम् | " |
| अतर्दशानयनप्रकार | ५९४ | उच्चादिम्यान्विशेषेण व्यादीना | |
| समच्छेदाभावस्थानानि | " | फलविशेष | " |
| अन्तर्दोषभोक्तृक्रम | ५९५ | भाग्यविचारैषद्वयनम् | ६०१ |
| पहेम्यो भाषेय्यश्च द्वादशम्यान्- | " | " भौमफलम् | " |
| भाषाशा | " | " बुधफलम् | ६०२ |
| अशशिष्टव्यवस्था | " | " गुरुफलम् | " |
| वाक्कारणार्थं होरासफलिहा | " | " शुक्रफलम् | ६०३ |
| षोडशोऽध्यायः १६ | | " रश्मिफलम् | " |
| अथ पिडायुर्भेदगणना | ५९६ | फलममज्ञानविचार | " |
| | | आवादिमम्याविचार | ६०४ |

| विषयविवरण | पृ०सं० | प्रतिपाद्यविषयः | पृ०सं० |
|---|--------|--------------------------------------|--------|
| विंशोऽध्यायः २० | | नक्षत्रतिथिवारेषु दिक्क्रम | ६३० |
| अथ सप्तविंशतिविचारेण भावगतग्रह- स्थिति | ६२५ | द्वितीयभावादष्टमभावपर्यन्तरश्मय | " |
| ग्रहयोगभावलक्षणम् | " | मेवादिराशिषु रश्मय | " |
| विदुमुत्पादोनाभावानां बलकथनं | " | व्याधितस्य प्रश्नकालमरणसूचककाल- | " |
| पति | " | राष्ट्रविशेषयोगादिराशि | ६३१ |
| प्रश्नस्थानाकसंख्या | " | अभिधीयमानाप्रश्नत्रयेष्ववयवा | " |
| प्रश्नेषु करणसंख्या | " | प्रष्टुभिर्ज्ञानम् | " |
| प्रश्नकरणानां विषयसमसंख्याया | " | प्रश्नकालीनलक्षस्यशुभानुग्रह- | ६३१ |
| गुणानुप्रविचार | " | वितोक्तम् | " |
| अविषयराशिषु स्थानककरणसंख्याया | " | प्रश्नकाले जन्मकाले वा ज्ञाननुज्ञान- | " |
| मासिहानि | " | विचार | " |
| विषयराते स्थानफलम् | " | मासतिथिज्ञानम् | " |
| रक्तपादितारतम्येन फलानि | " | प्रश्नलक्षाद्वयोर्वर्षज्ञानम् | " |
| एकविंशोऽध्यायः २१ | | तिथिज्ञानं दिवारात्रिज्ञानं च | " |
| अथ स्थानग्रहवशात्फलानि | ६२६ | प्राणज्ञानम् | ६३२ |
| जन्मास्तोषसहस्रणम् | " | प्रश्नकालान्मामराशिलक्षणम् | " |
| द्वाविंशोऽध्यायः २२ | | जन्मज्ञानतथोपप्राप्तिप्रकारा | " |
| अथ प्रश्नप्रकरणोपक्रम | ६२७ | लक्ष्म्यबलत्वम् | " |
| प्रश्नविचारणोपायवर्णनम् | " | ग्रहाणां दृष्टि | ६३३ |
| फलतोपायवर्णनम् | " | ग्रहाणां स्थानबलं दिग्बलं च | ६३३ |
| पर्यवशात् ऋष्यादिस्मरणं विना | ६२८ | अपनबलम् | " |
| निष्ठमभाववर्णनम् | " | पञ्चवेष्टादिवारात्रिनिर्णयत्वम् | " |
| प्रश्नप्रकार | " | दण्डपर्यवतम् | " |
| पर्याधिकार | " | प्रश्नलक्षाज्जन्मलक्षम् | " |
| ग्रहजननस्थानम् | " | अध्यायोपमाहार | " |
| दिव्यवर्तमानम् | " | त्रयोविंशोऽध्यायः २३ | ६३४ |
| ग्रहजननप्रमाणानुनिर्णयं द्रष्टव्यम् | ६२९ | पूर्वाप्रोक्ताध्यायानुक्रम | " |
| अथ च | " | उत्तराप्रोक्ताध्यायानुक्रम | " |
| गृहयोगप्रकार | " | चतुर्विंशोऽध्यायः २४ | ६३५ |
| गृहकालयोगज्ञानम् | " | शास्त्रप्रमाणवचनम् | " |
| | " | योगीनि शास्त्रप्रमाण | " |

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रउत्तरखण्डस्यविषयानुक्रमणिका समाप्ता

अथ सुदर्शनचक्रम्



श्रीः

बृहत्-पाराशर-होरा-शास्त्रम्

पूर्वखण्डम्

अथैकदा मुनिश्रेष्ठं त्रिकालज्ञं पराशरम् ॥ पप्रच्छोपेत्य मैत्रेयः प्रणिपत्य यथाविधि ॥१॥
मैत्रेय उवाच-नमस्तस्मै भगवते बोधरूपाय सर्वदा ॥ परमानन्दकन्दाय गुरवेऽज्ञान ध्वंसिने
॥२॥ इति स्तुत्या मुसंहृष्टो मुनिस्तत्त्वविदाम्बरः ॥ अथादिदेश सच्छास्त्रं सारं यज्ज्योतिषां
शुभम् ॥३॥ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शुक्लाम्बरधरां गिरम् ॥ प्रणम्य, पाञ्चजन्यं च धीनां धाम्नां
धृतं द्वयम् ॥४॥ सूर्यं नत्वा गृहपतिं जगदुत्पत्तिकारणम् ॥ वक्ष्यामि वेदनयनं यथा
ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम् ॥५॥

सुमंगलानां कर्तारं हर्तारं निश्चितापदा, वन्दे बुद्धिप्रदातारं गणानाम्पतिमोक्षरम् ॥१॥
होराशास्त्रेऽतिगम्भीरे भावार्थख्यापनाय वै, शारदे त्वां प्रपन्नोऽस्मि भव 'भावप्रकाशिका' ॥२॥

एक समय त्रिकालज्ञ मुनिवर पराशरजी के पास आकर यथाविधि प्रणाम करके मैत्रेयजी ने पूछा ॥१॥ मैत्रेय ने कहा-अज्ञान का नाश करनेवाले आनन्दकन्द ज्ञानस्वरूप भगवान् पराशर को प्रणाम करता हूँ ॥२॥ तत्त्वज्ञानियो ने खेष्ट भगवान् पराशरमुनि, मैत्रेय पर प्रसन्न होकर ज्योतिष शास्त्र के साररूप इस शास्त्र का उपदेश करने लगे ॥३॥ पराशरजी ने कहा-सात्त्विकज्ञानरूप शुक्ल अम्बरधारी विष्णु तथा तद्रूपा धीसरस्वती को प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने पाञ्चजन्य शस्त्र और धीणा धारण की है ॥४॥ जगत् की उत्पत्ति करनेवाले सूर्य तथा गणपति की नमस्कार करके ब्रह्मा से गुने हुए वेद के नयनरूप इस ज्योतिष शास्त्र को यथावत् कहता हूँ ॥५॥

शान्ताय गुरुभक्ताय च जवेर्जितस्त्वामिने ॥ आस्तिकाय प्रदातार्यं ततः श्रेयो ह्यवाप्स्यति ॥६॥
न देयं परशिष्याय नास्तिकाय शठाय च ॥ ब्रह्मे प्रतिदिनं दुःखं जायते नात्र संगमः ॥७॥ एको
व्यक्तात्मको विष्णुरनादिः प्रभुरीश्वरः ॥ गुह्यमस्यो जगत्त्वामी निर्गुणस्त्रिगुणान्वितः ॥८॥
संसारकारकः श्रीमाश्रिमितात्मा प्रतापवान् ॥ एकाशेन जगत्सर्वं सृजत्यर्वात् सीलया ॥९॥

उपदेश योग्य शिष्य का लक्षण

जो सरल तथा शान्तस्वभाव, ईश्वर तथा धर्म में विश्वास रखनेवाला, गुरु का भक्त तथा गुरु की सेवा-पूजा की हो ऐसे धेष्ठ शिष्य को इस शास्त्र का उपदेश करना चाहिये, तभी मंगल होता है॥६॥ इसके विपरीत जो नास्तिक, जठमति तथा दूसरे का शिष्य हो उसको उपदेश देने से दैनन्दिन क्लेश होता है, यह निश्चित है॥७॥

श्रुति के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति

“एको व्यक्ता०” इत्यादि—

एक=अद्वितीय, अनाद्यनन्त, सर्वेश्वर्यविशिष्ट, चराचरजगत् का स्वामी, शुद्धसत्त्वगुणप्रधान माया का अधीश्वर, अव्यक्तरूप से निर्गुण ब्रह्म तथा व्यक्तरूप से त्रिगुणमयी प्रकृति का स्वामी भगवान् विष्णु॥८॥ पद्विध ऐश्वर्यरूपा लक्ष्मी के पति, वन्दनीय तेजोरूप वह विष्णु ही व्यापक होने से इस ससार का निमित्त रूप से (अथवा अभिन्न-निमित्तोपादानरूप से) उत्पत्तिस्थितिलय का कारण है। वह विष्णु ही अपने एक अंग से, इस ससार को उत्पन्न करके नीलामात्र से पालन करता है॥९॥ (पुरुष सूक्त=वेद के अनुसार उत्पत्ति दिखाकर ‘लोकवत्तु नीलाकैवल्यम्’ ब्र० सूत्रानुसार उत्पत्त्यादि वर्णन की है)

त्रिपाद तस्य देवस्य ह्यमृत तत्त्वदर्शिनः ॥ विदति तत्प्रमाणं च सप्रधानं तथैकपात् ॥१०॥
व्यक्ताव्यक्तात्मको विष्णुर्वासुदेवस्तु गीयते ॥ यदव्यक्तात्मको विष्णुः शक्तिद्वयसमन्वितः ॥११॥ व्यक्तात्मकस्त्रिशक्तीभिः समुत्तोजनतशक्तिमान् ॥ सत्त्वप्रधाना श्रीशक्तिर्भूशक्तिश्च रजोगुणा ॥१२॥ शक्तिस्तृतीया या प्रोक्ता नीलाख्या ध्वांतरूपिणी ॥ वासुदेवश्चतुर्थोऽमृच्छ्री शक्त्या प्रेरितो यदा ॥१३॥ सकर्षणश्च प्रद्युम्नोऽनिरुद्ध इति मूर्तिधृक् ॥ तमशक्त्याऽन्वितो विष्णुर्देवः सकर्षणाभिधः ॥१४॥

“पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृत दिवि। इत्यादि श्रुति तथा ‘विष्टम्याऽहमिदं बृहन्मेकाग्रं स्थितो जगत् ।’ आदि स्मृति तात्पर्यानुसार कहते हैं—त्रिगुणात्मक प्रधान माया का अधीश्वर होने से वह देव=दिव्यरूप है, उसके तीन पाद तो अमृतरूप से स्थित हैं, जिसको तत्त्वदर्शी जानते हैं, (मायारीहत निर्गिकार ब्रह्मरूप से वर्तमान हैं) और एक पाद=विष्णुरूप से त्रिगुणात्मक प्रधान का स्वामी वेद में कहा गया है॥१०॥ इस प्रकार व्यक्त तथा अव्यक्तरूप से विष्णु अभयस्वरूप है, और वासुदेव कहे जाते हैं। और जो अव्यक्तस्वरूप विष्णु है, वे दो शक्ति से युक्त हैं॥११॥ व्यक्तरूप भगवान् सर्वव्यापक विष्णु सत्त्व, रजस् तथा तमस् इन तीन गुणों से युक्त हैं, एवं इनकी शक्ति अनन्त है। इन तीन गुणों में सत्त्वगुणप्रधाना ‘श्रीशक्ति’ रजोगुणप्रधाना ‘भूशक्ति’॥१२॥ तथा तमोगुणप्रधाना ‘नीलाशक्ति’ है। श्रीशक्ति की प्रेरणा से विष्णु के चार रूप हुए॥१३॥ वासुदेव (पूर्वानुवृत्त) सकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये चार रूप हुए। इनमें वासुदेव तो आदि विष्णु स्वरूप ही है, इनसे तमोगुणप्रधान नीला शक्तियुक्त ‘सकर्षण’ का आविर्भाव हुआ॥१४॥

प्रद्युम्नो रजसा शक्त्या निरुद्धः सत्त्वया युतः॥महान्संकर्यणाज्जातः प्रद्युम्नाद्यदहंकृतिः ॥१५॥
अनिरुद्धात्सत्त्वयं जातो ब्रह्माहंकारमूर्तिर्धृक् ॥ सर्वेषु सर्वशक्तिश्च स्वशक्त्याऽधिक्या युतः
॥१६॥ अहंकारस्त्रिधा भूत्वा सर्वमेतदविस्तरात् ॥ सात्त्विको राजसश्चैव तामसश्चेदहंकृतिः
॥१७॥ वेवा चकारिकाज्जातास्तैजसादिन्द्रियाणि च ॥ तामसाच्चैव भूतानि लाघीनि
स्वस्वशक्तिभिः ॥१८॥ श्रीशक्त्या सहितो विष्णुः सदा पाति जगत्त्रयम् ॥ भूशक्त्या सृजते
विष्णुर्नीलशक्त्या युतोऽस्ति हि ॥१९॥

एव रज=शक्तियुक्त, 'प्रद्युम्न' तथा सत्त्वशक्ति से युक्त 'अनिरुद्ध' का आविर्भाव हुआ। (इस प्रकार धृति, स्मृति, भूत (वेदान्त) सिद्धान्त से पाशुपत-पाञ्चरात्र आदि शास्त्र सिद्धान्त का समन्वय करते हुए साख्य सिद्धांत से समन्वय करते हैं) संकर्यण से महत् तत्त्व की उत्पत्ति हुई, प्रद्युम्न से अहंकार की उत्पत्ति हुई॥१५॥ अहंकार के मूर्तरूप में स्वयं ब्रह्मा 'अनिरुद्ध' से प्रकट हुए। वैसे तो संकर्यण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध इन तीनों में तीनों शक्तियाँ (सात्त्विकी, राजसी, तामसी) हैं तथापि प्रत्येक में अपनी शक्ति प्रधानरूप से तथा अन्यशक्ति गौणरूप से स्थित है॥१६॥ पश्चात् अहंकार तत्त्व के तीन भेद हुए 'सात्त्विक, राजस, तामस' बाद प्रथम सक्षिप्तमृष्टि हुई अर्थात् पूर्वोक्त तीन रूपों में अहंकार आविर्भूत हुआ॥१७॥ सात्त्विक अहंकार से देवता, तैजस अहंकार से इन्द्रिया एव तामस अहंकार से आकाशादिक पञ्चभूत हुए॥१८॥ इस प्रकार उत्पन्न हुए ससार को श्रीशक्तियुक्त विष्णु पालन करते हैं, भूशक्तियुक्त विष्णु उत्पन्न करते हैं तथा नील=तम शक्तियुक्त होकर संहार करते हैं॥१९॥

(यहां क्रम विवक्षित नहीं है)

सर्वेषु चैव जीवेषु परमात्मा वीराजते ॥ सर्वं हि तदिदं ब्रह्मन् स्थितं हि परमात्मनि ॥२०॥
सर्वेषु चैव जीवेषु स्थितं ह्यश्रद्वयं स्वचित् ॥ जीवांशमधिकं तद्वत्परमात्माशकः कित ॥२१॥
सूर्योदयो ग्रहाः सर्वे ब्रह्मकामद्विपादयः ॥ एते चान्ये च बहवः परमात्मांशकाधिकाः ॥२२॥
शक्तयश्च तर्पतेयामधिकांशाः शिवादयः ॥ अन्त्यासु स्वस्वशक्तीषु ज्ञेया
जीवांशकाधिकाः॥२३॥

मैत्रेय उवाच—

रामकृष्णादयो मे च ह्यवतारा रमापते॥तेऽपि जीवांशसयुक्ताः किं वा ब्रूहि मुनीश्वर ॥२४॥

हे मैत्रेय ! इस प्रकार सम्पूर्ण जीवों में परमात्मा हैं, और चराचर सारा ससार परमात्मा में स्थित है॥२०॥ सम्पूर्ण जीवों में दो अंश (जीवांश और परमात्मांश भेद से) हैं, उनमें से किसी में जीवांश और किसी में परमात्मांश अधिक होता है॥२१॥ सूर्य आदि ग्रह तथा ब्रह्मा और कामारि=महादेव आदि देवता तथा अन्यो में भी परमात्मांश अधिक है॥२२॥ तथा श्री, लक्ष्मी, दुर्गा आदि शक्तियों में भी परमात्मांश अधिक है, अन्य सासारिक जीवों में जीवांश अधिक है॥२३॥

मैत्रेय जी बोले—(इस ससार में आविर्भूत होने वाले) रामचन्द्र, धीकृष्ण आदि जो विष्णु के अवतार शास्त्रों में कहे गये हैं, क्या वे भी जीवांश में युक्त हैं ? ॥२४॥

पराशर उवाच—

रामकृष्णश्च भो विप्र नृसिंह सूकरस्तथा ॥ एते पूर्णावताराश्च ह्यन्ये जीवाशकान्विता ॥२५॥
 अवताराण्यनेकानि ह्यजस्य परमात्मन ॥ जीवानां कर्मफलदो ग्रहहृषी जर्नादिन ॥२६॥ दैत्यानां
 बलनाशाय देवानां बलवृद्धये ॥ धर्मसंस्थापनार्थाय प्रहा जाता शुभा क्रमात् ॥२७॥ रामोऽवतार
 सूर्यस्य चन्द्रस्य यदुनायक ॥ नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्धः सोमसुतस्य च ॥२८॥ वामनो विबुधेज्यस्य
 भार्गवो भार्गवस्य च ॥ कूर्मो भास्करपुत्रस्य सिंहकेयस्य सूकर ॥२९॥ केतोर्मो नावतारश्च ये चान्ये
 तेऽपि खेटजा ॥ परमात्माशमधिकं येषु ते खेचराभिधा ॥३०॥ जीवाशमधिकं येषु जीवास्ते वै
 प्रकीर्तिता ॥ सूर्यादिभ्यो ग्रहेभ्यश्च परमात्माशानिमृता ॥३१॥ रामकृष्णादथ सर्वे ह्यवतारा
 भवति वै ॥ तत्रैव ते विलीयते पुन कार्यास्तरे सदा ॥३२॥

पराशरजी ने कहा—इन अवतारों में राम कृष्ण नृसिंह तथा सूकर अवतार तो सम्पूर्ण रूप से परमात्माशरूप हैं अन्य अवतारों में कलारूप से जीवाश भी हैं ॥२५॥ यद्यपि (विवक्षित विषय का अवतरण) अजन्मा वागुदेव के अनेक अवतार हैं तथापि जीवों के कर्मफल के देनेवाले ग्रहरूप अवतार मुख्य हैं ॥२६॥ क्योंकि—धर्मद्विषी दैत्यो के बल के नाश तथा देवताओं के बल की वृद्धि एवं धर्म का संस्थापन करने के लिये ही इन भगवन्मय ग्रहों से ही अवतारों का आविर्भाव हुआ है ॥२७॥ सो इस क्रम से हुआ—सूर्य से रामावतार चन्द्रमा से कृष्णावतार मंगल से नृसिंह, बुध से यौद्धावतार ॥२८॥ बृहस्पति से वामन शुक्र से परशुराम शनि से कूर्म राहु से वाराह ॥२९॥ केतु से मत्स्यावतार का आविर्भाव हुआ इसी प्रकार अन्य अवतार भी इन्हीं सूर्यादिग्रहों से ही आविर्भूत हुए हैं। परमात्माश के प्राबल्य से ही इन ग्रहों की खेचर सजा है ॥३०॥ जिसमें जीवाश की अधिकता होती है वे जीव कहलाते हैं (अर्थात् अवतार नहीं), परमात्माश और जीवाशरूप उभयशक्ति संपन्न सूर्यादि ग्रहों के परमात्माश के आधिक्य से आविर्भूत ॥३१॥ राम कृष्ण आदि अवतार अपना अपना अवतार कार्य करके ग्रहों में ही लीन हो जाते हैं और सृष्टि के प्रलयकाल में वे ग्रह भी अपने कारण रूप अव्यक्त में लीन हो जाते हैं ॥३२॥

जीवाशानिमृतास्तेषां तेभ्यो जाता मरुदय ॥ तेऽपि तत्रैव लीयते तेऽप्युक्ते समयति हि ॥३३॥
 इदं ते कथितं विप्र सर्वं यस्मिन्मवेदिति ॥ भूतान्यपि भविष्यति तत्तत्सर्वतन्तामियात् ॥३४॥
 बिना सज्ज्योतिषं नान्यो ज्ञातुं शक्नोति कर्हिचित् ॥ तस्मादवश्यमध्येयं ब्राह्मणैश्च विशेषतः ॥३५॥ यो नरः शास्त्रमज्ञात्वा न्योतिषं स तु निन्दति ॥ रौरव नरकं भुक्त्वा चाधत्वा
 चान्यजन्मनि ॥३६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायापूर्वखण्डे शास्त्रावतारण नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

ग्रहों के जीवाशाधिक्य से मन्वादि सृष्टि हुई और उसके बाद मनुष्य पशु पक्षी आदि की सृष्टि हुई। प्रलयकाल में वे सब भी उन्हीं में लीन होते हैं और वे ग्रह भी अव्यक्त में लीन होते हैं ॥३३॥ हे मैत्रेय ! जिज्ञा अव्यक्त तत्त्व से यह सर्ग उत्पन्न होता है वह सब विज्ञान हमने

तुमसे कहा है, इस विज्ञान को जानने से भूत तथा भविष्यत् सर्ग का ज्ञान प्राप्त कर सकता है॥३४॥ कोई भी विज्ञानी बिना ज्योतिषज्ञान के इसका रहस्य नहीं जान सकता॥ इसलिये सबको और विशेष करके ब्राह्मणों को अवश्य ज्योतिषशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये॥३५॥ जो मनुष्य ज्योतिषशास्त्र के रहस्य को न जानकर इसकी निन्दा करता है वह मरने के बाद राख नरक भोग कर इस ससार में अन्धा होकर जन्म लेता है॥३६॥

इति श्रीबृहत्पाराशर होरासारांशे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया
शास्त्रावतारण नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

पराशर उवाच—

तिर्यक्पंच तथोर्ध्वगाश्च लिखिता रेखाश्च राश्यात्मकं चक्रं स्यात्पुरुहूतदिग्रहमुखा
लग्नादिराशिग्रहाः॥ सलेख्योदयचंद्रकारकपदास्त्वात्महोराघटी वर्गाणां च दशोक्तलग्नपवशात्त-
त्तफलं वक्ष्यति ॥१॥

भावफल विचाररीति

तिरछी पांच और सीधी पांच रेखा करने से राशिचक्र होता है, इस राशिचक्र के पूर्वदिशा के कोष्ठक से आरम्भ करके जन्म समय के लग्न आदि १२ भावों की राशि और ग्रह लिखकर, लग्न, चन्द्रमा तथा कारक, पद, उपपद, आरूढ़, और भाव, होरा, प्रकरण में कहे अनुसार लग्न तथा लग्नेश, भावेश एवं दायेश के द्वारा शुभाशुभ फल कहा जायगा॥१॥

पराशर उवाच

कालात्मा च दिवानायो मनः कुमुदबांधवः ॥ सत्त्वं कुजो विज्ञानीयाद्बुधो वाणीप्रदायकः
॥२॥ देवेज्यो ज्ञानमुत्तमो मृगुर्वीर्यप्रदायकः ॥ विचार्यतामिदं सर्वं छायासुनुश्च दुःखदः ॥३॥
राजानो भानुहिमनू नेता ज्ञेयो धरात्मजः ॥ बुधो राजकुमारश्च सचिवो गुरुभार्गवो ॥४॥
प्रेष्यको रविपुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकौ ॥ एवं क्रमेण वै विप्र सूर्यादीनि विचिंतयेत् ॥५॥
रक्तश्यामो दिवाधीशो गौरगात्रो निशाकरः ॥ अत्युच्चवांगो रक्तभौमो दूर्याश्यामो बुधस्तथा
॥६॥ गौरगात्रो गुरुर्ज्यैः शुक्रः श्यामस्तर्पय च ॥ कृष्णदेहो रवेः पुत्रो जायते द्विजसत्तम ॥७॥
बह्वर्धुंयुगलिकाविष्णुबिडोजशचिका द्विज ॥ सूर्यादीनां लग्नानां च तथा ज्ञेयाः क्रमेण च
॥८॥ क्लीबौ द्वौ सौम्यसौरी च युवतीवृभृमू द्विज ॥ नराः शेषाश्च विज्ञेया भानुर्भौमो गुरुस्तथा
॥९॥ अग्निभूमिभस्तोयवायवः क्रमतो द्विजाः॥ भौमादीनां ग्रहाणां च तत्त्वाभ्यामी प्रकीर्तितः॥
॥१०॥

ग्रह तथा राशिपों के स्वरूप

पराशरजी ने कहा—सूर्य समय का रूप है, चन्द्रमा, मन तथा मंगल को वज्र का रूप जानना, बुध, वाणी का देनेवाला॥२॥ बृहस्पति, ज्ञान और सुख का देनेवाला, शुक्र, वीर्य का

दाता है। शनि, दुःख देनेवाला है, यह सब लग्न से विचार करना चाहिये॥३॥ सूर्य, चन्द्रमा, राजा है। मंगल नेता है, बुध राजकुमार है, गुरु, शुक्र दोनो मन्त्री है॥४॥ शनि दूत है। राहु, केतु सेनारूप मे है। हे मैत्रेय ! इस प्रकार से इन ग्रहो मे राजा आदि भाव की नैसर्गिक स्थिति है॥५॥ सूर्य रक्तश्याम वर्ण है, चन्द्रमा गौरवर्ण है, मंगल अति उच्च अगवाला रक्त वर्ण है, बुध हरितवर्ण है॥६॥ बृहस्पति गौरवर्ण है। शुक्र श्याम वर्ण है, शनि कृष्ण वर्ण है॥७॥ अब देवता कहते है—अग्नि, जल, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, इन्द्राणी क्रम से सूर्यादि ग्रहो के देवता है॥८॥ बुध और शनि नपुंसक, चन्द्रमा, शुक्र ये स्त्री तथा सूर्य, मंगल और गुरु पुरुष है॥९॥ अब तत्त्व सुनिये—अग्नि, भूमि, आकाश, जल वायु ये तत्त्व क्रम से मंगल आदि ग्रहो के जानना॥१०॥

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णौ कुजाकौ अत्रियौ द्विज । शशिसौम्यौ वैश्यवर्णौ शनिःशूद्रो द्विजोत्तम ॥११॥
 चन्द्रसूर्यगुरुसौम्या भृग्वारशनयो द्विज ॥ सत्त्व रजस्तम इति स्वभावो ज्ञायते क्रमात् ॥१२॥
 मधुपिगलदृक्सूर्यश्चतुरस्रः शुचिर्द्विज ॥ पित्तप्रकृतिको धीमान्पुमानल्पकचो द्विज ॥१३॥
 बहुवातकफप्रणाश्रद्धो वृत्ततनुर्द्विज ॥ शुभदृग्मधुवाक्पश्च चचलो मदनातुरः॥१४॥ क्रूररक्ता-
 रणो भौमश्रपलो—दारमूर्तिक ॥ पित्तप्रकृतिकक्रोधी कृशमध्यतनुर्द्विज ॥१५॥ वपुःश्रेष्ठो
 क्लिष्टवाक्च हृतिहास्यरुचिर्बुध ॥ पित्तवान्कफवान्विप्र मास्तप्रकृतिस्तथा॥१६॥ बृहद्गात्रो
 गुरुश्चैव पिगलो मूर्द्धजेक्षणः ॥ कफप्रकृतिको धीमान् सर्वशास्त्रविशारदः ॥१७॥

वर्ण=गुरु, शुक्र, विप्रवर्ण, सूर्य मंगल क्षत्री तथा चन्द्र, बुध, वैश्यवर्ण एव शनि शूद्रवर्ण है॥११॥ चन्द्र, सूर्य, गुरु, बुध, शुक्र, मंगल तथा शनि ये क्रमशः सत्त्व, रजस् तथा तमस् स्वभाव वाले है॥१२॥ (अब ग्रहो की प्रकृति आदि भिन्न भिन्न कहते है।) सूर्य=मधुभापी, पिगल दृष्टि, चौकोर, पवित्र स्वभाव पित्तप्रकृतिवाला, बुद्धिमान्, पुष्प, अल्पकेशी है॥१३॥ चन्द्रमा=वायु तथा कफ प्रकृति वाला, बुद्धिमान् गोल आकृतिवाला, सौम्यदृष्टि, मनोहर वाणी वाला, चंचल तथा कानी है॥१४॥ मंगल=क्रूरस्वभाव, रक्तवर्ण, अरुणदेह, चंचल, उदार हृदयवाला, पित्तप्रकृति, क्रोधी, कृश, अगवाला, मैत्रोला कदवाला है॥१५॥ बुध=सुन्दर शरीर, कम बोलनेवाला, बहुत हैसोड स्वभाव, पित्त तथा कफ प्रकृति, वायुस्वभाव वाला है॥१६॥ बृहस्पति=बृहत् शरीर पिगल दृष्टि, और उठे केशवाला कफ प्रकृति, सर्वविद्याविशारद और बुद्धिमान् है॥१७॥

सुखी कातवपुः श्रेष्ठः सुलोचनो भृगोःसुतः ॥ काव्यकर्ता कफाधिक्यानितात्मा बहूमूर्धनः ॥१८॥ कृशदीर्घतनु शौरिः पिग्दृष्टधनिलात्मकः ॥ स्थूलदतो लसत्पुग खररोमकचो द्विज ॥१९॥ भूत्राकारो नीलतनुर्वनस्पोऽपि भयकरः ॥ वातप्रकृतिको धीमान् स्वर्मानुप्रतिमः शिखी ॥२०॥ अस्थिररक्तस्तथा मज्जा त्वक्चर्म दीर्घघ्रायवः ॥ तासामीशाःक्रमेणोक्ता ज्ञेयाः सूर्यादयो द्विज ॥२१॥ देवालयजल वह्निक्रीडादीना तथैव च ॥ कोशशय्या ह्युत्करणाभीशाः सूर्यादयः क्रमात् ॥२२॥ अयनक्षणवारतुमातपक्षसमा द्विज ॥ सूर्यादीना क्रमाज्ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥२३॥ कटुलवणतिक्तमिष्टमधुरेसुकयापकाः ॥ क्रमेण सर्वे विज्ञेयाः सूर्यादीना

द्विजोत्तम ॥२४॥ बुधेऽप्यौ बलिनी पूर्वे रविमौमौ च दक्षिणे ॥ वारुणः सूर्यपुत्रश्च सितचंद्रौ
तथोत्तरे ॥२५॥ निशायां बलिनश्चंद्रकुजसौरा भवति हि ॥ सर्वदाज्ञो बलीज्ञेयो दिनशेया
द्विजोत्तम ॥२६॥ कृष्णे च बलिनः क्रूराः सौम्या वीर्यपुताः सिते ॥ सौम्यायने सौम्यखेटो बली
याम्यायनेऽपरः ॥२७॥

शुक्र=मुखी, सुन्दर, श्रेष्ठ, मुलोचन, कवि, वाफ वात प्रकृति तथा कुचित केशवाला
है ॥१८॥ शनि=कुश और लम्बा कद, पिगलदृष्टि, वायुप्रकृति, स्थूल दांतवाला, शोभित
पुरुषाकृति तथा कडे केश और रोमवाला है ॥१९॥ राहु तथा केतु=धूम्र, नीलवर्ण, बनचारी,
भयकर रूप तथा वातप्रकृति वाले हैं ॥२०॥ सूर्यादि ग्रहों के स्थान-देवमन्दिर, जलागार,
अग्निस्थान, खेलने का स्थान, कोशागार, शय्या, कूड़ा घर ये क्रमशः जानना ॥२१॥ इसी
प्रकार समय-अयन, मुहूर्त, वार, ऋतु, मास, पक्ष तथा वर्ष ये क्रमशः सूर्य आदि ग्रहों के
निश्चित हैं ॥२३॥ रस क्रमशः-कटु, लवण, तिक्त, मीठा, मधुर, ईश्वर, कषाय, ये सूर्य आदि ग्रहों
के रस हैं ॥२४॥ दिशा-बुध तथा गुरु पूर्वबली, सूर्य मगल, दक्षिण बली, शनि पश्चिम बली
तथा शुक्र चन्द्रमा उत्तर बली हैं ॥२५॥ समय बल-चन्द्रमा, मगल, शनि ये रात्रि में बलवान्
हैं, बुध सर्वकाल में बली है, सूर्य, गुरु, शुक्र ये दिन में बली हैं ॥२६॥ अयन तथा पक्ष
बल-क्रूरग्रह कृष्णपक्ष में और सौम्यग्रह शुक्लपक्ष में बली हैं। इसी प्रकार उत्तरायण में
सौम्यग्रह और दक्षिणायन में क्रूरग्रह बली हैं ॥२७॥

स्वविवसतमहोरामासपूर्वकालवीर्यकम् ॥ शकुबुधुचराद्या वृद्धितो वीर्यवतराः ॥२८॥
स्युताश्च जनयति सूर्यो दुर्मगान्सूर्यपुत्रकः ॥ सौरोपेतास्तथा चन्द्रः कटुकाद्यान्धरासुतः ॥२९॥
गुरुजौ सफलांविप्र पुण्यवृत्तान् मृगोः सुतः ॥ नीरसान्सूर्यपुत्रश्च एव ज्ञेयाः खगा द्विज ॥३०॥
राहुश्चांघालजातिश्च केतुर्जात्यंतरस्तथा ॥ शिखिस्वर्मानुमदानां यत्मीकं स्थानमुच्यते ॥३१॥
चित्रकंया फणींद्रस्य केतोश्छिद्रपुतो द्विज ॥ सोम राहोर्नीलमणिः केतोर्ज्ञेयो द्विजोत्तम ॥३२॥
गुरोः पीतांबरं विप्र मृगोः क्षीमं तथैव च ॥ रक्त क्षीम भास्करस्यद्वंदोः क्षीम सितं द्विज ॥३३॥
बुधस्य तु कृष्णक्षीमं रक्तचित्रं कुजस्य च ॥ वस्त्रं चित्र शनेर्विप्र पट्टवस्त्र तथैव च ॥३४॥
मृगोर्ध्वतुर्विप्रश्च कुजभान्वोश्च पीलमकः ॥ चंद्रस्य वर्षा विज्ञेया शरच्छैवतया विदः ॥३५॥
हेमतोऽपि गुरोर्ज्ञेयः शनेस्तु शिशिरो द्विज ॥ अष्टौ मासाश्च स्वर्मानोः केतोर्मासत्रय द्विज ॥३६॥
राह्वारपंगुचंद्राश्च विज्ञेया धातुसेचराः ॥ मूलग्रहौ सूर्यशुक्रौ अपरा जीयसत्तकाः ॥३७॥ ग्रहेषु मंदो
वृद्धोऽस्ति आपूर्वद्विप्रदायकः ॥ नैसर्गिके बहुसमान्दाति द्विजसत्तम ॥३८॥

अपने दिन, वर्ष, होरा, मास, राशिक्रमण तथा समय में बलवान् होते हुए भी शनि,
मगल, बुध गुरु शुक्र, चन्द्रमा, राहु तथा सूर्य क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक बली (नैसर्गिक)
हैं ॥२८॥ बली होने का फल कहते हैं-सूर्य बली हो तो मूल-वनस्पति की विज्ञेय उत्पत्ति
करता है, इसी प्रकार शनि, दुर्भय (कटीनी झाड़ी, शमी आदि) की, चन्द्रमा, दूधवाले (दूध
के समान रसवाले) वृक्षों की, मगल, कढवे एवं बुध तथा गुरु, फलवाले वृक्षों की तथा शुक्र,
पुण्यवाले वृक्षों की एवं शनि, नीरस वृक्षों की विज्ञेय वृद्धि करता है ॥३०॥ ग्रहों की

जाति-राहु चाण्डाल, केतु वर्णसन्तर, राहु, केतु तथा शनि का बल्मीक स्थान कहा है॥३१॥

वस्त्र तथा आभरण-राहु की चित्रविचित्र वन्या (गुदडी) केतु की सछिद्र (फटी हुई) राहु की धातु सोसा तथा केतु का नीलमणि है॥३२॥ हे मैत्रेय ! गुरु का वस्त्र, पीताम्बर, शुक्र का महीन (फाइन), सूर्य का लाल तथा महीन, चन्द्रमा का श्वेत महीन॥३३॥ इसी प्रकार बुध का काला महीन और मंगल का लाल तथा सचित्र और शनि का रेशमी तथा चित्रित वस्त्र होता है॥३४॥ ग्रहों की ऋतु-शुक्र की वसन्त ऋतु, मंगल और सूर्य की ग्रीष्म तथा चन्द्रमा की वर्षा और शरद् ऋतु है॥३५॥ बृहस्पति की हेमन्त तथा शनि की शिशिर ऋतु है। राहु अपना प्रभाव ८ मास तक और केतु ३ मास तक करता है॥३६॥ ग्रहों की धातु-राहु, मंगल, शनि, चन्द्रमा ये धातु के स्वामी हैं, सूर्य तथा शुक्र मूल के तथा बुध गुरु केतु ये जीव सजक है॥३७॥ ग्रहों में शनि वृद्ध अर्थात् निर्बल है परन्तु नैसर्गिक दशा में यह शनि बहुत वर्ष तक आयुर्दाय प्रदाता है॥३८॥

यहां ग्रहों का स्वभाव आदि वर्णन समाप्त हुआ

अथ पचांगस्थितग्रहेषु चालनमाह

स्वेष्टादये भवेत्पत्ति पत्तौ स्वेष्ट विशोधयेत् ॥ स्वेष्टात् पृष्ठे भवेत्पत्ति स्वेष्टे पत्ति विशोधयेत् ॥ ऋण धन तथा ज्ञेय चालने विधिरेव हि ॥३९॥

अथ ग्रहाणां तात्कालिकीकरणमाह

गतगम्यविनाहतद्युमुक्ते सरसाप्तशविषुगपतो ग्रह स्यात् ॥ तात्कालमवस्तया घटिघ्ना सरसैर्लब्धकलोनस्युत स्यात् ॥४०॥

इष्टकालिक ग्रह स्पष्ट करने के लिये पचांग स्थित ग्रहस्पष्ट में 'चालन'

अपने इष्टकाल से आगे की पत्ति हो तो पत्ति में इष्ट (वार, घटी, पल) घटाना चाहिये। अब अपने इष्टकाल से पीछे की पत्ति हो तो इष्ट में पत्ति घटाने से जो ज्ञेय अंक रहता है वह (वार, घटी, पलात्मक) चालन होता है और अम से प्रथम ऋण तथा दूसरा धन चालन होता है॥३९॥

ग्रहों का तात्कालिक स्पष्ट करना

ऋण तथा धन चालन से ग्रह की दैनिक गति को गुणा करके ६० वा भाग देकर लब्ध, अंग, घटी, पल अंक को पत्ति के ग्रहस्पष्ट में चालन ऋण हो तो घटावे और धन हो तो जोड़ने से इष्ट दिन वा ग्रहस्पष्ट होगा। इसी प्रकार चालन के घटी, पल अंक से ग्रह गति गुणित कर उपर्युक्त रीति से सस्कार करने पर तात्कालिक अर्थात् इष्टकाल का स्पष्ट ग्रह होता है॥४०॥

अथ भयातभभोगसाधनम्

इष्टमधिक नक्षत्रन्यून तदा इष्टादित्यनेन ज्ञेयम् । इष्टाद्विहीन च दिनर्क्षनाडी भयातसत्ता भवतीह तस्य । दिनर्क्षनाडी खरसेषु शुद्धा निजर्क्षयुक्त सहिते भभोग ॥४१॥ इष्ट न्यून नक्षत्रमधिक तदा गतर्क्षनाड्येति ज्ञेयम् ॥ गतर्क्षनाडी खरसेषु शुद्धा सूर्योदयादिष्टपटीषु युक्ता ॥ भयातसत्ता भवतीह तस्य निजर्क्षनाडीसहिते भभोग ॥४२॥

अथ चन्द्रस्पष्टमाह

गतर्क्ष पट्टिगुणित भभोगेन च भाजितम् ॥ दद्यादिपट्टिगुणितैर्लब्ध तत्र सुयोजयेत् ॥४३॥ तत्त्वापि द्विगुण कृत्वा ह्यनेन विभजेत्सु ॥ मृगाकलव्यमशादीन्सुसाधय द्विजोत्तम ॥४४॥ खखग्न्याष्टषेदेन गतिर्भभोगभाजिता ॥ एव चद्रस्य विज्ञेया रीति स्पष्टतरा बुधे ॥४५॥

भयात-भभोग साधन

यदि इष्ट अधिक और नक्षत्र कम हो तो-
इष्टमे से दिन नक्षत्र की घटीपल घटाने से 'भयात' होता है और दिन नक्षत्र की घटी पलको को ६० में से घटा कर वर्तमान नक्षत्र की अवधि अगले दिननक्षत्रकी घटी पर जोड़ने से भभोग होता है ॥४१॥
यदि इष्ट कम और नक्षत्र अधिक हो तो-
दिन नक्षत्र की घटी पल को ६० में घटा कर इष्ट में जोड़ने में भयात हाता है और इष्टवासिक नक्षत्र की घटी-पल जोड़ने से भभोग होता है ॥४२॥

चन्द्र स्पष्ट करना

'भयात' को ६० में गुणा करके 'भभोग' का भाग देकर जो अव प्राप्त हो उसमें गत अश्विनी आदि नक्षत्र सख्या को ६० में गुणा कर जोड़े ॥४३॥ और अत्र इस गति को २ में गुणा कर ९ का भाग देने में (ऊपर के अव में ३० का भाग देने पर) जो अव प्राप्त होगा वह राशि, अज, कना, विकलात्मक चन्द्रस्पष्ट होगा ॥४४॥

चन्द्रमा की गति का स्पष्ट

चन्द्रगति स्पष्ट करने के लिये चन्द्रमा की मध्यम गति ४८००० में भभोग की सख्या का भाग देने में चन्द्रमा की इष्ट दिन की गति स्पष्ट होती है ॥४५॥

यह होगामास्य सन्ध्याओं के शुभाशुभ पल का प्रदर्शक है। इस पन्नापत्र निर्णय के उपरग्न यह स्पष्ट और भावस्पष्ट है, यह मिथ्यात्व (करण) श्रुतों का विषय होने में इनके साधन की रीति भगवान् पराशरजी ने नहीं कही है। तथापि पञ्चांगमिद्व यहस्पष्टों में इष्ट दिन और

समय का चालन देकर ग्रह और भावस्पष्ट की रीति अन्य ग्रन्थों से लेकर आवश्यक प्रक्रिया मूल में ही सगृहीत कर दी गई है, तथा कुछ अन्य आवश्यक अयनाश आदि भी धेपकम्प से लिखे गये हैं। यद्यपि भारत में वेधसिद्ध पचागो का अभाव है, तथापि वर्तमान में 'जन्मभूमि, मदेश, विजुद्ध सिद्धान्त पञ्जिका, इण्डियन एफेमेरी, सरस्वती तथा काशी से निकलनेवाले अनेक पञ्चाग ऐसे उपलब्ध हैं, जिनमें दैनिक ग्रह स्पष्ट रहते हैं, उनसे केवल इष्ट मात्र का चालन देना होगा, यदि दैनिक स्पष्ट प्राप्त न हो तो साप्ताहिक पक्षि से चालन करके ग्रह स्पष्ट करना चाहिए। ग्रह स्पष्ट करने में दैनिक प्रातः कालिक या जिस इष्ट के ग्रह स्पष्ट हो उससे अथवा साप्ताहिक समीप की इष्ट से आगे या पीछे की पक्षि से उपर्युक्त नियमानुसार चालक करके तब इस चालक से ग्रह गति को गुणा करना चाहिए। इस गुणन में प्रायः चालक में घटी, पल अथवा दिन, घटी, पल, अक, सख्या रहती है, यह गुणक सख्या है, तथा ग्रह गति भी घटी पल ये दो सख्या रहती है। अतः भिन्न जातीय सख्या के गुणन में या तो एक जाति करके गुणन होता है, जिसमें अक पात बहुत होता है, अतः सरल रीति 'गोमूत्रिका' रीति है और यही प्रचलित भी है। इस रीति से 'गुणक' सख्या के अंको को ऊपर कोष्ठको में क्रमशः रखा जाता है और ग्रह गति के घटी, पल जो कि 'गुण्य' है वे प्रत्येक अक के नीचे रखे जाते हैं। जैसे—

| गुणक- चालक- | दिन | घटी | पल |
|-------------------|-----|-----|-----|
| | घटी | घटी | घटी |
| गुण्य- ग्रहगति | पल | पल | पल |

इस प्रकार सन्निवेशित करके ऊपर के प्रत्येक गुणकाक से नीचे की घटी पल गुणित कर पल में ६० का भाग देकर अपने ऊपर की घटी सख्या में युक्त करें। पश्चात् गुणक पल गुणित गुण्य की घटी राशि को गुणक घटी के पलाक में युक्त कर ६० का भाग देकर ऊपर युक्त करके उसको भी गुणक दिनाक की पलसख्या में युक्त कर ६० का भाग देकर लब्ध सख्या को घटी सख्या में जोड़े, ६० से अधिक होने पर ६० का भाग देने से अशः स्थानी सख्या होती है। इस प्रकार आये हुए अशः, घटी, पल को पक्षि के ग्रहस्पष्ट में, 'चालक' ऋण हो तो घटावे और 'धन' हो तो जोड़े। वही ग्रह में ऋण हो तो जोड़े और धन हो तो घटावे तथा राहु केतु में सदा विपरीत के ही समान करें तो इष्टकाल का ग्रह स्पष्ट होता है।

उदाहरण—

श्री स० २०१४ भाद्रपद कृष्णपक्ष ३ भौमवासरे दिने ९/१० (इ० स्टे० टा०) समये (कलकत्ता नगरे) कस्यचिज्जन्म । अक्षांश २२।३४ पलभा ४/५९ । अयनांश २३ ॥ दिनमान ३२। ४०॥ यहा 'सरस्वती' पञ्चाग में समीप की गत पक्षि थावण शुक्ल १५

शनिवार इष्ट २५/३४ है। प्रथम जन्मकाल का इष्ट हुआ— (दिने ९।१०+०।२३=९।३३
वेदान्तर = ०।५=९।२८ का घट्यादि इष्ट—) १०।०० इसमें पक्षि का इष्टकाल घटाया तो
२।४५।०२ दिनादि धन चालक प्राप्त हुआ। इस चालक से सूर्य गति ५।८।१२ को गोमूत्रिका
न्याय से गुणा किया तो २।४०।५ दिनादि फल प्राप्त हुआ। इसको पक्षिस्थ सूर्य
४।२०।४८।१३ में युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ सूर्य स्पष्ट हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों
को स्पष्ट किया तो—म ४।२७।४५।३८ म० ३९।२६, बु० ४।२१।३४।४५ म० ९९।४८
व० ५।१३।२७।३६ म० १३।१८ शु० ६।१।५।८।३४ म० ७१।२२ म० ७।१५
०५।१२ म० २/४२ रा० ६।२०।०५।१५ म० ३।११ ॥ अब चन्द्रस्पष्ट के लिए भोग
६६।१ भयात् ३०।१ से उपर्युक्त रीति से प्राप्त स्पष्ट चन्द्र १०।२६।३०।३३ । म० ७२।५०
इस प्रकार ९ ग्रह स्पष्ट हुए—

| सू० | च० | म० | बु० | वृ० | शु० | म० | रा० | के० |
|-----|-----|----|-----|-----|-----|----|-----|-----|
| ४ | १० | ४ | ४ | ५ | ६ | ७ | ६ | ९ |
| २३ | २६ | २७ | २१ | १३ | १ | १५ | २० | २० |
| २८ | ३० | ४५ | ३४ | २७ | ५८ | ०५ | ०५ | ०५ |
| १८ | ३३ | ३८ | ४५ | ३६ | ३४ | १२ | १५ | १५ |
| म० | म० | म० | म० | म० | म० | म० | म० | म० |
| ५७ | ७२७ | ३९ | ९९ | १३ | ७१ | २ | ३ | ३ |
| २२ | ५० | ३६ | ४८ | १८ | २२ | ४२ | ११ | ११ |

अथोच्चनीचग्रहा

अजो द्यौः मृग कन्या कुलीरसप्ततीतिका ॥ मूर्यादीनां क्रमावैतास्तुमसन्ना प्रकीर्तिता ॥
नीचास्तत्तप्तमा ज्ञेया ग्रहा नीचा विनिश्चिता ॥४६॥ सूर्यस्य भागे दशमे तृतीये चद्रस्य
जीवस्य तु पचमेशे ॥ सौरस्य विशेषे त्वधिसप्त केतोर्विष्टाद्भृगो पचदशे बुधस्य ॥४७॥
भौमस्य विशेषेष्टपुते परोक्षैर्विशालवे सूर्यसुतस्य नीचा ॥४८॥

अथ मूलत्रिकोणमाह

विंशतिरशा सिंहेत्रिकोणमपरेस्वभवतर्कस्य ॥ उच्च भागत्रितय द्युमिदोऽस्यात्रिकोणमप-
रेषा ॥४९॥ द्वादश भागा मेघे त्रिशोऽपरे स्वमे तु भौमस्य ॥ उच्चफल कन्याया बुधस्य
तिथ्यश के सदा चित्यम् ॥५०॥ परतस्त्रिकोणजाते पवभिरदौस्वराशिज परत ॥
दशमिभागेर्जीवत्रिकोणफल स्वम पर चापे ॥५१॥ शुक्रस्य तु तिथयोऽज्ञास्त्रिकोणमपरे तुते
स्वराशिश्च ॥ कुम्भे त्रिकोणनिजमे रविजस्य रविर्ध्या सिंहे ॥५२॥

ग्रहों का 'उच्च' तथा 'नीच'

मूर्यादि ग्रहों की क्रम से मेघ, बुध, मकर कन्या, रवर्क, मीन तथा तुला में उच्चराशि है

वे भाव स्थित ग्रह परस्पर शत्रु होते है। तथा मित्र X मित्र=अतिमित्र । मित्र X सम=सम । सम X शत्रु= शत्रु। और शत्रु X शत्रु=अतिशत्रु, यह 'पञ्चधामैत्री' कही जाती है॥५७॥५८॥

| निसर्गमैत्रीचक्रम् | | | | | | | |
|--------------------|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-------|
| सू० | च० | म० | बु० | वृ० | शु० | श० | घट |
| च० | सू० | र० | र० | र० | बु० | बु० | |
| म० | | च० | च० | च० | श० | शु० | मित्र |
| गु० | बु० | गु० | गु० | म० | | | |
| बु० | म० | गु० | म० | गु० | श० | ० | सम |
| शु० | ० | बु० | च० | बु० | र० | च० | शत्रु |

| तात्कालिकमैत्रीचक्रम् | | | | | | | |
|-----------------------|---------------------|-----|-----|-----|-----|-----|-----|
| | सू० | च० | म० | बु० | वृ० | शु० | श० |
| मित्र | बु० | श० | वृ० | वृ० | श० | श० | व० |
| | शु० | ० | श० | शु० | म० | बु० | शु० |
| | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| शत्रु | म० | म० | म० | म० | च० | च० | ० |
| | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | ० | ० | ० |
| | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| मित्र | १, ३, ४, १०, ११, १२ | | | | | | |
| शत्रु | १, ५, ६, ७, ८, ९, | | | | | | |

| जन्मलग्नचक्रम् | | | |
|----------------|------|------|-----|
| १ | ८ श | ६ वृ | ५ म |
| | ७ शु | रा | ४ |
| १० | के | १ | २ |
| ११ | १२ | | |

| अथ पंचधामैत्रीचक्रम् | | | | | | | |
|----------------------|----------------|---------|---------|---------------|---------------|----------------|---------------|
| सू० | च० | म० | कु० | वृ० | शु० | श० | ग्रह |
| वृ | ० | वृ | शु | सू म | शु श | वु० ० शु | ऽति० मि० |
| ० | श० | श शु | वृ श | | म वृ सू | वृ | मि० |
| व श म शु | वु० ० सू | सू व | सू | कु शु व | ० | सू च म | सम० |
| वु | म वृ शु | ० | म | ० | ० | ० | शत्रु |
| ० | ० | वु | व | ० | व | | ऽति० शत्रु |

| अथ शुभफलचक्रम् | | | | | | |
|----------------|-----|------|-------|----|-----|-------|
| उच्च० | मूल | स्व० | मित्र | सम | नीच | शत्रु |
| १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ४५ | ३० | १५ | ७ | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ३० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

| अथाशुभफलचक्रम् | | | | | | |
|----------------|-----|------|-------|----|-----|-------|
| उच्च० | मूल | स्व० | मित्र | सम | नीच | शत्रु |
| ० | ० | ० | ० | ० | १ | १ |
| ० | ७ | ४५ | ३० | ४५ | ० | ० |
| ० | ३० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

अथ ग्रहाणां बलमाह

स्वीच्चे शुभं बलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम् ॥ स्वर्से दलं मित्रमेहे पादमात्रं प्रकीर्तितम् ॥५९॥
पादार्थं समभे प्रोक्तं व्यर्थं नीचास्तशत्रुो ॥ तद्वदृष्टबलं ब्रूयाद्वचत्ययेन विवक्षणः ॥६०॥

अथ धूमाद्यप्रकाशग्रहस्पष्टीकरणम्

लग्ने चन्द्रो वरपि वशापुनर्निनाशनम् । इति धूमादिदोषाणां फलं पञ्चासन्नोदितम् ॥६१॥

ग्रहो का बलपरिमाण

शुभग्रहच०, बु० गु० शु० का बल उज्ज्वराशि का होने से पूर्ण तथा मूलत्रिकोण में तीनपाद और मित्रराशि में एकपाद, अपनी राशि में आधा समराशि में पादार्ध तथा नीच, अस्त और शत्रु राशि में बलशून्य होता है। इसी प्रकार पाप ग्रह इससे विपरीत बल पाते हैं ॥५९॥६०॥

धूमादि अप्रकाशग्रह फल तथा स्पष्टीकरण

आगे कहे गये धूमादि अप्रकाशग्रह, लग्न अथवा चन्द्रमा के साथ हों तो वश, आयु और ज्ञान का नाश करते हैं। यह फल पूर्वकाल में ब्रह्मा ने कहा था ॥६१॥

चत्वारो राशयो भानौ युक्तमाणास्त्रयोदश ॥ धूमो नाममहादोषः सर्वकर्मविनाशकः ॥६२॥
धूमो मखतः शुद्धी व्यतीपातत्रे दोषदः ॥ स पदमेव व्यतीपाते परिवेषस्तु दोषकृत् ॥६३॥
परिवेषश्च्युतश्चक्रादिद्रवापश्च दोषदः ॥ अत्यष्टयंशयुते चापे केतुष्वेष्टः परो विषम् ॥६४॥
एकराशिपुते केतौ सूर्यः स्यात्पूर्वदत्तसमः ॥ अप्रकाशग्रहाश्चैते दोषाः पापग्रहाः स्मृताः ॥६५॥

स्पष्टीकरण रीति

तात्कालिकस्पष्टसूर्यमें ४।१३।२० जोड़ने में 'धूम' नाम का महादोष होता है, जो सब कार्य का नाश करने वाला है ॥६२॥ इस धूम को १२ राशि में बम राशि में 'व्यनिपात' दोष (नाम) होता है। इसमें ६ राशि योग करने में 'परिवेष' नाम का दोष होता है ॥६३॥ परिवेष को १२ राशि में घटाने से 'इन्द्रचाप' नाम का दोष है। इन्द्रचाप में १६ अ० ४० क० योग करने में 'केतु' होता है ॥६४॥ केतु में १ राशि योग करने में पूर्वोक्त स्पष्ट सूर्य के समान अंक होता है। इस प्रकार ये ५ अप्रकाश ग्रह स्पष्ट होते हैं ॥६५॥

उदाहरण-(बाल्यनिबं)

जन्मवालीन सूर्य स्पष्ट २।४।०८।१ इसमें ४।१३।०० योग किया तो 'धूम' ६।१७।४८।१ हुआ।
१२ राशि में घटाया तो 'व्यनीपात' ५।१०।११।५९ हुआ। ६ राशि युक्त किया तो १।१।२०।११।५९ यह 'परिवेष' हुआ, पुन १० में घटाया, १।७।४८।१ तो इन्द्रचाप हुआ,
१६।४० योग किया तो 'केतु' १।४।०८।१ हुआ। इसमें १ राशि युक्त की तो पूर्वोक्त ०।४।०८।१ सूर्य हुआ। यह

| अप्रकाशिकक्षेपकाः स्युः | | | | |
|-------------------------|-----------|--------|------------|-------|
| धूमः | व्यतीपातः | परिक्व | इन्द्रधनुः | ध्वजः |
| रा १४ | १२ | ६ | १२ | ० |
| मग १३ | ० | ० | ० | १५ |
| क २० | ० | ० | ० | ४० |

| अप्रकाशिकग्रहाः स्पष्टाः स्युः | | | | | | |
|--------------------------------|-----------|--------|------------|-------|--------|----------|
| धूमः | व्यतीपातः | परिक्व | इन्द्रधनुः | ध्वजः | गुलिकः | प्राणपदः |
| ६ | ५ | ११ | ० | १ | ५ | ३ |
| १७ | १२ | १२ | १७ | ४ | ६ | ४ |
| ४८ | ११ | ११ | ४८ | २८ | ० | ० |
| १ | ५५ | ५५ | १ | १ | ० | ० |

अथ जन्मकाले गुलिकसाधनमाह

रविवारादि शन्यत गुलिकादि निरूप्यते ॥६६॥ दिवसान्तरात् कृत्वा वारेशादगणयेत्क्रमात् ॥६७॥ अष्टमाशो निरीश स्याच्छन्यशो गुलिकः स्मृतः ॥ रात्रिरप्यष्टधा भक्ता वारेशात्पचमादित ॥६८॥ गणयेदष्टम खडो निष्पत्तिं परिकीर्तित ॥ शन्यशे गुलिकः प्रोक्तो गुर्वशे यमघटक ॥६९॥ भौमाशे मृत्युरादिष्टो रव्यशे कालसजकः ॥ सौम्याशेऽर्द्धग्रहरकः स्पष्टकर्मप्रदेशकः ॥७०॥

गुलिक साधन

रविवार आदि से शनिवार तक के गुलिक आदि योग कहते हैं। दिनमान में ८ का भाग देकर प्राप्त अष्टमाश को प्रथम भाग और द्विगुण द्वितीय भाग इसी प्रकार ८ भाग कल्पना करे और बार के स्वामी से क्रम से सातों ग्रहों के सात काल जाने। आठवा भाग निरीश अर्थात् अधिपति रहित होता है। इन भागों में शनि वा भाग गुलिक कहा जाता है। इसी प्रकार रात्रि के भी ८ भाग करके वारेण से पाँचवे ग्रह से आरंभ करके सातों ग्रहों के भाग समझे। आठवा भाग निरीश है। इन सातों भागों में शनि का भाग गुलिक है और गुरु का भाग यमघटक है। मंगल का भाग मृत्यु सजक है। सूर्य का भाग कालवेला और बुध का भाग अर्धयाम होता है। ये योग अपने नामानुसार कर्म के निर्देशक हैं।

(श्लोक स० ६६ स ७० तक)

उदाहरण—थी० स० २०१४ भाद्र० कृ० ३ भौमे—दिनमान ३२।४ में ८ का भाग दिया लब्ध ४।५ यह वारेण मंगल है अतः मंगल से गणना किया—तो प्रथम मंगल का सूर्योदय स ४।५ (घटी पल तक) मृत्युयोग। बाद ८।१० तक अर्धयाम। बाद १२।१५ तक यमघटक इसके बाद शुक्र का भाग त्यागकर १६।२० से २०।२५ तक गुलिक योग है। इसमें गुलिकारंभ में दृष्ट १६।२१ पर पूर्वोक्त रीति से लग्नस्पष्ट करने से। ७।२१।४०।२० यह गुलिक लग्न स्पष्ट

| गुलिकगुणकध्रुवांकाः स्युः | | | | | | | |
|---------------------------|-------|-------|-----|-----|-------|-----|--------|
| रवि | शुक्र | मङ्गल | बुध | शुभ | शुक्र | शनि | ग्रहा |
| ७ | ६ | ५ | ४ | ३ | २ | १ | दिवा |
| ३ | २ | १ | ७ | ६ | ५ | ४ | रात्रि |

गुलिक लग्न साधन

गुलिकारम्भसमयात् लग्न सप्ताधयेद् बुधः । तत्लग्नं च तत् सर्वं जातकस्य फलं भवेत् ॥७१॥

दिन के ८ भागों में से 'गुलिक' भाग आरम्भ के इष्ट पर लग्न स्पष्ट करो। उसका नाम 'गुलिकलग्न' है। उससे आगे कहे अनुसार जातक का शुभाशुभ फल जाने ॥७१॥

अथ प्राणपदसाधनमाह

घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्या १५ ज्ञेया पर्युता ॥ दिनकरेण पृथक् शेव प्राणपदं स्मृतम् ॥७२॥
शेषात्पलाताद्द्विगुणीविधाय राश्याशमूर्यर्क्षेति योजिताय ॥ तत्रापि तद्वाशिवरान् क्रमेण तद्वाशिराश्याशमूर्यदेक्यता स्यात् ॥७३ पुनः—स्वेष्टकालपत्नीकृत्य तिथ्याप्त भादिकं च यत् ॥७४॥
चराण्डिभगे भाने भानी युद्धनमवे सुते ॥ स्फुटं प्राणपदं तस्मात्पूर्ववज्जोध्यतेऽनु ॥७५॥

इति श्री बृ० प० १० होरासाराशे पूर्वखण्डे ग्रह-गुण-स्वरूपादिकवर्णनो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

प्राणपदलग्नसाधन

जन्म इष्ट घटी को ४ से गुणा करके पृथक् स्थापन करे तथा पल यदि १५ में अधिक हो तो १५ का भाग देकर तत्त्रय चतुर्गुणित घटी में योग करे, यह राशि है अतः १२ से अधिक हो तो १२ का भाग देकर शेष अंक ले। अथवा इष्ट घटी पल को पलात्मक (घटी को ६० से गुण कर पलात्मक योग) करे, १५ का भाग दे, नष्ट अंक राशि और शेष को द्विगुणित करे, यह अंक है। अब इस अंक को सूर्य, चर राशि में हो तो राशि आदि में योग करे और स्थिर राशि में सूर्य हो तो राशि में ८ जोड़कर एवं द्विस्वभाव राशि में सूर्य हो तो ४ जोड़कर पूर्वोक्त राशि अंक का योग करे तो शुद्ध 'प्राणपद लग्न' स्पष्ट होता है। इसका फलाफल आगे ६ठे अध्याय के अन्त में कहा गया है ॥श्लो० ७२ में ७५ तक॥

प्राणपदलग्न का उदाहरण—

इष्ट ६।४३ सूर्यस्पष्ट २।३।१।२७ है।

यहां पर इष्ट घटी ६ को ४ से गुणा लिया तो २४ हुआ, इसको अलग रखा तथा पल ४३

मे १५ का भाग दिया तो २ लब्ध हुआ, इसको पूर्व प्राप्त २४ मे युक्त किया तो २६ हुआ, शेष १३ को ६० से गुणा करके ३० का भाग देने से अथवा पलाव १३ को द्विगुण करने से २६ अंश प्राप्त हुआ तो २६।२६ हुआ, राशि मे १२ का भाग दिया तो २।२६ हुआ। यहा सूर्य द्विस्वभाव राशि मे है अतः २।२६ मे ४ राशि जोडा तो ६।२६ हुआ, इसको स्पष्टसूर्य २।३।१।२७ मे जोडने से ८।२९।१।२७ यह प्राणपद लग्नस्पष्ट हुआ।

इति श्री० बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया ग्रहगुणस्वरूपादिकथन
नाम द्वितीयोऽध्याय ॥२॥

अथ इष्टशोधनमाह

पराशर उवाच—यदेतज्जन्मलग्नं वै तन्निपेकस्य चन्द्रमा ॥ जन्मचन्द्रस्य राश्यादि तल्लग्नं वै
निपेकजम् ॥१॥ इति सिद्धविज्ञानीयात्पथा शभुप्रणोदितम् । जन्मलग्नस्य घटिका भक्ता वसुशतै-
रिह ॥२॥ लब्धमाधानगतमजन्मपूर्वकमाप्तकम् । शिष्टा सख्या तु विप्रेन्द्र खरसघ्ना तु भाजिता
॥३॥ सशून्य वसुभिश्चैव आधानसमकालभम् । यस्मिन् काले भभुक्त तत् मध्यमेष्ट तदेव हि ॥
तस्मात् प्रसाधयेत् सूर्यं भोग्यकालं ततो नयेत् । जन्मचन्द्रस्य भुक्तं वै कालमानीय यत्नतः ॥
जन्मकालीनं चन्द्रस्तु गर्भलग्नं विदुर्गुहा । तत्सर्वं साधयेद्धीमान् साधनाच्चन्द्रं सूर्यभात् ॥

पराशरजी ने कहा—जो यह जन्मलग्न है उसी के समान गर्भाधान समय का चन्द्र स्पष्ट होता है। इसी प्रकार जन्म समय का जो चन्द्रस्पष्ट है उसीके आसन्न (आसपास) आधानकाल के लग्न का राशि अंश होता है। ऐसा इष्टशोधन मे स्वपसिद्ध नियम है यह भगवान् शंकर ने कहा है। राश्यादि जन्मलग्न को घटघात्मक करके ८०० आठ सौ का भाग देने से लब्ध सख्या गर्भाधान के गतनक्षत्र की होती है शेष को भी ६० से गुणा कर ८०० का भाग देने से आधान काल के वर्तमान नक्षत्र का भयात होता है और इसकी जन्म से नौ मास पूर्व देखना चाहिए वह भयात जिस दिन जिस इष्ट मे प्राप्त हो वह आधान काल का मध्यम इष्ट है। उस मध्यम इष्ट पर सूर्यस्पष्ट करके उसका (सूर्य का) भोग्य काल लेना और जन्मकालीन चन्द्रस्पष्ट का भुक्तकाल लेना। जन्मकाल का चन्द्रस्पष्ट ही आधानकाल का लग्नस्पष्ट है यह होरा शास्त्रजी ने कहा है चन्द्र तथा सूर्य स्पष्ट से होने वाली सब क्रिया अयनाश युक्त करके सावधानता से गणित करनी।

भोग्यं भुक्तं सुसेयोज्यं मध्योदयसमन्वितम् । खरसाप्तं तत् कुर्यात् निपेकेष्टं सुमध्यमम् ॥
लग्नस्पष्टं तत् कुर्यात् सुविचार्य तपोधन । अस्य लग्नस्य राश्यादि जन्मेन्दोश्च तथैव च ॥
मेधेयं सुमहाप्राज्ञः । समासलग्नं भवेत् । एतयोरन्तरं कार्यं लग्नोदयं हतं तथा ॥ अष्टादश
शतेनान्तं फलं घटघादि जायते गर्भलग्ने जन्मचन्द्रात् अल्पे चैवाधिके तथा ॥ पूर्वगतं धनं
स्यात् घटघातेन निपेकजे । मध्येष्टे तु, तत्तच्छ्रद्धं स त्याज्जन्मोदयमितं ॥ अस्य चन्द्रस्य
भुक्तं जन्मसूर्यस्य भोग्यकम् । योज्यं मध्योदयैश्चैव जननेष्टं स्फुटं भवेत् ॥

पूर्ववर्णे तृतीयोऽध्यायः

इस प्रकार सूर्य का भोग्यकाल तथा चन्द्रमा का भुक्तकाल जोड़ना और उसमें मध्यगत राशियों के उदय पल जोड़ना, इस सख्या में ६० का भाग देना तो आधान काल का मध्यम इष्ट होता है। हे तपोधन! इस इष्ट से लग्नस्पष्ट करना तो इस स्पष्ट किये हुए लग्न की राशि यदि तथा जन्मकाल के चन्द्रमा की राश्यादि परस्पर आसपास होगी। इस आधान लग्न और जन्मचन्द्र की राश्यादि का परस्पर अन्तर करे और उस अन्तर को लग्न के स्वोदय से गुणा करके १८०० अठारह सौ का भाग दे, जो लब्ध हो वह घट्यादि अंक होगा।

जन्मकाल के चन्द्रस्पष्ट से आधानकाल का लग्नस्पष्ट कम हो अथवा अधिक हो, तो यह आया हुआ घट्यादि, आधानकाल के मध्यम इष्ट में क्रमशः घटाने या श्रृण करना, पश्चात् उससे चन्द्रस्पष्ट करना, तो यह चन्द्रस्पष्ट जन्मकाल के लग्न स्पष्ट के आसन्न (आसपास) होगा। बाद इस आधान चन्द्र का भुक्तकाल और जन्मकाल के सूर्यस्पष्ट का भोग्यकाल युक्त करना और इन दोनों के मध्य की राशियों के पलात्मक भाग युक्त करना, ६० का भाग देना तो जन्म काल मध्यम 'इष्ट' होता है।

चन्द्रमाधानलग्नन्तु कल्पयित्वा ततो द्विज । जननार्कस्य भोग्यञ्च भुक्तमेतस्य योजयेत् ।
मध्योदया सुतयोज्या हरसान्तं सुनिक्षेत् । इष्टमेतत् मध्यमन्तु तस्मात्लग्नं मुसाधयेत् ।
लग्नं चन्द्रमसश्चैव साध्य वै द्विजसत्तम । आधानचन्द्रस्पष्टञ्च जन्मलग्नसमं भवेत् ।
एव सप्ताधनीयञ्च गर्भजन्मभव फलम् । यावत् साम्यं भवेदेतत् तावत् कुर्यात् अतन्द्रित ।
इष्टशोधनं भवेत्तु यथा शम्भुप्रणोदितम् । साधारणं सुसंप्रोक्तं ज्ञेयं विस्तरं मन्यत ।

इसी को पुन स्पष्ट करते हैं कि चन्द्रमा को आधान लग्न कल्पना करे तथा जन्म कालिक सूर्य के भोग्य काल में कल्पित लग्न का भुक्तकाल युक्त करे और मध्य के 'उदयकाल' युक्त करे। ६० का भाग दे तो मध्यम जन्मेष्टकाल होता है। इस मध्यम जन्म इष्ट से लग्न तथा चन्द्र स्पष्ट करे।

एन चन्द्रमतं चैव आधानोदयकल्पनम् । तद्भुक्तकालमादाय आधानेनस्य भोग्यकम् । योज्यं
मध्योदयश्चैव पण्डितभक्तन्तवैवा च । आधानकालीनमिष्टं स्यात्तस्मात्लग्नप्रमानयेत् । तत्तत्प्रत्य तु
राश्यादि जन्म चन्द्रसमं भवेत् । एव निपेक्षचन्द्रस्य जन्मलग्नं समं भवेत् ।
निपेक्षलग्नराश्यादि जन्मचन्द्रमतस्यता । अनयोऽन्तरं कार्यं तेन घट्यादि साधयेत् । तेन
संचालयेच्चैव जन्मेन्दु गर्भलग्नकम् । तथैव जन्मलग्नस्य गर्भचन्द्रमसस्तथा । अन्तरेण चालयेच्च लग्नं
चन्द्रं तथैव हि । एव मुहुर्मुहुः कार्यं यावन समता ब्रजेत् । इष्टशोधनकं चेत्तत् भाषितं शम्भुना पुरा।

इन जन्मकालीन स्पष्टचन्द्र को 'आधानलग्न मान' पर भुक्तकाल स्पष्ट करे, तथा आधान कालीन सूर्य का भोग्यकाल स्पष्ट करे। इन दोनों का योग करे तथा इसमें मध्य के उदयकाल युक्त करे। ६० का भाग दे तो आधानकाल का इष्ट होता है, पश्चात् इससे लग्नस्पष्ट करे तो इस लग्न के राश्यादि तथा जन्मचन्द्र के राश्यादि ममान होते हैं। इसी प्रकार आधान चन्द्र

और जन्मलग्न के राश्यादि समान होते हैं। आधान लग्न के राश्यादि तथा जन्म चन्द्र के राश्यादिका (विशेष अन्तर हो तो) परस्पर अन्तर करे, उस अन्तर की घट्यादि करे, उस घट्यादि से जन्मचन्द्र और आधान लग्न को चालित करे, इसी प्रकार जन्मलग्न और गर्भचन्द्र के अन्तर की घटी पल से जन्मलग्न और गर्भचालित करे। जब तक पूर्वोक्त प्रकार से परस्पर राश्यादि समान न हों। यह 'इष्टशोधन' प्रक्रिया भगवान् शम्भु ने वर्णन की है। समान होने पर इष्ट शुद्ध जाने।

इष्टशोधन के मुख्य नियम

स्वयं सिद्ध—जन्मलग्न के समान आधानचन्द्र तथा जन्मचन्द्र के समान आधानलग्न ।

१—जन्मलग्न को घट्यात्मक करके ८०० का भाग दे, लब्धगत 'तथात्र' हैं। और शेष को ६० से गुणा कर ८०० का भाग देने पर भयात होता है।

२—आगत भयात ९ मास पूर्व जिस दिन, जिस इष्ट पर मिले वह आधानकाल (मध्यम इष्ट) होता है।

३—इस इष्ट पर सूर्यस्पष्ट करके, इसका भोग्यकाल और जन्मचन्द्र स्पष्ट का भुक्त काल मध्य राशियों के उदय सहित करने से आधान काल का गणितागत मध्यम इष्ट होता है।

४—इस इष्ट पर लग्न स्पष्ट करना । इस लग्न जन्मचन्द्र की राश्यादि आसन्न (आसपास) होगी।

५—आधानलग्न और जन्म चन्द्र की राश्यादि के अन्तर को स्वोदय से गुणा करके १८०० का भाग दे, लब्ध घट्यादि अक को जन्मचन्द्र से आधानलग्न कम हो तो मध्यम इष्ट में जोड़े एवं अधिक हो तो घटावे ।

६—उस मध्यम इष्ट से चन्द्रस्पष्ट करे तो वह जन्मलग्न के आसन्न होगा।

७—बाद आधान चन्द्र का भुक्तकाल और जन्मसूर्य का भोग्यकाल तथा मध्योदय (बीच की राशियों के उदय) सहित (सब का योग) में ६० का भाग देने से जन्म समय का मध्यम इष्टकाल होता है।

८—इस मध्यम जन्म इष्ट से लग्न तथा चन्द्रस्पष्ट करे।

९—इस चन्द्र का भुक्तकाल तथा आधानसूर्य का भोग्यकाल मध्योदयो सहित, आधान कालिक इष्ट होता है।

१०—इस इष्ट से लग्नस्पष्ट करे तो वह जन्मचन्द्र के समान होता है।

११—यदि इस लग्नस्पष्ट के राश्यादि और जन्मचन्द्र के राश्यादि में विशेष अन्तर हो तो, उनका अन्तर करके, अन्तर की घट्यादि से जन्मचन्द्र और आधान लग्न को चालित करे तथा आधान चन्द्र और जन्म लग्न में यही रास्कार करे, जब तक कि राश्यादि में समानता न हो, तब तक करे। समान होने पर इष्ट शुद्ध हुआ जाने।

इष्टशोधन का उदाहरण

श्रीशुभसम्बत् २०१८ द्वितीय ज्येष्ठ शुदी ५ रविवार प्रातः ७।२५ (इ० स्टे० टा०) काल में कलकत्ता में जन्म हुआ, (कल० स्टे० टा० ७।४८ कल० मेन टाइम ७।४९) मध्यम समय

पूर्वखण्डे तृतीयोऽध्यायः

७।४८ स्पष्ट घटात्मक समय ७।४९ घट्यादि 'इष्ट' ६।४३ लग्नस्पष्ट ३।१।१०।०५ सूर्यस्पष्ट २।३।१।२७ चन्द्रस्पष्ट ३।२७।४२।१० यह है। अब 'इष्टशोधन' के लिये उपर्युक्त क्रिया के अनुसार लग्न ३।१।१०।५ इसकी घटी ५९५० में ८०० का भाग दिया तो लब्धांक ७ यह गत नक्षत्र सख्या प्राप्त हुई, अतः पुनर्वसु, नक्षत्र गत हुआ। शेष ३५० को ६० से गुणा करके ८०० का भाग दिया तो पुष्य नक्षत्र की भुक्त घट्यादि २८।१५ प्राप्त हुई। इस पर आधान काल ९ मास पूर्व का प्राप्त हुआ—श्री स २०१७ आश्विन कृ० ११ शुक्रवार। इष्ट २६।०१ अयनाश २३।० सूर्य स्पष्ट ४।२९।४७।५४ तथा चन्द्रस्पष्ट ३।८।५४।२६ अब आधान काल का सायन सूर्य ५।२२।४७।५४ को लेकर, उसके भोग्य अशादि को कन्या के कलकत्ता के उदय पत्त ३२९ से गुणा करके ६० का भाग दिया तो लब्ध भोग्यकाल ८६।१५ प्राप्त हुआ। और सायन जन्मचन्द्र ४।२०।४२।१० को लग्न कलना करके: "अर्कभोग्यस्तनोभुक्तकालान्वितो युक्तमध्योदयोभीष्टकालो भवेत्" (ग्रहलाघव) की रीति के भुक्तकाल साधन किया तो १३५।८ हुआ, ये दोनों युक्त किये, तथा इसमें कलकत्ता के (मध्य के) लग्नमान तुला से ३२९।३३९।३३९।३०५।२५९।२२९।२२९।२५९।३०५।३३९ इन सबका योग किया तो १२५३।२३ हुआ। इसमें ६० का भाग दिया तो ५४।१३ यह गर्भाधान का मध्यम इष्टकाल हुआ। इस इष्ट पर सूर्यस्पष्ट ५।००।१५।२४ हुआ। इसको सायन किया तो ५।२३।१५।२४ इस सायन सूर्य से "तकालार्कः साधनः स्वोदयघ्नाः ०" इत्यादि ग्रहलाघवोक्त रीति से लग्नस्पष्ट किया तो ३।२६।४०।०० हुआ। इसके राश्यादि, जन्मकालीन चन्द्र के राश्यादि के आसन्न (आसपास) है। अतः इनके अन्तर १।२ को वर्क के स्वोदय ३३९ से गुणा किया ३५०।१८ हुआ। इसमें '१८००' का भाग दिया तो लब्ध ११।५६। हुआ। यह अब घटी आदि है। यहा जन्मचन्द्र से निपेकलग्न अधिक है तो निपेक के मध्यम इष्ट में हीन किया तो ४२।१७ यह मध्यम निपेक इष्ट हुआ। इससे चन्द्रस्पष्ट किया तो ३।१२।१२।४० हुआ। इसका भुक्तकाल ५७ हुआ। जन्मकालिक सूर्य का भोग्यकाल २६४ पल, इन दोनों का योग किया तो ३२९ हुआ। ६० का भाग देने से ६।२१ यह जन्म कालिक इष्ट (शुद्ध) हुआ। इससे सूर्यस्पष्ट २।३।१।७ परमासन्न है, इससे लग्नस्पष्ट किया तो ३।८।१।५ हुआ और चन्द्रस्पष्ट ३।२७।३८।०५ इसको आधान लग्न मान कर अयनाश युक्त करके 'भुक्तकाल' और आधान कालिक सूर्य का भोग्यकाल मध्योदय सहित करने पर परमासन्न अंक प्राप्त होते हैं। यहा पर जन्म लग्न और आधान चन्द्र तथा आधानलग्न और जन्मचन्द्र के अशादि परस्पर आसन्न है। और प्राप्त जन्मेष्ट काल भी परमासन्न है। अतः जन्म-इष्ट शुद्ध है, इसके सूर्यादि स्पष्ट—

जन्मकालिक—

| इष्ट | सूर्य | सायन | चन्द्र | सायन | लग्न | सायन | |
|------|-------|------|--------|------|------|------|--|
| ६ | २ | २ | ३ | ४ | ३ | ४ | } पणितायत मेर } पणितोदाहरण में देखें। |
| ४३ | ३ | २६ | २७ | २० | ९ | ४ | |
| ० | ९ | ९ | ४२ | ४२ | १० | १० | |
| ० | २७ | २७ | १० | १० | ०० | ०० | |

आधानकालिक-

| इष्ट | सूर्य | सायन | चन्द्र | सायन | लग्न | |
|------|-------|------|--------|------|------|---------------------------------|
| ३६ | ४ | ५ | ३ | ४ | ९ | गणितगत भेद उदाहरण में देखें। |
| ०१ | २९ | २२ | ८ | १ | २६ | |
| ० | ४९ | ४९ | ५४ | ५४ | ० | |
| ० | ५४ | ५४ | २६ | २६ | ० | |

उपर्युक्त उदाहरण तथा विवरण निदर्शन माय दिखाया है इसमें सूर्य चन्द्र लग्न स्पष्टीकरण में गणित का जटिल भाग छोड़ दिया है कारण नि-वह करण ग्रन्थ का विषय है इस स्थान में उसका विषय उपयोग नहीं है। महा पर मूलग्रन्थ में पाराशरी का इष्टशोधन अथ छपने के समय छूट गया था उसी की खोज करने तथा अथ हस्तलिपियों से मिलान करके इस बार संयुक्त किया जा रहा है। जो किसी महानुभाव ने (काशी में मुद्रित) यह कहा है कि 'इष्टशोधन' नाम की कोई वस्तु ही उपोत्तिप शास्त्र में नहीं है हम उनका आभार मानते हैं कि जिसके कारण छिपी हुई वस्तु की खोज हुई है और वह वस्तु सर्वसाधारण के सम्मुख आई।

पराशर उवाच

मेघो वृषश्च मियुन कर्कसिंहकुमारिका ॥ तुलातिथ्यनुषो नक्षे कुम्भीनास्तत परा ॥१॥
अहोरात्राद्यतलोपाद्वोरेति प्रोच्यते बुधं । तस्य हि ज्ञानमात्रेण जातकर्मफल वदेत् ॥२॥
पदव्यक्तात्मको विष्णुः कालरूपो जनार्दन ॥ तस्यागानि निबोध त्व क्रमान्मेपादिराशय ॥३॥ शीर्षान्तौ तथा बाहू हृत्कोडकटिबस्तय ॥ गुह्योरप्युगले जानुयुग्मे च जघने तथा ॥४॥
चरणौ द्वौ तथा लग्नात् ज्ञेया शीर्षादय क्रमात् ॥ चरन्त्यरद्विस्वभावा कूराकूरी नरस्त्रियौ ॥५॥ पितान्तिलत्रिधात्वैक्य भ्रुष्मिकाश्च क्रियादयः ॥ रक्तवर्णो बृहद् गात्रश्रतुप्पाद्रात्रिविक्रमी ॥६॥ पूर्वबासी नृपज्ञाति शैलचारी रजोगुणो ॥ पृष्ठोदयो पावको च मेघराशि कुनाधिप ॥७॥ श्वेत शुक्राधिपो दीर्घश्रतुष्पाच्छर्वरीबली ॥ याम्येद् ग्राम्यो वणिग्भूमि रजो पृष्ठोदयो वृष ॥८॥

राशिओं के स्वरूप

पराशरजी ने कहा-मेघ वृष मियुन कर्क सिंह बन्धा तुला वृश्चिक धनु मकर कुम्भ तथा मीन ये १२ राशिया हैं॥१॥ अहोरात्र शब्द के आदि अकार और अन्त के व सुप्त होने से होरा शब्द बना है अत एतद्विषयक शास्त्र के ज्ञान ज्ञान से मनुष्य के कर्म का फल कहा जा सकता है॥२॥ अव्यक्त ब्रह्म का एवपादरूप जो व्यक्त स्वरूपात्मज भगवान विष्णु है वही अहोरात्र समय के स्वरूप होने से जनार्दन कालरूप है और उन्हीं के अग्र-य मेघ आदि १२ राशिया हैं॥३॥ ये मेपादि द्वादश राशिया ही मनुष्य के जन्मलग्न में विभिन्न प्रकार जानना। जन्मलग्न शिर द्वितीय भाग मुख तृतीय बाहू इसी प्रकार हृदय छाती वटिभाग वस्ति (पेट-पेट का निम्नभाग गुह्यभाग ऊपर की आधी जघाद्वय बाकी आधी जघाद्वय जानुयुगल (गांड=पुटन) तथा चरण (पैर) हैं। और १२ राशिया क्रम से चरन्त्यरद्विस्वभाव (तीन बन्धाओं को चार बार आवृत्ति) है। तथा विषम राशिया कूर और सम राशिया सौम्य हैं। एवं विषय राशिया पुण्य और सम राशि स्त्री सन्नक है॥४॥५॥ तथा पितृ बाय वरुण और ये तीन बार आवृत्ति करने से एकत्रि राशिया (यह एकत्रि राशि का

पूर्वखण्डे तृतीयोऽध्यायः

पूरा स्वरूप बिस्तार से कहते हैं) मेघ राशि का रक्त वर्ण, लम्बा शरीर, चार पैरवाला, रात्रि में बलवान्, पूर्व दिशा का वासी, क्षत्रिय जाति, पर्वतचारी, रजोगुणी, पृष्ठोदयी, अग्नि तत्व है, तथा मंगल इसका स्वामी है॥६॥७॥ वृष राशि-श्वेत वर्ण शुकग्रह स्वामी, लम्बा कद, चतुष्पाद, रात्रिबली, दक्षिणदिशा का स्वामी, ग्रामवासी, वैश्य जाति, भूमिचारी, रजोगुणी, और पृष्ठोदयी ॥८॥

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम् ॥ प्रत्यक्षमी द्विपाद्रात्रिवली ग्राम्यो घनोऽनिली ॥९॥ समगात्रो हरिद्वर्णो मियुनास्थो बुधाधिपः ॥ पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान् ॥१०॥ बहुपदुतरः स्थूलतनुः सत्त्वगुणी जलो ॥ पृष्ठोदयी कर्कराशिर्भृगोकाशधि-पतिः स्मृतः ॥११॥ सिंहः सूर्याधिपः सत्त्वी चतुष्पात्क्षत्रियो बली ॥ शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पांडुः पूर्वोद्बुवीर्यवान् ॥१२॥ पार्वतीयाय कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता ॥ शीर्षोदया च मध्यांशा द्विपाद्याम्यचरा च सा ॥१३॥ सा सस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रमंजिनी ॥ कुमारी तमसा पुक्ता बालभावा बुधाधिपः ॥१४॥ शीर्षोदयी क्षुवीर्याद्विस्तया कृष्णो रजोगुणी ॥ पञ्चमोद्बुधरो घाती शूद्रो मध्यतनुर्द्विपात् ॥१५॥ शुक्रोऽधिपोऽयं स्वल्पागो बहुपाद्ब्राह्मणो बली ॥ सौम्यस्यो दिनवीर्याद्विचः पिशगो जलमूषहः ॥१६॥ रोमस्वाद्योऽतितोऽक्षांगो वृश्चिकश्च कुजाधिपः ॥ पृष्ठोदयो त्वय धनुर्गुरुस्वामी च सात्त्विकः ॥१७॥ पिंगलो निशिबीर्याद्विचः पावकः क्षत्रियो द्विपात् ॥ आदावंते चतुष्पादः समगात्रो धनुर्धरः ॥१८॥

मियुन-शीर्षोदय, स्त्रीपुरुष युग, लघु, पुरुष के हाथ में गदा और स्त्री के हाथ में घोणा है, पश्चिम दिशा का स्वामी, दो पैरवाला, रात्रिबली, ग्रामवासी, समूहचारी, वायुप्रकृति॥९॥ समगात्र, (मझोला कद) हरा रंग तथा बुधग्रह का स्वामी है। कर्क-पाटल रंग, वनचारी, ब्राह्मण वर्ण, रात्रिबली, बहुपाद, स्थूलशरीर, सत्त्वगुणी, जलचारी, पृष्ठोदयी और चन्द्रमा स्वामी है॥१०॥ सिंह-राशि का सूर्य स्वामी है, सत्त्वगुणी, चतुष्पाद, क्षत्रिय जाति, बलशाली, शीर्षोदयी, भारी शरीरवाला, पाण्डु वर्ण, पूर्वदिशा का स्वामी तथा दिन में बली है॥११॥ कन्याराशि-पर्वतचारी, दिनबली, शीर्षोदयी, सम शरीर, दो पैरवाली दक्षिण दिशा॥१२॥ सस्य-अन्न और अग्नि रखनेवाली, वैश्य वर्ण, चित्र विचित्र रंग, वायु तत्व, कुमार अवस्था, तमोगुणी, बाल्य स्वभाव तथा बुध स्वामी है॥१३॥ तुलाराशि-शीर्षोदयी, दिनबली, कृष्णवर्ण, रजोगुणी, पृथ्वीचारी, हानिकारी स्वभाव, शूद्र वर्ण, दोपाया तथा शुकस्वामी, कद मझोला है॥१४॥ वृश्चिकराशि-स्वल्प अगवाला, बहुपाद, ब्राह्मण वर्ण बलपुक्त तथा उत्तर दिशाचारी, दिन बली, पिशग (हलका पीला), वर्ण, जल तथा पृथ्वीचारी, रोमपुक्त, तीक्ष्ण अगवाला तथा मंगल ग्रह दमका स्वामी है॥ धनु राशि- पृष्ठोदशी, सत्त्वगुणी, पिंगल वर्ण, रात्रि बली, अग्नि तत्व क्षत्रिय वर्ण, पूर्वार्द्ध में दो पैरवाला, उत्तरार्द्ध में चार पैरवाला, समान शरीर धनुषधारी॥१८॥

पूर्वस्थो वमुधाचारी तेजस्वान्पृष्ठतादगमा ॥ मदाधिपस्तमो मौमी घाम्येद् च निशि वीर्यवान् ॥१९॥ पृष्ठोदयी बृहद्गात्रः कर्बुरो वनमूचरः ॥ आदो चतुष्पादते तु विपदो जलगो मतः

॥२०॥ कुम्भः कुम्भो नरो बभ्रुर्वर्णमध्यतनुर्द्विपात् ॥ द्युधीर्षो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तमः ॥२१॥ शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः ॥ मीनौ पुच्छास्यसलग्रौ मीनराशिर्द्विवा बली ॥२२॥ जलो सत्त्वगुणाढ्यश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः ॥ अपदो मध्यदेहो च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी ॥२३॥ मुराचार्याधिपश्चास्य राशीनां गदितं मया ॥ त्रिंशद्गुणात्मकः स्थूलसूक्ष्माकरफलाय च ॥२४॥

पूर्वदिशा का स्वामी पृथ्वीचारी, तेजस्वी तथा बृहस्पति इराका स्वामी है। मकर राशि—इस राशि का शनि स्वामी है, तमोगुणी, पृथ्वीचारी, दक्षिण का स्वामी, रात्रिबली, पृष्ठोदयी, भारी शरीर, विचित्र वर्ण, वनचारी, पूर्वार्द्ध चतुष्पाद तथा उत्तरार्द्ध विपद, जलचारी है॥२०॥ कुम्भराशि—रिक्तघटधारी पुरा, यभ्रु वर्ण, मध्यम शरीर, दो पैरवाला दिन में बली, जलचारी, वात प्रकृति, शीर्षोदयी तथा तमोगुणी है॥२१॥ शूद्र वर्ण, शनि स्वामी, पश्चिम दिशा का स्वामी है। मीनराशि दो मछली परस्पर मुख पुच्छ संयुक्त स्वरूप, दिन में बली, जलचारी, सत्त्वगुणी, पुष्ट शरीर, जल तत्त्व, ब्राह्मण वर्ण, पदहीन, मध्यम शरीर, उत्तरदिशा का स्वामी उभयोदयी तथा बृहस्पति स्वामी है॥ इस प्रकार ये बारह राशियों के स्वरूप कहे। भगण के ३६० अंश में से प्रत्येक राशि के ३०-३० अंश है॥ स्थूल और सूक्ष्म फल विचार इसका प्रयोजन है॥२४॥

अथातः सप्रवक्ष्यामि शृणुष्व मुनिपुंगव ॥ जन्मलग्नं च सशोध्य निपेक परिशोधयेत् ॥२५॥ तदहं सप्रवक्ष्यामि मेधेय त्व विद्यारय ॥ जन्मलग्नात् परिज्ञान निपेक सर्वजतु यत् ॥२६॥ यस्मिन् भावे स्थितोमन्दस्तस्य भार्द्व्यदतरम् ॥ सप्रभाग्यातर योज्य यच्च राश्यादि जायते ॥२७॥ मातादिस्तन्मित ज्ञेय जन्मतः प्राक् निपेकजम् ॥ यद्यदृश्यदत्तेगेशस्तदेवोभुक्तभाग-युक् ॥२८॥ तत्काले साधयेत्लग्नं शोधयेत्पूर्ववत्तनु ॥ तस्माच्छुभाशुभं वाच्य गर्भस्थस्य विशेषतः ॥२९॥ शुभाशुभं वदेत् पित्रोर्जीवनं मरणं तथा ॥ एव निपेकलग्नेन तस्यैव स्वकल्पनात् ॥३०॥

निपेक लग्नज्ञान

हे मेधेय! स्पष्ट जन्मलग्न के बाद निपेक—गर्भाधार लग्न की विधि यही जाती है। जिस भाव में शनि हो उस भाव और मान्दी का अन्तर करे, इसमें लग्न तथा नवम् भाव के अन्तर को जोड़े। योगफल के अनुसार जन्मलग्न में पूर्व उतने ही भासादि जानना यदि लग्नेश लग्न से पूर्व ६ राशि में हो तो चन्द्रमा के भुक्त अशादि और जोड़ना चाहिये। योग फल में ब्रमश मास, दिन, घटी, पल जन्म समय से पूर्व मानकर, घटी पल में लग्नपाष्ट करे और उसमें गर्भावस्था वा शुभाशुभ तथा माता पिता वा शुभाशुभ फल कहना चाहिये॥२५-३०॥

निपेक लग्न का उदाहरण—

शनिस्थित भाव ७।१५।०५।१२ तथा मान्दी ७।२१।४०।२० इनका अन्तर किया तो ००।६।५।८ प्राप्त हुआ। इसको लग्नपाष्ट ६।१६।१७।१९ तथा भाग्यभाव स्पष्ट

पूर्वखण्डे तृतीयोऽध्यायः

२।१४।५।१२३ इनका अनन्तर ७।२८।३४।४ में युक्त किया तो ८।४।३९।१२ हुआ। यहाँ शुक्र अदृश्य दल में है, अतः चन्द्रमा के भुक्ताश २६।३०।३३ और युक्त किया तो १।००।०९।४५ यह मारादि दृष्ट प्राप्त हुआ। अर्थात् जन्म से ९ मास ० दिन पूर्व ९।४५ दृष्ट हुआ, इससे लग्न स्पष्ट किया तो ८।२८।५०।३०, यह आधानलग्न (निषेक) सिद्ध हुआ। अर्थात् स० २०१३ मागशीर्ष कृ० प० में समझना।

अयनांशसाधनरीति

ग्रहलाघव से 'विदाध्यव्यपूनः खरसहस्रः शकौऽयनांशाः।' दृष्ट शक में ४४४ घटाकर ६० का भाग दे, लब्धि अश तथा शेष घटी ही 'अयनाश' होते हैं। इसमें सूर्य की प्रति भुक्त राशि ५ पल जोड़ना।

उदाहरण-शक '१८८३' इसमें ४४४ घटाया तो १४३९ हुआ। ६० का २३ अश और शेष ५९ घटी। यह अयनाश हुआ। विशेष

विक्रम सवत्सर में १३५ घटाने से 'शक सम्वत्' होता है, शक स० में ७८ जोड़ने से 'ईसवी सन्' होता है, ईसवी सन् में ५८३ घटाने से 'हिजरी सन्' तथा इसमें १ घटाने से 'बंगला सन्' होता है।)

मकरन्दीप अयनांश साधन

भूतयनान्धिरहितः शकः स्वीयदृशांगपुक् ॥ खांनेर्मत्तस्तया त्रिघ्न सार्द्धं सूर्यं पलेषु च ।

दृष्ट शक में ४२१ कम करना, शेष को दो स्थान में रखकर एक स्थान में १० दस का भाग देकर लब्ध अक दूसरी सख्या में कम करना, शेष में ६० का भाग देना, तथा इसमें मेपादि स्पष्ट सूर्य की राश्यादि अक को त्रिगुणित करके जो अक राश्यादि हो उसका आधा उसी में युक्त करके पूर्वागत अश तथा घटी अक के नीचे पल में युक्त करने से अयनाश स्पष्ट होता है।

उदाहरण-शक स० १८८३ द्वि० ज्ये० शु० २ को शक १८८३ में ४२१ घटाया तो १४६२ शेष रहे, इसको दो जगह रखा, एक जगह दस १० का भाग दिया तो १४६।१२ लब्धाक प्राप्त हुआ, इसको दूसरे में युक्त किया तो १३१५।४८ हुआ। इसमें प्रातःकालीन सूर्य स्पष्ट २।००।१२।१४ को त्रिगुणित किया तो ६।०।३६।४२ हुए, इसका आधा ३।०।१८।२१ को युक्त किया तो १।०।५५।०३ इसकी राशि सख्या ९ को पूर्वानीत १३१५।४८ में विकला स्थान में युक्त किया तो १३१५।५४।९ इसमें ६० का भाग दिया तो २१।५५।५४ 'अयनाश' स्पष्ट हुआ। तथा ६० का भाग देकर भी सूर्यस्पष्ट से प्राप्त अक का योग कर सकते हैं। इस मत में शकस० का आरम्भ मेघ सक्रान्ति के आरम्भ से माना जाता है। आजकल प्रायः चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से जो शकसम्वत् का परिवर्तन लिखने की प्रणाली है, इसके कारण मेघ सक्रमण से प्रथम अयनाश स्पष्ट करने में पूर्व (गत) शक ग्रहण करना होता है। विस्तार भय से अन्यान्य रीति नहीं लिखी गई।

अथ पलभाज्ञानं चरखंडसाधनमाह

मेघो रश्मिरयनाशयुतो भवति यद्दिने ॥ शकुच्छायादिनाद्धं तु पलभेत्सुच्यते बुधैः ॥३१॥ स्यान्नत्रये
च सा स्याप्या गुण्या दिग्यमुपालकं ॥ अते गुणोद्धते सद्भिरश्वरखण्डः प्रकीर्तित ॥३२॥

अथ लंकोदयमाह

वसुसागरनेत्राणि पलानि लकोदये मेघराशौ ॥ शकोकनेत्रे वृषभे मिथुनेऽग्निपुङ्गेनेत्रसंस्थातम्
॥३३॥ विपर्ययमग्निमश्रितये पङ्क्तप्रेष्वेवमेव निर्विष्टम् ॥ हीन खड्गत्रितयं पुक्तं स्वदेश-
लप्रोऽयम् ॥३४॥

अथ लग्नसाधनमाह

यस्मिन्काले लग्नं साध्यं च यदा तदा भवेद्विज्ञं ॥ तात्कालिकसूर्यो वै युक्तः कार्योऽयं सायनारोहः
॥३५॥ तद्वाशेर्यत्स्वादेश्यं उदयस्तेनायं भोग्याशा ॥ निधेश्च भागास्त्रिशञ्च्युतास्तथा
भुक्तभागाश्च गुण्या ॥३६॥ भूताद्यग्न्युद्धतास्ते च ह्यकाग्निभाजिता यदि ॥ भोग्यकालोऽयं
द्युमणेर्यज्ञेयश्च द्विजोत्तम ॥३७॥ इति सायनयाताशेर्भुक्तकालो विधीयते दृष्टघटपा पल-
शोध्यो भोग्यकाल इति स्थितिः ॥३८॥ हातव्या राशयुदयकालात्तावत् शोधयेदयं । यच्छेष
खगुणं तद्गतमशुद्धोदयेनायं ॥३९॥ यत्तद्व्यं च तवाद्यं सायनाशहीनेर्लग्नस्यात् ॥ जानीहि
द्विजसत्तम नतोन्नतप्रकारमेवैतत् ॥४०॥

अथ नतोन्नतसाधनमाह

दिनगतघटीभिर्हीनं कार्यं मुनिभिश्च दिवसाद्धम् ॥ पूर्वतत तत्रात्रौ लक्षणमेतद्वि विज्ञेयम्
॥४१॥ यदा दिनार्धादुपरिष्टकालो भगोदयादिष्टघटीषु शोध्यम् ॥ तदा दिनार्धस्य नतं परं
तद्वयम् च सर्वं खलु बोध्यतेतुम् ॥४२॥ रात्र्यर्धादुपरिचेत्स्यादिष्टकालो विचक्षणः ॥
सूर्यास्तिष्टघटीशुद्धं रात्र्यर्धे पश्चिमं नतम् ॥४३॥

‘पलभा’ तथा ‘चरखंड’ साधन प्रकार—

जिस दिन सायन सूर्य मेघ राशि मे प्रवेश करे उस दिन मध्याह्नकाल मे १२ अंगुल का शकु
(कील) धूप मे सीधा रख कर उसकी छाया लेनी चाहिये। वही पलभा कहानी है। उस
पलभा को ३ जगह रख कर १०-८-१० क्रमशः इन अंको से गुणा करे। अन्त्य के खण्ड मे ३
का भाग देने से ३ चरखण्ड होते है॥३२॥

लकोदयपल

मेघ के लकोदय २७८ । वृष के २९९ । मिथुन के ३२३ है। इनसे अगली तीन राशियो मे यही
अंक विपरीत क्रम से जानना। इसी प्रकार अगली ६ राशियो मे भी जानना। ये ‘लकोदय’ पल
कहलाते है॥३३॥ ऊपर बताये हुए चरखण्ड प्रथम तीन राशियो मे घटाना, पश्चात् तीन
राशियो मे जोड़ना। इसी प्रकार अगली ६ राशियो मे भी करना। इस सस्वार से ‘स्वदेशोदय’
या ‘स्वीयोदय’ लग्नमान होते है॥३४॥

लग्नसाधन

जिस समय का लग्न स्पष्ट करना हो उस समय का तात्कालिक सूर्य स्पष्ट करके अयनाश जोड़े, पश्चात् राशि का अंक अलग स्थापित कर अश्व, कला, बिकला अंक लेकर ३० अश्व में से घटावे तो 'भोग्याश' होते हैं, इनको स्वोदय से गुणा करके ३० का भाग देने से लब्ध अंक 'भोग्यकाल' होगा, इसी प्रकार भुक्ताशो से भुक्तकाल होता है। इस भोग्यकाल को इष्टघटी की पल करके इन पलों में यह 'भोग्यकाल' घटावे (और घटाने के बाद सूर्य के राशि अंक में १ सख्या बढ़ा दे) बाद बची हुई पलराशि में जितने आगामी लग्नमान घटे उतने घटावे (और राशि अंक में उतनी सख्या बढ़ाता जाय) जो स्वोदय नहीं घटे, उसकी 'अशुद्ध' सजा है, अब जेप अंक को ३० से गुणा कर अशुद्ध स्वोदयका भाग देकर लब्ध आदि सूर्यकी बढ़ाई हुई राशि में युक्त करे और अयनाश घटा दे। यह लग्नस्पष्ट सिद्ध हुआ ॥३५-४०॥

नत तथा उन्नत साधन

१-सूर्योदय तथा सूर्यास्त से इष्ट यदि क्रम से दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध से कम हो तो दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध में इष्ट घटाने से 'पूर्व नत' होता है।

२-इसी प्रकार सूर्योदय तथा सूर्यास्त से इष्ट दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध से अधिक हो तो इष्ट में दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध घटाने से 'पर नत' होता है ॥४१-४३॥

अथ चतुर्थदशमसाधनमाह

एवं संकोदयैर्मुक्तं भोग्यं शोध्यं पत्नीकृतात् ॥ पूर्वपश्चात्प्रतादन्त्यत्रागवत्तद्दशमं भवेत् ॥४४॥

अथ भावसंधिमाह

लग्नं सुखात्सुखं कामात्कामं सात्सं च लग्नतः ॥ अंगमेकं द्विगुणितं पुञ्ज्यात्लग्नादिषु क्रमात् ॥४५॥
पूर्वापरयुतेरर्थं संधिः स्याद्भावयोर्द्वयोः ॥ एवं द्वादशभावाः स्फुर्भवन्ति हि ससंघयः ॥४६॥

अथ भोग्यकालादल्पेष्टकाले सति लग्नसाधनम्

भोग्यतोऽल्पेष्टकालात्परमाहतात्स्वोदयाप्रागुष्मास्करः स्यात्तनुः ॥

अथ लग्नपत्रभावपत्रमाह

सूर्यराश्यंशमानेन फलं प्राह्यं च कोष्ठकम् ॥ इष्टघटया समायुक्तं लग्नं तात्कालिकं भवेत् ॥४७॥

दशम-भाव साधनप्रकार

इस नत को इष्ट मानकर लग्नस्पष्टसाधन की प्रक्रिया अनुसार गणित करने से 'दशम भाव स्पष्ट' होता है ॥४४॥

द्वादश भाव साधन प्रकार

(दशमभाव में ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ और लग्न में ६ राशि जोड़ने से 'सप्तमभावस्पष्ट' होता है)

लग्न को चतुर्थ में से, चतुर्थ को सप्तमभाव में से, सप्तम को दशमभाव में से और दशम को लग्न में से घटाना चाहिये। जो अंक आवे उसके तृतीयांश का (प्रथम पर्याय) लग्न में योग करने से द्वितीय और द्वितीय में जोड़ने से तृतीय भाव स्पष्ट होगा। इसी प्रकार द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पर्याय में भी करना। दो भावों का जो अन्तर हो उसका अर्द्धभाग सन्धि होगी। इसी तरह सन्धि रहित बारहों भाव स्पष्ट होंगे॥४५॥४६॥

इष्ट से भोग्यकाल कम होने पर लग्नसाधन

इष्ट से भोग्यकाल कम हो तो भोग्यकाल को ३० से गुणा करके स्वोदय का भाग देकर लग्न अशादि को सूर्य में योग करने से लग्नस्पष्ट होगा।

सारिणी से लग्नानयन

सूर्य की राशि, अश से सारिणी के कोष्ठक के अंक को इष्ट में जोड़कर जो अंक प्राप्त हो, सारिणी में उसकी राशि और अश ही लग्नस्पष्ट होगा॥४७॥

लग्नस्पष्ट उदाहरण

स्पष्ट सूर्य ४।२३।२८।१८ में अयनांश २३।५९ मुक्त किया तो ५।१७।२७।१८ सायन सूर्य हुआ। इसके भोग्यांश १२।३०।४२ वन्धा के कलकत्ता के उदय पल ३२९ से गुणा किया तो ४१२७।१८।१८ हुए। ३० का भाग दिया तो १३७।१७ यह 'भोग्यकाल' हुआ। घटघादि इष्ट १०।०० के पल ६०० में भोग्यकाल कम किया तो शेष ४६२।४३ और राशि के स्थान में (६) राशि रखा गया। अब तुला का उदय ३२९ घटाया तो शेष १३३।४३ रहा और राशि के स्थान में (७) रखा। वृश्चिक राशि के उदय पल ३३९ न घटने से वृश्चिक राशि अशुद्ध है। अतः शेष को ३० से गुणा किया तो ४०११।३० हुआ। वृश्चिक के उदय में भाग लिया तो १०।१६।१९ अशादि प्राप्त हुए। इसमें ७ राशि मुक्त किया और अयनांश २३।५९ घटाया तो ६।१६।१७।१९ यह स्पष्ट लग्न हुआ।

दशमभावसाधनोदाहरण

इष्ट १०।०० दिनार्द्ध १६।२० में बम दिया तो ६।२० यह 'पूर्वतन' हुआ। अतः ऋणरीति से स्पष्ट करना चाहिये। इस ६।२० को इष्ट मान कर सायनमूर्य ५।१७।२७।१८ के भुक्तांश १७।२७।१८ है (दशमभाव साधन में राशियों के उदय मान लवा के लेने चाहिये) अतः लकोदय लिखते हैं। "लकोदया विघटिका गजभानि, गोकदद्या, स्त्रिपलदहनाः क्रमगोत्क्रमस्थाः ।" अर्थात् २७८।२९९।३२३ इन पलों को श्रम और उत्क्रम से लेने पर १२ राशियों के लकोदय पल होते हैं। यथा—

अथ लग्नपत्रमिदमाह

| आश | मे१ | वृ२ | मि३ | क४ | सि५ | क६ | गु७ | वृ८ | घ९ | म१० | कु११ | मो१२ |
|----|---------|---------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|
| १ | २ ५४ | ७ १४ | १२ १२ | १७ ४१ | २३ १४ | २८ ३५ | ३३ ५३ | ३९ ३१ | ४४ ५५ | ५० १२ | ५४ ५१ | ५८ ५७ |
| २ | ३ २ | ७ २३ | १२ २३ | १७ ५३ | २३ २५ | २८ ४६ | ३४ ४ | ३९ ३२ | ४५ ६ | ५० २३ | ५५ ० | ५९ ४ |
| ३ | ३ १० | ७ ३२ | १२ ३३ | १८ ४ | २३ ३४ | २८ ५६ | ३४ १४ | ३९ ४३ | ४५ १८ | ५० ३३ | ५५ ९ | ५९ १२ |
| ४ | ३ १८ | ७ ४१ | १२ ४३ | १८ १५ | २३ ४७ | २९ ७ | ३४ २५ | ३९ ५४ | ४५ २९ | ५० ४३ | ५५ १८ | ५९ २० |
| ५ | ३ २६ | ७ ४९ | १२ ५४ | १८ २६ | २३ ५८ | २९ १८ | ३४ ३६ | ४० ५ | ४५ ४० | ५० ५४ | ५५ २६ | ५९ २८ |
| ६ | ३ ३४ | ७ ५८ | १३ ४ | १८ ३७ | २४ ९ | २९ २८ | ३४ ४६ | ४० १६ | ४५ ५१ | ५१ ४ | ५५ ३५ | ५९ ३६ |
| ७ | ३ ४२ | ८ ७ | १३ १४ | १८ ४९ | २४ २० | २९ ३९ | ३४ ५७ | ४० २७ | ४६ ३ | ५१ १४ | ५५ ४४ | ५९ ४४ |
| ८ | ३ ५० | ८ १६ | १३ २५ | १९ ० | २४ ३१ | २९ ४९ | ३५ ७ | ४० ३८ | ४६ १४ | ५१ २४ | ५५ ५३ | ५९ ५२ |
| ९ | ३ ५८ | ८ २५ | १३ ३५ | १९ ११ | २४ ४२ | ३० ० | ३५ १८ | ४० ४९ | ४६ २५ | ५१ ३५ | ५६ २ | ६० ० |
| १० | ४ ७ | ८ ३५ | १३ ४६ | १९ २२ | २४ ५३ | ३० ११ | ३५ २९ | ४१ ० | ४६ ३५ | ५१ ४४ | ५६ १० | ० ८ |
| ११ | ४ १६ | ८ ४६ | १३ ५७ | १९ ३३ | २५ ३ | ३० २१ | ३५ ४० | ४१ ११ | ४६ ४५ | ५१ ५३ | ५६ १८ | ० १६ |
| १२ | ४ २५ | ८ ५६ | १४ ९ | १९ ४४ | २५ १९ | ३० ३२ | ३५ ५१ | ४१ २३ | ४६ ५६ | ५२ २ | ५६ २६ | ० २४ |

| | | | | | | | | | | | | |
|----|---------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|---------|
| १३ | ४ ३४ | ९ ६ | १४ २० | १९ ५५ | २५ २९ | ३० ४३ | ३६ २ | ४१ ३४ | ४७ ६ | ५२ ११ | ५६ ३४ | ० ३२ |
| १४ | ४ ४३ | ९ १७ | १४ ३१ | २० ६ | २५ ३५ | ३० ५३ | ३६ १३ | ४१ ४५ | ४७ १७ | ५२ २० | ५६ ४२ | ० ४० |
| १५ | ४ ५१ | ९ २७ | १४ ४२ | २० १७ | २५ ४६ | ३१ ४ | ३६ २४ | ४१ ५६ | ४७ ५७ | ५२ २८ | ५६ ५० | ० ४८ |
| १६ | ५ ० | ९ ३७ | १४ ५३ | २० २८ | २५ ५६ | ३१ १४ | ३६ ३५ | ४२ ७ | ४७ ३७ | ५२ ३७ | ५६ ५८ | ० ५६ |
| १७ | ५ ९ | ९ ४८ | १५ ५ | २० ३९ | २६ ७ | ३१ २५ | ३६ ४६ | ४२ १९ | ४७ ४८ | ५२ ४६ | ५७ ५ | १ ३ |
| १८ | ५ १८ | ९ ५८ | १५ १६ | २० ५० | २६ १७ | ३१ ३५ | ३६ ५७ | ४२ ३० | ४७ ५८ | ५२ ५५ | ५७ १३ | १ ११ |
| १९ | ५ २७ | १० ८ | १५ २७ | २१ १ | २६ २८ | ३१ ४६ | ३७ ८ | ४२ ४१ | ४८ ८ | ५२ ४ | ५७ २१ | १ १९ |
| २० | ५ ३६ | १० १९ | १५ ३८ | २१ १२ | २६ ३९ | ३१ ५७ | ३७ १९ | ४२ ५२ | ४८ १९ | ५२ १३ | ५७ २९ | १ २७ |
| २१ | ५ ४५ | १० २९ | १५ ४९ | २१ २३ | २६ ४९ | ३२ ७ | ३७ ३० | ४३ ३ | ४८ २९ | ५२ २२ | ५७ ३७ | १ ३५ |
| २२ | ५ ५४ | १० ३९ | १६ ५ | २१ ३४ | २७ ० | ३२ १८ | ३७ ४१ | ४३ १५ | ४८ ३९ | ५२ ३१ | ५७ ४५ | १ ४३ |
| २३ | ६ ३ | १० ५० | १६ १२ | २१ ४६ | २७ १० | ३२ २८ | ३७ ५३ | ४३ २६ | ४८ ५० | ५२ ४० | ५७ ५३ | १ ५१ |
| २४ | ६ १२ | ११ ० | १६ २३ | २१ ५७ | २७ २१ | ३२ ३९ | ३८ ४ | ४३ ३७ | ४९ ० | ५२ ४९ | ५८ १ | १ ५९ |
| २५ | ६ २० | ११ १० | १६ ३४ | २२ ८ | २७ ३२ | ३२ ५० | ३८ १५ | ४३ ४८ | ४९ १० | ५२ ५७ | ५८ ९ | २ ७ |
| २६ | ६ २९ | १६ २१ | १६ ४५ | २२ १९ | २७ ४२ | ३३ ० | ३८ २६ | ४३ ५९ | ४९ २१ | ५४ ६ | ५८ १७ | २ १५ |

| | | | | | | | | | | | | |
|----|---------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|---------|
| २७ | ६ ३८ | ११ ३१ | १६ ५७ | २२ ३० | २७ ५३ | ३३ ११ | ३८ ३७ | ४४ ११ | ४९ ३१ | ५४ १५ | ५८ २५ | ० २३ |
| २८ | ६ ४७ | ११ ४१ | १७ ८ | २२ ४१ | २८ ३ | ३३ २१ | ३८ ४८ | ४४ २२ | ४९ ४१ | ५४ २४ | ५८ ३३ | २ ३१ |
| २९ | ६ ५६ | ११ ५२ | १७ १९ | २२ ५२ | २८ १४ | ३३ ३२ | ३८ ५९ | ४४ ३३ | ४९ ५२ | ५४ ३३ | ५८ ४१ | २ ३९ |
| ३० | ७ ५ | १२ २ | १७ ३० | २३ ३ | २८ २५ | ३३ ४३ | ३९ १० | ४४ ४४ | ५० २ | ५४ ४२ | ५८ ४९ | २ ४७ |

अथ भावपत्रमिदमाह

| अश | मे०१ | वृ०२ | मि०३ | क०४ | सि०५ | क०६ | तु०७ | वृ०८ | घ०९ | म०१० | कु०११ | मी०१२ |
|----|---------|---------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|----------|
| १ | ३ २४ | ८ १७ | १३ ३४ | १८ ५७ | २४ २ | २८ ४६ | ३३ २४ | ३८ १७ | ४३ ३४ | ४८ ५७ | ५४ २ | ५८ ४६ |
| २ | ३ ३३ | ८ २७ | १३ ४५ | १९ ८ | २४ १२ | २८ ५५ | ३३ ३३ | ३८ २७ | ४३ ४५ | ४९ ८ | ५४ १२ | ५८ ५५ |
| ३ | ३ ४२ | ८ ३७ | १३ ५५ | १९ १८ | २४ २२ | २९ ४ | ३३ ४२ | ३८ ३७ | ४३ ५५ | ४९ १८ | ५४ २२ | ५९ ४ |
| ४ | ३ ५२ | ८ ४७ | १४ ६ | १९ २९ | २४ ३२ | २९ १४ | ३३ ५२ | ३८ ४७ | ४४ ६ | ४९ २९ | ५४ ३२ | ५९ १४ |
| ५ | ४ १ | ८ ५७ | १४ १७ | १९ ४० | २४ ४२ | २९ २३ | ३४ १ | ३८ ५७ | ४४ १७ | ४९ ४० | ५४ ४२ | ५९ २३ |
| ६ | ४ १० | ९ ७ | १४ २८ | १९ ५१ | २४ ५२ | २९ ३२ | ३४ १० | ३९ ७ | ४४ २८ | ४९ ५० | ५४ ५२ | ५९ ३२ |
| ७ | ४ १९ | ९ १७ | १४ ३८ | २० १ | २५ २ | २९ ४१ | ३४ १९ | ३९ १७ | ४४ ३८ | ५० १ | ५५ २ | ५९ ४१ |
| ८ | ४ २९ | ९ २७ | १४ ४९ | २० १२ | २५ १२ | २९ ५१ | ३४ २९ | ३९ २७ | ४४ ४९ | ५० १२ | ५५ १२ | ५९ ५१ |

| | | | | | | | | | | | | |
|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|
| १ | ४ | ९ | १५ | २० | २५ | ३० | ३४ | ३९ | ४५ | ५० | ५३ | ० |
| | ३८ | ३७ | ० | २३ | २२ | ० | ३८ | ३७ | ० | २३ | २२ | २ |
| १० | ४ | ९ | १५ | २० | २५ | ३० | ३४ | ३९ | ४५ | ५० | ५३ | ० |
| | ४८ | ४४ | ११ | ३३ | ३१ | ९ | ४८ | ४८ | ११ | ३३ | ३१ | ९ |
| ११ | ४ | ९ | १५ | २० | २५ | ३० | ३४ | ३९ | ४५ | ५० | ५५ | ० |
| | ५८ | ५९ | २२ | ४३ | ४१ | १९ | ५८ | ५९ | २२ | ४३ | ४१ | १९ |
| १२ | ५ | १० | १५ | २० | २५ | ३० | ३५ | ४० | ४५ | ५० | ५५ | ० |
| | ८ | ९ | ३२ | ५३ | ५० | २८ | ८ | ९ | ३२ | ५३ | ५० | २८ |
| १३ | ५ | १० | १५ | २१ | २५ | ३० | ३५ | ४० | ४५ | ५१ | ५५ | ० |
| | १८ | २० | ४३ | ३ | ५९ | ३७ | १८ | २० | ४३ | ३ | ५९ | ३७ |
| १४ | ५ | १० | १५ | २१ | २६ | ३० | ३५ | ४० | ४५ | ५१ | ५६ | ० |
| | २८ | ३१ | ५४ | १३ | ८ | ४६ | २८ | ३१ | ५४ | १३ | ८ | ४६ |
| १५ | ५ | १० | १६ | २१ | २६ | ३० | ३५ | ४० | ४६ | ५१ | ५६ | ० |
| | ३८ | ४२ | ५ | २३ | १८ | ५६ | ३८ | ४२ | ५ | २३ | १८ | ५६ |
| १६ | ५ | १० | १६ | २१ | २६ | ३१ | ३५ | ४० | ४६ | ५१ | ५६ | १ |
| | ४८ | ५२ | १५ | ३३ | २७ | ५ | ४८ | ५२ | १५ | ३३ | २७ | ५ |
| १७ | ५ | ११ | १६ | २१ | २६ | ३१ | ३५ | ४१ | ४६ | ५१ | ५६ | १ |
| | ५८ | ३ | २६ | ४३ | ३६ | १४ | ५८ | ३ | २६ | ४३ | ३६ | १४ |
| १८ | ६ | ११ | १६ | २१ | २६ | ३१ | ३६ | ४१ | ४६ | ५१ | ५६ | १ |
| | ८ | १४ | ३७ | ५३ | ४५ | २३ | ८ | १४ | ३६ | ५३ | ४१ | २३ |
| १९ | ६ | ११ | १६ | २२ | २६ | ३१ | ३६ | ४१ | ४६ | ५२ | ५६ | १ |
| | १८ | २५ | ४८ | ३ | ५५ | २३ | १८ | २५ | ४८ | ३ | ५१ | ३३ |
| २० | ६ | ११ | १६ | २२ | २७ | ३१ | ३६ | ४१ | ४६ | ५२ | ५७ | १ |
| | २८ | ३५ | ५८ | १३ | ४ | ४२ | २८ | ३५ | ५८ | १३ | ३ | ४३ |
| २१ | ६ | ११ | १७ | २२ | २७ | ३१ | ३६ | ४१ | ४७ | ५२ | ५७ | १ |
| | ३८ | ४६ | ९ | २३ | १२ | ५१ | ३८ | ४५ | ९ | २३ | १३ | ५१ |
| २२ | ६ | ११ | १७ | २२ | २७ | ३२ | ३६ | ४१ | ४७ | ५२ | ५७ | २ |
| | ४६ | ५७ | २० | ३३ | २२ | ० | ४८ | ५७ | २० | ३३ | २२ | ० |
| २३ | ६ | १२ | १७ | २२ | २७ | ३२ | ३६ | ४२ | ४७ | ५२ | ५७ | २ |
| | ५८ | ८ | ३१ | ४३ | ३२ | १० | ५८ | ८ | ३१ | ४३ | ३२ | १० |

| | | | | | | | | | | | | |
|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|
| २४ | ७ | १२ | १७ | १२ | २७ | ३२ | ३७ | ४२ | ४७ | ५२ | ५७ | २ |
| | ८ | १२ | ४२ | ५३ | ४१ | १९ | ८ | १९ | ४२ | ५३ | ४१ | १९ |
| २५ | ७ | १२ | १७ | २३ | २७ | ३२ | ३७ | ४२ | ४७ | ५३ | ५७ | २ |
| | १७ | २९ | ५२ | २ | ५० | २८ | १७ | २९ | ५२ | २ | ५० | २८ |
| २६ | ७ | १२ | १८ | २३ | २८ | ३२ | ३७ | ४२ | ४८ | ५३ | ५८ | २ |
| | २७ | ४० | ३ | १२ | ० | ३८ | २७ | ४० | ३ | १२ | ० | ३८ |
| २७ | ७ | १२ | १८ | २३ | २८ | ३२ | ३७ | ४३ | ४८ | ५३ | ५८ | २ |
| | ३७ | ५१ | १४ | २२ | ९ | ४७ | ३७ | ५१ | १४ | २२ | ९ | ४७ |
| २८ | ७ | १३ | १८ | २३ | २८ | ३२ | ३८ | ४२ | ४८ | ५३ | ५८ | २ |
| | ४७ | २ | २५ | ३२ | १८ | ५६ | ४८ | २ | २५ | ३२ | १८ | ५६ |
| २९ | ७ | १३ | १८ | २३ | २८ | ३३ | ३७ | ४३ | ४८ | ५३ | ५८ | ३ |
| | ५७ | १२ | ३५ | ४२ | २७ | ५ | ५७ | १२ | ३५ | ४२ | २८ | ५ |
| ३० | ८ | १३ | १८ | २३ | २८ | ३३ | ३८ | ४३ | ४८ | ५३ | ५८ | ३ |
| | ८ | २३ | ४६ | ५२ | ३७ | १५ | ७ | २४ | ४७ | ५२ | ३७ | १५ |

अथमेषादीना सज्ञामाह

क्रियतायुरिजितुमकुलीरलेयपायोनजूककौर्ष्यास्था ॥ तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चात्यम
चेत्यम् ॥४८॥

अथ मेषादिराशीना स्वामिनः

मेषवृश्चिकयोर्भौमस्तुलावृषभयोर्मृगु ॥ कन्यामिथुनयोर्ज्ञा स्पादनुर्मिताधिपो गुरु ॥४९॥
शनिर्मकरकुम्भे च कुलीरस्थ तु चन्द्रमा ॥ सिंहस्याधिपतिः सूर्यो राशीनामधिपा मता ॥५०॥

पुनः राशीशाः

चद्रस्तशुक्रधूमाकपरिवेपारकामुका ॥ गुरुपात शनि केतुर्ग्रहाः स्युर्द्वादश क्रमात् ॥५१॥

मेषादि राशियो की सज्ञा

त्रिय, तानुुरि, जितुम, कुलीर, लेय, पापोन, जूक, कौर्ष्य, तौक्षिक आकोकेरो, हृद्रोग
तथा अन्त्य ये सज्ञा है ॥४८॥

राशियो के स्वामी

मेष, वृश्चिक का मगन, वृष, तुला का शुक्र, मिथुन, कन्या का बुध, घनु, मीन का गुरु तथा

मकर और कुम्भ राशि का शनि, कर्क राशि का चन्द्रमा और सिंह का सूर्य स्वामी है॥४९॥५०॥

अप्रकाश ग्रह सहित स्वामी

चन्द्रमा, बुध, शुक्र, धूम, सूर्य, परिवेध, मंगल, इन्द्रचाप, गुरु, व्यतीपात, शनि और केतु (ध्वज) ये क्रमशः १२ राशियों के स्वामी हैं॥५१॥

अथाग्रे षोडशवर्गानाह

वर्गान् षोडशसंख्याकान् ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ तानह संप्रवक्ष्यामि मैत्रेय श्रूयतामिति ॥५२॥
क्षेत्र होरा च द्वेष्काणस्तुर्याशः सप्तमांशकः ॥ नवमांशो दशमांशश्च सूर्याशः षोडशांशकः ॥५३॥
विंशांशो वेदवान्हांसो भाशात्पञ्चांशकस्ततः ॥ सवेदांशोऽसवेदांशःषष्ठ्यंश्च ततः परम् ॥५४॥
तत्क्षेत्रं तस्य सेटस्य राशेयौ यस्य नायकः ॥ सूर्येन्दोर्विषमे राशौ समे तद्विपरीतकम् ॥५५॥
पितरश्चन्द्रहोरेषा देवाः सूर्यस्य कीर्तिताः ॥ राशेरद्वम्भवेद्धोरा ताश्चमुर्विशतिः स्मृताः ॥
मेपादि तासां होराणां परिवृत्तिद्वय भवेत् ॥५६॥

षोडश वर्ग नाम

हे मैत्रेय! लोकपितामह ब्रह्मा के कहे हुए १६ वर्गों को कहता हूँ, आप सुने ॥५२॥ स्वक्षेत्र १ होरा, २ द्वेष्काण ३ तुर्याश ४ सप्तमांश ५ नवमांश ६ दशमांश ७ द्वादशांश ८ तथा षोडशांश ९ विंशांश १० चतुर्विंशांश ११ भाग १२ त्रिंशांश १३ सवेदांश १४ असवेदांश १५ षष्ठ्यंश १६ ये १६ वर्ग हैं॥५२॥५३॥५४॥

स्वक्षेत्र और होरा

१-जिस राशि का जो स्वामी है वह 'स्वक्षेत्र वर्ग' है।
२-होरा-विषम राशि में 'प्रथम सूर्य' १५ अंश तक बाद 'चन्द्रमा ३० अंश तक' होरापति है।
समराशि में 'प्रथम चन्द्रमा की' बाद 'सूर्य' की होरा है। चन्द्र होरा के स्वामी 'पितर' और सूर्यहोरा के स्वामी देवता हैं। राशि के आधे भाग (१५ अंश) को होरा कहते हैं। वे २४ हैं। राशिचक्र में दो बार आवृत्ति होती है ॥५५॥५६॥

उदाहरण-जब लग्न में विषम राशि हो तब सूर्य से और समराशि हो तो चन्द्रमा से गिना जाता है। जैसे-लग्न ३।८ हो तो सम राशि होने से चन्द्रहोरा (४) है।
लग्न २।४ हो तो विषम राशि होने से सूर्य होरा (५) है।

होराचक्रमिदम्

| स्वा० | राशि० | मे० | दू० | त्रि० | च० | पि० | क० | सि० | र० | व० | ध० | म० | कु० | मी० |
|-------|-------|-----|-----|-------|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|
| दे० | १५ | २०५ | ३०४ | ४०५ | ५०४ | ६०५ | ७०४ | ८०५ | ९०४ | १०५ | १०४ | ११५ | १२४ | १३५ |
| पितर | ३० | ४०४ | ५०५ | ६०४ | ७०५ | ८०४ | ९०५ | १०४ | ११५ | १२४ | १३५ | १४४ | १५५ | १६४ |

अथ द्वेष्काणमाह

राशिभिर्भागा द्वेष्काणास्तेषु षट्त्रिंशद्विरिताः ॥ परिवृत्तित्रयतेषां मेधावेः क्रमशो भवेत् ॥५७॥
स्वपंचनवमानां च विषमेषु समेषु च ॥ नारदागस्तिदुर्वासा द्वेष्काणेशाश्चरादयः ॥५८॥

३-द्वेष्काण-प्रत्येक राशि के तीसरे भाग को 'द्वेष्काण' कहते हैं। सब द्वेष्काण १२X३=३६ हैं।
मेधादि राशियों में तीन आवृत्ति होती है, प्रथम भाग का राशीश ही स्वामी है, दूसरे का
पञ्चमेश और तीसरे का नवमेश स्वामी होता है। क्रम से नारद, अगस्ति, दुर्वासा देवता
हैं ॥५७॥५८॥

उदाहरण-राशि के ३० अंश है, उसके ३ भाग करने पर १०-१० अंश का १-१ भाग
(द्वेष्काण) होता है। उसमें प्रथम भाग का राशिपति ही स्वामी है, दूसरे का पञ्चमाधिपति
और तीसरे का नवम राशिपति स्वामी होता है। जैसे लग्न ३६ है अतः प्रथम भाग में होने से
चन्द्रमा की राशि ४ द्वेष्काण लग्न सिद्ध हुआ।

द्वेष्काणचक्रम्

| स्वा० | राशि | मे० | वृ० | मि० | क० | सि० | का० | तु० | वृ० | घ० | म० | कु० | मीन | |
|----------|------|-----|-----|-----|----|-----|-----|-----|-----|----|----|-----|-----|----|
| नारद | अश | १० | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
| अगस्ति | २० | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | |
| दुर्वासा | ३० | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | |

अथ चतुर्थांशमाह

स्वर्क्षादिकेद्रपतयस्तुयशिराः क्रियादयः ॥ सनकश्च सनदश्च कुमारश्च सनातनः ॥५९॥

चतुर्थांश वर्ग

राशि के ४ भाग में प्रथम भाग का स्वामी राशिपति है। द्वितीय भाग का चतुर्थ
भावाधिपति एवं तृतीय का सप्तमेश और चतुर्थे का दशमेश स्वामी होता है। और सनक,
सनन्दन, सनत्कुमार, सनातन क्रम से देवता हैं ॥५९॥

विवरण-राशि ३० के ४ भाग करने में ७।३० अंश का एक भाग होता है, इसका स्वामी
राशिपति ही है, दूसरा भाग १५ अंश तक हुआ, इसका स्वामी चतुर्थेश और तीसरा भाग
२२।३० तक हुआ इसका स्वामी सप्तमेश तथा चौथा भाग ३० अंश तक उमका स्वामी
दशमेश होता है।

उदाहरण-लग्न ३६ है। द्वितीय भाग में होने से शुक्र स्वामी है।

चतुर्थांशचक्रम्

| स्वामी | अक्ष | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
|--------|----------|----------|----------|-----------|----------|----------|-----------|----------|----------|-----------|----------|----------|-----------|
| मनक | ७ ३० | १ म० | २ सु० | ३ बु० | ४ च | ५ मू० | ६ बु० | ७ सु० | ८ म० | ९ बु० | १० म० | ११ म० | १२ बु० |
| समंदन | १५ ० | ४ म० | ५ मू० | ६ बु० | ७ सु० | ८ म | ९ बु० | १० म० | ११ म० | १२ बु० | १ म० | २ सु० | ३ बु० |
| कुमार | २२ ३० | ७ सु० | ८ म० | ९ बु० | १० म० | ११ म० | १२ बु० | १ म० | २ सु० | ३ बु० | ४ म० | ५ मू० | ६ बु० |
| सनातन | ३० ० | १० म० | ११ म० | १२ बु० | १ म० | २ सु० | ३ बु० | ४ म० | ५ मू० | ६ बु० | ७ सु० | ८ म० | ९ बु० |

अथ सप्तमांशमाह

सप्तांशपास्त्योजगृहे गणनीया निजेशतः ॥ युग्मराशौ तु विज्ञेयाः सप्तमक्षादिनायकात् ॥६०॥
क्षारक्षीरी च दध्याज्यौ तथेक्षुरससंभवः ॥ मद्यशुद्धजलावोजे समे शुद्ध जलादिकाः ॥६१॥

सप्तमांश वर्ग

राशि के ७ भाग करने से एक भाग ४।१७।८ अंशात्मक होता है। बाद ४।१७ जोड़ते रहने से सातवें भाग में ३० अंश पूरे समझना। इसमें ओज (विषम) राशियों में राशिपति से ही गिनना। समराशियों में मातृवी राशि से गणना करना चाहिये। विषम राशि में देवता-क्षार, क्षीर, दधि, घृत, इक्षुरस, मद्य, जल क्रम से जानना।

समराशियों में-जल, मद्य, इक्षुरस, घृत, दधि, क्षीर, क्षार इस क्रम से जानना॥६०॥६१॥

उदाहरण-लघ्न-३।८ समराशि का द्वितीय सप्तमांश है अतः कुम्भ राशि तथा मद्य देवता है।

सप्तमांशचक्रम्

| स्वामी | सप्त | मे०१ | बु०२ | मि०३ | क०४ | ति०५ | क०६ | सु०७ | बु०८ | म०९ | म०१० | कुं११ | मी१२ |
|--------|---------|------|------|------|-----|------|-----|------|------|-----|------|-------|------|
| क्षार | ४ १७ | १ | ८ | ३ | १० | ५ | १२ | ७ | २ | ९ | ४ | ११ | ६ |
| क्षीर | ८ ३४ | २ | ९ | ४ | ११ | ६ | १ | ८ | ३ | १० | ५ | १२ | ७ |

| | | | | | | | | | | | | | |
|---------------|----------|---|----|---|----|----|---|----|---|----|----|---|----|
| वधि | १२ ५१ | ३ | १० | ५ | १२ | ७ | २ | ९ | ४ | ११ | ६ | १ | ८ |
| आज्य | १७ ८ | ४ | ११ | ६ | १ | ८ | ३ | १० | ५ | १२ | ७ | २ | ९ |
| इशुराज्य | २१ २५ | ५ | १२ | ७ | २ | ९ | ४ | ११ | ६ | १ | ८ | ३ | १० |
| मघ | २५ ४२ | ६ | १ | ८ | ३ | १० | ५ | १२ | ७ | २ | ९ | ४ | ११ |
| शुद्ध जलम् | ३० ० | ७ | २ | ९ | ४ | ११ | ६ | १ | ८ | ३ | १० | ५ | १२ |

अव नवमांशम्

नवांशेशाच्चरस्तस्मात्स्थिरे तन्नवमादितः॥ उभये तत्पचमादेरिति चिंत्य विचक्षणैः ॥ देवा
नृराक्षसाश्चैव चरादिषु ग्रहेषु च ॥६२॥

नवांश वर्ग

चरराशिमे राशिस्वामीसे स्थिरराशि मे नवमराशि मे तथा द्विस्वभाव राशि मे पञ्चम राशि से गणना करनी चाहिए । चर मे देवता, मनुष्य, राक्षस, स्थिर मे मनुष्य, राक्षस, देव और द्विस्वभाव मे राक्षस, देव, मनुष्य तीन बार आवृत्ति होती है॥६२॥

उदाहरण—जैसे लग्न ३।८।४।५ है। अतः कन्या नवमांश है।

टिप्पणी—नवांश वर्ग का व्यवहार मे अधिक उपयोग होता है, यहाँ मूलकार ने संक्षेप तथा कुछ जटिल रीति से इसका विवरण किया है। इसकी सरल प्रक्रिया इस प्रकार है—

राशि के नव भाग करने से प्रत्येक भाग ३।२० का होता है और "क्रियेण—तीलीन्दुभतो नवांशाः ।" अर्थात् प्रत्येक राशि पर मेष, मकर, तुला, कर्क, मेष, मकर, तुला, कर्क ॥ मेष, मकर, तुला, कर्क ये आदि राशि है। प्रत्येक राशि के नवांश मे अपनी आदि राशि से नवे भाग तक गणना करना और प्रत्येक भाग ३।२० का होता है। अतः नौ भागों की संख्या क्रमशः ३।२०—६।४०—१०।००—१३।२०—१६।४०—२०।००—२३।२०—२६।४०—३०।०० ये अगादि भाग संख्या है। इसको याद रखने से व्यवहारकाल मे चक्र मे देखना आवश्यक नहीं होगा।

नवमांशचक्रम्

| स्वामी | रा० | मे० | वृ० | मि० | क० | सि० | क० | तु० | वृ० | ध० | म० | कु० | मी० | अशा |
|--------|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-------|
| देव | १ | म० | श० | गु० | च० | म० | श० | गु० | च० | म० | श० | गु० | च० | ३।२० |
| नृ० | २ | गु० | श० | म० | र० | गु० | श० | म० | र० | गु० | श० | म० | र० | ६।४० |
| राक्षस | ३ | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | १०।० |
| देव | ४ | च० | म० | श० | गु० | च० | म० | श० | गु० | च० | म० | श० | गु० | १३।२० |
| नृ० | ५ | र० | गु० | श० | म० | र० | गु० | श० | म० | र० | गु० | श० | म० | १६।४० |
| राक्षस | ६ | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | २०।० |
| देव | ७ | गु० | च० | म० | श० | गु० | च० | म० | श० | गु० | च० | म० | श० | २३।२० |
| नृ० | ८ | म० | र० | गु० | श० | म० | र० | गु० | श० | म० | र० | गु० | श० | २६।४० |
| राक्षस | ९ | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | वृ० | ३०।० |

अथ दशमांशमाह

विगशाया ततश्चौजे युग्मे तत्रैवमाहृदेत् ॥ पूर्वोदिदशदिक्पाला इद्राग्निपमराक्षसा ॥६३॥ वरुणो
मारुतश्चैव कुबेरैशानपद्मजा ॥ अनन्तश्च क्रमादौजे समे वा व्युत्क्रमेण तु ॥६४॥

दशमांश वर्ग

राशि के ३० अंशों के १० भाग करने से प्रत्येक भाग ३ अंश का होता है। इनमें विषमराशियों में अपनी राशि से तथा सम राशियों में अपने से नौवीं राशि से गणना की जाती है। देवता विषम राशि में क्रम से—इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, मारुत, कुबेर, ईशान, पद्मज, अनन्त। सम राशियों में क्रमशः—अनन्त, पद्मज, ईशान, कुबेर, मारुत, वरुण, राक्षस, यम, अग्नि, इन्द्र जानना ॥६३॥६४॥

उदाहरण—नक्ष-३।८।४।५ मीन राशि से गणना करने पर वृष राशि प्राप्त हुई।

अथ दशांशचक्रम्

| विषयमा स्यामित | | मे० | बृ० | मि० | क० | सि० | क० | बु० | वृ० | घ० | म० | कु० | मी० | समा स्वामि |
|-------------------|----|----------|-----------|-----------|-----------|-----------|----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|---------------|
| इन्द्र | ३ | म० १ | श० १० | बु० ३ | वृ० १२ | १० ५ | शु० २ | बु० ७ | वृ० ४ | वृ० ९ | बु० ६ | श० ११ | म० ८ | अनत |
| अग्नि | ६ | शु० २ | श० ११ | वृ० ४ | म० १ | बु० ६ | बु० ३ | म० ८ | २० ५ | श० १० | शु० ७ | वृ० १२ | वृ० ९ | पयज |
| यम | ९ | बु० ३ | वृ० १२ | २० ५ | शु० २ | शु० ७ | वृ० ४ | बु० ९ | बु० ६ | श० ११ | म० ८ | म० १ | श० १० | ईशान |
| राक्षस | १२ | वृ० ४ | म० १ | बु० ६ | वृ० ३ | म० ८ | २० ५ | श० १० | शु० ७ | वृ० १२ | वृ० ९ | शु० २ | श० ११ | कुबेर |
| वरुण | १५ | १० ५ | शु० २ | शु० ७ | वृ० ४ | वृ० ९ | बु० ६ | श० ११ | म० ८ | म० १ | श० १० | बु० ३ | वृ० १२ | मातल |
| मातल | १८ | बु० ६ | वृ० ३ | म० ८ | २० ५ | श० १० | शु० ७ | वृ० १२ | वृ० ९ | शु० २ | श० ११ | वृ० ४ | म० १ | वरुण |
| कुबेर | २१ | शु० ७ | वृ० ४ | वृ० ९ | बु० ६ | श० ११ | म० ८ | म० १ | श० १० | बु० ३ | वृ० १२ | म० ५ | शु० २ | राक्षस |
| ईशान | २४ | म० ८ | १० ५ | श० १० | शु० ७ | वृ० १२ | वृ० ९ | शु० २ | श० ११ | वृ० ४ | म० १ | बु० ६ | बु० ३ | यम |
| पयज | २७ | वृ० ९ | वृ० ६ | श० ११ | म० ८ | म० १ | श० १० | बु० ३ | वृ० १२ | १० ५ | शु० २ | शु० ७ | वृ० ४ | अग्नि |
| अनत. | ३० | श० १० | शु० ७ | वृ० १२ | वृ० ९ | शु० २ | श० ११ | वृ० ४ | म० १ | बु० ६ | बु० ३ | म० ८ | २० ५ | इन्द्र |

अथ द्वादशांशमाह ५ १० ५ १० ५ १० ५ १० ५ १० ५ १० ५ १० ५ १०

द्वादशांशस्य गणना सत्तत्त्वोत्रादिनिर्दिशत ॥ तेषामधोशा क्रमशो गणेशाऽश्विनमाहव्य ॥६५॥

द्वादशांश वर्ग

एक राशि के ३० अंशों के १२ भाग करने पर २।३० एव भाग प्राप्त होता है। इसी गणना अपनी राशि से ही होती है (यथा मेष के द्वादशांश की मेष से, वृष की वृष से, मिथुन की मिथुन से) ॥६५॥ देवता—गणेश, अश्विनीकुमार, यम, सर्प—ये तीन आवृत्ति करना।

उदाहरण—लग्न ३।८ बर्क से गुनने पर तुला राशि प्राप्त हुई।

अथ द्वादशांशचक्रमिदम्

| स्वामिन | अ० | मे० | ब० | मि० | क० | सि० | क० | तु० | ब० | घ० | म० | कु० | मी० |
|-------------------|----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|-----------|
| गणेश | २ ३० | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ | गु० १२ |
| अश्विनी कुमारौ | ५ ० | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ |
| यम | ७ ३० | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ |
| अहि | १० ० | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ |
| गणेश | १२ ३० | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ |
| अश्विनी कुमारौ | १५ ० | बु० ६ | श० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ |
| यम | १७ ३० | गु० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ |
| अहि | २० ० | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ |
| गणेश | २२ ३० | गु० ९ | म० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ |
| अश्विनी कुमारौ | २५ ० | श० १० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ | गु० ९ |
| यम | २७ ३० | श० ११ | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० |
| अहि | ३० ० | गु० १२ | म० १ | शु० २ | बु० ३ | च० ४ | र० ५ | बु० ६ | शु० ७ | म० ८ | गु० ९ | श० १० | श० ११ |

अथ षोडशांशमाह

अजसिद्धान्तो ज्ञेया नृपाशा क्रमशः सदा ॥ अजविष्णू रह नृप्यो ह्योजे युग्मे प्रतीपकम् ॥६६॥

षोडशांश वर्ग (चर, स्थिर, द्विस्व०)

षोडशांश मे-मेघ सिंह, धनु राशि से अर्गात् (द्विको नवराश की तरह आदि राशि मान कर

गणना करना।) इसका एक भाग १।५२।३० होता है। (चक्र में स्पष्ट है) देवता-विषम राशि में ब्रह्मा, विष्णु, हर, सूर्य तथा सम राशि में सूर्य, हर, विष्णु, ब्रह्मा। आगे पुन इसी क्रम से गिन लेना॥६६॥

उदाहरण-लग्न-३।८।४।५। मेघ से गणना की तो सिंह राशि प्राप्त हुई।

| षोडशांशचक्रम् | | | | | | | | | | | | | | | | |
|---------------|---------------|-----|-----|-----|----|-----|----|-----|----|----|----|-----|-----|-------------|----|-------|
| सख्या | विषम स्वा० | मे० | बु० | वि० | क० | ति० | क० | तु० | द० | ध० | म० | कु० | मी० | सम स्वा० | अ० | वि० |
| १ | ब० | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | सू० | १ | ५२ ३० |
| २ | वि० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | ह० | ३ | ४५ ० |
| ३ | ह० | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | वि० | ५ | ३७ ३० |
| ४ | सू० | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ब० | ७ | ३० ० |
| ५ | ब० | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | सू० | ९ | २२ ३० |
| ६ | वि० | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ह० | ११ | १५ ० |
| ७ | ह० | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | वि० | १३ | ७ ३० |
| ८ | सू० | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ब० | १५ | ० ० |
| ९ | ब० | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | सू० | १६ | ५२ ३० |
| १० | वि० | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | ह० | १८ | ४५ ० |
| ११ | ह० | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | वि० | २० | ३७ ३० |
| १२ | सू० | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | ब० | २२ | ३० ० |
| १३ | ब० | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | सू० | २४ | २२ ३० |
| १४ | वि० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | ह० | २६ | १५ ० |
| १५ | ह० | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | वि० | २८ | ७ ३० |
| १६ | सू० | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ब० | ३० | ० ० |

अथ विंशतिमाह

अथ विंशतिभागानामधिषा ब्रह्मणोहिता ॥ क्रियाचन्द्रे स्थिरे चापान्मृगेन्द्राद्विद्वस्वभावके ॥६७॥ काली गौरी जया लक्ष्मीविजया विमला सती ॥ तारा ज्वालामुखी श्वेता ललिता बगलामुखी ॥६८॥ प्रत्यगिरा शची रौद्री भवानी वरदा जया ॥ त्रिपुरा सुमुखी चेति विष्टमे परिचितयेत् ॥६९॥ समराशौ दया मेधा छिन्नशीर्षा पिशाचिनी ॥ धूमावती च मातंगी बाला मद्राऽरुणाऽनला ॥७०॥ पिगला छुट्टुका घोरा बाराही वैष्णवी सिता ॥ भुवनेश्वरी भैरवा च मङ्गला ह्यपराजिता ॥७१॥

विंशति वर्ग

विंशति वर्ग में चर (मेघ, कर्क, तुला, मकर) राशियों में मेघ से गणना करना, स्थिर राशियों में धनुराशि से और द्विस्वभाव राशियों में सिंह से गणना करना। इसका परिमाण १।३० है। देवता-विष्टम राशियों में क्रमशः-काली, गौरी, जया, लक्ष्मी, विजया, विमला सती, तारा, ज्वालामुखी, श्वेता, ललिता, बगलामुखी, प्रत्यगिरा, शची, रौद्री, भवानी, वरदा जया, त्रिपुरा और सुमुखी। समराशियों में-दया, मेधा, छिन्नशीर्षा, पिशाचिनी, धूमावती मातंगी, बाला, मद्रा, अरुणा, अनला, पिगला, छुट्टुका, घोरा, बाराही, वैष्णवी, सिता भुवनेश्वरी, भैरवी, मङ्गला और अपराजिता ये क्रमशः देवता हैं ॥६७-७१॥

उदाहरण-सन् ३।८।४।५" कर्क चर राशि है अतः मेघ से गणना करने पर कन्या राशि प्राप्त हुई।

विंशतिचक्रम्

| सं. | वि० स्वा० | मे० १ | वृ० २ | मि० ३ | क० ४ | सि० ५ | क० ६ | तु० ७ | वृ० ८ | ध० ९ | म० १० | कु० ११ | मी० १२ | सं० स्वा | अक्ष | संख्या |
|-----|--------------|----------|----------|----------|---------|----------|---------|----------|----------|---------|----------|-----------|-----------|-------------|------|--------|
| १ | काली | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | दया | १३० | १ |
| २ | गौरी | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | मेधा | ३१० | २ |
| ३ | जया | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | छिन्नशी | ४३० | ३ |
| ४ | लक्ष्मी | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | पिशाचि | ६१० | ४ |
| ५ | विजया | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | धूमाव | ७३० | ५ |
| ६ | विमला | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | मातंगी | ९१० | ६ |

| | | | | | | | | | | | | | | | | |
|----|-----------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|------------|------|----|
| ७ | सती | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | बाता | १०३० | ७ |
| ८ | तारा | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | भटा | १२१० | ८ |
| ९ | ज्वालापु० | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | अरुणा | १३३० | ९ |
| १० | भेता | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | अनला | १५१० | १० |
| ११ | ललिता | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | विगता | १६३० | ११ |
| १२ | दगला | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | छुट्टा | १८१० | १२ |
| १३ | प्रायगिरा | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | घोरा | १९३० | १३ |
| १४ | शची | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | बाराही | २१० | १४ |
| १५ | रोही | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | वैष्णवी | २२३० | १५ |
| १६ | भवानी | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | सिता | २४१० | १६ |
| १७ | वरदा | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | ५ | १ | ९ | मुक्तेश्व० | २५३० | १७ |
| १८ | जया | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | ६ | २ | १० | शैरवी | २७१० | १८ |
| १९ | त्रिवुरा | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | ७ | ३ | ११ | मंगला | २८३० | १९ |
| २० | सुमुली | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | ८ | ४ | १२ | अपराजि० | ३०१० | २० |

अथ सिद्धांशकमाह

सिद्धाशकानामधिया सिद्धादोऽङ्गमे गृहे ॥ कर्काद्युगममे सेट स्कद. पशुधरोऽनल ॥७२॥
विश्वकर्मा भगो मित्रो मयोऽन्तक वृषध्वजा ॥ गोविदो मदनो भीम सिद्धादो विषमे क्रामात् ॥
कर्कादौ सममे भीमाद्विलोमेन विचित्रयेत् ॥७३॥

सिद्धा (२४) श वर्ग

चतुर्विंशश वर्ग मे विषमराशियो मे सिद्ध से तथा सम राशियो मे बर्ब राशि मे गणना करनी चाहिये। इसका एक भाग १।१५ अंश का होता है।

देवता—स्कन्द, पशुधर, अनल, विश्वक, भग, मित्र, मय, अन्तक, वृषध्वज, गोविन्द, मदन, भीम, स्कन्द, पशुधर, अनल, विश्वक, भग, मित्र, मय, अन्तक, वृषध्वज, गोविन्द, मदन, भीम ये देवता क्रमशः विषम राशि मे जानना तथा सम राशियो मे ये ही देवता विपरीत क्रम से समझना ॥७२॥७३॥

उदाहरण—वर्ग ३।८।४ बर्कादि गणना मे मकर प्राप्त हुआ।

चतुर्विंशशचक्रम्

| सं० | विस्त्वा० | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | सं०स्वा० | अंक० | सं० |
|-----|-----------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----------|-------|-----|
| १ | स्कद | ५ | ४ | ५ | ४ | ५ | ४ | ५ | ४ | ५ | ४ | ५ | ४ | भीम | १११५ | १ |
| २ | पशुधर | ६ | ५ | ६ | ५ | ६ | ५ | ६ | ५ | ६ | ५ | ६ | ५ | मदन | २१३० | २ |
| ३ | अनल | ७ | ६ | ७ | ६ | ७ | ६ | ७ | ६ | ७ | ६ | ७ | ६ | गोविन्द | ३१४५ | ३ |
| ४ | विश्वक | ८ | ७ | ८ | ७ | ८ | ७ | ८ | ७ | ८ | ७ | ८ | ७ | वृषध्वज | ४१० | ४ |
| ५ | भग | ९ | ८ | ९ | ८ | ९ | ८ | ९ | ८ | ९ | ८ | ९ | ८ | अन्तक | ५११५ | ५ |
| ६ | मित्र | १० | ९ | १० | ९ | १० | ९ | १० | ९ | १० | ९ | १० | ९ | भग | ६१३० | ६ |
| ७ | भग | ११ | १० | ११ | १० | ११ | १० | ११ | १० | ११ | १० | ११ | १० | मित्र | ७१४५ | |
| ८ | अन्तक | १२ | ११ | १२ | ११ | १२ | ११ | १२ | ११ | १२ | ११ | १२ | ११ | भग | ८०१० | |
| ९ | वृषध्वज | १ | १२ | १ | १२ | १ | १२ | १ | १२ | १ | १२ | १ | १२ | विश्वक | ९११५ | ९ |
| १० | गोविन्द | २ | १ | २ | १ | २ | १ | २ | १ | २ | १ | २ | १ | अनल | १२१३० | १० |
| ११ | मदन | ३ | २ | ३ | २ | ३ | २ | ३ | २ | ३ | २ | ३ | २ | पशुधर | १३१४५ | ११ |
| १२ | भीम | ४ | ३ | ४ | ३ | ४ | ३ | ४ | ३ | ४ | ३ | ४ | ३ | स्कद | १५१० | १२ |
| १३ | स्कद | ५ | ४ | ५ | ४ | ५ | ४ | ५ | ४ | ५ | ४ | ५ | ४ | भीम | १६११५ | १३ |
| १४ | पशुधर | ६ | ५ | ६ | ५ | ६ | ५ | ६ | ५ | ६ | ५ | ६ | ५ | मदन | १७१३० | १४ |
| १५ | अनल | ७ | ६ | ७ | ६ | ७ | ६ | ७ | ६ | ७ | ६ | ७ | ६ | गोविन्द | १८१४५ | १५ |
| १६ | विश्वक | ८ | ७ | ८ | ७ | ८ | ७ | ८ | ७ | ८ | ७ | ८ | ७ | वृषध्वज | २०१० | १६ |
| १७ | भग | ९ | ८ | ९ | ८ | ९ | ८ | ९ | ८ | ९ | ८ | ९ | ८ | अन्तक | २१११५ | १७ |
| १८ | मित्र | १० | ९ | १० | ९ | १० | ९ | १० | ९ | १० | ९ | १० | ९ | भग | २२१३० | १८ |
| १९ | भग | ११ | १० | ११ | १० | ११ | १० | ११ | १० | ११ | १० | ११ | १० | मित्र | २३१४५ | १९ |
| २० | अन्तक | १२ | ११ | १२ | ११ | १२ | ११ | १२ | ११ | १२ | ११ | १२ | ११ | भग | २५१० | २० |
| २१ | वृषध्वज | १ | १२ | १ | १२ | १ | १२ | १ | १२ | १ | १२ | १ | १२ | विश्वक | २६११५ | २१ |
| २२ | गोविन्द | २ | १ | २ | १ | २ | १ | २ | १ | २ | १ | २ | १ | अनल | २७१३० | २२ |
| २३ | मदन | ३ | २ | ३ | २ | ३ | २ | ३ | २ | ३ | २ | ३ | २ | पशुधर | २८१४५ | २३ |
| २४ | भीम | ४ | ३ | ४ | ३ | ४ | ३ | ४ | ३ | ४ | ३ | ४ | ३ | स्कद | ३०१० | २४ |

अथ भांशशानाह

नक्षत्रेशः क्रमाद्वयमवह्निपितामहाः ॥ चंद्रेशादितिजीवा हि पितरो भगसंज्ञिताः ॥७४॥
 अर्यमार्कस्त्वष्टमरुत्शक्राग्निमित्रवासवासयाः ॥ निरृत्युदक विश्वेजगो बिन्दो यसर्वोबुधः ॥७५॥
 ततोऽजपादहिर्बुध्न्यः पूषाचैव प्रकीर्तितः ॥ नक्षत्रेशास्तु भांशेशा भांश संख्यस्वभात् क्रमात् ॥७६॥

भांश (सप्तविंशंश) वर्ग

भांश वर्ग मे ३० अक्ष के २७ भाग होते है। एक भाग १।६।४ अशावि होता है, राशियो के आदि गण्य क्रमश मेप, कर्क, तुला, मकर ये तीन बार आवृत्तिरूप मे आते है। और नक्षत्रो के देवता ही इनके देवता है। यथा—अश्विनीकुमार, यम, वह्नि, ब्रह्मा, चन्द्रमा, ईश, अदिति, जीव, अहि, पितर, भग, अर्यमा, सूर्य, त्वष्टा, मरुत्, शक्राग्नि, मित्र, वासव, राक्षस, वरुण, विश्वेदेव, गोविन्द, वसु, वरुण, अजपात्, अहिर्बुध्न्य, पूषा, क्रमश ये देवता है ॥७४॥७५॥७६॥

उदाहरण—लघ ३।८।४।५ मकर से गणना करने पर सिंह लग्न आया।

भांशचक्रम्

| सं० | स्वामिन | मे०१ | गु०२ | मि३ | क०४ | सि५ | क०६ | गु०७ | मि०८ | क०९ | म०१० | गु०११ | मि०१२ | अशावि |
|-----|------------|------|------|-----|-----|-----|-----|------|------|-----|------|-------|-------|----------|
| १ | अश्विनीकु० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १।६।४० |
| २ | यम | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २।१३।२० |
| ३ | वह्नि | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३।२०।० |
| ४ | ब्रह्मा | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४।२६।४० |
| ५ | चन्द्रमा | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५।३३।२० |
| ६ | ईश | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६।४०।० |
| ७ | अदिति | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७।४६।४० |
| ८ | जीव | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८।५३।२० |
| ९ | अहि | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९।०।० |
| १० | पितर | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | ११।६।४० |
| ११ | भग | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | १२।१३।२० |
| १२ | अर्यमा | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १३।२०।० |

| | | | | | | | | | | | | | | |
|----|--------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----------|
| १३ | सुर्व | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १४/१६/४० |
| १४ | सव्य | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | १५/१७/२० |
| १५ | मध्य | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | १६/४०/१० |
| १६ | पश्चिम | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | १७/४१/१० |
| १७ | पश्चिम | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | १८/५३/२० |
| १८ | पश्चिम | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | १९/०/१० |
| १९ | पश्चिम | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | २०/६/४० |
| २० | पश्चिम | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | २१/२१/२० |
| २१ | पश्चिम | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | २२/२०/१० |
| २२ | पश्चिम | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | २३/२६/४० |
| २३ | पश्चिम | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | २४/३३/२० |
| २४ | पश्चिम | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | २५/४०/१० |
| २५ | पश्चिम | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | १ | ४ | ७ | १० | २६/४१/४० |
| २६ | पश्चिम | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २ | ५ | ८ | ११ | २७/५३/२० |
| २७ | पश्चिम | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | ३ | ६ | ९ | १२ | २८/०/१० |

अथ त्रिंशंशमाह

त्रिंशंशमाह विषये मुद्राङ्गीत्यत्रमात्राः ॥ पञ्चपञ्चाष्टसप्तशतमात्रा व्यत्ययतः समे ॥७७॥
 षष्ठिः समीरमाहौ च धनदो जलदस्तया ॥ विषयेषु कृत्वाज्ञेयाः समरतामौ विपर्ययम् ॥७८॥

विषमत्रिंशदशचक्रम्

| स्वामिन | अशा | मेघ | मिथुन | सिंह | तुला | धनु | कुम्भ |
|---------|---------|-----|-------|------|------|-----|-------|
| बृह्मि | ५ ० | म० | म० | म० | म० | म० | म० |
| वायु | १० ० | श० | श० | श० | श० | श० | श० |
| शक्र | १८ ० | गु० | गु० | गु० | गु० | गु० | गु० |
| धनद | २५ ० | बु० | बु० | बु० | बु० | बु० | बु० |
| जलद | ३० ० | शु० | शु० | शु० | शु० | शु० | शु० |

समत्रिंशदशचक्रम्

| स्वामिन | अशा | वृषभ | कर्क | कन्या | वृश्चिक | मकर | मीन |
|---------|---------|------|------|-------|---------|-----|-----|
| जलद | ५ ० | शु० | शु० | शु० | शु० | शु० | शु० |
| धनद | १२ ० | बु० | बु० | बु० | बु० | बु० | बु० |
| शक्र | २० ० | गु० | गु० | गु० | गु० | गु० | गु० |
| वायु | २५ ० | श० | श० | श० | श० | श० | श० |
| बृह्मि | ३० ० | म० | म० | म० | म० | म० | म० |

अथ खवेदाशमाह

चत्वारिंशतिभागानामधिया विपमे प्रियात् ॥ विष्णुश्चन्द्रो मरीचिश्च त्वष्टा धाता शिवो रवि
॥७९॥ यमो यक्षोऽनघर्ष्य कालो वरुण एव च ॥ सममे सुततो ज्ञेया स्वस्वाधिपसमन्विता ॥८०॥

[illegible]

| | | | | | | | | | | | | | | | |
|----|----------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|
| ३६ | वृषण | १२ | ६ | १२ | ६ | १२ | ६ | १२ | ६ | १२ | ६ | १२ | ६ | २७ | ० |
| ३७ | विष्णु | १ | ७ | १ | ७ | १ | ७ | १ | ७ | १ | ७ | १ | ७ | २७ | ४५ |
| ३८ | शुक्र | २ | ८ | २ | ८ | २ | ८ | २ | ८ | २ | ८ | २ | ८ | २८ | ३० |
| ३९ | मरीचि | ३ | ९ | ३ | ९ | ३ | ९ | ३ | ९ | ३ | ९ | ३ | ९ | २९ | १५ |
| ४० | ज्येष्ठा | ४ | १० | ४ | १० | ४ | १० | ४ | १० | ४ | १० | ४ | १० | ३० | ० |

अथाक्षवेदांशमाह

तथाक्षवेदभागानामधिपश्ररमे क्रियात् ॥ स्थिरसिंहाद्विस्वभावे चापादश्लोकशेषा ॥
ईशाच्युतमुरज्येष्ठविष्णुकेशाश्ररादिषु ॥८१॥

अक्षवेदांश (४५) वर्ग

अक्षवेदांश वर्ग में ३० अक्ष के ४५ भाग हैं और एक भाग ४० घटिका का है। इनमें चरराशियों में मेष राशि से तथा स्थिर राशियों में सिंह एवं द्विस्वभाव राशियों में धनुराशि से गणना होती है। देवता-चरराशि में ब्रह्मा, शक्र, विष्णु इस क्रम से तथा स्थिरराशियों में शक्र, विष्णु, ब्रह्मा क्रम से एवं द्विस्वभाव राशि में विष्णु, ब्रह्मा, शक्र क्रम से बार २ आवृत्ति करके गणना होती है ॥८१॥

उदाहरण-लग्न-३८।४।५ मेष में गणना करने पर वृष राशि आई।

अक्षवेदांशचक्रमिदम्

| सं० | स्वा० ब्रह्मा शक्र विष्णु मे० | स्वा० शक्र विष्णु बृ०१ | स्वा० विष्णु ब्रह्मा शक्र मि०२ | स्वा० ब्रह्मा शक्र विष्णु क०३ | स्वा० शक्र विष्णु ब्रह्मा सि०४ | स्वा० विष्णु ब्रह्मा शक्र क०५ | स्वा० ब्रह्मा शक्र विष्णु तु०६ | स्वा० शक्र विष्णु ब्रह्मा वृ०७ | स्वा० विष्णु ब्रह्मा शक्र मृ०८ | स्वा० ब्रह्मा शक्र विष्णु म०९ | स्वा० शक्र विष्णु ब्रह्मा कु०१० | स्वा० विष्णु ब्रह्मा शक्र मी०११ | अ० | क० |
|-----|---|---------------------------------|--|---|--|---|--|--|--|---|---|---|----|----|
| १ | १ | ५ | ९ | १३ | १७ | २१ | २५ | २९ | ३३ | ३७ | ४१ | ४५ | ० | ४० |
| २ | २ | ६ | १० | १४ | १८ | २२ | २६ | ३० | ३४ | ३८ | ४२ | ४६ | १ | २० |
| ३ | ३ | ७ | ११ | १५ | १९ | २३ | २७ | ३१ | ३५ | ३९ | ४३ | ४७ | २ | ० |
| ४ | ४ | ८ | १२ | १६ | २० | २४ | २८ | ३२ | ३६ | ४० | ४४ | ४८ | ३ | ४० |
| ५ | ५ | ९ | १३ | १७ | २१ | २५ | २९ | ३३ | ३७ | ४१ | ४५ | ४९ | ४ | २० |

| | | | | | | | | | | | | | | |
|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|
| ६ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ४ | ० |
| ७ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ४ | ४० |
| ८ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ५ | २० |
| ९ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ६ | ० |
| १० | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | ६ | ४० |
| ११ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ७ | २० |
| १२ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | ८ | ० |
| १३ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | ८ | ४० |
| १४ | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | ९ | २० |
| १५ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | १० | ० |
| १६ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | १० | ४० |
| १७ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ११ | २० |
| १८ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | १२ | ० |
| १९ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | १२ | ४० |
| २० | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | १३ | २० |
| २१ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | १४ | ० |
| २२ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १४ | ४० |
| २३ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | १५ | २० |
| २४ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १६ | ० |
| २५ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १६ | ४० |
| २६ | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | १७ | २० |
| २७ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | १८ | ० |

| | | | | | | | | | | | | | | |
|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|
| २८ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | १८ | ४० |
| २९ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | १९ | २० |
| ३० | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | २० | ० |
| ३१ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | २० | ४० |
| ३२ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | २१ | २० |
| ३३ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | २२ | ० |
| ३४ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | २२ | ४० |
| ३५ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | २३ | २० |
| ३६ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | २४ | ० |
| ३७ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | २४ | ४० |
| ३८ | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २५ | २० |
| ३९ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | २६ | ० |
| ४० | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | २६ | ४० |
| ४१ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | २७ | २० |
| ४२ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | ६ | १० | २ | २८ | ० |
| ४३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | ७ | ११ | ३ | २८ | ४० |
| ४४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | ८ | १२ | ४ | २९ | २० |
| ४५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ९ | १ | ५ | ३० | ० |

अथ षष्ट्यशमाह

घोरश्च राक्षसो देव कुबेरो यक्षकिन्नरी ॥ भ्रष्ट कुलमो गरतो बह्निर्मापा पुरीषक ॥८२॥
 अपांपतिर्मस्त्वाश्च काल सर्पामृतेन्दुका ॥ मृदु कोमलहेरब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ॥८३॥ देवार्दी
 कलिनाशश्च क्षितीशकमलाकरी ॥ गुलिको मृत्युकालश्च दावाग्निर्धोरसज्जक ॥८४॥ यमश्च
 कण्टकमुद्राऽमृतो पूर्णनिशाकर ॥ विषदग्धकुलातश्च मुख्यो वशजयस्तथा ॥८५॥
 जप्तातकालसौम्यास्या कोमल शीतनाभिध ॥ बरालदण्डचद्रास्थौ प्रवीण कालपायक
 ॥८६॥ दण्डनृत्तिर्मल सोम्य बूरोऽतिशीतलोमृत ॥ पयोधि भ्रमणाख्यौ च चद्ररेखा स्वयुग्मपौ

॥८७॥ समेमे व्यत्ययाज्जेया षष्ठ्यंशाश्च प्रकीर्तिताः ॥ षष्ठ्यंशस्वामिनस्त्वोजे तदीशाश्चत्ययः समे ॥८८॥ शुभषष्ठ्यंशसंपुक्ता ग्रहाः शुभफलप्रदाः ॥ क्रूरषष्ठ्यंशसंपुक्ता नाशयन्ति संचारिणः ॥८९॥ राशीन् विहाय खेटस्य द्विप्रमंशाद्यमर्कहृत् ॥ शेषं सैकं च तद्राशिनाथषष्ठ्यंशपाः स्मृताः ॥९०॥

षष्ठ्यंश वर्ग (६०)

षष्ठ्यंश वर्ग में प्रथम देवता कथन करते हैं। ये देवता विषम राशियों में लिखित क्रम से और सम राशियों में विपरीत क्रम से जानना। घोर । राक्षस । देव । कुबेर । यक्ष । किन्नर । भ्रष्ट । कुलध्व । गरल । अग्नि । माया । पुरीष । अपा पति । मरुत्वत् । काल । अहिभाग । अमृत । चन्द्र । मृदु । कोमल । हेरम्ब । बह्म । विष्णु महेश्वर । देव । आर्द्र । कलिनाश । क्षितीश्वर । कमलाकर । गुलिक । मृत्यु । काल । दावाग्नि । यम । काष्ठक । सुधा । अमृत । पूर्णचन्द्र । विषप्रदग्ध । कुलनाश । वशक्षय । उत्पात । कालरूप । सौम्य । कोमल । शीतल । दृष्टा कराल । इन्दुमुख । प्रवीण । कालाग्नि । दण्डायुध । निर्मल । सौम्य । क्रूर । अतिशीतल । सुधाश । पयोधीश । भ्रमण । इन्दुरेखा ये ६० देवता कहे गये हैं।

वर्ग विवरण

जिस ग्रह या लग्न में षष्ठ्यंश की राशि देखना हो उसके स्पष्ट में से राशि अलग रखकर अश, घटी, पल के अंक को द्विगुण करना, क्या को ३० से शेष कर अश में युक्त करना । और अश में १२ वा भाग देकर (लब्ध त्याग कर) शेष सख्या में १ मिलाना पश्चात् लग्न या ग्रह जिस राशि में हो उस राशि से गणना करने पर राशि अंक प्राप्त होगा। देवता के सम विषम के बारे में ऊपर लिख चुके हैं ॥८२-९०॥

उदाहरण—लग्न-३।८।४५।०० इसके अशादि ८।४५।४२=१६।१० घटिका में ३० वा भाग दिया लब्धि ३ अश में योग किया तो १९ हुए, इसमें १ और योग किया २० हुए। १२ का भाग दिया शेष ८ अश रहे। अतः सारिणी में १७ वा अश १२ (भीन) राशि और 'कालरूप' अश प्राप्त हुआ। यह में उदाहरण—मूर्य—अशादि ४।२८।१।४२=८।५६।२ घटी ५६ में ३० के भाग में लब्धि १ को ८ में योग किया ९ हुए १ और योग किया १० हुए मितुन से गणना करने पर २१ 'हेरम्ब' अश और १ राशि प्राप्त हुई॥

अथ षष्ट्यंशचक्रमिदम्

| सं० | विषयव्यञ्जना | मे० ० | वृ० १ | मि० २ | क० ३ | सि० ४ | क० ५ | तु० ६ | वृ० ७ | ध० ८ | म० ९ | क० १० | मी० ११ | विषयव्यञ्जना | अ० कला |
|-----|--------------|----------|----------|----------|---------|----------|---------|----------|----------|---------|---------|----------|-----------|--------------|-----------|
| १ | घोरता | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | इन्दुरेखा | ० ३० |
| २ | राक्षसा | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | भ्रमणा | १ ० |
| ३ | देवता | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | पयोधरा | १ ३० |
| ४ | कुवेरा | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | सुधा | २ ० |
| ५ | यक्षा | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | अतिशीतला | २ ३० |
| ६ | किष्किरा | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | कुरा | ३ ० |
| ७ | भ्रष्टा | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | सौम्या | ३ ३० |
| ८ | कुलदा | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | निर्मला | ४ ० |
| ९ | गरला | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ददापुधा | ४ ३० |
| १० | अप्रधा | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | कालाप्रधा | ५ ० |
| ११ | माया | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | प्रवीणा | ५ ३० |
| १२ | पुत्री | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | इन्दुभुजा | ६ ० |
| १३ | अपापवरा | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | तटुका | ६ ३० |
| १४ | गहवदरा | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | शीतला | ७ ० |
| १५ | काता | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | होमला | ७ ३० |
| १६ | अहिवाता | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | सौम्या | ८ ० |
| १७ | अमृता | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | शाला | ८ ३० |
| १८ | चन्द्रा | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | उपता | ९ ० |

| | | | | | | | | | | | | | | | |
|----|---------------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|---------------|-------|
| १९ | मृदशका | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | वराहपारा | ९/३० |
| २० | कोमलाश | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | कुम्भनागाश | १०/० |
| २१ | हेरम्बाश | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | पिण्डप्रधाश | १०/३० |
| २२ | बह्याश | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | पूर्णचन्द्राश | ११/० |
| २३ | विष्णवश | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | अमृताश | ११/३० |
| २४ | महेश्वराश | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | मुधाश | १२/० |
| २५ | देवाश | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | वषटकाश | १२/३० |
| २६ | आर्द्राश | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | यमाश | १३/० |
| २७ | कतिनागाश | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | घोराश | १३/३० |
| २८ | शित्तीश्वराश | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | दावाप्रधाश | १४/० |
| २९ | रज्जलाकराश | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | कालाश | १४/३० |
| ३० | मुलिबाश | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | मृत्योरश | १५/० |
| ३१ | मृत्योरश | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | कृतिनाश | १५/३० |
| ३२ | कालाश | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | रज्जलाकराश | १६/० |
| ३३ | दावाप्रधाश | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | शित्तीश्वराश | १६/३० |
| ३४ | घाराश | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | कतिनागाश | १७/० |
| ३५ | यमाश | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | आर्द्राश | १७/३० |
| ३६ | वषटकाश | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | देवाश | १८/० |
| ३७ | मुधाश | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | महेश्वराश | १८/३० |
| ३८ | अमृताश | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | विष्णवश | १९/० |
| ३९ | पूर्णचन्द्राश | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | बह्याश | १९/३० |

| | | | | | | | | | | | | | | | |
|----|--------------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|-----------|-------|
| ४० | विषप्रदग्धाश | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | हेरम्बाश | २०।० |
| ४१ | तन्त्राराश | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | कोमलाश | २०।३० |
| ४२ | वशातपाश | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | मृद्वाराश | २१।० |
| ४३ | उत्पराश | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | सदाश | २१।३० |
| ४४ | कालहपाश | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | अमृताश | २२।० |
| ४५ | सौम्याश | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | अहिमाश | २२।३० |
| ४६ | कोमन्ताश | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | कालाश | २३।० |
| ४७ | शीतलाश | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | मरुताश | २३।३० |
| ४८ | दृष्टाकरालाश | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | अपापत्याश | २४।० |
| ४९ | इन्दुमुक्ताश | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | पुरीपाश | २४।३० |
| ५० | प्रवीणाश | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | मायाश | २५।० |
| ५१ | कालाग्रपाश | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | अग्रपाश | २५।३० |
| ५२ | दहायुधाश | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | गरलाश | २६।० |
| ५३ | निर्मलाश | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | कुलपाश | २६।३० |
| ५४ | सौम्याश | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | भ्रष्टाश | २७।० |
| ५५ | क्रुराश | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | विभ्रताश | २७।३० |
| ५६ | अतिशीतलाश | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | यशराश | २८।० |
| ५७ | सुधाश | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | कुवेराश | २८।३० |
| ५८ | पयोधीश | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | देवाश | २९।० |
| ५९ | अमणाश | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | राघवाश | २९।३० |
| ६० | दग्धुरेपाश | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | घोराश | ३०।० |

फल-शुभ दण्डयश मे ग्रह हो तो फल शुभ होता है अशुभ दण्डयश मे हो तो अनिष्टकारक होता है।

अथ वर्गभेदानाह

वर्गभेदानह वक्ष्ये मेत्रेय त्व विधारय ॥ षड्वर्गा सप्तवर्गाश्च दिग्वर्गा नृपवर्गाका ॥११॥
 भवति वर्गसंयोगे षड्वर्गे किशुकादय ॥ द्वाभ्या किशुकनामा च त्रिभिर्व्यंजनमुच्यते ॥१२॥
 चतुर्भिश्चामराख्य च छत्र पचभिरेव च ॥ षड्भिः कुण्डलयोग स्यान्मुकुटाख्य च सप्तभिः
 ॥१३॥ सप्तवर्गोऽय दिग्वर्गो परिजाता विसृजका ॥ पारिजात भवेद्द्वाभ्यामुत्तम त्रिभिरुच्यते
 ॥१४॥ चतुर्भिर्गोपुराख्य स्याच्छरे सिंहासन तथा ॥ पारावत भवेत्षड्भिर्देवलोक च सप्तभिः
 ॥१५॥ वसुभिर्ब्रह्मलोकाख्य नवभिः शक्रबाहनम् ॥ दिग्भिः श्रीधामयोग स्यादयषोडशवर्गके
 ॥१६॥ भेदक च भवेद्द्वाभ्या त्रिभिः स्यात्कुसुमाख्यकम् ॥ चतुर्भिर्नागपुण्य स्यात्पचभिः
 कटुकाह्वयम् ॥१७॥ केरलाख्य भवेत्षड्भिः सप्तभिः कल्पवृक्षकम् ॥ आष्टभिश्चदनवन
 नवभिः पूर्णचद्रकम् ॥१८॥ दिग्भिरुच्चैः श्रवा नाम रुद्रैर्धन्वन्तरिर्भवेत् ॥ सूर्यकान्त
 भवेत्सूर्यैर्विन्धे स्याद्विद्रुमाख्यकम् ॥१९॥ शक्रसिंहासन शक्रैर्गोलोकिविभिर्भवेत् ॥ मूपै
 श्रीवल्लभाख्य स्याद्वर्गा भेदशदाहता ॥२०॥ स्वोच्चमूलत्रिकोणस्यभवनाधिपति तथा ॥
 स्वाहृदात्केन्द्रनाथाना वर्गा ग्राह्या मुधीमता ॥२१॥ अस्तङ्गता ग्रहजिता नीचगा
 दुर्बलास्तथा ॥ शयनादि वयादुस्या उत्पन्ना योगनाशका ॥२२॥

वर्गभेदप्रकार नाम

हे मेत्रेय! अब हम वर्गभेद कहते हैं आप ध्यान से सुनिये। प्रायः ४ समूह में इनका विचार किया जाता है। १-षड्वर्ग। २-सप्तवर्ग। ३-दश वर्ग। ४-षोडशवर्ग। इन ४ समूहों में षड्वर्ग और सप्तवर्ग में एक ही सजाएँ हैं। तथा दशवर्ग और षोडश वर्ग की सजाएँ भिन्न २ हैं। इनमें पहिले २ को संयुक्त सजाएँ कहते हैं। दो वर्गों से किशुक। तीन से व्यंजन। चार से चामर। पाच से छत्र। छ से कुण्डल और सात से मुकुट नाम होता है। अब दश वर्ग की सामुहिक सजा कहते हैं-

दो वर्गों से पारिजात। तीन से उत्तम। चार से गोपुर। पाच से सिंहासन। छ से पारावत। सात से देवलोक। आठ से ब्रह्मलोक। नौ से शक्रबाहन। और दश से श्रीधाम नाम होता है। अब षोडशवर्ग की सामुहिक सजाएँ कहते हैं। दो से भेदक। तीन से कुसुम। चार से नागपुण्य। पाँच से वदुक। छ से केरल। सात से कल्पवृक्ष। आठसे चदनवन। नौ से पूर्णचन्द्र। दश से उच्चैः श्रवा। ग्यारह से धन्वन्तरि। बारह से सूर्यकान्त। तेरह से विद्रुम। चौहद से शक्रसिंहासन। पन्द्रह से गोलोक। सोलह से श्रीवल्लभ। ये नाम समूहात्मक परक हैं अर्थात् नामके साथ की सख्या के वर्गसमुदाय का उल्लिखित नाम है।

केन्द्राधिपति ग्रहों की आरुद्ध राशि (राशि अश कलादि स) इन वर्गों का विचार करना चाहिए। जो ग्रह स्वग्रह उच्च मूल त्रिकोण में होते हैं उनके वर्ग भी यदि धेष्ट हो तो अपने शुभकारक फल में बलवान् होते हैं। और अस्त नीच शत्रुराशिगत ग्रहों के वर्ग योगनाशक होते हैं ॥१९-२०॥

किंशुकादिसप्तकवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्

| २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ |
|--------------|-------------|------------|--------|------------|-------------|
| किंशुकाख्यम् | व्यजनाख्यम् | चामराख्यम् | छत्रम् | कुडलाख्यम् | मुकुटाख्यम् |

पारिजातादिदशवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्

| २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० |
|---------|---------|-------------|-----------|---------|--------|-----------|----------|---------|
| पारिजात | उत्तमम् | गोपुराख्यम् | सिंहासनम् | पारशवत् | देवलोक | ब्रह्मलोक | शक्रवाहन | श्रीघाम |

भेदादिषोडशवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्

| २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १३ | १४ | १५ | १६ |
|--------|-------------|------------|--------------|------------|-----------|---------|---------|---------------|----------|------------|---------------|---------------|-----------|-----------------|
| शेदकम् | कुशुमाख्यम् | नागपुष्पम् | कटुकाद्विषम् | केरलाख्यम् | कलपुष्पम् | चन्दनम् | पुष्पम् | चन्द्री प्रका | सन्ततिरि | सूर्यकाशम् | विद्रुमाख्यम् | मङ्कसिंहासनम् | पोतोक्कम् | श्रीवत्सलाख्यम् |

अथ षोडशवर्गेषु चित्तालम्ब्य वदाम्यहम् ॥ तत्र वेदस्य विज्ञानं होरायां सप्तदशिकम् ॥१०३॥
 द्रेष्काणे भ्रातृजं सौख्यं तुयंशे भाग्यचिन्तनम् ॥ पुत्रपौत्रादिकानां वै चिन्तनं सप्तमाशके
 ॥१०४॥ नवमाशे कलत्राणां दशमाशे महत्फलम् ॥ द्वादशाशे तथा पित्रोश्चित्तनं षोडशाशके
 ॥१०५॥ सुखाऽसुखस्य विज्ञानं वाहनानां तथैव च ॥ उपासनायां विज्ञानं सार्धं विंशतिभागके
 ॥१०६॥ विद्यायां वेदवाङ्मये माशे चैव ब्रह्माब्जलम् ॥ विशाशके रिष्टफलं खवेदाशे
 शुभाऽशुभम् ॥१०७॥

वर्गं से विचारणीयं विषय

इन षोडश वर्गों में किस वर्ग के लक्षण से किस विषय का विचार करना चाहिये यह कहा जाता है। लक्षण (जन्म लक्षण) से जातक के वेद का विचार करना चाहिए। 'होरा लक्षण' से सम्पत्ति = पृथ्वी, भूकान, जमीन आदि अचल तथा सोना, चांदी, रुपया आदि चल सम्पत्ति का विचार करना चाहिए। 'द्रेष्काण' से भाई बंधु का सुख दुःख का विचार करना चाहिए।

‘चतुर्थांश’ से भाग्य का विचार करना चाहिए। ‘सप्तमांश’ से पुत्र पौत्र आदि परिवार का विचार करना चाहिए। ‘नवमांश’ से विशेष करके भार्या सम्बन्धी विचार करना। ‘दशमांश’ से कोई बड़ी समस्या जिसका अपने जीवन से सम्बन्ध सम्भव हो उसका विचार करना। ‘द्वादशांश’ से माता पिता की स्थिति तथा सुख, दुःख का विचार करना चाहिए। ‘षोडशांश’ से सुख दुःख का तथा गाड़ी, मोटर आदि वाहन का विचार करना चाहिए। ‘विंशांश’ से उपासना की सिद्धि-असिद्धि का विचार करना। ‘चतुर्विंशांश’ से विद्या की प्राप्ति, अप्राप्ति का विचार करना। ‘सप्तविंशांश’ में अपना बसावल का विचार तथा ‘त्रिंशांश’ में रिष्ट (कष्ट+रोग) आदि विचार एवं ‘अश्वेदांश’ में भले बुरे (शुभ अशुभ) का विचार करना चाहिए। ‘अश्वेदांश’ तथा ‘षष्ठ्यंश’ में सम्पूर्ण समस्याओं का विचार करना चाहिये ॥१०३-१०७॥

अश्वेदांशभागे च षष्ठ्यंशेऽखिल मोक्षयेत् । यत्र कुत्रापि सम्प्राप्त क्रूरषष्ठ्यंशकाधिपः ॥१०८॥ तत्र नाशो न सदेहो मैत्रेयस्य वचो यथा ॥ यत्र कुत्रापि संप्राप्त कलाशाधिपति शुभः ॥१०९॥ यत्र वृद्धिश्च पुष्टिश्च मैत्रेयस्य वचो यथा ॥ इति षोडशवर्गाणां भेदास्ते प्रतिपादिताः ॥११०॥ उदयादिषु भावेषु खेटस्य भवनेषु च ॥ वर्गविश्वावल बोध्य तेषां तेषां शुभाशुभम् ॥१११॥

विचार विवेचन

मैत्रेय जी का कहना है कि— षष्ठ्यंश का स्वामी यदि क्रूर हो तो वह जिस भाव में स्थित होगा उसी भाव की हानि करता है यह निःसन्देह है। और इसी तरह शुभ षष्ठ्यंश का स्वामी भी शुभ होकर जिस भाव में स्थित होगा उस भाव की पुष्टि और वृद्धि निश्चय करता है। हे मैत्रेय! तुमको यह षोडश वर्ग का विचार कहा। तथा जन्म लग्न और उसके घन, सहज आदि अन्य भाव और मूर्धादि ग्रह जिन स्थानों में तथा वर्गों में हो उनका वर्ग विचार तथा विश्वावल विचार करने शुभ या अशुभ फल कहना ॥१०८-१११॥

अथवा संप्रवक्ष्यामि वर्गं विश्वावल द्विज । यस्य विज्ञानमात्रेण विपाकं दृष्टिगोचरम् ॥११२॥ गृहविश्वावल बोध्य सूर्यादीनां संचारिणाम् ॥ स्वगृहोच्चैः बल पूर्णं शून्यं तत्सप्तमस्थिते ॥११३॥ ग्रहस्थितिवशाज्जेय द्विराश्वधिपतिस्तथा ॥ मध्ये तु पाततो ज्ञेया ओजपुग्मर्कमेदत ॥११४॥ सूर्यहोराफलं द्युर्जोर्वाकबसुधात्मजा चन्द्रास्फूर्जिदर्वपुत्राश्चद्रहोराफलप्रदा ॥११५॥ फलद्वयं ध्रुवो दद्यात्समे चाद्रतदन्यके ॥ रवे फलं स्वहोरादौ फलहीनं विरामके ॥११६॥

विश्वावल विचार

हे मैत्रेय! अब हम विश्वावल कहते हैं, जिसके ज्ञान में शुभाशुभ वर्मफल का परिणाम रूप सुख दुःख का ज्ञान होता है। लग्न आदि भावों तथा सूर्य आदि ग्रहों का विश्वावल देव बर (जानकर) फलाफल आग बही गई रीति में निश्चय करना। सूर्यादि ग्रह स्वगृही अथवा उच्चपरमोच्च हो तो पूर्ण बली होते हैं, नीच गगनिगत शत्रुक्षेत्री हो तो बलहीन होते हैं। ग्रहों

पूर्वखण्डे तृतीयोऽध्यायः

की स्थिति के आधार पर विचार करना। द्विराश्याधिपति ग्रहों का दो भावों पर प्रभाव होता है यह ध्यान रखना। वर्गवल देखने के समय सब विषम राशियों का ध्यान रखना। सूर्य होरा में सूर्य, मंगल, गुरु विशेष फलदायक है। चन्द्र होरा में चन्द्र शुक्र जनि विशेष फलदाता है। बुध, सूर्य तथा चन्द्र दोनों की होरा में फलदाता है। सूर्य-अपने होरा आदि में पूर्ण फल देता है। वर्ग-होरा आदि के अन्त में (समाप्ति के अंश में) फलहीन होता है। होरा, द्रेष्काण आदि में आदि, मध्य, अन्त की बलावलता अनुपात से समझना। स्वगृह के समान ही नवमाश में तथा चतुर्माश में ग्रह का फल होता है।

मध्येऽनुपातात्सर्वत्र द्रेष्काणेऽपि विचित्रयेत् । गृहवर्तुर्भागोऽपि नवांशादावपि स्वयम् ॥११७॥
सूर्यः कुजफलं धत्ते भार्गवस्य निशापतिः ॥ त्रिंशांश के विचित्रैवमत्रापि गृहवत्स्मृतः ॥११८॥
लग्नहोरादृकाणां कभागसूर्यापिशका इति ॥ सर्वे त्रिंशांश सहिताः पङ्चवर्गा विश्वकाः क्रमात्
॥११९॥ रसनेत्राग्निपञ्चाश्विसूत्रमयः सप्तवर्गके ॥ स्थूल फल च सस्थाप्य तत्सूक्ष्म च ततस्ततः
॥१२०॥ सप्तमांशक तत्र विश्वका मंचलोचनम् ॥ त्रयः सार्द्धं द्वय सार्द्धं वेद द्वौ रात्रिनायकाः
॥१२१॥ दशवर्गादित्रिंशादद्याः कलांशाः षष्टिभागकाः ॥ त्रयं क्षेत्रस्य विज्ञेयाः पंचषष्ट्यंशक-
स्य च ॥१२२॥

त्रिंशांश में इतना विशेष है कि-सूर्य, मंगल का और चन्द्रमा, शुक्र का फल देता है। फलाफल भावानुसार ही जानना। इस प्रकार लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमाश, द्वादशांश और त्रिंशांश के विश्वावल क्रम से देखकर विचार करना। यह पङ्चवर्ग (नाम से प्रसिद्ध) है और पङ्चवर्ग में विश्वावल क्रमशः ६, २, ७, ५, ३, १, सख्या में प्राप्त होते हैं। प्रथम स्थूल रूप से लग्न भाव स्थित ग्रहों का विचार पुनः सूक्ष्मरूप से स्व, उच्चादिरूप से विचार करना फिर उससे भी सूक्ष्म सप्तकवर्ग से विचार करना। इस सप्तकवर्ग में विश्वावल की सख्या क्रमशः ५, २, ३, २, १, ४, १, २, १ जानना तथा दशवर्ग बलसाधन में स्वक्षेत्रका ३ विश्वावल है, और षोडश षष्ट्यंश का वर्ग बल में स्व के ३ षष्ट्यंश के ५ विश्वावल लेना चाहिए। और बाकी वर्गों में १॥ विश्वावल लेना ॥११२-१२२॥

सार्द्धकमागाः शेषाणां विश्वकाः परिकीर्तिताः ॥ अयं वक्ष्ये विशेषेण विश्वकां मम समताम् ॥१२३॥ क्रमात् षोडशवर्गाणां क्षेत्रादीनां पृथक् पृथक् ॥ होराशाभागादृक्काणकुचद्वाराणिः क्रमात् ॥१२४॥ कलांशस्य द्वयं ज्ञेयं त्रयं नंदांशकस्य च ॥ क्षेत्रे सार्द्धं च त्रितयं चतुःषष्ट्यंशकस्य हि ॥१२५॥ अर्द्धमर्धं तु शेषाणां हेतुस्त्वोपमुदाहृतम् ॥ पूर्णं विश्वावल विशेषः धृतिः स्यादधिमित्रके ॥१२६॥ मित्रे पचदश प्रोक्तं समे दश प्रकीर्तितम् ॥ सप्तौ सप्ताधिशत्रौ च पच विश्वावल भवेत् ॥१२७॥ वर्गविश्वाः स्वविश्वाः पुनर्विशतिर्माजिताः । विश्वाफलोपयोग्यं तत्तंचोचनं फलदो न हि ॥१२८॥ तदूर्ध्वं स्वल्पफलदं दशोर्ध्वं मध्यमं मृतम् ॥ तिमिर्यर्धं पूर्णफलदं बोध्यं सर्वं सचरिणाम् ॥१२९॥ अयान्यदपि वक्ष्येऽहं मैत्रेय त्वं विचारय ॥ खेदाः पूर्णफलं दशः सूर्यास्तप्तमके स्थिताः ॥१३०॥ फलाभाव विजानीयास्तमे सूर्यनभश्चरे ॥ मध्येऽनुपातात् सर्वत्र ह्युदयास्तविशेषकाः ॥१३१॥ वर्गविश्वास्तम ज्ञेयं फलमस्य द्विजर्षम् ॥ यच्च यत्र फल

बुद्ध्वा तत्फलं परिकीर्तितम् ॥१३२॥ वर्गविश्वाफलं चादाबुद्ध्यास्तमतःपरम् ॥ पूर्णं पूर्णैति पूर्णं
स्यात्सर्वदेवं विचिंतयेत् ॥१३३॥ हीनं हीनैति हीनं स्यात्स्वल्पात्पेत्पल्पकं स्मृतम् ॥ मध्यं
मध्येति मध्यं स्याद्यावत्तस्य दशास्थितिः ॥१३४॥

पाराशर संमत विश्वाबल

अब हम अपने सम्मत विश्वाबल कहते हैं। स्वक्षेत्र से आरंभ करके अलग २ होरा, त्रिशांश
ट्रेक्वाण का १-१ षोडशांश में दो और नवांश में तीन तथा स्वक्षेत्रबल साढ़े तीन एव पण्ड्यश
में चार विश्वाबल लेना। बाकी नौ वर्गों में आधा आधा विश्वाबल लेना। पूरा विश्वाबल २०
होता है। अधिमित्र में (१८) और मित्र क्षेत्र में (१५) समक्षेत्र में (१०), शत्रु क्षेत्र में (७)
तथा अधिशत्रु क्षेत्र में (५) विश्वाबल होता है। वर्ग से प्राप्त हुए विश्वा अपनी विश्वा सस्या
से गुण करके २० का भाग देकर सन्धि विश्वा प्राप्त होता है। यह विश्वाबल ५ से कम हो तो
निष्फल जानना। ५ से १० तक स्वल्पफल दायक है और १० से ऊपर मध्यम फल तथा १५
से ऊपर विश्वाबल पूर्णफल दायक है। हे मैत्रेय! विशेष विचार भी कहता हूँ। सभी यह सूर्य से
सप्तमभाव में स्थित हों तो पूर्णफल देते हैं। सूर्य के साथ होने से (अस्त होने के कारण) फल
नहीं देते। साथ और सप्तम के बीच में अनुपात से विश्वाबल का विचार करना। इसका नाम
उदयास्त बल है, वर्ग विश्वाबल के समान इसको भी मानना चाहिये। वर्ग विश्वाबल और
उदयास्त दोनों अलग-अलग सब देखकर शुभाशुभ फल कहना चाहिये। वर्ग विश्वाबल और
उदयास्तबल दोनों पूर्ण, पूर्ण (१५ से अधिक हो तो) पूर्ण बल जानना। मध्य, मध्य हो तो १०
से १२॥ तक मध्य जाने और दोनों हीन बल हो तो हीनबल जाने। दोनों अल्प हों तो २॥ से
५ तक अल्प जाने। इस प्रकार जिस ग्रह का विश्वाबल निश्चय किया है उससे सूचित शुभाशुभ
उस ग्रह की दशा भर में होगा, ऐसा निश्चय करे ॥१२२-१३४॥

अथान्यदपि वक्ष्यामि मैत्रेय धृणु मुग्रतः ॥ सप्ततुर्गस्तविषयतां केंद्रसंज्ञा विशेषतः ॥१३५॥
द्विपंचरं द्रव्यमाख्यं ज्ञेयं पणफरादिकम् ॥ त्रिपद्विपण्ययादीनामापोक्तिममिति द्विज ॥१३६॥
सप्तमं चमभागस्य कोणसंज्ञा विधीयते ॥ यष्टाष्टव्ययभावानां दुःसंज्ञास्त्रिकसंज्ञकाः ॥१३७॥
चतुरस्रं तुर्यरं च कथयन्ति द्विजोत्तम ॥ स्वस्यादुपचयर्त्ताणि त्रिपदायांबराणि हि ॥१३८॥
तनुर्धनंचसहजोबंधुपुत्रारयस्तथा । युवतीरंध्रधर्माख्यं कर्मलाभ्ययाः क्रमात् ॥१३९॥
संक्षेपेणैतदुदितमन्यद्बुद्धधनुसारतः ॥ किंचिद्विशेषं वक्ष्यामि यथा ब्रह्ममुक्ताच्छ्रुतम् ॥१४०॥

भाव संज्ञा

हे मैत्रेय ! अब और भी कुछ विशेष मन्त्र आदि कहते हैं। तन्त्र, चतुर्ध, सप्तम, दशम की
'केन्द्र' संज्ञा है। २।५।८।११ स्थानों की 'पणफर' संज्ञा है। इसी प्रकार ३।६।९।१२ स्थानों की
'आपोक्तिम' संज्ञा है। तन्त्र से ५।९ की 'कोण' तथा 'त्रिकोण' संज्ञा है। ६।८।१२ की दुष्ट
स्थान तथा 'त्रिक' संज्ञा है। चतुरस्र 'तुर्य रंघ्र' को ४।८ कहते हैं। ३।६।१०।११ को 'उपचय' तथा
वृद्धि कहते हैं। ये विशेष मन्त्र हैं। सामान्यतः १२ भावों के भाग ये हैं। तनु, धन, सहज, बन्धु,

पुत्र, शत्रु, जाया, रघ्न, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय ये १२ भावों के नाम हैं। ये सजाए हमने संक्षेप से कही हैं। अब भगवान् ब्रह्मा से सुने हुए कुछ विशेष विचार कहते हैं ॥१३४-१४०॥

नवमेपि पितुर्जनं सूर्याच्च नवमेऽथवा ॥ यत्किञ्चिद्दशमे लाभे तत्सूर्याद्विंशमे शिवे ॥१४१॥ सूर्यं तनौ धने लाभे भाग्ये यच्चिन्तनं च तत् ॥ चद्रातुर्यं तनौ लाभे भाग्ये तच्चिन्तयेद्भुवम् ॥१४२॥ सप्तमस्य गुरोः पुत्रे जायायाः सप्तमे भृगोः ॥ अष्टमस्य व्याख्यापि मन्वान्मृत्योर् व्यये तथा ॥१४४॥ यद्वावाद्यत्फलं चित्प तदीशात्तत्फलं विदुः । ज्ञेयं तस्य फलं तद्धि तत्र चिन्तयं शुभाशुभम् ॥१४५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरापूर्वखण्डशास्त्रे राशिस्वभावषोडशवर्गादिकथन
नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

फल विचार में कुछ विशेष नियम

जातक के पिता के लिये शास्त्र में जो मुख्यरूप से दशम भाव विचारणीय कहा है उस सम्बन्ध में विशेष यह है कि पिता के सम्बन्ध का फलाफल नवम भाव से भी जाना जाता है तथा सूर्य से और सूर्य के नवमभाव से भी विचारना होता है। इसी प्रकार जो विचार दशम और एकादश भाव से कहा गया है, वह सूर्य से तथा सूर्य के दशमे और ग्याहरवे भाव से भी करना चाहिये। तथा जो विचार लग्न, द्वितीय, चतुर्थ, नवम तथा एकादश से करना होता है, वह चन्द्रमा से भी लग्न, चतुर्थ, नवम और एकादश भाव से कर सकते हैं। (यहां चन्द्रमा से धनभाव नहीं कहा है)। सप्त से दुश्चिक्क्य=तृतीय भाव का विचार मंगल के विक्रम (तृतीय) भाव से भी करे। छठे भाव का विचार बुध के छठे भाव से भी करना। पञ्चम भाव का विचार गुरु के पञ्चम भाव से भी करना, इसी प्रकार सप्तमभाव का विचार शुक्र के सप्तमभाव से भी करना। आठवे और बारहवे भाव का विचार ज्ञान के आठवे और बारहवे से भी करना और विशेष बात यह है कि—जिस भाव से जिस फल का विचार कहा है, वह उस भाव के स्वामी से भी उसी प्रकार जानना चाहिये ॥१४१-१४५॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया राशिस्वभाव-
षोडशवर्गादिकथन नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

पराशर उवाच

मेवादीनां च राशीनां द्वादशानां पृथक्पृथक् ॥ दृष्टिभेद प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजततम ॥१॥
राशामेभिमुक्तान्विष्य पश्यति पार्श्वं तथा ॥ रश्मे पठे तथा हूनेभिमुक्तो राशिदृश्यते ॥२॥
पार्श्वं त्वामहं वक्ष्ये चरत्स्वरद्विस्वभावकः ॥ पञ्चमेकादशो विप्र चरः पश्येत् क्रमेण हि ॥३॥

स्थित ग्रह-चरराशिस्थित ग्रह को देखते है। द्विस्वभावराशि मत ग्रह-द्विस्वभाव राशिस्थित ग्रह को देखता है। अपने निकट की राशि पर स्थित ग्रह को छोड़ कर परस्पर अन्य को देखते है॥ ॥१६-१८॥

ब्रह्मा का कहा हुआ दृष्टिचक्र कहता है जिसके जानने से दृष्टिभेद जाना जाय, पूर्व दिशा में मेष और वृष तथा दक्षिण दिशा में सिंह, कन्या, एव पश्चिम में तुला, वृश्चिक तथा उत्तर में धनु और मकर लिखना। अग्नि कोण में मिथुन तथा नैर्ऋत्य में कन्या वायव्य में धनु, और ईशान में मीन लिखना। यह चौकोर चक्र के न्यास पर दृष्टिभेद हुआ। तथा ब्रह्मा ने गोलचक्र भिन्न प्रकार की दृष्टि कही है। यह दृष्टि इस प्रकार है-तीसरे और दशवे तथा पाचवे, नवे और चौथे, आठवे तथा सप्तम भाग पर ग्रहों की दृष्टि होती है। शनि, गुरु तथा मंगल ये तीन ग्रह विशेष प्रकार की दृष्टि से देखते है। अर्थात् दृष्टि में चार भेद है, पूर्ण दृष्टि २० विश्वा मानकर ५ विश्वा की एकपाद, १० की दो पाद, १५ की तीन पाद और २० विश्वा की पूर्ण दृष्टि होती है। शनि-त्रिकोण (५-९) को एक पाद चतुरस्र (४८) को दो पाद और सप्तम में ३ पाद तथा त्रिदश (३-१०) को पूर्णदृष्टि से देखता है। गुरु-चतुरस्र को एकपाद, सप्तम को दो पाद और त्रिदश को तीन पाद तथा त्रिकोण (५-९) को पूर्ण दृष्टि से देखता है। मंगल-सप्तम में एक पाद, त्रिदश में दो पाद, त्रिकोण में तीन पाद दृष्टि से एव चतुरस्र (४-८) में पूर्णदृष्टि से देखता है। और ग्रहों की ३-१० में एक पाद, ५-९ में दो पाद तथा ४-८ में तीन पाद और सप्तम में पूर्णदृष्टि होती है। हे मैत्रेय! ग्रहों की इस प्रकार दो रीति से यह दृष्टि कही है। प्रथम दृष्टि तो जैसे कही है, वैसे ही जानना और दूसरी में पाद अर्द्ध आदि देख कर पूर्णदृष्टि तक के भेद जानना चाहिये ॥११९-१२९॥

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया दृष्टिभेदकथन नाम
चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अथ रिष्टारिष्टभंगाध्यायः

चतुर्विंशतिवर्षाणि यावद्गच्छति जन्मनः ॥ जन्मारिष्टं तु तावत्स्यादायुर्दायं न चिंतयेत् ॥१॥
पष्ठाष्टरिष्टगश्चरः क्रूरैश्च सह वीक्षितः ॥ जातस्य मृत्युदः सद्यस्त्वष्टवर्षे. शुभेक्षितः ॥२॥
शनिबन्धुमृत्युदः ६८।१२ सौम्याश्रेष्ठकाः क्रूरवीक्षिताः ॥ शिशोर्जातस्य मासेन सप्ते सौम्यविबर्जिते ॥३॥ यस्य जन्मनि धीस्था स्युः सूर्यार्किन्दुकजामिघा ॥ तस्य त्वागु जनित्रो च भ्राता च निघ्नं सभेत् ॥४॥ पापेक्षितो मुतो भीमो सन्नगो न शुभेक्षितः ॥
मृत्युदस्त्वष्टमस्योपि सौरेणाकेंच वा पुनः ॥५॥ चंद्रसूर्यग्रहे राहुश्रमृष्युतो यदि ॥
सौरिभौमेक्षित सन्न पक्षमेक स जीवति ॥६॥ कर्मस्थाने स्थित सौरि. शत्रुस्थाने कलानिधिः ॥ क्षितिजे सप्तमस्थाने समाग्रा छिद्यते शिशुः ॥७॥ तत्रे भास्करपुत्रश्च निघ्ने चन्द्रमा यदि ॥ तृतीयस्यो यदा जीवः स याति यममदिरम् ॥८॥

अरिष्ट और अरिष्टभगयोग

जातक के २४ वर्ष की आयु तक 'जन्मारिष्ट' बहना चाहिए। आयु का विचार नहीं करना

चाहिए। (ऐसे 'जन्मारिष्ट' योग कहते हैं) चन्द्रमा यदि पापग्रहों से युक्त होकर ६।८।१२ के स्थान में हो तो सब जल्दी ही मृत्यु करता है। यदि शुभग्रह देखते हो तो ८ वर्ष तक मृत्यु कारक है। सौम्यग्रह यदि बक्री होकर ६।८।१२ स्थान में पापदृष्ट हो और लग्न में सौम्यग्रह नहीं हो तो बालक की १ साल में मृत्यु होती है। जिसके लग्न तथा पञ्चम में सूर्य श० च० म० स्थित हो उसकी माता तथा भ्राता की मृत्यु होती है। जिस जातक के लग्न में मंगल हो, तथा शुभदृष्टि न हो और पापदृष्टि हो अथवा यह योग अष्टमस्थान में हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है। यह योग सूर्य तथा शनि से भी जानना। चन्द्रमा या सूर्य के घर में राहु, चन्द्र सूर्य के साथ में स्थित हो तथा लग्न को शनि, मंगल दोनों देखते हो तो जातक १५ दिन ही जीता है। जिस जातक के दशमस्थान में शनि तथा छठे चन्द्रमा और मंगल सातवे हो वह बालक माता सहित मृत्यु को प्राप्त होता है। जिस जातक के लग्न में शनि तथा अष्टमभाव में चन्द्रमा तथा तीसरे में गुरु हो वह जल्दी ही मृत्यु पाता है। जन्म समय में लग्न, नवम स्थान में सूर्य और सप्तममें शनि तथा शुक्र, गुरु एकादश में हो वह एक महीने तक ही जी सकता है।

होरायां नवमे सूर्यः सप्तमस्यः शनैश्चरः ॥ एकादशे गुरुः शुक्रो मासमेकं स जीवति ॥९॥ व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टाः सूर्यशुक्रेदुराहवः ॥ विशेषाभ्राशकर्तारो दृष्टया वा भगकारिणः ॥१०॥ पापान्वितः शशो धर्मे द्युनलप्रगतो यदि ॥ शुभरेवेक्षितपुनस्तदा मृत्युप्रदः शिशोः ॥११॥ संध्यायां चन्द्रहोराया गण्डांते निघनाय वै ॥ प्रत्येकं चन्द्रपापैश्च केन्द्रगैः स्याद्विनाशनम् ॥१२॥ रवेस्तु मण्डलाद्धास्तात्पापसंध्या त्रिनाडिका ॥ तथैवाद्धोदयात्पूर्वमप्रातः सन्ध्या त्रिनाडिका ॥१३॥ चक्रपूर्वार्धपराद्धेषु क्रूरसौम्येषु कीटभे ॥ लग्ने निघने यांति नाशकार्या विचारणा ॥१४॥ व्ययानुगतैः क्रूरैर्मृत्युं द्रव्यगतेरपि ॥ पापमध्यगते लग्ने सत्यमेव मृति वदेत् ॥१५॥ लग्नसप्तमगौ पापी चन्द्रोऽपि क्रूरसंयुतः ॥ यदा त्यजोक्तिः सौम्यैः शीघ्रान्मृत्युर्भवेत्तदाः ॥१६॥

बारहवें घर में सभी ग्रह नेष्ट हैं परन्तु सू, शु० च० रा० हो अथवा इनकी दृष्टि हो (और शुभ दृष्टि नहीं हो तो विशेष करके हानि करने वाले होते हैं)। पापग्रहयुक्त चन्द्रमा लग्न, सप्तम या नवम स्थान में हो तथा शुभ दृष्टि या योग न हो तो बालक की मृत्यु होती है। सन्ध्याकाल का अथवा चन्द्रमा की होरा या गण्डान्त (मूल, आश्लेषा, ज्येष्ठा) में जन्म हो, चन्द्रमा और ग्रह केन्द्र में हो तो मृत्युकारक होते हैं। (सूर्यास्त के बाद तथा सूर्योदय के पहले ३ घंटों 'सन्ध्याकाल' कहा जाता है)। बर्क लग्न हो और लग्न से सातवें भाव तक पापग्रह और सातवें में बारहवें तक सौम्य ग्रह हो तो बालक की मृत्यु होती है। छठे तथा बारहवें और दूसरे स्थान में पाप ग्रह हो तो निश्चय मृत्यु होती है। लग्न तथा सप्तम में पाप ग्रह हो, चन्द्रमा को क्रूरग्रह देखते हो और सौम्यदृष्टि नहीं हो तो शीघ्र मृत्युकारक योग है।

जीर्णे शशिति लग्नस्ये पापैः केन्द्राष्टसंस्थितैः ॥ यो जातो मृत्युमाप्नोति स विप्रेत न सहायः ॥१७॥ पापघोर्मध्यगश्चो सप्राष्टांतसप्तमः ॥ अविराम्मृत्युमाप्नोति यो जातः स मिशुस्तदा ॥१८॥ पापद्वयमध्यगते चन्द्रे लग्नसमाश्रिते ॥ सप्ताष्टमेन पापेन मात्रा सह मृतः शिशुः ॥१९॥ शनैश्चरार्कभौमेषु रिष्टप्रमाद्वयेषु च ॥ शुभरेवोक्ष्यमाणेषु यो जातो निघन गतः

॥२०॥षट्द्रेष्कोणे च यामित्रे यस्य स्याद्दाहणो ग्रहः ॥ क्षीणचन्द्रो विलप्रस्थः सद्यो हरति जीवितम् ॥२१॥ आपोविलमस्थिताः सर्वे ग्रहा बलविबर्जिताः ॥ षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम् ॥२२॥

वृद्ध चन्द्रमा (कृष्ण पक्ष की १० से ३० तक चन्द्रमा की वृद्ध अवस्था है।) लग्न में हो, पापग्रह केन्द्र तथा अष्टम स्थान में हो तो हे मैत्रेय! ऐसे योग में हुआ बालक नहीं जीता है। चन्द्रमा पापमध्यगत होकर लग्न से सातवे, आठवे या बारहवें में हो ऐसे योग में जन्म होने वाले बालक की जल्दी मृत्यु होती है। चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य होकर लग्न में स्थित हो तथा सप्तम अष्टमभाव में पापग्रह हो तो बालक की माता के साथ ही मृत्यु होती है। आठवे बारहवें तथा नौवें स्थान में सूर्य, मंगल, शनि हो और शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो जातक की मृत्यु होती है। जिसके सप्तम स्थान में (द्रेष्काण और लग्न में) पापग्रह हो और लग्न में क्षीणचन्द्रमा हो तो जल्दी ही मृत्यु देनेवाला योग है। जिसके जन्मसमय में सारे ही ग्रह निर्बल होकर ३६।९।१२ स्थान में हो वह बालक २ मास से ६ मास तक जी सकता है॥१-२२॥

अथ मातृकण्टम्

चन्द्रमा यदि पापानां प्रितये न प्रदृश्यते ॥ मातृनाशो भवेत्तस्य शुभदृष्टे शुभं वदेत् ॥२३॥ धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा स्थितः ॥ तस्य मातुर्भवेन्मृत्युमृते पितरि जायते ॥२४॥ पापात्सप्तमरंघ्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते ॥ बलिभिः पापकैर्दृष्टे जाते भवति मातृहा ॥२५॥ उच्चस्थो वायव्य नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः ॥ पानहीनो भवेद्बालः अजाक्षीरेण जीवति ॥२६॥ चन्द्राच्चतुर्थगः पापो रिपुलेत्रे पदा भवेत् ॥ तदा मातृवध कुर्यात्केन्द्रे यदि शुभो न चेत् ॥२७॥ द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत् ॥ तदा मातुर्भय विद्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ॥२८॥ लग्ने क्रूरो ध्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च । सप्तमे भवने क्रूरःपरिवारक्षयंकरः ॥२९॥ लग्नस्थे च गुरौ सौरी धने राहौ तृतीयागे ॥ इति चेज्जन्मकाले स्यान्माता तस्य न जीवति ॥३०॥क्षीणचन्द्रात्त्रिकोणस्थैः पापैः सौम्यवियर्जितैः ॥ माता परित्यजेद्बालं षण्मासाच्च न संशयः ॥३१॥ एकांशकस्थौ भंदारी यत्र कुत्र स्थितौ यदा ॥ शशि केन्द्रगतौ तौ वा द्विमातृभ्यां न जीवति ॥३२॥

मातृ कण्टकारक योग

यदि चन्द्रमा पापत्रितय (सूर्य, मंगल, शनि) के साथ न हो तो माता को कण्ट सम्भाव है। शुभदृष्टि होने से कण्ट नहीं है। जिसके घनस्थान (द्वितीय) में रा० बु० शु० श० गू० हो उस जातक को पिता की मृत्यु होने के बाद जन्म हो और माता की मृत्यु होती है। पापग्रह में चन्द्रमा, ७।८ में पापयुक्त तथा बलवान् पापग्रहों से दृष्ट हो तो जातक माता का मारक होता है। जिस जातक के सप्तम स्थान में सूर्य उच्च अथवा नीच राशि का हो वह बालक माता का दूध न पाकर बकरी के दूध से जीता है। चन्द्रमा से चौथे पापग्रह छठे भाव में हों और केन्द्र में शुभग्रह न हों तो माता की मृत्यु होती है। छठे तथा बारहवें घर में यदि पापग्रह हो तो माता

को कष्ट और चतुर्थ दशम में पापग्रह हो तो पिता को कष्ट होता है। लग्न, सप्तम तथा व्यय में क्रूर ग्रह हो तथा द्वितीय में सौम्यग्रह हो तो परिवार के लिये हानिकर योग है। लग्न में गुरु, द्वितीय में शनि तथा तृतीय में राहु हो तो माता की मृत्यु होती है। धीन चन्द्र से सौम्यग्रहरहित पापग्रह त्रिकोण (५-९) स्थान में हो तो छ महीने भीतर ही माता की मृत्यु होती है। मंगल और शनि एक ही नवमाश में होकर किसी भी भाव में हो अथवा चन्द्रमा से केन्द्र स्थान में हो तो माता या मौसी से पालित होने पर भी नहीं जीता है ॥२३-३२॥

अथ पितृकष्टम्

लग्ने सौरिर्मदे भौमः पण्डस्थाने च चन्द्रमाः ॥ इति चेज्जन्मकाले स्यात्पिता तस्य न जीवति ॥३३॥ लग्ने जीवो घने मंदरविभौमबुधास्तथा ॥ विवाहसमये तस्य बालस्य क्षियते पिता ॥३४॥ सूर्यः पापेन समुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगतः ॥ सूर्यास्तिप्लभगः पापस्तदापितृबधो भवेत् ॥३५॥ सप्तमे भवते सूर्यः कर्मस्थो भूमितदतः ॥ राहुर्ध्वजे न पर्येष पिता कष्टेन जीवति ॥३६॥ दशमस्थोयदामीमः शत्रुभेदसमाश्रितः ॥ क्षियते तस्य जातस्य पिता शीघ्रं न सशयः ॥३७॥ रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः ॥ कुजश्च सप्तमे स्थाने पिता तस्य न जीवति ॥३८॥ भौमाशकस्थिते भानी स्वपुत्रेण निरीक्षिते ॥ प्राग्जन्मनो निवृत्तिः स्यान्मृत्यु-र्वापि शिशोः पितुः ॥३९॥ पातले चांबरे पापी द्वादशे च यदा स्थितो ॥ पितर मातरं हत्वा देशादेशांतरं व्रजेत् ॥४०॥ राहुजीवो रिपुक्षेत्रे लग्ने वायु चतुर्थके ॥ त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तात न पश्यति ॥४१॥ भानुः पिता च जन्तूनां चन्द्रो माता तथैव च ॥ पापदृष्टिमुतो भानुः पापमध्यगतोऽपि वा ॥४२॥ पित्ररिष्टं विजानीयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम् ॥ भानोः पण्डाष्टमर्कस्थेः पापेः सौम्यविबर्जितेः ॥ चतुरस्रगतैर्वापि पित्ररिष्टं विनिर्दिशत् ॥४३॥

पितृकष्ट कारक योग

जिसके जन्मसमय में—लग्न में शनि, सातवें मंगल, तथा छठे चन्द्रमा हों तो पिता की मृत्यु होती है। लग्न में गुरु तथा द्वितीय में मू० श० म० बु० हो तो जातक के विवाह में पिता की मृत्यु होती है। सूर्य के साथ पापग्रह हो अथवा सूर्य पापग्रह मध्यगत हो और सूर्य से सप्तम में भी पापग्रह हो तो पिता का वध होता है। सप्तमस्थान में सूर्य हो, दशम में मंगल हो और राहु बारहवां हो तो पिता रोगी रहता है। जबकि—मंगल शत्रुक्षेत्री होकर दशम में हो तो शीघ्र ही पिता की मृत्यु होती है। चन्द्रमा पण्डस्थान में, लग्न में शनि, मंगल सातवें हो उमका पिता नहीं रहता। मंगल के नवमाश में सूर्य शनि से दृष्ट हो तो बालक के जन्म के पहिले ही पिता का घर छोड़ना या मृत्यु होती है। चौथे या दशवें अथवा व्यय में पापग्रह हो तो जातक भानुपितृ हीन होकर देश-विदेश में भटकता रहता है। राहु, गुरु छठे हो या लग्न में अथवा चौथे घर में हो तो तेईसवें वर्ष में पुनः जन्म में पहिले पिता की मृत्यु होती है। जातक का सूर्य हो पिता है और चन्द्रमा माता है, अतः सूर्य पापग्रहों में दृष्ट हो अथवा युक्त हो तो निश्चय ही

पिता को कष्ट जानना)। सूर्य से छठे आठवे स्थान में पापग्रह हो, सौम्यदृष्टि या योगरहित हो
अथवा सूर्य से चौथे स्थान में इसी प्रकार हो तो पिता को अरिष्ट जानना चाहिए
॥३३-३४॥

अथारिष्टभगमाह

एकोऽपि नार्यगुक्राणां लग्नात्केंद्रगतो यदि ॥ अरिष्टं निखिलं हति तिमिरं भास्करो यथा ॥४४॥
एक एव बली जीवो लग्नस्थो रिष्टसचयम् ॥ हति पापक्षयं भक्त्या प्रणाम इव शूलिन ॥४५॥ एक
एव विलग्नः केन्द्रस्थो बलान्वितः ॥ अरिष्टं निखिलं हति पिनाको त्रिपुर यथा ॥४६॥ शुक्लपक्षे
क्षपाजन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षिते ॥ विपरीतं कृष्णपक्षे तथारिष्टविनाशनम् ॥४७॥ व्ययस्थाने यदा
सूर्यस्तुलालग्नौ तु जायते ॥ जीवेत्स शतवर्षाणि दीर्घायुर्बालको भवेत् ॥४८॥ गुरुसौम्यो यदा पुत्तौ
गुरुदृष्टोऽथ वा कुल ॥ हत्वारिष्टमशेषं च जनन्या शुभकृद्भवेत् ॥४९॥ चतुर्थदशमे पाप-
सौम्यमध्ये यदा भवेत् ॥ पितुः सौम्यकरो योगः शुभः केन्द्रत्रिकोणौ ॥५०॥ लग्नान्वतुर्थे यदि
पापसेटः केन्द्रत्रिकोणे सुरराजमत्री ॥ कुलद्वयानदकरे प्रभूतौ दीर्घायुरारोग्यसमन्वितौ ॥५१॥
सौम्यान्तरगतं पापं शुभे केन्द्रत्रिकोणौ ॥ सद्योनाशयतेऽरिष्टं तद्भावोत्पन्नफलं न तत् ॥५२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे रिष्टारिष्टभगाध्यायः ॥५॥

अरिष्ट भग योग

बुध गुरु शुक्र में से एक भी ग्रह केन्द्र में हो तो सब अरिष्ट दूर करता है। यदि बलवान्
होकर गुरु लग्न में हो तो समस्त अरिष्ट योग को दूर करता है जैसे भगवान् शंकर की शरणता
समस्त पाप को भस्म कर देती है। लग्न का स्वामी बलवान् होकर केन्द्र स्थान में हो तो सब
अरिष्ट दूर करता है। शुक्लपक्ष की रात्रि का जन्म हो और लग्न को सौम्यग्रह देखते हो इसी
प्रकार कृष्णपक्ष में दिन का जन्म हो लग्न पाप दृष्टि युक्त हो तो अरिष्ट का नाश होता है।
तुला लग्न में जन्म लेने वाले के बारहवें स्थान में सूर्य हो तो सौ वर्ष जीनेवाला दीर्घायु होता
है। गुरु पक्ष एक स्थान में हो या मंगल पर गुरुदृष्टि हो तो सब अरिष्ट दूर होते हैं और
जातक की माता सुखी रहती है। चौथे दशवें स्थान में स्थित पाप ग्रह यदि सौम्य ग्रहों के
मध्य में हो तथा केन्द्र में शुभग्रह हो तो जातक के पिता को सुखकारी हैं। लग्न से चतुर्थ स्थान
में पापग्रह होने पर भी केन्द्र या त्रिकोण में गुरु हो तो मातृ पितृ पक्ष के दोनों कुल को आनन्द
देनेवाला निरोगी दीर्घायु बालक होता है। पापग्रह सौम्यग्रहों के मध्य में हो शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण
में हो तो सब अरिष्ट को दूर करते हैं और पाप दूषित भाव का नेष्ट फल नहीं होता
॥४५-५२॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० स० भावप्रकाशिकाया रिष्टारिष्टभगाध्यायः पञ्चमः ॥५॥

अथऽप्रकाशग्रहफलाध्यायः ६

शूरो विमलनेत्रांशः मुस्तब्धो निर्धूणः सलः ॥ भूर्तिस्थे धूमसंप्राप्ते गादरोपो नरः सदा ॥१॥ रोगी धनी तु हीनांगो राज्यापहतमानसः ॥ द्वितीये धूमसंप्राप्ते मंदप्राज्ञो नपुंसकः ॥२॥ मतिमान् शीर्षसंप्राप्ते इष्टचित्तः प्रियवदः ॥ धूमे सहजभावस्थे धनाढ्यो धनवान् भवेत् ॥३॥ कलत्रांगपरित्यक्तो नित्यं मनसि दुःखितः ॥ चतुर्थे धूमसंप्राप्ते सर्वशास्त्रार्थचित्तकः ॥४॥ स्वल्पापत्यो धनैर्दीनो धूमे पञ्चमसंस्थिते ॥ गुरुता सर्वभक्षं च गृह्णन्प्रविवर्जितः ॥५॥ बलवाञ्छुब्रुवधको धूमे च रिपुभावगे ॥ बहुतेजोयुतः स्यात् सदा रोगविवर्जितः ॥६॥ निर्धनः सततं कामी परदारेषु कोविदः ॥ धूमे सप्तमगे प्राप्तो निस्तेजाः सर्वदा भवेत् ॥७॥ विक्रमेण परित्यक्तः सोत्साही सत्यसंगरः ॥ अग्रियो निष्ठुरः स्वामी धूमे मृत्युगते सति ॥८॥ सुतसीभाग्यसंपन्नो धनी मानी दयान्वितः ॥ धर्मस्थाने स्थिते धूमे धनवान्बधुवत्सलः ॥९॥ सुतसीभाग्यसंयुक्तः संतोषी मतिमान् सुखी ॥ कर्मस्थे मानवो नित्यं धूमे सत्यपदस्थितः ॥१०॥ धनधान्यहिरण्यद्वयो रूपवाञ्छ कसान्वितः ॥ धूमे लाभगते चैव विनीतो गीतकोविदः ॥११॥ पतितः पापकर्मा च द्वादशे धूमसंगते ॥ परदारेषु संसक्तो व्यसनी निर्धूणः शठः ॥१२॥ इति धूमफलम् ॥

अप्रकाशक ग्रह फल

धूमग्रहफल

यदि लग्न मे धूम ग्रह हो तो शूरवीर निर्मल नेत्रवाला हठी घृणारहित दुष्टबुद्धि महाक्रोधी होता है ॥ द्वितीयभाव मे धूमग्रह हो तो जातक धनी, रोगी, अगहीन, राजपक्ष से चिन्ताशील, भूर्ख और नपुंसक होता है ॥ तृतीय स्थान मे धूमग्रह हो तो बुद्धिमान्, सप्राप्त मे धीर, मिष्टभाषी, शान्तचित्त तथा धनवान् होता है ॥ चतुर्थ भाव मे हो तो स्त्रीरतिहीन, नित्य चिन्ताशील, शास्त्रव्यसनी होता है ॥ पञ्चम भाव मे हो तो कम मन्तानवाला, धनहीन, स्पृष्टकाय, सर्वभक्षी तथा मित्र रहित होता है ॥ छठे भाव मे होने मे बलवान्, शत्रु को जीतनेवाला, तेजस्वी, नीरोग और विख्यात होता है ॥ सातवें भाव मे हो तो दग्निद्वी, अतिकामी, लम्पट, कान्तिरहित होता है ॥ आठवें भाव मे हो तो-हिम्मतहीन, उत्साही, सत्यवादी, निष्ठुर, कठोर वृत्तिवाला होता है ॥ नवमभाव मे धूम हो तो धनी, मानी, प्रजावाला, बन्धुप्रेमी, ऐश्वर्यशाली होता है ॥ दशमभाव मे हो तो सन्तान तथा ऐश्वर्य सम्पन्न, बुद्धिमान्, सुखी, गत्यवादी होता है ॥ एकादशभाव मे-धूम ग्रह हो तो धन सम्पत्तिपुक्त, रूपवान् कलाप्रेमी, विनीत और भान वाचनिपुण होता है ॥ द्वादश भाव मे धूमग्रह हो तो पतित, पापी, लम्पट, (परस्त्रीगामी) व्यसनी और निर्धूण, दुष्टप्रकृति होता है ॥ धूम फल समाप्त ॥

अथ पातफलानि

भूर्तो च पाते संप्राप्ते दुःखेनांगप्रपीडितः ॥ शूरो पातकरो भूर्तो द्वेभ्यो बंधुजनस्य च ॥१३॥

जिह्वोऽतिपित्तवान् भोगी घनस्थे पातसक्तके ॥ निर्घृणश्च कृतज्ञश्च दुष्टात्मा पापकृतया ॥१४॥
 स्थिरप्रज्ञो रणी दाता धनाढ्यो राजबल्लभः ॥ सहजे पापसंप्राप्ते सेनाधीशो भवेन्नरः ॥१५॥
 बध्नाधिसमायुक्तमुतसौभाग्यवर्जितः ॥ चतुर्थगो यदा पातस्तदा ह्यान्मनुजश्च स ॥१६॥
 दरिद्रो रूपसयुक्तपाते पचमगे यदि ॥ कफपित्तानिलैर्युक्तो निष्ठुरो निरपन्नः ॥१७॥ शत्रुहन्ता
 सुपुष्टश्च सर्वास्त्राणां च ग्राहकः ॥ कलासु निपुणः शातः पाते शत्रुगते सति ॥१८॥
 घनदारमुतैस्त्यक्तस्त्रीजितः सप्तमस्थितः ॥ पाते कलत्रगे कामी निर्लज्जः परसौहृदः ॥१९॥
 विकलाक्षौ विरूपश्च दुर्भगो द्विजनिदकः ॥ मृत्युस्थाने स्थिते पाते रक्तपीडापरिप्लुतः ॥२०॥
 बहुव्यापारको नित्यबहुमित्रो बहुश्रुतः ॥ धर्मभे पापसंप्राप्तो स्त्रीप्रियश्च प्रियवदः ॥२१॥ सत्रीको
 धर्मकृच्छ्रान्तो धर्मकार्येषु कोविदः ॥ कर्मस्थे पातसंप्राप्ते महाप्राप्तो विचक्षणः ॥२२॥
 प्रभूतधनवान्मानी सत्यवादी दृढव्रतः ॥ अश्वाढ्यो गीतस्त्यक्तपाते लाभगते सति ॥२३॥ कोपी च
 बहुकर्मद्विषो ध्यगो धर्मस्य दूषकः ॥ व्ययस्थाने गते पाते विद्वेषो निजबधुभिः ॥२४॥ इति
 पातफलानि॥

पातग्रहफल

लग्न मे यदि पातग्रह हो तो दुःखी रोगी क्रूर घातकारी मूर्ख और बन्धुद्वेषी होता है॥
 घनस्थान मे पात हो तो कुटिल पित्तप्रकृति भोगी घृणारहित दुष्टात्मा पापी और कृतघ्न
 होता है॥ तृतीयभाव मे पात हो तो अपने विचार पर दृढ़ रहनेवाला रणवीर दानशील
 धनाढ्य राज मे मानवाला सेनाध्यक्ष होता है॥ चतुर्थ भाव मे पात हो तो मुख
 सौभाग्यहीन रोगी दरिद्री तथा कैदी होता है॥ पाँचवे भाव मे पात हो तो रूपवान् दरिद्री
 त्रिदोषयुक्त शरीर निष्ठुर और निर्लज्ज होता है॥ छठ भाव मे पात हो तो शत्रुहन्ता
 पुष्टशरीर हथियार चलाने मे प्रवीण कलाचतुर तथा शान्तप्रकृति होता है॥ सप्तम स्थान मे
 पात हो तो धनऐश्वर्यहीन स्त्री-पुत्र-रहित या स्त्री के आधीन रहनेवाला तथा निर्लज्ज और
 परप्रेमी होता है॥ आठवे स्थान मे पात हो तो नेत्ररोगी विरूप दुर्भागी परनिन्दक रक्तस्राव
 आदि रोगवाला होता है॥ नवमभाव मे पात हो तो अनेक व्यापार करनेवाला अनेक
 मित्रोवाला बहुश्रुत मिष्टभाषी दारप्रेमी होता है॥ दशमभाव मे पात हो तो लक्ष्मीवान्
 धर्मात्मा शान्तप्रकृति महापण्डित और अतिचतुर होता है॥ लाभस्थान मे पात हो तो
 महाधनी प्रतिष्ठित सत्यवादी दृढसंकल्पवाला सवारीवाला गायनप्रेमी होता है॥ बारहवें
 स्थान मे पात हो तो क्रोधी अगहीन धर्मद्रोही बन्धुद्वेषी तथा अनेक कामो मे सक्त रहता
 है॥१३-२४॥

अथ परिधिफलम्

विद्वान्स्थिरतः शातो घनवान् पुत्रवाञ्छुर्वि ॥ दाता च परिधी मूर्त्तिं जायते गुरुवत्सलः ॥२५॥
 ईश्वरो रूपवान् भोगी सुखी धर्मपरायणः ॥ घनस्थे परिधी प्राप्ते प्रभुर्भवति मानवः ॥२६॥
 स्त्रीबल्लभः सुरूपागो देवस्वजनसगतः ॥ तृतीये परिधी मृत्यो गुरुमत्तिसमन्वितः ॥२७॥ परिधी
 सुलभावास्थे विस्मित त्वरिमङ्गलम् ॥ अक्षरं त्वय सम्पूर्णं कुरुते गीतकोविदः ॥२८॥ लक्ष्मीवान्
 शीलवान् कातः प्रियवान् धर्मवत्सलः ॥ पचमे परिधी जाते स्त्रीणां भवति बल्लभः ॥२९॥

लाभो चापसंपाते लाभयुक्तो भवेन्नरः ॥ नीरोगो बृद्धकोपाग्निर्मन्त्रस्त्रीपरमास्त्रवित् ॥४७॥
 सत्तेजसिमानो दुर्बुद्धिर्निर्लज्जो व्ययसंस्थितः ॥ चापे परस्त्रीसंयुक्तो जायते निर्धनः सदा ॥४८॥
 इति चापफलानि ॥

अप्रकाश चापग्रहफल

लग्न मे चापग्रह हो तो धन ऐश्वर्य युक्त, सर्वदोषरहित कृतज्ञ और समाज मे मान्य होता है॥ धनभाव मे चाप हो तो प्रिय वचन बोलने वाला, प्रगल्भ (ढोड) विनीत, विद्वान्, धर्मात्मा तथा रूपवान् होता है॥ तीसरे भाव मे चाप हो तो कलाप्रेमी परन्तु कृपण, चोरी करनेवाला, हीनाग मैत्री तत्पर रहता है॥ चौथे भाव मे चाप हो तो सुखी नीरोग धनादि ऐश्वर्यवान् राजमान्य होता है॥ पंचम भाव मे चाप हो तो रूपवान् गम्भीर विचारवाला, सुरुचि सम्पन्न, प्रियभाषी, देवभक्त, सब कामो मे अनुभवी होता है॥ छठे स्थान मे चाप हो तो, शत्रु का नाश करने वाला धूर्तता रहित, सुखी, प्रीति मे रुचिवाला, पवित्र विचार और सर्व कार्य मे दक्ष होता है॥ सप्तम भाव मे चाप हो तो आज्ञाकारी, पूर्णगुणी, शास्त्रज्ञानवाला धार्मिक होता है॥ अष्टमस्थान मे चाप हो तो दूसरो की नौकरी करनेवाला, क्रूरस्वभाववाला, परस्त्रीगामी, चिन्ताशील होता है॥ नवमभाव मे चाप हो तो आदर करनेवाला तपस्वी, व्रतादि मे निष्ठावाला, विद्यावान्, समाज मे विख्यात होता है॥ दशमभाव मे चाप हो तो धन, ऐश्वर्य, सन्तानवाला, गौ आदि का पालक लोक समाज मे प्रसिद्ध होता है॥ यदि लाभस्थान मे चाप हो तो व्यापार से बहुत लाभ होता है॥ नीरोगी, बहुक्रोधी, अस्वविधानिपुण, स्त्रीभोगी होता है॥ बारहवें भाव मे चाप हो तो अभिमानी, दुर्बुद्धि, निर्लज्ज, परस्त्रीगामी तथा दरिद्री होता है ॥३७-४८॥

अथ शिखिफलम्

कुशलः सर्वविद्यासु सुखी यादृनिपुणः प्रियः ॥ मूर्तिस्थे शिखिसंपाते सर्वकामान्वितो भवेत् ॥४९॥ यत्ता प्रियंवदः कांतो धनस्थानगते शिखी ॥ काव्यकृत्यण्डितो मानी विनीतो वाहनान्वितः ॥५०॥ कदर्पकूरकर्मा च कुरांगो धनवर्जितः ॥ सहजस्ये तु शिखिनि तीव्ररोगी प्रजायते ॥५१॥ रूपवान् गुणसपन्नः सात्त्विको विभ्रुतिप्रियः ॥ सुखस्ये तु शिखिनि सदा भवति सौख्यमाक् ॥५२॥ सुखी भोगी कलाविच्च पंचमस्थानगः शिखी ॥ युक्तिज्ञो मतिमान् योग्यो गुरुभक्तिसमन्वितः ॥५३॥ मातृपद्मस्यकरः पीठगो बहुबांधवः ॥ रिपुस्थाने शितिप्राप्ते शूरः कांतो विचक्षणः ॥५४॥ रक्तपीडाविचरतः कामी भोगसमन्वितः ॥ शिखी तु सप्तमस्थाने वैश्यासु कृतसौहृदः ॥५५॥ नीचकर्मरतः पापो निर्लज्जो निदकः सदा ॥ मृत्युस्थाने शितिप्राप्त गतस्त्र्यपरपक्षकः ॥५६॥ निगधारी प्रसन्नात्मा सर्वभूतहिते रतः ॥ धर्ममे शिखिनि प्राप्ते धर्मकार्येषु कोविदः ॥५७॥ सुखसौभाग्यसंपन्न कामिनीना च यत्सम ॥ दाता द्विजसमायुक्तः कर्मस्ये शिखिनि भवेत् ॥५८॥ नित्यलाभमुधर्मा च लाभे शिखिनि पूज्यते ॥ घनादप्यः सुभगः शूरः सुयज्ञश्रुतिकोविदः ॥५९॥ पापकर्मरतः शूरः यदाहोनोऽप्युणो नरः ॥ परदाररतो रौद्रः शिखिनि व्ययमे सति ॥६०॥ इति शिखिफलम् ॥

शिखीग्रह फल

प्रथमभाव मे शिखी हो तो सर्वविद्या मे कुशल, सुखी, प्रिय व्याख्यान मे निपुण सर्व समृद्धिमान् होता है॥ दूसरे भाव मे शिखी हो तो व्याख्याता, मिष्टभाषी, सुन्दर, कवि, पंडित, मान सम्मानवाला, विनीत और सवारी वाला होता है॥ तीसरे भाव मे शिखी हो तो अतिकामी, दुर्बल, धनहीन तथा कठिन रोगवाला होता है॥ चौथे भाव मे शिखी हो तो रूपवान्, गुणी, सात्त्विक, विविध ज्ञान श्रवणप्रिय सुखी होता है॥ पंचमभाव मे शिखी हो तो सुखी भोगी, बलाज्ञानवाला गुरुभक्त, चतुर, बुद्धिमान् तथा वाचाल होता है॥ छठे भाव मे शिखी हो तो मातृपक्ष का नाशक, किसी पद पर रहनेवाला, बहुकुटुम्बी, बलवान्, सुन्दर और चतुर होता है॥ सातवे भाव मे शिखी हो तो रक्त विकारवाला, कामी, भोगी तथा वेश्यागामी होता है॥ आठवे भाव मे शिखी हो तो नीच कर्म करनेवाला, पापी, निर्लज्ज, निन्दक, स्त्रीहीन, परपक्ष मे रहनेवाला होता है॥ धर्म, आचार तथा जाति की संस्कृति धारण करनेवाला, सुखी, सबका हित चाहनेवाला, धर्मकार्यों मे चतुर, ऐसे लक्षण-नमभाव के शिखी वाले के होते हैं॥ दशम भाव मे शिखी होने से सुख और सौभाग्य से युक्त, कामिनियों का प्यारा, दानशील, ब्राह्मणभक्त होता है॥ लाभभाव मे शिखी होने से नित्य नये लाभ होते हैं। सब जगह आदर होता है, धनी, सुखी, शूरवीर, पंडित तथा धर्मतत्पर होता है॥ बारहवे भाव मे शिखी होने से बुरे कर्म करनेवाला, बलवान्, धर्म मे श्रद्धाहीन, घृणारहित, परस्त्रीगामी, तथा क्रूर होता है॥ शिखिफल समाप्त ॥४९-६०॥

अथ गुलिकफलम्

रोगार्तः सततं कांभी पापात्माधिगतः शठः ॥ मूर्त्तिस्ये गुलिके मदे खलभावोऽतिदुःखितः॥६१॥
विकृतो दुःखितःक्षुद्रो व्यसनी च गतपत्रः ॥ धनस्ये गुलिके जातो निःस्वो भवति मानवः
॥६२॥ चार्वंगो ग्रामपः पुण्यः संयुक्तः सज्जनप्रियः ॥ मंदे तृतीयगे जातो जायते राजपूजितः
॥६३॥ रोगी सुखपरित्यक्तः सदा भवति पापकृत् ॥ यमात्मजे सुखस्ये तु बातपिताधिको भवेत्
॥६४॥ विस्तृतिर्विधनोऽप्यायुद्धंयौ क्षुद्रो नपुंसकः ॥ मुतस्यानगते पापे स्त्रीजितो नास्तिको
भवेत् ॥६५॥ वीतशत्रुः सुपुष्टांगो रिपुस्थाने यमात्मजे ॥ मुदीप्तः सम्मतः स्त्रीणां सोत्साहः
मुदृष्टे हितः ॥६६॥ स्त्रीजितः भापकृज्जारः कुरांगो गतसौहृद ॥ जीवितः स्त्रीधनेनैव
सप्तमस्ये रवेः मुते ॥६७॥ क्षुधासुदुःखितः क्रूरस्त्रीस्थरोपोऽतिनिर्घृणः ॥ रंघ्रे प्राणहरो निःस्वो
जायते गुणवर्जितः ॥६८॥ बहुक्लेशी क्रुशतनुर्दुष्टकर्मातिनिर्घृणः ॥ मंदे धर्मस्थिते मंदःपिगुनो
बहिराकृतिः ॥६९॥ पुत्रान्वितः सुखी भोक्ता देवान्यर्धनवत्सलः ॥ वरमे गुलिके जातो
योगधर्माश्रितः सुखी ॥७०॥ सुस्त्रीभोगो प्रजाध्यक्षो बंधूनां च हिते रतः ॥ लामे यमानुजे
जातो नीचांगः सार्वभौषकः ॥७१॥ नीचकर्माश्रितः पापो हीनांगो दुर्भगोऽलसः ॥ व्ययगे
गुलिके जातो नीचेषु कुक्षते रतिम् ॥७२॥ इति गुलिकफलम् ॥

गुलिकयोग फल

लग्न मे गुलिक हो तो रोगी, कामी, पापी, शठ, खल तथा दुखी होता है॥ धनभाव मे गुलिक हो तो विकृत (बदशकल) दुखी, क्षुद्रप्रकृतिवाला, व्यसनी, निर्लज्ज तथा निर्धन होता

है॥ तृतीयभाव मे गुलिक हो तो सुन्दर, ग्रामाधिपति, पुण्यकर्ता, सज्जनप्रिय तथा राजपूजित होता है॥ चतुर्थ भाव मे गुलिक हो तो रोगी, दुःखी, सदा पापकर्म करनेवाला, वात्तपित्त रोगी होता है॥ पचमभाव मे गुलिक होने से समाज मे निन्दित, निर्धन, अल्पायु, द्वेषी, सुद्रप्रकृति, नपुंसक, स्त्री मे अनुरक्त तथा नास्तिक होता है॥ छठेभाव मे गुलिक हो तो शत्रुहीन, पुष्टशरीर, कान्तिवाला, स्त्रियो को प्रिय, उत्साही, मुदूढ (गठीला) सबका प्रिय होता है॥ सातवे भाव मे गुलिक हो तो स्त्री का अनुचर, पापी, जार, दुर्बल, प्रेमरहित, स्त्री की कमाई पर जीनेवाला होता है॥ आठवे स्थान मे गुलिक हो तो निर्धन, दुःखी, क्रूरकर्मरत, क्रोधी, घृणारहित, हिसक, गुणहीन दरिद्र होता है॥ नौवे भाव मे गुलिक हो तो बड़े कष्ट से उपार्जन करनेवाला, दुर्बल, बुरे कर्म करनेवाला, घृणारहित, पिशुन (चुगलसोर) बाहर से अच्छा दीखनेवाला होता है॥ दशमभाव मे गुलिक हो तो पुत्रसन्तानवाला सुखी, भोगी, देवपूजा तथा हवननादि करनेवाला, कर्मयोगी, सुखी होता है॥ लाभस्थान मे गुलिक हो तो सुन्दर भार्यावाला, सन्तानवाला, बन्धुवर्ग का हित करनेवाला, हीनाग (छोटा कद) पर्यटनशील होता है॥ व्ययभाव मे गुलिक हो तो नीच कर्म का आश्रय लेनेवाला, पापी, हीनाग, दुर्भागी, आलसी, नीच, सगति मे रहनेवाला होता है॥ गुलिक फल समाप्त॥६१-७२॥

अथ प्राणपदफलम्

मूकोन्मत्तो जङ्गमस्तु हीनागो दुःखितः कृशः ॥ लघे प्राणपदे क्षीणो रोगी भवति मानवः ॥७३॥ बहुधान्यो बहुधनो बहुमृत्यो बहुप्रजः ॥ धनस्थानस्थिते प्राणे सुभगो जायते नरः ॥७४॥ हिर्यो भवंसमापुक्तो निष्ठुरोऽतिमलिम्लुचे ॥ तृतीय्यो प्राणपदे गुरुभक्तिविवर्जितः ॥७५॥ सुखस्थे तु सुखी फलः सुहृद्भामासु यत्नमः ॥ गुरी परायणः शीलः प्राणे यै सत्यतत्परः ॥७६॥ सुखभाक् च क्रियोपेतस्त्वपचारबयान्वितः ॥ पचमस्थे प्राणपदे सर्वकामसमन्वितः ॥७७॥ बंधुशत्रुवशस्तोऽणो मंदाग्निर्निर्दयः खलः ॥ षष्ठे प्राणोऽप्यरोगश्च वित्तपोऽप्यायुरेव च ॥७८॥ ईर्षालुः सततः कामी तीव्ररौद्रवपुर्नरः ॥ सप्तमस्थे प्राणपदे दुराराध्यः कुबुद्धिमान् ॥७९॥ रोगसन्तापितांगश्च प्राणपादेऽष्टमे सति ॥ पोटितः पार्थिवैर्दुःक्षैर्मृत्युबपुमुतोद्भूतः ॥८०॥ पुत्रवान् धनसंपन्नः सुभगः प्रियदर्शनः ॥ प्राणे धर्मस्थिते मृत्युः सदाऽदुष्टो विचक्षणः ॥८१॥ वीर्यवान् मतिमान् दक्षो नृपकार्येषु कोविदः ॥ दशमे वै प्राणपदे देवार्चनपरायणः ॥८२॥ विख्यातो गुणवान् प्राप्नोति भोगी धनसमन्वितः ॥ लाभस्थानस्थिते प्राणे गौरांगो मानवत्सलः ॥८३॥ क्षुद्रो दुष्टस्तु हीनागो विद्वेषी द्विजबपुषु ॥ व्यये प्राणे नेत्ररोगी काणो वा जायते नरः ॥८४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे धूमादिगुलिकप्राणपदफलनिरूपण
नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

प्राणपद फल

लग्न में प्राणपद हो तो भूक (भूषा) उन्मत्त (पागल) तथा हीनाग, जडान (वैकार अगवाला) दुखी, दुर्बल, तथा रोगी होता है॥ धनभाव में प्राणपद हो तो बहुधनी, बड़े अन्नभण्डारवाला, बहुत नौकरवाला, बहुत सन्तानवाला, सौभाग्यवाला होता है॥ तृतीयभाव में प्राणपद हो तो हिसकवृत्ति, अभिमानी, निष्ठुर, मलीन, मातृपितृभक्ति रहित होता है॥ चौथे भाव में प्राणपद हो तो सुखी, सुन्दर, प्रेमी, स्त्रियो में प्यारा, शुक्ल, सुशील होता है॥ पंचमभावमें प्राणपद हो तो सुखभोगी, धर्मक्रियातत्पर, दयावान्, सर्वत्र सन्तोषी होता है॥ छठे भाव में प्राणपद हो तो दूसरे के वश में रहनेवाला, क्रोधी, मन्दाग्नि रोगवाला, दयाहीन, दुष्ट, धनी तथा अल्पायु होता है। सातवें भाव में प्राणपद हो तो ईर्ष्यालु, कामी, भयानक आकार, कुबुद्धिवाला, विरोधी स्वभाव वाला होता है। आठवें भाव में प्राणपद हो तो निरन्तर रोगी, नौकर चाकर, भाई बन्धु, तथा समाज से पीडित रहता है॥ नौवें भाव में प्राणपद हो तो पुत्रवान्, धनवान्, सौभाग्यवान्, सुन्दर, विनीत तथा प्रेमी होता है॥ दशमभाव में प्राणपद हो तो बलवान्, मतिमान्, चतुर, राजकार्य में बुद्धिमान्, देवभक्ति परायण होता है॥ जाभस्थान में प्राणपद हो तो विख्यात गुणवान्, पंडित, भोगी, धनी, गौरवर्ण, मानी होता है॥ बारहवें भाव में प्राणपद हो तो बुद्धिबुद्धि, दुष्ट, हीनाग, ब्राह्मण तथा बन्धुओं का द्वेषी, नेत्ररोगी अथवा काना होता है॥ प्राणपद फल सम्पूर्ण ॥७३-८४॥

इति वृ० पा० हो० शा० पूर्वख० भावप्रकाशिकाया धूमादि गुलिक प्राणपद फल निरूपण नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

अर्गलाफलाध्यायः ७

पराशर उवाच-अभातः सप्रबध्यामि अर्गलाफलमुत्तमम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण ग्रहाणां च फल वदेत् ॥१॥ तुर्यं द्वितीये लाभे च विद्यमानग्रहार्गला ॥ तस्य दृष्ट्यात्मकं ज्ञेयं निर्विघ्नं द्विजोत्तम ॥२॥ एकग्रहार्गलात्पुं च द्विग्रहा मध्यमा भवेत् ॥ त्रयेण ग्रहयोगेन अर्गला पूर्णमुच्यते ॥३॥ राश्यर्गलापि सा ज्ञेया ग्रहयुक्ता विशेषतः ॥ तुर्यवितेकादशेषु यस्य कस्यार्गला भवेत् ॥४॥ द्विविधा साऽर्गला विप्र ब्राह्मणा चोदिता पुरा ॥ शुभकृत् पापकुर्वन् च तन्वादीनां विचिन्तयेत् ॥५॥ मित्रार्गलां पुनर्बन्धे चतुर्गलपापयुक् ॥ तृतीये तु यदा विप्र बहुपापयुते यदि ॥६॥ बहुपापा तृतीयस्था पापपद्वर्गयोगतः ॥ पापार्जितं पापदृष्ट्या सयुक्तार्गलकारकं ॥७॥ तृतीये शुभसम्बन्धे शुभक्षेत्रे शुभेक्षिते ॥ शुभवर्गे च दृष्टवर्गे विज्ञेयं तुर्यमर्गला ॥८॥

अर्गलाफलाध्याय

पराशरजी ने कहा-अब यहाँ से 'अर्गला' का फल कहते हैं, जिस उत्तम अर्गला ज्ञान से राशि (भाव) और ग्रहों का फल कहा जाय॥ हे द्विजोत्तम ! (मैत्रेय) दूसरे, चौथे, और ग्यारहवें स्थान में रहनेवाले ग्रहों से 'अर्गला' योग होता है, उसका निश्चय रूप से

दृष्टधात्मक विचार करना चाहिये॥ एक या दो ग्रह २।४।११ वे स्थान में होने से मध्यम 'अर्गला' होती है (किन्तु एक या दो ग्रहों से 'अर्गला' योग नहीं माना जाता, यह बात अगले ११ वे श्लोक से कही गई है। अतः यह मध्यम का तात्पर्य अमान्य में समझना चाहिये) तीन (या तीन से अधिक) ग्रहों के योग से अर्गला योग पूर्ण होता है॥ (यही सिद्धान्त जैमिनीय सूत्र के अध्याय १ पाद १ सूत्र ५ "दार-भाय-शूलस्थार्गला निधातुः । कामस्या भूपसा पायानाम् । रिःफ-नीच-कामस्या विरोधिनः । न न्यूना विदलात्र ॥" इन चारों सूत्रों में बहुवचन से स्पष्ट है।) राशि से भी अर्गला जानना किन्तु ग्रहयुक्ता का विशेष महत्व है। २।४।११ वे स्थान में जिस किसी भी ग्रह से अर्गला हो॥ ब्रह्माजी ने हमें पहिले दो प्रकार की कही है, एक 'शुभार्गला', दूसरी 'अशुभार्गला' ये दोनों प्रकार की अर्गला तन्वादि बारहों भावों में देखना चाहिये॥ अब इस 'अर्गला' से अर्थात् २।४।११ स्थानों की अर्गला से भिन्न (दूसरी) अर्गला कहता हूँ। (अर्थात् पहिली अर्गला तीन भावों को लेकर होती है और यह दूसरी अर्गला उपर्युक्त तीन भाव २।४।११ से भिन्न तृतीय भाव मात्र को लेकर कही है, इसलिये इसको प्रथम अर्गला से भिन्न कहा। यह एकदेशी मत प्रतीत होता है क्योंकि 'जैमिनीय सूत्र' में अर्गला प्रकरण अध्याय १ पाद १ सूत्र 'प्राग्बत् त्रिकोणे' 'विपरीतं केतोः' कह कर इस प्रकरण को समाप्त कर दिया।)

हे मैत्रेय ! तृतीय भाव में यदि अनेक पापग्रह हो तो, वे तृतीय भावस्थ पापग्रह पद्वर्ग में पापग्रहों के वर्ग में हो तथा पापग्रहों की दृष्टियुक्त हो तो 'अर्गला' योगकारण होते हैं॥७॥ इसी प्रकार तृतीय भाव में शुभग्रह योग (स्थिति) शुभ सम्बन्ध शुभक्षेत्र (शुभग्रह की राशि) शुभदृष्टि तथा पद्वर्ग में शुभ वर्ग हो तो यह शुभार्गला है॥८॥ (इस अर्गला का प्रकरण समाप्त)

तुर्बचितैकादशे च पापपुग्वा शुभोऽपि वा ॥ उभयक्षेत्रसंबन्धे अर्गला कारयेद्द्विज ॥९॥ तृतीये बहुपापस्थे बहुयुक्तार्गला भवेत् ॥ निर्वाधिका तु सा ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥१०॥ एकेन द्वितीयेनापि अर्गला या भवेद्द्विज ॥ सार्गला नैव विज्ञेया बहुपापयुतिं विना ॥११॥ चतुर्थे धनलाभस्था शुभपापकृतार्गला ॥ तस्यापि बाधकाः खेटा ध्योमरिष्कतृतीयगाः ॥१२॥ क्रमेण ज्ञायते विप्र चतुर्थे ध्योमबाधकम् ॥ धने च व्ययभावे च भयं ज्ञेयं तृतीयकम् ॥१३॥ निर्वाधिका च फलदा च दातव्या सबाधका ॥ चिंतनीयं प्रयत्नेन तत्फलं द्विजपुङ्गव ॥१४॥ अर्गलाया बाधकानां बाधकान् कथयेऽमुना ॥ नूनं सा विबला खेटा ज्ञायते गणकैस्तदा ॥१५॥ वितलाभचतुर्थानां यः पश्यति शुभार्गलाम् ॥ व्ययभ्रातृनभस्थान्वेद्विपरीतार्गला द्विज ॥१६॥ पुनर्योगार्गलं ज्ञेयं त्रिकोणे पूर्ववद्द्विज ॥ पंचमे चार्गलास्थान नवमस्तद्विरोधकः ॥१७॥ विपरीतेन केतुश्च नवमेऽर्गलकारकः ॥ पञ्चम स्थस्तद्विरोधो ज्ञायते गणकैर्द्विज ॥१८॥ क्रमेण पंचमे केतुः प्रकरोत्यर्गलां द्विज ॥ नवमस्थस्तद्विरोधो लग्नार्गलमिदं विदुः ॥१९॥ राश्वर्गलं च खेटानां चितयेद्विधार्गलम् ॥ यस्या यस्या दशा प्राप्ता तस्यां तस्यां फलं भवेत् ॥२०॥ यत्र राशिस्थितः खेटस्तस्य पाकांतरे दशा ॥ तत्र कालं फलं वाच्यं निर्विशकं द्विजोत्तम ॥२१॥

२।४।११ भावों में पापग्रह हो या शुभग्रह हो अथवा कोई ग्रह इन तीन स्थानों में एक में

स्थित होकर दूसरे स्थान से क्षेत्र या दृष्टि सम्बन्ध रखता हो तो भी अर्गलायोग होता है॥
तीनों ही स्थानों में अनेक पापग्रह हों तो वह बाधरहित निश्चय ही अर्गला जानना॥ हे भैष्येय!
एक या दो ग्रहों से जो अर्गला होती है उसको अर्गला ही नहीं मानना चाहिए क्योंकि तीन या
अधिक पापयोग से ही अर्गला मानी गई है॥

अर्गलायोग—बाधक

दूसरे चौथे, ग्यारहवें स्थान में बहुग्रह योग से जो अर्गला कही गई है उस अर्गला योग के
बाधक स्थानों हैं, बारहवां दशवां तथा तीसरा॥ क्रम से प्रथम का द्वितीय बाधक है। जैसे दूसरे
का बारहवां, चौथे का दशवां, तथा ग्यारहवें का तीसरा॥ हे भैष्येय! बाधरहित ही अर्गला
फलदायक होती है इसलिए इसका अच्छी तरह विचार करना चाहिए॥ अब अर्गला के बाधक
योग कहते हैं जिससे बाधित होने से निर्बल अर्गला का भी भली प्रकार ज्ञान हो॥ २।४।११
स्थान की 'शुभा'र्गला' को उपर्युक्त बाधक स्थानों में स्थित ग्रह देखता या देखते हो तो वह
'विपरीता'र्गला' या 'बाधता'र्गला' कहाती है॥ अब द्वितीय अर्गला योग समझना कि, त्रिकोण
के ५।९ दो स्थानों में पूर्वोक्त प्रकार से पञ्चमभावस्थ ग्रह अर्गला कारक है और नवमस्थ ग्रह
बाधक है॥ तथा केतु के लिए इससे विपरीत अर्थात् केतु से नवमस्थ ग्रह अर्गला कारक
और पञ्चमस्थ बाधक है॥ (यही भाव जैमिनीय सूत्र के अध्याय १ पाद १ सूत्र ९-१० में
कही है। परन्तु अगले श्लोक में जै० सू० से कुछ विरुद्ध कहा है सो हो सकता है, एकदेशी मत
हो) इसी क्रम से केतु के पञ्चमस्थ ग्रह अर्गला कारक है और नवमस्थ ग्रह अर्गला बाधक है।
इसका नाम 'सप्तार्गला' है॥ इस प्रकार राशि से (भाव से) तथा ग्रह से अर्गला का विचार
करके जिस २ राशि की दशा प्राप्त हो उस २ राशि में उस भाव का फल होगा यह निश्चय
करे॥ जिस राशि में ग्रह स्थित हो उसकी दशा या अतर्दशा में उसका फल कहे॥ अर्गला
विवेचन समाप्तः॥ १९-२१॥

अध्यायेऽर्गलाफलमाह

पदे सप्तमे वा निरामासा'र्गलां द्विज ॥ निर्बन्धा चार्गला तत्र दिष्ट्या भाग्यं भवेन्नरः
॥२२॥ अर्गला प्रतिबन्धं च प्रथमां प्रेर्विचिंतयेत् ॥ घनघान्यपुत्रपुत्रादाराबुक्तैर्पुतः ॥२३॥
शरीराशरीर्यमेभ्यर्मृत्प्राह्नसंयुतः ॥ हरमक्तः सुधर्मजो दिष्ट्या भाग्यस्य सतनम् ॥२४॥
शुभग्रहा'र्गला विप्र बहुद्वयप्रदायका ॥ पापेन स्वल्पवित्तः स्याद्विर्विगांश्च द्विजोत्तम ॥२५॥
उभयार्गला भवेत्तत्र कदाचिद्वनवान् भवेत् ॥ कदाचिद्वित्तवित्तार्तिर्जयिते द्विजसत्तम ॥२६॥
यत्र अन्मनि सौम्यि स्याच्छुभदृष्टे शुभा'र्गला ॥ तेन दृष्टेऽस्मिन् सप्तै प्राबल्याद्योगकल्पने ॥२७॥
यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीता'र्गलास्थितः ॥ प्रथमां तु विजानीयाद्विपरीता'र्गलां द्विज ॥२८॥
सप्तसप्तमयोगेन भाग्ययोगं विचिंतयेत् ॥ भाग्यप्रबलता ज्ञेया सप्तसप्तशुभा'र्गला ॥२९॥
शुभा'र्गले स्ववृद्धिः स्यात्पापे स्वल्पघनं बदेत् ॥ उभयार्गले तु तत्रैव स्ववृद्धिः स्ववित्तं जयम्
॥३०॥ तत्तत्प्राप्तिदशायां तु अर्गला फलमिदमेव ॥ शुभो वाग्यशुभो वापि हर्गलाफलदायकः ॥३१॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वोक्ते अर्गलाफलरूपननामस्तप्तमोऽध्यायः ॥३॥

अर्गला फल

हे मैत्रेय! लग्न मे या सप्तम मे प्रतिबधरहित शुभ अर्गला पूर्णरूप से मनुष्य बडे भाग्य से पाता है। अर्गला (शुभागला) मे प्रतिबध भी (फल प्रतिबध भी) प्रथम के चतुर्थांश मात्र मे ही होता है, बाद मे धन, धान्य, पुत्र, पशु भार्या, बन्धु, और कुल से युक्त होता है। उपर्युक्त 'शुभागला' मे भगवद्भक्त, आरोग्यता, ऐश्वर्य, नोकर, सवारी (मोटर आदि) तथा धर्मज्ञ आदि सुख होना ही भाग्य का लक्षण है। हे मैत्रेय! शुभागला हो तो बहुत धन हो तथा पापग्रह से हो तो मामूली द्रव्य हो। तथा शुभ-पाप मिश्रित अर्गला हो तो कभी धनवान् और कभी धनहीन होता है। जहा पर जन्मलग्न मे मिश्रित अर्गला हो तो भी शुभग्रह की दृष्टि होने न शुभागला ही हो जाती है। इसी प्रकार लग्न को भी शुभग्रह देखते या युक्त हो तो योग की प्रबलता जानो। यदि अर्गला का बाधक योग भी हो तो शुभदृष्टि होने से अनिष्टकारी नहीं है। लग्न तथा सप्तम भाव मे इस प्रकार अर्गला योग का विचार करके 'शुभागला' है या नहीं यह देखकर निश्चय करो। यदि शुभागला हो तो भाग्य की प्रबलता जाने। शुभागला मे धन की वृद्धि होती है तथा पापागला मे स्वल्पधन होता है एव 'उभयागला' मे कभी कभी धनवृद्धि कभी धनहानि होती है। जिस २ भाव की अर्गला हो उसका फल उस २ राशि की दशा तथा अन्तरदशा मे (जो कि आगे राशि दशा कहेंगे) अच्छा या नेष्ट होता है ॥२२-३१॥ अर्गलाध्याय समाप्त।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० ख० भावप्रदीपिकाया अर्गलाफल क० नाम सप्तमोऽध्याय

कारकाध्यायः ८

अथापे सप्रवक्ष्यामि ग्रहाणा कारकान् द्विज ॥ आत्मादिकारकान् सप्त यथावत् कथयामि ते ॥१॥ रव्यादिशनिपर्यन्ता भवति सप्तकारका ॥ अशौ साम्यां प्रहौ द्वौ च राहूतान् गणयेद्विज ॥२॥ रव्यादिपुण्यपर्वतमसाधिकग्रहोऽपि चेत् ॥ कारकेन्द्रोऽपि स ज्ञेय आत्मा कारक उच्यते ॥३॥ अशसाम्यग्रहो यत्र कलाधिक्यं च पश्यति ॥ कलासाम्ये पलाधिक्यमात्मा कारक ईर्यते ॥४॥ तत्र राशिकलाधिक्ये नैव ग्राह्य प्रधानकः ॥ अशाधिक्ये कारकः स्यादल्पभागोत्कारकः ॥५॥ मध्यागो मध्यलेट स्यादुपलेट स एव हि ॥ अधोऽध कारका ज्ञेयाधराणि सप्त कारका ॥६॥ तेषा मध्ये प्रधानं तु आत्मकारक उच्यते ॥ जातकराट स विज्ञेय सर्वपा मुख्यकारकः ॥७॥ यथा भूमौ प्रतिद्वोऽस्ति नराणा जितिपालकः ॥ सर्ववार्ताधिकारी च बधकृन्मोसकृतया ॥८॥ पुत्रामात्यप्रजानां तु तत्तदोपगुणैस्तया ॥ बधकृन्मोसकृद्विप्र तथा सम्मानकारकः ॥९॥ तथैव कारको राजन् ग्रहाणा फलकारकः ॥ आत्मेत्यादिफल तत्ते अन्यथा स्थापयेद्विज ॥१०॥ यथा राजाज्ञया विप्र पुत्रामात्यादयोऽपि च ॥ समर्था लोककार्येषु तथैवान्योपकारकः ॥११॥ कारको राजवश्येन फलदातान्यकारकः ॥ यथा राजनि कूडे च सर्वेऽमात्यादयो द्विज ॥१२॥ स्वजनाना कार्यकर्तुमसमर्था भवति हि ॥ क्रिगे मूये ह्यमात्यादि स्वशत्रूणा द्विजोत्तम ॥१३॥ अकार्य कर्तुं नो शक्तस्तथैवान्योऽपकारकः ॥ आत्मकारकवश्येन ह्यमात्यादिफल ददु ॥१४॥ इत्यात्मकारकः ॥

आत्मकारकलेटेन न्यूनभागो हि तद्वह ॥ अमात्यसता तथैव ज्ञायते द्विजतत्तम ॥१५॥

पूर्वसृष्टे अष्टमोऽध्यायः

अमात्यन्यूनो भ्राता च भ्रातृन्यूनं च मातृकम् ॥ मातृकारकसेटेन न्यूनभागी हि यो प्रहः ॥
 ॥१६॥ स पुत्रकारको ज्येष्ठस्तद्वीनो जातिकारकः ॥ जातिकारकसेटेन हीनभागी हि यो प्रहः
 ॥१७॥ दारकारकविज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥ चराश्र कारकाः सप्त ब्रह्मणा चोदिताः पुरा
 ॥१८॥ अंशसाम्यौ ग्रहौ द्वौ च जायेतां यस्य जन्मनि ॥ स्वकारकं विना विप्रं लुप्यति
 वांत्त्यकारकः ॥१९॥ तत्कारको लुप्यति चेदन्यत्रैवास्ति कारकम् ॥ कारकाणां स्थिराणां च
 मध्ये सचित्तेपेद्विज ॥२०॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि सेटान् कारकसंज्ञकान् ॥ यस्य जन्मनि
 भावानां यथास्थाने च वै द्विज ॥२१॥ स्वर्गे तुगे च मित्रर्से कटके संस्थिता ग्रहाः ॥
 अन्योन्यकारका विप्रं कर्मणांस्तु विरोधतः ॥२२॥ लग्ने सुखे तथा लाभे ग्रहभाववशेन च ॥
 भवति कारका विप्रं विशेषेण च भैरवौ ॥२३॥ स्वमित्रशौचमे हेतुरन्योऽस्य यदि कर्मणः ॥ स
 सुहृदगुणसंपन्नः सोऽपि कारक एव वै ॥२४॥ नीचान्वये यस्य जन्मबभूव द्विजसम ॥ पतति
 कारका लग्ने प्रधानं च न वाप्रयात् ॥२५॥ राज्ञां कुले समुत्पन्नो राजा भवति निश्चितम् ॥ एव
 कुलानुसारेण कारकाणां फलं भवेत् ॥२६॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि कारकाणि स्थिराणि च ॥
 सूर्यादीनां ग्रहाणां च वीर्यवान् कारको भवेत् ॥२७॥ वीर्यवान् जायते विप्रं जन्मनि
 रविशुक्रयोः ॥ स पितृकारको ज्येष्ठो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥२८॥ चंद्रारयोश्च बलवान्
 मातृकारक उच्यते ॥ भौमद्वयं विशेषेण भगिनी दारभ्रातृकौ ॥२९॥ बुधान्मातुलतो ज्येष्ठो
 मातृतुल्यानपि द्विज ॥ गुरुणाञ्च च विज्ञेयाः पुत्रस्वामिपितामहाः ॥३०॥ स्वभार्या
 मातृपितरौ तथा मातामही द्विज ॥ भृगुद्वारा विज्ञानीयावेतेषां शुक्र कारकः ॥३१॥ अर्धमृगः
 पुष्यमे तात इन्दोर्माता च तुर्यतः ॥ कुजातृतीयतो भ्राता मातुलो रिपुभादबुधात् ॥३२॥
 देवेज्यात्पंचमात्पुत्रो दैत्येज्याद्घनमात्त्रिणयः ॥ मदादष्टमतो मृत्युस्तातादीनां
 विचिन्तयेत् ॥३३॥

अथ कारकाध्यायः

अब आगे सूर्यादि ग्रहों के आत्मादि सात कारक यथावत् कहते हैं। सूर्य से शनि तक सात कारक होते हैं, सूर्यादि ग्रहों में अशादि साम्य होने पर राहु को भी गिनना चाहिये किन्तु राहु सदा वक्त्रो रहता है, अतः उसके अंशों को ३० में घटा कर शेष अशादि से कारक का निर्णय करें। अतः सूर्य से राहु पर्यन्त अश, कला, विकला में जो सबसे अधिक होता है, वह कारको में राजा 'आत्मकारक' होता है। जहा पर दो ग्रहों में अशों की समता हो तो कलाधिक ग्रहों और अश, कला बराबर होने पर पलाधिक ग्रह 'आत्मा कारक' होता है। इन अशादि साम्य में राशि नहीं लेना, अजाधिक्य से ही कारकता होती है। सबसे कम अश वाला अंतिम कारक होता है। इस प्रकार सर्वाधिक और सर्वन्यून अशादि आदि और अतः कारक होते हैं। बीच के अशादि से मध्यकारक होते हैं। अतः मध्याशों में उसके बाद तथा उसने बाद इस प्रकार न्यून अशवाले से न्यून अजादिवाला क्रमशः गिनने से सात चरवारक होते हैं। इन सात कारकों का राजा 'आत्मा कारक' होता है। वह जातक शास्त्र में सब कारकों में मुख्य होने से कारकराज कहा गया है। जैसे कि संसार में मनुष्यों में से सबसे प्रधान (बड़ा) राजा होता है और वही प्रधान न्याय कारक एवं बध, मोक्ष का वर्ता है। राजपुत्र, मन्त्री, अन्य अधिकारी तथा प्रजा इन सबके दोष और गुणों से बधन और सन्मान करता है। इसी प्रकार यह आत्माकारक भी

सब कारको मे मुख्य होकर सब ग्रहों के फल का अधिष्ठाता है अन अन्यथा नहीं स्थापन करना चाहिए॥ जैसे राजा की आज्ञा से राजपुत्र, मन्त्री आदि लोक कार्य मे समर्थ होते हैं और अन्य भी सहायक कार्यकर्ता होते हैं॥ कारक भी राजा के वशीभूत रहकर कर्म तथा फल-दाता है। और जैसे कि राजा के क्रुद्ध होने पर मन्त्री आदि सभी कोई अपने घर के स्वजनो का भी कोई उपकार करने मे असमर्थ होते हैं एव राजा के प्रसन्न होने पर भी (राजाशा के बिना) शत्रु का भी अपकार करने मे समर्थ नहीं है॥ इसी प्रकार आत्मा कारक के वशीभूत ही अन्य सब कारक अपने २ अधिकार का फल देते हैं॥ आत्मकारकप्रशसा समाप्त॥ आत्म कारक से कम अर्थात् वाला "अमात्यकारक" होता है। अमात्य कारक से कम अशवाला "भ्रातृ कारक" और उससे न्यून "मातृ कारक" तथा "मातृ कारक" से न्यून "पुत्र कारक" होता है। उससे न्यून "जाति कारक" है। जाति कारक ग्रह से हीन अशवाला "दारकारक" होता है। ये सात 'चरकारक' (अस्थायी होने से) पहिले ब्रह्माजी ने कहे॥ यदि दो ग्रहों के सर्वाधिक अक्ष समान हो तो (पूर्वोक्त रीति से) कलाधिक आत्माकारक लेना क्योंकि आत्माकारक के अभाव मे अत्यकारक का भी अभाव होगा॥ आद्यन्त लोप मे फिर अन्य कारक भी नहीं हो सकते। अतः चरकारक और स्थिरकारक की विचार करना चाहिए॥ अब कारक-संज्ञक ग्रह बताते हैं। जन्मलग्न मे यथास्थान ग्रह लिख कर विचार करना चाहिए॥ जो ग्रह अपनी राशि या मित्रराशि मे अथवा उच्चराशि मे या केन्द्रस्थान मे हो अथवा दशमभाव में हो वे परस्पर कारक होते हैं॥ स्थान वश से कारकत्व— लग्न, चतुर्थ या लाभ स्थान मे होने से तथा विशेष करके सूर्य राशि मे होने से भी ग्रह 'कारक' होते हैं॥ स्वगृही, मित्रराशिगत अथवा उच्च राशिगत तथा दशमभावस्थ हो तो सौम्यगुणसम्पन्न होने से वह भी कारक होता है॥ जिस जातक का जन्म नीच कुल मे हो और जन्म लग्नकुण्डली बहुत ग्रह कारक भी हो तो भी वह जातक राजा आदि की प्रधान पदवी प्राप्त नहीं कर सकता॥ किन्तु राजकुल मे जिसका जन्म हो वह निश्चय कारक ग्रह के होने पर राजा होता है। इस प्रकार कुलानुसार भी कारको का फल होता है॥ अब स्थिर कारक कहते हैं। सूर्यादि ग्रहों मे जो बलवान् होता है, वह कारक होता है॥ हे मैत्रेय! लग्न मे सूर्य शुक्र मे से जो बलवान् होता है, वह निश्चय रूप से 'पितृकारक' होता है॥ चन्द्रमा और मंगल मे से जो बलवान् हो वह 'मातृकारक' होता है। विशेष करके मंगल के अधिकार मे दो कारक है। एक उपर्युक्त तथा दूसरा भाई और भार्या मे से स्थिर कारकत्व है। बुध से मामापक्ष का कारकत्व विचार करना और गुरु से, पुत्र स्वामी, पितामह के कारकत्व का विचार करना॥ अपनी भार्या, माता, पिता, नानी का कारकात्वभाव शुकद्वारा जानना। अर्थात् इनका कारक शुक है॥ सूर्य-पुण्यकारक, चन्द्रमा मातृ कारक तथा चतुर्थ भाव से भी माता का विचार करना इसी प्रकार मंगल से तथा तृतीयभाव से आता का और बुध से तथा छठे भाव से मामा का विचार करना योग्य है॥ बृहस्पति से तथा पचमभाव से पुत्र का तथा शुक्र से तथा सप्तम मे भार्या का शनि से तथा अष्टमभाव से निर्वाण (मृत्यु) का तथा पिता आदि का विचार करना॥ (यहो के कारकत्व का विचार समाप्त) ॥१-३३॥

अथ भावकारकमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि विशेष भावकारकान् । जनुर्लघु च विद्याह आत्मा कारकमेव च ॥३४॥
 धनभाव विजानीयाद्धारकारकमेव च ॥ एकादशे ज्येष्ठश्रावस्तृतीये तु कनिष्ठके ॥३५॥ सुते
 सुत विजानीयात्तथा सप्तमभावत ॥ सुतस्थाने प्रहस्तिष्ठेत्सोऽपि कारक उच्यते ॥३६॥ सूर्यो
 १ गुरु २ कुज ३ सोमो ४ गुरु ५ भौम ६ सित ७ शनि ८ ॥ गुरु ९ श्रद्धमुतो १० जीवो ११
 मदश्च १२ भावकारका ॥३७॥ पुनस्तन्वादयो भावा स्थाप्यास्तेषां शुभाशुभम् ॥ ताम
 तृतीय रश्च च शत्रुस्वस्त्रीव्यय तथा ॥ एषा योगेन यो भावस्तप्राप्त प्राप्नुयाद्भुवम् ॥३८॥
 चत्वारो राशयो मद्रा केद्रकोणशुभावहा ॥ तेषां सयोगमात्रेण ह्यशुभोऽपि शुभो
 भवेत् ॥३९॥

कारकवस्तुविचार

अब हम विशेष कर भावकारको को कहते हैं। जातक के जन्म का लग्न ही आत्माकारक
 है। और धनभाव भावकारक है। एकादशभाव बड़े भाई का तथा तृतीयभाव छोटे भाई का
 कारक है। पञ्चम तथा सप्तमभाव से और पञ्चमभावस्थ ग्रह से भी पुत्रसन्तान का विचार
 करना। १२ भावों के कारक ग्रह कहते हैं। क्रम से सूर्य, गुरु, कुज, चन्द्र, गुरु, भौम, शुक, शनि,
 गुरु, बुध, गुरु, शनि ये कारक हैं। तन्वादि १२ भाव लिखकर शुभाशुभ फल का विचार करो
 भावों में २३३६१७१८१११२ इन भावों के परस्पर दृष्ट्यादि सम्बन्ध से जो भाव सम्बद्ध हो
 उस भाव की निश्चय हानि होती है। तथा केन्द्रभाव की चार राशि और त्रिकोण की दो राशि
 इनके सम्बन्ध से अशुभ राशि भी शुभफलकारक होती है। स्थिरकारक विचार समाप्त।
 ३४-३९॥

चरकारकग्रहाः स्युः

सर्वग्रहेभ्योऽधिकाशादिनात्मकारकस्तत्कमेव ज्ञेयः । आत्माऽमात्यश्रावृमातृपुत्रजातिदारा
 इत्यादिचरकारकग्रहाः स्युः ।

| चरकारकग्रहाणां चक्रम् | | | | | | |
|-----------------------|------------|------------|----------|-----------|----------|----------|
| गुरु | शुक्र | शनि | बुध | सूर्य | परा | |
| आत्माकारक | आमात्यकारक | श्रावृकारक | मातृकारक | पुत्रकारक | दाराकारक | जातिकारक |

अथ सूर्यादिग्रहकारकमाह

राज्यविदुरत्तवस्त्रबाणिज्यराज्यवनपर्यन्तसंप्रपितृराजको रवि ॥४०॥ मातृमनः पुष्टिपद-
 रते सुगोधूमशारङ्गविजातिरार्यसत्त्वरजतादिशारङ्गश्च ॥४१॥ मत्स्यसङ्घनूमिपुत्रगीतवीर्य-
 रोग बह्मश्रावृपराजमाग्निमहात्मतजगत्पुत्रारकः कुजः ॥४२॥ ज्योतिर्विद्यामानुनगणितबाध-

नर्तनवैद्यहासभीश्रीशिल्पविद्यादिकारको बुध ॥४३॥ स्वकर्मयजनदेवब्राह्मणधनगृहकाचन-
वस्त्रपत्रमिश्राबोलनाबिकारको गुरु ॥४४॥ क्लृप्तप्रकार्मुकमुखगीतशास्त्रकाव्यपुष्पसुकुमारयौ-
वना भरणरजतयानगर्वलोकनीतिकविभवकवितारसादिकारक शुक ॥४५॥ महिषायोगजतैल
वस्त्र शृङ्गारप्रधानसर्वराज्यदावापुधगृहपुद्गसचारशूद्रनीलमणिविघ्नकेशशल्पशूलरोगदासदा-
सोजनापुष्पकारक शनि ॥४६॥ प्रयाणसमयसर्परात्रिसकलमुप्तार्थद्यूतकारको राहु ॥४७॥
वणरोगचमार्तिशूलस्फुटसुधातिरकारक केतु ॥४८॥

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे कारकाध्यायकथन नामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥

कारक वस्तु विचार (गद्यभाग)

राज्य विदुम (भूगा) रक्त वस्त्र भाणिक राजा वन पर्वत क्षत्री गिता इनका कारक
सूर्य है। माता मन पुष्टि गद्य रस ईस गेहू नमक सोडा आदि द्विज (ब्राह्मण) क्षत्रिय वैश्य
शक्ति कार्य चादी का कारक चन्द्रमा है। बल मकान भूमि पुत्र शील चोरी रोग ब्रह्म
भ्राता पराक्रम अग्नि साहस राज शत्रु इनका कारक मंगल है। ज्योतिर्विद्या मामा गणित
शरीर नाचना वैद्य हास भय सजावट शिल्पविद्या इनका कारक बुध है। स्वकर्म यज
देवता ब्राह्मण धन मकान सुवर्ण वस्त्र पत्र (चिट्ठी) मित्र आन्दोलन (प्रचार) इनका
कारक बृहस्पति है। भार्या धनुष सुख गीतशास्त्र काव्य पुष्प सुकुमार (अवस्था) यौवन
आभरण (भूषण) चान्दी सवारो गर्व (अभिमान) लोक (समाज) भोती सम्पत्ति
कविता रस इनका कारक शुक है। महिष अयसु (लौह) यज तेल वस्त्र शृङ्गार यात्रा
राजकीय वस्तु काठ हथियार गृह युद्ध सचार (यात्रा) शूद्र नीलम विघ्न वेश शल्प
(सर्जरी) दास दासीजन आयु इनका कारक शनि है। यात्रा समय सर्प रात्रि समस्त स्वप्न
तथा द्यूत (जूआ) इनका कारक राहु है। व्रण चमड़ा रोग अतिशूल फुटकर भूख कष्ट
इनका कारक केतु है। कारक वस्तु विचार समाप्त ॥४०-४८॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रवाशिकाया कारकाध्याय
नामाष्टमाध्यायः ॥८॥

| कारकाश कुंडली | | | |
|---------------|-----|----|----|
| सु० | रा० | ६ | ५ |
| बु० | श० | ७ | ५ |
| १० | शु० | ४ | |
| पुलि० | के० | १ | म० |
| क० | १ | | ३ |
| गु० | ध० | १२ | २ |

| कारकग्रहा | | | | | | | | | |
|-----------|----|----|-----|-----|----|-----|-----|-----|--|
| र० | ब० | म० | बु० | शु० | श० | रा० | के० | गु० | |
| ८ | १२ | ३ | ५ | ११ | ७ | ७ | १ | ११ | |

पूर्वस्थे नवमोऽध्यायः

अथ कारकांशग्रहफलमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि कारकस्याधिपान् ग्रहान् ॥ योगसबधमात्रेण यथावद्गदतो मम ॥१॥
 स्वांशकारककुंडल्यां नवमांशधिपोऽयं ॥ यस्मिन् राशौ स्थितो विप्रः तदाशफलमुच्यते ॥२॥
 ॥२॥ मेघादिमौनपर्यन्त सर्वेषां फलमादिशेत् ॥ यथावद्भाषितं शूलप्रोक्तं यदुदयानले ॥३॥
 अंशकारकांशेषु तिष्ठन्ति च यदा ग्रहाः ॥ तथा मूषकमाजारी दुःखदौ भयकारकौ ॥४॥
 शुभे च यदा विप्रः मार्जारादिप्रतिद्विदौ ॥ वृषे च कारकांशे च भयार्तां च चतुष्पदात् ॥५॥
 शुभे चतुष्पदास्तिर्द्विरिति तत्त्व द्विजोत्तम ॥ युग्मकाराशके खेदे कङ्खादिरोमसमः ॥६॥
 काशे च चलादुःखं जलमिति सशयः ॥ कुष्ठादिरोमसमूतिः शुभे फलविपर्ययः ॥७॥
 सिंहोऽंशे कारके खेदे तिष्ठत्येव द्विजोत्तम ॥ शून्यकारिमय दद्याच्छुभे सिद्धिप्रदायकः ॥८॥
 कन्यायां कारकांशे च तिष्ठत्येव यदा ग्रहः ॥ मृत्युवत्कहुरोगार्तिर्वह्निदोषेण दुःखभाक् ॥९॥
 तुलास्थकारकांशे च सर्पादिभयकारकः ॥ उच्चात्प्रपतनं वापि कोपि वस्तुसमन्वितः ॥१०॥
 वृश्चिके कारकांशे च सर्पादिभयकारकः ॥ शङ्खमुक्ताप्रवालादिमत्पत्त्रे चरदेवता ॥११॥
 धनुर्धरकारकांशे वाहनाद्रूपमादिशेत् ॥ शङ्खमुक्ताप्रवालादिमत्पत्त्रे चरदेवता ॥१२॥
 मकराशके विप्रः सिद्धिर्जलवरादयः ॥ कीर्तिमान्दर्शनं वात्सोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥१३॥
 कुम्भास्थकारकांशे च तद्वागदौर्नि कारयेत् ॥ मीने च कारकांशे वै सामुद्र्यमुक्तिमागमेत् ॥१४॥
 पश्याति कंदुरोगादि भवतीह न सशयः ॥ मीने च कारकांशे वै सामुद्र्यमुक्तिमागमेत् ॥१५॥

कारकांश राशि फल

अब पूर्वोक्त कारकाधिपति ग्रहों के नवमांश योग में होने वाले फल को कहते हैं। वारकांश कुण्डली में नवमांशपति जिस राशि में हो उस राशि का फल कहते हैं। रूद्रवामल मे महादेवजी के कहे हुए १२ राशियों के फल को विचार कर कहना चाहिये। कारक ग्रह मेय नवमांश में हो तो मूषक और क्लेश से भय तथा दुःख होता है। यदि मेय राशि में शुभग्रहों का योग या दृष्टि हो तो मूषक गजार्ति ही प्रसिद्धि के कारण होते हैं। वृषराशि में कारकांश हो तो चौपाया पशु से भय और दुःख हो ॥ शुभयोग होने से यही चतुष्पद सिद्धिकारक होते हैं। कारकांश में मियुन राशि होने में शुकली आदि रोग होते हैं। इसी प्रकार बर्ब राशि हो तो जलवस्तु सवारी आदि तथा जलभय और कुष्ठ आदि रोग होता है। शुभयोग होने से उत्त वस्तुओं में सिद्धि होती है। सिंह राशि यदि कारकांश में हो तो कुत्ता आदि में भय होता है और शुभयोग होने से उन्हीं में सिद्धि होती है। कन्या राशि में होने पर मृत्यु के समान वष्ट अश्विक्तर व्यापार में अनुरक्त क्रय-विक्रय का कर्ता होता है। राजवश में होने पर भी प्रसिद्ध होता है। मकर राशि के कारकांश में होने से जलचर जीव, शम्भ, मंती, मूषा, मत्स्य तथा जाकाश्वारी भी लाभकरक होते हैं। कुम्भ के कारकांश में जलाशय बनानेवाला, कीर्तिमान् तथा धर्मात्मा होता है तथा कङ् (गुजली) आदि रोग होते हैं। मीन राशि के कारकांश में होने से जातक की सामुद्र्य मुक्ति होती है। वारकांश राशिफल समाप्त ॥१-१५॥

अथ कारकांशग्रहाणां फलमाह

शुभराशौ शुभाशे वा कारके धनवान् भवेत् ॥ तदशकेन्द्रे शुभो नून सत्य राजा प्रजापते ॥१६॥
 कारके शुभराश्यशे लग्नाशस्थे शुभग्रहे ॥ उपग्रहस्य पञ्चात्ये स्योच्चस्वर्क्षे शुभर्षगे ॥१७॥
 पापदृष्ट्योगरहिते कैवल्य सत्य निर्दिशेत् ॥ मित्रे मित्र विजानीयाद्विपरीते विपर्ययम् ॥१८॥
 चन्द्रभृगुवारवर्गस्थे कारके पारदारिक ॥ वृषतौल्यशकगते तस्मिन्वाणिज्यवान्भवेत् ॥१९॥
 भेषसिंहाशके तस्मिन्धूयान्मूकदशक ॥ कारके कार्मुकाशस्थे बाहनात्पतन भवेत् ॥२०॥
 अथैक कारकाशेषु रव्यादिस्तिष्ठति ग्रह ॥ तेषां फल प्रवक्ष्यामि भृशु त्व द्विजसत्तम ॥२१॥
 कारकाशे यदा सूर्यस्तिष्ठति द्विज वीर्ययुक् ॥ आदावते पुमान्तोऽपि राजकार्येषु तत्पर ॥२२॥
 कारकाशे तु पूर्णेन्दुर्वैत्याचार्येण वीक्षित ॥ शतभोगी भवेत्सोऽथ विद्याजीवी भवेद्द्विज ॥२३॥
 कारकाशे यदा भीमे बलाढ्येन युतेक्षिते ॥ रसवादी कुतुधारी बह्निर्कृज्जीवन भवेत् ॥२४॥
 कारकाशे यदा सौम्ये तिष्ठत्येव बलाढ्यक ॥ शिल्पको व्यवहारी च वणिक्कृत्यपरो ॥२५॥
 कारकाशे गुरौ विप्र कर्मनिष्ठापरो भवेत् ॥ सर्वशास्त्राधिकारी च विख्यात ॥२६॥
 कारकाशे यदा शुके राजमानी सदा भवेत् ॥ सद्विद्विष शताध्यायु ॥२७॥
 कारकाशे यदा सौरिर्भृत्यलोके प्रसिद्धिवान् ॥ महता कर्मणा वृत्ति ॥२८॥
 क्षितिपालेन पूजित ॥२९॥ कारकाशे यदा राहर्धनुर्धारी प्रजापते ॥ जागल्पलोहपत्रादि-
 कारकश्चौरसगमी ॥३०॥ कारकाशे यदा केतुस्तिष्ठति द्विजसत्तम ॥ व्यवहारी गजादीना-
 मुशति परद्रव्यके ॥३१॥ कारकाशे यदा विप्र सस्थितौ रविसंहिकौ ॥ सर्पाद्भूतिर्भवेन्मृत्यु-
 शुभदृष्ट्या निवर्तते ॥३२॥ कारकाशे भानुतमौ शुभपद्मवर्गसमुतौ ॥ विषवेद्यो भवेन्मून-
 विपहर्ता विचक्षण ॥३३॥ भीमेक्षिते कारकाशे भानुस्वर्भानुसमुते ॥ अन्यग्रहा न पश्यति
 स्ववेशमपरदाहक ॥३४॥ यदि सौम्येक्षिते विप्र ह्यग्निदो नैव जायते ॥ पापक्षे च गुरौ दृष्टे
 समीपगृहदाहक ॥३५॥ सगुलिके कारकाशे पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज ॥ सति चौरैर्नीतधन स्वयं
 चोरोऽथ वा भवेत् ॥३६॥ सगुलिके कारकाशे अन्यग्रहयुतेक्षिते ॥ बुधदृष्टियुते वापि अडवृद्धि-
 प्रजापते ॥३७॥ कारकाशे केतुयुक्ते पापग्रहनिरिक्षिते ॥ श्रोत्रच्छेदो भवेन्मून कर्णरोगार्तिना
 द्विज ॥३८॥ कारकाशे स्थिते केतौ भृगुणा च समीक्षिते ॥ युते वा जायते विप्र
 क्रियाकर्मसामन्वित ॥३९॥ कारकाशे स्थिते केतौ शनिसौम्यनिरिक्षिते ॥ बलवीर्येण रहितो
 जायते सोऽपि मानव ॥४०॥ सकेतौ कारकाशे च बुधशुक्रनिरिक्षिते ॥ जायते योनियुतिको
 दासीपुत्रोऽथ वा भवेत् ॥४१॥ सकेतौ कारकाशे च अन्यग्रहनिरिक्षिते शनिदृष्टिविहीने च
 सत्याच्च रहितो भवेत् ॥४२॥ कारकाशे यदा विप्र भृगुभास्वरवीक्षिते ॥ राजप्रेष्यो भवेद्दालो
 जायते नात्र सशप ॥४३॥

कारकाणां ग्रहफल

कारक ग्रह शुभराशि या शुभाश में हो तो जातक धनवान् होता है। यदि कारकाश राशि तथा ग्रह केन्द्रस्थान में हो तो निश्चय ही राजा होता है। कारकग्रह शुभराशि में हो, नवाश में लग्नराशि पर शुभग्रह हो और उपग्रह के अन्त्य भाग में तथा स्वग्रह, उच्च, तथा शुभदृष्टि युक्त हो और पापग्रह की दृष्टि तथा योग से रहित हो तो निश्चय कैवल्य-मुक्ति होती है। दोनों प्रकार के योग (शुभाशुभयोग) हो तो मिश्रित फल और केवल पापयोग हो तो वयित फल से विपरीत फल होता है। कारकाश ग्रह यदि चन्द्रमा, शुक्र वे वर्ग में हो तो परम्पोगामी

होता है। वृष और तुला के अश्व मे हो तो व्यापारी होता है। मेघ तथा सिंह के अश्व मे हो तो मूषकभय तथा धनु के अश्व मे हो तो वाहन से गिरना होता है। कोई एक ग्रह कारकाश में स्थित हो तो उसका भिन्न भिन्न फल कहते हैं। कारकाश मे जब सूर्य बलवान् होकर स्थित हो तो जातक सारी आयु राजकार्य मे तत्पर रहता है। चन्द्रमा यदि कारकाश शुक्रदृष्ट हो तो पूर्णायु तक भोगी और विद्याजीवी होता है। कारकाश मे मंगल बली ग्रह से दृष्ट होकर स्थित हो तो शस्त्रधारी, 'रसभस्मज्ञाता', अग्निजीवी होता है। कारकाश मे बलयुक्त होकर बुध हो तो शिल्प विद्या जाननेवाला, वणिक्वृत्ति, व्यापारी होता है। हे मैत्रेय! कारकाश मे जब गुरु हो तो कर्मकाण्ड मे निष्ठावाला विख्यात सर्वशास्त्रज्ञ होता है। कारकाश मे शुक्र हो तो राजमान्य इन्द्रियजित् तथा शतायु होता है। कारकाश मे शनि हो तो ससार प्रसिद्ध राजपूज्य महान् कार्यकर्ता होता है। कारकाश मे यदि राहु हो तो धनुर्विद्यावान्, लोहयन्त्र (ताले) भादि बनानेवाला चोरसगी होता है। कारकाश मे केतु हो तो पराशय से हाथी आदि का व्यापारी होता है। कारकाश मे जब सूर्य, राहु हो तो सर्प से मृत्यु होती है, शुभदृष्टि नहीं होती। कारकाश मे रविराहु शुभध्वर्ण मे हो तो विषवेद्य (गारुडी) विचक्षण विषहर्ता होता है। कारकाश मे रविराहु मंगल से दृष्ट हो और अन्य दृष्टि न हो तो अपना तथा पराया घर का जलानेवाला होता है। हे मैत्रेय! यदि शुभदृष्टियुक्त हो तो दाहक नहीं होता। पापराशि मे हो और गुरु दृष्टि हो तो समीप के घर का दाहक होता है। कारकाश यदि मुलिक योगवाला हो तो स्वयं चोर या जातक का धन चोरी हो। कारकाश सगुलिक हो तथा अन्य ग्रहसे युक्त या दृष्ट हो अथवा बुधदृष्टियुक्त हो तो 'अङ्गवृद्धि' रोग होता है। कारकाश मे केतु हो और पाग्रह दृष्ट हो तो कर्पूररोग के कारण कर्णच्छेद हो। कारकाश मे केतु शुक्रदृष्ट हो अथवा युक्त हो तो क्रियाकर्म युक्त होता है। कारकाश मे केतु शनि और सौम्यग्रह दृष्ट हो तो बलवीर्य रहित होता है। कारकाश मे केतु बुध शुक्र दृष्ट हो तो वर्णसकर या दासीपुत्र होता है। कारकाश मे केतु रजिदृष्टि रहित अन्यदृष्टि युक्त हो तो कृतप्रतिज्ञा से रहित होता है। कारकाश मे केतु सूर्य शुक्र दृष्ट हो तो राजा का नौकर होता है। कारकाश ग्रहफल समाप्त ॥१६-४२॥

अथ कारकाशदशमफलमाह

दशमे कारकाशे च बुधेन समधीक्षिते ॥ व्यापारे बहुलामश्रुमहत्कर्मविचक्षण ॥ ४३ ॥ कारकाशे च दशमे रविणा च पुते यदि ॥ गुरुदृष्टे तथा विप्र जायते योगकारक ॥ ४४ ॥ कारकाशे च दशमे शुभलेटनिरीक्षिते ॥ स्थिरचित्तो भवेद्वालो गम्भीरो बहुवीर्यवान् ॥ ४५ ॥

अथ कारकाशे चतुर्थस्थानफलम्

पाताले कारकाशे च शशिशुक्रपुतेक्षिते ॥ प्रासादवान् भवेद्वालो विचित्रहर्म्यवान् द्विज ॥ ४६ ॥ कारकाशे च पाताले तुगर्जे कोऽपि सस्थितः ॥ हर्म्यमदिरसमुक्तो ह्यत्युच्चो बहुदीप्तिमान् ॥ ४७ ॥ कारकाशे च पाताले शनिराहुपुतेक्षिते ॥ विशाच्छादनपट्टीपुत्रजायते मदिर द्विज ॥ ४८ ॥ कारकाशे च पाताले कुजकेतुसमीक्षिते ॥ ऐष्टिकमदिर तस्य जायते नात्र सशयः ॥ ४९ ॥ कारकाशे

च पातालेगुरुयुक्तनिरीक्षिते ॥ ऐष्टिक मंदिर तस्य जायते नात्र सहाय ॥५०॥ कारकाशे च पाताले
गुरुयुक्तनिरीक्षिते ॥ कणवेष्टितसमुक्त जायते तस्य मंदिरम् ॥५१॥

कारकांश विभिन्नभावफल

दशमभावफल

कारकाश मे दशमभाव हो और बुधदृष्ट हो तो बड़े बड़े कार्य करनेवाला तथा व्यापार मे बहुत धन प्राप्त करनेवाला होता है॥ कारकाश दशम मे रवियुक्त तथा गुरुदृष्ट हो तो राजयोग होता है॥ दशमभाव मे कारकाश हो तथा शुभग्रहदृष्ट हो तो जातक दृढविचारी, गंभीर और बलवान् होता है॥ दशम कारकाशफल समाप्त ॥४३-४५॥

कारकाश मे चतुर्थस्थानफल

चतुर्थ स्थान मे कारकाश हो चन्द्र शुक्रदृष्टि युक्त हो तो अनेक प्रकार के मकानवाला होता है॥ चतुर्थस्थान मे कारकाश उच्चराशिगत ग्रहयुक्त हो तो लम्बे बदनवाला, सुन्दर शरीर, बड़े बड़े मकानवाला होता है॥ चतुर्थ कारकाश शनि राहु से युक्त या दृष्ट हो तो बड़े बगीचेवाला मकान होता है॥ चतुर्थ कारकाश यदि म० श० के० से दृष्ट हो तो ईंट से बना मकान होता है॥ चतुर्थ कारकाश गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो पक्की ईंट का मकान होता है तथा बजरी (पत्थर के छोटे टुकड़े) का पक्का मकान होता है ॥ चतुर्थ फल सम्पूर्ण ॥४६-५१॥

अथ कारकांशे नवमभावफलमाह

कारकाशे च नवमे शुभसेटयुतेक्षिते ॥ सत्यवादी गुरौ भक्त स्वधर्मनिरतो भवेत् ॥५२॥
कारकाशे च नवमे पापग्रहयुतेक्षिते ॥ स्वधर्मनिरतो बाल्ये मिथ्यावादी भवेद्द्विज ॥५३॥
कारकाशे च नवमे शनिराहुयुतेक्षिते ॥ गुरुद्रोही भवेद्विप्र शास्त्रेषु विमुखो नर ॥५४॥
कारकाशे च नवमे गुरुभानुयुतेक्षिते ॥ तदापि च गुरुद्रोही गुरुवाक्ष्य न मन्यते ॥५५॥
कारकाशे च नवमे भृगुभौमयुतेक्षिते ॥ पद्मवर्णाधिकयोगे च मरण पारदारिक ॥५६॥
कारकाशे च नवमे क्षतयुतेक्षिते द्विज ॥ परस्त्रीसगमाद्बालो बध्को भवति ध्रुवम् ॥५७॥
कारकाशे च नवमे गुरुयुतेक्षिते द्विज ॥ स्त्रीलोलुपो भवेद्बालो विषयी चैव जायते॥५८॥

नवमभाव के कारकाश का फल

कारकाश नवमभाव म हो शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो धर्मात्मा गृहभक्त और सत्यवादी होता है॥ नवमभावगत कारकाश पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो बाल्यावस्था मे धार्मिक वृत्तिवाला, मिथ्यावादी होता है॥ नवमभावगत कारकाश शनि राहुयुक्त या दृष्ट हो तो मूर्ख और गुरुद्रोही होता है॥ नवमभावगत कारकाश यदि सूर्य गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो भी गुरुद्रोही, आज्ञापालक नहीं होता॥ नवमभावगत कारकाश शुक्रमंगलयुक्त या दृष्ट हो और पद्मवर्ग मे भी इन्हीं से युक्त या दृष्ट हो तो परस्त्री के कारण मरण होता है॥ नवमभावगत कारकाश राहुयुक्त या दृष्ट हो तो परस्त्री के कारण बन्धन होता है॥ नवमगत कारकाश ग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो कामी और मिथ्या होता है ॥५३-५८॥

अथ कारकांशसप्तमभावफलमाह

कारकांशे च द्यूतस्थे गुरुचंद्रयुते द्विज ॥ सुंदरी गेहिनी तस्य पतिभक्तिपरायणा ॥५९॥ राहुणा विह्वला बाला जायते चांगना द्विज ॥ शनिना च वयोधिक्या रोगिणी वा तपस्विनी ॥६०॥ भौमेन विकलांगी च तथा कांताद्यलक्षणा ॥ रविणा स्वकुले मुक्ता आसक्ता परवेदर्मि ॥६१॥ बुधे कलावती ज्ञेया कलाभिज्ञा प्रजायते ॥ शुक्रेण तद्वज्ज्येया च निर्विशंक द्विजोत्तम ॥६२॥

अथ कारकांशे तृतीयभावफलमाह

कारकांशे तृतीये च पापखेदयुतेक्षिते ॥ स शूरो जायते बालो वीर्यवान्बहुविक्रमो ॥६३॥ कारकांशे तृतीयेऽपि शुभखेदयुतेक्षिते ॥ जायते तत्त्वहृदयः कातरोऽपि विशेषतः ॥६४॥ कारकांशे तृतीये च षष्ठे पापयुतेक्षिते ॥ कृषिकर्मरतो नित्य जायते च न सशयः ॥६५॥

सप्तमभावगत कारकांशफल

सप्तमस्थ कारकांश गुरुचन्द्रयुक्त हो तो पतिभक्त सुन्दरी स्त्री प्राप्त होती है ॥ इसी प्रकार राहुयुक्त हो तो अतिकामासक्त भार्या प्राप्त होती है और शनियुक्त होने से अपने से अधिक उमरवाली और रोगिणी और विरक्त होती है ॥ और इसी प्रकार मंगलयुक्त होने से विकलांगी और पुरुष समान होती है ॥ भूय के योग से अपने घर में सुरक्षित रखने पर भी अन्य घर में आसक्त रहती है ॥ बुध के योग से गायनवाद्य आदि कलाओं की जाननेवाली होती है ॥ शुक्र के योग से भी बुध के ही समान फल होता है ॥५९-६२॥

तृतीयभावगत कारकांशफल

तृतीयभावगत कारकांश हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो जातक बलशाली और पराक्रमी होता है ॥ तृतीयभावगत कारकांश शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो तत्त्वज्ञानी और धरपोक होता है ॥ कारकांश तृतीय या षष्ठभाव गत हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो खेती से आजीवन करता है ॥६३-६५॥

अथ कारकांशे द्वादशभावफलमाह

कारकांशे व्यपस्थाने उच्चस्थेऽपि शुभग्रहे ॥ सद्गतिर्जायते तस्य शुभलोकमवाप्नुयात् ॥६६॥ कारकांशे व्यपे केतौ शुभखेदेऽप्युतेक्षिते ॥ तदापि जायते मुक्तिः सायुज्यपदमाप्नुयात् ॥६७॥ मेघेऽप्य धनुषि वापि कारकांशे व्यपे शिखी ॥ शुभग्रहेण संपृष्टे कैवल्यपदमाप्नुयात् ॥६८॥ केवलेऽपि व्यपे केतुः पापग्रहयुतेक्षितः ॥ न मुक्तिर्जायते तस्य शुभलोक न पश्यति ॥६९॥ रविणा संपुते केतौ कारकांशे व्यपस्थिते ॥ गौर्या भक्तिर्भवेत्तस्य शाक्तिको जायते नरः ॥७०॥ रविभक्तिर्भवेत्तस्य निर्विशंक द्विजोत्तम ॥ चन्द्रेण संपुते केतौ कारकांशे व्यपस्थिते ॥७१॥ शुक्रेण संपुते केतौ कारकांशे व्यपस्थिते ॥ समुद्रतनयामक्तिर्जायतेऽसौ सप्तमृदिमान् ॥७२॥ कुजेन स्कंदभक्तो वा जायते द्विजसत्तम ॥ वैष्णवो बुधशीरिभ्या गुरुणा शिवभक्तिमान् ॥७३॥

राहुणा तामसीं बुर्गां भूतप्रेतादिसेवकः ॥ हेरंबभक्तः शिखिना स्कंदभक्तोऽयं वा भवेत् ॥७४॥
 कारकांशे व्यये शौरिः पापराशी यदा भवेत् ॥ तदैव क्षुद्रदेवस्य भक्तिस्तस्य न संशयः ॥७५॥
 पापसंयुक्ते व्यये शुक्रस्तदापि क्षुद्रसेवकः ॥ कारकान्धनभागे हि अमात्यो जायते ग्रहः ॥७६॥
 कारके च फलं ब्रूयादमात्येऽनुचरो भवेत् ॥ आदित्येदुधरापुत्रादगणनीयोऽष्टमो ग्रहः ॥७७॥
 तस्मिन् ग्रहेऽप्येव फलं यत्कथं नात्र संशयः ॥ अमात्याद्द्वादशे राशौ पापसंयुक्ते ॥
 तयापि क्षुद्रदेवस्य भक्तिर्भवति निश्चितम् ॥७८॥ अमात्यो वर्तते यत्र तन्वादौ द्विजसत्तम ॥
 सूर्यादिग्रहसंयुक्ते तत्फलं पूर्ववद्विज ॥७९॥

द्वादशभावगत कारकाशफल

बारहवे भाव मे कारकाश हो और उच्चस्य शुभग्रहयुक्त हो तो सद्गति होती है, अन्त मे शुभलोक की प्राप्ति होती है॥ व्ययभावगत कारकाश मे केतु हो और शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो भी सायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है॥ व्ययभाव मे मेष या धनु राशि हो और उसमे केतु शुभग्रहदृष्ट हो तो भी सायुज्यमुक्ति प्राप्त होती है॥ और वही केतु पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो उसकी न तो मुक्ति होती है और न शुभ लोक ही प्राप्त होता है॥ व्ययभावगत कारकाश मे केतु सूर्ययुक्त हो तो जातक गौरीभक्त और शक्त होता है॥ व्ययभावास्थित कारकाश मे चन्द्रयुक्त केतु हो तो सूर्य मे भक्ति होती है॥ व्ययभावगत कारकाश मे केतु शुक्र से युक्त हो तो लक्ष्मीदेवी की आराधना से समृद्धिवाला होता है॥ इसी प्रकार केतु मंगलयुक्त हो तो स्वामी कार्तिकेय का भक्त होता है। बुध तथा शनियुक्त होने से विष्णुभक्त और गुरु युक्त होने से शिवभक्त होता है॥ कारकाश के व्ययभाव मे राहु होने से काली पुजक तथा भूत प्रेतादि को सिद्ध करनेवाला होता है। तथा केवल केतु से गणेश या स्कन्द का भक्त होता है॥ कारकाश के व्ययभाव मे पाप राशि मे शनैश्चर हो तो क्षुद्र देवता यक्ष आदि का उपासक होता है॥ इसी प्रकार पापराशि मे शुक्र हो तो भी क्षुद्र देवताओं का भक्त होता है। यह सम्पूर्ण फल आत्मकारक के नवमाश का जानना॥ आत्मकारक से कम अशवाला ग्रह 'आत्मकारक' होता है॥ कारकाश मे जो फल कहा है अमात्यकारक भी उसी का अनुगामी है। तथा सूर्य, चन्द्रमा, मंगल से अष्टम राशिगणना करना ॥ उस राशि मे भी इसी प्रकार फल जानना । अमात्यकारक से बारहवीं राशि यदि पापराशि हो या पाप ग्रहयुक्त हो तो भी क्षुद्रदेवता भक्त होता है॥ हे मेत्रेय! अमात्यकारक राशि लग्न आदि भावो मे सूर्यादि ग्रह के योग से भी पूर्ववत् फल जानना॥ कारकाश ग्रहफल सम्पूर्ण ॥ १६-७९॥

अथ कारकांशे त्रिकोणफलमाह

कारकांशे त्रिकोणस्थे खेते च तांत्रिको भवेत् ॥ पापेन क्षुद्रदेवस्य शुभेन शुभसेवकः ॥८०॥
 कारकांशे त्रिकोणस्थे पापयुक् पापवीक्षिते ॥ भूतानुग्रहकर्ता स्यान्निर्विशंक द्विजोत्तम ॥८१॥
 कारकांशे त्रिकोणस्थे पापयुक् शुभवीक्षिते ॥ पुत्रैर्भर्यप्रदो नित्य राजानुग्रहकारकः ॥८२॥
 कारकांशे लये चंद्रे कुजराहुनिरीक्षिते ॥ क्षयरोगो भवेत्तस्य भ्रातृकासादिरोगयुक् ॥८३॥
 लग्नेष्विते प्रबंधे च पापद्वययुक्ते द्विज ॥ तांत्रिको जायते विप्र निर्विशंक कुले द्विज ॥८४॥

पूर्वखण्डे नवमोऽध्यायः

पापनिरीक्षितौ तत्र तंत्रनिग्राहको भवेत् ॥ शुभनिरीक्षितौ वापि तंत्रानुग्रहकारकः ॥८५॥
कारकांशेदुःशुक्लौ च शुभदृष्टिनिरीक्षितौ ॥ रसवादी भवेद्वातो धातूनां भस्मकारकः ॥८६॥
शुक्लेदुःशुक्लसंयुक्तौ सदैवो हि भवेन्नरः ॥ पीयूषपाणिः कुशलः सर्वरोगहरो द्विज ॥८७॥
कारकांशेदुःशुक्लस्यो दैत्याचार्यनिरीक्षितः ॥ श्वेतकुण्ठी भवेन्नूनं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥८८॥

कारकांश त्रिकोणफल

कारकांश राशि त्रिकोणमे हो तथा ग्रहयोग हो तो 'तान्त्रिक' होता है॥ कारकांश त्रिकोणमे हो तथा ग्रहयुक्त और पापदृष्टि हो तो भूत प्रेतादिसे सिद्धि प्राप्त करता है॥ कारकांश के त्रिकोण मे होने और पापग्रहयुक्त तथा शुभग्रह की दृष्टि होने से पुत्र-सन्तान और ऐश्वर्य तथा राजा का अनुग्रह प्राप्त होता है॥ कारकांश मे चन्द्रयुक्त होकर अष्टमभाव मे हो और भगल राहु से दृष्ट हो तो जातक क्षय रोगी अथवा श्वास-खासी वाला होता है॥ लग्न मे दूसरे या तीसरे स्थान मे दो पापग्रहो से युक्त हो तो निश्चय ही 'तान्त्रिक' होता है॥ पूर्वोक्त स्थान मे अनेक पापग्रहो से दृष्ट हो तो तन्त्र का निग्रहकारक होता है, और शुभग्रह दृष्ट हो तो अनुग्रह कारक होता है॥ कारकांश मे चन्द्रमा और शुक्र शुभग्रहदृष्ट हो तो रसभस्म का जानने और करनेवाला होता है। और चन्द्र, बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो चिकित्सा प्रणाली मे कुशल, पीयूषपाणि (चिकित्सा मे द्रव्य पानेवाला) रोगी को दूर करनेवाला सदैव होता है॥ कारकांश मे चन्द्रमा चतुर्थ मे हो और शुक्रदृष्ट हो तो निश्चय ही श्वेत कुष्ठरोग वाला होता है ॥८०-८८॥

कारकांशेदुःचापस्ये यदि शुक्रयुतेक्षिते ॥ पांडुभित्री भवेद्वालः श्वेतकुण्ठांगपीडितः ॥८९॥
कारकांशेदुःचापस्ये धरापुत्रेण बीलिते ॥ राजरोगो भवेत्तस्य रक्तपित्तांतिको द्विज ॥९०॥
कारके चंद्रधनुषि शिखिना बीलिते सति ॥ नीलकुण्ठं भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९१॥
चतुर्थे पंचमे रंभ्रे धने राहुकुली यदि ॥ क्षयरोगो भवेत्तस्य चंद्रदृष्ट्या विशेषतः ॥९२॥
कारकांशे सत्यस्थाने केवलः संस्थितः कुजः ॥ पिटकादि भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९३॥
कारकांशे लघे केतौ ग्रहणीरोगपीडितः ॥ स्वर्मानुलकी रंध्रे विषवेद्यः प्रजायते ॥९४॥
कारकांशे धने सुर्वे केवले संस्थिते शनी ॥ धनुर्विद्याधरो बालो जायतेऽपि न संशयः ॥९५॥
कारकांशे सुखे बित्ते केवले संस्थिते शिखी ॥ घटिकापंजवादी स्यादपि शोधनतत्परः ॥९६॥
उक्तस्थाने स्थिते सौम्ये तद्वत्परमहंसके ॥ तथा संन्यस्तके ज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९७॥

कारकांश चन्द्रमा धनु राशि मे शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो पांडुरोगी तथा श्वेतकुण्ठी होता है॥ कारकांश चन्द्रमा धनु राशि मे भगल से दृष्ट हो तो रक्तपित्त की बीमारी या क्षयरोगी हो ॥ कारकांश चन्द्रमा धनुराशि मे यदि केतुदृष्ट हो तो नील कुष्ठरोग निश्चय होता है॥ कारकांश मे दूसरे, चौथे, पाचवे, आठवे यदि भगल राहु हो तो क्षयरोगी होता है, चन्द्रदृष्टि हो तो अवश्य ही होता है॥ कारकांश मे भगल आठवे घर मे हो तो फोडा-फुत्सी की व्याधि होती है॥ कारकांश मे छठे केतु हो तो सग्रहणी रोग होता है। राहु तथा शुक्र आठवे हो तो विषवेद्य (गारुडी) होता है॥ कारकांश मे चतुर्थ या द्वितीय मे केवल शनि हो तो निश्चय धनुर्विद्याविशारद होता है॥ कारकांश मे द्वितीय, चतुर्थ स्थान मे केतु हो तो घटिका मन्त्र

(प्राचीन काल की घड़ी) से दृष्ट (समय) शोधन में प्रवीण होता है॥ कारकाश में २।४ स्थान में बुध हो तो निश्चय ही परमहंस सन्यासी होता है ॥८९-९७॥

उक्तस्थाने स्थिते राहौ सोह्यवादिकारक ॥ शिखिना सङ्गकारी च कुजेन कुतधारक ॥९८॥ चद्रेज्यौ कारकाशे च लग्ने वा नवपचमे ॥ प्रथकर्ता भवेन्नून सर्वविद्याविशारद ॥९९॥ उक्तस्थानगते शुके स्वल्पप्रथकरो द्विज ॥ उक्तस्थानगते सौम्ये किञ्चिदग्रथकरो हासौ ॥१००॥ शुकेण काव्यकर्ता च प्राकृतप्रथतत्पर ॥ गुरुणा सर्वप्रधाना कारको द्विजसत्तम ॥१॥ वाक्यहीनो भवेद्दाल सभाक्षोभो न जायते ॥ वैयाकरणश्च वेदाती जायते तर्कशास्त्रकृत् ॥२॥ उक्तस्थानगतसौरि सभाजाड्यो भवेन्नर ॥ मीमांसको भवेन्नूनमुक्तस्थानगते बुधे ॥३॥ कारकाशे धरामूनर्लगे वानवपचमे ॥ नैयायिको भवेन्नून सुष्ठुकाव्यकरो नर ॥४॥ कारकाशे निशानाये त्रिकोणे चाय लग्ने ॥ साख्यशास्त्रज्ञनिपुणो जायते मतिमात्रर ॥५॥ भाग्ये लब्धे प्रबधे वा कारकाशे शिखी तथा ॥ गणितज्ञो भवेन्नून ज्योति शास्त्रविशारद ॥६॥ मुराचार्येण सवधे साप्रदायिकशस्त्रधृक् ॥ ये योगा भाग्यभावे तु यथावद्भाषित मया ॥७॥

कारकाश में २।४ स्थान में राहु हो तो मजीनरी बनाने या सुधारने में प्रवीण होता है। केतु होने से तलवार आदि हथियार बनाता और रखता है॥ कारकाश में चन्द्र गुरु लग्न में या पचम नवम में हो तो सर्वविद्याओ में पारगत तथा ग्रन्थकर्ता होता है॥ उक्तस्थान में शुक्र हो तो छोटी पुस्तके लिखनेवाला तथा बुध होनेसे कभी कोई ग्रन्थ करनेवाला होता है॥ गुरु के होने से कवि तथा प्राकृतभाषा का विद्वान् होता है। गुरु होने से सब विषयों का विद्वान् होता है॥ गुरु होने से वैयाकरण नैयायिक और वेदान्ती होते हुए भी कम बोलनेवाला तथा सभा में भी शान्त रहनेवाला होता है॥ उक्त स्थान में शनि हो तो पंडित होते हुए भी समाज में जड़ हो॥ बुध हो तो निश्चय ही मीमांसक होता है॥ कारकाश व लग्न या पचम अथवा नवम स्थान में मंगल हो तो कवि और न्यायशास्त्र का ज्ञाता होता है॥ कारकाश के लग्न या त्रिकोण में चन्द्रमा हो तो साख्यशास्त्र का ज्ञाता होता है॥ कारकाश के १।११।२ स्थान में केतु हो तो ज्योतिष शास्त्र में पारगत गणितज्ञ होता है॥ गुरु के सम्बन्ध से धार्मिक शास्त्र का ज्ञाता होता है। जो योग भाग्यभाव में होते हैं वे यथावत् कहे गये ॥९८ १००॥ तथा ॥१ ७॥

विस्तस्थानेऽपि ते ज्ञेया पूर्वबज्जायते फलम् ॥ केऽपि तृतीयभागे तु कथयन्ति पुरा द्विज ॥८॥ कारकाशे धने केतौ तथा भाग्यालये गते ॥ पापघटेण सदृष्टे वाचालश्च भवेन्नर ॥९॥ कारकाशे तथाहृदे धने रध्रे स्थिते द्विजे ॥ ग्रहसाम्येतिविज्ञेयो योग केमदुमो भवेत् ॥१०॥ उक्तस्थाने ग्रहो नास्ति तदा केमदुमो भवेत् ॥ चद्रदृष्टे विशेषेण दारिद्र्यार्तिपुतो भवेत् ॥११॥ आरुडाज्जन्मलप्राप्ता पापा स्त्रीहानिगा यदि ॥ केवले सग्रहत्वेऽपि समसीख्यौ शुभाशुभौ ॥१२॥ चद्रदृष्टिविशेषेण योग केमदुमो मल ॥ द्वितीयाष्टमभावान्मा योगोऽय कल्पते द्विज ॥१३॥ कारकाशेषु ये योगा पूर्वोक्ता गदिता मया ॥ तत्तद्वागिदशपाके सर्वेषा फलमादिशेत् ॥१४॥ एव दशाप्रदो राशिर्द्वितीयाष्टमयोर्द्विज ॥ ग्रहसाम्येति विज्ञेय केमदु शशिनेक्षिते ॥१५॥ दशाप्रारभसमये शोधयेज्जन्मलप्रवत् ॥ सूर्यादिसेचरान्स्पष्टान् साधयेज्ज -

पूर्वखण्डे दशमोऽध्यायः

नमद्विज ॥१६॥ तत्र विताष्टमे भावे ग्रहसाम्ये तु यद्भवेत् ॥ तदा केमद्रुमो ज्ञेयश्चन्द्रदृष्ट्या विशेषतः ॥१७॥ एव तन्वादिभावानां दशरभेषु योजयेत् ॥ तत्तदग्रहानुसारेण फलं वाच्यं बुधे सदा ॥१८॥

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डेकारकाशफलकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥१॥

ऊपर बड़े गये सभी योग धनस्थान में भी इसी प्रकार माने। कोई आचार्य तृतीय भाव में भी इन योगों को मानते हैं। कारकाश में केतु द्वितीय स्थान में या नवमस्थान में पापदृष्ट हो तो बाचाल (बकवादी) होता है। 'केमद्रुम' योग कहते हैं। कारकाश में अथवा आरुढ लग्न में दूसरे और आठवें स्थान में बराबर ग्रह हो तो 'केमद्रुम' (केम नामक जंगली बेकारफल होता है उसका वृक्ष यह सार्यक सजा है) योग होता है। उक्त स्थानों में कोई ग्रह नहीं हो तो भी 'केमद्रुम' योग होता है और चन्द्रमा की दृष्टि हो तो योग बलवान् होता है, यह योग दरिद्रता तथा पीडाकारक ही है। आरुढलग्न या जन्मलग्न से पापग्रह सप्तम और द्वादश भाव में हो अथवा ये स्थान खाली हो तो समान सुख दुःख अर्थात् मिश्रित फल होता है। 'केमद्रुम' योग द्वितीय और अष्टमभाव से ही होता है और विशेष करके चन्द्रमा की दृष्टि से बलवान् होता है। कारकाश में जो योग बड़े गये हैं उनका फल उन राशिओं की दशा में होता है। इस प्रकार दशाग्रह द्वितीय अष्टम राशि ग्रहसाम्य (दोनों स्थानों में बराबर ग्रह होने अथवा न होने से) कहाती है और चन्द्रदृष्ट होने से 'केमद्रुम' योग कहा जाता है। दशा के प्रारम्भकाल में जन्म के समान १२ भावों को स्पष्ट करना चाहिये, और सूर्यादि ग्रहों को स्पष्ट करके देखना चाहिये। इसके बाद द्वितीय तथा अष्टमभाव ग्रहसाम्य (उपगुप्त प्रकार से) होने पर 'केमद्रुम' योग होता है, चन्द्रदृष्टि से बलवान् होता है। इस प्रकार तनु, धन (प्रथम, द्वितीय) आदि १२ भावों का ग्रहों के अनुसार जो शुभाशुभ फल हो वह फल उस राशि के दशा काल में कहना। कारकाश फल समाप्त ॥८०-११८॥

इति बृ० पा० हो० शा० पू० ख० भावप्रकाशिकाया कारकाशफलकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥१॥

अथ भाव-होरा-घटीलग्नमाह

अथ वक्ष्याम्यहं विप्र ! कल्पनात्मकलग्नप्रकारान् ॥ भावहोराघटीलग्न-लग्नातीह यथाक्रमम् ॥१॥ सूर्योदयात् समारम्भ्य घटिकान्तान्तु पञ्चकम् ॥ इष्टपर्यन्तमेतत्तु भावलग्नं समुच्यते ॥२॥ इष्ट घट्यादिकं यत्तु पञ्चभिर्भाजितं फलम् ॥ योज्यं मौढयिके सूर्ये 'भावलग्नं' तदेव हि ॥३॥ होरालग्नं च वक्ष्येह शृणु त्वं द्विज पुनरपि । सार्द्धद्विघटिका तुल्यं विधिं तस्य वक्ष्याम्यहम् ॥४॥ इष्टघट्यादिकं द्विघ्नं पञ्चाशत् भादिकं फलम् ॥ योज्यमौढयिके सूर्ये 'होरालग्नं' तदेव हि ॥५॥

हे भूमेय ! अब मैं भावलग्न, होरालग्न तथा घटीलग्न जो कि वास्तविक नहीं है, काल्पनिक है, वे यथाक्रम से कहता हूँ। सूर्योदय से ५-५ घटी में इष्टपर्यन्त १-१ राशि का भोग होता है, इसको भावलग्न कहते हैं। जो घट्यादि इष्ट हो उसमें ५ का भाग देकर लब्ध राश्यादि अक मानकर प्रातःकालिक सूर्य में युक्त करे तो 'भावलग्न' स्पष्ट होता है ॥१-३॥

उदाहरण-

इष्टघटी १०।०० मे ५ का भाग दिया तो २।० लब्ध हुआ। सूर्य ४।२३।२८।१८ मे युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ यह भावलघ्न स्पष्ट हुआ।

हे द्विजश्रेष्ठ ! अब हम 'होरालघ्न' कहते हैं, २॥-२॥ घटी मे १-१ लघ्न का भोग होता है। इष्ट घटी को २ से गुणा करके ५ का भाग देकर लब्धाक को प्रातः सूर्य मे युक्त करने से 'होरालघ्न' स्पष्ट होता है॥४॥५॥

उदाहरण-

इष्टघटी १०।०० को द्विगुण किया तो २०।०० हुआ, ५ का भाग दिया तो लब्ध ४ राशि को प्रातः सूर्य मे युक्त किया तो ६।२३।२८।१८ 'होरालघ्न' स्पष्ट हुआ।

पुनरन्यत्र घटीलघ्नं कल्पनीयं द्विजोत्तम ॥ सूर्योदयात् समारम्भ्य जन्मकालावधि स्फुटम् ॥६॥
एकैकघटिकामानं लघ्नं यद् भादिकं भवेत् ॥ तदेव घटिकालघ्नं कथितं नारदादिभिः ॥७॥
घटीतुल्यां राशयस्तु पलार्द्धप्रमिताशकाः ॥ योज्याध्रौदयिके-सूर्ये 'घटीलघ्न' स्फुटं भवेत् ॥८॥
क्रमादेशां हि लघ्नानां भावकुण्डलिकां लिखेत् ॥ ये ग्रहा यत्र ते तत्र स्थाप्या वै गणितागताः ॥९॥
वर्णदाख्यदशां भानां कथयामि तवाग्रतः ॥ यस्यां विज्ञानमात्रेण ज्ञेयमायुर्भव फलम् ॥१०॥
ओजलघ्नप्रसूतानां मेधादर्गणयेत् क्रमात् ॥ समलघ्नं प्रसूतानां मीनादेरपसव्यतः ॥११॥

हे द्विजोत्तम ! अब तुमको तीसरे 'घटीलघ्न' की कल्पना करनी चाहिये। सूर्योदय से जन्मसमय का इष्टकाल जो घटीपल इष्ट है, वही राशि अशरूप मे 'घटीलघ्न' है, ऐसा नारद आदि का मत है। इसमे घटी अक 'राशि' है और पलाक का द्विगुण अक 'अंश' होता है, प्राप्त राशि अंश को प्रातः कालीन सूर्यस्पष्ट मे युक्त करने से घटी लघ्न के राशि अंश आदि स्पष्ट होते हैं॥६-८॥

उदाहरण-

इष्ट १०।०० यहां १० यह राशि अक है, पल नहीं होने से अंशदि वही रहा तो राशि मे १२ से भाग देने पर २।२३।२८।१८ यह घटी लघ्न स्पष्ट हुआ।

इन (भाव, होरा, घटी) लघ्नों से कुंडली बनाकर जो ग्रह जिस राशि मे हो उसी राशि मे लिखे। अब हम 'वर्णद' दशा कहते हैं, जिसके ज्ञान से आयुभर का शुभाशुभ फल जाना जाता है। विषम राशि मे लघ्न हो तो मेघ आदि से क्रम से गिनना चाहिये और सम राशि मे लघ्न हो तो मीन राशि से उलटे क्रम से गिनना चाहिये॥११॥

एवं मेधादिमीनादि जन्मलघ्नान्त मेव हि ॥ तथैव होरालघ्नान्त गणनीयं द्विजोत्तम ॥१२॥
ओजत्वेन समत्वेन साजात्यमुग्रय यदि ॥ तर्हि संख्ये योजनीये वैजात्ये तु वियोजयेत् ॥१३॥
मेघ मीनादितो ज्ञात्वा यो राशिः स तु वर्णदः ॥ प्रयोजनं च वस्येज्ज कृणु त्वं द्विजपुंगव ॥१४॥
होरा लघ्नप्रयोन्यां सबलाद् 'वर्णद' दशा ॥ यत् संख्यो वर्णदो राशि तत्तत् सख्या क्रमेण तु ॥१५॥
क्रम व्युत्क्रम भेदेन दशा स्यादोज-युग्मयोः ॥ भावहोरादि लघ्नानां सर्वत्रैव समानता ॥१६॥
जन्मलघ्नानुस्यत्वीय देशोद्भवमितीरितम् ॥ मीनाद्यपसव्यमार्गेण गणनीयं प्रयत्नतः ॥१७॥

पूर्वखण्डे एकादशोऽध्यायः

यत्त्वन्मतिमो राशिस्तद्वाशिर्वर्णदो भवेत् ॥ वर्षसंख्यां विज्ञानोयाच्चरपर्याप्रमाणतः ॥१८॥
होरालग्नमयोर्नेपा सबलावर्णदा दशा ॥ यत्संख्या वर्णदा तत्प्राप्तत्र सख्या क्रमेण तु ॥१९॥
क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यादोजगुम्भयोः ॥ वर्णवा राशिमेषादि मीनादि गणयेत्क्रमात् ॥२०॥
वर्णदा स्यात्त्रिकोणे च पापपुक् पापरारिषिकः ॥ पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम् ॥२१॥

हे द्विजोत्तम ! इस प्रकार मेष आदि से (क्रम से) और मीन आदि से (उलटे क्रम से) जन्म लग्न तथा होरा लग्न तक गिनकर भिन्न भिन्न सख्या लेना । पश्चात् यदि होरा लग्न और जन्मलग्न दोनों ही सम या दोनों ही विषम हो तो इन सख्याओं का योग करो और यदि एक सख्या सम और दूसरी विषम हो तो दोनों का अन्तर करो। इस प्रकार योग अथवा अन्तर करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह यदि विषम हो तो मेष से क्रम से और सम हो तो मीन से व्युत्क्रम से गिनकर जो राशि प्राप्त होती है, वही 'वर्णद' राशि है। होरालग्न तथा जन्मलग्न में जो बलवान् हो उससे 'वर्णद' दशा ग्रहण करना। 'वर्णद' राशि की जो सख्या सम, विषम है, उसके अनुसार क्रम व्युत्क्रम भेद से दशा ग्रहण करना चाहिये। भाव, होरा तथा घटी लग्न सर्वत्र समानरूप से मानना (अर्थात् देशभेद से भेद नहीं होता) और जन्म लग्न अपने अपने देश (स्थान) के अनुसार विभेद होता है तो परस्पर घटाने से शेष सख्यात्मक अक मीनादि अपसव्यमार्ग से गिनने पर वर्णद राशि होती है। इस प्रकार जो अंतिम राशि प्राप्त होती है वह वर्णद राशि है। उस राशि की दशाके वर्षों की सख्या 'चरपर्या' दशा के अनुसार लेना। जन्मलग्न तथा होरालग्न में जो बलवान् हो उससे वर्णददशा लेना। वर्णददशा की जो विषम या सम सख्या हो उसके अनुसार क्रम से तथा व्युत्क्रम से मेषादि और मीनादि क्रम से गणना करना। यह वर्णद राशि त्रिकोण में पड़े और पापग्रह की ही राशि हो और पापग्रहयुक्त हो तो उस दशा तक ही जातक का जीवन जानना ॥१२-२१॥

उदाहरण—

जन्मलग्न—६।१६।१७।१९। होरालग्न—६।२३।२८।१८, दोनों ही विषम राशि हैं, अतः मेष से क्रम से गणना किया तो ७-७ हुई, प्राप्त दोनों मध्या विषम (सजातीय) हैं, अतः योग किया तो १४ हुआ, १२ से भाग दिया तो '२' यह 'वृष' वर्णद राशि प्राप्त हुआ।

रश्मिस्तु यथैवायुर्निर्दिशक द्विजोत्तम ॥ वर्णदा सप्तमाद्रयोः कलत्राद्युर्विचिंतयेत् ॥२२॥ पंचमे तनयस्यायुर्मातुः स्यात्तुर्पंचके ॥ तृतीये भ्रातुरायुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्बेद्विज ॥२३॥ पितुस्तु नवमान्मातुः पंचमावर्णदस्य तु ॥ भूतराशिदशायां च प्रबलायामरिष्टकम् ॥२४॥ एव तन्वादिभावानां कारयेद्वर्णदा दशा ॥ पूर्वबन्ध कलं ज्ञेय द्विजोत्तम शुभायुग्मम् ॥२५॥ ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा ॥ ग्रहाहठपदत्वेन चिंतयेद्ग्रहवर्णदा ॥२६॥ दशाया अन्तरं कार्य भानुभागं प्रदापयेत् ॥ चरस्थिरदशायां च वर्णदायास्तथैव ॥२७॥ यत्त्वन्मतिमो कारकस्येव केदस्यानां दशा भवेत् ॥ ततः पणपरस्यानामापोस्तितमदशां ततः ॥ जन्माणां जन्मलग्नं च कालं होरा प्रगास्यते ॥२९॥

इति श्रीकृष्णारामहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावतत्त्वादिकथनं नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

उदाहरण-

इष्टघटी १०।०० मे ५ का भाग दिया तो २।० लब्ध हुआ। सूर्य ४।२३।२८।१८ मे युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ यह भावलघ्न स्पष्ट हुआ॥

हे द्विजश्रेष्ठ ! अब हम 'होरालघ्न' कहते हैं, २॥-२॥ घटी मे १-१ लग्न का भोग होता है। इष्ट घटी को २ से गुणा करके ५ का भाग देकर लब्धाक को प्रातः सूर्य मे युक्त करने से 'होरालघ्न' स्पष्ट होता है॥४॥५॥

उदाहरण-

इष्टघटी १०।०० को द्विगुण किया तो २०।०० हुआ ५ का भाग दिया तो लब्ध ४ राशि को प्रातः सूर्य मे युक्त किया तो ६।२३।२८।१८ 'होरालघ्न' स्पष्ट हुआ।

पुनरन्यद् घटीलग्न कल्पनीय द्विजोत्तम ॥ सूर्योदयात् समारम्भ जन्मकालावधि स्फुटम् ॥६॥
एकैकघटिकामान लग्न पदं भादिक भवेत् ॥ तदेव घटिकालग्न कथितं नारदादिभिः ॥७॥
घटीतुल्या राशयस्तु पलार्द्धप्रमिताशका ॥ योज्याध्रौदयिके-सूर्ये 'घटीलग्न' स्फुटं भवेत् ॥८॥
क्रमादेया हि लग्नानां भावकुण्डलिका लिखेत् ॥ ये यद्वा यत्र ते तत्र स्याप्या वै गणितागता ॥९॥
वर्णदाख्यदशा भाना कथयामि तवाग्रतः ॥ यस्यां विज्ञानमात्रेण ज्ञेयमायुर्भव फलम् ॥१०॥
ओजलग्नप्रसूतानां मेधावेर्गणयेत् क्रमात् ॥ समलग्न प्रसूतानां मीनादेरपसंख्यतः ॥११॥

हे द्विजोत्तम ! अब तुमको तीसरे 'घटीलग्न' की कल्पना करनी चाहिये। सूर्योदय से जन्मसमय का इष्टकाल जो घटीपल इष्ट है वही राशि अशरूप मे घटीलग्न है ऐसा नारद आदि का मत है। इसमे घटी अक राशि है और पलाक का द्विगुण अक अंश होता है, प्राप्त राशि अंश को प्रातः कालीन सूर्यस्पष्ट मे युक्त करने से घटी लग्न के राशि अंश आदि स्पष्ट होते हैं॥६-८॥

उदाहरण-

इष्ट १०।०० यद्वा १० यह राशि अक है पल नहीं होने से अंशदि वही रहा तो राशि मे १२ से भाग देने पर २।२३।२८।१८ यह घटी लग्न स्पष्ट हुआ॥

इन (भाव होरा घटी) लग्नो से कुडली बनाकर जो ग्रह जिस राशि मे हो उसी राशि मे लिखे। अब हम वर्णद दशा कहते हैं, जिसके ज्ञान से आयुभर का शुभाशुभ पाल जाना जाता है। विषम राशि मे लग्न हो तो मेघ आदि से ब्रह्म से गिनना चाहिये और सम राशि मे लग्न हो तो मीन राशि से उलटे क्रम से गिनना चाहिये॥११॥

एव मेघादिमीनादि जन्मलग्नान्त मेव हि ॥ तथैव होरालग्नान्त गणनीय द्विजोत्तम ॥१२॥
ओजत्वेन समत्वेन साजात्यमुभय यदि ॥ तर्हि सख्ये योजनीये वैजात्ये तु वियोजयेत् ॥१३॥
मेघ मीनादितो ज्ञात्वा यो 'राशि' स तु वर्णदः ॥ प्रयोजनं च यस्येह शृणु त्व द्विजपुंगव ॥१४॥
होरा लग्नप्रयोगेणा सबलाद् 'वर्णद' दशा ॥ यत् सख्यो वर्णदो राशि तसत् सख्या क्रमेण तु ॥१५॥
क्रम घ्युक्तं भेदेन दशा स्यादोज-गुण्ययो ॥ मावहोरादि लग्नानां सर्वत्रैव समानता ॥१६॥
जन्मलग्नान्तुस्वस्थीय देशोद्भवमितीरितम् ॥ मीनाद्यपसंख्यमाणेन गणनीयं प्रयत्नतः ॥१७॥

यत्नम्यंमतिमो राशिस्तद्वाशिर्वर्णदो भवेत् ॥ वर्षसख्यां विजानीयाच्चरपर्याग्रमाणतः ॥१८॥
होरात्तत्तमयोर्नया सबसद्बर्णदा दशा ॥ यत्संख्या वर्णदा स्तप्राप्तत्र सख्या क्रमेण तु ॥१९॥
क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यादोजपुष्पयोः ॥ वर्णदा राशिमेषादि मीनादि गणपेत्क्रमात् ॥२०॥
वर्णदा स्यात्त्रिकोणे च पापयुक् पापराशिकः ॥ पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम् ॥२१॥

हे द्विजोत्तम ! इस प्रकार मेष आदि से (क्रम से) और मीन आदि से (उलटे क्रम से) जन्म लग्न तथा होरा लग्न तक गिनकर भिन्न भिन्न सख्या लेना । पश्चात् यदि होरा लग्न और जन्मलग्न दोनों ही सम या दोनों ही विषम हो तो इन सख्याओं का योग करो। और यदि एक सख्या सम और दूसरी विषम हो तो दोनों का अन्तर करो। इस प्रकार योग अथवा अन्तर करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह यदि विषम हो तो मेष से क्रम से और सम हो तो मीन से व्युत्क्रम से गिनकर जो राशि प्राप्त होती है, वही 'वर्णद' राशि है। होरात्तत् तथा जन्मलग्न में जो बलवान् हो उससे 'वर्णद' दशा ग्रहण करना। 'वर्णद' राशि की जो सख्या सम, विषम है, उसके अनुसार क्रम व्युत्क्रम भेद से दशा ग्रहण करना चाहिये। भाव, होरा तथा घटी लग्न सर्वत्र समानरूप से मानना (अर्थात् देशभेद से भेद नहीं होता) और जन्म लग्न अपने अपने देश (स्थान) के अनुसार विभेद होता है तो परस्पर घटाने से शेष सख्यात्मक अंक मीनादि अपसव्यमार्ग से गिनने पर वर्णद राशि होती है। इस प्रकार जो अंतिम राशि प्राप्त होती है वह वर्णद राशि है। उस राशि की दशा के वर्षों की सख्या 'चरपर्या' दशा के अनुसार लेना। जन्मलग्न तथा होरात्तत् में जो बलवान् हो उससे वर्णददशा लेना। वर्णददशा की जो विषम या सम सख्या हो उसके अनुसार क्रम से तथा व्युत्क्रम से मेषादि और मीनादि क्रम से गणना करना। यह वर्णद राशि त्रिकोण में पड़े और पापग्रह की ही राशि हो और पापग्रहयुक्त हो तो उस दशा तक ही जातक का जीवन जानना ॥१२-२१॥

उदाहरण—

जन्मलग्न—६।१६।१७।१९ । होरात्तत् —६।२३।२८।१८, दोनों ही विषम राशि हैं, अतः मेष से क्रम से गणना किया तो ७-७ हटा, प्राप्त दोनों सख्या विषम (सजातीय) है, अतः योग किया तो १४ हुआ, १२ से भाग दिया तो '२' यह 'वृष' वर्णद राशि प्राप्त हुआ।

वदशूले यथेवापुर्निर्विशक्तं द्विजोत्तम ॥ वर्णदा सप्तमादाशोः कलशपुर्विचितयेत् ॥२२॥ पञ्चमे तनयस्यापुर्मातुः स्यात्पुर्वपंचके ॥ तृतीये भ्रातुरापुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्भवेद्द्विज ॥२३॥ पितुस्तु नवमाभ्यातुः पञ्चमाद्वर्णदस्य तु ॥ शूलराशिदशायां वै प्रबलायामरिष्टकम् ॥२४॥ एव तन्वादिभावानां कारयेद्वर्णदा दशा ॥ पूर्ववच्च फल ज्ञेयं द्विजोत्तम शुभाशुभम् ॥२५॥ ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा ॥ ग्रहार्कदपदत्वेन चितयेद्ग्रहवर्णदा ॥२६॥ दशायां अन्तर कार्यं भानुभागं प्रदापयेत् ॥ चरस्थिरदशायां वै वर्णदायास्तवैवच ॥२७॥ यत्नम्यत्रा पूर्वमभ्यानां भानुभागं च कारयेत् ॥ क्रमव्युत्क्रमभेदेन सल्लेखे दशांतरम् ॥२८॥ पूर्णार्थां कारकस्येव केन्द्रस्थानां दशा भवेत् ॥ ततः षण्फरस्थानामापोक्तिमदशां ततः ॥ जन्मलग्नं च कालं होरा प्रसास्यते ॥२९॥

इति श्रीकृत्स्नारातरहोराशास्त्रे पूर्वक्षण्डे भावलगादिकथनं नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

रुद्र, शूल दशा के अनुसार ही कष्टकारी जानना । वर्षद के सप्तम भाव में जातक की स्त्री की आयु देखना ॥ पंचम से पुत्र की, और चतुर्थ से माता की आयु देखना। तीसरे से छोटे भ्राता की आयु देखना, ग्यारहवें से बड़े भाई की॥ माता से पंचम अथवा जातक के वर्षद से नवम से पिता की आयु का विचार करना। प्रबल शूल राशि की दशा में अरिष्ट होता है॥ इस प्रकार तन्वादि १२ भावों की वर्षदा दशा देखनी चाहिये। और हे द्विजोत्तम! पहिले उक्त प्रकार ही शुभाशुभ फल जानना ॥ यह वर्षदा दशा ग्रहों की नहीं होती, केवल राशियों की ही होती है। क्योंकि ग्रहों के स्थित होने के स्थान राशियाँ ही हैं, अतः ग्रहों का ही फल देनेवाली यह 'वर्षदा' दशा है॥ इस दशा की अतर्दशा बनाने के लिये प्रत्येक भाग की दशा के १२ भाग करना। चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियों में अन्तर्दशा निकालना॥ पूर्वोक्त जो दशावर्ष आये हैं, उनके द्वादशांश अन्तर दशा होती है॥ इसी प्रकार केन्द्रादि दशा का प्रकार जानना, प्रथम कारक होने से केन्द्रस्थ की दशा बाद पणफरस्थ की और बाद आपोक्लिमस्थ की दशा जानना। जन्मलग्न शरीर है, होरा समय है, यह तत्त्व है॥ वर्षददशा समाप्त ॥२२-२९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वसडे कात्थनिक होरालम्नादि कथन
नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अथाऽऽरूढमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि राश्यारूढपदं द्विज ॥ राशीनां द्वादशानां तु यावदोशाश्रयो भवेत् ॥१॥
सख्या त्वीशोदयादग्रे समाप्ता तत्पदं वदेत् ॥ राशिबद्धग्रह आरूढ जायते गणकैर्जनैः ॥२॥
यावद्दूरं यस्य राशिस्तावत्सख्या क्रमेण वै ॥ अग्रे खगारूढपदं जायते द्विजसत्तम ॥३॥
जनुर्लघ्नान्तप्रस्थामी यावद्दूरं हि तिष्ठति ॥ तावद्दूरं तदग्रे च लग्नारूढं च कथ्यते ॥४॥ यदि
लग्नेश्वरः स्वर्गं कलत्रे सस्थितोऽप्ययं ॥ आरूढलग्नमित्याहुर्जन्मतलग्नं द्विजोत्तम ॥५॥ एव
तन्वादिभावानां भावारूढपदं भवेत् ॥ यत्र यत्र ग्रहा लग्ने तत्र तत्र सुसंलिखेत् ॥६॥

आरूढपद

हे मैत्रेय ! अब मैं राश्यारूढपद कहता हूँ। १२ राशियों का तो वही आरूढ स्थान होता है कि राशि का स्वामी राशि से जितनी राशि पर हो उतनी सख्या पर की अगली राशि उस राशि का आरूढपद होता है॥ राशि के स्वामी से आगे की उतनी ही सख्या 'पद' जानना, इस प्रकार राशि के समान ही ग्रह का भी आरूढ पद होता है॥ (ग्रह में) जिस ग्रह की राशि अपने से जितनी सख्या पर हो उससे आगे उतनी ही सख्या पर जो राशि होती है वह ग्रहारूढपद कही जाती है॥ जातक के लग्न से लग्न का स्वामी जितनी दूर पर स्थित है, उससे उतनी सख्या पर आगे की राशि लग्नारूढ पद कहाती है॥ हे मैत्रेय ! यदि लग्नेश्वर जन्मलग्न में अथवा सप्तम में हो तो जन्मलग्न ही आरूढपद कहता है॥ इसी प्रकार लग्न आदि बारहों भावों का पद (आरूढलग्न) जानना। लग्न में जिस जिस स्थान पर ग्रह हो वहा वहा पर

लिखे ॥ पश्चात् उपर्युक्त रीती से तत् तत् भावो का आरुढ पद तत्तत् स्थानो मे लिखे ॥१-६॥

उदाहरणार्थमारुढकुडलीमाह

| | | |
|--|--|----|
| धनारुढ १ शु भाग्यारुढ पुत्रारुढ च० २ | के० १२ लग्नारुढ लाभारुढ पराक्रमारुढ | ११ |
| व्यापारारुढ सूर्य बुध ३ | कर्मरुढ ९ | १० |
| ४ म ५ भातुलारुढ निधनारुढ | ६ रा जायारुढ | ७ |
| | बु० ७ मुखारुढ | ८ |

पराशर उवाच

अधुना सप्रवक्ष्यामि तन्वारुढफलं द्विज ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण जायते कर्ममूषकः ॥३॥
 यावदीशास्त्रस्य राशिरित्युक्तं भुवि गुरा ॥ पदमारुढसज्जं हि तदात्थमधि
 द्विज ॥८॥

अथैकादशस्थानमाश्रित्य फलमाह

गदादेकादशे स्थाने शुभग्रहपुतेक्षिते ॥ तस्माद्वाञ्छनापते वास प्रजावाञ्छीतसंपुत ॥९॥
 वित्तोपार्जनव्याघ्रेण नीतिवाञ्छनापते गदा ॥ नरो न नास्ति को नूनं न तु शास्त्रविद्वद्भूत
 ॥१०॥ पदादेकादशे विप्र पापमेतपुतेक्षिते ॥ अन्धयोपार्जितं वित्तं विषयं शास्त्रमार्गत
 ॥११॥ मिथैर्मिथफलं ज्ञेयमुल्लसिप्रदिक्षेपरा ॥ बहुधा जायते लाभो यत्र यत्र द्विजोत्तम
 ॥१२॥ आरुढत्वाभभवत् परं यद्येते न व्ययम् ॥ यस्य जन्मनि मोक्षेऽपि स्यात्प्रवृत्तो
 घनवानपि ॥१३॥ वृष्टग्रहाणां ग्राह्ये तदा दृष्टपरितुगे ॥ मार्गते चापि तत्रापि
 बहुर्गलनमभागे ॥१४॥ शुभग्रहार्गते तत्र तत्राप्युल्लसद्ग्राह्ये ॥ भुगानि स्वामिना दृष्टे
 सप्रभागाधिगेन वा ॥१५॥ ज्ञानस्य धुमं प्राप्य निर्दिनेदुनरोत्तमम् ॥ उत्तयोगेण ये नेदा
 दादम नु न पश्यति ॥१६॥

संग्राहकफल

हे मैत्रेय ! अब हम संग्राहक का फल कहते हैं। जिसके ज्ञान से कर्म का सूचित करनेवाला होता है॥ यह राशि अपने स्वामी की सख्या तक होती है, ऐसा प्राचीन महर्षि लोग कहते हैं। इसीलिये उससे आरंभ करके उतने ही आगे और जाने पर वह स्थान होता है॥७॥८॥

एकादश स्थान का फल

आरूढपद से एकादशस्थान शुभग्रह से युक्त हो तो जातक प्रजावान्, लक्ष्मीवाला और सुशील होता है॥ वह न्याय से धन का उपार्जन करनेवाला नीतिनिपुण होता है, न तो नास्तिक होता है और न शास्त्रविरुद्ध कार्य करता है॥ हे मैत्रेय ! पहले एकादश स्थान में यदि पापग्रह युक्त या देखते हो तो अन्याय से उपार्जन करता है और शास्त्रविरुद्ध कर्म करता है॥ इसी प्रकार सौम्य पाप उभययोग से मिथित फल जानना। यदि उस स्थान में उच्च या मित्र आदि में ग्रह स्थित हो तो हे मैत्रेय ! उस जातक को जहा तहा बहुत प्रकार से लाभ होता है॥ सौम्यग्रह लाभस्थान को तो देखता हो और व्ययस्थान को नहीं देखता हो तो भी जातक बहुत धनवान् होता है॥ यदि एकादशस्थान को अनेक ग्रह देखने वाले हो जिनमें कोई शत्रुराशि में हो, कोई उच्चराशि में हो, अर्गला होने पर भी अनेक अर्गला योग का समावेश हो, कोई शुभग्रहजनित अर्गला हो, कोई उच्च राशिगत ग्रहजनित अर्गला हो, ऐसे अनेक अर्गला हो, स्थान स्वामी की दृष्टि हो अथवा लग्न या भाग्येश की दृष्टि हो और इन उक्त योगों में द्वादशभाव को न देखते हो तो सुख की बहुलता योगानुयोगक्रम से उत्तरोत्तर भाग्य की प्रबलता कहनी चाहिये॥ ९ - १६॥

अथ द्वादशराशिमाश्रित्य फलमाह

पदारूढे व्यये विप्र शुभपापयुतेक्षिते ॥ बाहुल्यव्ययमित्येव विशेषोपार्जनात्सदा ॥१७॥
 शुभग्रहे सुमार्गेषु कुमागत्पापक्षेत्रे ॥ मिथैर्मित्रफल वाच्य यथास्त्राभेषु पूर्ववत् ॥१८॥
 पदारूढे व्यये शुभे भानुस्वर्भानुवोक्षिते ॥ राजमूलाद्वय वाच्य चन्द्र दृष्ट्या विशेषतः ॥१९॥
 पदारूढे व्यये सौम्ये शुभक्षेत्रयुतेक्षिते ॥ ज्ञातिमध्ये व्ययो नित्यं पापदूकलहाद्वयः ॥२०॥
 पदव्ययेऽसुराचार्ये वीक्षिते चान्यक्षेत्रैः ॥ करमूलाद्वय वाच्य करव्याजेन वै द्विज ॥२१॥
 आरूढे द्वादशे सौरो धरापुत्रेण सयुते ॥ अन्यग्रहेक्षितेऽविप्र भ्रातृमूलाद्वयव्ययम् ॥२२॥ पदेषु
 द्वादशे स्थाने ये योगास्तान्वदाम्यहम् ॥ लाभमावेपु ये योगा लाभयोगकराः सदा ॥२३॥ पदेषु
 सप्तमे राहुरथवा सस्थितः शिखी ॥ क्रुधिव्यथायुतो बालः शिखिना पीडितेऽधिकम् ॥२४॥
 पदे च सप्तमे केतुः पापक्षेत्रयुतेक्षिते ॥ साहसी श्वेतवेणी च दीर्घलिगी भवेन्नरः ॥२५॥ पदे च
 सप्तमे स्थाने गुरुशुकनिशाकराः ॥ एको द्वयं त्रयं तत्र लक्ष्मीवाङ्कारयेद्भुवम् ॥२६॥ तुंगर्षे
 सप्तमेऽक्षेदे शुभो वाप्यशुभः पदे ॥ श्रीमान्तोऽपि भवेन्नूनं सत्कोर्तिसहितो द्विज ॥२७॥ ये
 योगाः सप्तमे भावे राह्वादिकथिता मया ॥ ते योगा धूनवर्षिकस्या वित्तभावे च
 सद्द्विज ॥२८॥

द्वादश राशि (बारहो भाव) का फल

शुभ तथा पापग्रह दोनों प्रकार के ग्रहों से व्याख्येय पद युक्त तथा दृष्ट हो तो बहुत खर्च होता है और आय भी बहुत होती है॥ शुभग्रह युक्त दृष्ट हो तो सुमार्ग में और पापग्रहों से कुमार्ग में व्यय होता है। दोनों प्रकार के ग्रहों से फल भी दोनों प्रकार का होता है॥ लाभस्थान के समान ही यहाँ भी जानना॥ पदार्थ के व्ययभाव में शुक्र हो सूर्य राहु देखते हो तो राजसम्बन्ध से सर्व हो चन्द्र दृष्टि हो तो विशेष हो॥ व्यय पदार्थ में सौम्यग्रह हो, अन्य शुभग्रह भी देखते हो तो अपने बन्धु वर्ग में व्यय हो पापग्रह वी दृष्टि से कलह (लड़ाई-झगडा) के कारण व्यय हो॥ व्ययपद म (गुरु) शुक्र हो तथा अन्यग्रह भी देखते हो तो कर (टैक्स) के कारण सर्व होता है (कर के रूप में धन व्यय होता है) द्वादश आख्य में शनि हो तथा मंगल भी हो एव और ग्रह भी देखते हो तो आताओं के कारण धन व्यय होता है॥ द्वादश आख्यपद के और जो योग है उनका कथन करत है॥ लाभभाव में जो लाभयोगकारी योग है॥ सातवे आख्यपद में राहु अथवा केतु हो तो वास्तव्य अवस्था में कुक्षि (काँख) व्यथा से युक्त हो। केतु से अधिक कष्ट जानना॥ तथा सप्तम पद में केतु हो और पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो असमय में बाल सफेद हो जावे तथा असम साहसी और दीर्घेन्द्रियवाला हो॥ सप्तम पद में चन्द्र गुरु शुक्र इनमें से एक दो या तीनों हो तो उत्तरोत्तर (योगानुसार) लक्ष्मीवान् निश्चय होता है॥ हे मैत्रेय ! शुभग्रह उच्च राशि वा होकर सप्तम आख्य पद में हो ग्रह शुभ हो अथवा अशुभ हो किन्तु जातक कीर्तियुक्त धनी होता है। हे द्विजश्रेष्ठ ! हमने सप्तम भाव में राहु आदि ग्रहों के जा शुभाशुभ योग कह हे वे सब योग द्वितीयभाव में भी समझना॥१७-२८॥

उच्चो वाय हिरण्य वा जीवो वा शुभ एव वा ॥ एको बली धनमत धियदिशति देहिन् ॥२९॥ ये योगाश्च पदे लग्ने यथावद्गदतो मम ॥ कारकाशस्य कुण्डल्या निर्वाधका विचित्रयेत् ॥३०॥ आख्यद्विष्टमे पापे सौरे स्याच्छुभवर्जित ॥ तथा वित्तालये पापे पूर्ववज्जायते फलम् ॥३१॥ आख्यद्विष्टमे सौम्ये सर्वदिशाधिपो भवेत् ॥ सर्वजो यदि चेद्र स्यात्कविर्वादि च भार्गवः ॥३२॥ आख्यत्वेद्विकोणेषु तथा लाभपदे द्विज ॥ लग्नसप्तमराश्यघ्नौ सबले खेद सपुते ॥३३॥ श्रीमांश्च जायते नूनं देजे विख्यातिमान् भवेत् ॥ षष्ठाष्टमे व्यपे स्थाने श्रीमान् न भवेत्कदा ॥३४॥ पदाल्लग्न-सप्तमे वा केद्रे त्रिकोणोपचये ॥ सुदीर्घतत्त्विते सेटे भार्याभर्तुमुत्तमः ॥३५॥ एव - लग्नपदादिभ्यः पुत्रभावावि चितयेत् ॥ मित्रामित्रे विजानीयाद्वधपभावेषु वै द्विज ॥३६॥ षष्ठाष्टमे व्यपे सेटस्तत्तद्भावेषु तिष्ठति ॥ यद्भवेषु यद्वै लग्नारुहे विचित्रयेत् ॥३७॥ लग्नारुहे दारपद मिय केद्वगत यदि॥ लाभे वापि त्रिकोणे वा तथा राजधराधिपः ॥३८॥ आख्य पुत्रमित्रेस्तु त्रिलोककेद्वगो यदि ॥ द्वयोर्मैत्री त्रिकोणेषु साम्य द्वयोऽन्यथा भवेत् ॥३९॥ एव दारादि भावानामर्जयित्वारिमित्रता ॥ जातकद्वयमात्मोक्त्य चितवीथ विचक्षणैः ॥४०॥

१ इति श्रीबृहत्पारामारहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आख्यफलरूपेण नाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥

उच्चग्रह होने से सुवर्ण की प्राप्ति तथा गुरु या शुभग्रह हो तथा एक भी ग्रह बलवान् होकर द्वितीय पद में होने से जातक को धन की प्राप्ति कराते हैं। जो योग हमने आरूढ पद में कहे हैं वे योग पूर्वोक्त कारकाक्ष कुण्डली में भी निर्वाधरूप से समझना। आरूढ लग्न से अथवा ज्ञानसे शुभयोगरहित पापग्रह हो, द्वितीयभाव में भी पापग्रह हो तो धन हानि होती है। आरूढ पद से द्वितीयभाव में सौम्यग्रह हो और शुरु न हो तो सर्वदेशाधिपति तथा सर्वशास्त्रपारगामी होता है। आरूढ से केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभस्थान में लग्न तथा सप्तम राशि नवाशमें बलवान् शुभग्रह हो तो जातक श्रीमान्, देश में विख्यात होता है। किन्तु ६।८।१२ स्थान में यह योग होने से धनी नहीं होता। आरूढ पद से सप्तम स्थान या लग्न में, केन्द्र, त्रिकोण या उपचय स्थान में बलवान् ग्रह स्थित हो तो पुरुष को स्त्री का तथा स्त्री को सौभाग्य का अखण्ड सुल होता है। हे मैत्रेय! इसी प्रकार लग्नारूढ पद से भी पुत्रभाव आदि स्थान में ग्रहस्थिति विचार करना। बारहों भावों में मित्र, शत्रु आदि का भी विचार करना। इसी तरह छठे, आठवें, बारहवें भाव में जो ग्रह हो उनका मित्र शत्रुभाव भी इस आरूढ लग्न में विचार करना। सप्तम स्थान का लग्न ही आरूढपद कहा गया है, उनके स्वामी यदि केन्द्रस्थान में हो (चतुर्थ दशम में) अथवा लाभ या त्रिकोण स्थान में हो तो राजाधिराज होता है। लग्नारूढ यदि तीसरे, ग्यारहवें या केन्द्रमें हो तो पुत्र मित्र युक्त होता है। त्रिकोण के दोनों भावों में परस्पर मैत्री साम्यभाव है अन्य भाव से शत्रुता है। इस प्रकार स्त्री आदि भावों की परस्पर शत्रुमित्रता जानकर ग्रह, भाव दोनों का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए ॥२९-४०॥ भाव फल समाप्त ॥

इति श्री बृ० पा० हो० जा० पू० भावप्रकाशिकाया आरूढफलवचन नाम एकादशोऽध्यायः

पराशर उवाच

अधुना सप्रवक्ष्याम्युपपदं च द्विजोत्तम ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण जायते फलसूचकः ॥१॥
पदार्थद्वयस्यानेपदं चोपपदं स्मृतम् ॥ सप्तानुचरसप्तोपपदं च द्विजसत्तम ॥२॥

उपपदस्योपपदद्वितीये वा गुणविशेषफलमाह

पापाश्रान्ते पापयुते पापसं पापवीक्षिते ॥ पापसबधसयोगे उपपदद्वितीयके ॥३॥ प्रव्रज्यायोगो विज्ञेयः संन्यासो भवति द्रुवम् ॥ तथा भार्याविरोधी स्यादथवा स्त्रीविनाशकृत् ॥४॥ रवि पापत्वनास्थैव सिंहर्षे पापदे राति ॥ पूर्वोक्त नो फल ज्ञेय जायते गृहिणीमुखम् ॥५॥ मेयादिपापराशौ च संस्थिते दिवसाधिपे ॥ पूर्वोक्त च फल ज्ञेय प्रव्रज्यादारनाशकः ॥६॥ उपपदे द्वितीये वा शुभसबधदृष्टियुक् ॥ शुभसं शुभसयोगे पूर्वोक्तफलदो भवेत् ॥७॥ उपपदे द्वितीये वा नीचाशे नीचक्षेद्युक् ॥ नीचसबधयोगे वा प्रणीता दारनाशकृत् ॥८॥ उच्चराशे उच्चसंस्थे वा उच्चसबधदृष्टियुक् ॥ बहुदारा भवेयुश्च रूपलक्षणसमुत्ताः ॥९॥ उपपदद्वितीयेपि युग्मसं भेयरागितः ॥ मियुनेऽपि स्थिते विप्र बहुदारपुतो भवेत् ॥१०॥ उपपदे द्वितीयेपि स्वस्यामिक्षेद्युते ॥ उत्तरायुषि निर्दारी भवत्येव न सशयः ॥११॥ व्यस्ये वा तुते वापि दैत्येज्ये दारकारके ॥ अन्यराशौ च वा विप्र निर्दर उत्तरायुषि ॥१२॥ स्वराशौ

संस्थिते श्वेते नित्याख्ये दारकारके ॥ उत्तरायुषि निर्दारो भवत्येव न सशय ॥१३॥
 उपपदेशोपि तुगर्ले नित्याख्ये दारकारके ॥ उत्तमकुलाहारलाभो नीचस्येऽपि विपर्ययः ॥१४॥
 शुभसंबन्धयुक् दृष्टे उपपदे दारकारके ॥ सुदरी लभ्यते भार्या भव्या रूपवती द्विज ॥१५॥
 सवधे शनिराहुभ्यामुपपदे च शनिद्विज ॥ निर्दारकारके चापि शनिराहुयुतेऽधिते ॥१६॥ अथ
 वादयुतो विप्र भार्या सहितो द्विज ॥ स्त्रीविनाशो भवेन्नून तथा स्त्रीपरित्यागवान् ॥१७॥
 उपपदे च समुत्तौ शिखिशुक्रौ द्विजोत्तम ॥ रक्तप्रवररोगार्ता जायते तस्य भामिनी ॥१८॥
 उपपदादिषु समोगे बुधकेत्वोर्द्विजोत्तम ॥ अस्थिज्वरयुता बाला गृहे तस्य न सशय ॥१९॥
 रवी राहुस्तथा पशुरूपपदे योगकारक ॥ अस्थिज्वरवती बाला तप्ताणा च दिवानिशम् ॥२०॥
 उपपदे बुधकेतुभ्या योगसंबन्धके द्विज ॥ स्थूलाणी गृहिणी तस्य जायते नात्र सशय ॥२१॥
 उपपदे बुधक्षेत्रे भौमर्ले चाथया द्विज ॥ मदारी संस्थितौ तत्र प्राणरोगार्तिपित्तयुक् ॥२२॥
 सौम्यारौ चान्यक्षेत्रे वा उपदिश्ये शनिर्पुते ॥ कर्णरोगवती बाला नेत्ररोगयुता तथा ॥२३॥
 कुजसौम्यौ चान्यक्षेत्रे उपपदे द्विजोत्तम ॥ योगे स्वर्भानुदेवेज्यौ दतार्ता गृहिणी भवेत् ॥२४॥
 उपपदे तु कन्याख्ये अस्यर्लेऽपि तथा द्विज ॥ शनिस्वर्भानुयोगश्च पञ्चमी तस्य भामिनी ॥२५॥
 ये योगा पूर्वकथिता मया ते विप्रसत्तम ॥ शुभयुक् दृष्टितयोगे न भवेयु फलप्रदा ॥२६॥
 लग्नादुपपदाद्वापि यो राशि सप्तमो द्विज ॥ तन्मवाशा राशयोशा स्वसप्तमतदशका ॥२७॥
 तत्र पापे स्थिते दृष्टे उक्तयोगफल विदुः ॥ शनि शुक्रस्तथा चादि सप्तमराशिग्रहेषु च ॥
 त्रिकयोगकृते विप्र अपत्यरहितो नरः ॥२८॥ पदोपपदलप्रेषु पुत्रकारके द्विज ॥ पञ्चमस्ये गुरौ
 भानौ तत्र स्वर्भानुयोगकृत् ॥२९॥ बहुपुत्रो भवेन्नून प्रतापो बलवीर्ययुक् ॥ प्रचंडविजयी विप्र
 रिपुनिग्रहकारकः ॥३०॥ उक्तस्थाने निशानाथे एकपुत्रो भवेद्द्विजः ॥ उक्तस्थाने शुभे पापे
 पुत्रसौख्यं विलंबितम् ॥३१॥

उपपदफल विचार

हे मैत्रेय! अब उपपद का कथन करते हैं कि—जिसके ज्ञान से जातक के फल का ज्ञान होता है। पदार्कल लघ्न के १२ बारहवें स्थान के आरूढ की पद या उपपद सज्ञा है। (पदार्कल शब्द से यहा लघ्न समझना अर्थात् पद व्यत्यय करके आरूढ पद अर्थात् आरूढपद अर्थात् का पद=कारण=जन्म लघ्न) लघ्न वा अनुचर (पीछे वाला) सज्ञक होने से इसका नाम 'उपपद' है। उपपदस्थ उपपद द्वितीय भाव का फल—उपपद के द्वितीय स्थान में पापराशि हो, पापग्रहयुक्त हो, पापग्रहो स (उभयतः) आत्रान्त हो पापग्रहो से या ग्रह से दृष्ट हो, पापग्रहो से परम्परा संयोग हो तो ॥ घर से विगर्तभाव होकर निश्चय ही सन्धास होता है। भार्या से विरोध हो अथवा स्त्रीका मरण हो जावे। यहा (इस प्रकार में) सूर्य राहु में पापराशि में होने पर भी क्रूरग्रह नहीं माना जाता। अतः सूर्य योग हो तो पूर्वोक्त फल नहीं होता, प्रत्युत भार्या का सुख रहे ॥ (सिहराशि म भिन्न) मेघ आदि पापराशियों पर सूर्य पूर्वोक्त फल सन्धास, भार्या की हानि है। आरूढलघ्न अथवा आरूढ से द्वितीय में शुभराशि, शुभग्रह का योग और शुभग्रह की दृष्टि आदि सम्बन्ध हो तो पूर्वोक्त फल (उपपद में जो सूर्य के सम्बन्ध में कहा है) भार्या का सुख रहेगा। (यहा पूर्वोक्त फल पद में प्रवृत्त्या दारनाश अर्थ नहीं लेना क्योंकि आगे श्लोक २६ में स्पष्ट कहा है, उससे विरोध होगा) उपपद द्वितीय में नीचाश तथा

नीचग्रह युक्त हो तथा नीचग्रह से ही दृष्टिघादि सम्बन्ध हो तो विवाहित स्त्री की मृत्यु होती है॥ उच्चाश हो और उच्चराशिगत ग्रह हो, उच्चग्रह की दृष्टि हो तो रूपलावण्ययुक्त अनेक स्त्री प्राप्त हो॥ उपपद द्वितीस्थान में गुग्मराशि (मेघादि गणना से समराशि) हो तो भी अनेक भार्या होती है और यही फल मिथुन राशि में भी जानना॥ (इस वचन से गुग्मराशि तथा मिथुन अर्थात् वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन इतनी राशि समझनी चाहिये)॥ उपपद द्वितीय में भाव की राशि का स्वामी ग्रह ही स्थित हो तो उत्तर आयु (प्रौढ अवस्था) में तो स्त्री की हानि होती ही है॥ स्त्रीकारक होकर शुक्र यदि वृष या तुला राशि में हो अथवा अन्य (उच्च, मित्रराशि) में हो तो भी प्रौढ अवस्था में तो स्त्री की हानि होती है॥ स्थिरकारको में दारकारकग्रह स्वराशि में स्थित हो तो भी प्रौढ अवस्था में स्त्री की हानि होती है॥ उपपद का स्वामी उच्चराशि में हो और वही स्थिर 'दारकारक' हो तो उत्तम कुल से स्त्री का लाभ होता है। और नीचस्व हो तो नीच कुल की स्त्री प्राप्त होती है॥ हे मैत्रेय! शुभ दृष्टियुक्त दारकारक उपपद में हो तो अति रूपवती श्रेष्ठ भार्या प्राप्त होती है॥ उपपद में शनि हो या शनि राहु से सम्बन्ध हो या 'दारकारक' रहित होकर शनि राहु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो भार्या से सदा विद्वेष रहे अथवा स्त्री की हानि हो या स्त्री का परित्याग करनेवाला हो॥ हे मैत्रेय! उपपद में केतु शनि हो तो उसकी स्त्री को रक्तप्रदर की बीमारी रहे॥ यदि उपपद में बुध केतु हो तो उसकी भार्या को 'अस्थिराव' (हड्डी का घीन होना) की बीमारी हो॥ उपपद में सूर्य, राहु तथा शनि का योग हो तो जातक की भार्या अस्थिराव ज्वर रोग वाली होती है, दिनरात शरीर गर्म रहता है॥ उपपद में बुध, केतु का योग हो तो स्त्री स्थूल शरीरवाली होती है॥ उपपद में बुध की राशि हो या मंगल की राशि हो और शनि मंगल स्थित हो तो प्राणात कष्ट देनेवाली पित्त की बीमारी होती है॥ शनि मंगल अन्यराशि में होकर सम्बन्ध करते हो अथवा शनि उपपद में हो तो कान तथा आँसू के रोगवाली होती है॥ मंगल, बुध, अन्यस्थान में सम्बन्धित हो उपपद में गुरुराहु हो तो स्त्री दन्तरोगवाली होती है॥ उपपद में कन्या राशि हो या अन्य (मिथुन) राशि हो, शनि राहु का योग हो तो भार्या पण्डु (एकपाद विकल) होती है॥ हे विप्रवर! हमने जो योग (दुर्योग) कहे हैं, उनमें यदि शुभग्रह की दृष्टि अथवा योग हो तो पूर्वोक्त बुरा फल नहीं होता है॥ आरुढ लग्न और उपपद से जो सप्तम राशि है, उसमें जो नवाग्रह है, वह और उसमें सप्तम नवाग्रह में यदि पापग्रह हो या पापदृष्ट हो तो भी उक्तयोग भार्या सम्बन्धी फल जानना; शनि, शुक्र तथा बुध ये यदि सप्तम राशि के नवाग्रह में हो तो इन तीन ग्रहों के योग के फल से जातक रान्तान-रहित होता है॥ जन्मलग्न, आरुढलग्न तथा उपपद में पुत्र वारक युक्त, गुरु, सूर्य, राहु ये पञ्चमभाव में हो या गुरु, सूर्य स्थित और राहु योग करता हो तो निश्चय ही बहुत पुत्र होते हैं, जातक प्रतापी बलवान तथा विजयी एव मनुष्यो वो जीतनेवाला होता है॥ उक्त स्थान में चन्द्रमा हो तो एक पुत्र होता है और सौम्य-पाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो विलम्ब से पुत्र सुख होता है ॥१३-३१॥

उक्तस्थाने कुजश्राद्धिर्जायते च ह्यपुत्रवान् ॥ परपुत्रयुतो वापि सहोदमुतवान् भवेत् ॥३२॥

उक्तस्थाने चोजराशौ बहुपुत्रप्रदो भवेत् ॥ मिथुने गुग्मराशौ चेत्स्वल्पापत्यो भवेत्प्रः ॥३३॥

ग्रहकृमात्कुक्षिसंज्ञे तवीशं पंचमांशतः ॥ सिंहाधीशे रबी विप्र स्वल्पापत्यो भवेन्नरः ॥३४॥
 उपपदे सिंहलग्ने निशानाययुतेक्षितः ॥ स्वल्पप्रजो भवेद्विप्र तथा कन्याप्रजो भवेत् ॥३५॥
 सुतभावन्वांशाञ्च तथापि पुत्रकारकात् ॥ यद्वा त्रिंशांशकुंडल्यां पंचमांशात्तदा द्विज ॥३६॥
 तवीशाच्चिंतयेद्विप्र संततैर्योगमुत्तमम् ॥ एव सर्वप्रकारेण चिंतनीयं सदा बुधैः ॥३७॥ उपपदे
 शनी राहुभ्रातृस्थौ भ्रातृनाशदौ ॥ एकादशे ज्येष्ठभ्रातृस्तृतीये च कनिष्ठकम् ॥३८॥
 उपपदेकादश स्थाने तृतीये दानवेज्यके ॥ व्यवहितार्थनाशः स्याद्यथा समवति द्विज ॥३९॥
 लग्ने चापि लग्ने चापि दैत्याचार्ययुतेक्षिते ॥ व्यवहितांगनाशः स्याद्विंशकं द्विजोत्तम ॥४०॥
 तृतीयैकादशे विप्रं कुजेज्यबुधपंचदशमाः ॥ भ्रातृबाहुल्यता वरच्या प्रतापी बलवत्तरः ॥४१॥
 शनैरसंपुते दृष्टे तृतीयैकादशे द्विज ॥ कनिष्ठज्येष्ठयोर्नाशं भिन्नस्थे भिन्नभावद्वत् ॥४२॥
 भ्रातृस्थाने पुते सौरौ लाभस्ये वा तृतीयगे ॥ स्वस्य माता स्वस्तिमती अन्यप्रशयति वै द्विज
 ॥४३॥ तृतीयैकादशे केतुर्बाहुल्यं भगिनीमुत्तमम् ॥ भ्रातृस्वल्पसुखं तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम
 ॥४४॥ सप्तमे द्वादशे स्थाने संहिकेयं युतेक्षिते ॥ ज्ञानवांश्च भवेद्बालो बहुभाग्ययुतो द्विज
 ॥४५॥ सप्तमेशाद्वितीयस्थे पुच्छनाथयुतेक्षिते ॥ स्तब्धवाग्जायते बालस्तथा स्थलितबाग्
 द्विजः ॥४६॥ आरुदे शत्रुभाबस्थे पापस्थे शुभवर्जिते ॥ शुभसंबंधरहिते चोरो भवति
 निश्चितम् ॥४७॥ आरुदे वाजपि सौम्ये तु सर्वविशाधिपो भवेत् ॥ सर्वज्ञस्तत्र जीवः स्यात्कवि-
 र्वादी च भार्गवः ॥४८॥ आरुदेऽपि पदे चापि धनस्थे शुभसेचरे ॥ सर्वद्विष्याधिपो
 धोमाञ्जायते द्विजसत्तम ॥४९॥ उपपदाद्धनपो यत्र वर्तते तस्य वित्तभे ॥ पापसेचरसंपुते
 चोरो भवति निश्चितम् ॥५०॥

उक्त स्थान में मंगल, बुध के होने से पुत्रहीन होता है। अथवा दत्तक पुत्र हो या सहोत्प
 सुतवान् (भ्राता के पुत्र से पुत्रवाना) होता है॥ उक्त स्थान में विषम राशि होने से
 बहुपुत्रवान् हो। मिथुन या युग्मराशि हो तो जातक कम सन्तानवाला होता है॥ पूर्व बताये
 शरीर के अर्धाधिपति ग्रहों में जो कुक्षिसंज्ञक ग्रह हो उसकी राशि के स्वामी के पंचमांश में
 यदि सिंहाधीश सूर्य हो तो कम सन्तान वाला जातक होता है॥ उपपद में सिंहलग्न हो तथा
 चन्द्रमा युक्त अथवा दृष्ट हो तो केवल एक या दो कन्या होती है॥ पंचमभाव के नवांश से
 तथा पुत्रकारक से तथा त्रिंशांश कुण्डली में पंचमांश के स्वामी से उत्तम सन्तान का योगायोग
 देखना चाहिये। इस प्रकार ऊपर कहे गये सर्वप्रकारों से विचार करना चाहिये॥ उपपद में
 शनि, राहु, तृतीय स्थान में हों तो भ्राता की मृत्यु करते हैं। एकादश स्थान में ज्येष्ठभ्राता की
 तथा तृतीयस्थान में कनिष्ठ भ्राता की हानि (मृत्यु) करते हैं॥ उपपद के एकादश स्थान में
 या तृतीय में शुक्र हो तो दूर का तथा छिपे हुए (गुप्त) अर्थ भी जैसा सम्भव हो मध्य होता
 है॥ लग्न में या सप्तम में शुक्र युक्त हो या शुक्र की दृष्टि हो तो गुप्ताग की हानि होती है॥
 तृतीय तथा एकादश स्थान में म०, बु० वृ० चन्द्र हो तो भाइयों की सख्या बहुत होती है और
 जातक प्रतापी और बलवान् होता है॥ शनि ग्रह तृतीय तथा एकादश भाव को देखता हो,
 स्वयं स्थित न हो तो भी बड़े और छोटे भाई का नाश करता है। भिन्न राशि में हो तो भिन्न
 भाव की ही हानि करता है॥ शनैश्चर तृतीय या एकादश भाव में स्थित हो अथवा
 (भ्रातृस्थान) में हो तो अपनी माता सुखी रहे (जननी स्वस्थ रहे), यदि अन्य माता हो

तो नष्ट हो जावे॥ तृतीय एकादश में केतु हो तो भगिनी पुत्रों की बहुलता हो और भाइयों का मुख कम हो यह निश्चय है। सप्तम तथा द्वादश स्थान में राहु युक्त हो या दृष्ट हो तो जातक बड़ा भाग्यशाली और शानवान् होता है॥ सप्तमभाव के स्वामी से द्वितीय भाव में केतु स्थित हो या देखता हो तो जातक गूणा या तोतला होता है॥ आरूढलग्न छठे भाव में पापग्रह युक्त हो और शुभ सम्बन्ध रहित हो तो जातक निश्चय चोर होता है॥ आरूढलग्न में बुध हो तो महाराजा होता है। बृहस्पति हो तो सर्वज्ञकल्प और शुक्र हो तो कवि और व्याख्याता होता है॥ आरूढलग्न में या धनस्थान में शुभग्रह हो तो बहु धनवान् और बुद्धिमान् होता है॥ उपपद स्थान से द्वितीयस्थान का स्वामी जिस स्थान में स्थित हो उससे दूसरे स्थान में पापग्रह हो तो निश्चय चोर होता है॥३२-५०॥

सप्तमेशाद्वितीये च राहुस्ये मूक एव च ॥ खलस्थितो यदा विप्र दंतानामधिक भवेत् ॥५१॥
 शिखिगायातव्याधिः स्याच्छास्पादस्फुटोक्तवान् ॥ तत्र नानाग्रहैर्यो सिद्ध फलमुदाहरेत् ॥५२॥
 सप्तमेशाद्वितीये च छायासूनुपुते द्विज ॥ गौरः श्यामो नीलपीतो जायते बुद्धिमान्नरः ॥५३॥
 अमात्यानुचराद्विप्र देवभक्ति विचिंतयेत् ॥ नीचत्वोदेव नीचत्व शुभपापान्छुभाशुभम् ॥५४॥
 कारकांशे पापसहैः पापांशे पापयोगकृत् ॥ पापवर्गे शुभेर्होने जायते परजातवान् ॥५५॥ कारकांशे भवेत्पापो न ज्ञेयः परजातकः ॥ अन्येषां पापलेटानां योग घटस्त्वमाप्नुयात् ॥५६॥ अथवा रघुने पापे नाप योमो विचिंतयेत् ॥ शनिराहुयुतौ यत्र शनिराहुो क्षेत्रके द्विज ॥५७॥ परजातः प्रसिद्धोस्ति ह्यन्येभ्यो गुप्त एव च ॥ शुभवर्गे यदा लेटो वर्गोक्तानां यथा द्विज ॥५८॥ जारजः कथनमात्रे न तु जारज इत्यपि ॥ यत्र कुत्रापि स्वोच्चे द्वौ कुलमुख्यो भवेन्नरः ॥५९॥ आदिपदकं च पर्यन्ता ग्रहाः सौख्य विचिंतयेत् ॥ सार सारमह वक्ष्ये तवापे द्विजसत्तम ॥६०॥

इति श्रीबृहत्साराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे कारकमारकादिविचारकथन
 नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

सप्तमेश से द्वितीयभाव में राहु हो तो गूणा होता है॥ पापग्रहस्थित हो तो दांत अधिक होते हैं॥ केतु स्थित हो तो वातव्याधि हो अथवा तोतली बोलीवाला हो और अनेक ग्रह हो तो उन उन ग्रहों का भी फल जानना॥ सप्तमेश से द्वितीय स्थान में यदि राहु हो तो मिथित वर्ण और बुद्धिमान् होता है॥ भातृकारक से देवभक्ति का विचार करो। नीच होने से भक्ति की हीनता और शुभपाप दोनों प्रकार के मिथित योग होने से मिथित शुभाशुभ फल होता है॥ कारकांश लग्न में पापग्रह हो, पापनवांश में पापग्रहों का ही योग हो तथा पापग्रहों के ही वर्ग हो तो जारज होता है॥ कारकांश में केवल पापग्रह के योग से ही जारज नहीं होता, अन्य पाप ग्रहों का योग भी होना चाहिये॥ अथवा अष्टमभाव में पापग्रह होने में भी दसका निश्चय नहीं किंतु शनि राहु के क्षेत्र (राशि) में शनि राहु भी हो तो जारजरूप से दूगरे लोगों में प्रसिद्ध रहता है॥ शुभग्रहों के वर्ग में वर्गोक्त ग्रह हो तो कहने मात्र का जारज है, वास्तव में नहीं है, जहां कहीं किसी भी राशि आदि में दो ग्रह उच्च के हों तो जातक नुल में मुख्य होता है॥ इस प्रकार आदि के छ भावों के फल कहें॥ हे मैत्रेय । हम तुमको सार सार ही कहते हैं॥ उपपद फल समाप्त ॥५१-६०॥

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वखंडे भावप्रकाशिकाया उपपदफलकथन
 नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

अथ कारकमारकादिविचारमाह

पचम नवम चैव विशेषधनमुच्यते ॥ चतुर्थं दशम चैव विशेष सुखमुच्यते ॥१॥ चंद्रभानू चित्रा सर्वे मारके मारकाधिपा ॥ पष्ठाष्टमव्यपेशास्तु राहु केतुस्तथैव च ॥२॥ केन्द्राधिपतय सौम्या शुभ नैव दिशति च ॥ क्रूरा नैवाशुभं कुर्युः कोणपी शुभदायकौ ॥३॥ धनेशो हि व्यये शश्र्व सयोगात्फलदो मती ॥ लाभारि अधिपा पापा रक्षेशो न शुभप्रद ॥४॥ जायाकुटुंबका-धोशौ मारकौ परिकीर्तितौ ॥ क्रूरा केन्द्राधिपा भूपात्क्षीणचन्द्रो रविस्तथा ॥५॥ शनिर्ममश्च चित्रेया प्रबला ह्युत्तरोत्तरा ॥ लग्नाबुधूनकर्माणि प्रबलान्युत्तराणि हि ॥६॥ सुतधर्मो तथा स्थानी प्रबलौ चोत्तरोत्तरौ ॥ लाभारित्रितयस्थाने त्वधोध प्रबल भवेत् ॥७॥ पुनर्मरिक्तयोर्मध्ये ह्युत्तर प्रबल मतम् ॥ भाग्यस्थानाद्व्यय रध तस्माच्चैवाशुभं वदेत् ॥८॥ एतत्स्थानानुसारेण ग्रहाणां मानमालिखेत् ॥ चन्द्राद्री गुरुसितौ केन्द्रदोषो योऽप्युत्तरम् ॥९॥ तथैव च ग्रहा क्रूरा बल चैवोत्तरोत्तरम् ॥ भाग्येश सर्वदा सौम्यो न क्रूर फलदायक ॥१०॥ पुत्राधिपोऽपि शुभब-क्रूरोपि सुखद स्मृत ॥ त्रिनाभरिपुमृत्पूना पतयो दुःखदायका ॥११॥ शुभोपि शुभदो नैव दशाधामशुभस्तथा ॥ अष्टमाधिपतिर्दोषस्तुला भेषे न हि स्वचित्ताश्रितौ पष्ठाष्टदोषो न वृषभोपि न दोषभाक् ॥१२॥ पञ्चद्वारगतो राहु केतुश्च जनने नृणाम् ॥ पञ्चद्वारैरासमुत्कृस्तफलं प्रदिशेदलम् ॥१३॥

कारक-मारक विचार

भावाधिपतित्व से कारक मारक के विशेष नियम

पचम और नवमभाव विशेष धनभाव है। चतुर्थ और दशम विशेष सुखभाव है। सूर्यचन्द्र को छोड़कर बाकी ग्रह मारकाधिपति होकर मारक हात है। ६।८।१२ ये स्थान और राहु केतु तथा केन्द्राधिपति सौम्यग्रह ये शुभफल नहीं करते और केन्द्राधिपति क्रूरग्रह पापफल नहीं देते ॥ तथा ५।९ के स्वामी शुभफल दाता होते हैं। द्वितीय और द्वादशेश अन्यग्रह के साथ होकर फलदाता होते हैं। लाभ शत्रुभाव के स्वामी पापग्रह और अष्टमेश य शुभफल दायक नहीं होते। द्वितीय सप्तम के स्वामी मारक कहलाते हैं। केन्द्राधिपति पापग्रह, राज्येश क्षीणचन्द्र सूर्य शनि और मंगल ये उत्तरोत्तर प्रबल है। लग्न चतुर्थ सप्तम दशम ये उत्तरोत्तर बलवान् हैं। पचम और नवम य उत्तरोत्तर बलवान् हैं। लाभ शत्रु तथा तृतीय प्रथम प्रथम बलवान् है। दो मारको म दूसरा मारक द्वितीय बलवान् है। भाग्यस्थान बारहवा स्थान जो अष्टमभाव है उससे अशुभ फल का विचार करना। इन स्थानों के अनुसार ग्रहों का बलाबल जानना। केन्द्राधिपतित्व दोष क्रमशः चन्द्र, बुध गुरु म उत्तरोत्तर विशेष हैं। इनी प्रकार क्रूर ग्रहों म भी उत्तरोत्तर अधिक बल है। भाग्येश मदा ही थोड़ा है। वही भी पाप फलदायक नहीं होता। पञ्चमेश भी क्रूरग्रह हात पर भी शुभ फलदायक ही होता है। ३।११।६।८ इन स्थानों के स्वामी पाप फलदाता (दुःखदाता) हात है। शुभग्रह भी शुभदाता नहीं होता अपनी दशा में अशुभ फल दता है। अष्टमाधिपतित्व दाप तुला और वृष राशि में नहीं होता। वृश्चिक म पष्ठाष्ट दाप नहीं जाता। तथा वृष म भी पष्ठाष्ट दोष नहीं होता। राहु केतु जिन जिन भाव म हो और जिन जिन भावश म युक्त हो वे ही उनका फल कहना चाहिये। कारक मारक विचार समाप्त ॥१-१३॥

अथ मेघलग्रम्

मंदसौम्यसिताः पापाः शुभौ गुरुदिवाकरौ ॥ न शुभ योगमात्रेण प्रभवेच्छनिजीवयोः ॥१४॥
परतंत्रेण जीवस्य पापकर्मापि निश्चितम् ॥ कविः साक्षाद्निहंता स्यान्मारकत्वेन लक्षितः ॥१५॥
मंदादयो निहंतारो भवेयुः पापिनो ग्रहाः ॥ शुभाशुभफलान्येवं ज्ञातव्यानि क्रियौद्भवैः ॥१६॥

द्वादशराशि कारक मारक निर्णय

मेघ लग्न—शनि, बुध, शुक्र पापफलप्रद है। गुरु, सूर्य शुभ है। शनि और गुरु के कारक योग मात्र से शुभ फल नहीं हो सकता क्योंकि—(शनि के वाशेन होने) गुरु के व्ययेश होने से पाप भी हो गया है। शुक्र साक्षात् मारक है, २-७ स्वामीका होने से शनि आदि भी (मारक के सम्बन्ध से) मारनेवाले होते हैं। मेघ जन्म वाले के ये शुभाशुभ ग्रह कहे ॥१४-१६॥

अथ वृषलग्नम्

जीवशुद्धेदवः पापाः शुभौ शनिदिवाकरौ ॥ राजयोगकरः साक्षादेक एव रवे सुतः ॥१७॥
जीवादयो ग्रहाः पापा संति मारकलक्षणाः ॥ बुधस्तत्र फलान्येव ज्ञेयानि वृषजन्मनः ॥१८॥

वृष लग्न—गुरु, शुक्र, चन्द्रमा पापफलप्रद और शनि सूर्य शुभ है। एक शनि ही राजयोग कारक है। बुध, गुरु, पापी और मारक है। वृष लग्न में जन्मवाले के ये फल हैं ॥१७-१८॥

अथ मिथुनलग्नम्

भौमजीवारुणाः पापा एक एव कवि शुभः ॥ शनैश्चरेण जीवस्य योगो मेघभवो यथा ॥१९॥ नाय
शशौ निहंता स्यात्लक्षणं पापनिष्फलम् ॥ ज्ञातव्यानि द्वद्वजस्य फलान्येतानि सूरिभिः ॥२०॥

मिथुन लग्न—मंगल, गुरु, सूर्य पापफलप्रद हैं। केवल एक शुक्र ही शुभ है। गुरु, शनि का योग मेघलग्न के समान जानना। द्वितीयेश होने से चन्द्रमा मारक नहीं होता, इसका मारकत्व निष्फल है। मिथुन लग्न वाले के ये फल जानना ॥१९॥२०॥

अथ कर्क लग्नम्

भार्गवैदुमुतौ पापौ भूमुतागिरसौ शुभौ ॥ एक एव ग्रह साक्षाद्भूमुतो योगकारकः ॥२१॥ निहंता
रविजोऽन्ये तु मानिनो मारकाह्वयाः ॥ कुलीरसमवस्थेव फलान्युक्तानि सूरिभिः ॥२२॥

अथ सिंहलग्नम्

बुध शुक्र यमा पापा कुजेज्याकार्का शुभादहाः ॥ प्रभवेद्योगमात्रेण न शुभ गुरुशुक्रयोः ॥२३॥ इति
शन्यादयो पापा मारकत्वेन लक्षिताः ॥ एषं फलानि वेद्यानि सिद्ध्यन्त्यस्तु जनुर्मवेत् ॥२४॥

अथ कन्यालग्नम्

कुजजीर्षेदवः पापा एक एव भगुः शुभः ॥ भागविदुमुतावेव भवेतां योगकारकी ॥२५॥ निहंता
कधिरन्ये तु मारकास्तु कुजादयः ॥ प्रतीक्षेत् फलान्मुक्तान्येवं कन्याभवे बुधः ॥२६॥

कर्क लग्न-शुक्र, चन्द्रमा पापफलप्रद है। मंगल, शनि शुभ हैं। एक मंगल ही योगकारक है।
शनि मारक है। अन्य सूर्य, बुध, गुरु मध्यम है। कर्क लग्न वाले के ये फल मुनियों ने कहे
हैं ॥२१॥२२॥

सिंह लग्न-बुध शुक्र शनि पापफलदाता और मंगल, गुरु, सूर्य, शुभफलप्रद हैं। गुरु शुक्र का
सम्बन्ध (केन्द्र त्रिकोण योग होने पर भी) शुभ नहीं है। मारकलक्षण युक्त शनि बुध मारक है।
यह सिंह जन्म का फल है ॥२३॥२४॥

कन्या लग्न-चन्द्रमा, मंगल, गुरु, पापफलप्रद है। केवल एक शुक्र शुभ है। शुक्र और बुध
योगकारक है। शुक्र निहंता है, अन्य मंगल, शनि, मारक हैं। (सूर्य मध्यम है) कन्या लग्न वाले
के ये फल हैं ॥२५॥२६॥

अथ तुलालग्नम्

जीवार्कमहिजाःपापाः शनैश्चरबुधौ शुभौ ॥ भवेतां राजयोगस्य कारकी चंद्रतत्सुतौ ॥२७॥ कुजो
निहंति जीवाद्याः परेमारकलक्षणाः ॥ निहंताःफलान्येव काव्यो न तु तुला भवः ॥२८॥

अथ वृश्चिक लग्नम्

सौम्यभौमाः सिताःपापाःशुभौ गुरुनिशाकरौ ॥ सूर्यचंद्रमसावेवं भवेतां योगकारकी ॥२९॥ जीवो
निहंता सौम्याद्या हतारो मारकाद्वयाः ॥ तत्तत्फलानि विज्ञेयान्येवं वृश्चिकजन्मनः ॥३०॥

अथ धनुर्लग्नम्

एक एव कविः पापः शुभौ सौम्यदिवाकरौ ॥ योगो भास्करसौम्याभ्यां । निहंता भास्वतः सुतः
॥३१॥ प्राति शुक्रादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः ॥ तत्तत्फलानि सत्ताप्येवं धनुर्लग्नस्य
मनोविधिः ॥३२॥

तुलालग्न-सूर्य, मंगल, गुरु पापफलदाता हैं। शनैश्चर, बुध शुभ हैं। चन्द्रमा, बुध, राजयोग
कारक है। मंगल निहंता (मृत्युकारक) है। बाकी गुरु, शुक्र भी मारक है। तुला लग्नवाले के ये
फल बहे गये हैं ॥२७॥२८॥

वृश्चिक लग्न-मंगल, बुध, गुरु, पापफलदाता है। चन्द्रमा, गुरु शुभ है। सूर्य, चन्द्रमा,
राजयोग कारक है। गुरु मृत्युकारक है। बुध, शनि मारक के समान है। वृश्चिक जन्मवाने के ये
फल जानना ॥२९॥३०॥

धनुर्लग्न-गुरु यह एक ही पूर्ण फलदाता है। सूर्य, बुध शुभ हैं। सूर्य, बुध, राजयोग कारक है।
शनि मृत्युकारक है। शुक्र आदि मारक के समान है। यह फल धनु लग्न का

जानना॥३१॥३२॥

अथ मकरलग्नम्

कुजजीवेदय पापा शुभौ भार्गवचन्द्रजौ ॥ स्वयं चैव निहन्ता स्यान्मदो भौमादय परे ॥३३॥
तल्लक्षणानि हतार कबिरेक सुयोगकृत् ॥ ज्ञातव्यानि फलान्येव विबुधैर्मृगजन्मन ॥३४॥

अथ कुंभलग्नम्

जीवचन्द्रकुजा पापा एको दैत्यगुरुशुभ ॥ राजयोगकरो भौम कविश्चैव बृहस्पति ॥३५॥ निहता
मृति भौमाद्या मारकत्वेन लक्षिता ॥ एवमेव फलान्यूह्यान्येतानि घटजन्मन ॥३६॥

अथ मीनलग्नम्

मदशुकाशुमत्सौम्या पापा भौमविधू शुभौ ॥ महीमुतगुर्वोयोगे-कारकोनैव भूमुत ॥३७॥
मारकान्कारकान्वीक्ष्य मदजौ चैव मारकौ ॥ इत्पूह्यानि फलान्येव बुधेस्तु झपजन्मन ॥३८॥
एतच्छास्त्रानुसारेण मारकाभिर्द्दिशेद्बुध ॥ चद्रसूर्यौ विना सर्वे मारका परिकीर्तिता ॥३९॥
स्वदशाया स्वभुक्ती च नराणा निधन नहि ॥ क्वचिद्दशायामिच्छति स्वभुक्तौ न कदाचन ॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे कारकमारकादिविचारकथन
नाम त्रयोदशोऽध्याय ॥१३॥

मकर लग्न-चन्द्रमा मंगल गुरु पापफलदाता है। बुध शुक्र शुभ है। शनि स्वयं मृत्युकारक है। शुक्र एक ही राजयोगकारक है। मंगल आदि बाकी मारक के समान है। यह फल मकरलग्न वाले वा बहा गया है॥३३॥३४॥

कुम्भ लग्न-चन्द्र मंगल गुरु पापफलप्रद है। एक शुक्र शुभ है। मंगल शुक्र राजयोगकारक है। बृहस्पति मृत्युयोग कारक है। मंगल और बाकी ग्रह मारक के समान हैं। यह फल कुम्भ लग्नवाले के जानना॥३५॥३६॥

मीन लग्न-शनि, शुक्र सूर्य और बुध पापफलदाता है। मंगल चन्द्रमा, शुभ है। मंगल, गुरु राजयोगकारक हैं। मंगल, मृत्युकारक नहीं है। शनि बुध सम्बन्ध से मारक है। मीन लग्न वाले के ये फल कहे गये हैं॥३७॥३८॥

इस होराशास्त्र के अनुसार मारकों का विचार (तथा वाक्कों का भी विचार) नरे। चन्द्रमा और सूर्य के विना और ग्रह मृत्युकारक होने हैं। किसी भी मारक की दशा तथा उमके ही अन्तर में मृत्यु नहीं होती है। मारक की दशा में तो मृत्यु होती है, पर अन्तर में नहीं॥३९॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे भावप्रकाशिकाया विचारकथन
नाम त्रयोदशोऽध्याय ॥१३॥

अथ द्वादशभावनिरीक्षणमाह

तनो रूप च ज्ञान च वर्ण चैव बलाबलम् ॥ शील यै प्रकृति चाय तनुत्थानान्निरीक्षयेत् ॥१॥
 धनस्यापि कुटुम्बस्य मृत्युनालममित्रकम् ॥ धातुरत्नादिक सर्वं धनस्थानान्निरीक्षयेत् ॥२॥
 विक्रम मृत्युभ्रात्रादि चोपदेशप्रमाणकम् ॥ पित्रोर्वै मरण विद्यादृश्विक्याच्च निरीक्षयेत् ॥३॥
 बाहुनस्थाय बधूना मातृसौख्यादिकानपि ॥ निधिषेत्रगृह चापि हर्म्यारामादिकानपि ॥४॥
 धर्मस्य विमलस्थान पातालान्च निरीक्षयेत् ॥ यत्रमत्रौ तथा विद्या बुद्धेश्चैव प्रबधका
 पुत्रराज्यापभ्रशादि पश्येत्पुत्रालयाद्बुध ॥५॥ मातुजातकशकाना शत्रूश्चैव
 वणादिकन् ॥ सपत्नीमातरश्चापि ह्यरिस्थानान्निरीक्षयेत् ॥६॥ जाया
 मध्यप्रमाणं च व्ययभाव तथा निशि ॥ मरणं च स्वदेहस्य आधाभावाद्निरीक्षयेत् ॥७॥
 ऋणदानग्रहणयोगुदे चैवाकुरादय ॥ गत्यनुक्तादिक सर्वं पश्येद्द्विधाद्विचक्षणः ॥८॥ हर्म्यं धर्मं च
 श्यालं च भ्रातृपत्न्यादिकास्तथा ॥ तीर्थयात्रादिक सर्वं धर्मस्थानान्निरीक्षयेत् ॥९॥ राज्य
 चाकाशवृत्ति च मानं चैव पितुस्तथा ॥ प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानान्निरीक्षणम् ॥१०॥
 नानावस्तुमवस्थापि पुत्रजायादिकस्य च ॥ रिपूणा रिपवश्चैव भवस्थानान्निरीक्षणम् ॥११॥
 व्ययं च वैरियुक्ता रि फमत्यादिक तथा ॥ एव भावफलं सम्पत् तत्तत्संज्ञानं पूर्वकम् ॥१२॥
 व्यापान्चैव हि जातव्यं वेति सर्वत्र बुद्धिमान् ॥ यो यो भावपतिर्नन्दंस्त्रिकेशाद्यैश्च सयुतः ॥
 भाव न वीक्षते सम्पद्यग्रहो वापि भृतो यदा ॥१३॥ स्वबिरो वा भवेत्तेष्टः गुप्तो वापि प्रपीडितः
 ॥ तदा तद्भावजं सौख्यं नष्टं द्यूपाद्विशक्तिः ॥१४॥ यदा सौम्यप्रहृष्टो भावो भावेशसौम्ययुक्तः
 ॥ पुषा प्रबुद्धराजस्थः कुमारो वापि तद्भवेत् ॥१५॥ ईशेक्षणवशात्तत्र भावसौख्यं वदेद् बुधः ॥
 शुक्रः शुक्रश्च नेत्रं च चन्द्रमा मनसस्तथा ॥१६॥ आत्मा वै विनकुत्तत्र जीवो जीवितसौख्यकम् ॥
 क्रोध पराक्रमो भौमो बुधो बालत्वधीमतः ॥१७॥ मनिर्दुःखप्रदानान्च प्रपद्य पार्श्वेकरतया
 ॥१८॥ राहुरर्ध्वकविद्धि मुखनाभिपदस्तत् ॥ शिरो नेत्रे तथा कर्णे नासा चापि कपोलवौ ॥१९॥
 हनू मुखं तथा वाच्यं कलागौ बाहुकौ तथा ॥ पार्श्वे बाहुद्वये चैव कौटे नाभौ तथैव च ॥२०॥
 बस्तिनिगण्डे वृष्णावूक जानू च जघके ॥ पेदति चैव सर्वाणि सस्या द्युपुर्विचक्षणा ॥२१॥ तत्रे
 तत्कालद्रेष्णाने शिरादि परिकल्पयेत् ॥ तस्माद्यस्मिन्स्थितः खेटस्तत्र चिह्नं स्पृष्टं वदेत् ॥२२॥
 एव भेदानुभेदेन सर्वत्रैकोपलक्षयेत् ॥ सन्नेपेर्गतबुद्धितमन्यद्बुद्धधनुसारतः ॥२३॥

द्वादशभावनिरीक्षण

तत्र से विचारणीय— शरीर वा रूप, ज्ञान, वर्ण, बलाबल, चरित्र और प्रकृति ये बाते
 तत्र से विचारना चाहिये॥

द्वितीय भाव से—द्रव्य कुटुम्ब (परिवार) मृत्यु, कष्ट, शत्रु, सोना, चादी आदि धातु ये सब
 धनस्थान से विचारना चाहिये॥

तृतीयभाव से—बल, भ्राता, नौकर, परदेशपाया, माता पिता की मृत्यु ये तृतीय भाव से
 विचारना चाहिये॥

चतुर्थ भाव से—सवागी, बन्धुगुण, माता वा गुण राजाना, भवान, भूमि, मेन अमीना मन्दिर
 (देवस्थान) ये सब चतुर्थ से विचारना चाहिये॥

पंचम भाव से—यन्त्र, मन्त्र, विद्या, बुद्धि के सहायक, पुत्र, राज्य, हानि ये सब विचार पंचम भाव से करना चाहिये॥

छठे भाव से—मामा की मृत्यु तथा कष्ट आदि, शत्रु, व्रण, (फोड़ा, फुन्सी, दाद, खाज आदि) सपत्नी, सास आदि विचारना॥

सप्तमभाव से—भार्या, साधारण यात्रा, खर्च, अपना मरण, ये सब सप्तमभाव से विचारना चाहिये॥

अष्टमभाव से—कर्ज लेना या देना, गुदा का रोग (ववासीर आदि) गति (यात्रा) आदि आदि विचार अष्टमभाव से करना॥

नवमभाव से—मकान, धर्मकार्य, साले (पत्नीभ्राता) भाइयो की स्त्रिया, तीर्थयात्रा में यह सब नवमभाव से विचार करे॥

दशमभाव से—राज्य से सम्बन्ध, अस्थिर वृत्ति, सन्मान पिता का सुख, परदेश का रहना, कृण इनका विचार दशमभाव से करे॥

एकादश भाव से—अनेक प्रकार की वस्तुओं का विचार, पुत्र, स्त्री आदि परिवार का विचार, शत्रुओं का विचार एकादशस्थान से विचारे॥

द्वादशभाव से—अनेक प्रकार के तर्क, शत्रुओं के भेद विचार करे।

इस प्रकार ऊपर बताये गये विचार अपने भावों से करे॥

बारहवें भाव का जानने का विचार भी बुद्धिमान् को जान लेना चाहिये। जिस जिस भाव का स्वामी त्रिकस्थान ३।६।११ के स्वामी से संयुक्त हो तथा अपने स्थान को नहीं देखता हो और अवस्था विचार से मृत अवस्था में हो। अथवा वृद्ध सुप्त या प्रपीडित (पापाक्रान्त) हो तो निश्चय भाव से उस भाव से प्राप्त होनेवाला सुख नहीं है यह कहना॥ तथा जो भाव अपने स्वामी से युक्त वा दृष्ट हो या सौम्यग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो, अवस्था में युवा या कुमार अवस्था में प्रबुद्ध हो, दशमभाव में स्थित (भावेश) हो तो उस भाव का सुख पूर्ण प्राप्त होता है। शुक्र वीर्य का स्वामी है और नेत्र इन्द्रिय का भी स्वामी है॥ चन्द्रमा मन का स्वामी है॥ सूर्य आत्मा है। बृहस्पति जीवन और सुख का स्वामी है। मंगल क्रोध और पराक्रम का तथा बुध बाल्य अवस्था तथा बुद्धि का स्वामी है॥ शनि दुःखदाता और नीकर तथा पड़ोसी का और राहु ऐश्वर्य का स्वामी है।

ग्रहों के अंग (विभाग) —

सूर्य—मुख, शिर, नेत्र, ज्ञान, नाभि, पैर, तल ॥ चन्द्रमा—नासिका और कपोल॥ मंगल—हनु (ठोड़ी) मुखा बुध—कंठ, कर्ण, बाहू। गुरु—पार्श्व (पसली) दोनों हाथ। शुक्र—श्रोण (गोदी) नाभि। शनि—वस्ति (पेड़) लिंग गुदा, वृषण (अङ्कोश) राहु—ऊरु (ऊपर की आधी जंघा) जानू (घुटना) जघा, पैर। इस प्रकार से ग्रहों की मिर में पैर तक के अंगों में स्थिति है॥ इसी प्रकार से लग्न में तथा तात्कालिक द्रष्टव्य में शिर आदि अंगों की बल्यता बने और जिस भाव में शुभ या दूर जैसा ग्रह हो उसके अनुसार वैसा चिह्न उस अंग में बहे॥ इस तरह भेदभेद से सभी स्थलों में अपनी बुद्धि से भी कल्पना करे। हमने यह संक्षेप से कहा है॥ १-२३॥

अथ प्रथमभावफलम्

देहाधिप पापघृतोऽष्टमस्यो व्ययरिगो धागुहं निहन्ति ॥ सर्वत्र भावेषु च योजनीयमेवं
 बुधैर्भविशात्फलं हि ॥२४॥ एव तृतीयेपि च सप्तमेपि फलं विमृश्य कृतिभिः प्रयत्नात् ॥ तथा
 व्यये मित्रगृहे रिपौ मृते स्थिते विलग्राधिपतौ फलं स्यात् ॥२५॥ पापो विलग्राधिपतिर्विलग्रे
 घट्टे विलग्रे यदि बालकः स्यात् ॥ तदाऽतिरोगः स हि केंद्रसत्यत्रिकोणतामेषु गदं निहन्ति
 ॥२६॥ बलोनतामेव तु पापवत्तामेतस्य विलं फलमानुस्यताम् ॥ नीचारिसूर्यस्य गृहेषु तिष्ठन्
 स्वर्गादिऋक्षगदिगृहत्रये च ॥२७॥ देहाधिपश्चन्द्रगृहाधिपो वा तृतीयपरि फारिगतोऽबलः स्यात्
 ॥ नीचास्तगद्वघट्टगृहे स्थितो वा कार्यं शरीरेऽतिगदं करोति ॥२८॥ लग्नाधिपो वा जीवो वा
 शुक्रो वा यदि केन्द्रगः ॥ तस्य पुत्रस्य दीर्घायुर्धनवान् राजबल्लभः ॥२९॥ लग्नाधिपोऽप्रतबलश्च
 शुभैर्नवकेन दृष्टस्य ॥ केन्द्रस्थिते शुभावलोक्ये मृत्युहीनेऽपि दीर्घायुः ॥३०॥ केन्द्रत्रिकोणेषु न
 यस्य पापा लग्नाधिपो सुरगृहत्रयतुरष्टमस्य ॥ भुक्त्वा सुखानि विविधानि च पुण्यकर्मा जीवेत्
 वर्षशतमेव विमुक्तः ॥३१॥ लग्ने चरराशित्ये शुभग्रहनिरीक्षिते ॥ कीर्तिश्रीमान्महा-
 भोगी देहपुष्टिसमन्वितः ॥३२॥ जीवः शुक्रो बुधश्चन्द्रो लग्ने शशितमन्वितः ॥ लग्नात्केन्द्रगतश्च
 राजलक्षणसंयुतः ॥३३॥ लग्ने राहुसमायुक्ते तथा सोमनिरीक्षिते ॥ लग्नाशे मदसूरी चेज्जातश्च
 यमलो भवेत् ॥३४॥ जातो नरो बालविवेकितानो लग्ने फणिर्मन्दसमन्वितश्च ॥ लग्ने च पार्श्वे
 द्वितये च पापे निरीक्षिते जीवबुधेऽशुके ॥३५॥ रविचन्द्रौ च ह्येकस्यावेकाशकसमन्वितौ ॥
 त्रिमात्रा च त्रिभिर्मसैश्चात्र पित्रा च पोषितः ॥३६॥

प्रथम भावफल

देह (लग्न) वा स्वामी ६।८।१२ भाव में हो देह की आरोग्यता का सुख नहीं। इस योग को
 (६।८।१२ भावस्थिति को) १२ भावों में समझ लेना, यह भाव से फलन बन है। इसी तरह
 तृतीयभाव तथा सप्तमभाव में भी फल का विचार करना। और ६।८।१२ में यदि मित्र राशि
 में भावेश हो, तो भी यही फल कहना। यदि लग्न का स्वामी पापग्रह हो और लग्न में ही चन्द्र
 तथा लग्नेश हो तो जातक अतिरोगी रहे। और यदि लग्नेश केन्द्र त्रिकोण या लाभम्यान् में हो
 तो निरोग रहे। इस लग्नेश की बलहीनता एवं पाप शीलता देखकर अनुरूप फल का निर्देश
 करना। अथवा नीचराशि में या शत्रुक्षेत्री सूर्य के घर में हो या स्वराशि से तीन घरों में हो तो
 अनुरूप फल कहना। लग्नेश या चन्द्रराशिपति तीसरे, छठे, बारहवें स्थान में हो तो निर्बल
 होता है। नीचराशि में या अम्ता वा हो अथवा दूसरे, आठवें घर में हो तो जातक का शरीर में
 वृक्षता और बीमारी बढ़ता है। जिसके जन्मलग्न में लग्नेश या, गुरु शुक्र केन्द्रस्थान में हो
 उसके पुत्र की आयु बड़ी होती है और धनवान् तथा राजमान्य होता है। लग्नेश यदि बलवान्
 शुभग्रहों से दृष्ट होकर केन्द्र में स्थित हो तो (नवकेन दृष्टस्य अष्टमेऽथ दृष्टस्य । ऋषयः
 अन्ता) अष्टमशत में दृष्ट होने पर भी मृत्यु न होकर दीर्घायु होता है। जिस जातक के चन्द्र
 और त्रिकोण में पापग्रह न हो तथा लग्नेश और गुरु चतुर्थ और अष्टमम्यान् में हो तो वह
 जातक अनेक सुख भोगता हुआ नीरोगी होकर पुण्यकार्य करता है। लग्न वा स्वामी चरराशि
 में शुभग्रह में दृष्ट हो तो नीरोगी भोगी कीर्तियोग तथा धनवान् होता है। चन्द्रमा, बुध,

गुरु, शुक्र ये चारो शुभग्रह केन्द्र में हो तथा इनमें से किसी एक या दो के साथ चन्द्रमा लग्न में हो तो राजा के समान होता है॥ लग्न में राहु हो, चन्द्रमा देखता हो, लग्ननवाश में शनि गुरु हो तो जातक यमल (जोडा) होता है॥ लग्न में राहु, शनि हो और लग्न तथा पास की २ राशियों (२।१२) को पापग्रह तथा बु० गु० शु० देखते हो तो बालक नालवेष्टित होता है॥ सूर्य, शुक्र एक घर में हो तथा एक ही नवाश में हो तो तीन महीने तक इमाताओं द्वारा पालन हो या भाई, पिता पालन करे ॥२४-३६॥ प्रथमभावफल समाप्त॥

अथ द्वितीयभावफलम्

शुक्रेण युक्तो यदि नेत्रनाथ शुक्रस्य वार्जविग्रहत्रयस्य ॥ सबधनान्स्याद्यदि देहेन नेत्र विघ्नते विपरीतभावम् ॥३७॥ तत्र स्थितौ चंद्ररवी निशाध्य जात्यधता नेत्रपदेहपार्का ॥ पैर्क्षनाभेन युतास्तदाध्यं कुर्वन्ति मात्रादिफल तथेदृक् ॥३८॥ दोषकृत्र च सर्वत्र स्वोच्चस्वर्गगतो ग्रह ॥ पडादित्रयसंस्थैश्चेत्तद्विना दोषकृच्छुम् ॥३९॥ वागीशवाग्गृहाधीशौ पडादित्रयसंस्थितौ ॥ मूकता कुरुतोऽप्येव पितृमातृगृहाधिपा ॥४०॥ वागीशवाग्गृहाधीशा युतास्ते त्रयसंस्थिता ॥ कुर्वन्ति तेषां मूकत्वमेवमूह्य मनीषिभि ॥४१॥ कुटुम्बकारका केन्द्रत्रिकोणेपु गता ग्रहा सकुटुम्बकलत्रेशा कलत्र वा कुटुम्बकम् ॥४२॥ पश्यति च द्वयस्या वा यावत्तानत्रमाणकम् ॥ कलत्र निर्दिशेत्प्राज्ञोऽथवा तेषां च नो वदेत् ॥४३॥ विद्याधिपौ जीवदुधावविद्यामरित्रयस्यौ कुरुतोऽप्य तौ चेत् ॥ केन्द्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसंस्थौ प्रयच्छता द्रागनवद्यविद्याम् ॥४४॥ एव बुधस्यागिरसः पडादित्रय स्थितौ नीचग्रहोऽरिनाथ ॥ केन्द्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसंस्थौ धनाभिवृद्धि कुरुतस्तदेव ॥४५॥ धनाधिपौ गुरुस्य धनराशिस्थितो यदि ॥ भीमेन सहितो वापि धनवान् स नरो भवेत् ॥४६॥ धनेशे लाभराशित्ये लाभेशो वा धन गते ॥ तावुभौ केन्द्रराशित्यौ धनवान्त नरो भवेत् ॥४७॥ धनेशे केन्द्रराशित्ये लाभेशे तत्त्रिकोणेशे ॥ गुरुशुक्रयुते दृष्टे धनलाभमुदीरयेत् ॥४८॥ वित्तेशे रिपुभावस्ये लाभेशे तद्गते यदि ॥ वित्तलाभौ पापयुक्तौ दृष्टे निर्धन एव स ॥४९॥ वित्तलाभाधिपौ द्विस्थे पापलेखरसयुते ॥ जन्मप्रमृतिदारिद्र्यमिषास्त लभते नर ॥५०॥ पष्ठाष्टमव्ययस्येपु धनलाभाधिपौ स्थितौ ॥ लाभे कुजे धने राहौ राजवडाद्धनक्षय ॥५१॥ लाभे जीवे धने शुक्रे तदीशे शुभसयुते ॥ व्यये शुभग्रहयुते धर्ममूलाद्धनव्यय ॥५२॥ कुटुम्बरशेरधिप स सौम्ये केन्द्रेऽप्य सौम्ये च सुहृद्गृही वा ॥ सौम्यर्ययुक्ते यदि जातपुण्य सुदुस्तरसणवाग्विभूत ॥५३॥ कुटुम्बनाये परमोच्चयुक्ते देवेद्रपूज्ये च समीक्षिते वा ॥ तपाविधे तद्भयनेऽभिमात सहस्ररसो भुवनप्रतापो ॥५४॥ तप्राये भृगुणा बुधेन सहिते पारावतारो तथा स्वोच्चे चाप्य सुहृद्गृहे धनपतौ स्वस्यानकोलाहल ॥५५॥ कुटुम्बरशित्यपतौ यदि स्याद्भृगौ बुधे तादृशभावनाथे ॥ स्वोच्चे सुहृत्सेत्रगतेऽथवा स्यात्परोपकारी जनरक्षक स्यात् ॥५६॥ नेत्रेशे बलसयुक्ते शोभनासो भवेन्नर ॥ पष्ठाष्टमव्यये युक्ते नेत्रे वैकल्यमादिशेत् ॥५७॥ धनेशे पापसयुक्ते धने पापसमन्विते ॥ असत्यवादी पिशुन पवनव्याधिसयुत ॥५८॥

द्वितीयाभावफल

यदि नेत्रनाथ=द्वितीयश शुक्रयुक्त हो अथवा द्वितीय लग्न या सूर्य से सम्बन्ध करता हो तो नेत्र विद्रूप करता है॥ द्वितीय भाव में सूर्य चन्द्र स्थित हो तो जातक राज्यघ (रात में न

गुप्तपुक्तनिरोजिते ॥ भावे वा बससपूर्णं भ्रातृणां वर्धनं भवेत् ॥६३॥ केन्द्रत्रिकोणो वापि
स्वोच्चमित्रस्वयमी ॥ नाथे वा कारके वापि भ्रातृलाम बवेद्बुधः ॥६४॥ भ्रातृमे बुधसंयुक्ते तदीशे
चन्द्रसमुते ॥ कारके मंदसयुक्ते भगिन्येकाग्रतो भवेत् ॥६५॥ पश्चात्सहोदरेष्वेतत्तृतीयस्तु मृतौ
भवेत् ॥ कारके राहसयुक्ते विक्रमेशस्तु नीचगः ॥६६॥ पश्चात्सहोदराभावात्पूर्वस्तु त्रयकूट्रवेत् ॥
भ्रातृस्थानाधिपे केन्द्रे कारके तत्त्रिकोणमे ॥६७॥ जीवेन सहितश्चोच्चे सख्या द्वादश सोदराः
॥६८॥ अथ तृतीयगर्भश्च प्रथमाच्च तृतीये ॥ सप्तमश्चैव नवमो द्वादशश्च मृतिप्रदः ॥६९॥ शेषाः
सहोदरा दीर्घाः षड्भार्या यमलो भवेत् ॥ व्ययेशेन युते भीमे गुरुणा सहितोऽपि वा ॥७०॥
भ्रातृस्थाने शशियुते सप्तसख्यास्तु सोदरा ॥ एतेषा द्विप्रजानायः शुक्रयुक्तेसितेन हि अप्रे जात
रविर्हन्ति पृष्ठे जातं शनैश्चरः । अप्रज पृष्ठज हन्ति सहजस्यो धरासुतः ॥७१॥

तृतीय भावफल

तृतीयभाव का स्वामी भ्रातृ-स्थान को देखता हो, मगल सहित हो या तीसरे भाव में ही
हो ६।८।१२ में न हो तो भ्राता का सुख रहता है। वे मगल तथा तृतीयेन पापग्रह या
पापराशि से युक्त हो तो बन्धुधो को हटाने या मारनेवाला होता है। तृतीयभाव का स्वामी
यदि स्त्री ग्रह हो और स्त्रीग्रह ही भ्रातृ स्थान में हो तो अधिक भगिनी होती है और यदि
पुरुष राशि और पुरुष ग्रह हो तो अधिक भाई का सुख होता है। दोनों प्रकार का योग हो तो
बलाबल देखकर भाई या बहन या दोनों कहे। तृतीयेन और मगल अष्टमस्थान में पापदृष्ट
होकर स्थित हो तो भ्राताओ के नाश का कारण है। तथा वे दोनों पापदृष्ट या पापयुक्त हो
तो सब बिद्या व्यर्थ होती है। तृतीयराशि में कारकग्रह हो शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो अथवा
भ्रातृभाव में बलवान् होकर स्थित हो तो भाइयो की वृद्धि होती है। भ्रातृस्थान का स्वामी
अथवा भ्रातृकारक केन्द्र या त्रिकोण में उच्च या मित्र अथवा अपने वर्ग में हो तो भाइयो का
लाभ (वृद्धि) होता है। भ्रातृस्थान में बुध हो और भ्रातृस्थान के स्वामी के साथ चन्द्रमा हो,
भ्रातृकारक के साथ शनि हो तो अगली बार केवल एक भगिनी ही हो। पश्चात् एक सहोदर
हो और उसके नेष्ट योग हो तो तीसरे की मृत्यु होती है। भ्रातृ-कारक के साथ में राहु हो
और भ्रातृस्थान स्वामी भी नीचराशि का हो तो उसके बाद सहोदर भ्राता न होने से बही
तीसरा होता है। भ्रातृस्थान स्वामी केन्द्र में हो और भ्रातृकारक अपने से त्रिकोण में हो
शुक्र सहित उच्च राशि में हो तो १२ भाई होते हैं। इन १२ भाइयों में तीसरा, छठा, सातवा,
नौवा और बारहवा गर्भ या बालक नष्ट होता है। बाकी भाई दीर्घायु तथा बाकी कन्याये
होती हैं। (अथवा ३ बार २-२ यमल कन्या होकर ६ कन्याएँ होती हैं।) व्ययेश के साथ
मगल या गुह हो और तीसरे स्थान में चन्द्रमा हो तथा चन्द्रमा शुक्र युक्त या दृष्ट हो तो सात
भाई होते हैं। तृतीयभाव में सूर्य से बड़े भाई की, शनि से छोटे भाई की, मगल में छोटे बड़े
दोनों की मृत्यु होती है ॥५९-७१॥

अथ चतुर्थभावफलम्

गेहाधिनाथेन युते तु गेहे देहाधिनेनापि गृहाभिलषि ॥ युते पहादी तु विपर्ययः स्याद्गृहाधिपे
देहपती च तद्वत् ॥७२॥ केन्द्रत्रिकोणे च शुभग्रहेण युते समीचीनगृहाभिलषि ॥ क्षेत्रस्य क्षिता

सदनाधिपेन जीवेन चिन्ता तु मुखस्य काया ॥७३॥ दिव्यागनावाहनवस्तुमुपाचिता तु कार्या मृगुणा बुधेन्द्र ॥ तमशनिम्यामसिचित्यमापुरर्केण तात शशिनात्र माता ॥७४॥ बुधेन बुद्धिः सदनर्क्षसंस्था गतेन सप्तेशयुतेन च स्यात् ॥ केन्द्रत्रिकोणेषु गतेषु सप्त प्रपश्यता वापि स्वतुगयेन ॥७५॥ स्वकीयस्वाशमे स्वोच्चैः सुतस्थानस्थितो यदि ॥ मुखवाहनवृद्धिः स्याच्छब्दभेदादिवाद्य युक् ॥७६॥ विचित्रसौधप्राकार मण्डित गृहमाविशेत् ॥ कर्माधिपेन सहिते नामे चन्द्रार्कसूनुना ॥७७॥ बधुस्यानेश्वरे सौम्यशुभग्रहनिरीक्षिते ॥ शशिजे लग्नसयुक्ते बुधपूज्यो भवेन्नर ॥७८॥ मातु स्याने शुभयुते तदीशे स्वोच्चराशिगे ॥ कारके बलसयुक्ते मातृवीर्यागुरादिशेत् ॥७९॥ स्वतुगसस्ये हिवुकाधिनाये स्वर्क्षे त्रिभे मित्र गृहे स्थिते च ॥ शुभेन दृष्टे शुभसयुक्ते च क्षेत्राग्निवृद्धिः प्रवदेन्नराणाम् ॥८०॥ मुखेशे केन्द्रगावस्ये तथा केन्द्रे स्थितो मृगु ॥ शशिजे स्वोच्चराशिस्ये विद्वान्पण्डित एव स ॥८१॥ मुखे मदे रविपुते चन्द्रो भाग्यगतो यदि ॥ लाभस्थानगते भीमे गोमहिष्यादिलाभकृत् ॥८२॥ चरग्रहसमायुक्ते सुख तद्वाशिनायके ॥ पण्डे भीमे व्यपगते भूकृत्वा प्राप्नुते नरः ॥८३॥ लग्नस्थानाधिपे सौम्ये मुखेशे नीचराशिगे ॥ कारके व्यग्रराशिस्ये मुखेशे लाभसयुक्ते ॥८४॥ द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरवाहनलाभकृत् वाहने रविसयुक्ते स्वोच्चैः तद्वाशिनायके ॥८५॥ युते शुकेण सयुक्ते द्वात्रिंशे वाहन भवेत् ॥ कर्मशेन युते बधुनाये तुमाशतयुते ॥८६॥ द्विचत्वारिंशके प्राप्ते नरो वाहनभाग्भवेत् ॥ लाभेशे मुखराशिस्ये मुखेशे लाभसयुक्ते ॥ द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरवाहनलाभकृत् ॥८७॥

चतुर्थ भावफल

लग्नेश तथा चतुर्थेश चतुर्थभाव में हो तो मकान का लाभ हो। दोनों ६।७।८ में हो तो अपना भी नष्ट हो जावे। वही लग्न चतुर्थेश केन्द्र या त्रिकोण में हो और शुभग्रह से युक्त हो तो सुन्दर मकान प्राप्त हो। भूमि की चिन्ता (विचार) चतुर्थेश से और भूमि से सुख का विचार गुरु से करना। और शुक्र से सुन्दर स्त्री वाहन वस्तु आभूषण इतका विचार करना चाहिए। राहु शनि से आयु का विचार करना। सूर्य से पिता और चन्द्रमा से माता का विचार करना चाहिए। बुध से बुद्धि का विचार करना। बुध चतुर्थ भाव में सप्तमेश से युक्त हो तो श्रेष्ठ बुद्धिमान हो। यह बुध केन्द्र या त्रिकोण स्थान में अपने उच्चराशि का होकर स्थित हो सातवें स्थान को देखता हो तो और श्रेष्ठ है। चतुर्थ स्थानपति अपनी राशि का या अपने कारकाश में अथवा उच्च में होकर पञ्चम भाव में स्थित हो तो अनेक दायमुक्त सुख और वाहन की वृद्धि होती है। और विचित्र महल चारों तरफ से प्राकार युक्त होना चाहिये। दशमेश से युक्त तथा चन्द्रमा और शनि युक्त चतुर्थेश हो तो पूर्वोक्त प्रकार का महल (भारी मकान) होता है। तृतीयेश शुभग्रह तथा बुध की दृष्टियुक्त अथवा बुध लग्न में हो तो पंडितो से मान्य होता है। चतुर्थ स्थान में शुभग्रह हो और चतुर्थेश उच्च का हो तथा मातृकारक बलवान् हो तो माता की आयु बड़ी होती है। चतुर्थेश अपने उच्च में हो या स्वगृही हो अथवा मित्रराशि में होकर तीसरे घर में हो शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्या की भूमि की वृद्धि का सुख होता है। चतुर्थेश केन्द्र में हो केन्द्र में ही शुक्र हो तथा बुध उच्चराशि का हो तो जालक विद्वान् मेधावी होता है। चतुर्थ स्थान में सूर्ययुक्त शनि हो चन्द्रमा नवमस्थान में हो तथा लाभस्थान में मंगल हो तो गौ भैस आदि का लाभ है। सुसभाव में चरराशि या चर

रव (मातृवारक) हो और मुखेश षष्ठस्थान में हो, मंगल द्वादशस्थान में हो तो जातक मूक (गूपा) होता है॥ लग्नेश सौम्य बुध हो और मुखेश नीच राशि में हो, मातृकारक द्वादशभाव में हो, मुखेश लाभस्थान में हो तो जातक के १२ वे वर्ष में पालकी की सवारी का लाभ होता है॥ चतुर्थभाव में सूर्य हो चतुर्थेश उच्चराशि का हो और शुक्र युक्त हो तो ३२ वे वर्ष में सवारी का लाभ होता है॥ चतुर्थेश दशमेश से युक्त उच्चराशि (परमोज्ज्व) में हो तो ४२ वे वर्ष में बाहन का लाभ होता है॥ लाभेश चतुर्थभाव में हो तथा चतुर्थेश लाभ स्थान में हो तो १२ वे वर्ष में पालकी (या रिक्सा) का लाभ हो॥७२-८७॥

अथ पचमभावफलम्

पडाद्वित्रयसंस्थे तु सुताधीशे स्वपुत्रता ॥ केन्द्रनिकोणसंस्थे तु पुत्रलाभाभिसम्भव ॥८८॥ सत्पुत्रताभ सुतपे सुरेज्ये शुभेषु गेहेषु गते च भानी ॥ एक स्थिर स्यात्सुत एक एव स्थित शुभ केन्द्रनवात्मजस्य ॥८९॥ पितापि चित्यो नवमे सुतर्त्त एवविध चितनमूहनीयम् ॥९०॥ क्षेत्रस्य कारको भीम कर्मस्थानेऽप्यय विधि ॥ अस्तगते पचमेशे पापक्राते च दुर्बले ॥९१॥ पष्ठे नीचे सुताधीशे काकवध्या विशेषत ॥ षष्ठस्थाने सुताधीशे लग्नेशे कुजवेधमनि ॥ त्रिपुते प्रथमापत्य काकवध्यात्वमाप्नुयात् ॥९२॥ सुताधीशो हि भीमस्य पडाद्वित्रयसंस्थित ॥ काकवध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि ॥९३॥ सुतेशो नीचगो धन सुतस्थान न पश्यति ॥ तत्र सौरिबुधौ स्याता काकवध्यात्वमाप्नुयात् ॥९४॥ भाग्येशो मूर्तिवर्ती च सुतेशो नीचगो यदि ॥ सुते केतुबुधौ स्याता सुत कष्टाद्विनिर्दिशेत् ॥९५॥ पडाद्वित्रयसंस्थोऽपि नीचो वाऽप्यरिसंस्थित ॥ पापाक्राते सुतस्थाने पुत्र कष्टाद्विनिर्दिशेत् ॥९६॥ पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे र्मदक्षेत्रेऽथवा पुन ॥ मदे माद्युते दृष्टे तदा दत्तादय सुता ॥ रविचन्द्रौ यदैकस्थ्यावेकाशक्तमन्वितौ ॥९७॥ त्रिमात्राभिरसौ भ्राता द्विपित्राऽपि च पोषक ॥ पचमे पद्गृहे युक्ते तदीशे ध्ययरशिगे ॥ लग्नेशे दुर्बलो यस्य दत्तपुत्रभवोदय ॥९८॥ सुतभवने भृगुजीवसौम्यनाथे बलसहिते रविलोकिते युते वा ॥ बहुसुतजनन वदति सत सुतभवनेशबलेन चित्यमेतत् ॥९९॥ सुतेशे शशिपुक्ते च त्रिराश्यरागतेऽपि च ॥ तथैव कन्यकालाभ प्रबन्धमतिमाध्न ॥१००॥ सुतेशे नरराशिस्ये राहुणा सहित शशी ॥ पुत्रस्थान गते मदे परजात बदेच्छिशुम् ॥१०१॥ सुतेशे राहुसयुक्ते सुतस्थान समाश्रितम् ॥ न वीक्ष्यतेन्दुगुरुणा परजातो भवेन्नर ॥१०२॥ न लग्नमिदु च गुरुर्निरौलिते न वा शशाको रविणा समागत ॥ सपापकार्केण युते नवाशके परेण जात प्रयदति निश्रितम् ॥१०३॥ लग्नाद्द्वादशे च द्रे लग्नादष्टमगे गुरु ॥ पापयुक्तेन सदृष्टे अन्यबीज न सशय ॥१०४॥ पुत्रस्थानाधिपे स्वोल्बे लग्नाप्त्वेद्द्वित्रिकोणो ॥ गुरुणा सयुते दृष्टे पुत्रभाग्यमुपैति स ॥१०५॥ त्रिचतु पापसयुक्ते सुतेशेनाधिपे तु युक्त ॥ सुतेशे नाशराशिस्ये नीचसंस्थौ भवेच्छिशु ॥१०६॥ पुत्रस्थान गते जीवे तदीशे भृगुसयुते ॥ द्वात्रिंशे च त्रयस्त्रिंशे वत्सरे पुत्रलाभकृत् ॥१०७॥ सुतेशे केद्रभावस्ये कारकेण समन्विते ॥ पद्विंशे त्रिंशब्दे च पुत्रोत्पत्ति विनिर्दिशेत् ॥१०८॥ लग्नाद्भाग्यगते जीवे जीवाद्भाग्यगते भृगुलग्नेशे भृगुसयुक्ते चत्वारिंशे सुत लभेत् ॥१०९॥ पुत्रस्थान गतो राहुस्तदीशे पापसयुते ॥ नीचराशिरगते जीवे द्वात्रिंशे पुत्रमृत्युद ॥११०॥ जीवात्यचमगे पापे लग्नात्पत्र गतेऽपि च ॥ पद्विंशे च त्रयस्त्रिंशे चत्वारिंशे सुतक्षय ॥१११॥ लग्ने भादिसमायुक्ते

लग्नेशे नीचराशिगे ॥ षट्पचाशदशब्देषु पुत्रशोकसमाकुल ॥११२॥ चतुर्थे पापसयुक्ते षष्ठे पापसमन्विते ॥ सुतेशे परमोच्चस्थे लग्नेशेन समन्विते ॥११३॥ कारके शुभसयुक्ते दशसख्यास्तु सूनव ॥ परमोच्चगते जीवे धनेशे राहुसयुक्ते ॥११४॥ भाग्येशे भाग्यसयुक्ते सख्याता नवसूनव ॥ पुत्रभाग्यगते जीवे सुतेशे बलसयुक्ते ॥११५॥ धनेशे कर्मराशिस्थे बसुसख्यास्तु सूनव ॥ पचमात्पचमे भदे सुतस्थे च तद्विधरे ॥११६॥ सूनव सप्तसख्याश्च द्विगर्भे यमल भवेत् ॥ वितेशे पचमस्थे च सुतस्थे पचमाधिपे ॥११७॥ षट्सख्या च सुतप्राप्तिस्तेषां च त्रिप्रजामृति ॥ मदात्पचमगे जीवे जीवात्पचमगे रवी ॥११८॥ सूर्यात्पचमगे राहौ पुत्रमेक विनिर्दिशेत् ॥ पचमे पापसयुक्ते गुरो पचमगे शनि ॥११९॥ कलत्रान्तरे पुत्रलाभ कलत्रत्रयभाग भवेत् ॥ पचमे पापसयुक्ते गुरो पचमगे शनौ ॥१२०॥ पचमे भीमसयुक्ते लग्नेशे धनसगते ॥ जात जात विनाश च दीर्घायुश्चैव मानव ॥१२१॥

पचम भावफल

पचमेश ६।७।८ इन स्थानों में हो तो पुत्रहीन होता है। और पचमेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो पुत्रलाभ की संभावना है। पचमेश यदि गुरु हो और सूर्य शुभस्थान में हो तो एक पुत्र स्थिर रहता है पर यदि पचमेश केन्द्र या नवमभाव में हो। नवमभाव में तथा पचमभाव में इसी प्रकार के योग हो तो उन पर से पिता का विचार भी करे। कारक मंगल दशमभाव में हो, पचमेश अस्त हो या पापग्रहों के बीच में (पापाक्रान्त) तथा बलहीन हो और पुत्रस्थान पचम का स्वामी नीचराशि का बलहीन हो तो स्त्री काकबन्ध्या (एक सन्तान होने के बाद और सन्तान न हो) होती है। पचमेश षष्ठस्थान में हो और लग्नेश मंगल की राशि में हो तो प्रथम सन्तान के बाद स्त्री काकबन्ध्या होती है। सुताधीश नीचराशि का होकर ६।७।८ स्थानों में हो और पचमस्थान में केतु या बुध हो तो स्त्री काकबन्ध्या होती है। जिस जन्मकुण्डली में सुतेश नीच का होकर सुतस्थान को न देखता हो और सुतस्थान में शनि बुध हो तो स्त्री काकबन्ध्या होती है। भाग्येश लग्न में हो, पचमेश नीचराशि का हो और सुतस्थान में केतु, बुध हो तो बड़े कष्ट से पुत्रजन्म होता है। सुतेश नीच का होकर छठे भाव में या सातवें आठवें स्थान में जन्मराशि में हो और सुतस्थान में पापग्रह हो तो बड़े कष्ट से पुत्रजन्म होता है। पुत्रस्थान में बुध की राशि ३।६ हो या शनि की राशि १०।११ हो और पचमभाव को शनि या मादीयुक्त या देखते हो तो दत्तक आदि पुत्र होते हैं। सूर्य, चन्द्रमा यदि एक स्थान में एक ही नवमास में हो तो बालक तीन माताओं से भाई और दो पिता से पोषित होता है। पचमेश छठे घर में हो षष्ठेश बारहवें स्थान में हो और लग्नेश दुर्बल हो तो दत्तक पुत्र होता है। सुतस्थान में बुध, गुरु या शुक हो और बलवान् हो, सूर्ययुक्त हो या देखता हो और सुतेश बलवान् हो तो बहुत पुत्र होते हैं। सुतेश चन्द्रमा से युक्त हो और त्रिराशिपति भी चन्द्रमा हो तो बन्ध्या होवे। सुतेश पुरुष राशि में हो चन्द्रमा राहु के साथ हो और पचमभाव में शनि हो तो सन्तान जारज है। सुतेश राहु के साथ होकर सुतस्थान में ही स्थित हो और चन्द्रमा या गुरु की दृष्टि नहीं हो तो सन्तान जारज है। लग्न और चन्द्रमा को गुरु नहीं देखता हो और चन्द्रमा सूर्ययुक्त नहीं हो तथा पापग्रह युक्त सूर्य पुत्र नवाश में हो तो जारज सन्तान

है। लग्न से द्वादशभाव में चन्द्रमा हो और आठवें गुरु हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो सन्तान जरूर है॥ और पुत्रस्थानपति उच्च वा हो लग्न से दूसरे तथा त्रिकोण में हो और बृहस्पति की दृष्टि हो या युक्त हो तो भाग्यशाली पुत्र होता है॥ तीन चार पापग्रहों से युक्त पञ्चमेश अष्टमभाव में हो तो नीची श्रेणी में रहनेवाला बालक होता है॥ गुरु पुत्रभाव में हो, सुतेश शुक के साथ हो तो ३२ या ३३ वें वर्ष में पुत्र प्राप्ति होती है॥ सुतेश केन्द्र में हो और पुत्रकारक से युक्त हो तो ३०-३६ वें वर्ष में पुत्रप्राप्ति होती है। लग्न से नवमस्थान में बृहस्पति हो तथा गुरु से नवमभाव में शुक्र हो लग्नेश भी शुक के साथ हो तो ४० वें वर्ष में पुत्र होता है॥ और पुत्रस्थान में राहु हो सुतेश पापग्रह हो एवं गुरु नीच में हो तो ३२ वें वर्ष में पुत्र की मृत्यु होती है॥ बृहस्पति पचम स्थान में पापग्रह युक्त हो तथा पचमस्थान में भी पापग्रह हो तो २६, ३३, ४० वें वर्षों में पुत्रक्षय होता है॥ लग्न में मालिनी (शनि का मुनिक लग्न) लग्नेश नीचराशि में हो तो ५६ वें वर्ष में पुत्रशोक होता है॥ चतुर्थ तथा षष्ठस्थानों में पापग्रह हो और सुतेश परमोच्च का होकर लग्नेश से युक्त हो पुत्रकारक भी शुभग्रह संयुक्त हो तो दस पुत्रसन्तान होती है। बृहस्पति परमोच्च में प्राप्त हो धनेश राहुयुक्त हो, भाग्येश भाग्यस्थान में हो तो ९ पुत्रसन्तान होती है। बृहस्पति पुत्र या भाग्यस्थान में हो तथा पुत्रेश बलवान हो, धनेश दशम में हो तो ८ पुत्र होते हैं। पचम के पचम (नवम) में शनि हो तथा नवमेश पचम में हो तो ७ पुत्र होते हैं एवं दो गर्भों में २-२ (जुड़वा) होते हैं। धनेश तथा पञ्चमेश पचमभाव में हो तो छ पुत्र होते हैं और उनमें से तीन सन्तान नष्ट होती है। शनि से पचमस्थान में गुरु हो, गुरु से पचम सूर्य हो सूर्य से पचम राहु हो तो एक पुत्र होता है॥ पचमस्थान में पापग्रह हो, गुरु से पचमभाव में शनि हो तो दूसरी या तीसरी स्त्री से पुत्र हो और वह जातक ३ स्त्रीवाला हो। पचम स्थान में पापग्रह हो तथा गुरु से पचम में शनि हो पचम स्थान में मंगल भी हो तथा लग्नेश दूसरे भावों में हो तो अनेक पुत्र होकर भी न रहे तथा जातक दीर्घायु होता है॥ ८८-१२१॥

अथ षष्ठभावफलम्

षष्ठाधिपोऽपि पापग्रहे वाप्यष्टमे स्थित तदा वधो भवेद्देहे कर्मस्थानेऽप्यय विधि ॥ १२२॥
एव पित्रादिभावेशास्तत्कारकसंयुता ॥ वणाधिपयुताश्चापि षष्ठाष्टमयुता यदि ॥ १२३॥
तेषामपि वध वाध्यमादित्येन शिरोवणम्॥ इन्दुना च मुखे फटे भीमेन ज्ञेन नामिषु ॥ १२४॥
गुरुणा नासिकाया च भ्रूयुणा नयने पदे ॥ शनिना राहुणा कुली केतुना च तथा भवेत् ॥ १२५॥
लग्नाधिप कुजक्षेत्रे बुधस्य यदि सस्थित ॥ यत्र कुज स्थितो ज्ञेन वीक्षितो मुखरूपप्रद ॥ १२६॥
लग्नाधिप कुजबुधौ चन्द्रेण यदि सस्थितौ ॥ राहुर्वा शनिना सार्द्धं कुष्ठं तत्र विनिर्दिशत् ॥ १२७॥
लग्नाधिप विना लग्ने स्थितश्चेत्तमसा शशो ॥ श्वेतकुष्ठं तदा कृष्ण कुष्ठं च शनिना सह ॥ १२८॥ कुजेन रक्तकुष्ठं स्यात्तत्तदेव विचारयेत् ॥ लग्ने षष्ठाष्टमाधोशी रविणा यदि सस्थितौ ॥ १२९॥ ज्वरगद कुजे यदि शस्त्रघ्नमयापि वा ॥ बुधेन पित्त गुरुणा रोगमाय विनिर्दिशत् ॥ १३०॥ स्त्रीभिः युक्तेण शनिना वायुना संयुतो यदि ॥ गण्डश्चाण्डालतो नामौ तम केत्वोर्गृहे भयम् ॥ १३१॥ चन्द्रेण गण्डसत्तिले कफश्लेष्मादिना भवेत् ॥ एव पित्रापि भावानां तत्कारक योगत ॥ १३२॥ गण्डे तेषां भवेदेवमूत्रमत्र मनीषिभिः ॥

हृत्तशत्रुप्रहादास्तिगजवाजिघनाधिपा ॥१३३॥ श्रीपतिः स्वोच्चतेजस्वी गृहारामसुखी भवेत् ॥
 भीष्मै विरचित पुत्रा प्रभाविरिपुनीचयो ॥१३४॥ तदस्या सतिगितो देहे गजसूमिसहस्रभृत् ॥
 रोगस्थानगते पापे तदीशे पापसयुते ॥१३५॥ राहूणा सयुते मदे सर्वदा रोगसयुत ॥
 रोगस्थानगते भीमे तदीशे रघुसयुते ॥१३६॥ षड्वर्षेद्वादेशे वर्षे ज्वररोगी भवेन्नर ॥
 षष्ठस्थानगते जीवे तद्गृहे चन्द्रसयुते ॥१३७॥ द्वाविंशैकोनविंशे कुष्ठरोग विनिर्दिशेत् ॥
 रोगस्थान गतो राहु केद्रे भादिसमन्वित ॥१३८॥ लग्नेशे नाशराशिस्थे षड्विंशे क्षयरोगता ॥
 व्ययेशे रोगराशिस्थे तवीशे व्ययराशिमे ॥१३९॥ त्रिशद्वर्षेकोनवर्षे गुल्मरोग विनिर्दिशेत् ॥
 रिपुस्थानगते चन्द्रे शनिना सयुते यदि ॥१४०॥ पचपचाशताब्देपु रक्तकुष्ठ विनिर्दिशेत् ॥
 लग्नेशे लग्नराशिस्थे मदे शत्रुसमन्विते ॥१४१॥ एकोनषष्टिवर्षे तु वातरोगादितो भवेत् ॥
 रघुशे रिपुराशिस्थे व्ययेशे लग्नसंस्थिते ॥१४२॥ चन्द्रे षष्ठांशसयुक्ते वसुवर्षे मृगाद्रूपम् ॥
 षष्ठाष्टमगतो राहुस्तस्मादष्टगते शनी ॥१४३॥ वत्तराग्रिम्य तस्य त्रिवर्षे पक्षिदोषभाक् ॥
 ॥१४४॥ षष्ठाष्टमगते सूर्ये तद्द्वये चन्द्रसयुते ॥ पञ्चमे नवमेऽब्दे तु जलभीति विनिर्दिशेत् ॥
 ॥१४५॥ अष्टमे मदसयुक्तेरघ्नाद्री द्वादशे कुज ॥ त्रिशाब्द च दशेऽष्टे तु स्फोटकादिविनिर्दिशे
 त् ॥१४६॥ रघुशे राहुसयुक्ते तदशेरध्रकोणो ॥ द्वाविंशेऽष्टादशे वर्षे ग्रयिमेहादिपीडनम् ॥
 ॥१४७॥ लाभेशे रिपुभावस्थे तदीशे लाभराशिमे ॥ एकत्रिंशैकचत्वारि शत्रुमुलाढनव्यय ॥
 ॥१४८॥ सुतेशे रिपुभावस्थे षष्ठेशे गुरुसयुते ॥ व्ययेशे लग्नभावस्थे तस्य पुत्री रिपुर्भवेत् ॥
 १४९॥ लग्नेशे षष्ठराशिस्थे तदशे षष्ठराशिमे ॥ दशमैकोनविंशेऽब्दे शुनकाद्वीतिरुच्यते
 ॥१५०॥

षष्ठभावफल

षष्ठस्थान का स्वामी पापग्रह हो और लग्न में या अष्टमभाव में हो तो देह में फोड़ा-कुन्सी होते हैं। दशमस्थान से भी इसी तरह विचार करना। इसी प्रकार पिता आदि भावों के स्वामी भी अपने २ कारक (पितृकारक) आदि से तथा षष्ठेश से युक्त हो ६।८ भावगत हो तो उनके भी व्रण (फोड़ा आदि) कहना चाहिये। विशेष षष्ठाधिपति यदि सूर्य हो तो शिर में घाव या फोड़ा, चन्द्रमा में मुख में या कंठ में, मंगल तथा बुध में नाभि में, गुरु में नासिकामें, शुक्र में आंख तथा पैर में, शनि, राहु, तथा केतु में बाँस में फोड़ा या घाव अथवा नासूर होता है। लग्न का स्वामी मंगल या बुध के स्थान में किसी भी स्थान में हो किन्तु बुध की दृष्टि हो तो मुख में रोग होता है। लग्न के स्वामी मंगल या बुध में से कोई हो और चन्द्रमा की दृष्टि हो अथवा शनि के साथ राहु लग्न में हो तो कुष्ठ (बोढ़) होता है। लग्नेश के बिना लग्न में राहु के साथ चन्द्रमा हो तो श्वेत कुष्ठ होता है और राहु के साथ शनि हो तो बाला बोंड होता है। ऐसे ही मंगल राहु के योग में रक्तकुष्ठ होता है। इसी प्रकार तत्तद् भाव का विचार करना चाहिए। लग्न में ६।८ के स्वामी यदि सूर्य के साथ हो तो ज्वर, गलगण्ड रोग होते हैं। मंगल हो तो ग्रन्थि अथवा हथियार का घाव, बुध में पित्त सम्बन्धी बीमारी हो। यदि बृहस्पति में षष्ठ योग हो तो नीरोग रहे। यह योग भुज के साथ हो तो त्रिभुज के द्वारा, शनि के साथ हो तो वायु द्वारा गण्डरोग व्रण या घाव होता है। राहु में चाण्डाल के द्वारा केतु में घर में भय चन्द्रमा में जल में या बर्फ श्रेष्ण में गण्ड (घाव आदि) जानना। इसी प्रकार पिता, माता

रादि के कारको के साथ उपर्युक्त योग हो तो उनको भी व्याधि, भय होता है। (यहा से २ श्लोक आत्मकारक के दीप्तादि अवस्था के फल निर्देशक है, प्रमाद से यहा प्रक्षिप्त हो गये हैं तथापि अर्थ लिखा जाता है शत्रुओं का नाश करने के बाद शत्रुओं के घर से प्राप्त हाथी, घोड़े, घर, महल आदिका स्वामी होता है। लक्ष्मीपति तथा प्रचण्ड तेजस्वी, मकान बगीचा आदि से सुखी होता है। दीप्त अवस्थावाले प्रभौ = स्वामी (ग्रह वा विशेषण) शत्रुराशि तथा नीचराशि का न हो तो हाथी आदि युक्त राज्यलक्ष्मी जातक को घेरे रहती है। पण्डस्थान में पापग्रह हो, पण्डेश पापग्रहयुक्त हो। राहु से शनि युक्त हो तो सर्वदा रोगी ही रहता है। रोगस्थान (पण्ड) में मंगल हो तथा रोगेश अष्टम भाव में हो तो ६।१२ वे वर्ष में ज्वर रोग होता है। पण्डस्थान में गुरु हो, छठे घर में चन्द्रमा हो तो १९ या २२ वे वर्ष में कुष्ठ रोग होता है। रोग स्थान में राहु हो केन्द्रस्थान में माद्री (शनि - गुलिक लग्न) हो लग्नेश अष्टमभाव में हो तो २६ वे वर्ष में क्षय (तपेदिक) रोग होता है। व्ययेश छठे भाव में हो, पण्डेश व्ययभावमें हो तो २९।३० वर्ष में गुल्मरोग होता है। पण्डस्थान में चन्द्रमा यदि शनि से युक्त हो तो ५५ वे वर्ष में रक्तकुष्ठ होता है। लग्नेश लग्न में हो, शनि शत्रुग्रह के साथ हो। तो ५९ वे वर्ष में वात व्याधि होती है। अष्टमेश शत्रुराशि में हो, व्ययेश लग्न में हो तथा चन्द्रमा पण्डभाव के नवमाश में हो तो ८ वे वर्ष में पशु से भय हो। पण्ड तथा अष्टमभाव में राहु हो और राहु से आठवे शनि हो। तो जातक को प्रथम वर्ष में अग्नि से भय और तीसरे वर्ष में पत्नी से खतरा हो। छठे आठवे सूर्य हो और उन्ही भावों में चन्द्रमा साथ हो तो पाचवे या नौवे वर्ष में जल से भय होता है। मंगल और शनि ७।८।१०।१२ इन स्थानों में संयुक्त होकर स्थित हो तो ३० वर्ष की आयु तक सफोटक (चेचक = भीतला) का भय होता है तथा अष्टमेश राहु युक्त हो अष्टमभाव की नवमाश राशि अष्टमभाव से त्रिकोण भाव में हो १८ या २२ वे वर्ष में ग्रन्थिवाल या प्रमेह आदि रोग हो लाभेश छठे भाव में हो और पण्डेश लाभ स्थान में हो तो ३१ या ४१ वे वर्ष में शत्रु के कारण (मुकदमा आदि में) धनव्यय होता है। सुतेश पण्डभाव में हो, पण्डेश गुरु के साथ हो तथा व्ययेश लग्न में हो तो उम जातक का पुत्र ही शत्रु हो जाता है। लग्नेश छठे भाव में हो, लग्ननवमाश राशि भी छठे भाव में हो तो १० वे या १९ वे वर्ष में कुत्ते से भय हो ॥१२२-१५०॥

अथ सप्तमभावफलम्

कलत्रपो विना स्वर्शे षडादित्रयसंस्थित ॥ रोगिणीं कुरुते नारीं तथा तुगादिक विना ॥१५१॥ स्त्रीपुत्रयात्राफलचित्तनानि कार्याण्यनेनापि सहाधिपेन ॥ शुभेन कार्यं शुभद तथैव पापेन पाप फलमूहनीयम् ॥१५२॥ सप्तमे तु स्थिते शुक्रेऽतीवकामो भवेन्नर ॥ यत्रकुत्रस्थिते पापयुते स्त्रीमरण भवेत् ॥१५३॥ वाराधिप पुण्यग्रहेण युक्तो दृष्टोऽपि वा पूर्णबल प्रसन्न ॥ सौभाग्ययुक्तो गुणवान्प्रभुश्च दाता विभोग्य बहुधान्यमाहु ॥१५४॥ शलत्रेऽने बहुगुणे तुगवश्चादिहेतुभि ॥ बहुभार्यान्तर विद्याच्छत्रुनीचास्तोगु च ॥१५५॥ परमोच्चगते भन्दाधिनाये मन्दरासो शुभसेचरेण दृष्टे ॥ अथवा भृगुसदने तुगे बहुभार्यं प्रवदति बुद्धिमन्त ॥१५६॥ यध्यासगो मदे भानो चद्रराशिसम स्त्रिय ॥ कुजे रजस्यलासगो यध्यासगश्च कीर्तित ॥१५७॥ बुधे देश्या च हीना च वणिक्स्त्री वा प्रकीर्तिता ॥ गुरोर्ब्राह्मण

भार्या स्याद्गर्मिणी सग एव च ॥१५८॥ हीना च पुष्पिणी वाच्या मन्दराहुफणीश्वरे ॥ कुजोक्ते
 सुस्तना मन्दा व्याधिर्वावर्त्तितस्तथा ॥१५९॥ कठिनोर्ध्वकुजाचार्यं श्रेष्ठस्पूलोत्तमस्तना ॥ पापे
 द्वादशकामस्ये क्षीणचद्रस्तु पचमे ॥१६०॥ जातश्च भार्यावश्य स्यादिति जातिविरोधकृत् ॥
 जामित्रे मदभीमस्ये तदीशे मदभूमिजे ॥१६१॥ वेण्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न सगय ॥
 दारेसे स्वोच्चराशिस्ये दारे शुभसमन्विते ॥१६२॥ लग्नेशे बलसयुक्ते स कलत्रसमन्वित
 ॥१६३॥ कलत्रनाये रिपुनीचस्ये मूढेऽथवा पापनिरीक्षिते वा ॥ कलत्रमे पापयुते च वृष्टे
 कलत्रहानि प्रवदति सत ॥१६४॥ षष्ठाष्टमव्ययस्येपु मदेशो दुर्वलो यदि ॥ नीचराशिगते
 युक्ते दारनाश विनिर्दिशेत् ॥ कलत्रस्थानगे चद्रे तदीशे व्ययराशिगे ॥१६५॥ कारको
 बलहीनश्च दारसीत्य न विद्यते ॥ भार्याधिपे नीचगृहे च पापेपापक्षी वा बहुपापयुक्ते ॥ फलीषे
 ग्रहे सप्तमराशिस्ये तस्योदयारो द्विकलत्रसिद्धि ॥१६६॥ कलत्रस्थानगे भीमे शुके जामित्रगे
 शनौ ॥१६७॥ लग्नेशे रधराशिस्ये कलत्रत्रयवान् भवेत् ॥ द्विस्वभावगते शुके
 स्वोच्चैतद्राशिनायके ॥१६८॥ दारेसे बलसयुक्ते बहुदारसमन्वित ॥ दारेसे शुभराशिस्ये
 स्वोच्चस्वर्कगतो भृगु ॥१६९॥ पचमे नवमेऽब्दे तु विवाह प्रायशो भवेत् ॥ दारस्थान गते
 सूर्ये तदीशे भृगुसयुते ॥१७०॥ सप्तमैकादशे वर्षे विवाह प्रायशो भवेत् ॥ कुटुबस्थानगे शुके
 दारेसे लाभराशिगे ॥ दशमे षोडशाब्दे च विवाह प्रायशो भवेत् ॥१७१॥ लग्नेन्द्रगते
 शुक्रलग्नेशे मदराशिगे ॥ वत्सरेकादशे प्राप्ते विवाह लभते नर ॥१७२॥ लग्नात्केन्द्रगते शुके
 तस्मात्कामगते शनौ ॥ द्वादशैकोनविशे च विवाह प्रायशो भवेत् ॥१७३॥ चन्द्राज्जामित्रगे
 शुके शुकाज्जामित्रगे शनौ ॥ वत्सरेऽष्टादशे प्राप्ते विवाह लभते नर ॥१७४॥ धनेशे
 लाभराशिस्ये लग्नेशे कर्मराशिगे ॥ अन्धे पचदशे वर्षे विवाह लभते नर ॥१७५॥ धनेशे
 लाभराशिस्ये लाभेशे धनराशिगे ॥ अन्धे त्रयोदशे प्राप्ते विवाह लभते नर ॥१७६॥
 रन्ध्राज्जामित्रगे शुके तदीशे भीमसयुते ॥ द्वाविशे सप्तविशाब्दे विवाह लभते नर ॥१७७॥
 दाराशकगते लग्ने नाथे दारेऽश्वरे व्यये ॥ त्रयोविशे च षड्विंशे विवाह लभते नर ॥१७८॥
 रन्ध्राशे दारराशिस्ये लग्नेशे भृगुसयुते ॥ पचविशे त्रयस्त्रिंशे विवाह लभते नर ॥१७९॥
 भाग्याङ्गान्धगते शुके तद्द्वये राहु सयुते ॥ एकत्रिंशान्धस्त्रिंशे दारलाभ विनिर्दिशेत्
 ॥१८०॥ भाग्याज्जामित्रगे शुके तद्द्वयूने दारनायके ॥ त्रिंशे वा सप्तविशाब्दे विवाह लभते
 नर ॥१८१॥ दारे च नीचराशिस्ये शुके रधारिसयुते ॥ अष्टादशे त्रयस्त्रिंशे वत्सरे
 दारनाशनम् ॥१८२॥ मदेशे नाशराशिस्ये व्ययेशे मदराशिगे ॥ तस्य चैकोनविशाब्दे
 दारनाश विनिर्दिशेत् ॥१८३॥ कुटुबस्थानगे राहु कलत्रे भीमसयुते ॥ पाणिग्रहे च त्रिदिने
 सर्पदष्टेबधूमृति ॥१८४॥ रधस्थानगते शुके तदीशे सौरिराशिगे ॥ द्वादशैकोनविशाब्दे
 दारनाश विनिर्दिशेत् ॥१८५॥ लग्नेशे नीचराशिस्ये धनेशे निधन गते ॥ त्रयोदशे तु सप्राप्ते
 कलत्रस्य मृतिर्भवति ॥१८६॥ शुकाज्जामित्रगे चद्रे चद्राज्जामित्रगे बुधे ॥ रधेशे सुतभावस्ये
 प्रथमदशमाब्धिकम् ॥१८७॥ द्वाविशे च द्वितीये च त्रयस्त्रिंशे तृतीयके ॥ विवाह लभते मर्त्यो
 नात्र कार्य विचारणा ॥१८८॥

सन्तम भाव फल

सन्तमभाव का स्वामी उच्चादि रहित होकर छठे या आठवे भाव मे हो तो स्त्री सदा
 रोगिणी रहती है ॥ इस भाव से विचार योग्य कहते है-भार्या सन्बन्धी तथा पुत्रसन्बन्धी एव

यात्रा का फलफल ये सब विचार सप्तमभाव तथा सप्तमाधिपति से भी करना चाहिये। शुभयोग हो तो शुभफल होगा, और पापयोग हो तो अशुभ फल होगा। सप्तमभाव में शुक्र हो तो जातक अतिवर्गी होता है। अन्यभाव में पापयुक्त हो तो स्त्री-मरण होता है। भार्या सौम्यग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो तथा पूर्ण बलवान् हो और अस्तगत नहीं हो तो भार्या का स्वामी भाग्यवान् गुणवान् दानी मानी तथा अनेक भोग का साधनवाला होता है। भार्या भवत का स्वामी ग्रह स्वग्रह, उच्च, वर आदि वारणों से बलवान् हो तो अनेक भार्या होती हैं। एव शत्रुराशि, नीच तथा अस्त हो तो भी अनेक भार्या होने पर भी जीवित नहीं रहती। शनि स्थित राशि का स्वामी शनि के साथ परमोच्च का हो तथा शुभग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो एक से अधिक स्त्रियां होती हैं। यह योग शुक्र से भी देखना। उपर्युक्त योग शनि राशि में सूर्य से हो तो स्त्री बन्ध्या होती है और स्त्रियों की संख्या चन्द्रमा की राशि के अनुसार जानना। इसी प्रकार मंगल के योग से भी बन्ध्या-संग होता है और ऐसा योग बुध से हो तो वेश्या से योग हो, अथवा हीन जाति की स्त्री से एव वैश्य जाति की स्त्री से भी सम्बन्ध हो सकता है, विशेष क्या वह पुण्य चरित्रहीनता में इतना गिर जाता है कि—गुरु की स्त्री तथा ब्राह्मणी या गर्भिणी-संग भी करता है और शनि राहु केतु से योग हो तो हीन जाति की प्रायः रजोवती से संग हो। मंगल के योग से हीन जाति और सुस्तना से संयोग हो स्वयं जातक भी व्याधियुक्त होकर दुर्बल हो। बृहस्पति से उपर्युक्त योग हो तो दीर्घ लम्ब अतिस्थूल, वृत्तपीन घनस्तनी नारी से संग हो। पापग्रह ७।१२ में हो और शीघ्र चन्द्रमा पंचमभाव में हो ॥ ऐसे योग में हुआ जातक स्त्री के वश में रहता है और स्वजाति से विरोध करता है। सप्तम भाव में शनि मंगल और भावेश भी हो, तो जातक की स्त्री जरिणी हो अथवा वेश्या ही हो। सप्तमेश उच्चराशि में हो सप्तम घर में शुभग्रह हो, लग्नेश बलवान् हो तो स्त्री का सुख स्थायी होता है। सप्तमेश नीचराशि का शत्रु के घर में हो मूढावस्था में या पापदृष्ट हा सप्तमराशि पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। सप्तमेश ६।८।१२ स्थान में दुर्बल होकर स्थित हो तथा नीच का हो तो स्त्री की हानि होती है। सप्तमस्थान में चन्द्रमा हो और सप्तमेश १२वे में हो भार्या कारक बलहीन हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। स्त्रीभाव का स्वामी स्वयं पापग्रह हो पापग्रह की राशि में नीचराशि गत हो और पापग्रहों का संग हो नपुंसक ग्रह भी सप्तम भाव में हो उमकी नवांश दशा में दो स्त्रियां हो सप्तमस्थान में मंगल और शुक्र भी हो शनि लग्नेश होकर अष्टमभाव में हो तो तीन स्त्रियां होती हैं। शुक्र द्विस्वभावराशि में हो और उस राशि का स्वामी उच्च का हो तथा स्त्रीभाव स्वामी बलवान् हो तो अनेक स्त्रियां होती हैं। दारेश (सप्तमेश) शुभ राशि में हो और शुक्र स्वग्रही या उच्च का हो, तो प्रायः पांचवे या नौवें वर्ष में विवाह होता है। सप्तमभाव में सूर्य हो और सप्तमेश शुक्रयुक्त हो तो सातवें या ग्यारहवें वर्ष में प्रायः विवाह होता है। शुक्र द्वितीय भाव में हो सप्तमेश लाभ (११) में हो तो दसवें या सोलहवें वर्ष में प्रायः विवाह होता है। शुक्र लग्न (केन्द्र) में हो और लग्नेश शनि की राशि में हो तो जातक का ११ वें वर्ष में विवाह होता है। चन्द्रमा से सातवें शुक्र हो और शुक्र से सातवें शनि हो तो अठारहवें वर्ष में विवाह होता है। द्वितीयेश लाभस्थान में हो तथा लग्नेश दशम में हो तो १५ वें वर्ष में विवाह होता है। द्वितीयेश लाभस्थान में हो और लाभेश द्वितीय में हो तो

१३वे वर्ष में विवाह होता है॥ आठवे स्थान से सातवे स्थान में शुक्र हो और उस स्थान की राशि के स्वामी के साथ मंगल हो तो २२ वे या २७ वे वर्ष में विवाह होता है॥ सप्तमभाव की नवाश राशि लग्न में हो, लग्नेश तथा सप्तमेश १२वे स्थान में होतो २३या २६वे वर्षमें विवाह होता है॥ आठवे भाव की नवाश राशि सप्तमभाव में हो और लग्न के नवाश में शुक्र हो तो २५ या ३३ वे वर्ष में विवाह होता है॥ भाग्यस्थान से नौवे स्थान में शुक्र हो उससे दूसरे स्थान में राहु हो तो ३१ से ३३वे वर्ष में विवाह होता है॥ भाग्यस्थान से सातवे स्थान में शुक्र हो और शुक्र से सातवे स्थान में सप्तमेश हो तो २७वे या ३०वे वर्ष में विवाह होता है॥ सप्तमेश नीचराशि में हो और शुक्र ६।८ भाव के स्वामी से युक्त हो तो १८ वे या ३३ वे वर्ष में विवाह होता है॥ शनिस्थान का स्वामी अष्टमभाव में हो और व्ययेश शनि की राशि में हो उसके १९ वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है॥ द्वितीय स्थान में राहु और सप्तम में मंगल हो तो विवाह होने के तीसरे दिन सर्प से मृत्यु होती है॥ आठवे स्थान में शुक्र हो और उसका स्वामी शनि की राशि में हो तो १२ वे या १९वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है॥ लग्नेश नीच राशि में हो तथा धनेश अष्टमभाव में हो तो १३ वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है॥ शुक्र से सातवे स्थान में चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवे में बुध हो और अष्टमेश पंचमभाव में हो तो पहिला विवाह १०वे, दूसरा २२वे और तीसरा २३वे में होता है॥ १५१-१८८॥

अष्टमभावफलम्

आयुःस्थानाधिपः पापैः सहैव यदि संस्थितः ॥ करोत्यल्पायुं जातं लग्नेशोऽप्यत्र संस्थितः ॥ १८९॥
एवं हि शनिना चिंता कार्या तर्कीर्षचक्षणोः ॥ कर्माधिपेन च तथा चिंतनं कार्यमायुषः ॥ १९०॥
छठे व्ययेऽपि छठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ॥ लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायुः प्रयच्छति ॥ १९१॥
स्वस्थाने स्वांशकेनापि मित्रेशे मित्रमंदिरे ॥ दीर्घायुं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमः पुनः ॥ १९२॥
लग्नाष्टमपकर्मेशमदाः केन्द्रत्रिकोणयोः ॥ सामे वा संस्थितास्तद्द्विशेषपूर्वार्धमायुषम् ॥ येषु यो बलवत्तस्यानुसारादायुरादिनोत् ॥ १९३॥
अष्टमाधिपतौ केंद्रे लग्नेशे बलवर्जिते ॥ विशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्विशतवारमायुषम् ॥ १९४॥
रंघ्रेशे नीचराशिस्ये रंघ्रे पापग्रहयुते ॥ लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति ध्रुवम् ॥ १९५॥
रंघ्रेशे पापसंयुक्ते रंघ्रे पापग्रहयुते ॥ व्यये क्रूरग्रहयुते जातमात्रं मृतिर्भवेत् ॥ १९६॥
केन्द्रत्रिकोणपापस्थाः पष्ठाष्टशु भगा यदि ॥ लग्ने रंघ्रेश नीचस्ये जातः सद्योमृतो भवेत् ॥ १९७॥
पंचमे पापसंयुक्ते रंघ्रेशे पापसंयुते ॥ रंघ्रे पापग्रहयुक्ते अल्पायुष्यः प्रजायते ॥ १९८॥
रंघ्रराशिस्ये चन्द्रे पापसमन्विते ॥ शुभदृष्टेन सफलं मासते च मृतिर्भवेत् ॥ १९९॥
स्वीञ्चराशिस्ये चन्द्रे सामसमन्विते ॥ रंघ्रस्थानगते जीवे दीर्घायुष्यं न संशयः ॥ २००॥

अष्टम भावफल

अष्टमेश पापग्रही के तथा लग्नेश के साथ (अष्टमभाव में) हो तो जातक को अल्पायु करता है॥ इसी प्रकार चन्द्रमा तथा दशमभाव के स्वामी से भी आयु का विचार करना चाहिये॥ पष्ठभाव का स्वामी छठे या शारहवे में हो और व्ययाधीश ६।८।१२ वे या लग्न में

यात्रा का फलफल ये सब विचार सप्तमभाव तथा सप्तमाधिपति से भी करना चाहिये। शुभयोग हो तो शुभफल होगा, और पापयोग हो तो अशुभ फल होगा। सप्तमभाव में शुक्र हो तो जातक अतिकामी होता है। अन्यभाव में पापयुक्त हो तो स्त्री-मरण होता है। भायेंश सौम्यग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो तथा पूर्ण बलवान् हो और अस्तगत नहीं हो तो भार्याका स्वामी भाग्यवान् गुणवान् दानी मानी तथा अनेक भोग का साधनवाला होता है। भार्या भवन का स्वामी ग्रह स्वग्रह, उच्च, वक्र आदि कारणों से बलवान् हो तो अनेक भार्या होती हैं। एव शत्रुराशि, नीच तथा अस्त हो तो भी अनेक भार्या होने पर भी जीवित नहीं रहती। शनि स्थित राशि का स्वामी शनि के साथ परमोच्च का हो तथा शुभग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो एक से अधिक स्त्रिया होती हैं। यह योग शुक्र से भी देखना। उपर्युक्त योग शनि राशि में सूर्य से हो तो स्त्री बन्ध्या होती है, और स्थियो की सख्या चन्द्रमा की राशि के अनुसार जानना। इसी प्रकार मंगल के योग से भी बन्ध्या-सग होता है और ऐसा योग बुध से हो तो वैश्या से योग हो, अथवा हीन जाति की स्त्री से एव वैश्य जाति की स्त्री से भी सम्बन्ध हो सकता है, विशेष क्या, वह पुरुष चरित्रहीनता में इतना गिर जाता है कि-गुरु की स्त्री तथा ब्राह्मणी या गर्भिणी-सग भी करता है और शनि, राहु, केतु से योग हो तो हीन जाति की प्राय रजोवती से सग हो। मंगल के योग से हीन जाति और सुस्तना से सयोग हो स्वयं जातक भी व्याधिग्रस्त होकर दुर्बल हो। बृहस्पति से उपर्युक्त योग हो तो 'दीर्घ' लम्ब, अतिस्थूल, वृत्तपोन-घनस्तनी' नारी से सग हो। पापग्रह ७।१२ में हो और क्षीण चन्द्रमा पचमभाव में हो ॥ ऐसे योग में हुआ जातक स्त्री के वश में रहता है और स्वजाति से विरोध करता है। सप्तम भाव में शनि मंगल और भावेश भी हो, तो जातक की स्त्री जारिणी हो अथवा वैश्या ही हो। सप्तमेश उच्चराशि में हो, सप्तम घर में शुभग्रह हो। लग्नेश बलवान् हो तो स्त्री का सुख स्थायी होता है। सप्तमेश नीचराशि का शत्रु के घर में हो सूडावस्था में वा पापदृष्ट हो सप्तमराशि पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। सप्तमेश ६।८।१२ स्थान में दुर्बल होकर स्थित हो तथा नीच का हो तो स्त्री की हानि होती है। सप्तमस्थान में चन्द्रमा हो और सप्तमेश १२वे में हो भार्या कारक बलहीन हो तो स्त्री का सुख नहीं होता। स्त्रीभाव का स्वामी स्वयं पापग्रह हो पापग्रह की राशि में नीचराशि गत हो और पापग्रहों का सग हो, मपुसक ग्रह भी सप्तम भाव में हो उसकी नवाश दशा में दो स्त्रिया हो सप्तमस्थानमें मंगल और शुक्र भी हो, शनि लग्नेश होकर अष्टमभाव में हो तो तीन स्त्रिया होती है। शुक्र द्विस्वभावराशि में हो और उस राशि का स्वामी उच्च का हो तथा स्त्रीभाव स्वामी बलवान् हो तो अनेक स्त्रिया होती है। दारेश (सप्तमेश) शुभ राशि में हो और शुक्र स्वग्रही या उच्च का हो तो प्राय पाचवे या नौवे वर्ष में विवाह होता है। सप्तमभाव में सूर्य हो और सप्तमेश शुक्रयुक्त हो तो सातवे या ग्यारहवे वर्ष में प्राय विवाह होता है। शुक्र द्वितीय भाव में हो, सप्तमेश लाभ (११) में हो तो दशवे या सोलहवे वर्ष में प्राय विवाह होता है। शुक्र लग्न (केन्द्र) में हो और लग्नेश शनि की राशि में हो तो जातक का ११ वे वर्ष में विवाह होता है। चन्द्रमा से सातवे शुक्र हो और शुक्र से सातवे शनि हो तो अठारहवे वर्ष में विवाह होता है। द्वितीयेन लाभस्थान में हो तथा लग्नेश दशम में हो तो १५ वे वर्ष में विवाह होता है। द्वितीयेन लाभस्थान में हो और लाभेश द्वितीय में हो तो

१३वे वर्ष में विवाह होता है॥ आठवे स्थान से सातवे स्थान में शुक्र हो और उस स्थान की राशि के स्वामी के साथ मंगल हो तो २२ वे या २७ वे वर्ष में विवाह होता है॥ सप्तमभाव की नवाश राशि लग्न में हो, लग्नेश तथा सप्तमेश १२वे स्थान में हो तो २३या २६वे वर्षमें विवाह होता है॥ आठवे भाव की नवाश राशि सप्तमभाव में हो और लग्न के नवाश में शुक्र हो तो २५ या ३३ वे वर्ष में विवाह होता है॥ भाग्यस्थान से नौवे स्थान में शुक्र हो उससे दूसरे स्थान में राहु हो तो ३१ से ३३वे वर्ष में विवाह होता है॥ भाग्यस्थान से सातवे स्थान में शुक्र हो और शुक्र से सातवे स्थान में सप्तमेश हो तो २७वे या ३०वे वर्ष में विवाह होता है॥ सप्तमेश नीचराशि में हो और शुक्र ६।८ भाव के स्वामी से युक्त हो तो १८ वे या ३३ वे वर्ष में विवाह होता है॥ शनिस्थान का स्वामी अष्टमभाव में हो और व्ययेश शनि की राशि में हो उसके १९ वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है॥ द्वितीय स्थान में राहु और सप्तम में मंगल हो तो विवाह होने के तीसरे दिन सर्प से मृत्यु होती है॥ आठवे स्थान में शुक्र हो और उसका स्वामी शनि की राशि में हो तो १२ वे या १९वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है॥ लग्नेश नीच राशि में हो तथा धनेश अष्टमभाव में हो तो १३ वे वर्ष में स्त्री की मृत्यु होती है॥ शुक्र से सातवे स्थान में चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवे में बुध हो और अष्टमेश पचमभाव में हो तो पहिला विवाह १०वे, दूसरा २२वे और तीसरा २३वे में होता है॥ १५१-१८८॥

अष्टमभावफलम्

आयुश्चात्माधिपः पापे सहैव यदि सस्थितः ॥ करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्रसंस्थितः ॥ १८९॥
एष हि शनिना चिता कार्या तर्कवैचक्षण्ये ॥ कर्माधिपेन च तथा चित्तं कार्यमायुषं ॥ १९०॥
पठे व्ययेऽपि पठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ॥ लग्नेष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायुः प्रयच्छति ॥ १९१॥
स्वस्थाने स्वाश्वेनापि मित्रेशे मित्रमदिरे ॥ दीर्घायुषं करोत्येव ॥ १९२॥
लग्नेष्टमपकर्मशमदा केन्द्रत्रिकोणयोः ॥ लाभे वा सस्थितास्तद्दृष्टिगोचरमायुषम् ॥ १९३॥
येषु यो बलवास्तस्यानुसारादापुरादिशेत् ॥ १९४॥
अष्टमाधिपतौ केन्द्रे लग्नेशे बलवर्जिते ॥ विशद्वर्णायसौ जीवेद्द्वित्रिंशत्परमायुषम् ॥ १९५॥
रक्षेशे नीचराशिस्ये रक्षे पापग्रहेयुते ॥ लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति प्रुवम् ॥ १९६॥
रक्षेशे पापसयुक्ते रक्षे पापग्रहेयुते ॥ व्यये क्रूरग्रहेजति जातमात्रं मृतिर्भवेत् ॥ १९७॥
केन्द्रत्रिकोणपापस्था पञ्चाष्टशु भगा यदि ॥ लग्ने रक्षेश नीचस्ये जातं सद्योमृतो भवेत् ॥ १९८॥
पचमे पापसयुक्ते रक्षेशे पापसयुक्ते ॥ रक्षे पापग्रहेयुक्ते अल्पायुष्यं प्रजायते ॥ १९९॥
रक्षेशस्ये चन्द्रे पापसमन्विते ॥ शुभदृष्टेन सकल मासाते च मृतिर्भवेत् ॥ २००॥
स्वोच्चराशिस्ये चन्द्रे लाभसमन्विते ॥ रक्षस्थानगते जीवे दीर्घायुष्यं न शक्यं ॥ २०१॥

अष्टम भावफल

अष्टमेश पापग्रहों के तथा लग्नेश के साथ (अष्टमभाव में) हो तो जातक को अल्पायु करता है॥ इसी प्रकार चन्द्रमा तथा दशमभाव के स्वामी से भी आयु का विचार करना चाहिये॥ पञ्चम भाव का स्वामी छठे या बारहवें में हो और व्यायाधीश ६।८।१२ वे या लग्न में

ही तो दीर्घायु होता है॥ मित्रेश पञ्चमेश, पञ्चमभाव में अपने ही नवांश में हो तथा लग्नेश और अष्टमेश भी हो तो दीर्घायु होता है॥ लग्नेश, अष्टमेश तथा दशमेश और मनि केन्द्र, त्रिकोण या लाभस्थान में हो तो दीर्घायु होती है॥ इनमें जो बलवान् हो उसके अनुसार आयु बहे॥ अष्टमाधिपति केन्द्र में हो लग्नेश बलहीन हो तो ३० या ३२ वर्ष की परमायु होती है॥ अष्टमेश नीच राशि में हो, अष्टम भाव में पापग्रह हो और लग्नेश बलहीन हो तो अल्पायु होती है॥ अष्टमेश पापयुक्त हो, अष्टमभाव में पापग्रह हो तथा १२वें भी पापग्रह हो तो जन्मके बाद ही मृत्यु होती है॥ केन्द्र त्रिकोण में पापग्रह हो तथा छठे, आठवें शुभग्रह हो और अष्टमेश नीच का होकर लग्न में हो तो जन्म के बाद ही मृत्यु होती है॥ पञ्चमभाव पापग्रह युक्त हो और अष्टमेश पापग्रह युक्त हो तथा अष्टमभाव में पापग्रह युक्त हो तो अल्पायु होता है॥ अष्टमेश अष्टम में हो, चन्द्रमा पापयुक्त हो और शुभग्रह नहीं देखते हो तो एक महीने बाद मृत्यु होती है॥ और शुभग्रह देखते हो तो मृत्यु नहीं होती॥ लग्नेश उच्चराशि में हो चन्द्रमा लाभ में हो, आठवें स्थान में बृहस्पति हो तो दीर्घायु होती है ॥१८९-२००॥

अथ नवमभावफलम्

भाग्याधिनायोऽपि च भाग्यकर्ता शुकोऽपि पापे सह चेत्त्रिषु स्यात् ॥ त्रिषुदादिभावेषु च भाग्यहीन केन्द्रत्रिकोणोपगतोऽतिभाग्यम् ॥२०१॥ अनेन धर्म परिकल्पनीय पिता तु चित्तो निजमातुलस्य ॥ शुभे शुभस्थानगते शुभ स्याद्विपर्यये तत्र विपर्यय स्यात् ॥२०२॥ भाग्यस्थिते बाह्यनराशिसंस्थे शुके च जीवे शुभराशिमुक्ते ॥ भाग्याधिपे कोणचतुष्टये वा बहुत्वदेशाभरण च यानम् ॥२०३॥ भाग्यस्थानगते जीवे तदीशे वेद्रसंस्थिते ॥ लग्नेशे बलसंयुक्ते बहुभाग्याधिपो भवेत् ॥२०४॥ भाग्येशे बलसंयुक्ते भाग्ये भृगुसमन्विते ॥ बलसत्केद्रगते जीवे पितृभाग्यसमन्वित ॥२०५॥ भाग्यस्थानाद्द्वितीये वा मुखे भीमसमन्विते ॥ भाग्येशे नीचराशिसंस्थे पिता निर्धन एव स ॥२०६॥ भाग्येशे परमोल्लवस्थे भाग्याशे जीवायुते ॥ लग्नाच्चतुष्टये शुके पिता दीर्घायुरादिशेत् ॥२०७॥ भाग्येशे वेद्रभावस्थे गुरुणाचनिराशिते ॥ तत्पिता बाह्यैर्पुक्ते राजा वा तत्समो भवेत् ॥२०८॥ भाग्येशे बर्माभावस्थे च मरौ भाग्यराशिगे ॥ कर्मराज्य धनादृष्य कीर्तिमास्तत्पिता भवेत् ॥२०९॥ परमोल्लासते मूर्खे भाग्येशे लाभसंस्थिते ॥ धर्मिष्ठो नृपचातल्य पितृपुण्यो भवेन्नर ॥२१०॥

नवम भावफल

भाग्यस्थान (नवम) का म्यामी भाग्य को बगानेवाना है तथा ग्रहों में शुभ भाग्यवर्ता है। यदि शुभ पापग्रहों के साथ ३।६।११ अथवा अष्टम में हो तो मनुष्य को भाग्यहीन करना है। और यदि केन्द्र या त्रिकोण १।४।७।१०।५।९ में हो तो भाग्यशाली बनाना है। और हम नवमस्थान से धर्म का विचार करना और अपने मामा के पिता का विचार करना चाहिये। नवमभाव में शुभग्रह हो अथवा शुभ शुभस्थान में हो तो शुभ होता है। और इसके विपरीत अशुभ जानना। शुभ और बृहस्पति इन दोनों ग्रहों में से एक या दोनों ही नवमस्थान में या चतुर्थस्थान में शुभग्रह तथा शुभराशि में युक्त हो और नवमेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो जमीन जायदाद, सम्पत्ति, मवारी आदि का मुम होता है। भाग्येश केन्द्र में हो और

भाग्यस्थान मे बृहस्पति हो एव लग्नेश बलवान हो तो जातक बड़ा भाग्यशाली होता है॥ भाग्येश बलवान हो भाग्यस्थान मे शुक्र हो बलवान् गुरु केन्द्र मे हो तो पिता भी और आप भी भाग्यशाली होता है॥ भाग्यस्थान से द्वितीय या चतुर्थ स्थान मे मंगल हो तथा भाग्येश नीच राशि का हो तो पिता निर्धन ही होता है॥ भाग्येश परमोज्ज्व मे हो तथा भाग्यराशि के नवाश मे बृहस्पति हो तथा शुक्र केन्द्र मे हो तो पिता दीर्घायु होता है॥ भाग्येश केन्द्रस्थान मे हो और बृहस्पति देखता हो तो जातक बाहनोंसे युक्त राजा या राजा के समान होता है॥ भाग्येश दशम मे हो और दशमेश भाग्यस्थान मे हो तो कर्मेश के प्रभाव स जातक का पिता धनी और यशस्वी होता है॥ सूर्य परमोज्ज्व मे हो तथा भाग्येश लाभस्थान मे हो तो पिता पुण्यात्मा राजमान्य होता है॥ २०१-२१०॥

लग्नात्रिकोणगे सूर्ये भाग्येशे सप्तमस्थिते ॥ गुरुणा सहिते दृष्टे पितृभक्तिसमन्वित ॥ २११॥
भाग्येशे धनभावस्ये धनेशे भाग्यराशिगे ॥ द्वात्रिंशत्परतो भाग्य वाहन कीर्तिसम्भव ॥ २१२॥
लग्नेशे भाग्यराशिस्ये षष्ठेशे भाग्यराशिगे ॥ अन्योन्यवैर बुद्धते जनक कुत्सितो भवेत् ॥ २१३॥
कर्मजे रिपुरधरि फलवने जीवे च भिक्षाशन ॥ भाग्येशे यदि जन्मकालसमये प्राप्नोति दीक्षा रवि ॥ २१४॥
कर्मधिपेन सहितो विक्रमेशो विधिबल ॥ नीचराशिबिमूढस्यो योगो भिक्षाशनात्प्रभु ॥ २१५॥
षष्ठाष्टमव्यये भानू रध्नेशे भाग्यसयुते ॥ व्ययेशे लग्नाशिस्ये षष्ठाशपचमे स्थिते ॥ २१६॥
जातस्य जननात्पूर्वं जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥ रध्नेशे भाग्यराशिस्ये रध्नेशे भाग्यनायके ॥ २१७॥
जातस्य प्रथमाब्दे तु पितुर्मरणमादिशेत् ॥ व्ययेशे भाग्यराशिस्ये नीचाशे भाग्यनायके ॥ २१८॥

लग्न से त्रिकोण ५१९ मे सूर्य हो तथा भाग्येश सप्तमभाव मे हो और गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो जातक पिता का भक्त होता है॥ भाग्येश धनभाव मे हो और धनेश भाग्यभाव मे हो तो ३२ वर्ष की उम्र के बाद भाग्योदय होता है और वाहन तथा कीर्ति होती है॥ लग्नेश तथा षष्ठेश भाग्यस्थान मे हो तो पिता पुत्र का आपस मे वैर होता है और पिता दुष्टबुद्धि होता है॥ यदि दशम भाव मे बुध हो और जन्मलग्न मे भाग्येश सूर्य हो, ६।८।१२ स्थान मे गुरु हो तो भिक्षारी होता है॥ तृतीयभाव का स्वामी दशमेश के साथ नीचराशि और मूढ अवस्था मे हो तो भिक्षाटन करता हुआ भगवान् के भरोसे पर जीता है॥ सूर्य- ६।८।१२ भ हो, अष्टमेश भाग्यस्थान मे हो और व्ययेश लग्न के छठे पचमाश मे हो, तो जातक के जन्म के पहिले ही पिता की मृत्यु होती है॥ अष्टमभाव मे सूर्य हो तथा अष्टमेश और नवमेश एक ही हो (जैसे मिथुन लग्न मे शनि) तो जातक के पहिले वर्ष मे ही पिता की मृत्यु होती है॥ व्ययेश ही भाग्यस्थान मे हो, भाग्येश परमनीच का हो॥ २११-२१८॥

तृतीये षोडशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥ लग्नेशे नाशराशिस्ये रध्नेशे भानुसयुते ॥ २१९॥
द्वितीये द्वादशे वर्षे पितुर्मरणमादिशेत् ॥ भाग्याद्वन्धयते राहो भाग्याद्भाग्यगते रवौ ॥ २२०॥
षोडशेऽष्टादशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥ भाग्याद्वन्धयते राहो भाग्याद्भाग्यगते रवौ ॥ २२१॥
राहुणा सहिते सूर्ये चन्द्राद्भाग्यगते शनौ॥ सप्तमैकोनविंशब्दे तातस्य मरण

शुभम् ॥२२२॥ भाग्येशे व्ययराशित्ये व्ययेरो भाग्यराशिगे ॥ चतुश्चत्वारिंशर्षाब्ज
पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२३॥ रव्यशे च स्थिते चद्रे लग्नेशे रघ्नसप्तपुते ॥ पञ्चत्रिंशकचत्वारि-
षत्सरे पितृनाशनम् ॥२२४॥ पितृस्थानाधिपे सूर्ये मदाभौमसमन्विते ॥ पचाशद्वत्सरे प्राप्ते
जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२२५॥ भाग्यात्सप्तमगे सूर्ये भ्रातृसप्तमगस्तम ॥ षष्ठ्ये पञ्चविंशत्सरे
पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२६॥ रघ्नजामित्रगे मदे मदाज्जामित्रगे रवौ ॥ त्रिंशकविशे षड्विंशे
जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२२७॥

तो तीसरे या सोलहवें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। लग्नेश अष्टमभाव में हो, अष्टमेश के
साथ में सूर्य हो तो दूसरे या बारहवें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है। नवमस्थान से आठवें राहु
और नौवें सूर्य हो तो सोलहवें या अठारहवें वर्ष में पिता की मृत्यु हो। नवमभाव से आठवें
राहु और नौवें सूर्य हो तथा राहु के साथ सूर्य हो और चन्द्रमा से नौवें शनि हो तो सातवें
या १९ वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ भाग्येश व्ययभाव में हो और व्ययेश भाग्यभाव में
हो तो २४ वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ चन्द्रमा सूर्यनवाश में हो तथा लग्नेश आठवें भाव
में हो तो ३५ या ४१ वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ सूर्य दशमेश हो और शनि, मंगलयुक्त हो
तो पचासवें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ भाग्यभाव से सूर्य सप्तम में हो तथा तीसरे भाव
से सातवें राहु हो तो छठे या २५वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ आठवें भाव से सातवें शनि
हो और शनि से सातवें सूर्य हो तो २१ या २६ अथवा ३० वें वर्ष में पिता की मृत्यु हो ॥
॥२१९-२२७॥

भाग्येशे नीचराशित्ये तदीशे भाग्यराशिगे ॥ षड्विंशगे त्रयस्त्रिंशे पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२८॥
रव्यशकस्थिते चद्रे लग्नेशे रघ्नसप्तपुते ॥ पञ्चत्रिंशकचत्वारिंशत्सरे पितृनाशनम् ॥२२९॥
पितृस्थानाधिपे सूर्ये चन्द्रभौमसमन्विते ॥ पचाशद्वत्सरे प्राप्ते जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२३०॥
परमोज्ज्वलशे शुके भाग्येशेन समन्विते ॥ भ्रातृस्थाने शनिपुते बहुभाग्याधिपे भवेत् ॥२३१॥
गुरुणा सयुते भाग्ये तदीशे केद्वराशिगे ॥ त्रिंशद्वर्षात्पर चैव बहुभाग्य विनिर्दिशेत् ॥२३२॥
परमोज्ज्वलशे सौम्ये भाग्येशे भाग्यराशिगे ॥ षट्त्रिंशाच्च पर चैव बहुभाग्य विनिर्दिशेत्
॥२३३॥ लग्नेशे भाग्यराशित्ये भाग्येशे लग्नसप्तपुते ॥ गुरुणा सयुते छूने धनवाहनलाभकृत् ॥२३४॥
भाग्याद्भाग्यगतो राहुर्भाग्येशे निधन गते ॥ भाग्येशे नरराशित्ये भाग्यहीनो भवेन्नर ॥२३५॥
भाग्यस्थानगते मदे शशिना च समन्विते ॥ लग्नेशे नीचराशित्ये भिक्षाशी च नरो भवेत् ॥२३६॥

भाग्येश नीचराशि में हो और उस राशि का स्वामी भाग्यराशि में हो तो २९ या ३३ वें
वर्ष में पिता की मृत्यु हो॥ सूर्य के नवाश में चन्द्रमा हो तथा लग्नेश आठवें भाव में हो तो ३५
या ४१वें वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ सूर्य दशमेश हो और चन्द्र मंगलयुक्त हो तो ५० वें
वर्ष में पिता की मृत्यु होती है॥ शुक्र परमोज्ज्वल में हो, भाग्येश युक्त हो, तृतीयभाव में शनि हो
तो बहुत भाग्यवान् होता है॥ भाग्यस्थान में गुरु हो, भाग्येश केन्द्र में हो तो २० वर्ष के बाद
भाग्योदय होता है॥ बुध परमोज्ज्वल में हो, भाग्येश भाग्यराशि (स्वगृही) हो तो ३६ वें वर्ष में
पूर्ण भाग्योदय होता है॥ लग्नेश भाग्यराशि में और भाग्येश लग्न में तथा गुरु सप्तम में हो तो

घन और सवारी का लाभ होता है॥ भाग्यस्थान में नीचे राहु हो और भाग्यराशि स्वामी पुरुषराशि में अष्टमभाव में हो तथा लग्नेश नीचे राशि में हो तो जातक का जीवन भिक्षा पर ही व्यतीत होता है॥ २२८-२३६॥

अथ दशमभावफलम्

कर्माधिपो बलोनश्रेत्कर्मवैकल्यमादिशेत् ॥ संहि केद्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादियागकृत् ॥ २३७॥ अत्रायुषश्चित्तं च कार्यं स्यात्कर्मणस्तथा ॥ शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा यष्टाष्टमगृहं तथा॥ २३८॥ दशमे पापसमुक्ते लाभे पापसमन्विते ॥ दुष्कृति लभते मर्त्यं स्वजनानां विदूषक ॥ २३९॥ कर्मेश नाशराशिस्थे कर्मेश राहुसमुक्ते ॥ जनद्वेषी महामूर्खो दुष्कृति लभते नर ॥ कर्मेशद्वानराशिस्थे मदभौमसमन्विते ॥ २४०॥ द्यूनेशे पापसमुक्ते शिश्नोदरपरायण ॥ तुंगराशि समाश्रित्य कर्मेशे गुरुसमुक्ते ॥ २४१॥ भाग्येशे कर्मराशिस्थे मानैर्धनप्रतापवान् ॥ लाभेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे लग्नसमुक्ते ॥ तावुभौ केद्रणौ वापि सुखजीवनभाग् भवेत् ॥ २४२॥ कर्मेशे बलसमुक्ते मीनेगुरुसमन्विते ॥ बस्त्राभरणसीत्यादि लभते मात्र संशय ॥ २४३॥ लाभस्थानगते सूर्ये राहुभौमसमन्विते ॥ रविपुत्रेण समुक्ते कर्मच्छेत्ता भवेन्नर ॥ २४४॥ मीने च राहौ यदि चोच्चकाशे भागीरथीघ्नानफल लभेन्नर ॥ २४५॥ माने च मीने यदि वार्कपुत्रे सन्यासयोग प्रवदति तस्य ॥ २४६॥ मीने जीवे भृगुमुक्ते लग्नेशे बलसमुक्ते ॥ स्वोच्चराशिगते चन्द्रे सम्यग्ज्ञानार्थवान् भवेत् ॥ २४७॥ कर्मेशे लाभराशिस्थे लाभेशे लग्नसंस्थिते ॥ कर्मराशिस्थिते शुके रत्नवान् स नरो भवेत् ॥ २४८॥ केद्रत्रिकोणगे कर्मनाथे स्वोच्चसमाश्रिते ॥ गुरुणा सहिते दृष्टे स कर्मसहितो भवेत् ॥ २४९॥ कर्मेशे लग्नभावस्थे लग्नेशेन समन्विते ॥ केद्रत्रिकोणगे चन्द्रे सत्कर्मनिरतो भवेत् ॥ २५०॥ कर्मस्थानगते भदे नीचलेखरसमुक्ते ॥ कर्मेशे पापसमुक्ते कर्महीनो भवेन्नर ॥ २५१॥ कर्मेशे यागराशिस्थे लग्नेशे कर्मसंस्थिते ॥ पापग्रहेण समुक्ते दुष्कर्मनिरतो भवेत् ॥ २५२॥ कर्मेशे नीचराशिस्थे कर्मस्थे पापलेखरे ॥ कर्मभात्कर्मगे पापे कर्मवैकल्यमादिशेत् ॥ २५३॥ कर्मस्थानगते चन्द्रे तद्वेशे तत्रिकोणगे ॥ लग्नेशे केद्रभावस्थे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ॥ २५४॥ लाभेशे कर्मभावस्थे कर्मेशे बलसमुक्ते ॥ देवेंद्रगुरुणा दृष्टे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ॥ २५५॥ कर्मस्थानाधिपे भाग्ये लग्नेशे कर्मसमुक्ते ॥ लग्नात्यचमगे चन्द्रे स्यात्कीर्ती विनिर्दिशेत् ॥ २५६॥

दशमभाव फल

दशमेश बलहीन हो तो कर्म (क्रियाशक्ति) में विकलता होती है। सूर्य केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'ज्योतिष्टोम' आदि यज्ञ करनेवाला होता है॥ इस दशमस्थानसे आयुका विचार तथा भले बुरे कर्मों का विचार करना चाहिये। कर्मेश के लिये शत्रुराशि और नीचराशि का त्याग तथा ६।८ भाव का त्याग उत्तम होता है॥ दशमभाव पापराशियुक्त हो और लाभस्थान में भी पापग्रह हो तो जातक कर्महीन होता है और स्वजनो का निन्दक होता है॥ दशमेश अष्टमभाज में हो और राहु साथ में हो तो जनद्वेषी, महामूर्ख और दुर्गतिपुक्त होता है॥ दशमेश सातवे स्थान में हो, शनि भगल युक्त हो और सप्तमेश पापग्रह युक्त हो तो जातक केवल कामी, भोगासक्त और पैट भरना ही परम पुरुषार्थ जानता है। दशमेश उच्च में तथा

वृहस्पति युक्त हो और भाग्येश दशम में हो तो प्रतिष्ठा ऐश्वर्य और प्रतापवाला होता है। लाभेश दशमभाव में हो और दशमेश लग्न में हो अथवा ये दोनों केन्द्र में हो तो जीवन सुखमय होता है। दशमेश बलवान् होकर मीनराशि में बृहस्पति युक्त हो तो उत्तमवस्त्र, आभूषण आदि प्राप्त होता है। लाभस्थान में सूर्य, मंगल, शनि, राहु हो तो जातक कर्मवन्धन का करनेवाला होता है। राहु यदि मीन राशि में अपने उच्चाण पर हो तो मनुष्य को भागीरथी गंगास्नान का सुयोग प्राप्त होता है। शनि यदि मीनराशि का होकर दशमभाव में स्थित हो तो सन्ध्यास ग्रहण करता है। मीनराशि में स्थित गुरु, शुक्र से युक्त हो, लग्नेश बलवान् हो और चन्द्रमा उच्च राशि का हो तो ज्ञानी, धनी, मानी होता है। दशमेश लाभराशि में हो, लाभेश लग्न में हो, दशमभाव में शुक्र हो तो जातक रत्नवाला (जौहरी) होता है और दशमेश केन्द्र या त्रिकोण स्थान में उच्च राशि में हो और गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्य कर्मयोगी होता है। दशमेश लग्नेश के साथ लग्न में हो और चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण में हो तो श्रेष्ठकर्मरत रहता है। दशमभाव में शनि नीचराशिगत ग्रह युक्त हो और दशमराशि के नवाश में भी पापग्रह हो तो मनुष्य कर्महीन होता है। दशमेश अपने नवाश में हो, अष्टमेश दशमभाव में हो और पापग्रह से युक्त हो तो जातक दुर्जर्म निरत रहता है। दशमेश नीचराशि में हो और दशमभाव में पापग्रह हो तथा दशमभाव से दशमभाव में (अर्थात् लग्न से सप्तम में) पापग्रह हो तो जातक का कोई काम पूरा नहीं होता। दशमभाव में चन्द्रमा हो दशमेश चन्द्रमा से त्रिकोण ९।५ में हो लग्नेश दशम में हो तो श्रेष्ठ कीर्तिवाला होता है। लाभेश दशमभाव में हो और दशमेश बलवान् हो गुरु की दृष्टि हो तो सुयशवाला होता है। दशमेश नवम में हो लग्नेश दशमभाव में हो लग्न से पचमभाव में चन्द्रमा हो तो जातक सत्कीर्ति में विख्यात होता है ॥२३७-२५६॥

अथैकादशभावफलम्

लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत्केन्द्रत्रिकोणयो ॥ बहुलाभ तदा कुर्यादुच्चसूर्याशोऽपि वा ॥२५७॥ लाभेशे धनराशिस्थे धनेशे केन्द्रसंस्थिते ॥ गुरुणा सहिते भावे गुरुलाभ विनिर्दिशेत् ॥२५८॥ पदत्रिंशे वत्सरे प्राप्ते सहस्रद्वयनिष्कभाक् ॥ केन्द्रत्रिकोणने भावेनाथे शुभसमन्विते ॥ चत्वारिंशे तु संप्राप्ते सहस्रार्ध च निष्कभाक् ॥२५९॥ लाभस्थाने गुरुयुते धने चद्रसमन्विते ॥ भाग्यस्थानगाते शुके पदसहस्राधिपो भवेत् ॥२६०॥ लाभोच्च लाभो जीवे गुरुचंद्रेण रायुते ॥ धनधाम्याधिप श्रीमानूरत्नाद्याभरणैर्युत ॥२६१॥ लाभेशे लग्नभावस्थे लग्नेशे लाभसयुते ॥ त्रयस्त्रिंशे तु संप्राप्ते सहस्रनिष्कभागभवेत् ॥२६२॥ धनेशे लाभराशिस्थे तदीशे धनराशिगे ॥ विवाहात्परतश्चैव बहुभाग्य समादिशेत् ॥२६३॥ धर्पेशे लाभराशिस्थे लाभेशे भ्रातृसंस्थिते ॥ भ्रातृभावाद्भनप्राप्तिर्दिव्याभरणसयुत ॥२६४॥ लाभे पापे च व्यये पापयुक्ते दृष्टे पापे क्षेत्रमुत्तेज युक्ते ॥ लाभोत्कामे लाभविष्टे निरर्थं सौम्यार्थं यो वीक्षण विघ्ननाश ॥२६५॥

एकादशभाव फल

लाभेश लाभ में हो अथवा केन्द्र या त्रिकोण में हो तो बहुत लाभ वारक होता है। उच्चराशि का और सिंह नवाश में और भी श्रेष्ठ है। लाभेश द्वितीय में हो तथा द्वितीय

८ मे हो और गुरु से युक्त हो तो अच्छा बड़ा लाभ होता है। और छत्तीसवे वर्ष में दो हजार क्रमुद्रा (प्राचीन मुद्रा सुवर्ण की के हिसाब से तो बहुत होता है) का लाभ होता है। भेष केन्द्र या त्रिकोण में शुभग्रह युक्त हो तो चालीसवे वर्ष में ५०० निष्क प्राप्त होता है। भस्मान में गुरु हो, द्वितीय में चन्द्रमा हो भाग्यस्थान में शुक्र हो तो छ हजार निष्कमुद्रा धनी होता है। लाभस्थान में गुरु हो, बलवान् चन्द्रमा से युक्त हो तो जातक धनधान्ययुक्त न-भूषणवाला होता है। लाभेश लग्न में और लक्षेश लाभ में हो तो ३३ वे वर्ष में एक हार निष्क की प्राप्ति होती है। धनेश लाभ में और लाभेश धन में हो तो विवाह के बाद ही लग्नशाली होता है। तीसरे भाव का स्वामी लाभस्थान में हो और लाभेश तृतीय में हो तो जाता से श्रेष्ठ वस्त्राभरणादि प्राप्त होते हैं। लाभस्थान में और व्यवभाव में पापग्रह हो या दृष्टि हो तथा ग्रह स्वगृही होकर युक्त या द्रष्टा हो और लाभ से सप्तमभाव पर भी पापदृष्टि युक्त हो तो लाभ में विघ्न होता है और सौम्यदृष्टि हो तो विघ्नोका नाश होता है। २५७-२६५॥

अथ व्यवभावफलम्

चन्द्रो व्याधिपो धर्मलाभमन्त्रेषु संस्थितः ॥ स्वोच्चस्वर्क्षनिजाशे वा लाभधर्मात्मजाशके ॥ दिव्या गाराविपर्ययो दिव्यगद्यैकभोगवान् ॥ २६६॥ परार्थरमणो दिव्यवस्त्रमात्याविभूषणः ॥ परार्थसंयुतो वित्तो दिनानि नयति प्रभुः ॥ २६७॥ एव स्वगन्तुनीचाशे अष्टाशे बाष्पमे रिषी ॥ संस्थितः कुपते जात कातामुख विवर्जितम् ॥ २६८॥ व्याधिपक्षपरिकृतात दिव्यभोगनिराकृतम् ॥ सहिकेद्रत्रिकोणस्थ स्वस्त्रियालकृत स्वयम् ॥ २६९॥ एव भ्रात्रादिभावेपुतत्तत्तर्व विचारयेत् ॥ लग्नस्य पूर्वार्द्ध १०।११।१२।१३। गता नभोगा फल प्रदद्युस्त्वपरोक्षक ते ॥ परार्द्ध ४।५।६।७।८।९। घट्कोपगता परोक्ष फल वदतीति बुधा पुराणा ॥ २७०॥ व्यवस्थानगतो राहुर्भौमार्करविसंयुतः ॥ तदीशेनार्कसंयुक्ते नरके पतन भवेत् ॥ २७१॥ व्यवस्थानगते सौम्ये तदीशे स्वोच्चराशिगे ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे परोक्ष स्यान्न सशयः ॥ २७२॥ व्यपेशे पापसंयुक्ते व्यपे पापसमन्विते ॥ पापग्रहेण सद्रष्टे देशादेशांतर गतः ॥ २७३॥ व्यपेशे शुभराशित्वे व्यपेक्षे शुभसंयुक्ते ॥ शुभग्रहेण सद्रष्टे स्वदेशात्सचरो भवेत् ॥ २७४॥ व्यपे मदादिसंयुक्ते भूमिजेन समन्विते ॥ शुभदृष्टेऽथ संप्राप्तिः पापमूलाद्धनार्जनम् ॥ २७५॥ लग्नेशे व्यपराशित्वे व्यपेशे लग्नसंयुक्ते ॥ मृगपुत्रेण संयुक्ते धर्ममूलाद्धनव्ययम् ॥ २७६॥ अग्रे जात रविर्हन्ति पृष्ठे जात शनश्चर ॥ अग्रज पृष्ठज हति सहजस्यो धरामुतः ॥ २७७॥ पत्नीस्थाने यदा राहुः पापपुग्मेन वीक्षितः ॥ पत्नी योगस्थिता तस्य भूतापि त्रिपतेऽचिरात् ॥ २७८॥ पृष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः ॥ अष्टमे च यदा सौरिस्तस्य भार्या न जीवति ॥ २७९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे द्वादशमांशविचारकथन नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४॥

व्यवभावफलम्

व्यवभाव का स्वामी होकर चन्द्रमा ५।९।११ में स्थित हो और अपनी राशि या नवाश या उच्च का हो अथवा ५।९।११ वे नवाश में हो तो अति सुन्दर भवान तथा अति सुन्दर भोग

विभूति वाला होता है। उच्च भर उत्तम भोग भोगता है। और यदि वही चन्द्रमा मधुराशि में नीच अण वाला होकर ६।८ भाव में हो तो स्त्रीमुख से रहित करता है और अधिक खर्च से दुःखी तथा अच्छे पदार्थों से रहित रहता है॥ और वह चन्द्रमा निर्बल होकर भी केन्द्र या त्रिकोण भावों में हो तो अपनी स्त्री का सुख रहता है॥ इसी प्रकार भ्राता, आदि के लिए उनके भाव से व्ययेश या चन्द्रमा से उपर्युक्त योगानुसार विचार करना चाहिये॥ लग्न के पूर्वार्द्ध भाग (१।२।३।१०।११।१२) में स्थित ग्रह प्रत्यक्ष फल देते हैं। और लग्न के परार्द्ध भाग में स्थित ग्रह परोक्ष फल देते हैं (परार्द्धभाग की 'पटकोप' सजा है) यह प्राचीन आचार्यों का कथन है॥ व्ययस्थान में स्थित राहु सूर्य, मंगल, शनि युक्त हो अथवा व्ययेश सूर्य युक्त हो तो (कुर्म के फल से) नरक में वास होता है॥ व्ययस्थान में बुध हो और उसका स्वामी उच्च राशि में हो शुभग्रह युक्त और शुभदृष्ट हो तो यज्ञ, दान, धर्म आदि परोक्ष फलप्रद कर्म में व्यय होता है॥ व्यय स्थान और स्वामी पाप ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो देश देशान्तरो में भ्रमण करता है। (एक स्थान पर जम कर नहीं रह सकता) व्ययेश शुभ राशि में हो, व्ययभाव में शुभ ग्रह युक्त हो या शुभग्रह देखते हो तो अपने देश में ही सचरण (यातायात) करता रहता है॥ व्ययभाव में शनि मंगल आदि हो परन्तु शुभग्रहों की दृष्टि हो तो पापजनक कार्यों से घनार्जन होता है॥ लग्नेश ग्रह व्ययभाव में हो और व्ययेश लग्न में हो और शुक्र युक्त हो तो धर्म कार्यों में धन का खर्च होता है॥ (यह अगला श्लोक तीसरे भावफल में होना चाहिये) तीसरे भाव में रावि हो तो अपने जन्म के बाद जन्म लेनेवाले भाइयों को मारता है। और शनैश्चर अपने से पहिले जन्म लेनेवालों को मारता है। और मंगल यदि तीसरे भाव में स्थित हो तो बड़े छोटे सभी भाइयों को मारता है॥ भार्यास्थान में जब राहु हो और दो पापग्रहों से दृष्ट हो तो उस जातक के प्रथम तो पत्नी हो नहीं, और हो भी तो जल्दी ही मृत्यु को प्राप्त होती है॥ छठे भाव में मंगल, सप्तम में राहु और अष्टम भाव में शनि हो तो उसकी स्त्री जीवनलाभ नहीं कर सकती। (इन २ श्लोकोंका सम्बन्ध सप्तम भावफलसे है) बारहों भावों का फल समाप्त ॥ २६६-२७९ ॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० द्वादशभावविचारकथन नामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

सैत्रेय उवाच-

परजातः कथं ज्ञेयः कथं ज्ञेयः शुभाशुभम् ॥ एतत्सर्वं समाचक्ष्व पहराशिकल शुभम् ॥ १ ॥
पराशर उवाच-तुर्यचन्द्रेक्षितः श्रेष्ठः शत्रुभिर्वा युतेक्षितः ॥ परेण जायते बालो निश्चितं च यथा पशुः ॥ २ ॥ त्रिपण्डितमुताधीशो यदा लग्ने स्थितस्तदा ॥ तथापि परजातः स्याद्भृत्याद्यन्यमुता-
दिभिः ॥ ३ ॥ लग्ने क्रूरोऽस्तगः सौम्यः कर्मस्थो रविनन्दनः ॥ अस्मिन्योगे च यो जातो जायते वर्णसकरः ॥ ४ ॥ मूर्तो चेन्दुश्च बुधश्चिह्नं भूमिनदनमार्गवी ॥ यदा पंचदशावर्णे तदापि परबालकः ॥ ५ ॥ पहराजे स्थिते लग्ने चतुर्थे सिहिकामुतः ॥ स्वदेवरात्सुतोत्पत्तिर्जाता तस्या न सशयः ॥ ६ ॥ लग्ने राहुपरापुत्री सप्तमे चंद्रमास्करी ॥ नौतेन जायते बालो यदि राज्ञी भवेदपि ॥ ७ ॥ सूर्ययुक्तेदुल्लग्नस्थे सप्तमे भौममास्करी ॥ अस्मिन्योगे यदा जन्म परेणैव हि जायते ॥ केन्द्रं शून्यं भवेद्यस्य सोऽपि जातः परेण हि ॥ ८ ॥ द्विपण्डितमरिः केपु यहास्तिष्ठति यस्य स ॥ परजातो भवेत्सत्यमन्त्रप्रापि च सस्थितः ॥ ९ ॥ एकस्थाने यदाऽस्तेशालग्रेषी सोऽपि जारजः

॥१०॥ जीवो निशाकरं लग्नं नेक्षेतापि स जारजः ॥ जीववर्गविहीनांशे तदा योगः पराजने
॥११॥ द्विशत्रू चैककेन्द्रस्यावन्यग्रहविजितौ ॥ तदापि परजातः स्यात्स्थिरलग्ने विरोधतः
॥१२॥ चतुर्थे दशमे लग्ने पापयुग्ं विधुसंस्थितः ॥ लग्नेशेनेक्षितं लग्नं तदापि परबालकः ॥१३॥
लग्नेशे संस्थिते लग्ने परजातः कदाचन ॥ भगोऽयं सर्वयोगानामिति ते कथितं
मया ॥१४॥

परजातयोगफल

मैत्रेय बोले-परजात (दूसरे के संयोग से जन्म होना) को किन योगों से जाने? और उसका शुभाशुभ फल कैसे जाने? यह और भाव के फल सब कथन करिये।

पराशरजी ने कहा-चतुर्थ भावस्थ चन्द्र से दृष्ट और शत्रुग्रह से युक्त या दृष्ट तो बालक निश्चय परजात है। ३।६।२।५ इन स्थानों का कोई भी स्वामी लग्न में हो तो भी उपर्युक्त योग में परजात है और यह गर्भाधान नौकर आदि से हुआ है। लग्न में पापग्रह, सातवें भाव में अस्त बुध, दशम में शनि इस योग में हुआ बालक वर्णसकर है। लग्न में चन्द्रमा, तीसरे मंगल, शुक्र हो तो पन्द्रह आवरण में भी परबालक है। लग्न में शनि या सूर्य चतुर्थ भाव में राहु हो तो अपने देवर से सन्तान की उत्पत्ति हुई है। लग्न में राहु, मंगल हो, सप्तम में सूर्य चन्द्रमा हो तो रानी होने पर भी नीच जाति से बालक हुआ है। लग्न में सूर्य, चन्द्रमा हो, सप्तम में मंगल सूर्य हो इस योग में जन्म लेने वाला दूसरे से ही होता है। केन्द्रस्थान शून्य हो तो भी पर से ही जन्म है। २।६।८।१२ इन स्थानों में अधिकतर ग्रह हो तो परजात है। अन्य स्थान में १-२ ग्रह हो तो भी परजात है। लग्नेश और सप्तमेश दोनों एक स्थान में हो तो परजात होता है। बृहस्पति यदि चन्द्रमा या लग्न को नहीं देखता हो तो भी जारज है। षड् वर्ग में बृहस्पति का अणु न हो तो जारज है। दो शत्रुग्रह किसी एक केन्द्र स्थान में हो और अन्य ग्रह न हो तो भी परजात है, स्थिर लग्न में विशेष करके योग बलवान् है। चतुर्थ, दशम तथा लग्न में पापग्रह सहित चन्द्रमा हो और लग्नेश से लग्न दृष्ट हो तो भी परजात है। लग्नेश लग्न में हो तो परजात कभी ही होता है। यह परजातभग सब कथित योगों का भजक है। सो मंत्र तुमको कहा गया है ॥१-१४॥

अथ लग्नेशद्वादशभावस्थितफलमाह

लग्नेशे लग्ने पुंसः स्वदेहस्वभुजाक्रमी ॥ मनस्वी चातिचांचल्यो द्विभार्यः परगोपि वा ॥१५॥
लग्नेशे धनगे लाभे सलाहः पीडितो नरः ॥ सुशीलो धर्मविन्मानी बहुदारगुणैर्धृतः ॥१६॥
लग्नेशे सहजे षष्ठे सिंहतुल्यपराक्रमी ॥ सर्वसम्पदुत्तो धानी द्विभार्यो मतिमान्शुखी ॥१७॥
लग्नेशे दशमें तुर्ये पितृमातृमुखान्वितः ॥ बहुभ्रातृपुत्रः कानो गुणसौंदर्यसम्पुतः ॥१८॥ लग्नेशे
पञ्चमे मानो सुतसौख्यं च मध्यमम् ॥ प्रयमापत्यनाशः स्यात्कीर्णो राजप्रवेशकः ॥१९॥ लग्नेशः
सप्तमे यस्य भार्या तस्य न जीवति ॥ विरक्तो वा प्रवासी वा दरिद्रो वा नृपोपि वा ॥२०॥
लग्नेशे व्ययगोष्ठस्थे सिद्धविद्याविशारदः ॥ शूरी चौरौ महाशोधी परनार्यतिमोगृह्णतु ॥२१॥
लग्नेशे नवमे पुंसो भाग्यवान् जनबल्लभः ॥ विष्णुभक्तः पटुर्वाग्मी पुत्रदारधनैर्धृतः ॥२२॥

लघेशद्वादशभावफल

लघेश जिसके लग्न में हो वह अपनी कमाई करनेवाला, मनस्वी, चंचल, दो स्त्री वाला होता है॥ लघेश दूसरेभाव में हो तो लाभ करनेवाला, पीछा भोगनेवाला, सुशील, धर्मात्मा, मानी तथा स्त्रीभावप्रधान होता है॥ लघेश के तीसरे भाव में होने से तथा छठे भाव में होने से सिंह के समान पराक्रमी, सर्वगुणसम्पन्न, मतिमान्, सुखी, मानी, दो स्त्रियोवाला होता है॥ लघेश जिसके चौथे या दशम भाव में हो—वह माता पिता का सुखवाला, भाइयों में युक्त, कामी, सुन्दर, गुणी होता है॥ लघेश पञ्चम में हो तो मानी तथा कम सन्तानवाला, दूसरी स्त्री तथा क्रोधी और राजकार्य में निपुण होता है॥ लघेश सप्तम भाव में हो तो स्त्री सुख से वंचित, विरक्त, प्रवासी, दरिद्र या राजा होता है॥ लघेश बारहवें या आठवें हो तो अनेक विद्यायुक्त, जुवारी, चोर, क्रोधी, परदारगामी होता है॥ लघेश नौवें हो तो भाग्यवान्, सबका प्रेमी, विष्णुभक्त, चतुर, वाचाल, स्त्री-पुत्र-धनयुक्त होता है ॥१५-२२॥

अथ धनेशद्वादशभावस्थितफलमाह

धनेशे धनगे सोऽथ धनवान् गर्वसयुतः ॥ भाग्यद्वयं त्रयं चापि सुतहीनं प्रजायते ॥२३॥ धनेशे सहजे तुर्ये विक्रमी मतिमान् गुणी ॥ परदाराभिगामी च लोभी वा देवनिन्दकः ॥२४॥ धनेशे रिपुगे शत्रोर्धनं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ शत्रुतो वित्ततारा स्याद्गुदे चोर्वोर्भवेच्च रुक् ॥२५॥ धनेशे सप्तमे वैद्य परजायाभिगामिकः ॥ जाया तस्य भवेद्द्वेभ्या मातापि व्यभिचारिणी ॥२६॥ धनेशे मृत्युगेहस्थे भूमिद्रव्यं लभेद्भुवम् ॥ जायासौख्यं भवेत्स्वल्पं ज्येष्ठभ्रातृमुखं न हि ॥२७॥ धनेशे नवमे लाभे धनवानुद्यमी पटुः ॥ बाल्यरोगी सुखी पञ्चाष्टावदायुः समाप्यते ॥२८॥ धनेशे दशमे यस्य कामी मानी च पण्डितः ॥ बहुदारधनैर्युक्तः सुतहीनोऽपि जायते ॥२९॥ धनेशे व्ययगे मानी साहसी धनवर्जितः ॥ जीविकां नृपगेहाच्च ज्येष्ठपुत्रमुखं न हि ॥३०॥ धनेशे च तनौ पुत्री स्वकुटुम्बस्य कटकः ॥ धनवाग्निष्ठुरः कामी परकार्येषु तत्परः ॥३१॥

धनेश द्वादशभाव फल

धनेश (द्वितीयेन) द्वितीय में हो तो धनवान्, अभिमानी हो, स्त्री दो या तीन तथा पुत्रहीन होता है॥ धनेश तीसरे या चौथे भाव में हो तो विक्रमी, बुद्धिमान्, गुणी, परस्त्रीगामी, लोभी, देवनिन्दक होता है॥ धनेश छठे भाव में हो तो शत्रु का धन प्राप्त होता है तथा बाद में शत्रु के कारण ही नष्ट होता है तथा जाय की बीमारी होती है॥ धनेश सप्तम में हो वैद्य, परस्त्रीसेवी तथा स्त्री और माता व्यभिचारिणी होती है॥ धनेश अष्टम में हो तो भूमि में गड़ा हुआ धन प्राप्त होता है, स्त्रीमुख कम तथा बड़े भाई का सुख नहीं होता॥ धनेश नौवें या लाभ में हो धनवान्, उद्यमी, चतुर, भोगी, बाल्य अवस्था का रोगी बाद में सदा सुखी रहता है॥ धनेश दशवें हो तो कामी, मानी, पण्डित, अनेक स्त्रीवाला, धनी तथा सन्तान हीन होता है॥ धनेश व्ययभाव में हो तो मानी, साहसी, दरिद्र तथा राजसेवी होता है और ज्येष्ठ पुत्र नहीं रहता॥ धनेश लग्न में हो तो पुत्रवाला, अपने कुटुम्ब का दोही, धनवान् निष्ठुर, कामी तथा औरों के काम में सहायक होता है ॥२३-३१॥

अथ तृतीयेशद्वादशभावस्थितफलमाह

तृतीयेशे तृतीयस्थे विक्रमी सुतसयुतः ॥ धनयुक्तो महादृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम् ॥३२॥
 तृतीयेशे सुखे कर्म पंचमे वा सुखी सदा ॥ अतिकूरा भवेद्भार्या घनादधो मतिमान्भवेत् ॥३३॥
 तृतीयेशो रिपी यस्य भ्राता शत्रुर्महाधनी ॥ मातुलानां सुखं न स्यान्मातुल्या भोगमिच्छति ॥३४॥
 तृतीयेशे व्यये भाग्ये स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत् ॥ पिता तस्य महाचोरः सुखेऽपि दुःखदर्शकः ॥३५॥
 तृतीयेशेऽष्टमे धूने राजद्वारे मृतिर्भवेत् ॥ चौरा वा परिणामी वा बाल्ये कष्टं दिने दिने ॥३६॥
 तृतीयेशे तनी लाभे स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥ मूर्खः शूरो महारोगी साहसी परसेवकः ॥३७॥
 गुदाभञ्जनिकः स्थूलः परभार्याधने रुचिः ॥ स्वत्वारभी सुखी न स्यात्तृतीयेशे धने गते ॥३८॥

तृतीयेश द्वादशभावफल

तृतीयेश तृतीय में हो तो विक्रमी सन्तान, सुखवाला, धनी और सुखी, सदा प्रसन्न रहनेवाला होता है ॥ तृतीयेश चौथे भाव में दशवे या पंचम में हो तो सदा सुखी, मतिमान्, धनी किन्तु स्त्री क्रूर स्वभाववाली होती है ॥ तृतीयेश छठे भाव में हो तो महाधनी पर उसका भ्राता द्रोही तथा मामा न रहे पर मामी से आसक्त रहे ॥ तृतीये नवम तथा द्वादश में हो तो स्त्री से भाग्योदय हो और पिता महाचोर हो, सुख में भी कलह करे ॥ तृतीयेश सातवे आठवे में हो तो राजकार्य में मृत्यु हो, चोर और परगामी तथा सदारोगी रहता है ॥ तृतीयेश लक्ष में या लाभ में हो तो स्वयं कमाई करनेवाला, दुर्बल, मूर्ख, रोगी, साहसी, परसेवी होता है ॥ तृतीयेश धनस्थान में हो तो गुदगामी, स्थूलशरीर, अन्य स्त्री के धन का लालची, कम काम करनेवाला तथा दुःखी होता है ॥३२-३८॥

अथ चतुर्थेशद्वादशभावस्थितफलमाह

चतुर्थेशे चतुर्थे मन्त्री भवेत्सर्वधनाधिपः ॥ चतुरः शीलवान् मानी घनादधः स्त्रीप्रियः सुखी ॥३९॥
 चतुर्थेशे पंचमे भाग्ये सुखी सर्वजनप्रियः ॥ विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥४०॥
 सुखेशे शत्रुगेहस्ते तदा स्याद्बहुपातुकः ॥ क्रोधी चौराऽभिचारी च दुष्टचित्तो मनस्व्यपि ॥४१॥
 सुखेशे सप्तमे लग्ने बहुविद्यासमन्वितः ॥ पित्रार्जितधनत्वागी सभायां मूकध्वज्वेत् ॥४२॥
 सुखेशे व्ययर्धस्थे सुखहीनो भवेन्नरः ॥ पितृसौख्यं भवेदल्पं क्लीबो वा जारजोपि वा ॥४३॥
 सुखेशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः ॥ रसाग्रणी महादृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम् ॥४४॥
 सुखेशे सहजे लाभे नित्यरोगी भवेन्नरः ॥ उदारो गुणवान्दाता स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥४५॥
 सर्वसपत्न्यतो मानी साहसी कुहकान्वितः ॥ कुटुंबसयुतो भोगी सुखेशे च धने गते ॥४६॥

चतुर्थेश द्वादशभावफल

चतुर्थेश अपने अश में होकर चतुर्थभाव में स्थित हो तो सब प्रकार की धन सम्पत्तिवाता, चतुर, शीलवान्, मानी एवं स्त्रीप्रिय, सुखी होता है ॥ चतुर्थेश पंचम तथा भाग्य में हो तो

सबका प्रेमी, सुखी, विष्णुभक्त, मानी और अपने उद्योग से धनी होता है॥ मुखेश यदि छोटे भाव में हो तो यात्रारत, क्रोधी, चोर, दुष्ट, अपकारी और मनस्वी होता है॥ मुखेश सप्तमभाव में या लग्न में हो तो अनेक विधायुक्त, पिताकी सम्पत्ति का त्यागी और सभाचातुर्यहीन होता है॥ मुखेश ८।१२ में हो तो जातक सुखरहित, पितृमुखवर्चित, नपुंसक या जारज होता है॥ मुखेश दशम में हो तो राजमान्य, अद्भुत सुखभोगी, सदासुखी तथा रसायन जाननेवाला होता है॥ मुखेश तृतीयभाव में या लाभ में हो तो सदा रोगी, उदार, गुणवान् तथा निजोपार्जित धनी होता है॥ मुखेश धनभाव में हो तो सर्वसम्पत्ति युक्त, मानी, साहसी, भोगी, कुटुम्बी, छली एवं कपटी होता है ॥३९-४६॥

अथ मुखेशद्वादशभावस्थितफलमाह

मुखेशः पचमे यस्य तस्य पुत्रो न जीवति ॥ क्षणिकः क्रूरभाषी च धार्मिको मतिमान् भवेत् ॥४७॥
मुखेशे षष्ठरिः फलस्य पुत्रः शत्रुत्वमाप्नुयात् ॥ मृतापत्यो ग्राह्यपुत्रो धनपुत्रोऽप्यवा भवेत् ॥४८॥
मुखेशे कामगे मानी सर्वधर्मसम्पन्नितः ॥ तुल्यदृष्टिस्तनुस्वामी भक्तिसुक्तैकतेजसा ॥४९॥ मुखेशे चापुषि धने बहुपुत्री न शशयः ॥ कासश्वासी सुखी न स्यात् क्रोधयुक्तो धनान्वित ॥५०॥ मुखेशे नवमे कर्मे पुत्रो भूपसमो भवेत् ॥ अथवा ग्रन्थकर्ता च विख्यातः कुलदीपकः ॥५१॥ मुखेशे लाभभवने पंडितो जनबल्लभः ॥ ग्रन्थकर्ता महादक्षो बहुपुत्रधनान्वितः ॥५२॥ मुखेशे लग्नसहजे मायावी पिशुनो महान् ॥ लोष्ट तु दत्तवान्नैव कल्पिद्द्रव्यस्य का कथा ॥५३॥ मुखेशे मातृभवने चिरं मातृमुख भवेत् ॥ लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिबोऽप्ययवा गुरुः ॥५४॥

मुखेश द्वादशभावफल

पचमेश पचमभाव में शुभग्रहयुक्त हो तो पुत्रवान्, क्षणिक मिष्टभाषी, धर्मस्त्रिमा तथा बुद्धिमान् होता है॥ मुखेश ६।१२ में हो तो अपना पुत्र ही शत्रु होता है और जीता भी नहीं है। अतः दत्तक या धन से खरीदा हुआ पुत्र होता है॥ मुखेश सप्तमभाव में हो तो अभिमानी, धार्मिक, लम्बा कद, गठीला शरीर, भक्त और तेजस्वी होता है॥ मुखेश अष्टम भाव तथा धनभाव में हो तो अनेक सन्तानवाला, श्वासश्वासी रोग होने से दुःखी, क्रोधी और धनी होता है॥ मुखेश नवम या दशमभाव में हो तो उसका पुत्र राजा के समान हो अथवा ग्रन्थकर्ता विख्यात और अपने कुल का नामी होता है॥ मुखेश लाभस्थान में हो तो पण्डित और समाजसेवी, ग्रन्थकर्ता, अत्यन्त चतुर, अनेक पुत्र, धन से मुक्त होता है॥ मुखेश लग्न या तृतीयभाव में हो तो मायावी (कपटी) पिशुन (चुगलखोर) जीवन में विभीषण को कुछ भी न देनेवाला होता है। मुखेश चौथे भाव में हो तो माता पिताका मुख पूरा हो, लक्ष्मीयुक्त, बुद्धिमान् या तो सचिव (मन्त्री) या गुरु होता है ॥४७-५४॥

अथ षष्ठेशद्वादशभावस्थितफलमाह

षष्ठेशे रिपुभायस्य स्वतातिः शत्रुवद्भवेत् ॥ परजातिर्भवेन्मित्रं भूमी न चलति ध्रुवम् ॥५५॥
षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्ने वा कीर्तिमान् भवेत् ॥ धनवान् गुणवान् मानी साहसी पुत्रवर्जितः ॥५६॥

अथाष्टमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

पूती चौरोज्ञयावादी गुरुनिदासु तत्परः ॥ अष्टमे ह्यष्टमस्थाने भार्या पररता भवेत् ॥६९॥
 अष्टमेशे तप स्थाने महापापी च नास्तिकः ॥ सुतहा ह्यथवा बध्या परभार्याधने रुचि ॥७०॥
 अष्टमेशे सुखे कर्मपिसुनो बधुवर्जितः ॥ मातापित्रोर्भवेन्मृत्यु स्वल्पकालेन भीतियुक् ॥७१॥
 अष्टमेशे सुते लाभे तस्य वृद्धिर्न जायते ॥ द्रव्य न स्थीयते गेहे स्थिरवृद्धिर्भवेज्जन ॥७२॥
 अष्टमेशे व्यये पण्डे नित्य रोगी प्रजायते ॥ जलसर्पादिकादघातो भवेत्तस्य च शैशवे ॥७३॥
 अष्टमेशे तनौ कामे भार्यापुंगव समादिशेत् ॥ विष्णुद्रोहरतो नित्यं घणरोगी प्रजायते ॥७४॥
 धन तस्य भवत्स्वल्प गत वित्त न लभ्यते ॥ अष्टमेशे धने बाहुबलहीन प्रजायते ॥७५॥

अष्टमेशद्वादशभावफल

अष्टमेश अष्टम मे हो तो जुवारी, चोर, बूठा, गुरुनिन्दक हो और उसकी स्त्री व्यभिचारिणी होती है॥ अष्टमेश यदि ११ मे हो तो पापी, नास्तिक, उसकी स्त्री बन्ध्या हो तथा आपका मन सदा दूसरे के धन और स्त्री में रहता है॥ अष्टमेश ४।१० मे हो तो चुगलखोर, बन्धुहीन, माता तथा पिता का मुख कम रहे, और डरपोक होता है॥ अष्टमेश ५।११ मे हो तो परिवार मे वृद्धि नहीं हो और घर मे धन स्थिर नहीं रहे, जातक स्थिरमति हो॥ अष्टमेश ६।१२ मे हो तो सदारोगी रहे, बाल्य अवस्था मे जल या सर्प से घात हो॥ अष्टमेश लग्न या सप्तम मे हो तो दो भार्या हो, सदा ईश्वर द्रोही और घणरोगी होता है॥ अष्टमेश धनस्थान मे हो तो दरिद्री, साहस तथा बलहीन होता है ॥६९-७५॥
 (यहा फल कथन मे ३।९ भाव का फलादेश का श्लोक अनुपलब्ध है)

अथ भाग्येशद्वादशभावस्थितफलमाह

धनधान्ययुतो नित्य गुणसौंदर्यसयुतः ॥ बहुभ्रातृमुख युक्त भाग्येशे नवमे स्थिते ॥७६॥ भाग्येशे दशमे तुर्यं मन्त्री सेनापतिर्भवेत् ॥ पुण्यवान्मुखा वाग्मी साहसी क्रोधवर्जितः ॥७७॥ भाग्येशे पचमे लाभे भाग्यवान् जनबल्लभः ॥ गुरुभक्तिरतो मानी धीरो धीरगुणयुतः ॥७८॥ भाग्येशे तु तुले रिक्ते भाग्यहीनो भवेद्बधुवम् ॥ मानुसस्य मुख न स्याज्ज्येष्ठभ्रातृमुख तथा ॥७९॥ भाग्येशे च मदे कल्पे गुणवान्कीर्तिमान् भवेत् ॥ रुदाचिप्र भवेत्सिद्ध यत्कार्यं कर्तुमिच्छति ॥८०॥ भाग्येशे सहजे वित्ते सदा भाग्यानुचितकः ॥ धनवान् गुणवान्कामी पंडितो जनबल्लभः ॥८१॥

भाग्येशद्वादशभावफल

भाग्येश नयमभाव मे हो तो धनधान्ययुक्त और गुणी, सुन्दर तथा अनेक भ्राता हो॥ भाग्येश १०।४ मे हो तो मन्त्री या सेनापति हो, पुण्यात्मा, मुयशाला, वाग्मी (अब्ध बोलनेवाला) साहसी और क्रोधरहित हो॥ भाग्येश ५।११ मे हो तो भाग्यवान्, बन्धुप्रेमी, गुरुभक्त, धीर, मानी होता है॥ भाग्येश—तुलाराशि मे या बारहवे म्यान मे हो तो

भाग्यहीन मामा का सुख तथा बड़े भाई के सुख से हीन होता है। भाग्येश लग्न या सप्तम मे हो तो गुणवान्, कीर्तिवाला, किन्तु कभी कभी इच्छित कार्य सिद्ध नहीं हो। भाग्येश २।३ मे हो तो भविष्य चिन्तक, गुणी, धनी तथा कामी पंडित एव जनप्रिय होता है॥७६-८१॥

अथ दशमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

दशमेशे सुखे कर्म ज्ञानवान्सुखविक्रमी ॥ गुरुदेवार्चनरतो धर्मात्मा सत्यसमुत्तः ॥८२॥ दशमेशे सुते लाभे धनवान्पुत्रवान् भवेत् ॥ सर्वदा हर्षसमुत्तः सत्यवादी सुखी नरः ॥८३॥ कर्मसोऽरिबन्धे यस्य शत्रुभिः परिपीडितः ॥ चातुर्यगुणसंपन्नः क्वचिच्च न सुखी नरः ॥८४॥ दशमाधिपतौ लग्ने कवितागुणसमुत्तः ॥ ब्राह्मे रोगी सुखी पश्चादर्थवृद्धिर्दिने दिने ॥८५॥ धने मदे च सहजे कर्मसो यदि संस्थितः ॥ मनस्वी गुणवान्वाग्मी सत्यधर्मसमन्वितः ॥८६॥

दशमेशद्वादशभावफल

दशमेश ४।१० मे हो तो जानी सुखी पराक्रमी, देवगुरुभक्त, धर्मात्मा तथा सत्यवादी होता है। दशमेश ५।११ मे हो तो धनवान् और पुत्रवान्, सदा प्रसन्नचित्त, सुखी और सत्यवादी होता है। दशमेश ६।१२ मे हो तो जातक शत्रुओं से पीडित, चतुर तथा कभी-कभी दुःखी रहता है। दशमेश लग्न मे हो तो कविता करनेवाला तथा वात्स्यावस्था मे रोगी पश्चात् नीरोग और दिनानुदिन धनवृद्धि होती है। दशमेश २।७।३ मे हो तो मनस्वी, गुणी, वक्ता तथा सत्यवादी होता है ॥८२-८६॥

अथ लाभेशद्वादशभावस्थितफलमाह

लाभेशे संस्थिते लाभे स वाग्मी जायते ध्रुवम् ॥ पांडित्य कविता चैव वर्द्धते च दिने दिने ॥८७॥ प्राप्तिस्थानाधिपे रिःके म्लेच्छससर्गकारकः ॥ कामुको बहुकातश्च क्षणिको लम्पटः सदा ॥८८॥ लाभेशे संस्थिते लग्ने धनवान्सात्विको महान् ॥ समदृष्टिर्महान्वक्ता कौतुकी च भवेत्सदा ॥८९॥ लाभेशे च धने पुत्रे नानामुलसमन्वितः ॥ पुत्रवान्धार्मिकश्चैव सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥९०॥ लाभेशे सहजे वित्ते तीर्थेषु तत्परो महान् ॥ कुशलः सर्वकार्येषु केवलः शूलरोगवान् ॥९१॥ लाभेशे षष्ठभवने नानारोगसमन्वितः ॥ सर्वं सुखं भवेत्तस्य प्रवासी परसेवकः ॥९२॥ लाभेशे सप्तमे रद्रे भार्या तस्य न जीवति ॥ उदारो गुणवान्कर्मां मूर्खो भवति निश्चितम् ॥९३॥ लाभेशे गगने धर्मं राजपूज्यो धनाधिपः ॥ चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः ॥९४॥

लाभेश द्वादशभावफल

लाभेश स्वगृही हो तो वाग्मी, पण्डित और दिनानुदिन उत्तम कविता करनेवाला होता है। लाभेश १२ भाव मे हो तो म्लेच्छ ससर्ग, कामी अनेक स्त्रीससर्ग, क्षणिकमति और लम्पट होता है। लाभेश लग्न मे हो तो धनवान्, सात्विक भाववाला, समदर्शी श्रेष्ठवक्ता तथा कौतुकी होता है। लाभेश २।५ मे हो तो नानामुलभोगी, पुत्रवान्, धार्मिक तथा सर्वसिद्धिमम्पन्न होता है। लाभेश २।३ मे हो तो तीर्थसेवी, सर्वकार्यकुशल होता है केवल शूल रोग रहता है। लाभेश छठे भाव मे हो तो नाना व्याधिग्रस्त, सर्वसुखसम्पन्न तथा परदेशवासी

एवं नीकरी करनेवाला होता है॥ लाभेश ७।८ में हो तो उसकी भार्या नहीं जीवे। उदार गुणी तथा कर्मी हो एवं भूख हो॥ लाभेश ९।१० में हो तो धनी, राजपूज्य, चतुर, सत्यवादी तथा धर्मत्मा होता है ॥८७—९४॥

अथ व्ययेशद्वादशभावस्थितफलमाह

व्ययेशेऽरिव्यये पापी मातृमृत्युविवर्तकः ॥ क्रोधी सन्तानदुःखी च परजायासु तपतः॥१५॥
व्ययेशे मयने लग्ने जायासीत्यं भवेन्नहि ॥ दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः ॥१६॥
व्ययेशे द्वितीये रंघ्रे विष्णुभक्तिसमन्वितः ॥ धार्मिकः प्रियवादी च सम्पूर्ण गुणसंपुतः ॥१७॥
भाषद्विषी प्रियद्वेयो गुरुद्वेयी भवेन्नरः ॥ व्ययेशे सहजे धर्मे स्वशरीरस्य पोषकः ॥१८॥ व्ययेशे
दशमे लामे पुत्रसीत्यं भवेन्नहि ॥ भणिभाणिवयमुक्तादि धत्ते किंचित्समालभेत् ॥१९॥ एतत्ते
कथितं विप्र भाषाणां च फलाफलम् ॥ बलायलविवेकेन सर्वेषां फलमादिशेत् ॥१००॥

व्ययेश द्वादशभावफल

व्ययेश ६।१२ में हो तो पापी तथा माता को मारने के सकल्प वाला, क्रोधी, सन्तान से दुःखी, परस्त्री-रत रहता है॥ व्ययेश लग्न या सप्तम में हो तो स्त्री सुखरहित, दुर्बल, कफरोगी, धन और विद्यारहित होता है॥ व्ययेश २।८ में हो तो विष्णुभक्त, धार्मिक, प्रियभापी, सम्पूर्ण-गुणयुक्त होता है॥ व्ययेश ३।९ में हो तो भाषद्विषी, तथा प्रियद्वेयी, गुरुद्वेयी एवं स्वयंपोषक होता है॥ व्ययेश १०।११ में हो तो पुत्र सुख नहीं होता, भणिभाणिका आदि का लाभ होता है॥ हे मैत्रेय! १२ भावों का यह फलाफल हमने कहा, ग्रहों के बल जानकर इनका फल कहना चाहिए॥

वक्त्री चेत्स्वचतुर्थः स्यात्फलं भीमो ददाति च ॥ बुधतुर्येऽथ देवेज्ये पञ्चमे शशिभार्गवी ॥१०१॥
सप्तमस्य तमध्वंसी पुत्रस्य नवमस्य च ॥ वित्तस्य विपुवत्यर्के ददाति स्वफलं विधुः ॥१०२॥ ग्रहे
पूर्णफले प्राप्ते फलं पूर्वं समादिशेत् ॥ अर्द्धमर्द्धं पादहीने तत्रेद पादसंघ्रिणा ॥१०३॥ भाषाणां
द्वादशानां च सर्वेषां फलमादिशेत् ॥ भावस्थानां ग्रहाणां च फलं ते कथितं मया ॥१०४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भावस्थग्रहाणां फलकथनं

नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

उद्दिष्ट ग्रह में वक्त्री मगल यदि चतुर्थभाव में स्थित हो तो पूर्णफल प्राप्त होता है। इसी प्रकार उद्दिष्ट ग्रह में चतुर्थ बुध हो, पञ्चम गुरु हो॥ चन्द्र-शुक्र मज्जम हो, शनि नवम हो, बर्क के सूर्य में चन्द्रमा दूसरे हो तो पूर्वोक्त भावफल होता है॥ और ग्रह पूर्णवक्त्री हों तो पूरा फल होता है॥ आधे बल में आधा और होनबल में चौथाई फल होता है॥ इस कथित ग्रह फल में १२ भावों का फल कहना चाहिये ॥१५—१०४॥

इति बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकाया भावस्थग्रहफलकथननाम
पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

अथ प्राणिनां पूर्वजन्मशापद्योतकम् पार्वत्युवाच

देवदेव जगन्नाथ शूलपाणि वृषध्वज ॥ केन योगेन मर्त्यानां जायते शिशुनाशनम् ॥१॥ तत्सर्वमथ
योगेन ब्रूहि मे शशिशेखर ॥ शापमोक्ष च कृपया प्राणिनामल्पमेघसाम् ॥२॥

पूर्वजन्म शापकथन

पार्वतीजी ने कहा, हे शूलपाणि वृषध्वज! भगवन् महादेव! जगत् के स्वामी ॥ किस
योग से मनुष्यों के सन्तान की हानि होती है? आप सिद्धयोगी है अतः यह सब कहिये और हे
शशि शेखर! उन अज्ञानी पुरुषों के शाप को दूर करने का उपाय भी कहियेगा ॥१॥२॥

शङ्कर उवाच

साधु पुष्ट त्वया देवि कथयामि सविस्तरात् ॥ धृणुष्वैकमना भूत्वा बलाबलवशादपि ॥३॥
जेय मुनिश्चित सर्वैराशिके विशेषतः ॥ मेधादिमीनपर्यन्त मूर्त्यादिद्वादशक्रमात् ॥४॥ भाव च
भावज ज्ञात्वा फल ब्रूयाद्विचक्षणः ॥ तनुर्वित्त बहुमातृपुत्रशत्रुस्मरोमृति ॥५॥ पितृकर्म च
लाभ च व्ययाता भावसज्जका ॥ गुणैर्ग्रे शदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु च ॥६॥ सर्वेषुबलहीनेषु
वक्तव्या त्वनपत्यता ॥ रव्यारराहुशनय पुत्रस्था बलसप्तयुता ॥७॥ कारकाद्यात्क्षीणबलादनप-
त्यत्वमादिशेत् ॥ पुत्रस्थानमते राहौ कुजेनापि निरीक्षिते ॥ कुजक्षेत्रगते वापि
सर्पशापात्सुतक्षयः ॥८॥ पुत्रेशे राहुसयुक्ते पुत्रस्थे भानुनन्दने ॥ चन्द्रदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सु-
तक्षयः ॥९॥

शकरजी ने कहा—हे देवि । तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया, ध्यान देकर सुनो। हम विस्तार
से सबका उत्तर कहते हैं। ग्रहों के बलाबल से बारह राशियों के भावों का सुनिश्चित फल
जाना जाता है। मेष से मीन पर्यन्त बारह राशियों का स्वरूप जानकर भाव और भाव का
फल जानकर कहना चाहिये ॥ १२ भावों के नाम कहते हैं तनु, वित्त, बन्धु, माता, पुत्र, शत्रु,
भार्या, मृत्यु धर्म, कर्म लाभ और व्यय ये बारह भाव हैं। वृहस्पति, सप्तेश, पुत्रेश इन सब
भावों के और भावेषों के बलहीन होने पर पुत्रहीनता कहनी चाहिये। सूर्य, मंगल, राहु और
शनि ये बलवान होकर पचम भाव में हों, पुत्रकारक हीनबल हो तो पुत्रहीनता कहनी चाहिये।
पचम भाव में राहु हो, मंगल देखता हो अथवा मंगल की राशि हो तो पूर्वजन्म के सर्प के शाप
से इस जन्म में पुत्र की मृत्यु होती है ॥ पचमेश राहुयुक्त हो, पचम भाव में शनि हो। चन्द्रमा
युक्त अथवा देखता हो, तो सर्प के शाप में पुत्र नाश होता है ॥३-९॥

कारके राहुसयुक्ते पुत्रेशे बलवर्जिते ॥ विलग्नो भौमयुते सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१०॥ कारके
भौमसयुक्ते तप्रे च राहुसयुते ॥ पुत्रस्थानेभ्यरे बुस्थे सर्पशापात्सुतक्षयः ॥११॥ भौमाशे
भौमसयुक्ते पुत्रेशे सौमनन्दने ॥ राहुमादिपुते सग्रे सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१२॥ पुत्रस्थाने
कुजक्षेत्रे पुत्रे राहुसमन्विते ॥ सौम्यदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१३॥ पुत्रस्था

भानुमंदाराः स्वर्मानुः शशिशोभिराः ॥ निर्बलो पुत्रलप्रेषौ सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१४॥ लग्नेशे राहुसंयुक्ते पुत्रेशे भीमसंयुते ॥ कारके राहुसंदृष्टे सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१५॥ तद्दोषपरिहारार्थं नागपूजां समारभेत् ॥१६॥ स्वगृहोक्तविधानेन प्रतिष्ठां कारयेत्पुत्रीः ॥ नागमूर्तिं सुवर्णेन कृत्वा पूजां समाचरेत् ॥१७॥ गोमूतिलहिरण्यादि दद्याद्विज्ञानुसारतः ॥ एवं कृते तु नागेन्द्रप्रसादाद्धर्तुकुलम् ॥१८॥ पुत्रस्थान गते भानौ नीचे मंदांशकस्थिते ॥ पार्श्वयोः क्रूरसम्बन्धे पितृशापात्सुतक्षयः ॥१९॥ पुत्रस्थानाधिपे भानौ त्रिकोणे पापसंयुते ॥ क्रूरन्तरे पापदृष्टे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२०॥

पुत्रकारक राहु के साथ हो, पुत्रेश बलहीन हो, लग्नेश मंगलयुक्त हो तो सर्प शाप से सुतक्षय होता है ॥ पुत्रकारक मंगलयुक्त हो, लग्न में राहु, पुत्रेश तीसरे हो तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है ॥ मंगल अपने नवमास में हो, पुत्रेश बुध हो, लग्न में राहु और मान्दी हो तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है ॥ पुत्रस्थान में मंगल की राशि और राहु हो बुध युक्त या देखता हो, तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है ॥ पुत्रस्थान में सूर्य मंगल शनि, राहु, बुध और शुक्र हो, पुत्रेश और लग्नेश निर्बल हो, तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है ॥ लग्नेश के साथ राहु हो, पुत्रेश के साथ मंगल हो, पुत्रकारक को राहु देखता हो तो सर्प शाप से सुत-क्षय होता है ॥ (इतने योग कहे गये और इनका उपाय कहते हैं) इस दोष के दूर करने के लिये, नागपूजा करनी चाहिये। सुवर्ण की नागमूर्ति बनाकर, विधान से प्रतिष्ठा करे और फिर पूजा करे ॥ तिल, गौ, सुवर्ण इनका शक्ति के अनुसार दान करे और मूर्ति का भी दान करे, तो ऐसा करने पर नागेन्द्र की कृपा से कुल में वृद्धि होती है ॥ (यह उपाय किसी महान पर्व में गंगा आदि तीर्थ पर किया जाता है) अब पितृशाप के योग कहते हैं। पुत्रस्थान में सूर्य हो और नीच का होकर शनि के अंश में हो, १२ वें तथा दूसरे स्थान में पापग्रह हो तो पितृशाप से सुत-क्षय होता है ॥ पुत्रस्थान का स्वामी सूर्य त्रिकोण स्थानों में पापग्रह से युक्त होकर स्थित हो और सूर्य के दोनों तरफ क्रूर ग्रह हो, पापग्रह की दृष्टि हो तो पितृशाप से सुत-क्षय होता है ॥१०-२०॥

भानुराशिस्थिते जीवे पुत्रेशे भानुसंयुते ॥ पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२१॥ लग्नेशे दुर्बले पुत्रे पुत्रेशे भानुसंयुते ॥ पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२२॥ पितृस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे वा तथा स्थिते ॥ लग्ने पुत्रे पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२३॥ पितुः स्थानाधिपौ भीमःपुत्रेशेन समन्वितः ॥ लग्ने पुत्रे पितृस्थाने शापात्सुतक्षयः ॥२४॥ पितृस्थानाधिपे दुःस्थे कारके पापराशिगे ॥ पुत्रे लग्नेश्वरे पापे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२५॥ लग्नपक्षमावस्थ्या भानुभीमशनिश्वराः ॥ रन्ध्रे रिःके राहुजीवी पितृशापात्सुतक्षयः ॥२६॥ लग्नादष्टमगे भानौ पुत्रस्थे भानुनदने ॥ पुत्रेशे राहुसंयुक्ते लग्ने पापे सुतक्षयः ॥२७॥ व्यपेशे लग्नभावस्थे रन्ध्रे पुत्रराशिगे ॥ पितृस्थानाधिपे रन्ध्रे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२८॥ रोगेशे पुत्रभावस्थे पितृस्थानाधिपे तथा ॥ कारके राहुसंयुक्ते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२९॥ तद्दोषपरिहारार्थं गद्याश्राद्धं च कारयेत् ॥ ब्राह्मणान् भोजयेदत्र अयुतं वा सहस्रकम् ॥३०॥ कन्यादानं ततः कृत्वा गां च दद्यात्सवत्सकाम् ॥ एवं कृते पितुः शापान्मुच्यते नात्र राशयः ॥३१॥ वर्द्धते च कुलं तस्य पुत्रपौत्रादिभिस्तथा ॥ दृष्टियोगपदैः सर्वं फलं श्रूयाद्विचक्षणः ॥३२॥

अब मातृशाप के योग एवं उपाय कहते हैं

पुत्रेश चन्द्रमा नीच का हो और पापग्रहों के बीच में हो अर्थात् चतुर्थ और षष्ठभाव में पापग्रह हो तो मातृशाप से सुत-क्षय होता है। पुत्रेश तृतीय में हो, लग्न में नीच राशि हो, चन्द्र और पापग्रहों का योग हो तो मातृशाप से सुत क्षय होता है। पुत्रेश तृतीय में, चन्द्रमा पाप नवमाश में, लग्न में तथा पुत्रभाव में पापग्रह हो तो मातृ शाप से सुत-क्षय होता है। पुत्रेश चन्द्रमा, शनि, राहु, मंगल से युक्त होकर नवम या पंचम भाव में स्थित हो, अथवा यही योग पुत्र कारक के साथ हो तो मातृशाप से सुतक्षय होता है। चतुर्थेश मंगल, शनि, राहु, युक्त हो, पुत्र भाव में चन्द्रमा एवं सूर्य हो या लग्न में हो तो मातृ शाप से सुत-क्षय होता है। लग्नेश एवं पुत्रेश शत्रुस्थान में हो, चतुर्थेश अष्टमभाव में हो अष्टम और दशम के स्वामी लग्न में हो तो मातृ शाप से सुत क्षय होता है। षष्ठेश और अष्टमेश लग्न में हो या व्यय में हो चतुर्थेश पंचम में हो या व्यय में हो, पंचम भाव में चन्द्रमा और बृहस्पति पापयुक्त हो तो मातृ-शाप से सुत-क्षय होता है। लग्न की दोनों पार्श्व राशि में पापग्रह हो क्षीण चन्द्रमा सप्तम भाव में हो, चौथे भाव में और पांचवें भाव में राहु शनि हो तो मातृशाप से सुत-क्षय होता है। अष्टमेश पंचम में हो पंचमेश अष्टम में हो चन्द्रमा और चतुर्थेश तृतीय भाव में हो, तो मातृशाप से सुत-क्षय होता है। चन्द्रमा की राशि में लग्न हो, मंगल राहु युक्त हो चन्द्रमा और शनि पंचम भाव में हो तो मातृशाप से सुत-क्षय होता है। लग्न पंचम अष्टम और द्वादश भाव में क्रमशः मंगल, राहु शुक एवं शनि हो चतुर्थ एवं लग्नेश तृतीय भाव में हो तो मातृ शाप से सुत-क्षय होता है। अष्टम भाव में बृहस्पति हो, मंगल राहु से युक्त हो, पंचम भाव में शनि चन्द्रमा हो तो मातृ शाप से सुत-क्षय होता है। पण्डित को विचारकर इस प्रकार उपर्युक्त योग से फल कहना चाहिये। शुभयोग से सुख और मित्र योग से मध्यम फल होता है (उपाय) सतुबन्ध रामेश्वर में स्नान करे एक लाख गायत्री मन्त्र का जाप करे जिस ग्रह का दुर्योग हो उस ग्रह का दान करे चादी के पात्र में दूध भर कर दान दे। यवाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराये, पीपल की प्रदक्षिणा करे भक्तिपुक्त होकर ये कर्म करे। ऐसा करने स शंकर कहते हैं हे देवी ! शाप से मुक्ति मिलती है एवं श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति होती है और उस पुत्र स परिवार चक्षता ॥३३ ४९॥

अतः पर प्रवक्ष्यामि भ्रात्रादी शापकारणम् ॥ पापयोगेन भावेन कारकेण बलाबले ॥५०॥
 भ्रातृस्थानाधिपे पुत्रे कुजराहुसमन्विते ॥ पुत्रलग्नेश्वरी रक्षे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५१॥ लग्ने सुते कुजे मदे भ्रातृपे भाग्यराशिगे ॥ कारके नाशराशिस्ये भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५२॥ भ्रातृस्थाने गुरौ नीचे मद पंचमगो यदि ॥ नाशस्थी न तु मन्दारी भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५३॥ भूर्तिस्थानाधिपे रि के भौम पंचमगो यदि ॥ पुत्रेशे रक्षपापस्ये भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५४॥ पाप मध्यगते लग्ने सुतपे पापमध्यगे ॥ नाशौ न कारकौ दुस्ये भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५५॥ कर्मेशे भ्रातृ भावस्ये पापयुक्ते सुते शुभे ॥ पुत्रे च कुजसयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५६॥ पुत्रस्थाने बुधसेत्रे शनिराहुसमन्विते ॥ रि के विदारी शापत्वाद् भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५७॥ लग्नेशे भ्रातृराशिस्ये भ्रातृस्थानाधिपे सुते ॥ लग्ने भ्रातृसुते पापे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५८॥ भ्रात्रीशे नाशराशिस्ये पुत्रस्थे कारके तथा ॥ राहुमादिपुते दृष्टे भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥५९॥ नाशस्थानाधिपे पुत्रे

भ्रातृनाथेन संयुते ॥ रंध्रे आराकिसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥६०॥ भ्रातृशापविमोक्षार्थं ध्रुवण
विष्णुकीर्तनम् ॥ चांद्रायणं चरेत्पञ्चत्कावेर्या विष्णुसन्निधौ ॥६१॥ अश्वत्थस्थापनं कार्यं दश धेनूः
प्रदापयेत् ॥ प्राजापत्यं चरेत्तत्र भूमिं दद्यात्कलान्विताम् ॥६२॥ एव यः कुर्वते भक्त्या पुत्रवृद्धिः
प्रजायते ॥६३॥ पुत्रस्थाने बुधे जीवे कुजराहुसमन्विते ॥ तत्रे मंदसमाधौगे मातृशात्सुतनाशनम्
॥६४॥ लग्नपुत्रेश्वरी पुत्रे बुधभीमसमन्विते ॥ मंदे मातृलशापत्वात्पुत्रसंततिनाशनम् ॥६५॥

भ्रातृशाप के योग तथा उपाय

अब यहां से भ्रातृशाप का कारण कहते हैं। भाव में पापग्रह के योग से तथा पुत्र एवं
भ्रातृकारक के बलाबल से शापयोग कहते हैं। तृतीयेश पचमभाव में मंगल, राहुयुक्त हो, पुत्रेश
तथा लग्नेश अष्टमभाव में हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। लग्न में मंगल, पचम में शनि,
तृतीयेश नवमभाव में तथा पुत्रकारक अष्टमभाव में स्थित हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय है।
तृतीयभाव में नीचराशि का गुरु हो, शनि पचमभाव में हो तथा अष्टमभाव में भीम, शनि न
हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। लग्नेश १२में मंगल पचमभाव में हो, पुत्रेश अष्टमभाव
में पापग्रह युक्त हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। लग्न तथा पचमभाव दोनों पापग्रह के
मध्य में हो और इन भावों के स्वामी तृतीयाभाव में हो एवं कारकग्रह भी तृतीयभाव में हो
तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। दशमेश तृतीयभाव में हो, पचमभाव में पापग्रह युक्त
शुभग्रह हो, पचमभाव में मंगल हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। पचमभाव में बुध राशि
शनि राहुयुक्त हो, १२वें भाव में मंगल और बुध हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। लग्नेश
तृतीय भाव में हो और तृतीयेश पचमभाव में हो लग्न, तृतीय, पचम में पापग्रह हो तो
भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। तृतीयेश अष्टम में हो और पुत्रकारक पुत्रभाव में राहु और
मान्दी से युक्त या दृष्ट हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है। अष्टमेश पचम में हो और
तृतीयेशयुक्त हो तथा अष्टमभाव में मंगल शनि हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है।
(उपाय) भ्रातृशाप को दूर करने के लिए 'विष्णु पुराण' का ध्रुवण तथा विष्णुनाम जप
कीर्तन करे, बाद में चान्द्रायण व्रत करे, पञ्चात् कावेरी नदी के तट या विष्णु मंदिर में
पीपल का वृक्ष लगावे तथा दश गोदान करे, प्राजापत्यव्रत करे, भक्तलभूमि प्रदान करे। इस
प्रकार भक्ति से जो करता है उसके पुत्र की वृद्धि होती है ॥५०-६३॥

मामा के शाप का वर्णन और उपाय

पचमभाव में बुध गुरु मंगल राहु हो, लग्न में शनि हो तो मामा के शाप से सुतक्षय होता
है। लग्नेश और पचमेश पुत्र भाव में हो, बुध मंगल शनि के साथ हो तो मामा के शाप से
सुतक्षय होता है ॥६४-६५॥

नुप्ते पुत्राधिपे लग्ने सप्तमे भानुनन्दने ॥ लग्नेशे बुधसंयुक्ते तस्य सततिनाशनम् ॥६६॥
ज्ञातिस्थानाधिपे लग्ने व्यपेक्षेन समन्विते ॥ रागिनीम्युज्जे पुत्रे तस्य सततिनाशनम् ॥६७॥
पुत्रलगाधिपि युक्तावन्योन्य वाय योसितौ ॥ पुत्रे परस्परस्यो वा पुत्रयोगा इमे स्मृताः ॥६८॥
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुस्थापनमुच्यते ॥ धार्पिकूपतडागादिघनसेतुदर्शनम् ॥६९॥ पुत्रवृद्धिर्ध-

वेतस्य सपद्बुद्धिं प्रजायते ॥ इदं योगग्रहेणैव फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ॥७०॥ गुरुक्षेत्रे यदा राहुः
 पुत्रे जीवारभाजुजा ॥ धर्मस्थानाधिपे नाशे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७१॥ विद्यागर्वेण यो मर्त्यो
 ब्राह्मणानवमन्विते ॥ तद्दोषाद् ब्रह्मशापत्वात्सततैस्तस्य नाशनम् ॥७२॥ धर्मेशे पुत्रभावस्थे
 पुत्रेशे नाशराशिगे ॥ जीवारराहुमृत्युस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७३॥ धर्माधिपे नीचगते व्यये
 पुत्रराशिगे ॥ राहुयुक्तेक्षिते वापि ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७४॥ जीवे नीचगते राहुर्लग्न्ये वा
 पुत्रराशिगे ॥ पुत्रस्थानाधिपे दुर्बले ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७५॥ पुत्रस्थानाधिपे जीवे रश्मे
 पापसमन्विते ॥ पुत्रेशावर्कचट्टी वा ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७६॥ मन्दाशे मन्दसंयुक्ते जीवे
 भीमसमन्विते ॥ पुत्रेशे व्ययराशिस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७७॥ लग्ने गुरुयुक्ते मन्दे भाग्ये
 राहुसमन्विते ॥ व्यये गुरुसमायोगे ब्रह्मशापात्सुतक्षयः ॥७८॥ तस्य दोषस्य शात्यर्थं
 कुर्याच्चन्द्रायणं नरः ॥ ब्रह्मकूर्चत्रयं कृत्वा धेनुं दद्यात्सदशिवाम् ॥७९॥ पञ्चरत्नानि देवानि
 सुवर्णेन समन्वितम् ॥ अन्नदानं ततः कुर्याद्विद्युतं वा सहस्रकम् ॥८०॥ एव कृते तु सत्पुत्रं लभते
 नात्र शशयः ॥ मुक्तशापो विशुद्धात्मा स पुमान्सुखमेधते ॥८१॥ दारेशे पुत्रभावस्ते
 दारेशस्थाशपे शनी ॥ पुत्रेशे नाशराशिस्थे पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८२॥ कलत्रेशे नाशस्थे
 रिक्ते पुत्रराशिगे ॥ कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८३॥ पुत्रस्थानगते शुके कामपे
 रश्मिस्थिते ॥ कारके पापसंयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८४॥ कुटुम्बे पापसंयुक्ते कामेशे
 नाशराशिगे ॥ पुत्रे पापग्रहैर्युक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८५॥ भाग्यस्थानगते शुके दारेशे
 नाशराशिगे ॥ लग्ने पापे मुते पापे पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८६॥ भाग्यस्थानाधिपे शुके पुत्रेशे
 शत्रुराशिगे ॥ गुरुलग्नेशदारेणा दुःस्था सततिनाशनम् ॥८७॥ पुत्रस्थाने गुरुक्षेत्रे राहुचन्द्रसम-
 न्विते ॥ व्यये लग्ने धने पापे स्त्रीशापात्सुतनाशनम् ॥८८॥ सप्तमे मन्दगुह्यौ च रश्मेशे पुत्रभैरवौ
 ॥ लग्ने राहुसमायोगे पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥८९॥

पुत्रेश लग्न में अस्त होकर स्थित हो सप्तमभाव में शनि हो लग्नेश के साथ बुध
 हो तो सन्तति नष्ट होती है। पुत्र भावेश लग्न में हो व्ययेश के साथ च० म०, बु०
 पचम में हो तो सन्तति नष्ट होती है। पुत्रेश और लग्नेश परस्पर दृष्ट या परस्पर
 स्थान सम्बन्ध हो तो पुत्र सुख होता है। पूर्वोक्त दोष दूर करने के लिए कुआ,
 बावडी, तालाब बनाना, सेतुबन्ध रोमेश्वर का दर्शन करना ॥ इनके करने से पुत्रसुख होता है
 तथा सम्पत्ति की वृद्धि होती है ॥ इन ग्रहयोगों से पण्डित को फल बहना चाहिये ॥ गुरु के घर
 में राहु हो पचम में सू० म० वृ० हो नवमेश अष्टम में हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है ॥
 विद्वत्ता के घमण्ड से जो मनुष्य ब्राह्मण का अपमान करता है उस पाप से ब्रह्मशाप होता है
 और उससे सन्तति नाश होती है ॥ नवमेश पुत्रभाव में हो पुत्रेश अष्टम में हो वृ० म० रा०
 अष्टम में हो तो ब्रह्म शाप से सुतक्षय होता है ॥ नवमेश नीच का हो व्ययेश पुत्रभाव में हो,
 राहुदृष्ट हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है ॥ गुरु नीचराशि का हो, राहु लग्न में हो या
 पुत्रभाव में हो, पुत्रेश छठे भाव में हो तो ब्रह्म शाप से सुतक्षय होता है ॥ गुरु सुतेश होकर तथा
 पापग्रहयुक्त अष्टमभाव में हो तथा पुत्रेश सूर्य या चन्द्रमा हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है ॥
 शनि अपने नवाश में हो, गुरु मंगल के साथ हो, पुत्रेश व्ययभाव में हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय
 होता है ॥ लग्न में गुरु, शनि भाग्यस्थान में राहुयुक्त हो या गुरु व्ययभाव में हो तो ब्रह्मशाप से
 सुतक्षय होता है ॥ इस दोष की शान्ति के लिए चान्द्रायण व्रत करे, बाद ब्रह्मकूर्च व्रत ३ वर

पश्चात् गोदान, सुवर्ण, पञ्चरत्नदान, अन्नदान करे, ब्राह्मण भोजन कराये।। ऐसा करने से सत्पुत्र अवश्य होता है इसमें संशय नहीं। उसका शाप दूर होकर अत्मा शुद्ध हो जाती है और सुख की वृद्धि होती है।। सप्तमेश पुत्रभाव में हो सप्तमभाव के नवाश का स्वामी शनि हो पुत्रेश अष्टमभाव में हो तो पत्नी के शाप से सुतक्षय होता है।। सप्तमेश अष्टम में हो, व्यग्रेश पुत्रभाव में हो, पुत्रकारक पापयुक्त हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। शुक पंचम में हो, सप्तमेश अष्टम में हो, पुत्रकारक पापग्रहयुक्त हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। तृतीयभाव का पापग्रह से सम्बन्ध हो, सप्तमेश अष्टम में हो, पुत्रभाव में पापग्रह हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। शुक भाग्यस्थान में हो, सप्तमेश अष्टम में हो, लग्न में तथा पंचम में पापग्रह हों तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है।। भाग्येश शुक हो पुत्रेश छठे भाव में हो, गुरु, लग्नेश और सप्तमेश तृतीयभाव में हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। पुत्रभाव में शुकराशि हो, चन्द्रमा और राहुयुक्त हो लग्न व्यय, धन भाव में पापग्रह हो तो स्त्री के शाप से सुतक्षय होता है।। सप्तमभाव में शनि शुक हो अष्टमभाव में पुत्रेश की राशि हो, राहुसहित सूर्य लग्न म हो तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है ॥६६-८९॥

धने कुजे व्यये जीवे पुत्रस्ये मृगुनन्दने ॥ राहुयुक्तेनिते वापि पत्नीशापात्सुतक्षय ॥९०॥
 नाशस्थी विसदारेणौ पुत्रे लग्ने कुजे शनौ ॥ कारके पापसयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ॥९१॥
 लग्नपंचमभाग्यस्था राहुमन्दकुजा क्रमात् ॥ रधस्थौ पुत्रदारेणौ पत्नीशापात्सुतक्षय ॥९२॥
 तस्य दोषस्य शात्यर्थं कन्यादान समाचरेत् ॥ लक्ष्मीनारायण देव सर्वाभरणभूषितम् ॥९३॥
 मूर्तिदान च कर्तव्य दशधेनुं प्रदापयेत् ॥ शय्या च भूषण चैव दपत्योर्दापयेत्सुधी ॥९४॥ पुत्र
 प्रसूयते तस्य भाग्यवृद्धिश्च जायते ॥ मंत्रशापमिदं मर्त्यं पिशाच बाध्यते सदा ॥९५॥ कर्मलोप
 पितृभ्यश्च तच्छापाद्दशनाराशनम् ॥ पुत्रस्थितौ मदमूर्धौ क्षीणचद्रस्तु सप्तमे ॥ लग्ने व्यये
 राहुजीवी प्रेनशापात्सुतक्षय ॥९६॥ पुत्रस्थानाधिपे मदे नाशस्ये लग्ने कुजे ॥ कारके
 नाशराशिस्येप्रेतशापात्सुतक्षय ॥९७॥ लग्ने पापे व्यये भानी सुते चारार्कितोमजा ॥ पुत्रेशो
 रधभावस्ते प्रेतशापात्सुतक्षय ॥९८॥ लग्ने पापा व्यये भानी सुते चारार्कितोमजा ॥ पुत्रेशो
 रधभावस्ये प्रेतशापात्सुतक्षय ॥९९॥ लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्ये भानुनन्दने ॥ कारके
 नाशराशिस्ये प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१००॥

धनभाव में मंगल, व्ययभाव में गुरु, पंचमभाव में शुक हा, राहु से युक्त या दृष्ट हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। द्वितीयेश तथा सप्तमेश अष्टम में हो पुत्रभाव में मंगल, लग्न में शनि हो और पुत्रकारक पापग्रहयुक्त हो तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है।। लग्न में राहु पंचम में शनि, नवम में मंगल हो, पुत्रेश तथा सप्तमेश अष्टमभाव में हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है इन दोष की शान्ति के लिए 'कन्यादान' करे लक्ष्मीनारायण की मूर्ति आभरण (गहने से) युक्त करके दान करे तथा दम गोदान करे। शय्या और भूषण दान करे। यह दान दम्पति को दे तो पुत्र प्राप्त होता है भाग्यवृद्धि होती है। यह शाप पिशाचरूप है और दुःसदायी है इसमें कमलोप होकर पितरो के शाप से वश का नाश होता है।। पंचमभाव में शनि और मूर्ध हो, क्षीण चन्द्रमा मज्जम में हो लग्न में राहु तथा व्यय म गुरु हो भी प्रेनशाप से

सुतक्षय होता है॥ शनि, पुत्रेश, ये अष्टम मे, लग्न मे मंगल हो, पुत्रवारक अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न मे पापग्रह तथा व्यय मे सूर्य हो सुतभाव मे मंगल, शनि और बुध हो तथा पुत्रेश अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न मे पापग्रह तथा व्ययभाव मे सूर्य हो, पंचमभाव मे मंगल, शनि, बुध हो तथा पुत्रेश अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न मे राहु पुत्रभाव मे शनि हो पुत्रवारक अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ (१८-१९ इन दोनों श्लोकोमे एकरूपता है)॥१०-१००॥

लग्ने राही च शुक्रेज्ये चन्द्रे मदयुते तथा ॥ लग्नेशे मदराशिस्ये प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०१॥ लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनदने ॥ कुजदृष्टे पुते वापि प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०२॥ कारके नीचराशिस्ये पुत्रस्थानाधिपे स्थिते ॥ नीचदृष्टे नीचयुते प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०३॥ लग्ने मदे सुते राही रश्मे भानुसमन्विते ॥ व्यये भीमसमायोगे प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०४॥ कामस्थानाधिपे दुस्थे पुत्रे चन्द्रसमन्विते ॥ मदमादिपुते लग्ने प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०५॥ बाधस्थानाधिपे पुत्रे शनिशुक्रसमन्विते ॥ कारके नाशराशिस्ये प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०६॥ तद्दोषस्य प्रशास्यर्थे विष्णुश्राद्धं च कारयेत् ॥ रुद्रस्नानं प्रकुर्वीत ब्रह्ममूर्तिं प्रदापयेत् ॥१०७॥ धेनू रजतपात्रं च नीलं चैव प्रदापयेत् ॥ एतत्कर्म कृते तत्र शापमोक्षं भजायते ॥१०८॥ पुत्रप्राप्तिर्भवेत्तस्य विप्रेभ्यो दक्षिणा दिशेत् ॥ पुत्रे राहुर्विसीम्या कारके शुभसपुते ॥ शुभेन धीक्षिते वापि बहुपुत्र समादिशेत् ॥१०९॥ पुत्रेशे शुभराशिस्ये शुभदृष्टिसमन्विते ॥ कारके केन्द्रभावस्थे बहुपुत्र समादिशेत् ॥११०॥ लग्नेशे पुत्रराशिस्ये पुत्रेशे लग्नमाश्रिते ॥ केन्द्रत्रिकोणगे जीवे बहुपुत्र समादिशेत् ॥१११॥ पुत्रस्थानगते राही मदाशकविवर्जिते ॥ बहुपुत्रं नरं विद्याच्छुभग्रहनिरीक्षिते ॥११२॥ पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नेशे शुभसपुते ॥ कारके शुभसयुक्ते बहुपुत्र समादिशेत् ॥११३॥ पुत्रस्थाने तदीशे वा गुरौ या शुभवीक्षिते ॥ शुभेन सहिते वापि बहुपुत्र समादिशेत् ॥११४॥ परिपूर्णबले जीवे लग्नेशे पुत्रराशिगे ॥ पुत्रेशे बलसयुक्ते बहुपुत्र समादिशेत् ॥११५॥ पुत्रस्थानगते जीवे परिपूर्णबलान्विते ॥ लग्नेशे बलसयुक्ते पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११६॥ वर्गोत्तमराशिगे जीवे लग्नेशस्याशपे शुभे ॥ पुत्रेशेन युते दृष्टे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११७॥ वित्तेशे पुत्रभावस्थे परिपूर्णबलान्विते ॥ वैशेषिकाशके जीवे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११८॥ लग्नात्पुत्राधिपे स्वोच्चे अन्योन्यत्वादिवीक्षिते ॥ परस्परस्थानगते पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११९॥ पुत्रस्थानाधिपस्यांशराशिगे शुभसयुते ॥ शुभेन वीक्षिते वापि पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२०॥ लग्नपुत्राधिपी केन्द्रे शुभग्रहसमन्विते ॥ कुदुबेशे बलादधे तु पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२१॥ लग्नेशे दारभावस्थे दारेण लग्नमाश्रिते ॥ द्वितीयेशे धिलग्रस्थे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२२॥ दारेण ग्रहसयुक्ते नवाशमबनाधिपे ॥ पुत्रवित्तविलग्नेशे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२३॥ इति बहुपुत्रयोगा ॥ पुत्रवित्तकलग्नेशा सयुक्ता नवभागया पापाशका पापयुता अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२४॥ गुरुर्लग्नेशदारेणपुत्रस्या नाधिपेषु वा ॥ सर्वेषु बलहीनेषु वक्तव्या स्वनपत्यता ॥१२५॥ व्यपेक्षसयुताशेन धृत्पुत्राशी स्थिते यदि ॥ पुत्रेशे क्रूरपट्टशके अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२६॥ लग्नपुत्रेशरी दुस्थे कारके नीचराशिगे ॥ अनपत्यग्रहे पुत्रे अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२७॥ क्रूरपट्टशके जीवे पुत्रस्थे नाशराशिके ॥ पुत्रेशे नाशराशिस्ये अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२८॥ लग्नाधिपे कुजे स्वोच्चे रश्मे

मंदंयुते रवौ ॥ शुभदृष्टि समायोगे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१२९॥ लग्ने मंदे गुरौ रंघ्रे ध्ये
भौमसमन्विते ॥ शुभदृष्टे स्वतुगे वा चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥ १३०॥ पुत्रस्या मवलीवजा लग्ने
पुत्राधिपे शुभे ॥ पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३१॥ सुते राहुर्कगुकेज्या
शुभर्से शुभवीक्षिते ॥ पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३२॥ लग्ने सौम्ये धने पापे
तृतीये पापेचरे ॥ पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३३॥ इति पुत्रयोगाः ॥
पुत्रस्थाने कुजे मंदे बुधलेत्रे बिलप्रे ॥ बुधदृष्टे युते वापि तदा दत्ताः सुतादयः ॥१३४॥

लग्न में राहु, शुक्र, गुरु, चन्द्र, शनि हो, लग्नेश शनि के भाव में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय
होता है॥ लग्न में राहु हो, पुत्रस्थान में शनि हो, मंगल से दृष्ट या युक्त हो तो प्रेतशाप से
सुतक्षय होता है॥ पुत्रकारक वीचराशि में हो तथा पुत्रेश भी स्थित हो, नीचग्रह से दृष्ट या
युक्त हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न में शनि, पंचम में राहु तथा अष्टम में सूर्य हो
तथा व्ययभाव में मंगल हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ सप्तमेश नृनीयभाव में हो,
पुत्रभाव में चन्द्रमा हो, लग्न में शनि और भान्दी हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ बाध
(६) स्थान का स्वामी पुत्रस्थान में हो और शुक्र शनि युक्त हो पुत्रकारक अष्टम भाव में हो
तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ इस दोष की शान्ति के लिए 'विष्णुप्राद्व' करे, रुद्रसान करे,
ब्रह्मा की मूर्ति का दान करे॥ गो तथा खान्दी का पाय और नील वृषभ (वैल) का दान करे॥
यह उपाय करने से शाप की शान्ति होती है॥ पुत्र की प्राप्ति होती है, पुत्र प्राप्त होने पर
ब्राह्मणों को दक्षिणा दे॥ पुत्र स्थान में राहु, सूर्य, बुध हो, पुत्र कारक शुभराशि में हो, शुभग्रहों
की दृष्टि हो तो बहुत पुत्र होते हैं॥ पुत्रेश शुभराशि में हो, शुभदृष्टि युक्त हो, पुत्रकारक
केन्द्रभाव में हो तो बहुत पुत्र होते हैं॥ लग्नेश पुत्रभाव में हो, पुत्रेश लग्न में हो, गुरु केन्द्र
त्रिकोण में हो तो बहुत पुत्र होते हैं॥ पुत्रस्थान में राहु हो परन्तु शनि के नवाश में नहीं हो तो
बहुत पुत्र होते हैं॥ पुत्रेश उच्च का हो, लग्नेश शुभयुक्त हो, पुत्रकारक शुभग्रहयुक्त हो तो बहुत
पुत्र होते हैं॥ पुत्रभाव या भावेश अथवा गुरु शुभग्रह दृष्ट या युक्त हो तो बहुत पुत्र होते हैं॥
बृहस्पति पूर्ण बलवान् हो, लग्नेश पुत्रभाव में हो, पुत्रेश भी बलयुक्त हो तो बहुत पुत्र होते हैं॥
पुत्रस्थान में गुरु हो, पूर्णबलवान् हो तथा लग्नेश भी बलवान् हो तो पुत्रप्राप्ति का योग
है॥ बृहस्पति वर्गात्तमाश में हो, लग्नेश के नवाश का स्वामी शुभग्रह हो तथा पुत्रेश में
युक्त या दृष्ट हो तो पुत्रमुख होने के योग हैं॥ धनेश पुत्रभाव में हो और पूर्णबली हो,
गुरु अपने विशेष अंश में हो, ऐसे योग पुत्रप्रद होते हैं॥ लग्न से पंचमेश उच्चराशि में हो, लग्नेश
पुत्रेश परस्पर दृष्टियोग या स्थान योगवर्ता हो तो पुत्रयोग होता है॥ पुत्रेश की नवामाश
राशि का स्वामी शुभग्रह हो और शुभयुक्त या दृष्ट हो तो पुत्रयोग होता है॥ लग्नेश पुत्रेश केन्द्र
में शुभग्रहयुक्त हो, तृतीयेन बलवान् हो तो पुत्रयोग है॥ लग्नेश मन्त्रमेश परम्परा एवं दूसरे के
स्थान में हो और द्वितीयेन लग्न में हो तो पुत्रयोग होता है॥ मन्त्रमेश ग्रहयुक्त हो, लग्न,
द्वितीय, पंचम के स्वामी नवाश के स्वामी हो तो पुत्रयोग होता है॥ (ये 'बहुपुत्र' योग कहें
गये। अब 'पुत्रहीन' योग कहने हैं) २।५।७ भावों के स्वामी अपने नवाश में हों, और पाप
नवमाश पापग्रह युक्त हो तो 'पुत्रहीन' योग कहना चाहिये॥ बृहस्पति, लग्नेश, पंचमेश,
मन्त्रमेश ये सब ग्रह वर्ग आदि बलहीन हो तो 'पुत्रहीन' योग होता है॥ नवान्न पनि ध्येन

युक्त होकर अष्टमभाव में हो, पुत्रेश पापग्रह के पष्ठघन में हो तो 'पुत्रहीन' योग होता है। लग्नेश तथा पुत्रेश तृतीय भाव में हो, पुत्रकारक नीचराशि में हो, पुत्रस्थान में पुत्रनाशक पापग्रह हो तो अनपत्य (पुत्रहीन) योग होता है। बृहस्पति पापग्रह के पष्ठघन में हो, अष्टमेश पुत्रभाव में हो, पुत्रेश अष्टमभाव में हो तो अनपत्य योग होता है। यहा से देरी से पुत्र होने के योग कहते हैं।

(१) लग्नेश मंगल उच्चराशि का हो अष्टमभाव में शनियुक्त सूर्य हो, शुभदृष्टि हो तो बहुत देर से पुत्र होता है। लग्न में शनि, गुरु अष्टम में, व्यय में मंगल हो शुभदृष्ट या उच्चराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है। पुत्रभाव में शनि, गुरु बुध हो, पुत्रेश शुभग्रह हो और लग्न में अथवा शुभभाव में हो तो देर से पुत्र होता है। पुत्रस्थान में राहु सूर्य शुक्र, गुरु हो तथा पंचमभाव में शुभ राशि, शुभदृष्ट हो और पुत्रेश शुभराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है। लग्न में सौम्यग्रह तथा धनभाव में पापग्रह एवं तृतीयभाव में भी पापग्रह हो और पुत्रेश शुभराशि में हो तो देरी से पुत्र होता है। (पुत्रयोग समाप्त) (अब दत्तपुत्रयोग कहते हैं) पुत्रस्थान में मंगल तथा शनि बुध राशि में हो और लग्नेश को बुध देवता हो अथवा युक्त हो तो 'दत्तपुत्र' होता है॥१०१-१३४॥

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मदक्षेत्रेऽप्यवा भवेत् ॥ मदमादियुते दृष्टे तदा दत्ता सुतादयः ॥१३५॥
पुत्रस्थाने बुधे क्षेत्रे बुधसंस्थेक्षितेऽपि वा ॥ लग्नाधिपे शनौ वापि दत्तपुत्रा भवति हि ॥१३६॥
पुत्रेशे मदसंयुक्ते कुजे सौम्यनिरीक्षिते ॥ लग्नाधिपे बुधाशे वा दत्तपुत्रा भवति हि ॥१३७॥
कामेशे लाभभावस्थे पुत्रेशे शुभसंयुते ॥ पुत्रे मदे बुधे वापि दत्तपुत्रा भवति हि ॥१३८॥ पुत्रेशे भाग्यभावस्थे भाग्येशे कर्मराशिगे ॥ पुत्रे मदजदृष्टे तु दत्तपुत्रेण सति ॥१३९॥ लग्नाधिपे भृगोश्चोच्चे पुत्रे मदसमन्विते ॥ कारके बलसंयुक्ते दत्तपुत्रास्तु सति ॥१४०॥ पुत्रस्थानाधिपे चद्रे लग्ने पुत्रे शनैश्चरे ॥ परिपूर्णबले जीवे दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ॥१४१॥ पुत्राधिपे रवौ लग्ने पुत्रस्थौ शनिसोमजौ ॥ पुत्राधिपे बलसंयुक्ते दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ॥१४२॥ लग्नाधिपे बुधे पुत्रे कुजदृष्टिसमन्विते ॥ कारके लाभराशिस्थे दत्तपुत्रात्सुती भवेत् ॥१४३॥ लग्नाधिपे गुरौ पुत्रे शनिदृष्टिसमन्विते ॥ पुत्रेशे भीमराशिस्थे दत्तपुत्रा भवति हि ॥१४४॥ वशान्तो हरिरुष्णगौ त्रिपुरहाञ्जे भूसुते रुद्रिय सौम्ये सपुटकास्पपात्रविधिवज्जीवे च पैश्यातिथि ॥ शुक्रे गोप्रतिपालन च कश्चित मदे च मृत्युजय ॥ कन्यादानभुजगकेतुकपिला सतानसौख्यप्रदा ॥१४५॥ यावत्सस्या भवेद्राशिस्तावद्धार विनिर्दिशेत् ॥ शिवविष्णुस्थापनाद्वालशयोगात्सुख भवेत् ॥१४६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे सतानभावफलादेशवर्णन
नाम षोडशोऽध्यायः ॥१६॥

पुत्रभाव में बुधराशि या शनिराशि हो, शनि या भान्दी में युक्त या दृष्ट हो तो दत्तपुत्र (गोद का पुत्र) होता है। पुत्रस्थान में बुधराशि युधयुक्त या दृष्ट हो और लग्नपति शनि हो तो दत्तपुत्र होता है। पुत्रेश शनि में युक्त हो, मंगल को बुध देवता हो और लग्नेश बुध के

नवाश मे हो तो दत्तपुत्र होता है॥ राक्षसेश लाभस्थान मे हो पुत्रेश शुभग्रहयुक्त हो पुत्रभाव मे शनि या बुध हो तो दत्तपुत्र होता है॥ पुत्रेश भान्यभाव मे हो, भाग्येश दशमभाव मे और पचम शनि से दृष्ट हो तो दत्तपुत्र होता है॥ उच्चराशिस्थित शुक्र लग्नेश हो, पुत्रभाव मे शनि हो और पुत्रकारक बलवान् हो तो 'दत्तपुत्र' होता है॥ पचमेश चन्द्रमा हो लग्न या पुत्रभाव मे शनिश्चर हो, गुरु पूर्ण बली हो तो दत्तपुत्र होता है॥ पुत्रेश सूर्य लग्न मे हो, पुत्रस्थान मे शनि, बुध हो, पुत्रस्थान स्वामी बलवान् हो तो दत्तपुत्र होता है॥ लग्नस्वामी बुध हो, पचम भाव पर मंगल की दृष्टि हो, पुत्रकारक बलवान् हो और लाभस्थान मे हो तो दत्तपुत्र से सुख होता है॥ १४४॥ लग्नेश गुरु पुत्रभाव मे हो, पुत्रभाव पर शनि की दृष्टि हो और पुत्रेश मंगल की राशि मे हो तो दत्तपुत्र होता है॥

(अब पुत्रोत्पत्ति के लिये उपाय कहते हैं)

सूर्य के दोष मे 'हरियश पुराण' श्रवण करना, चन्द्रदोष मे महादेवजी का प्रदोष व्रत तथा उद्यापन, मंगलदोष मे 'रुद्राभिके' बुधदोष मे 'सम्पुट कासीपात्र' मे घृत सुवर्ण दान, गुरुदोष मे पितृपूजा, शुक्रदोष मे 'गोपालन' (या गोदान) शनिदोष मे मृत्युजय मन्त्र-पुरश्चरण और राहु-केतु के दोष अथवा शापजनित दोष मे पूर्वोक्त कन्यादान, सुवर्ण भुजगदान, कपिला, गोदान आदि उपाय सन्तान सुख देनेवाले हैं॥ राशि की सख्या के अनुरूप उपाय की आवृत्ति कहना अथवा शिव विष्णु की स्थापना करना या सन्तान गोपाल आदि के पुरश्चरण आदि से सुख कहना ॥ १३५-१४६॥

इति श्री वृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० सत्तानभावकफलादेश वर्णन
नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६॥

अथ नाभसयोगमाह

अधुना वै विस्तरतः कथिता योगास्तु नाभसा नाम्ना ॥ अष्टादशशतगुणितास्तेषां संक्षेपतो
वक्ष्ये ॥ १॥ आश्रयाख्यास्त्रयो योगा दलयोगद्वय ततः ॥ आकृतिर्विशतिः सख्या योगानां सप्तक
स्मृतम् ॥ २॥ रज्जुयोगो मूशलश्च नतो मालाभुजंगमौ ॥ ३॥ गदायोगश्च शकटः
शृंगाटकविहंगमौ ॥ हलवज्रयवाश्चैव कमलो वापिमूपकौ ॥ ४॥ शरशक्तिव डनौकाकूटच्छात्रधनूं-
पि च ॥ अर्द्धन्दुयोगश्चकाक्ष्यः समुद्रश्चेति विंशतिः ॥ ५॥ घोषावात्मनिकायोगः
पाशकेदारशूलकाः ॥ युगमोली ततः प्रोक्ता योगा द्वात्रिंशका इमे ॥ ६॥

अथाश्रययोगत्रयमाह

सर्वे धरत्या अपि वा स्थिरस्या द्विदेहसत्या यदि वा भवति ॥ क्रमेण रज्जुमुंशत नतश्च
योगत्रयं स्याद्विदमाश्रयाख्यम् ॥ ७॥

नाभस योग

अब हम विस्तार मे 'नाभस' नाम के जो योग पूर्व आचार्यों मे बहे हैं जो वि-मय
मिलाकर १८०० हैं उनमे से मुख्य मुख्य योग-गणेश गं बहेने ॥ तीन आश्रय नाम के योग हैं।

दल योग २ है। आकृति नाम के योग २० है, योग नाम के ७ हैं, जिनके विशेष नाम रज्जू, मूसल, नल, माला, भुजङ्गम्, गदा, शकट, शृङ्गाटक, विहङ्गम, हल, वज्र, यव, कमल, वापी, यूपक, शर, शक्ति, दण्ड, नौका, कूट, छत्र, धनुष, अर्धेन्दु, चक्र और समुद्र ये २० हैं। बीणा, दामनिका, पाश, केदार, शूलक, मृग, गोल ये ७ हैं। सब मिलकर ३२ योग होते हैं॥१-६॥

तीन आश्रययोग

सब ग्रह यदि चर राशि में हों तो 'रज्जू' योग और स्थिर राशि में 'मूसल' तथा द्विस्वभाव राशि में हों तो 'नल' योग होता है। ये आश्रय नाम के ३ योग हुए॥७॥

अथ दलाख्ययोगद्वयमाह

केन्द्रत्रये सौम्यसर्गस्तु माला खलग्रहैर्व्यलिसमाह्वयः स्यात् ॥ इदं तु योगद्वितयं दलाख्य मुनीश्वरेण प्रतिपादितं हि ॥८॥

अथाकृतियोगविंशतिमाह

आसन्नकेन्द्रद्वयसर्गदाल्यो लग्नास्तस्यैः शकटः समस्तेः ॥ खड्गधुयातैर्विहगः प्रदिष्टः शृङ्गाटक लग्नवात्मजस्यैः ॥९॥ धनारिखस्यैस्त्रिमदायगैर्वा चतुर्थरन्ध्रव्ययसस्यैर्वा ॥ नभस्तलस्यैर्हस्तनामयोगः किलोदितोय निखिलागमने ॥१०॥ लग्नस्मारस्थानगतैः शुभाख्यैः पार्पश्च मेष्परणवधुयातैः ॥ वज्राभिधस्तैर्विपरीतसस्यैर्यवश्च मिथैः कलमाभिधानः ॥११॥ त्यक्त्वा केद्राणि चेत्खेटा शेषस्थानेषु सस्यिताः ॥ वापीयोगो भवेदेव गदितः पूर्वगूरिभिः ॥१२॥ लग्नाच्चतुर्यात्स्मरतः खमध्याच्चतुर्गृहस्यैर्गगनेचरेद्रैः क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्डः प्रदिष्टः खलु जातकज्ञैः ॥१३॥ लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमाद्यात्सप्तर्षीर्नोरथकूटसज्जः ॥ छत्र धनुश्चान्यगृहप्रवृत्तैर्नोपूर्वकैर्योग इहाहं चद्रः ॥१४॥ तनोर्धनाद्येकगृहातरेण स्युः स्थानपदके गगनेचरैर्द्राः ॥ चक्राभिधानश्च समुद्रनामा योगा इतीहाकृतिजाश्च विंशत् ॥१५॥

दो दल योग

तीन केन्द्र स्थानों में सौम्य ग्रह हों तो 'माला' योग होता है और पापग्रह हों तो 'व्याल' योग होता है। इस प्रकार ये दो दल योग मुनीश्वरों ने कहे हैं॥८॥

चौस आकृति योग

समीप के दो केन्द्र स्थानों में यदि सब ग्रह हों तो सब योग। लग्न और सप्तम में सब ग्रह हों तो 'शकट' योग। इसमें और तीसरे स्थान में 'विहग' योग। लग्न, पंचम, नवम में सब ग्रह हों तो 'शृङ्गाटक' योग। दूसरे, छठे, दसवें अथवा तीसरे, मातवे, म्यारहवें एवं चौथे, आठवें, बारहवें में सब ग्रह हों तो 'हल' नाम का योग शास्त्राचार्यों ने कहा है। लग्न सप्तम स्थान में शुभग्रह हों, तीसरे, दसवें स्थान में पापग्रह हों तो 'वज्र' योग होता है। इसके विपरीत हों तो 'यव' नाम का योग होता है। और मिले जुले ग्रह हों तो 'कमल' नाम का योग होता है। केन्द्र स्थान को छोड़कर बाकी स्थानों में सब ग्रह हों तो 'वापी' नाम

और स्थिर-चित्त होते हैं। 'नल' योग में होनेवाले जातक कम या अधिक अङ्ग वाले, कजूस, व्यापार में निपुण, सुडील और बन्धु से हित चाहनेवाले होते हैं। 'माला' योग में जन्म लेनेवाले जातक सदा सुखी, अन्न, वस्त्र, भोग, वाहन, सम्पन्न, बहुस्त्रीभोगी होते हैं। 'मर्प' योग में होनेवाले क्रूर स्वभाव, दरिद्र, नित्य दुःखी, दीन और सर्वभक्षी होते हैं। 'गदा' योग में पैदा हुए जातक सदा उद्योगशील, यज्ञ आदि धार्मिक कार्य करनेवाले, शास्त्रज्ञान में कुशल, सुवर्ण आदि सम्पत्ति से युक्त होते हैं। 'शकट' योग में होनेवाले मनुष्य रोगी, कुनखी, मूर्ख, सवारी से जीविका चलानेवाले, मित्र-स्वजन हीन, और दरिद्री होते हैं। 'विहग' योग में होनेवाले मनुष्य भ्रमण रुचि, नौकर, कामी, धृष्ट और कलह प्रिय होते हैं। 'शृङ्गाटक' योग में होनेवाले मनुष्य कलह प्रिय, युद्ध प्रेमी, सुखी, राजा के प्यारे, अच्छी स्त्रीवाले और धनी होते हैं।

॥१७-२५॥

बह्मशिनो दरिद्रा कृपीवला दुःखिताश्च सोद्रेगा ॥ बधुसुहृद्भिः सक्ता प्रेक्ष्या हलसज्जे सदा पुरुषा ॥२६॥ आद्यतवय सुखिन शूरा सुभगा निरीहाश्च ॥ भाग्यविहीना बन्धे जाता खला विरुद्धाश्च ॥२७॥ व्रतनियममगलपरा वयसो मध्ये मुष्णार्थपुत्रयुता ॥ दातार स्थिरचित्ता यवयोगभवा सदा पुरुषा ॥२८॥ विभवगुणाढ्या पुरुषा स्थिरायुषो विपुलकीर्तय शुद्धा ॥ शुभशतका पृथ्वीशा कमलभवा मानवा नित्यम् ॥२९॥ निधिकरणे निपुणधिय स्थिरार्थमुख समुता सुतयुताश्च ॥ नयनमुखसप्रहृष्टा वापीयोगेन राजान ॥३०॥ आत्मविद्विज्यानिरत स्त्रिया युत सत्त्वसपन्न ॥ व्रतनियमनिरतो यूप्ते जातो विशिष्टश्च ॥३१॥ दृष्ट करणे दस्युबधनमृगयाधनसेविताश्च मासादा ॥ हिला कुशिलपकारा शरयोगे मानवा प्रसूयते ॥३२॥ धनरहित विफलदुःखितनीचालसाश्चिरायुष पुरुषा ॥ सप्रामयुद्धिनिपुणा शतया जाता स्थिरा शुभगा ॥३३॥ हतपुत्रदारनिस्वा सर्वत्र च निर्धृणा स्वजनबाह्या ॥ दुःखितनीचप्रेष्या दण्डप्रभवा भवति नरा ॥३४॥ सलिलोपजीविविभवा बह्मशा ख्यातकीर्त यो दुष्टा ॥ कृपणा मलिना लुब्धा नोसजाता खला पुरुषा ॥३५॥

'हल' योग में होने वाले मनुष्य बहुभोजी, दरिद्री, सेतिहर दुःखी, चिन्ताशील, द्रष्टृमित्रो में रात दिन रहनेवाले होते हैं। 'बन्ध' योग में पैदा होनेवाले मनुष्य वचन और बुद्धापा में सुखी, गुरवीर, सौभाग्ययुक्त और निष्कामी होते हैं। यव योग में पैदा हुए मनुष्य वत, नियम, समयशील तथा जबानी में सुखी धन-पुत्रयुक्त दानी और स्थिर चित्त होते हैं। 'वमल' योग में होनेवाले वैभवशाली दीर्घायु कीर्तिमान्, शुद्धाचरणी, राजा होते हैं। 'वापी' योग में होनेवाले धन सचयकारी, स्थिर सुख सम्पन्न, सुख सतान से युक्त, स्थिर इन्द्रियोवाले राजा में समान होते हैं। 'यूप' नामक योग में पैदा हुए जातक आत्मज्ञानी, कर्मयोगी, विद्वान्, माहसी, गृहस्थ-धर्म-सम्पन्न, समाज में विशिष्ट व्यक्ति होता है। 'शर' योग में हुआ जातक अपना मतलब सिद्ध करने में निपुण, शिवारी, चोर, ठग, मासाहारी, हिंसक और नीच कार्य करनेवाला होता है। 'शक्ति' योग में पैदा हुए मनुष्य निर्धन, विफल मनोरथ, दुःखी, नीच, आलसी, दीर्घायु, जगडालू और दृढप्रतिज्ञ होते हैं। दण्ड योग में होने वाले निर्धन, स्त्रीपुत्रहीन, सर्वभक्षी, समाज बहिष्कृत, दुःखी, नीच, नौकर होते हैं। 'नीका' योग में पैदा हुए मनुष्य नदीबासी, बहुभोजी, विख्यात, दृष्ट, कृपण, मलिन, लोभी और चुगलमोर होते हैं ॥२६-३५॥

अनतकथनबधपाया निष्किचता शठा कूरा ॥ कूटसमुत्था नित्य भवति गिरिदुर्गवासिनो
मनुजा ॥ ३६ ॥ स्वजनाश्रयो दयावान्नानुपवल्लभः प्रकृष्टमति ॥ प्रथमोऽस्ये वयसि नरः
सुखवान्दीर्घायुरातपत्री स्यात् ॥ ३७ ॥ आनृतिकगुप्तपापाश्रौरा कितवाश्च कानने निरता ॥
कार्मुकयोगे जाता माग्यविहीना शुभा वयोमध्ये ॥ ३८ ॥ सेनापतय सर्वे कातशरीरा नृपप्रिया
वर्तिनः ॥ मणिकनकभूषणयुता भवति योगे वार्धचट्वाल्ये ॥ ३९ ॥ प्रणताशेषनराधिपकरीटर-
त्सप्रभास्फुरितपादः ॥ भवति नरेंद्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे ॥ ४० ॥ बहुरत्नघनसमृद्धा
भोगयुता धनजनप्रिया समुता ॥ उर्ध्वसमुत्था पुरुषा स्थिरविभवा साधुसीलाश्च ॥ ४१ ॥
प्रियगीतनृत्यवाद्यनिपुणा सुखिनश्च धनवन्तः ॥ नेतारो बहुमृत्वा वीणाया कीर्तिता पुरुषा
॥ ४२ ॥ दामिन्यामुपकारी नयधनयुक्ते महेश्वर स्यात् ॥ बहुसुतरत्नसमृद्धो धीरो जायेत
विद्वाश्च ॥ ४३ ॥ पाशे बधनभाजः कार्ये दया प्रपचकाराश्च ॥ बहुभाषिणो विशीला बहुमृत्वा
सप्रतानाश्च ॥ ४४ ॥ सुबहूनामुपयोज्या कृषीवला सत्यवादिनः सुखिनः ॥ केदारो
समूताश्चतस्वभावा धनैर्युक्ता ॥ ४५ ॥

‘कूट’ योग में पैदा हुए मनुष्य झूठे पापी और हिंसक, दरिद्र, शठ, क्रूर और वनवासी होते हैं। ‘छत्र’ योग में होने वाले आश्रय दाता दयावान्, राजवल्लभ, श्रेष्ठ बुद्धिवाले, सुखी, दीर्घायु, दाल्य और वृद्ध अवस्था के सुखी होते हैं। धनुष योग में होनेवाले झूठे चोर गुप्त पापी, धूर्त, जगलवासी, भाग्यहीन, जबानी में सुखी होते हैं। ‘उर्ध्वचन्द्रयोग’ में होने वाले जातक सेनापति, सुन्दर शरीर, राजप्रिय, वनवान् धनी होते हैं। जो महाभाग ‘चक्र’ योग में जन्म लेते हैं वे राजाधिराज होते हैं और राजा लोग उनके चरणों में सदा प्रणाम करते हैं। ‘समुद्र’ योग में जन्म लेनेवाले सदा ऐश्वर्यशाली, श्रेष्ठ आचारवाले, धनीजनो के मान्य भोगी, वैभवयुक्त बहु पुत्रवाले होते हैं। ‘वीणा’ योग में होनेवाले जातक गान-वाद्य नृत्य में निपुण और धनवान्, सुखी, नेता तथा बहुत कर्मचारीवाले होते हैं। ‘दामिनी’ योग में जन्म लेनेवाले उपकारी, नीतिमान् धनी, ऐश्वर्यशाली, विख्यात बहुत परिवारवाले और धीर होते हैं। ‘पाश’ योग में पैदा हुए मनुष्य कभी कभी बन्द भोगनेवाले, छल छिद्रकारी, चतुर, बहु भापी (दकवादी), जीलरहित, डपोरशख होते हैं। ‘केदार’ योग में पैदा होनेवाले सत्यवादी, सुखी, चञ्चल स्वभाववाले, धनी और उपकारी होते हैं ॥ ३६-४५ ॥

तोष्णालसघनहोना हिंसा सुबहिष्कृता महामूरा ॥ सप्राप्ते सस्यशब्दा शूले योगे भवति नरा
॥ ४६ ॥ पाण्डवादिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके ॥ सुतभातृधर्मरहिता पुण्ययोगे ये
नरा जाता ॥ ४७ ॥ बलसयुक्ता विघ्ना विद्याविज्ञानवर्जिता मलिना ॥ नित्य दुःखितदीना
गोले योगे भवति नरा ॥ ४८ ॥ सर्वास्त्रवि दशास्त्रेते भवेयुः फलदायिनः ॥ प्राणिनामिति
विज्ञेया प्रवदति तत्पाशजा ॥ ४९ ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वछण्डे नामसप्तयोगादि फलकथन
नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

‘शूल’ योग में पैदा हुए मनुष्य तीखे स्वभाववाले, आलसी, धनहीन, हिंसक, बलवान् किन्तु समाज से निन्दित होते हैं। ‘युग’ योग में होने वाले मनुष्य पाखण्डी, झूठे, दरिद्र, समाज से निन्दित, धर्ममर्यादा रहित होते हैं। ‘गोल’ योग में होनेवाले मनुष्य बलवान्, निर्धन, ज्ञान और विचाररहित, मलिन और सदा दुःखी होते हैं। हे मैत्रेय! ये योग अपना पूरा फल विशेष करके सभी दशा में दिखाते हैं ॥४६-४९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भा० प्र० नाम त्रयोणादिकथन
नाम सप्तदशोऽध्याय ॥१७॥

अथ गजकेसरियोगमाह

केन्द्रस्थिते देवगुरौ मृगाकाद्योगस्तदाहुर्गजकेसरीति ॥ दृष्टे युते वेदसुते शशाके
भीचास्तहीर्नगजकेसरी स्यात् ॥१॥ गजकेसरिसंज्ञातस्तेजस्वी धनवान् भवेत् ॥ मेधावी
गुणसम्पन्नो राजप्रियकरो भवेत् ॥२॥

अथाऽमलायोगमाह

यस्य जन्मसमये शशिलप्राप्तदृष्टे यदि च जन्मनि तस्य ॥ तस्य कीर्तिरमला भुवि
तिष्ठेदायुषोन्तमविनाशनसप्त ॥३॥ लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा दशमे शुभसंयुते ॥ योगोयममला
नाम कीर्तिराचन्द्रतारकी ॥४॥ राजपूज्यो महाभोगी दाता बन्धुजनप्रिय ॥ परोपकारी
गुणवानमलायोगसम्भव ॥५॥

गज केसरी योग

चन्द्रमा से बृहस्पति केन्द्र में हो तो गजकेसरी नाम का योग होता है। और नीच और अस्तरहित ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त बुध या चन्द्रमा हो तो भी गजकेसरी योग होता है। गजकेसरी में उत्पन्न हुआ मनुष्य तेजस्वी, धनवान्, बुद्धिमान्, गुणी और राजप्रिय होता है ॥१॥२॥

“अमला” योग

जिस जातक के जन्म समय में चन्द्रमा यदि शुभग्रह के साथ लग्न में हो अथवा लग्न में शुभग्रह हो या चन्द्रमा के साथ शुभग्रह हो तो उस जातक की निर्मल कीर्ति होती है और जीवन पर्यन्त सम्पत्तिशाही रहता है। लग्न से या चन्द्र लग्न से दशमभाव में शुभग्रह हो तो ‘अमला’ नाम का योग होता है। इस योग में होनेवाले जातक का यश मसार में अनन्तकाल तक रहता है और वह जातक महाभोगी, राजपूज्य, दाता, समाजप्रिय, परोपकारी एवं गुणवान् होता है ॥३-५॥

अथ मालिकायोगमाह

सप्तादिसप्तगृहाणा यदि सप्तखेटा जातो महोपतिरनेकगजाश्वनाथः ॥ धितादिगे निधिपतिः
पितृभक्तियुक्तो धीरोग्ररूपधनवान्नरचक्रवर्ती ॥१२॥ जातो यदा विक्रममालिकाया भूपः स
शूरो धनिकश्च रोगी ॥ सुखादिका चेद्बहुदेशभाग्यभोगी महादानपरो महोपः ॥१३॥ पुत्राद्या
यदि मालिका नरपतिर्यज्वाय वा कीर्तिमान् जातः पण्डगृहाद्वन च सुखभृत्प्राप्तो दरिद्रो भवेत्
॥ कामाद्या गृहमालिका यदि बहुस्त्रीवल्लभो भूपतिर्दीर्घायुर्धनवर्जितो नरवरः
स्त्रीनिर्जितश्चाष्टमात् ॥१४॥ धर्मादिग्रहमालिकागुणनिधिर्यज्वा तपस्वी विभुः कर्माद्यो यदि
धर्मकर्मनिरतः सपूजितः सज्जनैः ॥ साम्राज्यवरांगनामणिपतिः सर्वक्रियादक्षको जातो
रिःफगृहाद्बहुव्ययकरः सर्वत्र पूज्यो भवेत् ॥१५॥

मालिका योग

लग्न से सप्तमभाव तक सात भावों में सूर्यादि सात ग्रह प्रत्येक घर में १-१ ग्रहरूप से
स्थित हो तो यह 'मालिका' या 'माला' योग होता है। इस योगमें होनेवाला हाथी घोड़े युक्त
राजा होता है। यही योग यदि धनभाव से हो तो बहुधनी, पितृभक्त, धीर, प्रतापी रूपवान्,
उपस्वभाववाला राजाधिराज होता है और यही योग तृतीय भाव से हो तो शूरवीर,
धनिक तथा राजा और रोगी होता है। और चतुर्थ स्थान से हो तो महादानी, महाभाग्यशाली
महाराजा होता है। पंचमभाव से यदि 'माला' योग हो तो जातक यशस्वी, धार्मिक राजा
होता है। छठेभाव से यह योग हो तो वनवासी, दरिद्र होता है। सप्तमभाव से 'माला' योग
हो तो बहुस्त्रीभोगी, दीर्घायु राजा होता है। अष्टमभाव से यह योग हो तो धनहीन और स्त्री
के आधीन रहनेवाला होता है। नवमभाव से यह योग हो तो गुणी, यज्ञ करनेवाला तथा
तपस्वी होता है। दशमभाव से यह योग हो तो धर्मकर्मज्ञाता तथा सज्जन वदनीय होता है।
जाभस्थान से यह योग हो तो महासुन्दरी भार्या होती है तथा सब कामों में सतुर होता है।
यही योग बारहवें भाव से हो तो बहुत खर्च करनेवाला तथा सर्वपूज्य होता है ॥१२-१५॥

अथ चामरयोगमाह

लग्नेश्वरे केन्द्रगते स्वतुगे जीवेक्षिते चामरनामयोगः ॥ सौम्यद्वये लग्नगृहे कलत्रे नवास्पदे वा
यदि चामरः स्यात् ॥१६॥ योगे जातश्चामरे राजपूज्यो विद्वान्वाग्मी पंडितो वा महोपः ॥
सर्वज्ञः स्याद्वेदशास्त्राधिकारी जीवेद्वर्षे सप्ततिर्वत्सराणाम् ॥१७॥

चामर योग

लग्नेश उल्गराशि का होकर केन्द्र में हो और गुरुदृष्टि हो तो 'चामर' योग होता है। अथवा
दो शुभग्रहों में से १-१ लग्न और सप्तम में इसी प्रकार नवम और आस्पद (१०) में हो तो
भी 'चामर' योग होता है। इस चामर योग में होनेवाला राजपूज्य, विद्वान्, वाक्पटु, ज्ञानी,
वेद और शास्त्र का अधिकारी ७० वर्ष आयु वाला राजा होता है ॥१६॥१७॥

अथ शङ्खयोगमाह

अन्योन्यकेन्द्रगृहणौ सुतशत्रुनाथौ लग्नाधिपे बलयुते यदि शङ्खयोग ॥ लग्नाधिपे च गगनाधिपतौ चरस्थे भाग्याधिपे बलयुते तु तथा ववति ॥१८॥ शङ्खे जातो भोगशीलो दयालुः स्त्रीपुत्रार्थः क्षेत्रवान्पुण्यकर्मा ॥ शास्त्रज्ञानाचारसाधुक्रियावान् जीवेद्द्वयं वत्सराणामशीतिम् ॥१९॥

शङ्खयोग

पचम तथा षष्ठभावस्वामी परस्पर केन्द्र में हों और लग्नेश बलवान् हो तो 'शङ्ख' योग होता है। इसी प्रकार लग्न, दशम के स्वामी चरराशि में हों और भाग्येश बलवान् हो तो भी 'शङ्ख' योग होता है। शङ्ख योग में होनेवाला भोगी, दयालु, धन, स्त्री पुत्र वात्सा, भूमिपति, पुण्यात्मा, शास्त्रज्ञानी, धेष्टकर्म करनेवाला और प्रायः ८० वर्ष का दीर्घायु होता है ॥१८॥॥१९॥

अथ भेरीयोगमाह

स्वात्योदयास्तभवनेषु विषज्वरेषु कर्माधिपे बलयुते यदि भेरियोग केन्द्रे गते मुरगुरी सितलग्ननाथौ भाग्येश्वरे बलयुते तु तथैव वाच्यम् ॥२०॥ दीर्घायुषो विगतारोगभया नरेन्द्रा बह्वर्थाभूमिसुतदारयुता प्रसिद्धा ॥ आचारभूरिमुत्तरीर्ष्यमहानुभावा भेरीप्रजातमनुजा निपुणाः कुलीना ॥२१॥

भेरी योग

लग्न, द्वितीय, द्वादश और सप्तमस्थान में सब ग्रह हों और दशमेश बलवान् हो तो 'भेरी' योग होता है। तथा लग्नेश, शुक्र, गुरु केन्द्र में हों तथा भाग्येश बलवान् हो तो भी 'भेरी' योग होता है ॥२०॥ इस योग में होनेवाला जातक रोगभयरहित धनभूमिसम्पन्न, स्त्री पुत्र युक्त, दीर्घायु, प्रसिद्ध, आचारवान् सुखी तथा शूरवीर कुलीन राजा चतुर होता है ॥२०-२१॥

अथ मृदंगयोगमाह

उज्ज्वलप्राशक्तपती यदि केन्द्रकोषे तुल्यस्वकीयभवतोपगते बलादधे ॥ लग्नाधिपे बलयुते तु मृदंगयोग कल्याणरूपनृपतुल्यपरा प्रदः स्यात् ॥२२॥

मृदंग योग

उज्ज्वलराशित्थित नवाष्टस्वामी यदि केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हों और लग्नेश बलवान् होकर उज्ज्व या स्वगृही हों तो 'मृदंग' योग होता है। इस योग में होनेवाला सुन्दर रूप, युगो से युक्त राजा के समान यश प्रतापवाना होता है ॥२२॥

अथ श्रीनाथयोगमाह

कामेश्वरे कर्मगते स्वतुगे कर्माधिपे भाग्यपतयुते च ॥ श्रीनाथयोग शुभदस्तदानीं जातो नरः शशतमो नृपात् ॥२३॥

श्रीनाथ योग

सप्तमेश दशमभाव मे उच्चराशि मे हो और दशमेश भाग्यस्थान मे हो तो 'श्रीनाथ' योग होता है॥ इस योग मे सजात मनुष्य महाप्रतापी राजा होता है॥२३॥

अथ शारदायोगमाह

योगः शारदसज्जकः सुतगते कर्माधिपे चंद्रजे केन्द्रस्थे दिननाथके निजगृहप्राप्तेतिवीर्यान्वितः॥
चंद्रात्कोणपुते पुरंदरगुरौ सौम्यत्रिकोणे कुजे लाभे वा यदि देवमत्रिणि बुधास्तच्छारदासज्जकः॥२४॥
स्त्रीपुत्रबंधुमुखरूपगुणानुरक्ता भूप्रियागुरुमहीसुखेवभक्ताः ॥ विद्याविनोदरतिशील
तपोबलाढ्या जाताः स्वधर्मनिरता भूवि शारदाख्ये ॥२५॥

शारदा योग

पञ्चमेश दशमभाव मे हो और बुध केन्द्र मे तथा सूर्य पूर्ण बलयुक्त स्वगृही हो तो 'शारदा' योग होता है॥ तथा चन्द्रमा से गुरु त्रिकोण स्थान मे हो, सौम्यग्रह त्रिकोण मे, मंगल लाभस्थान मे या गुरु लाभ मे हो तो 'शारदा' योग होता है। इस योग मे होनेवाला स्त्री पुत्र-युक्त, सुखी, रूपवान्, गुणी, राजप्रिय, गुरु देवता का भक्त, धर्मशील, विद्यावान्, कामक्रीडा रत तपोबल संपन्न होता है॥२४॥२५॥

अथ मत्स्ययोगमाह

लग्नधर्मगते पापे पचमे सप्तसद्युते ॥ चतुरस्र गते पापे योगोऽयं मत्स्यसज्जकः ॥२६॥ काततः
करुणासिंधुर्गुणधोर्बलरूपवान् ॥ यतोविद्यातपस्वी च मत्स्ययोगसमुद्भवः ॥२७॥

मत्स्य योग

लग्न तथा नवमभाव मे पापग्रह, पचमभाव मे शुभपाप मिथितग्रह हो और केन्द्र मे भी पापग्रह हो तो 'मत्स्य' योग होता है॥ इस योग मे होने से दैवज्ञ, दयावान्, बल बुद्धि गुण रूपवाला, यशस्वी विद्वान् तपस्वी होता है ॥२६-२७॥

अथ कूर्मयोगमाह

कलत्रपुत्रारिगृहेषु सौम्याः स्वतुगमित्रांशकराशियाताः ॥ तृतीयलाभोदयनास्त्वसौम्या
मित्रोच्चसस्यो यदि कूर्मयोगः ॥२८॥ विख्यातकीर्तिर्भुवि राज्यमोगी धर्माधिकः
सत्त्वगुणप्रधानः ॥ धीरः सुखी वागुपकारकर्ता कूर्मोद्भवो मानवनाथको वा ॥२९॥

कूर्म योग

५।६।७ स्थानो मे सौम्यग्रह, उच्च स्वगृही या मित्रनवांश मे हो और लग्न, तृतीय तथा लाभस्थान मे उच्च या मित्रराशि मे पापग्रह हो तो 'कूर्मयोग' होता है॥२८॥ इस योग मे होनेवाला विख्यात् कीर्ति, राजसमान ऐश्वर्यसम्पन्न, धर्मात्मा सात्त्विक, धीर, सुखी, व्याख्याता जननामक होता है ॥२८-२९॥

अथ खड्गयोगमाह

भाग्येशे धनभावस्ये धनेशे भाग्यराशिगे ॥ लग्नेशे केन्द्रकोणस्ये खड्गयोग इतीरितः ॥३०॥
वेदार्थशास्त्रनिलितागमतत्त्वयुक्तिबुद्धिप्रतापबलवीर्यमुखानुरक्ताः ॥ निर्मत्तराश्च निजवीर्य-
महानुभावाः खड्गे भवति पुरुषाः कुशलाः कुतज्ञाः ॥३१॥

खड्ग योग

भाग्येश धनभाव में एव धनेश भाग्यस्थान में हो और लग्नेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'खड्गयोग' होता है। इस योगमें होनेवाला वेदादि शास्त्र का ज्ञाता, बुद्धिमान्, प्रतापी, सुखी, द्वेषरहित, अपने उद्योग में उत्थति करनेवाला कुतज्ञ और कुशल होता है ॥३०॥३१॥

अथ लक्ष्मीयोगमाह

केंद्रमूलत्रिकोणस्ये भाग्येशे परमोच्चगे ॥ लग्नाधिपे वृत्तादये च लक्ष्मीयोग इतीरितः ॥३२॥
गुणाभिरामो बहुदेशनाथो विद्यामहाकीर्तिरनंगरूपः ॥ दिगन्तविश्रान्तनृपालबन्धो राजाधिराजो
बहुदारपुत्रः ॥३३॥

लक्ष्मी योग

परमोच्चराशि स्थित भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण में हो और लग्नेश बलवान् हो तो 'लक्ष्मी' नामक योग होता है ॥ इस योग में सञ्जात व्यक्ति विद्वान्, सुन्दरराजा तथा महाराजाधिपति एव अनेक स्त्री पुत्र वाला होता है ॥३२॥३३॥

अथ कुसुमयोगमाह

स्थिरलग्ने भृगौ केन्द्रे त्रिकोणैर्वा शुभेतरैः ॥ मानस्थानगते सौरे प्रयोगेय कुसुमो भवेत् ॥३४॥
दाता मही-मडलनायक्यो भोगी महावराजराजमुख्यः ॥ तौके महाकीर्तिपुतः प्रतापी नाथो
नराणा कुसुमोद्भवः स्यात् ॥३५॥

कुसुम योग

स्थिर राशि का लग्न हो, शुक्र केन्द्र में तथा चन्द्रमा त्रिकोण में एव पापग्रह और जनि मानस्थान (दशम) में हो तो 'कुसुम' योग होता है ॥३४॥ इस योग में होने से दानशील राज वैद्य भोगी, राजाधिराज, यशप्रताप युक्त होता है ॥३५॥

अथ पारिजातयोगमाह

विलप्रनायस्थितराशिनावस्थानेशराशोरातदंशनायाः ॥ केन्द्रत्रिकोणोपगता यदि स्युः
स्थतुंगगा वा यदि पारिजातः ॥३६॥ मध्यांतसौख्यः क्षितिपालवंधो पुद्गप्रियो
वारणवाजियुक्तः ॥ स्वकर्मधर्माभिरतो दयालुयोगो नृपः स्याद्यदि पारिजातः ॥३७॥

पारिजात योग

लघ्नेश, तथा लघ्नेश जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी तथा वह जिस राशि में हो, एवं उस राशि का स्वामी तथा वह भी जिस राशि में हो, उस राशि का स्वामी, और उनके नवमाश के स्वामी ये यदि उच्च राशि के हो अथवा केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'पारिजात' योग होता है॥३६॥ इस योग में जवानी तथा वृद्धावस्था में सुखी, राजवत्, युद्धप्रिय, हाथी घोड़ेयुक्त, स्वकर्म धर्मरहित, दयालु तथा राजा होता है॥३६-३७॥

अथ कलानिधियोगमाह

द्वितीय पचमे जीवे बुधशुक्रयुतेजिते ॥ क्षेत्रे तयोर्वा संप्राप्ते योगः स्वात्स कलानिधिः ॥३८॥ कामी कलानिधिभयः सुगुणाभिरामः सस्तूयमानचरणो नरपालमुख्यः ॥ सेनातुरंगमदवारण-शंखमेरीषाद्यान्वितो विगतरोगभयारिसद्यः ॥३९॥

कलानिधियोग

द्वितीय या पचमभाव में गुरु हो तथा बुध, शुक्र से युक्त या दृष्ट हो अथवा इनकी राशि में हो तो 'कलानिधि' योग होता है॥३८॥ 'कलानिधि' योग में जन्म लेनेवाला कामी, गुणी, सुन्दर तथा राजपूज्य, सेना आदि से युक्त, नीरोग, निर्भय तथा शत्रुजेता होता है॥३८॥३९॥

अथ पारिजातादियोगमाह

स पारिजातधुचरः सुखानि नीरोगतामुत्तमवर्गपातः ॥ सगोपुराशे यदि गोघनानि सिंहासतस्थः कुरुते विभूतिम् ॥४०॥ करोति पारावतभागयुक्तो विद्या यश श्रीविपुल नराणाम् ॥ स देवलोकं बहुमानसेनामेरावतस्यो यदि भूपतित्वम् ॥४१॥

पारिजात योग में विशेष

पारिजात योगवारक ग्रह पौडशर्मा में—थेष्ठवर्ग में हो तो जातक को नीरोग, और पूर्वोक्त 'गोपुराश' में हो तो गोघन, और सिंहासन में हो तो राजसिंहासन के योग्य विभूति होती है॥४०॥ और पारावताश में हो तो विद्या, यश, धन ऐश्वर्यशाली होता है॥ और 'सिंहासनाश' में हो तो इन्द्र के समान राजा होता है॥४१॥

अथ लग्नाधियोगमाह

सप्राञ्च दाराष्टमोहसस्थेः शुभेन पापग्रहयोगदृष्टः ॥ लग्नाधियोगो भवति प्रमिदः पार्यः सुखस्थानयिवर्जितश्च ॥४२॥ लग्नाधियोगे बहुशास्त्रवर्ता विद्यायिनीतश्च बलाधिकारी ॥ मुख्यस्तु निष्कापटिको महात्मा लोके यमोचितगुणाधिकः स्यात् ॥४३॥

लग्नाधियोग

लग्न से सप्तम तथा अष्टमभाव में शुभग्रह हो और पापग्रहों में युक्त या दृष्ट न हो तो

‘लप्राधियोग’ होता है किन्तु चतुर्यभाव में पापग्रह न होना चाहिए॥४२॥ लप्राधियोग में होनेवाला बहुशास्त्रज्ञाता, विद्वान्, विनीत सेनापति जनमान्य, निष्कपट, यश-धन-गुण-सम्पन्न महात्मा होता है॥४३॥

अथ चन्द्रयोगादीनाह

सहस्ररश्मितश्चद्रे कटकादिगते सति ॥ न्यूनमध्यवरिष्ठानि धनीधीर्नपुणानि च ॥४४॥
स्वाशेधिमित्रस्याशे वा स्थिते वा दिवसे शशी ॥ गुरुणा दृश्यते तत्र जातो वित्तसुखान्वित
॥४५॥ स्वाधिमित्राशगश्चद्रे वृष्टो दानवमित्रिणा ॥ निशासु कुरुते लक्ष्मीं छत्रध्वजसमाकुलाम्
॥ विपर्ययस्ये शीताशी जायतेऽल्पधना नरा ॥४६॥

चन्द्र योग

सूर्य से चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोणस्थान में हो तो योग बलानुसार उत्तम, मध्यम और कनिष्ठरूप में बुद्धि, धन और वैभव होते हैं॥ चन्द्रमा अपने नवाश या अतिमित्र के नवाश में हो तथा दिन का जन्म लग्न हो तथा गुरु की दृष्टि हो तो धनी और सुखी होता है॥ अधिमित्राश में स्थित चन्द्र शुक से दृष्ट तथा रात्रि का जन्म हो तो ध्वजा छत्र-युक्त राजा होता है॥ इससे विपरीत होने से सामान्य धनवाला होता है ॥४४-४६॥

अथाऽधियोगमाह

शशिन सौम्या पृष्ठे द्यूने वा निधनसंस्थिता वा स्यु ॥ स्यादधियोगे जात सौम्ये
सबलैर्धराधीश ॥ मध्यबलैर्मन्त्री स्यादधमबले सैन्यनायक स स्यात् ॥४७॥ चद्राद्वृद्धिगतं
सौम्यो धर्मशोलो महाधनी ॥ द्वान्या समोत्पद्यसुमानेकेन परिकीर्तित ॥ चद्रात्लप्राद्वहाभावे
वरिद्रो दुःखितो भवेत् ॥४८॥

अधियोग

चन्द्रमा से ६।७।८। स्थान में सौम्यग्रह हो और बलवान् हो तो राजा तथा मध्यबली हो तो मन्त्री, और हीनबली हो तो सेनानायक होता है॥ चन्द्रमा से वृद्धिस्थान (३।६।१०।११।) में सौम्यग्रह हो तो धर्मात्मा तथा श्रेष्ठ आचारवाला होता है। दो सौम्यग्रहों से फल समान, और एक ग्रह से अल्पधनवाला होता है॥ चन्द्र या लग्न से उपर्युक्त स्थान में कोई भी ग्रह नहीं हो तो दरिद्र और दुःखी होता है॥४७॥४८॥

अथ सुनफाऽनफादुरधराकेमद्रुमयोगानाह

शीतारोर्द्विगस्थितश्च सुनफायोगोऽनफात्स्थितस्त्वात्यर्थः सचरंभविदुरधरा पकेदहेसोऽज्जित-
तै ॥ चेद्विजय्यमगा न चेद्विजयरा केमद्रुम स्यात्तदा प्राचीनैर्भुजिभि स्मृता क्षतिमिता
योगा शशाकोद्भवा ॥४९॥

मुनफा, अनफा, दुरधरा, केमद्रुम योग

चन्द्रमा से दूसरे स्थान में ग्रह हो तो 'मुनफा' योग होता है। (ग्रह २ या तीन से अधिक होने चाहिए) और द्वादशभाव में यदि तीन या तीन से अधिक ग्रह हो तो 'अनफा' योग होता है। और सूर्य छोड़कर दूसरे तथा द्वादश भाव में ग्रह हो तो 'दुरधरा' योग और दूसरे बारहवें स्थान में कोई भी ग्रह नहीं हो तो 'केमद्रुम' योग होता है॥४९॥

अथ मुनफायोगफलमाह

भूमिपतेश्च सचिव सुकृती कृती च नून भवेन्निरभुजार्जितवित्तयुक्त ॥ स्यात् सदाखिलजनेषु विशालकीर्त्या बुद्ध्याधिकश्च मनुज मुनफामिधाने ॥५०॥

मुनफा योग फल

राजमन्त्री, पुण्यकर्ता, कर्मवीर, स्वोपार्जित धन से धनी, समाज में विख्यात, कीर्तिमान् तथा बुद्धिमान् होता है॥५०॥

अथाऽनफायोगफलमाह

प्रभुर्विनीत शुभवाग्बिलास सच्छीलशाली गुणपूर्तिभुक्त ॥ उदारकीर्ति. स्मरतुष्टचित्तो नित्य नर स्यादनफामिधाने ॥५१॥

अनफा योग फल

विनीत, मान्य, मिष्टभाषी, सुशील, गुणी, यशस्वी तथा विरक्त होता है॥५१॥

अथ दुरधरायोगफलमाह

सद्वित्तसद्धारणयाहधात्रीसील्यमियुक्त सतत हतारि ॥ कातामुनेत्राचललालस स्याद्योगे सदा दुरधरे मनुष्य ॥५२॥

दुरधरा योग फल

इस योग में होनेवाला, धनी बाहनयुक्त, सुखी, शत्रुहीन, तथा कामी होता है॥५२॥

अथ केमद्रुमफलमाह

सद्वित्तमृत्युयन्त्रितात्मजनेर्विहीन प्रेय्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी ॥ नित्य विरद्धधिपणो मलिन कुपेय केमद्रुमे च मनुजाधिपते सुतोऽपि ॥५३॥

केमद्रुम योग फल

स्त्री, पुत्र, धनहीन, मृत्युवृत्ति (नीचरी) विदेशवासी, विरद्धबुद्धि, मलीन तथा कुपेयवाला होता है॥५३॥

अथ केमद्रुमभंगमाह

चन्द्रचतुर्थः सुनफा दशमस्थितैः कीर्तितोऽनफा विहगैः उभयस्थितैर्दुरधरा केमद्रुमसन्नितोऽन्यथा योगः ॥५४॥ यद्वाशिसंज्ञे शीतांशुर्नवाशो जन्मनि स्थितः ॥ तद्द्वितीयस्थितेऽप्योः सुनफाख्यः प्रकीर्तितः ॥५५॥ द्वादशीरनफा ज्येष्ठो ग्रहैर्द्विदशस्थितैः ॥ प्रोक्तो दुरधरायोगोऽन्यथा केमद्रुमो मतः ॥५६॥ प्राप्तेषांशुः सूक्तिकाले घटा वा सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाणः करोति ॥ दीर्घाष्टम्य राजयोग मनुष्य सत्त्वोशादयं हन्ति केमद्रुमं च ॥५७॥ सर्वे खेटाः केन्द्रतुर्गेषु सत्या दुष्टो योगश्चापि केमद्रुमोऽयम् ॥ दुष्टं सर्वं स्व फल संविहाय क्रुर्गुः पुंसां सत्फलं वै विचित्रम् ॥५८॥ सर्वेषु चन्द्रयोगेषु चेद यत्नाद्विचितयेत् ॥ केमद्रुमादिका योगाः सम्बन्धस्य तयं ययुः ॥५९॥

केमद्रुमभंग योग

चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान ग्रहो के होने से 'सुनफा' योग और दशमभाव में होने से 'अनफा' योग होता है। दोनो ४।१० स्थानो में ग्रहो के होने से 'दुरधरा' योग अन्यथा होने से 'केमद्रुम' योग होता है ॥५४॥ जन्मलग्न में चन्द्रमा जिस नवाश में हो उससे द्वितीय नवाश में ग्रह हो तो 'सुनफा' और द्वादश नवाश में ग्रह हो तो 'अनफा' योग होता है ॥५५॥ तथा २।१२ नवाश में ग्रहो के होने से 'दुरधरा' योग अन्यथा 'केमद्रुम' योग होता है ॥५६॥ जन्मलग्न में चन्द्रमा राजयोग कारक होता है ॥५७॥ सारे ग्रह चारो केन्द्र स्थानो में हो तो यह भी 'केमद्रुम' योग होता है परन्तु यह योग अपना सब दुष्ट फल छोड़कर सब प्रकार शुभफल करता है ॥५८॥ सब प्रकार के चन्द्रयोगो के इनका अवश्य ही विचार करना चाहिए। योगायोग विचार से 'केमद्रुम' योग के भग होने की अधिक सभावना रहती है ॥५९॥

अथ रवियोगमाह

वेतिश्रान्त्यगतैर्ग्रहैर्द्विषणौर्वोशिः शशाङ्कोज्जितैर्भानिस्तूभयपैस्तदोभयचरीयोगः स्मृतः प्राक्तनः ॥ किञ्चित्दृष्टनेषु नैव नियमोऽवश्य नरभ्रानृतोऽत्यत कष्टकरो नरश्च मृदुर्दृष्टः स्वादेसियोगोद्भवः ॥६०॥

रवियोग

चन्द्रमा रहित तीन या तीन से अधिक ग्रह सूर्य से वारहवें हो तो 'वेति' योग होता है। और सूर्य से द्वितीयभाव में हो तो 'वेति' योग होता है। तथा सूर्य से २।१० स्थानो में (चन्द्ररहित) ग्रह हो तो 'उभयचरी' योग होता है। वेतियोगफल-वेति योग में होनेवाले के वचन का कोई सिद्धान्त नहीं (कभी कुछ २ रहता है) अतः झूठा, बाटकारी किन्तु दर्शन का मोठा होता है ॥६०॥ (देखने का मोठा करनी का कड़ा-छिपी छुरी होती है।)

अथ वेतियोगफलम्

तिर्यग्दृष्टिः सत्त्वसत्त्वानुक्रुपी भव्योऽत्यर्थ दीर्घकायोऽलसश्च ॥ मूर्खोऽप्य स्याच्छरा वेतियोगसत्त्वसत्त्वोवाग्मितासाधिशाली ॥६१॥

वेशियोग फल

जिसका जन्म 'वेशि' योग में होता है, वह सत्वगुणी, सत्यभावी, तिरछी नजरवाला, लम्बा कद, आलसी, दरिद्र तथा वाचाल होता है॥६१॥

अथोभयचरीफलमाह

यस्य स्याज्जनने किलोभयचरीयोगस्य चेत्सम्भवः सोत्पत्त समवायवानपि तदा मर्त्यो भवेत्सद्यशाः ॥ नात्युच्चः प्रबलामलाब्धितनवायुक्तः समृद्धः सदा ह्यत्यर्थं स्थिरमानसः सरत्तदृक् सर्वसहः सम्मतिः ॥६२॥

उभयचरी योगफल

जिसके जन्मलग्न में उभयचरी योग होता है, वह कजूस (अत संप्रही) यशस्वी, मझोला कदवाला, लक्ष्मीवान्, सरल, स्थिर बुद्धि और धीर होता है॥६२॥

अथ पुरुषस्त्रीनपुंसकजन्मज्ञानमाह

बलाग्रलं विलोक्यैषां ग्रहाणां योगकारिणाम् ॥६३॥ स्त्रीपुसनिर्णयः स्त्रीबयोगास्तु तदसंभवाः ॥६४॥ ओजमे च विषमागकोपगैर्लघ्वचद्रगुरुभास्करैर्नरः ॥ स्यात्तथापि सममे समाशौः स्त्रीनियेकसमये प्रभूतिषु ॥६५॥ लग्न त्वक्त्वा च विषमे पुत्रदो भास्करात्मजः ॥ समे कन्याप्रदः प्रोक्तो नान्यग्रहनिरीक्षितः ॥६६॥

पुरुष, स्त्री, नपुंसक ज्ञान

योगकारक ग्रहों का बलावल विचार करके पुरुष स्त्री का जन्म जानना और उन पुरुषयोग तथा स्त्रीयोग के अभाव में नपुंसक का जन्म जानना॥ लग्न में विषमराशि तथा विषम नवाश हो और चन्द्र, सूर्य, गुरु विषम नवाश में हो तो 'नर' का जन्म हो। एव समराशि और चन्द्र, सूर्य, गुरु सम नवाश में हो तो 'कन्या' जन्म होता है॥ लग्न को छोड़कर शनि विषमराशि (या विषम नवाश) में हो तो पुत्र और समराशि (या सम नवाश) में हो तो कन्या होती है ॥६३-६६॥

अथ षट्क्लीबयोगानाह

अन्योन्यं रविशशिनी विषमाविषमर्क्षगौ निरीक्ष्येते ॥ इदुजरविपुत्री वा तथैव हि नपुंसकं कुरुतः ॥६७॥ वक्रौ विषमे सूर्यः समगश्रेय परस्परालोकात् ॥ विषमर्क्षे लग्नेदुसमराशिगं कुजोऽवलोकयति ॥६८॥ बुधचदौ कुजदृष्टौ विषमर्क्षसमर्क्षगौ तथैवोक्ता ॥ ओजनवांशकसंस्था लग्नेदुसितास्तथैवोक्ताः ॥६९॥

नपुंसक छह योग

सूर्य चन्द्रमा विषम सम राशियों में होकर परस्पर देखते हो अथवा चन्द्रमा और शनि इसी प्रकार हो तो जातक 'नपुंसक' होता है। मंगल विषम राशि में सूर्य सम राशि में होकर

परस्पर देखते हों अथवा लग्न विषम राशि में चन्द्रमा सम राशि में दोनों को मंगल देखता हो॥
अथवा बुध विषम राशि में चन्द्रमा सम राशि में दोनों को मंगल देखता हो अथवा विषम
नवमाशक में लग्न, चन्द्रमा और शुक्र हो तो नपुसक होता है॥ ये ६ योग नपुसक के कहे
गये॥६७॥६८॥६९॥

अथ प्राणिनां वृत्तिनिर्णयमाह

अयं पितृमातृशत्रुसुहृद्भ्रात्रादिभि-
स्याद्वनम् ॥ मृत्पादा दिननायकप्रशशिना मध्ये बली यस्ततः कर्मशैत्यनवाशराशिगवशाद्-
वृत्ति जगुस्तद्विद ॥७०॥ शैपज्यचामीकरतोयपानपण्येन मुक्तामणिविप्रलभात् ॥
अन्योऽन्यदूतागमवृत्तिमार्गाज्जीवत्यसौ वासरनायकाशे ॥७१॥ मन्त्रोपदेशरत्नवादविनोदमार्ग-
वृत्ति जगु सकलशास्त्रपुराणमार्ग ॥ ज्ञानोपदेशपथिभिः क्षितिपालपूज्यो जीवत्यसौ खलु
पुमान्दिननायकाशे ॥७२॥ जलोद्भवानां कपविक्रयेण कुपेभ्य मुद्धादविनोदमार्गात् ॥
राजागनासशयवृत्तिरूपाग्निशाकराशे बसनक्रयाद्वा ॥७३॥ धातोर्दिवादेन रणप्रहारास्तब्ध-
प्रिवादात्कलहप्रवृत्त्या ॥ जीवत्यसौ साहसमार्गरूपया धरासुताशे यदि चौरवृत्त्या ॥७४॥
शिल्पादिकाव्यागमशास्त्रमार्गाज्ज्योतिर्गणज्ञानवशादुपधाशे ॥ वेदार्थवेदाध्ययनाज्जपाच्च
पुरोहितव्याजवशात्प्रवृत्तिः ॥७५॥ जीवाशके मूमुरदेवतानामुपासकाध्यापकमार्गरूपात् ॥
पुराणशास्त्रागमनीतिमार्गाद्वर्णोपदेशेन कुतोवनाह ॥७६॥ सुवर्णमणिस्वर्णजाभ्रमूलादगवा
क्रयाज्जीवनमाहुरार्या ॥ गुह्यौदनखीरदधिक्रयेण स्त्रीणां प्रलोभेन भृगोः सुताशे ॥७७॥
शन्यशके फुत्तितमार्गवृत्त्या शिल्पादिभिर्दारुमयैर्वधाद्यैः ॥ विन्यस्तभाराज्जनविप्रलभादन्यो-
न्यवेरोद्भवमूलमार्गात् ॥७८॥ स्वप्नेऽप्रे स्वनवाशके मुहूर्ति वा स्वात्पुच्छभागे यदा
स्वदेष्काणचतुष्टयेषु सहिता मूलत्रिकोणेषु वा ॥ तत्तत्कालबलान्वितास्तु सचरा
चर्योत्तमार्गोऽपि वा ते सर्वे शुभदा भवन्ति हि तदा स्वातर्दशादावपि ॥७९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे बह्वयोगफलकथन नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

मनुष्यो की वृत्ति निर्णय

लग्न और चन्द्रमा का बलाबल विचार करके दशम भाव में स्थित ग्रह के अनुसार पिता,
माता, शत्रु मित्र, भ्राता आदि के द्वारा धन की प्राप्ति होती है॥ अथवा सूर्य, लग्न और
चन्द्रमा में जो बलवान् हो तथा दशम भाव में स्थित जो राशि का नवमाश उसके स्वामी के
अनुसार वृत्ति का निर्णय करे॥७०॥ दशमेश राशि नवमाश पति यदि सूर्य हो तो
औपधि-विक्रय, सुवर्ण-विक्रय, शर्बत आदि विक्रय, मोती-माणिक्य आदि जवाहरात में
आजीविना हो अथवा ठगी से अथवा दलाली से आजीविन हो॥ सूर्य के नवमाश में हो तो
मन्त्रोपदेश, रसाघातु व्यापार, खेल, बाजीधरी आदि शास्त्रपुराण उपदेश से, या ज्ञानोपदेश में
प्रसिद्ध और राजपूज्य होता है। चन्द्रमा के नवाश में जन्म हो तो जलजीव मछली आदि के
व्यापार से या कृषि (मैती) से या मिट्टी के घने हुए पदार्थों से या राजाकुला सम्पर्क में
अथवा वस्त्र व्यापार से जीवनयापन होता है॥ उसी प्रकार मंगल के नवमाश में घातु का
व्यापार, मुक्कदमाबाजी, मारपीट, आग लगाना, लड़ाई झगडा, अमम साहम के कार्यों में

अथवा चोर वृत्ति से आजीविका होती है। बुध के नवमाश के शिल्प व्यापार, काव्य-कविता शास्त्रों द्वारा, ज्योतिष से, वेदपाठ आदि से, पुरोहित या व्याज से आजीवन होता है। बृहस्पति के नवमाश होने पर देवोपासना अथवा अध्यापन कार्य, पुराण शास्त्र आदि का उपदेश, व्याख्यान वृत्ति या व्याज आदि से आजीवन होता है। शुक के नवमाश में सुवर्ण, मणि-माणिक, हाथी घोड़े, गाय, आदि से अथवा अन्न, गुड़, दूध, दही आदि के व्यापार से जीवनयापन होता है। शनि के नवमाश में निन्दित वृत्ति से अथवा लकड़ी के खेल खिलौने से, अथवा हिसक वृत्ति से, भाड़े से, ठगी से, परस्पर वैर कराने से तथा वकालत से आमदनी होती है। किसी भी ग्रह के शुभफल देने में ये निमित्त होते हैं—स्वश्रेष्ठ होना, स्व नवाश में होना, मित्र राशि या मित्र नवाश में होना, अपने उच्च राशि का या उच्च नवाश में होना, केन्द्र या त्रिकोण में होना, अपने द्वेष्कोण में होना, मूल त्रिकोण या वर्गोत्तम होना, जन्मकाल में पूर्ण बली होना, इस कथित स्वरूप में ग्रह अपनी दशा और अन्तर्दशा में अपना पूर्ण फल करते हैं। अर्थात् इन कथित योगों में भी ग्रह का स्वरूप कथित रीति से देखना चाहिए॥७०-७९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रका० बहुयोगफलकथन नाम
अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

अथ मारकभेदाध्यायः

त्रिविधाआयुषो योगा स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमा ॥ द्वात्रिंशत्पूर्वमल्पायुर्मध्यमायुस्ततो भवेत् ॥
चतुष्षट्चा पुरस्तात् ततो दीर्घमुदाहृतम् ॥१॥ उत्तमायुः शतादूर्ध्वं जातव्यं मुनिसत्तम ॥
चतुर्विंशतिवर्षाणामायुर्जातु न शक्यते ॥२॥ जपहोमचिकित्साद्यैर्बालरक्षा तु कारयेत् ॥
पित्रोर्दोषैर्मृता केचित्केचिन्मातृग्रहैरपि ॥३॥ अपरेऽरिष्टयोगाच्च त्रिविधा बालमृत्यव ॥
अल्पायुर्योगजातस्य विपत्तारा मृति भवेत् ॥४॥ जातस्य मध्यमे योगे प्रत्यरिस्तु मृतिर्भवेत् ॥
दीर्घायुर्योगजातानां बध्ने तु मृतिर्भवेत् ॥५॥ त्रिषु योगेषु सर्वेषु प्रत्येकं त्रिविधं भवेत् ॥६॥
अल्पायुरल्पमध्यं तु पूर्णापुंस्त्रिविधं भवेत् ॥ मध्यमादल्पमध्यं तु पूर्णापुंस्त्रिविधं भवेत् ॥७॥
दीर्घायुषोऽल्पमध्यं तु पूर्णापुंस्त्रिविधं भवेत् ॥ एव बहुविधं प्रोक्त आयुषस्तु विनिर्णय ॥८॥
अष्टमर्षं तृतीयं च लक्षादायुर्दाहृतम् ॥ द्वितीयं सप्तमस्यानं मारकस्यानमुच्यते ॥९॥
सप्तेशरघ्नपत्न्योश्च सप्त्रेन्दोर्त्तग्रहोरयो ॥ पूर्वाण्येव प्रयुजीयात्सवादादायुषा ग्रहे ॥१०॥ चरे
चरस्थिरद्वद्वा स्थिरे द्वद्वचरस्थिरा ॥ द्वे स्थिरोभयन्तरा दीर्घमध्याल्पकायुष ॥११॥

मारकभेदाध्यायः

आयुः योग तीन प्रकार के हैं। नाम—स्वल्पायुः, मध्यायुः और दीर्घायुः। ३० वर्ष तक स्वल्पायुः। ६४ तक मध्यायुः। इसके बाद दीर्घायुः होती है। १०० वर्ष तक बाद उत्तमायुः बही जाती है। २४ वर्ष की अवस्था तक निश्चित आयु का ज्ञान नहीं होता। यदि षट् हो तो जप, होम, दान तथा चिकित्सा आदि से बालकों के जीवन की रक्षा करनी चाहिए। क्योंकि कुछ बालकों की मृत्यु पितृ दोष से और कुछ की मातृबाधा विस्फोटक आदि से ॥ एव कुछ की बालारिष्ट में होती है। अल्पायुयोग में उत्पन्न बालक की 'विपत्' नाम के तारा में भी मृत्यु होती है॥

मध्यायु योग में जन्म वाले की भी 'प्रत्यरि' तारा में मृत्यु सम्भव है। दीर्घायु योगोत्पत्ति शिष्ट की भी 'बध' तारा में मृत्यु सम्भव है॥ अल्प, मध्यम, दीर्घ इन तीन भेदों में प्रत्येक के ३-३ भेद हैं। यथा-अल्पायु में अति अल्प, मध्यम अल्प, पूर्णात्मा इसी प्रकार मध्यायु के तीन भेद हैं-मध्याल्प, मध्यम पूर्णमध्यमायु। इसी प्रकार पूर्णायु के ३ भेद हैं। पूर्णात्मा पूर्णमध्यम पूर्णायु। इस प्रकार पूर्वाचार्यों ने आयु के अनेक भेद कहे हैं॥ लग्न से अष्टम तथा तृतीयभाव आयु के स्थान हैं। और द्वितीय तथा सप्तमभाव मारकस्थान हैं॥ लग्नेश-अष्टमेश से तथा लग्न-चन्द्रमा से और लग्न-होरा से आयु का निर्णय होता है। परस्पर विभिन्न योग प्राप्त होने पर अधिक फल से आयु योग स्थिर करना॥ चर में (क्रम से) 'चर, स्थिर, द्विस्वभाव में क्रमशः दीर्घायु मध्यायु, अल्पायु होती है। स्थिर में द्विस्वभाव, चर, स्थिर हो तो दीर्घ मध्य अल्प आयु। तथा द्विस्वभाव में-स्थिर, द्विस्वभाव, चर हो तो दीर्घ, मध्य, अल्प आयु होती है॥१-११॥

अल्पमध्यमपूर्णायु प्रमाणमिह योगजम् ॥ विज्ञाय प्रथम पुता ततो मारकचिन्तनम् ॥१२॥
वृश्चिके मकरे जन्म नृणा राहुर्मृतिप्रदः ॥ ग्रहस्थितावशभेदे शनिः स्यान्मारको ध्रुवम् ॥१३॥
महामारकज्ञौ तौ मादिकेतु इति स्मृतौ ॥ जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकावष्टमेश्वरी ॥१४॥
प्रायेण मारका राशिदशास्वत्राविशेषतः ॥ पण्डभे पापमुपिष्टे पण्डेशो मुख्यमारकः ॥१५॥
पण्डत्रिकोणगो धापि मुख्यमारक इष्यते ॥ मध्यायुपि मृतिः पण्डवशायापण्डमस्य वा ॥१६॥
पण्डात्रिकोणस्य पुनर्दोषात्पविषयो भवेत् ॥ पण्डे बलपुते तस्य त्रिकोणे मृतिमादिशेत् ॥१७॥
पण्डेशश्चेदन्तादृषः स्यात्त्रिकोणे मृति वदेत् ॥ व्यवत्येष समस्तापि कारकादिदशास्वतु ॥१८॥
चरे चरस्थिरद्वया इति यो राशिरागतः ॥ स एव मारको राशिर्भवतीति विनिर्णयः ॥१९॥
मारकेषां दशाकांते मारकस्यस्य पापिनः ॥ पाके पाकपुना पाके समवे निघन दिशेत् ॥२०॥
असंभवे व्यपाधीसदशाया मरण नृणाम् ॥ अभावेऽप्ययमावेशसर्वधिग्रहमुक्तिपुनः ॥२१॥
तदभावेऽष्टमेशस्य दशाया निघन पुनः ॥ मरुश्चेत्पाप सपुक्तो मारकग्रहयोगतः ॥२२॥
तिरस्कृत्य ग्रहान्तर्वाग्निहता पापकृच्छ्रदः ॥२३॥
मारकग्रहसंघी पापकर्ता शनिस्तदा ॥ तिरस्कृत्य ग्रहान्तर्वाग्निहता भवति ध्रुवम् ॥२४॥

पूर्वोक्त प्रकार से अल्प, मध्य, पूर्ण आयु का योग जान कर आगे वह योगानुसार मारक का विचार करना चाहिए। वृश्चिक और मकर राशि में जिनका जन्म होता है, उनका राहु मारक होता है। ग्रहों में नवग्रह भेद हो तो शनि निश्चय ही मारक होता है। मन्दी और केतु तो महामारक ही हैं। द्वितीय और सप्तमभाव के स्वामी तथा पण्डेश, अष्टमेश मारक हैं। इस शास्त्र में प्रायः मारक राशि की दशा में उपर्युक्त ग्रह मारक होते हैं। पण्डभाव में पापग्रह योग अधिक हो तो पण्डेश ही मुख्य मारक होता है। पण्डभाव का त्रिकोण स्थान भी मुख्य मारक होता है। मध्यायु योग वाले की पण्ड या अष्टमभाव की दशा में मृत्यु होती है। छठे भाव से त्रिकोण स्थान दशम और द्वितीय ये दोनों भावदशा क्रमशः दीर्घायु और अल्पायु वाले के विषय में जानना। पण्डभाव वर्षाग्रहयुक्त हो तो पण्डभावकी त्रिकोण राशि मारक होती है। अपात पण्डेश यदि बलपुत हो तो उनकी त्रिकोण राशि की दशा में मृत्यु बटना। मारक ग्रह

की दशा के भोग के पश्चात् ही मारक विचार की व्यवस्था जानना (क्योंकि मारक का फल यदि प्रथम हो तो कारक का फल किसको प्राप्त होगा)

प्रथम 'चरे चरस्थिरद्वद्वा' इस कथन के अनुसार जो मारक राशि प्राप्त हुई है, 'वही मारक राशि है' यह निश्चय है॥ मारकेज ग्रह की महादशा में मारक स्थान स्थित पापी ग्रह की अन्तर्दशा हो या पापसम्बन्धी ग्रहों का अन्तर हो तो (यदि सम्भव प्रतीत हो तो) मृत्यु होती है॥२०॥ यदि संभव न हो तो व्याधीश की दशा में भी मरण हो सकता है। और व्याधीश की बहुत दूर पड़ती हो तो व्याधीश से सम्बन्ध रखनेवाले ग्रह के अन्तर में मरण हो॥ वह भी न प्राप्त हो तो अष्टमेश की दशा में मरण कहना॥ शनि यदि पापग्रह युक्त हो तथा मारक ग्रह से भी सम्बन्ध रखता हो तो सब मारको को हटाकर आप मारक होता है॥ क्योंकि शनि स्वयं पापकर्मकर्ता है, अतः यदि मारकग्रह से सम्बन्ध हो तो सबको हटाकर निश्चय मारक होता है॥१२-२४॥

एतद्दशांतमुक्त्यादी विचार्यैव मृतिं वदेत् ॥ पष्टद्रेष्माणपश्चैव तथा च नाशकाधिपः ॥२५॥ विपत्तारप्रत्यरोशौ वधभेजस्तथैव च ॥ आद्यंतपो च विज्ञेयो चंद्रक्रांतग्रहाधिपः ॥२६॥ दशाक्षिन्नेषु कालेषु मारको मरणप्रदः ॥ दुष्टतारापतेः पाके निर्याणं कथितं बुधैः ॥२७॥ चेदंगपो यदि गृहे ह्यरिरेव हीनं पूर्णं सुहृद्वतिसमः सममायुरग्रहः ॥ वा लग्नो हितसमारि-
पदेऽपि पूर्णं मध्यं च हीनमिहजातकतत्त्वविज्ञाः ॥२८॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि मारकाख्यं ग्रहं द्विज ॥ तस्मात्फलप्रभेदेन कथयामि तवाग्रतः ॥२९॥ स्वात्मकारकलग्नान्च चिंतयेद्द्विजसतम ॥ भ्रातृपृष्ठाष्टमं रिष्कं धनं क्षूनांतरोऽपि ॥३०॥ सर्वेषां बलवान्छेदो मारको ग्रह उच्यते ॥ सर्वबलसमानत्वे मारकः संतको ग्रहः ॥३१॥ पृष्ठाधिपस्तु प्रायेण बहुधा मारकः स्मृतः ॥ तेषां मध्येऽधिकारी च पृष्ठेशो मुख्यमारकः ॥३२॥ मारकग्रहाश्रितो राशिमारकस्वामिनोऽप्यथा ॥ तान्यां महादशाकाले विंशोत्तर्याः स्थिरादिकः ॥३३॥ पापे मृत्युर्विजानीयाद्विंशोत्तर्यां द्विजोत्तम ॥ मारका बहवः खेदा यदि वीर्यसमन्विताः ॥३४॥ तत्तद्दशांतरे विप्रयोगकृष्ठादिसंभवः ॥ पृष्ठाधिपदशायां च निधनं भवति ध्रुवम् ॥३५॥ क्षूनातिरिक्तभेदेन बहुखेदास्तु मारकाः ॥ दुर्बलाश्रयराशिशेदशा स्वल्पार्तिदा भवेत् ॥३६॥ प्रबलस्य दशायां च महारोगार्तिमृच्छुषत् ॥ भयशोकमृताक्षूरीतिस्तत्स्वराग्निभयं भवेत् ॥३७॥ मारकस्य दशायां च महत्या निघनाश्रयो ॥ भूतामंतर्दशामाह तवाग्रे कथयामि भोः ॥३८॥ मारकग्रहाश्रयोभूतमहापाके विंचितयेत् ॥ कारकान्च विलग्नान् सप्तमाद्वा द्वितीयकम् ॥३९॥ पृष्ठाष्टरि-
फनायानामपहराष्टके मृतिः ॥ तेषामंतर्दशाधीशास्तेषां मध्ये बलादचकः ॥४०॥

इन मारकेज की दशा का अन्त तक विचार करके मारक की अन्तर्दशा में मरण कहना चाहिए। पष्टभाव के द्रेष्माण का स्वामी तथा अष्टमेश, और 'विपद्' नामक तारा और 'प्रत्यरि' तारा के स्वामी एवं 'वध' तारा का स्वामी ये आदि मारक और अन्तिम मारक हैं। और चन्द्रयुक्तग्रह राशिपति ये इतने मारक जानना ॥ मारकदशा से प्राप्त समय में मारकग्रह मृत्यु देनेवाला है॥ विपद् प्रत्यरि, वध इन तारापति के अन्तर में भी मरण सम्भव है॥ अङ्गप अर्थात् गणेश यदि लग्न में शत्रु के घर में हो तो हीनायु, मित्र के घर में हो तो दीर्घायु तथा सम के घर में हो तो मध्यायु होती है॥२८॥ यदि लग्न का स्वामी शत्रु के घर में हो तो हीन

आयु, मित्र के घर में हो तो पूर्ण आयु, सम के घर में हो तो मध्य आयु जानना॥

हे मैत्रेय! अब हम 'मारक ग्रह' कहते हैं और उस मारक ग्रह के फल के भेद भी तुम्हारे सामने कहते हैं। द्वितीयेश और आत्मकारक और लग्न में विचार करना चाहिए। तीसरे, छठे, आठवें, बारहवें, दूसरे और सातवें घर से भी मारक का विचार करना चाहिए। इन सब स्थानों के स्वामी ग्रहों में जो सबसे बलवान् हो वह 'मारक' ग्रह होता है। सब का बल समान हो तो पहले कहा हुआ मारक ही मारक होता है। पण्डेश प्रायः अधिकतर मारक होता है॥ पहले वह हुए भावों में बलवान् हो तो पण्डेश मुख्य मारक है। मारक ग्रह स्थित राशि या मारक ग्रह की राशि इन दोनों राशि की दशा में मरण वहना॥ या विशोत्तरी दशा के अनुसार मारक की दशा में मरण वहना॥ इस प्रकार पापी ग्रह की दशा में निशन्देह मृत्यु जानना॥ हे मैत्रेय! बहुत से मारक यदि बनवान् हो तो उन २ की दशा अथवा अन्तर में रोग कष्ट आदि होना समभव है। किन्तु पण्डेश की दशा में निश्चय मरण होता है। इस प्रकार न्यूनाधिक भेद से अनेक ग्रह मारक हैं। बलहीन ग्रह स्थित राशि के स्वामी की दशा साधारण कष्ट देनेवाली होती है। बलवान् ग्रह की दशा में महान् रोग दुःख या मृत्यु के समान कष्ट चिन्ता, भय, चोरी, अग्नि आदि से भय होता है॥३७॥ हे मैत्रेय! मारक ग्रह की महादशा में बलवती होने में अष्टमभाव स्थित ग्रह की अन्तर्दशा में मृत्यु होती है यह (महादेवजी) ने कहा है, (यह गोप्य तत्त्व) तुम्हारे सामने कहते हैं॥३८॥ मारक ग्रह की आधयोभूत जो राशि है (अर्थात् जिस भाव में मारक ग्रह स्थित है वही राशि उसकी आधयो भूत है) उनकी महादशा में जिस अन्तर्दशा में मृत्यु होगी यह विचार करो। (यही बात अब आगे कहते हैं) उनकी आत्मकारक से लग्न में और लग्न में जो द्वितीयभाव है (उन राशि की अन्तर्दशा में या तदीश की अन्तर्दशा में मृत्यु होती है)॥३९॥ पाठ अष्टम द्वादश भावों में अपहरण-मारण में बलवान् अष्टम भावराशि की अन्तर्दशा या भावों की अन्तर्दशा में निधन होता है। उन (अर्थात् कथित भावों के स्वामी ही उन अन्तर्दशा के स्वामी हैं कि-जिन अन्तर्दशा में निधन हो) अन्तर्दशा के स्वामी (जो अभी बतें गये हैं) हैं इनमें जो ग्रह बल में अधिक बलवान् है॥४०॥

तदीयातर्दशावाले निधन भवति ध्रुवम् ॥ अपरा पापकाले तु रोगदुःखार्तिवादिन ॥४१॥
बलिगुणस्य च शनैर्ग्राह्य पण्डाष्टमादिकम् ॥ द्वितीयदूतनाथेन ज्ञेय चैवोत्तरीयम् ॥४२॥
तत्प्रसप्तमयोर्मध्ये बलवास्तद्विधीयते ॥ पण्डाष्टमेशो द्वौ मुख्यौ व्यपेक्षमुपसत्तपम् ॥४३॥
द्राम्या मध्ये ह्यभिप्राय अष्टमेशो हि मारक ॥ पण्डस्थे पापबाहुल्ये पण्डेशो मुख्यमारक ॥४४॥
मध्यायुषि समाधौ चितयेद्द्विजसत्तम ॥ पण्डेशायपराशोऽदशाया निधन भवेत् ॥४५॥
पण्डाष्टपण्डेशादिषु त्रिकोणेषु चितयेत् ॥ दीर्घायुषो हि योगेन चितनीय द्विजोत्तम ॥४६॥
पण्डस्थे वा तदीशस्य त्रिकोणे सस्थितो ग्रह ॥ तस्याधितस्वामिराशेर्दशाया निधन भवेत् ॥४७॥
पण्डे बलवति विप्र तत्रिकोणे विचितयेत् ॥ तदीशे वा त्रिकोणेषु प्रायेणापि मृति वदेत् ॥४८॥
राहु रागिस्तमोवेशादुत्तमान्मारक स्मृत ॥ तत्पराग्रह्य मध्ये नाधयोभूत-मस्ति चेत् ॥४९॥
म रागिमारको ज्ञेयो ग्रहरीत्या विचितयेत् ॥ तत्तदीशदिशाया तु तदीशायपराणि च ॥५०॥
दशाया निधन बाध्य पुरा शुभप्रणोदितम् ॥ अपरे तु चरण्यादि

पूर्ववत्तत्तामाप्य च ॥५१॥ यो राशि स तु बिजेयो मारकश्चेति समत ॥ तद्दशाया च निधन
निर्विजक द्विजोत्तम ॥५२॥ अत्राध्याये च सर्वेषु ये योगा गदिता मया ॥ तेषा सर्व समालोच्य
जातस्य च मृति वदेत् ॥५३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे मारकभेदवचन नाम ऊनविंशोऽध्याय ॥१९॥

उसकी अन्तर्दशा में निश्चय मृत्यु होती है। हे मैत्रेय! दूसरी जो पापी ग्रहों की अन्तर्दशाएँ
हैं वे रोग, दुःख, कष्ट देनेवाली हैं ॥४१॥ बलवान् शुक्र और शनि के (मारकत्व में हेतु) पष्ठ,
अष्टम आदि भाव—(स्थितित्व या तदीशत्व ही मारकत्व में हेतु) ग्रहण करना। और (ये शुक्र
तथा शनि) द्वितीये तथा सप्तमेश होने से उत्तरोत्तर प्रबल मारक होते हैं ॥४२॥ लग्न और
सप्तमभाव में जो बलवान् हो उससे (मारक का) विधान करना चाहिए। पण्डेश तथा
अष्टमेश भी मुख्य मारक हैं, और व्ययेश उपलक्ष्य (६-८ के स्वामी की प्राप्ति के अभाव में
मारक है) है ॥४३॥ पण्डेश और अष्टमेश इन दोनों में अष्टमेश मारक है इसमें अभिप्राय यह
है कि पण्डभाव में पापग्रह अधिक हो तो पण्डेश ही मुख्य मारक है ॥४४॥ मध्यायु योग हो तो
हे द्विजोत्तम! पण्डभावस्थित राशि के स्वामी की दशा में निधन होता है ॥४५॥ (अर्थात्
मारकेश दशा दूर हो तो पण्डाथयराशीश दशा में मृत्यु कहना) पण्डभाव या पण्डभाव स
त्रिकोण भाव में स्थित ग्रह भी मारक होता है (यदि दीर्घायु योग हो तो) ॥४६॥ पण्डभाव
या पण्डेश से त्रिकोण स्थान में जो ग्रह है। उसकी आश्रित राशि के स्वामी की दशा में निश्चय
मृत्यु होती है ॥४७॥ हे विप्र! पण्डभाव में बलवान् (रक्षक) ग्रह हो तो उससे त्रिकोण
भावस्थ की दशा मारक जानना। अथवा त्रिकोणेश की दशा ही मारक बतलाना करना ॥४८॥
राहु ग्रहाश्रित राशि (यद्यपि राहु पिण्डरूप ग्रह नहीं है तथापि) अधकाराच्छत्र होने में
बलवान् मारक है। लग्न और अष्टम इनमें यदि यह न हो तो (अर्थात् आश्रय = आधार =
स्थान) और आश्रयी तदाधारस्थित ग्रह) वह राशि ही (चरपर्या दशा में) मारक होती है,
ऐसा ग्रह मारक की रीति से विचार करे। इस प्रकार वह २ पाप राशि की दशा तथा उस
राशि के स्वामी की आश्रित राशि की दशा ॥५०॥ इन दशाओं में मृत्यु कहना, यह भगवान्
महादेवजी का वचन है। और जो चरे चराम्बिरद्विद्वा इत्यादि से आयु का विचार किया गया
है ॥५१॥ उसमें जो राशि पूर्वनिर्देशानुसार मारक बही गई है उसकी दशा में निःसन्देह
मारक कहना ॥५२॥ इस अध्याय में हमने जो मारक योग कहे हैं। उन सबके लक्षण का
विचार करके जातक की मृत्यु का निर्णय करना चाहिए ॥५३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे मारकभेदवचन नाम ऊनविंशोऽध्याय ॥१९॥

अथायुर्दायाध्यायप्रारम्भ.

मैत्रेय उवाच—कर्मवेत्ता महाभाग आयुर्दागहने गति ॥ निर्विजक ममाग्रे च वयस्यस्य
कृपानिधे ॥१॥

परमेश उवाच—अधुना सप्रवक्ष्यामि आयुर्दाया गतिं तव ॥ यस्या विज्ञानमाग्रेण वातर्तो

मवित ध्रुवम् ॥२॥ लग्नेशाष्टमनायाभ्यामायुर्दायि विचित्रयेत् ॥ दोषमध्यात्ययोगत्वं
 यथावद्गदतो मम ॥३॥ चरेऽचरे स्थिते द्वौ च लग्नरक्षाधिपौ यदि ॥ पूर्णायुर्योगो विज्ञेयो
 निर्विशक द्विजोत्तम ॥४॥ स्थिरर्क्षे लग्ननायो हि लग्नेशे द्वद्वभे स्थिते ॥ तदायुः पूर्णयोगश्च स
 मवेद्गणिताश्रयी ॥५॥ तन्वधौशे स्थिते द्वे स्थिरे स्थिते लयाधिपे ॥ पूर्णायुर्योगो विज्ञेयो
 निर्विशक द्विजोत्तम ॥६॥ अथात सप्रबध्नामि मध्यायुर्योगमुत्तमम् ॥ चरे लग्नाधिपे विप्र
 स्थिरे रक्षपतिर्यदि ॥७॥ तदा मध्यायुष विद्याद् द्वौ द्वे मध्यमायुष ॥ अधुनात्यायुर्गोचराच्च
 भवाग्रे कथयाम्यहम् ॥८॥ अगाधीशश्चरे यस्य द्वद्वभे रक्षनायके ॥ तस्यात्यायुर्महाप्राज्ञ
 निर्विशक द्विजोत्तम ॥९॥ स्थिरेऽस्थिरे स्थिते द्वौ च लग्नरक्षाधिपौ द्विज ॥ स्वत्यायुस्तत्र विज्ञेय
 सृष्टिकर्ता प्रणोदितम् ॥१०॥ पूर्ववत्तनुचद्राभ्यामायुर्योग विचित्रयेत् ॥ जन्मेन्द्रीवास्थिते
 सूनेवान्यस्थे मदचन्द्रयो ॥११॥ त्रिधा योग सम प्रोक्तश्चितयेद्गणितप्रणी ॥ एकरूपास्त्रयो
 योगा आयुषि सुविचित्रयेत् ॥१२॥ एकरूपत्वयोगौ द्वौ तृतीयो भिन्नरूपक ॥ द्वयोर्योगेन
 सप्राह्य न प्राह्य चैक रूपत ॥१३॥

आयुर्दायाध्याय

मैत्रेय बोलें—हे कृपासागर महाभाग! आप कर्मविता हैं, अब मुझको आयुर्दायि का गहन
 विचार शकारहित रूप से कहिये॥१॥ श्रीपाराशरजी ने कहा—अब हम तुमको आयु के विषय
 का विज्ञान कहते हैं, जिसके ज्ञान से मनुष्य काल की गति का ज्ञाता होता है॥२॥ लग्नेश और
 अष्टमेश से प्रथम दीर्घ, मध्य, अल्प रूप से आयु का योग जानना चाहिए॥ लग्नेश और
 अष्टमेश दोनों चरराशि में हो तो निश्चितरूप से पूर्णायु जानना॥ लग्नेश स्थिर में हो और
 अष्टमेश द्विस्वभाव में हो तो गणितज्ञ को पूर्णायु योग जानना चाहिए॥ लग्नेश द्विस्वभाव
 राशि में हो और अष्टमेश स्थिर राशि में हो तो दीर्घायु योग जानना॥ अब हम मध्यायु योग
 कहते हैं। चरराशि में लग्नेश हो और स्थिर में अष्टमेश हो तो मध्यायु होती है। लग्नेश,
 अष्टमेश दोनों द्विस्वभाव में हो तो मध्यमायु होती है। अब अत्यायु योग कहते हैं। लग्नेश
 चरराशि में, अष्टमेश द्विस्वभाव में हो तो अत्यायु होती है॥९॥ दोनों ही स्थिर राशि में हो
 तो अत्यायु होती है, यह ब्रह्मा का कथन है॥१०॥ इसी प्रकार लग्न और चन्द्रमा से भी
 आयुयोग का विचार करना चाहिए॥ लग्न और सप्तम में चन्द्रमा हो तो लग्न, चन्द्र से अन्यथा
 शनि, चन्द्र से आयु का विचार करना चाहिए॥११॥ यह तीन प्रकार (दीर्घ, मध्य, अल्परूप
 से) उपर्युक्त (लग्नेश, अष्टमेश और लग्न, चन्द्र या शनि चन्द्र से) आयु के विषय में गणितज्ञ
 को विचार करना चाहिए॥ दो प्रकार से एकरूप आयु हो और तीसरे प्रकार से भिन्नरूप से
 हो तो दो प्रकार से प्राप्त आयु का ग्रहण करे और भिन्न प्रकार से प्राप्त आयु का परित्याग
 करे॥१३॥

योगत्रय त्रय रूप भिन्न भिन्न मवेद्द्विज ॥ होरालग्नवितप्रभ्या प्राप्तायुर्योगनिश्चितम् ॥१४॥
 लग्नेशादष्टमेशाच्च योगैक कथितो द्विज ॥ होरालग्नम्या द्वितीय योगमेव विचिन्तयेत् ॥१५॥
 तृतीय गनिचद्राभ्या चितनोय सदा द्विज ॥ लग्नेन्दुमदने यत्पि चिन्तयेत्सन्नचद्रत ॥१६॥
 यत्रोद्धारमह वक्ष्ये शृणुत्व तद्विजोत्तम। चतुरेखा तिसैर्तिर्यक् चतुर्लब्ध तिसैत्युत ॥१७॥ नव कोष्ठे
 त्रयो योगा दीर्घमध्यात्ममायुषि ॥ आश्रये चर लेख्य तदधस्थे शमेन च ॥१८॥ चर स्थिर द्वि

स्वभावं संलिखेद्विजसत्तम ॥ मध्ये स्थिरत्रयं कोष्ठे तदधो द्विस्वभावतः ॥१९॥ द्वंद्वं चरं स्थिरं लेख्यं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥ अंतत्रये द्विःस्वभावं तदधः स्थिरमादिशेत् ॥२०॥ स्थिरं द्वंद्वं चरं विप्र क्रमेण संलिखेत्सुधीः ॥ तिर्यक्कोष्ठानुसारेण दीर्घमध्याल्पमायुषि ॥२१॥ एवं पंक्तित्रये विप्र आदौ पंक्तित्रयेण च ॥ धराधः स्थिरपंक्तिश्च स्थिरपंक्तिरथोभयम् ॥२२॥ चतुरश्रं लिखेद्यं नवकोष्ठान्तरे द्विज ॥ प्रथमांकेन संलेख्यमूर्ध्वकोष्ठत्रयात्मके ॥२३॥ तिर्यक्पंक्तौ च द्वित्रीणी तिर्यक्पंक्तित्रयेष्वपि ॥ तदधोप्यूर्ध्वपंक्तौ च लिखेदेक त्रयं द्वयम् ॥२४॥ मध्यपंक्त्यूर्ध्वं संलेख्यं द्वय चेकं त्रयं पुनः ॥ अंतपंक्त्यूर्ध्वके लेख्यं त्रयं द्वैकं द्विजोत्तम ॥२५॥ एवं क्रमेण वै विप्र प्रतिकोष्ठत्रिपंक्तिषु ॥ दीर्घमध्याल्पआयुष्याद्विज्ञेयानि भवन्ति हि ॥२६॥ अधरोत्तरक्रमेणैव वामभागप्रिकोष्ठके ॥ वीर्घायुश्च विजानीयात्त्रिविंशकं द्विजोत्तम ॥२७॥ मध्यकोष्ठत्रयंमध्यं दक्षिणकोष्ठत्रयेत्येकम् ॥ सप्तविंशतिका भेदा भाषिता द्विजसप्तम ॥२८॥ लग्नाष्टमेशयोर्विप्र दीर्घादौ च त्रयं त्रयम् ॥ नवकोष्ठं विजानीयादायुः साधनहेतवे ॥२९॥ तदैव सबिजानीयात्को ष्ठांकलघ्नचंद्रयोः ॥ नव कोष्ठा महाप्राज्ञ विज्ञेया लग्नहोरायोः ॥३०॥ एवं चरादिराशीनां भेदेनापि पृथक्पृथक् ॥ नानाभेदादिसंयुक्ते तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥३१॥

यदि तीनो प्रकार से प्राप्त हुई आयु का भिन्न २ रूप हो तो होरा और लग्न से प्राप्त आयु का ग्रहण करे। १४॥ लग्नेश, अष्टमेश से प्रथम आयु देखे। यह प्रथम योग है। होरा तथा लग्न से देखना द्वितीय योग है। १५॥ शनि और चन्द्र से देखना तृतीय योग है। चन्द्रमा लग्न सप्तम में होतो लग्न चन्द्रमासे देखना भी तृतीय योग है ॥ अब हम इसका चक्र (गरलता से समझने के लिए) कहते हैं। चार तिरछी रेखा और चार खड़ी रेखा (आपस में मिलाकर) लिखे, तो ९ कोष्ठ (३-३ कोष्ठके के) होते हैं। पहिले तीनो में चर नाम लिखे और उसके नीचे क्रमशः चर, स्थिर, द्विस्वभाव लिखे। मध्य के तीन कोष्ठकी में प्रथम सबसे स्थिर नाम लिखे और उसके नीचे द्विस्वभाव, चर, स्थिर लिखे। अन्त्य के तीन कोष्ठकी में प्रथम द्विस्वभाव लिखे, पश्चात् उसके नीचे स्थिर, द्विस्वभाव और चर लिखे इस प्रकार लिखकर तिरछे क्रम से प्रथम पंक्ति में दीर्घ, मध्य, अल्प आयु लिखे। हे विप्र! तीनो पंक्तियोंमें क्रमसे लिखना। मध्य पंक्ति में स्थिर पंक्ति तीनो हैं। (और नीचे की तीनो कोष्ठकी की पंक्ति द्विस्वभाव की है) इस प्रकार से लिखे हुए चक्र में नी कोष्ठो में ऊपर के कोठो में प्रथम १-१ अंक लिखकर पश्चात् तिरछी पंक्ति में १-२-३ अंक लिखे। और खड़ी पंक्ति में १-३-२ के अंक लिखे उसके नीचे मध्यपंक्ति में २-१-३ लिखे (खड़ी पंक्ति में) और तिरछी पंक्ति में ३-१-२ लिखे। नीचे की पंक्ति में ऊपर ३-३-३ लिखे और नीचे २-३-१ लिखे। इस प्रकार प्रति कोष्ठत्रिक में अब निवेश करना। प्रथम पंक्ति में (ऊपर की पंक्ति में दीर्घ, मध्य, अल्प आयु होगी। ऊपर नीचे के बाईं तरफ के तीनो कोष्ठो में 'दीर्घायु' नाम होगा और इसी तरह मध्य के कोठो में 'मध्यायु' और अन्त्य कोष्ठो में 'अल्पायु' शब्द होंगे। इस प्रकार ९X३=२७ भेद बने। लग्नेश और अष्टमेश के विचार में दीर्घ आदि ९ भेदों में आयु का साधन करें। और आयु भी इसी तरह नी कोष्ठो में लग्न, चन्द्र से तथा लग्न होरा से आयु निर्णय करें। इस प्रकार चरादि राशियों के अलग अलग भेद से नाना प्रकार के आयु के भेद होते हैं। गो स्पष्टरूप में अब तुम्हारे सामने कहते हैं। १४-३१॥

| अथ दीर्घाद्यनेकमेदानामायुश्चक्रम् | | |
|---|---|---|
| दीर्घायु चर १ तप्रेण चर १ अष्टमेश | माध्यायु चर १ तप्रेण स्विर २ अष्टमेश | अत्यायु चर १ तप्रेण द्वि-स्वभाव ३ अष्टमेश |
| दीर्घायु स्विर २ तप्रेण द्वि-स्वभाव ३ अष्टमेश | माध्यायु स्विर २ तप्रेण चर १ अष्टमेश | अत्यायु स्विर २ तप्रेण स्विर २ अष्टमेश |
| दीर्घायु द्वि-स्वभाव ३ तप्रेण स्विर २ अष्टमेश | माध्यायु द्वि-स्वभाव ३ तप्रेण द्वि-स्वभाव ३ अष्टमेश | अत्यायु द्वि-स्वभाव ३ तप्रेण चर १ अष्टमेश |

| स्पष्टायु चक्र | | | |
|----------------|-----------------|-----------------|--------------|
| दीर्घायु | त्रियोगे १२० | द्वियोगे १०८ | एकयोगे ९६ |
| माध्यायु | त्रियोगे ८० | द्वियोगे ७२ | एकयोगे ६४ |
| अत्यायु | त्रियोगे ४० | द्वियोगे ३६ | एकयोगे ३२ |
| सण्ड | ४० | ३६ | ३२ |

कदाचित्कश्चिद्भवति इत्युक्तं द्वितस्तम ॥ तत्राष्टमेशयोरेकं त्वपरं तत्रचंद्रयो ॥३२॥
 ब्रह्मप्रहोरोरन्यदितिपक्षय द्विज ॥ तदेभिः प्रेत्य सवादादित्यादियोगसक्तयाम् ॥३३॥
 दीर्घमाध्यायुभेदेषु चरेत्यादि निरूप्यते ॥ द्वात्रिंशच्च चतुः षष्टिः पण्यवति स्वरूपके ॥३४॥
 षट्त्रिंशद्वा द्विस्फाब्दे अष्टोत्तरशताब्देके ॥ चत्वारिंशत्तमाशोतेर्विंशोत्तरशतात्मके ॥३५॥
 योगान्तरप्रहमायुष्य वा शेषेषु समानतः ॥ समागत्येषु आयुर्दास्पष्टीकरणतत्कथाम् ॥३६॥
 पूर्णमादौ हानिरतेऽनुपाते मध्यमो भवेत् ॥ राशिद्वयस्य योगार्द्धं वर्षाणां स्पष्टमुच्यते ॥३७॥
 एकं द्विकालं सवित्यं त्रयाणां योगविन्मते ॥ यत्रास्यायुर्व्यभिर्नाति योगजातेन यत्कृतम् ॥३८॥

तत्रापुर्दीर्घसलब्धा सिद्धिर्मध्यावधिर्भवेत् ॥ निर्विशक महाप्राज्ञ स्फुटीपातानुपाततः ॥३९॥
 सलब्धमनुपातेन मध्यमध्येऽपि योजयेत् ॥ दीर्घायुषा विजानीयात्संस्फुटी
 चपलात्मका ॥४०॥

कभी कोई आयु और कभी कोई आयु होती है, यह हम कह चुके हैं। (उनमें निर्णय करने के लिए) लघुश और अष्टमेश से (१) तथा लग्न और चन्द्रमा से (२) ॥ लग्न और हौरा से (३) आयु निर्णय करें। इस प्रकार तीन पक्ष हैं। इन तीन पक्षों में से अधिक पक्ष से जो आयु प्राप्त हो सो ग्रहण करना यह हम कह चुके हैं। दीर्घ, मध्य, अल्प आयु के विषय में विचार दशा तथा वर्ष परिमाण का है वह अब कहते हैं। वर्षसंख्या के परिमाण भी तीन प्रकार के हैं, उनमें प्रथम ३२ वर्ष, ६४ वर्ष और ९६ वर्ष क्रमशः अल्प, मध्य, दीर्घ के वर्ष परिमाण हैं। और दूसरा परिमाण ३६, ७२, १०८ वर्ष का है। तीसरा परिमाण ४०, ८०, १२० वर्ष का है। अन्य योगों से प्राप्त आयु प्रायः इनके समान हैं। योग से आयु का दीर्घ, मध्य आदि निर्णय होने पर ठीक स्पष्ट करने का विचार होता है। पहले नियम से पूर्ण आयु प्राप्त हो और तीसरे से अल्पायु प्राप्त हो तो अनुपात से मध्यायु होती है। आई हुई २ आयु के वर्ष जोड़कर उनका आधा करने से स्पष्ट वर्ष संख्या होती है। इस प्रकार इन तीन आयु के निर्णय में जो प्रधानतः दो आयु प्राप्त हो उनको जोड़ कर आधा करने से स्पष्ट होती है। पूर्वोक्त नियमों से जो आयु निर्णीत हुई और योग समूह से जो स्पष्ट हुई उसमें यदि दीर्घायु है तो उसका आरम्भ मध्यायु की अवधि से होता है। और इसके बीच में अनुपात से स्पष्ट करना चाहिए ॥३९॥ अनुपातसे प्राप्त हुई वर्ष संख्या मध्यायु के भी मध्यमें जानना। और दीर्घायु की अवधि पर्यन्त जो स्पष्ट प्राप्ता हो सो गणित से पल पर्यन्त आयु जानी जा सकती है ॥३२-४०॥

मध्यमायुर्लभेतत्र अल्पायु सिद्धिसंभवम् ॥ पूर्ववदनुपातेन यत्र युद्धमध्यमायुषि ॥४१॥
 कदाचित्सर्वयोगेन अल्पायु सममागते ॥ यत्र भावानुपातस्य तत्रैक खड्ग सिद्धयति ॥४२॥
 खड्गप्रयोगेण आयुर्दा कथिता मया ॥ द्वात्रिंशत्पञ्चशतशब्दा चत्वारिंशत्तमे द्विज ॥४३॥ किं
 ग्राह्यं कियतो ग्राह्यं कदाचिद्ग्राह्यमाणकं ॥ इति सशयनिवृत्त्यर्थं कथयामि पृथक् पृथक्
 ॥४४॥ तत्रेशाष्टमनायास्या तदायुर्योगसंभवः ॥ चत्वारिंशत्तमकं खण्डं मग्राह्यं द्विजसत्तम
 ॥४५॥ योगत्रयेण चागत्य अल्पायुर्द्विजसत्तम ॥ द्वात्रिंशत्तमकखण्डं च सजेय ब्रह्मणोदितम्
 ॥४६॥ कदाचिदनुपातेन युक्ते सिद्धिः प्रजायते ॥ दत्ताब्देन तु सदेहो रुद्रशूल विचिंतयेत्
 ॥४७॥ अपुना सप्रवक्ष्यामि ह्यनुपातविधिं द्विज ॥ पृथक् स्पष्टं च तस्याप्य
 विलप्रेषाष्टमेशयोः ॥४८॥ गतराशोऽस्त्यजेद्विप्रं विद्यमानेन सगुणैत् ॥ त्रैराशिकं कलडस्य
 यदाप्तं वर्षमादिशेत् ॥४९॥ तत्रेशस्याष्टमेशस्य आपुरागतयोर्द्विज ॥ वर्षादिपञ्चयोगं तदर्थं
 स्पष्टकारितम् ॥५०॥ दीर्घमायुर्लभेद्विप्रं द्विजसत्तमं योजयेत् ॥ तदा चाशीतिमे योग्यं
 दीर्घसंज्ञा स्फुटा भवेत् ॥५१॥ मध्यमायुषि यत्रैव पट्त्रिंशत्तमभेदयोः ॥ अनुपातेन चागत्य
 युक्तेऽन्ते मध्यमायुषि ॥५२॥ त्रैराशिकमहं वक्ष्ये तवापि द्विजसत्तम ॥ प्रमाणमिच्छातुं च
 तस्याप्यमाद्यतयोर्द्वयोः ॥५३॥ मध्ये फलेन्यजाती च सगुणेदिच्छया द्विज ॥ प्रमाणासस्फुटपत
 तस्याप्यमनुपातकम् ॥५४॥

॥६४॥ आयुर्दायसमापन्ने कक्षात्रयमिहोच्यते ॥ दीर्घमध्यात्यल्प चेत्तत्प्रमाणं ब्रह्महृन् ॥
 ॥६५॥ षट्त्रिंशोऽब्देन वर्षे का तस्या हानिं प्रजायते ॥ मध्यमायुर्भवेत्तत्र निर्विशक द्विजोत्तम ॥
 ॥६६॥ मध्यमायुः समागत्य स्वल्पायुर्जायते ध्रुवम् ॥ योगेल्पायुः समायात शनिर्योगं
 करोत्यपि ॥६७॥ षट्त्रिंशाब्दश्च रूपेण कक्षाह्रासो भवेद्द्विज ॥ अत्यल्पायुर्विजान्तीयद्राल्ये च
 निधनं भवेत् ॥६८॥ अयं योगत्रये विप्रः शनिर्योगं करोति च ॥ एकैकादशाह्रास
 कक्षाह्रासस्तथ्य क्रमात् ॥६९॥ ततः फलविशेषार्थं गुणदोषौ वदाम्यहम् ॥ गुणैः प्रपूरित
 सौरि कक्षावृद्धिं करोति च ॥७०॥ दोषयुक्ता भवेद्धानिस्तान्मया निर्णय उच्यते ॥
 स्वर्स्तुगादिगुणिभिर्मुक्तो मार्तण्डवशज ॥७१॥ कक्षावृद्धिकरो विप्रः विभागेनायुवृद्धिकृत् ॥
 अत्यल्पायुर्भवेदल्पमल्पान्मध्यं प्रजायते ॥७२॥ मध्यमान्जायते दीर्घं कक्षावृद्धेश्च लक्षणम् ॥
 एव नोचारिणः सौरि पापदृष्टिसमन्वित ॥७३॥ कक्षाह्रासकृते विप्रः विभागेनायुहानिकृत् ॥
 वृद्धाद्भवति मध्यायुर्मध्यादल्पायुरेव च ॥७४॥ अल्पादत्यल्पकं याति बाल्ये निधनसम्भव ॥
 लघ्वेशे वापि होरेशे केवले शनिसंयुते ॥७५॥

अनुपात दीर्घायु और मध्यायु में नियुक्त करना चाहिए। जबकि अल्पायु प्राप्त हो तो अनुपात व्यर्थ है। इस प्रकार में जन्म से लेकर आयु का विचार करना चाहिए। इसी प्रकार लग्न होरा से और लग्न चन्द्रमा से विचार करना चाहिए। तीन प्रकार से आई हुई आयु के खण्डों को जोड़कर ३ का भाग देने से स्पष्ट आयु जानना। होरा लग्न से आई हुई खण्ड सख्या आदि की हो और अन्य प्रकार से आई हुई खण्ड सख्या अन्तिम हो तो इसी प्रकार स्पष्टीकरण होगा। ऐसे ही दीर्घायु मध्यायु तथा अल्पायु में स्पष्टीकरण करना चाहिए। होरा और लग्न का स्पष्ट राशि अथ कक्षा विकला पर्यन्त स्पष्ट करके पहले कही हुई रीति के अनुसार त्रैराशिक के गणित के वर्षादि आयु स्पष्ट करना चाहिए। आई हुई आयु के अन्तिम खण्ड पर्यन्त इन वर्षों की सख्या हो सकती है। और इस प्रकार आयु का निर्णय होता है। होरा लग्न प्रायः २॥ घटी का होता है। उसका सूर्य राशि से स्पष्ट करके और पूर्व रीति के अनुसार आयु निकालना होरा-लग्न का स्पष्ट करना हम पूर्व के अध्याया में कह चुके हैं। अब हम तुमको आयु सिद्ध करने के लिये आयु में कक्षा ह्रास और वृद्धि जो कि शनि के योग से होती है वह कहते हैं। (अर्थात् शनि के योग से आयु में वर्षों की कमी व अधिकता होना कहा जाता है।) लघ्वेश अथवा होरेश शनि युक्त हो तो कक्षा ह्रास (आयु में कमी) होती है। किन्तु जहां शनि निर्बल हो वहां कक्षा ह्रास कहना चाहिए। दीर्घ मध्य व अल्प आयु का जो प्रमाण आया है उसमें विचार करना चाहिए। जहां मध्यायु आई है वहां यदि कक्षा ह्रास हो तो ३६ वर्ष की अल्पायु जानना। इस प्रकार मध्यायु कक्षा ह्रास से स्वल्पायु हो जाती है। योग से यदि अल्पायु आई है और शनि योग करता है तो ३६ वर्ष की अल्पायु में कक्षा ह्रास होकर अत्यल्प आयु जानना और बाल्यावस्था में ही निधन कहना। मैत्रेय! यदि तीनों योगों में शनि, योग करता हो तो प्रत्येक दशा में कक्षा का ह्रास करता है। इसलिये अब विशेष फल जानने के लिये आयु विचार के लिए शनि के गुण और दोष दोनों बताते हैं। गुणों से युक्त शनिश्चर कक्षा में वृद्धि करता है। दोष युक्त शनि कक्षा में हानि करता है। इस हानि वृद्धि का निर्णय कहते हैं। शनि अपनी राशि या उच्च का हो तो कक्षा वृद्धि करता है। अर्थात् अल्पायु से मध्यायु मध्यायु से दीर्घायु करता है। शनि दोषयुक्त हो तो

कक्षाह्रास करता है। (अर्थात् दीर्घायु से मध्यायु और मध्यायु से अल्पायु) कक्षा वृद्धि में अत्यल्पायु से अल्पायु तथा अल्पायु से मध्यायु तथा मध्यायु से दीर्घायु होना कक्षा वृद्धि का लक्षण है॥ इसी प्रकार नीच राशि का या शत्रु राशि का शनि पापग्रह की दृष्टियुक्त हो तो कक्षा ह्रासकारी है और आयु का तीसरा भाग कम करता है। अर्थात् दीर्घायु से मध्यायु और मध्यायु से अल्पायु तथा अल्पायु से अत्यल्पायु कारक है बाल्यावस्था में मृत्युकारक होता है॥ अष्टमेश अथवा होरेश यदि केवल शनियुक्त हो॥५५-७५॥

पापक्षे पापयुक्ते वा पापदृष्टिसमन्विते ॥ कक्षाह्रास न कुर्वीत बिना नीचारिणे द्विज ॥७६॥
एव तुगादिरहितः कक्षावृद्धि न कारयेत् ॥ शुभक्षे शुभसयुक्ते शुभदृष्टौ च तुग्रे ॥७७॥
पापयोगेन रहिते कक्षावृद्धिकर शनिः ॥ एव नीचादिदोषेण कक्षाह्रासः प्रजायते ॥७८॥
साधारण्ये स्थिते युक्ते कष्ट चातितरा भवेत् ॥ अयुना सप्रबध्यामि कक्षावृद्धिद्वितीयकम् ॥७९॥
गुरुणा स्थानसंबन्धे भविष्यति द्विजोत्तम ॥ सप्ते वा सप्तमे वापि तुगादिगुणसयुते ॥८०॥ शुभक्षे
शुभसयुक्ते कक्षावृद्धिकरे गुरौ ॥ जीवने सगयो यस्य अल्पायुर्वृद्धिकारकम् ॥८१॥ अल्पायुषि च
मध्यायुर्मध्यान्ते दीर्घमायुषि ॥ एव भेदानुभेदेन कथयामि तवाग्रतः ॥८२॥ अयायुर्बाधक विप्र
दर्शयामि तवाग्रतः ॥ दीर्घायुर्बाधे सप्राप्ते प्रकारसकलेष्वपि ॥८३॥

पापराशि में पापदृष्टि या पापयुक्त हो तो कक्षाह्रास नहीं करना। क्योंकि-शनि के नीचराशि या शत्रुराशि में होने पर ही कक्षा ह्रास होता है॥७६॥ इसी प्रकार शनि के उच्चराशि या मित्रश्रेणी के बिना कक्षावृद्धि भी नहीं करना॥ शनि यदि शुभराशि में सौम्ययुक्त तथा शुभदृष्टियुक्त अथवा उच्चराशि में हो और पापग्रह योग रहित हो तो कक्षा वृद्धिकारक है और नीचादि दोष से कक्षा ह्रास कारक होता है॥७८॥ साधारणरूप में शनियुक्त हो तो विशेष कष्टकारक होता है॥ अब हम कक्षावृद्धि का दूसरा योग बहते हैं॥७९॥ गुरु से स्थान सम्बन्ध होने पर जैसे लग्न में या सप्तमभाव में उच्च आदि गुणयुक्त शुभराशि में शुभ दृष्टियुक्त हो तो कक्षावृद्धिकारक होता है। अर्थात् अत्यल्पायु (जीवन में सशय) हो तो अल्पायु और अल्पायु से मध्यायु और मध्यायु में दीर्घायु होती है। इन योगों के भेद तथा अनुभेद तुमको बहते हैं॥८२॥ और आयु के बाधक योग भी बहते हैं। सब प्रकार में दीर्घायु योग प्राप्त होने पर॥८३॥

किं दशाया च निधनमिति कर्तुमपेक्षया ॥ निर्णय तस्य कुर्वीत तवापे कथयाम्यहम् ॥८४॥
यस्य दीर्घायुषः सख्या पर्यंत मध्यमायुषि ॥ निरपवादता ज्ञेया तदपे निधनमुच्यते ॥८५॥
मध्यायुषः समायोग सख्या पूर्वप्रकारतः ॥ निर्विशकाल्यपर्यंत तदपे मृतिचितनम् ॥८६॥
योगेऽल्पायुः समागत्य स्वयं सखे विवर्तयेत् ॥ किंस्विद्दशाया निधन भविष्यतिद्विजोत्तम ॥८७॥
दीर्घे त्रिसप्ततिवर्षे तदूर्ध्वं चितयेन्मृतिम् ॥ षट्त्रिंशदब्दादूर्ध्वं च चितयेन्मध्यमायुषि ॥८८॥
अयं स्पष्टः प्रवक्ष्यामि मन्त्रिने द्वारवाह्ययोः ॥ नवासे निधन तस्य त्रिगुलिभाषित पुरा ॥८९॥
द्वारद्वारेणयोर्विप्रं भालिन्य तत्रवर्षांशके ॥ जातस्य हि भवेन्मृत्युः सत्यमेव न स्यात् ॥९०॥
षाण्णयोगद्वये विप्रं चितनीयं प्रयत्नतः ॥ स्वयं पापं पापदृष्टे पापतेतसमन्विते ॥
तत्रवाग्दशाक्षाले निधनं च भवेद्द्यूवम् ॥९१॥

अब हम तुमको यह बताते हैं कि, जातक का मरण किस दशा में होगा इसका निर्णय करने के लिए कहते हैं॥८४॥ (प्रथम स्थूलरूप से कहते हैं) जिस जातक की दीर्घायु प्राप्त हुई है, उसके लिये मध्यायु तक तो बाधरहित जीवन है, उसके बाद ही मृत्यु कहना॥ पूर्वोक्त प्रकारों से जिसका मध्यायु योग प्राप्त है, उसका जीवन अत्यायु की अवधि तक तो है ही, पश्चात् मृत्यु के विषय में विचार करना चाहिए॥८६॥ योग में यदि अत्यायु आई हो तो उसके खण्ड में ही विचार करना चाहिए। किस दशा में मृत्यु होगी यह विचार करना॥ दीर्घायु हो तो ७२ वर्ष के बाद मृत्यु समझना, और मध्यायु में ३६ वर्ष के बाद मृत्यु विचारना॥८८॥ अब यह स्पष्ट कहा जाता है कि—द्वारराशि या बाह्य राशी के मलिन पापदृग्योग होने पर उसकी नवाश दशा में या अन्तर्दशा में मृत्यु होती है जो कि भगवान् शंकर ने पहिले कहा था॥८९॥ हे मैत्रेय! जिस जातक के द्वारराशि या द्वारराशीश की मलिनता हो तो उसके नवाशदशा या अन्तर्दशा में नि सन्देह मृत्यु होती है॥९०॥ यह विचार पाक — दशा और भोग — अन्तर्दशा दोनों में करना। जो द्वारराशि या द्वारराशीश स्वयं पाप या पापदृष्ट या युक्त हो उसकी नवाशदशा काल में निश्चय मृत्यु होती है॥९१॥

निर्दिशक महाप्राज्ञ तदन्तरगते मृति ॥९२॥ द्वारे च बाह्यराशेर्वा नवाशे निधन भवेत् ॥ पापयोगे नवाशेऽसदन्तर्गते द्विज ॥९३॥ यदा दशाप्रदो राशि पापसज्ज प्रजापते ॥ लप्राप्तावति यो दूर तावद्दूर विभोगका ॥९४॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि नवाशकपदेन च ॥ प्रतिराशिनवाशेन नवाब्देन दशास्थिरम् ॥९५॥ विशेषरूप में प्रोक्त नवाब्दाद् द्वारबाह्यो ॥ राशिसमर्थिनो ग्राह्याभ्रदशाया विचित्रितेत् ॥९६॥ भावाना स्पष्टकृत्यैव द्वारबाह्य विचित्रितेत् ॥ यद्वावस्पष्टता सप्रह्नवाशेषु भो द्विज ॥९७॥ रीत्याब्दे च समानीते मरण भवति ध्रुवम् ॥ एव तन्वादयो भावा स्पष्टीकार्या यथार्थतः ॥९८॥ ग्रहनवाशैर्वरीत्याद्वादशाना नवाशके ॥ नवाशायुसमानेन विशेषे च समादिशेत् ॥९९॥ एव विचित्रितेद्विप्र द्वारबाह्यद्वयोरपि ॥ मलिनत्वमथैवेद निधन न तु कथ्यते ॥१००॥

अथवा हे महाप्राज्ञ मैत्रेय ! उसकी अन्तरदशा में मृत्यु होती है॥९२॥ जिस द्वारराशि या बाह्यराशि के नवाश में पापग्रहदृष्टि या योग हो तो उसी नवाश दशा में निधन (मृत्यु) होता है॥९३॥ स्वयं पाप या पापदृग्योग युक्त राशि दशाप्रदरूप में (चर पर्यायदशा में) भोगरूप से आरम्भ होती है तो वह लग्न से जितनी सख्या पर हो उतनी सख्या पर का भोग अन्तरदशा मारक होगी अर्थात् द्वारराशि के द्वारनवाश से या सम्भव हो तो लग्न से उतनी सख्या परे की राशि दशा या नवाश दशा में मृत्यु होती है ॥९४॥ अब नवाश राशि के आम्ब (राशि) से यह विचार कहते हैं। हर एक राशि की दशा ९-९ वर्ष की होती है और उसमें अन्तर एक अंश के १-१ वर्ष जानना। यह 'नवाशस्थिरदशा' कहाती है। जो नि, आगे दशाप्रकरण में कही जायगी॥९५॥ और द्वार तथा बाह्य राशि के राशिसम्बन्धी विशेषरूप चरदशा या चरपर्यायदशा में विचार करना। द्वादशभावों को स्पष्ट करके द्वार तथा बाह्य राशि का विचार करना। जिस भाव या नवाश में द्वार राशि हो और जिस भाव में या नवाश में बाह्यराशि हो उसको देखकर पूर्वोक्त ग्रहयोगानुसार जिस राशि में मरणयोग प्राप्त हो उसमें

वृद्धानंतर्यदा मृत्युस्तस्य विश्वात्मकोऽच्युतः ॥ सर्वात्मना मृत्युयोगः शुभदुःशोभसम्भवः ॥११३॥ तप्येते तुगराशित्ये इत्याकांक्षा द्विजोत्तम ॥ तस्या विनिर्णयं कर्तुं स्पष्टमुक्तेन भाषितम् ॥११४॥ यस्य वृद्धिकरे विप्र पदेशस्य दशांतरे ॥ निधनं च भवेत्तस्य निर्विशकं वदाम्यहम् ॥११५॥ पदेशस्य नवांशे वा लग्नाष्टपत्रिकोणने ॥ दशायां निधनं तस्य यस्य वृद्धिपदं भवेत् ॥११६॥ यदि वृद्धाब्दमादाय निधनं न भवेत्कदा ॥ दशात्रयाणामेते तु मृत्युमवति निश्चितम् ॥११७॥ पदेशस्य दशा तत्र लग्नारुद्धे पदस्य च ॥ रघ्नारुद्धे तदा ग्राह्यं तदीयस्य यदा द्विज ॥११८॥ तवाश्रये राशिदशा ग्राह्यमाणा द्विजोत्तम ॥ अत्र केवललेटानां दशायां चिंतयेत्सुधीः ॥११९॥ यद्वा पदेशस्य दशा निसर्गबललक्षणा ॥ विशोत्तरी दशा रीत्या दशा चाष्टोत्तरी मता ॥१२०॥

द्वारराशि की दशा, द्वारनवांश की दशा एवं बाह्यराशि की दशा को लाय कर बाह्य राशिदशा से भी आगे ९ वर्ष तक और आयुवृद्धि होती है ॥१११॥ द्वारबालराशिदशा से आगे दूसरी राशि की दशा में भी पापसम्बन्ध होने पर भी आयु की निश्चय वृद्धि होती है ॥११२॥ आयुवृद्धि के पश्चात् शुभदृष्टि तथा योग से कष्टरहित अवस्था में मृत्यु होती है ॥ अष्टमेश यदि उच्चराशि में हो तो क्या होना चाहिये, इस आकांक्षा के विषय पहिले कहे जा चुके हैं, उसी से समझना चाहिये ॥ जिस जातक के आयुवृद्धि का योग हो, उसकी आरुद्ध लग्न के स्वामी की दशा या अन्तर में मृत्यु निश्चितरूपसे जाने। अथवा जिस जातक के वृद्धियोग हो उसकी मृत्यु आरुद्ध लग्नाधीश के नवांश में या लग्न से अष्टमेश की त्रिकोण राशि के स्वामी की दशा में मृत्यु होती है ॥ यदि कदाचित् बड़े हुए ९ वर्ष के बाद भी मृत्यु न हो तो, आरुद्धेश, उपपदेश और अष्टमभावारुद्ध इन तीनों का ग्रहण करना ॥११७॥ (अर्थात् आयुवृद्धि योग बलवान् हो तो द्वारराशिदशा तथा बाह्यराशिदशा, अष्टमेश दशा, इनके बाद आनेवाली दशाओं में मृत्यु हो और समय निर्देश के लिये आरुद्धेश की दशा, या उपपदेश की दशा या अन्तरदशा का निर्देश करना) यही बातें कहते हैं कि—लग्न से आरुद्ध स्थान के स्वामी की या उपपद राशि की स्वामी की या अष्टमभाव के आरुद्ध के स्वामी की दशा मारक निर्देश में ग्रहण करना चाहिये ॥११८॥ आयुवृद्धि योग में ग्रहण की हुई राशि के (वाच्य होने पर) केवल ग्रहों की दशा का उपयोग करना ॥११९॥ अथवा केवल आरुद्ध लग्नाधीश की दशा से मारक निश्चय करें। यह दशा ग्रहण करने में यद्यपि अनेक दशा है किन्तु विशोत्तरी दशा अथवा अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करना चाहिये ॥१२०॥

तदा पददशाया च निधनं गणिताप्रणी. ॥ अलपद तदीशस्य पदशीच तयोर्दशा ॥१२१॥ नाथातेन समारोत्या राशिखेटद्वयोर्दशा । निर्वर्तिता दशा विप्र तर्देषु विचितयेत् ॥१२२॥ वरपर्यादशारोत्या पदेशस्य दशांतरे ॥ अवश्यं निधनं तस्य निर्विशकं द्विजोत्तम ॥१२३॥ तथापदेशस्य च तत्त्रिकोणं चायं प्रोद्धिज ॥ नवांशकदशारोत्या समानीय दशांतरे ॥१२४॥ पुनः पदत्रिकोणाम्यामनतरगते द्विज ॥ दशायां निधनं वाच्यं जातकस्य न संशयः ॥१२५॥ नवांशकदशा प्रोक्ता द्विधा ग्राह्या द्विजोत्तम ॥ ताम्यां लग्नाष्टमाधीश अथ वा राशिकोणया

॥ १२६॥ दशाया निघन चाच्य त्रिशूलिभाषित पुरा ॥ इत्येषा निघन योगादवश्य
चितयेद्द्विज ॥१२७॥

इति श्रीवृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आयुर्दायिकयन नाम विंशोऽध्यायः ॥२०॥

गणितज्ञ को चाहिये कि—आरुढ की दशा में या आरुढ राशि के स्वामी के 'अष्टमेश' त्रिकोणेश की दशा में अथवा 'पदशौच' अष्टमेश (पद=आरुढ का शौच=शुद्धि=शोधन का स्थान=अष्टमभाव) की दशा में निघन कहना ॥१२१॥ 'नाथान्तेन समा ज्ञेया०' आदि रीति से जो चरदशा कही जायेगी, उस रीति से दशास्पष्ट करके बाद उसमें मरण का विचार करे ॥ चरपर्यादशा की रीति से स्पष्ट की हुई दशा में आरुढेश की अन्तरदशा में निश्चय मरण कहना ॥१२३॥ अथवा नवाशदशा स्पष्ट करके आरुढ की दशा या उससे त्रिकोण ५१९ की दशा या अंतर में अथवा आरुढ के त्रिकोण की दशा में ही निश्चय मरण कहना ॥ नवाश दशा दोनों रीति से (कही जायेगी) ग्रहण करना ॥ उन दशाओं लग्नेश और अष्टमेश से या त्रिकोणाधीश की दशा में निघन (मृत्यु) कहना, ऐसा भगवान् शंकर का कहना है ॥ इन भाशकों का हे मैत्रेय ! अवश्य विचार करना चाहिये ॥ श्लोक १ से १२७ ॥

इति श्रीवृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया आयुर्दायिकयन
नाम विंशोऽध्यायः ॥२०॥

पराशर उवाच—अयात सप्रवक्ष्यामि प्रकारं च द्वितीयकम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण
आयुर्दासूचको भवेत् ॥१॥ वितप्रात्मदशा विप्र अष्टमेशात्तयोर्द्वयो ॥ मध्ये चैवो बली चित्त्य
सोपि ह्यायु प्रदो ग्रह ॥२॥ केन्द्रादित्रिकयोगेन दीर्घमध्यात्पतापुपि ॥ सा विज्ञेया महाप्राज्ञ
तवापि प्रवक्ष्यामिहम् ॥३॥ केदे स्थितेऽपि दीर्घादिमध्यायुः पणफरे स्थिते ॥ आपोक्तिमे स्थिते
स्वल्पमायुर्मवति निश्चितम् ॥४॥

पराशरजी ने कहा—अब हम दूसरा प्रकार कहते हैं जिसका ज्ञान स आयु की सूचना होती है ॥१॥ हे मैत्रेय ! सप्रेत तथा अष्टमेश में आयु का विचार करे इन दोनों में जो ग्रह बनवान् होता है, वह आयु का देनेवाला है ॥ उन ग्रह के केन्द्रादि स्थान में होने से दीर्घ मध्य, अन्य आयु गमयना ॥ सो हम स्पष्ट (मुनासा) कहते हैं ॥ उस वली ग्रह के केन्द्र स्थान ११४।७।१० में होने से 'दीर्घायु' पणकर २।५।८।११ में होने से 'मध्यायु' और आपोक्तिमे ३।६।९।१२ में होने से 'अल्पायु' होती है ॥१-४॥

कर्त्तव्यं तु ब्रूइत्या तदेव चितयेद्द्विज ॥ तत्रे वा मदने वापि वाष्टमेशो तयोर्द्वयो ॥५॥ ताम्या
मध्ये बली चैव स्थित केन्द्रादिपूर्ववत् ॥ दीर्घमध्यात्पमेदेन आयुर्निश्चितम् पूर्ववत् ॥६॥
पूर्ववद्द्वन्द्वस्य प्रैरागिकमेव च ॥ आयुदपि कृते स्पष्ट प्रवक्ष्यामि इदं वच ॥७॥
स्वस्मिन्तमवने भेटेऽनधिके च बने द्विज ॥ न दीर्घताया दीर्घादि विपरीतायुषो भवेत् ॥८॥

दीर्घमध्ये च वाल्पं च ह्यल्पं वा किञ्चिदेव च ॥ विपरीत योगभंगे सत्यमेव न संशयः ॥१॥
 ज्ञप्तात्सप्तमे विप्र नवमे कारके स्थिते ॥ विपरीत च दीर्घादि योगायुर्न तु संशयः ॥१०॥
 त्वापेज्जेकभेदानामायुषो निर्णयः कृतः ॥ दीर्घादित्रयरूपेण इत्युक्तं ब्रह्मणोदितम् ॥११॥
 न्यतलप्राष्टमेशी द्वौ चितयेज्जन्मपत्रके ॥ पचमैकादशे विप्र दीर्घायुश्च प्रजायते ॥१२॥ तामे
 तृतीयो मध्य आयुर्दाय विचिन्तयेत् ॥ लाभे विते त्रिकोणे वा ह्यायुरल्प भवेद्द्विज ॥१३॥
 तापुर्लभिगौ द्वौ च जातकोपि न जीवति ॥ एवं समस्तजन्तूनामौदृग्ययोग
 वेचितयेत् ॥१४॥

कर्क लग्न की कुंडली में भिन्नता है, सो यह है—लग्नेश, सप्तमेश में से जो बलवान् हो वह और अष्टमेश इनमें से जो एक ग्रह बली हो उसके केन्द्र, पणपर, आपोक्लिम स्थानों में होने से क्रमशः दीर्घ, मध्य और अल्प आयु होती है। और दीर्घादि आयु प्राप्त होने पर पूर्वके हीन खण्ड को छोड़कर प्राप्त खंड को ग्रह की वर्तमान राशि से गुणा करके आशामी खण्ड का भाग देने से जो वर्षादि अंक प्राप्त हो, उनको पूर्व त्यक्त खण्ड में योग करने से स्पष्ट आयु के वर्षादि जानना ॥ इस स्पष्ट गणित में इतना विशेष है कि—ग्रह यदि अपनी राशि में समबली हो और दूसरा ग्रह अधिक बली न हो तो ग्रह का बल समान होने के कारण दीर्घ आदि जो आयु प्राप्त हो वही रहेगी, विपरीत (भिन्न) आयु नहीं होगी। और यदि लग्नेशाष्टमेश हीन बल हो तो दीर्घादि आयु में कक्षा हानि होता है, इसमें सन्देह नहीं है। १॥ और आत्म कारक सप्तम से सप्तम (लग्न) या नवमभाव में हो तो प्राप्त योगायु विपरीत जाने, इसमें संशय नहीं है। १०॥ अब आगे आयु के अनेक भेदों का निर्णय किया जाता है। जिसमें दीर्घ, मध्य, अल्परूप से विचार किया गया है। ११॥ लग्नेश और अष्टमेश का विचार करना, यदि ये दोनों पचम और एकादश भाव में हो तो दीर्घायु होती है। १२॥ और वही लग्नेशाष्टमेश लाभ (११) स्थान या तृतीय भाव में हो तो मध्यायु जानना। तथा दूसरे या लाभ ११ अथवा त्रिकोण ५।९ में हो तो अल्पायु होती है। १३॥ और दोनों ग्रह यदि लाभभाव में हो तो जातक गतायु (आयुहीन) होता है और वह बालक अधिक दिन नहीं जी सकता है। इस प्रकार में सबके लिए आयु योग का विचार करना चाहिए। १४॥

अथेव भिन्नमार्गेण आयुर्दाय निरूपितम् ॥ तनुतन्वीशतद्राशिपत्युर्भाना त्रिकोणवे ॥१५॥
 अल्पमध्यचिरायुष्ये रूपवर्षप्रमाणतः ॥ अष्टमेशादियोगेन निर्याणि चारयेद् ग्रहः ॥१६॥
 लग्नेशत्रिकोणोत्प्रायुर्लभिश्रेष्ठस्य त्रिकोणगे ॥ मध्यमायुर्विजानीयात्त्रिविंशक द्विजोत्तम ॥१७॥
 लग्नेशात्स्वीदराशीशे त्रिकोणे द्रव्जनायके ॥ दीर्घायुषि प्रदातव्यं पुरा शम्भुप्रणोदितम् ॥१८॥

अब और एक नीति में आयु का निरूपण है। लग्न की राशि, लग्नेश की राशि, लग्नेशग्नित राशि के स्वामी की राशि इन तीन राशियों के त्रिकोण में अष्टमेश के होने में अल्प, मध्य, दीर्घ आयु अपने वर्षों के प्रमाणानुसार जानें। और अष्टमेश आदि (पण्डेज, श्वादेज) के योग में प्राप्त आयु वर्ष में हानि होता है। लग्न में त्रिकोण में अष्टमेश हो तो अल्प आयु और लग्नेश

पूर्वकण्ठे एकविंशोऽध्यायः

से त्रिकोण मे अष्टमेश हो तो मध्यायु और लग्नेशराशीश से त्रिकोण मे अष्टमेश हो तो दीर्घायु जानो, ऐसा महादेवजी का वचन है॥१८॥

तेषां मध्ये त्रिकोणानां विभागे च नवकथम् ॥ स्वल्पमप्य चिरायुष्य द्वादशाब्दाधिकेन च ॥१९॥
अल्पायुषस्त्रयो भेदास्त्रयस्याते पृथक् पृथक् ॥ बिलग्रेशाष्टमेशादि लग्नस्थेपि द्विजोत्तम ॥२०॥
द्वादशाष्ट भवेदायुश्चतुर्विंशतिपञ्चमे ॥ नवमे च षट्त्रिंशाब्दमित्येव न तु सशय ॥२१॥
लग्नेशराशिकोणेषु लग्नराशिषादि चेत् ॥ तत्र स्थितेष्टवेदाब्दे षट्चछ पञ्चमे स्थिते ॥२२॥
नवमस्ये द्विसप्ताब्द तद्वचकमिव मतम् ॥ लग्नेशाशितराशीशे त्रिकोणेषु स्थिते द्विज ॥२३॥
लग्नेशादष्टमेशादि त्रिभाग दीर्घमायुषि ॥ लग्नस्थे चतुरशीति पञ्चमे षट्त्रिंशके ॥२४॥
नवमेष्टौत्तरशत वर्षेऽप्यायुर्विनिर्णय ॥ द्वादशाब्दानुपाते च ह्येतच्छतमप्रणीतम् ॥२५॥ तुला
मेपबिलग्रेषु प्रायः शुक्रो भवेद्वली ॥ स दशादीं स्वल्प स्यादते च स्यात्स्वभावतः ॥२६॥

इन त्रिकोणभावों मे प्रत्येक भाव के फलाय म क्या नवीनता है, सो कहत है। अल्पायु म १० वर्ष की इसी प्रकार मध्यायु और दीर्घायु मे ग्रहयोग बल मे १२-१२ वर्षों की न्यूनाधिकता होती है, सो दिखाते हैं। अल्पायु के ३ भेद हैं, वे तीन स्थानों मे बलग अलग समजना ॥ लग्नेश और अष्टमेश ये दोनों लग्न मे हो तो १२ या ८ वर्ष की आयु जानना और पञ्चम मे हो तो २४ वर्ष और नवमभाव मे हो तो ३६ वर्ष की आयु जानना ॥२१॥ मध्यायु के तीन भेद-लग्नेशराशि से त्रिकोण मे, लग्नेश और राशेश हो तो ४८ वर्ष और पञ्चमभाव मे हो तो ६० वर्ष और नवमभाव मे हो तो ७२ वर्ष की आयु होती है ॥ इसी प्रकार दीर्घायु मे लग्नेशस्थितराशीश यदि लग्न हो तो ८४ वर्ष और पञ्चमभाव मे हो तो ९६ वर्ष, और नवमभाव मे हो तो १०८ वर्ष की आयु होती है ॥ इस प्रकार १०-१० वर्ष के अनुपात मे भगवान् शंकर ने कहा है ॥२५॥ अब आठ श्लोकों मे भेष, तुला लग्न के विषय मे कुछ विशेष वचन करते हैं ॥ तुला-मेप लग्नो मे (शुक्र लग्नेश तथा केन्द्रेश होने म प्रायः शुक्र बलवान् होता है। वह शुक्र दशरभ अपने मुख्यरूप मे और वज्रा के अन्त मे भावरूप मे बलवान् है ॥२६॥

पूर्वादि चस्पष्टदशा भेषस्यापि तुल्यं च ॥ चरपणसिमानोते अष्टे चैकादशोऽजिते ॥२७॥
द्वादशाब्दाधिके कृत्वा पूर्वमायु समगते ॥ नायाताब्दसमूहे च मेलनीय द्विजोत्तम ॥२८॥ तत्र
चाय विभागश्च तत्रापे कथितो द्विज ॥ लग्नेशादीं समारम्भे प्रथमाशादिसत्यया ॥२९॥
योगयेद्द्वादशाब्दं च ह्यायुः साधनहेतवे ॥ अने त्रिंशत्तमाशाते तत्रे स्पष्टे सति द्विज ॥३०॥
स्वभावतः पूर्याल्लूने द्वादशाब्दं तु योगयेत् ॥ मध्ये तयानुपाते च विप्राय च दशागतम् ॥३१॥
तद्योजनं तु कर्तव्यं निर्विगारं स्वभावतः ॥ इत्येव नायाताब्दा ये स्वभावज्ञा भवति च ॥३२॥
नाशिवे शेष नाब्देन शुक्रो सत्यस्थितो यदि ॥ भानुनष्टे च शून्यात्ते न युक्त द्वादशात्मक
॥३३॥ एकोदशेशः स्योच्चस्थे पर्यायार्थं प्रयत्नजित ॥ नाशस्यो नामप्रेत्यर्थायार्थमायुर्विनि
श्चितम् ॥३४॥ नोचरः प्रेतमपुक्ता पर्यायार्थं पृथक्पृथक् ॥ पहा विनागादयेव निर्णीते
परमायुषि ॥३५॥ उच्चरः प्रेतमपुक्ते परे प्रत्येकमुपप्रेतं ॥ एव हि मध्यपर्याय
परमायुर्विनिश्चितम् ॥३६॥ रविः शुक्रः शनी राहर्षरले चरितं जमान् ॥ त्रिकोणदुर्जनं हित्वा

गृह्णीयादलितं सुधीः ॥३७॥

मेघराशि या तुला राशि की दशा के पूर्वार्द्ध में (चरपर्यादिशाके मान में) १ वर्ष योग करना॥ और इसी प्रकार गणितागत उत्तरार्द्ध में १२ वर्ष योग करना॥ इस प्रकार नाथान्त वर्ष सख्या में १२ वर्ष मिलाना॥ इस रीति से यह विभाग तुम्हारे सामने कहा। लग्नेश राशि की दशा में प्रथम अंश में १२ वर्ष योग करना और स्पष्ट लग्न की दशा में ३० वे अंश में १२ वर्ष का योग करना तब मध्य के अंश जितने वर्तमान हो उतने अंशों पर अनुपात (त्रैराशिक गणितद्वारा, अर्थात् यदि लग्नेशराशि की दशा के आदि में १२ वर्ष मिलते हैं और आगे प्रति अंश ४ मास २४ दिन कम होते जाते हैं तो इष्ट अंश में कितने वर्ष मास दिनादि मिलेंगे। और इसी प्रकार लग्न की दशा में प्रति अंश ४।२४ आरभ से बढ़ते जायेंगे। और शून्य अंश होगा तो उपर्युक्त शास्त्र से १ वर्ष तो बढ़ेगा ही।) से स्पष्ट करके जितने वर्ष मास दिनादि प्राप्त हो उतने भावराशि की दशा में युक्त करना (जोड़ना) इस प्रकार से युक्त करने पर भावराशि का दशावर्ष—परिमाण स्पष्ट होगा (यह विशेष नियम मेघ, तुला के विषय में ही है) और शुरु यदि अष्टमभाव में स्थित हो तो न कम होंगे, न अधिक होंगे। और गणितागत वर्ष सख्या योग करने पर यदि १२ से भाग देने पर शून्य प्राप्त हो तो भी १२ वर्ष नहीं जोड़े जाते हैं॥ (अब अन्य भेद कहते हैं) केवल एक अष्टमेश उच्चराशि में हो तो राशि दशा में दशमान का आधा और बढ़ाता है और उच्चस्थ न हो तो आई हुई आयु में से आधा कम करता है॥३४॥ तथा अन्य ग्रह भी यदि नीच राशिस्थ अष्टमेश से युक्त हो तो अपनी २ भावराशि दशाओं में आधा २ भाग घटाते हैं॥ उच्चराशि स्थित अष्टमेश से युक्त हो तो अपने २ भाव की दशा में आधा २ भाग बढ़ाते हैं॥ उपर्युक्त कारण, रहित भाव की समागत निर्णीत आयु एकरूप ही रहती है॥३५॥ सूर्य, मंगल, शनि, राहु ये चार ग्रह मृत्यु के विषय में क्रमशः उत्तरोत्तर अधिक बलवान् हैं। इनमें विशेष दुर्बल ग्रह को छोड़कर बाकी ग्रहों को लेना॥३७॥

केतुश्च शनिवन्मृत्युनायनेमित्वमादिशेत् ॥ शनिना राहुणा वापि युक्ते सौम्ये रक्षोसिते ॥ पर्यायमेक तन्मध्यमकराशी मृति वदेत् ॥३८॥ तयोस्तु शुभयोगेन तद्राशी मृतिमादिशेत् ॥३९॥ भोगराशी दुर्बले वा प्रबले वा ग्रहे स्थिते ॥ तथापि निर्दिशेत्काले मरण तत्र सहायः ॥४०॥ केतौ वैषावमानस्ते नाथे वाऽशुभवीक्षिते ॥ केतोर्दशान्ते मृत्युः स्याच्छुभदृष्टेन किं च न ॥४१॥ तन्वधोशाष्टमेशाभ्यां योगेनायुः कृते द्विज ॥ अष्टमेशात्तदुच्चस्थे वर्षपर्याद्विप्रमाणके ॥४२॥ अर्धाधिकाब्द इत्थैव योजयेत्पूर्वमायुषि ॥ एव नाथात्तरीत्या च चरपर्यातिरिक्तम् ॥४३॥ पर्यादियापि यथापुराष्टमेशेन दीयते ॥ तत्सर्वमर्धाधिक्यं च विधेयं द्विजसत्तम ॥४४॥ एव रघुपतिर्विघ्न नीचराशिगतोपि च ॥ दीयमानापुरर्द्धं चेन्नाशयेत्तु न सहायः ॥४५॥

और केतु भी शनि के समान ही अष्टमेश का फल देने में समान है। मौम्यग्रह यदि शनि या राहु से युक्त और सूर्य के दृष्ट हो तो एक ही पर्याय की आयु में मृत्यु होती है॥३८॥ शनि राहु से शुभग्रह का योग हो तो उमी राशि की दशा में मृत्यु होगी है॥३९॥ दशाप्रदराशि में दुर्बल या सबल वीसा भी ग्रह हो (किन्तु पूर्वोक्त ग्रहों का योग हो तो) तो भी 'उम समय' (पापयुक्त

पूर्वसप्तमे एकविंशोऽध्यायः

दशाकाल मे मरण मे सहाय नही है।) केतु की दशा यदि अन्त मे (योग समागत, दीर्घ, मध्य, अल्प आदि आयु मे) और राशिस्वामी अशुभ ग्रह से दृष्ट हो तो केतु की दशा मे ही दशा के अन्तभाग मे मृत्यु होती है। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो नही होती॥४०॥ लग्नेश और अष्टमेश से पूर्वोक्त योगानुसार आयु स्पष्ट होने पर भी अष्टमेश के उच्चस्थ होने पर पूर्व आई हुई आयु मे अर्द्ध भाग देकर ही सिद्ध समझना। यहा इस प्रकरण मे 'नाथान्त' रीति से आई हुई चरपर्या दशा का ही ग्रहण है॥४३॥ अष्टमेश अपनी मर्यादा (उच्च राशिस्थिति) से जो अर्द्धभाग आयु का देता है, वह सब समागत आयु मे ही अधिक कर देना चाहिये॥४४॥ इसी प्रकार अष्टमेश नीच राशिगत हो तो अन्यग्रहो से दी हुई संयुक्त आयु का अर्द्धभाग निश्चय कम कर देता है॥४५॥

एवं रंध्यपतिर्विप्र नीचक्षेदेन संयुतः ॥ तदग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं विनश्यति ॥४६॥ एव रंध्यपतिर्विप्र तुणक्षेदेन संयुतः ॥ तदग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं च वर्द्धति ॥४७॥ एवमुक्तं च विप्रेन्द्र परमायुर्विनिश्चितम् ॥ लग्नेश्वराष्टमेशाभ्यां योगापुर्यायमागते ॥४८॥ तेषु संस्कारमात्रेयमिदं पूर्वोक्तसकयाम् ॥ लग्नेशादयुरित्येवं तत्तद्योगकलात्मकम् ॥४९॥ संयुक्ताश्च ग्रहा उच्चनीचादिगुणदोषतः ॥ वृद्धिहासवृत्तरीत्या कार्या वै संप्रदायतः ॥५०॥ द्वित्र्यादिमृत्युयोगश्च प्रयत्नः पूर्वभाषितः ॥ नैसर्गिकोपि वीर्याय तस्य पाके मृतिर्भवेत् ॥५१॥ स्थाराराहुपगूना चतुःक्षेदांतरे बली ॥ तस्य योगानुसारेण जातकस्य मृतिं बदेत् ॥५२॥ अष्टमेशेन संयुक्ताः शनी राहु-कुजो रविः ॥ न वीक्ष्यते ग्रहैर्वीर्यं तस्य मृत्युं विनिर्दिशेत् ॥५३॥ एषां मध्येषु प्रयत्ना सा तत्त्वामिकराशिणे ॥ पाके मृत्युं विजानीयातिर्विशकं द्विजोत्तम ॥५४॥

..

अर्थात् नीचग्रह से युक्त अष्टमेश अन्यग्रह से प्राप्त आयु का भी अर्द्धभाग नष्ट कर देता है॥४७॥ इसी प्रकार अष्टमेश यदि उच्चग्रह से युक्त हो तो उस ग्रह से दी हुई आयु मे और अर्द्धभाग बढ़ाता है॥४८॥ हे विप्रेन्द्र ! निश्चित परमायु लग्नेश और अष्टमेश के गुण दोष से जो संस्कार युक्त होती है उसका निर्णय कहा॥ लग्नेश, अष्टमेश से जो आयु स्पष्ट होती है, उसमे हास वृद्धि के नियम कहे गये॥४९॥ उच्च नीच आदि गुणदोष से युक्त ग्रह आयु मे वृद्धि तथा हास करते हैं। यह संप्रदायरीति है॥५०॥ (लग्नेश तथा अष्टमेश का विचार समाप्त) दो तीन प्रकार के तथा एक एव दो आदि ग्रहो से होनेवाले प्रयत्न मृत्युयोग अब तक कहे गये, इन योगो मे नैसर्गिक बल से युक्त भी योग अपनी दशा मे मृत्यु के लिये पर्याप्त है॥५१॥ सूर्य, मंगल, जनि, राहु, इन चार ग्रहो मे जो ग्रह बलवान् हो उसके योगानुसार जातक की मृत्यु कहना॥५२॥ जिस जातक के जन्म लग्न मे उपर्युक्त ग्रह अष्टमेश से युक्त हो और कोई शुभग्रह नही देखता हो तो उसकी मृत्यु कहना॥५३॥ इन ग्रहो मे जो ग्रह बलवान् हो उसकी राशि की दशा मे जातक की मृत्यु निश्चय रूप से जानना ॥५४॥

एतेषां चतुःक्षेदानां मध्ये चैको बलीकवचित् ॥ तस्य राशिदशाकाले मृतिस्थानं विनिर्दिशेत् ॥५५॥ मृत्युस्थानानामिभूतत्वां सिद्धायां च महादशा ॥ तत्तस्यापि क्रमेणैव तदनन्तर्दशाप्रदा

॥५६॥ राशिषु मारकत्वेन बलवदागमेपि च ॥ शूलाद्यधिष्ठातृगृहदशांतरगते मृतिः ॥५७॥ शुभग्रहेण संबधे शनिराहोस्तयोरपि ॥ तत्तत्स्वामिदशाकाले मरणं च विनिर्दिशेत् ॥५८॥ तदाश्रयाद्वाशिपाके मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥ निर्विशंकं महाप्राज्ञ पुरा शंभुप्रणोदितम् ॥५९॥ सुखदुःखादि संख्यात्पाकराशौ विचिंतयेत् ॥ भोगांतरागता तत्तु तत्तद्वीर्यानुसारतः ॥६०॥ सबलायां सुखं ब्रूयादुर्बला दुःखदायिका ॥ वैषम्येन फलं वाच्यं तथा मरणमेव च ॥६१॥ द्वादशे दशमे वापि सत्स्थिते पुच्छनायके ॥ पापदृष्टे दशाप्राप्ते तदंतरगते मृतिः ॥६२॥ द्वादशे दशमे केतुःशुभग्रहनिरोक्षितः ॥ नायं योगो महाप्राज्ञ न कष्ट न तु मृत्युकृत् ॥६३॥

इन चार ग्रहो मे से एक भी बलवान् हो तो उसकी दशा मे मृत्यु स्थान का निर्देश करना ॥ जो महादशा मृत्युस्थान नाम से निर्दिष्ट हो वह भी क्रम से ही अपने अन्तर मे मारक होती है ॥५६॥ राशिदशा मे बलवान् मारक के सम्बन्ध होने पर भी रुद्र, शूल, सजक दशा के अन्तर्दशा मे ही मृत्यु होती है ॥ शनि, राहु का शुभग्रह से सम्बन्ध होने पर उस ग्रह की राशि के दशाकाल मे ही मृत्यु का निर्देश करे ॥ उस ग्रह के सम्बन्ध से उसकी राशि की दशा मे निश्चित मृत्यु होती है ॥ ऐसा प्रथम भगवान् ने कहा है ॥५९॥ राशि के बलाबल के अनुसार राशि की महादशा के अन्तर मे सुख, दुःख आदि कहना चाहिये ॥ यदि राशि बलवान् हो तो सुख और दुर्बल हो तो दुःख कहना ॥ और अति पापयोग अति वैषम्य हो तो मृत्यु कहना ॥ द्वादश या दशमभाव मे केतु हो और पापग्रहदृष्ट हो तो उसके अन्तर मे मृत्यु होती है ॥ तथा १२।१० भाव मे केतु शुभग्रह दृष्ट हो तो यह मारक नहीं होता ॥ न रोग न मृत्यु होती है ॥ प्राणिनीत्युक्त विप्रेन्द्र प्राणानयनमुच्यते ॥ राज्यधीनं बल ज्ञेय तदुक्त कथ्यतेऽधुना ॥६४॥ अग्रहात्सग्रहो ज्यायान्सग्रहे त्वधिकग्रहः ॥ साम्ये चरस्विरवृद्धाः क्रमात्सुबलशालिनः ॥६५॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि मध्यायुयौगनिश्चितम् ॥ मारकांतरतो विप्र तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥६६॥ विलप्राप्तदशा वा चेदुभयोरष्टमेशयोः ॥ सत्स्थितेऽन्यतरे विप्र मध्यायुयौग उच्यते ॥६७॥ अस्मिन्योगे स्थिते सैव दीर्घस्य मध्यपादके ॥ बालस्य मध्यता पादे केचिदिति विवेचनम् ॥६८॥ अथ दीर्घादियोगेषु त्रिषु च द्विजोत्तम ॥ कक्षाह्लासकृते योगान्दर्शयामि तवाग्रतः ॥६९॥ लग्नसप्तमयोर्विप्र द्विद्विदशकयोरपि ॥ घण्टरप्राधिपस्यतिपि जनुर्लघौ विचिन्तयेत् ॥७०॥ पापकाले पापयोगे पापमध्यत्वमागते ॥ कक्षाह्लासी विजानीयान्निर्दिशक द्विजोत्तम ॥७१॥

पहिले जो हमने बलवती दशाका कथन किया था, वह बलवत्ता कहते हैं। राशिवे ही आधीन बल है, सो कहते हैं ॥ ग्रहरहित राशि से ग्रहसहितराशि बलवान् है और सग्रह राशि से अधिक ग्रहवाली बलवती है। बल समान होने पर चर, स्थिर, द्विस्वभाव ये राशि उत्तरोत्तर बलशाली हैं ॥६५॥ लग्नेश अष्टमेश दोनों लग्न या अष्टमभाव मे से किसी एक स्थान मे हो तो मध्यायु योग कहा जाता है ॥ केचित्—कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि—दीर्घायु मध्यभाग तक बालक की आयु जानना ॥ दीर्घ, मध्यादि आयु के कक्षाह्लासकारी योग तुम्हारे सामने कहते हैं ॥६९॥ जन्म लग्न मे लग्न, सप्तमभाव का तथा द्वितीय द्वादशभाव और घण्ट अष्टमभाव का विचार करे ॥ ये भाव पापग्रहयुक्त दृष्ट या पापमध्यगत हो तो निश्चय ही बला ह्लासकारी हैं ॥७१॥

पूर्वखण्डे एकविंशोऽध्यायः

दीर्घस्य मध्याया याता भवेदायुषि मध्यमे ॥ अल्पावत्य च विज्ञेय कक्षाहासस्य लक्षणम् ॥७२॥
कक्षाहासे यदाऽयौऽपि पूर्ववज्जायते ध्रुवम् ॥ अथैव तत्प्रकृष्टस्या पापयोगत्रिकोणो ॥७३॥
लग्नपचमभागेषु पापयोगकृते द्विज ॥ कक्षाहासो भवेद्विप्र निर्विशक विधे सुत ॥७४॥
अत्राऽस्मिन्कारके लग्ने चिन्तयेज्जनिलप्रवत् ॥ कारकाशे दूनराशे पापमध्यत्वमेव हि ॥७५॥
एको योग स विज्ञेय कक्षाहास च पूर्ववत् ॥ अथैककक्षाहासस्य चापवाद यदाम्यहम् ॥७६॥
एकस्यकक्षाहास च वित्ते चान्यथा भवेत् ॥ पूर्ववच्छुभयोगेन कक्षावृद्धिर्भविष्यति ॥७७॥
जनुर्लगे कारके च चिन्तयेत्पूर्वद्विज । लग्ने दूने धने रिष्के षष्ठे रधे स्थलत्रये ॥७८॥ शुभखेटकृते
योगे कक्षावृद्धिर्भवत्यपि ॥ चिन्तयेत्पूर्वद्विप्र त्रिकोणेषु स्थलत्रये ॥७९॥ जनुर्लगे कारके च
शुभयोग करोति च ॥ कक्षावृद्धिर्न सदेहो भविष्यति द्विजोत्तम ॥८०॥ कारके च त्रिकोणस्ये
नीचस्था पापखेचरा ॥ कक्षाहासो महाप्राप्त द्वितयेन भविष्यति ॥८१॥

दीर्घायु का मध्यायु होना और मध्यायु का अल्पायु होना तथा अल्पायु का अत्यल्पायु होना
कक्षाहास का लक्षण है ॥७२॥ कक्षाहास होने पर वर्ष प्रमाण भी पूर्व कहे अनुसार घट जाते
हैं। अब कुण्डली में त्रिकोणस्थान में पापयोग का विचार करते हैं। हे मैत्रेय! लग्न पचम और
नवमभाव में पापग्रह योग होने पर कक्षाहास होता है। इसी प्रकार से कारकलग्न में भी
जन्मलग्न के समान विचार करना होता है। कारकाश में सप्तमराशि यदि पापमध्य हो ॥७५॥
तो यह एक योग हुआ और पूर्ववत् कक्षाहास होगा। इस कक्षा हास का अपवाद कहते हैं।
एक योग द्वादशभाव कक्षा हास का हो और धनेश शुभयोगी हो तो कक्षा वृद्धि होती
है ॥७७॥ जन्मलग्न तथा कारक में प्रथम कथनानुसार विचार करो। ऊपर तो १२।१२ में
तथा नीचे ६।७।८ भावों में दोनों जगह ३-३ स्थल में ॥७८॥ शुभग्रह युक्त दृष्ट या आक्रान्ता
हो तो कक्षावृद्धि होगी। इसी प्रकार इन दोनों के त्रिकोण स्थल में भी देखना ॥७९॥ तथा ये
दोनों शुभग्रह से योग करे तो निःसन्देह कक्षावृद्धि होती है। कारक यदि नीच राशि के
पापग्रहों से युक्त होकर त्रिकोण में हो तो कक्षा हास होता है। दो ग्रहों से यह योग जाने ॥८१॥

कारकाशे त्रिकोणेषु शुभखेटे शुभस्थले ॥ कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र न सदेहो द्विजोत्तम ॥८२॥ कारके
पापखेटान्त्र चातगे पापसप्तुते ॥ कक्षाहासो भवेत्तत्र प्रणीते द्विजसत्तम ॥८३॥ कारके
शुभसप्तुक्ते स्वतुगे शुभखेचरा ॥ कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र निर्विशक द्विजोत्तम ॥८४॥ पापकारक-
गैर्हासो वृद्धिर्वा कथिता द्विज ॥ अथैव गुरुणा कक्षा हासवृद्धि यदाम्यहम् ॥८५॥ वित्ते ध्यये
लग्नषष्ठे त्रिकोणे पापयोर्विज ॥ कक्षाहासो भवेत्तत्र पूर्ववद्विजसत्तम ॥८६॥ गुरौ नीचे ह्युतुगे
च सप्तुक्तेऽशुभखेचरे ॥ कक्षाहासो भवत्येव निर्विशक द्विजोत्तम ॥८७॥ वित्तगे च गुरौ ज्ञेय
पूर्वद्योजन द्विज ॥ प्रागुक्तार्थकृतेय च कक्षा सर्वा प्रकथ्यते ॥८८॥ तथैव शुभयोगेषु
चापवादवदाम्यहम् ॥ उक्तस्थाने शुभयोगे पूर्वेन्दुशुक्रयोर्विज ॥८९॥

कारकाश शुभग्रह का हो और शुभस्थान में हो या त्रिकोण में हो तो निःसन्देह कक्षावृद्धि
होती है ॥८२॥ पापग्रह कारक हो और पापग्रह युक्त १२ भाव में हो तो कक्षा हास
होता है। कारक शुभयुक्त हो, शुभग्रह उच्च का हो तो कक्षा वृद्धि होती है ॥

पापकारक से ह्रास और शुभयोगो से वृद्धि नहीं। अब बृहस्पति से होनेवाली कक्षा की ह्रास वृद्धि बही जाती है॥८५॥ दो पापग्रह धन, व्यय तथा पण्ड और त्रिकोण भाव में हो तो कक्षाह्रास होता है॥८६॥ बृहस्पति नीचराशि में हो तथा पापग्रहो से युक्त हो तो कक्षाह्रास होता है॥ गुरु धनस्थान में हो तो पूर्ववत् (प्रथम कथनानुसार) समझना। प्रागुक्त कक्षाविषयक आलोचना पुन स्पष्ट करते हैं॥ और शुभयोग तथा अपवाद भी कहेंगे। प्रथम कहे गये स्थानों में चन्द्रमा और शुक्र के साथ शुभग्रह का योग हो तो॥८९॥

योगप्रकरणे कक्षाह्रासाय न तु बृद्धये ॥ तत्रैकराशिबृद्धिश्च भवत्येव न सशय ॥९०॥ पूर्ववच्चोक्तपापेषु शनिना योगकारक ॥ कक्षाह्रासश्च तत्रैव यत्रैको राशिर्हासकृत् ॥९१॥ अधुनासप्रवक्ष्यामि विशेषेण द्विजोत्तम ॥ आलभ्य स्थिरदशाया योगाग्निधनमेव च ॥९२॥ शशिनन्दपावकाश्चेदित्युक्ता च दशा स्थिरा ॥ चरे स्थिर द्वि स्वभावेभानुनाराशियु द्विज ॥९३॥ त्रिभिस्त्रिभौराशिरैक खण्डाश्चत्वार एव च ॥ कस्मिन्खण्डे च निधन तस्य योग विचिन्तयेत् ॥९४॥ यस्मिन्खण्डे मृत्युयोगस्तस्मिन्खण्डे विचिन्तितम् ॥ मरण भवतीत्यर्थं निर्विशक वदाम्यहम् ॥९५॥ योगत्रयमह वक्ष्ये दीर्घमध्यात्यभेदतः ॥ चतुःखण्डेषु यत्रामुरागत त्रि चितयेत् ॥९६॥ दीर्घायुर्योगवत्तत्तु यस्मिन्खण्डे समानते ॥ तस्मिन्खण्डे च निधन भवत्यपि न सशय ॥९७॥ वक्ष्यमाणप्रकारेण मध्यमाल्पायुषि द्विज ॥ निधनाश्रयखण्डेषु लक्षणाक्रातया दशा ॥९८॥

योग प्रकरण में कहे अनुसार कक्षाह्रास होती है। और ऐसे स्थल में एकराशि की वृद्धि होती है॥९०॥ पूर्व कहे अनुसार उक्त पापग्रहो में शनि से यदि योग कारक सम्बन्ध हो तो कक्षा ह्रास तथा एक राशि का ह्रास होता है॥ हे मैत्रेय! अब हम स्थिरदशा में होनेवाले विशेष योग से मृत्यु का वचन करते हैं॥९२॥ चर स्थिर द्विस्वभाव राशियों में जो स्थिर दशा नामक सूर्यदेवद्वारा कही गई है॥ उसमें तीन २ राशियों के चार विभाग हैं॥ उनमें किस विभाग में मृत्यु होगी उससे योग का विचार कहता हूँ॥९४॥ जिस खण्ड में मृत्यु योग है उसका विचार किया गया है उससे मरण समय का ज्ञान होने के लिए पूर्णरूप से कहते हैं॥ दीर्घ, मध्य, अल्प भेद से तीन योग कहेंगे, उसका प्रयोग चार विभाग में आई हुई दशा में विचार करना चाहिए॥९६॥ दीर्घायु योग जिस खण्ड में समाप्त में प्राप्त हो उस खण्ड में मृत्यु होती है, यह निश्चित है॥९७॥ इस कहे जानेवाले प्रकार से जिस खण्ड में मध्य या अल्प आयु के लक्षण से युक्त जो खण्ड हो उस खण्ड में उसकी मृत्यु होती है॥९८॥

तद्दशायां च निधन भवत्येव द्विजोत्तम ॥ कदाचिन्न मृतिस्तत्र क्लेशदुःखमयानि च॥९९॥ भवति तत्र सत्कार्यं पुनरित्य वदाम्यहम् ॥ पापद्वयमध्यगते राशिपाके मृतिर्भवेत्॥१००॥ लग्नाद्वा कारकाद्विन्न पापाक्राते त्रिकोणते ॥ द्वादशाष्टमराशयेव पापाक्रात भवेदपि ॥१०१॥ तद्दशायां च निधन जातकस्य न सशय ॥ खण्डे स्थिरदशायां च चितनीयं प्रयत्नतः ॥१०२॥ पापराशेस्त्रिकोणेषु द्वादशाष्टमराशियु ॥ पापाक्राते तद्दशायां निधन भवति ध्रुवम् ॥१०३॥ शुभमध्ये मृतिर्नैव पापमध्ये मृतिर्भवेत् ॥ भूयोपि निधनार्थाय राशिदोष वदाम्यहम् ॥१०४॥

द्वादशाष्टमयोः पत्योर्दृष्टौ क्षीणेन्दुशुक्रयोः ॥ तद्दशायां च निधनं सत्यमेव न सशयः ॥१०५॥
क्षीणेदोः केवलं दृष्टिः शुक्रदृष्टिश्च केवलम् ॥ दृष्टिमात्रेण निधनं स्थिरदशायां
विचिन्तयेत् ॥१०६॥

उस दशा में मृत्यु होती है, पर यदि मृत्यु नहीं हो तो क्लेश, दुःख, भय आदि होंगे॥ अतः
उस दशा के आगे कहे जानेवाला विचार करना। जो राशि दो पापग्रहों के मध्य में हो उसकी
दशा में निधन होता है॥ तथा या कारक से त्रिकोण स्थान के पापाक्रान्त हो अथवा अष्टम
द्वादश राशि पापाक्रान्त हो॥ तो उस दशा में जातक का निधन होता है। इसमें कोई सशय
नहीं है॥१००॥ उन भावों में यदि शुभग्रहयोग हो तो मृत्यु नहीं होती। पापग्रह का योग होने
पर ही मृत्यु होती है। मृत्युज्ञान के लिए और भी राशि में होनेवाले दोष कहते हैं॥
अष्टमद्वादशभाव में जो राशि है उसके स्वामी को क्षीण चन्द्रमा और शुक्र देखते हैं तो उस
राशि की दशा में निधन होता है, इसमें कोई सशय नहीं है॥१०५॥ केवल एक क्षीण चन्द्रमा
की या केवल शुक्र की ही दृष्टि हो तो दृष्टिमात्र से ही मृत्यु होती है। स्थिरदशा में यह विचार
करना चाहिए॥१०६॥

मृत्युस्थानेन या दृष्टिः पापघ्न्यर्क्ष च पश्यति ॥ दशां तस्य समालोक्य ज्योमपष्ठाधि-
पाद्विज ॥१०७॥ निरीक्षिते नवांशेषु द्वयोः स्थाने द्विजोत्तम ॥ तत्रैव निधनं ज्ञेयं भाषितं च
तवापके ॥१०८॥ पूर्वोक्तनिधनस्थाने महापाक नरेष्वभि ॥ ज्योमपष्ठाधिपे विप्र तयोरंशे
निरीक्षिते ॥१०९॥ राशेरतर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम् ॥ अतर्दशायां रूपे द्वे
निधनस्थानमेव च ॥११०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आयुर्दायकयन नाम एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

अष्टमभावेश द्वारा पापयोगयुक्त भाव पर दृष्टि हो तो उस राशि की दशा में, इसी प्रकार
छठा तथा दशमभाव के स्वामी द्वारा भी दृष्टि होने से, केवल राशि ही नहीं, जिस नवांश पर
दृष्टि हो उस राशि की दशा तथा दृष्टियुक्त नवांश वर्ष में मृत्यु होती है॥१११॥ इसी प्रकार
पूर्वोक्त अष्टमस्थान में षष्ठेश तथा दशमेश देखते हो या युक्त हो और अपने नवांश पर दृष्टि
हो तो उस राशि की महादशा में और नवांशराशि के अन्तर वर्ष में निश्चय मृत्यु होती है॥
अन्तरदशा के दो भाव हैं, एक षष्ठ तथा दूसरा अष्टम॥ इनका विचार करके निधन का
निर्देश करना चाहिए॥१-११३॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० ख० भा० प्र० आयुर्दीपकयनं नाम
एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

ग्रहलक्षणम्

पराशर उवाच—अथातः सप्रवक्ष्यामि निधनार्थं विशेषतः ॥ प्रकाशतर्दशायास्तन्त्रं
 रुद्राब्जिजसत्तम ॥१॥ लग्नशूनाष्टमे शीघ्रे तयोर्मध्ये च यो बली ॥ प्राणी रुद्र स विज्ञेय
 सूर्यादस्त्रेचरोऽपि च ॥२॥ तयोर्मध्ये बली चित्य शुभदृष्टेन सपुते ॥ दुर्बलः सोपि गौणाख्यो
 रुद्रग्रह इतीर्यते ॥३॥ तत्रैव प्राणिखट्वस्य विशेषः गणयेत्फलम् ॥ प्रवक्ष्यामि तवाग्रे च भृगुष्वत्वं
 महामते ॥४॥ शुभैर्युक्ते शुभैर्दृष्टे शुभसवधकारक ॥ प्राणी रुद्र स विज्ञेयस्तस्याधीनापुरेव
 च ॥५॥ रुद्रशूलान्तमायुः स्यात्त्रिकोणाते तथा पुनः ॥ लग्नते पञ्चमान्ते च नवमाते त्रयस्यले
 ॥६॥ चितनीय महाप्राज्ञ तत्तद्वाशिदशातरे ॥ अल्पमध्य च दीर्घायुयोगभेदा न सराय ॥७॥
 यत्राल्पायुः समायोगे त्रिकोणमध्यमान्तरे ॥ आयुस्तत्रैव विज्ञेय तदग्रे च क्रमेण च ॥८॥ योगे
 मध्यायुष्यं प्राप्ते त्रिकोणे मध्यमातने ॥ आयुर्दायसमाप्तिश्च निर्विशक द्विजोत्तम ॥९॥
 दीर्घायुयोगसलब्धे त्रिकोणे नवमातगे ॥ दशातरे महाप्राज्ञ आयुर्दायसमाप्तये ॥१०॥ अथैव
 लग्नशूनादि आरभ्य च दशाक्रमः ॥ प्रवृत्तिर्जन्मतो ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥११॥
 यत्ररुद्रग्रहस्यापि शुभदत्वं न भाव्यते ॥ तत्र जीवस्य मष्टत्वाग्नेदः फलमिति
 स्थितिः ॥१२॥

रुद्रमहेश्वरबल-ग्रहलक्षण

अब हम मृत्युकाल ज्ञान के लिए विशेष प्रकार से अन्तर्दशा का ज्ञान कहते हैं। लग्नेश तथा
 सप्तमादि ७।८।९ भावेश इन दो भावेशों में जो ग्रह बलवान् हो वह बली रुद्र (या प्रधान
 रुद्रसजक ग्रह) ग्रह है। इस रुद्र सजक ग्रह में सूर्यादि सभी ग्रहों का ग्रहण है। (जो ग्रह
 न्यूनबली है, वह गौण रुद्र है।) इन दोनों रुद्रग्रहों में बली रुद्र ग्रह का विचार करना चाहिए।
 वह रुद्रग्रह यदि शुभदृष्टग्रह युक्त हो या शुभग्रहयुक्त हो तो न्यूनबली होने पर भी मुख्य बली
 रुद्र के समान ही है। ३॥ इस बली रुद्र का फलसम्बन्धी विशेष विचार करना चाहिए सो वह
 तुमको कहते हैं। ४॥ वही प्राणी (बलवान्) रुद्र ग्रह शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट अथवा अन्य
 सम्बन्ध हो तो वह पूर्ण बलवान् रुद्र है और उसीके आधीन आयु है। ५॥ जातक की आयु
 रुद्रशूल तक या उसके त्रिकोण (राशि की दशा) तक है (शूल दशा जो आगे कही जायगी
 उसी की रुद्रशूल दशा जानना) लग्न तक या पञ्चम अथवा नवम भाव की दशा तक आयु है
 ऐसा समझना। ६॥ (अब और स्पष्ट करते हैं) अर्थात् हे महाप्राज्ञ मेनेय! अल्पायु मध्यायु
 और दीर्घायु की पूर्व कथित लग्न आदि राशि की दशा से विचार करो। ७॥ जहाँ अल्पायु योग
 है वहाँ त्रिकोण के पञ्चम भाव तक (अर्थात् लग्न पञ्चम के मध्य के भाव तक) की राशि से
 विचारे। उस अल्पायु वाले जातक की आयु वही तक है। ८॥ उससे आगे यदि मध्यायु प्राप्त
 हो तो पञ्चमभाव से नवमभाव तक विचार करो। क्योंकि—उसकी आयु यही तक है। इसमें कोई
 शक नहीं है। ९॥ दीर्घायु योग प्राप्त होने पर त्रिकोण नवम भाव से अतः तक विचार करना।
 (अर्थात् जैसे आयु के तीन भाग कल्पना विषे वैसे ही कुण्डली में भी ३ भाग कल्पित है। यथा
 लग्न से चतुर्थ तक अल्पायु विचार पञ्चम से अष्टम तक मध्यायु विचार और नवम से द्वादश
 तक दीर्घायु का विचार करना चाहिए) अब लग्न से ६ भाव तथा सप्तम आदि ६ भाव इस
 प्रकार १२ भावों की दशाक्रम स्पष्ट करके जन्म लग्न से विचार आरम्भ करो। ११॥ जिस

जन्मकुंडली में रुद्रसूत्रक ग्रह की शुभफलरूपता नहीं मालूम हो वहा तो जातक के जीवहोन होने से यह विचार ही निष्फल है॥१२॥

अथैवरुद्रशूलातमाधुदधितिकारणे ॥ योगेस्मिन्न समुत्कर्षात्किंचिदर्शयति द्विज ॥१३॥ प्राणीरुद्रशुभे दृष्टे पूर्वोक्तफलदायक ॥ शुभयोगे न सदेहो रुद्र शूलातमाधुपि ॥१४॥ स्थित एव फल जन्म कथित कारणातरे ॥ निरुक्ते शुभसयोगे कि कीर्तयति भो द्विज ॥१५॥ पूर्वमेव फल सादो समुत्कृष्टे तदेव चेत् ॥ सुतरा तदेव वक्तव्य निर्विशक द्विजोत्तम ॥१६॥ अनेन पूर्वयोगेन फल किंचिद्वि न्यूनता ॥ अद्योतितादुक्तकालात्पूर्वपश्चान्मुतिर्यदि ॥१७॥ निरुक्तयोगश्च तदा ह्यपवाद वदाम्यहम् ॥ रवि बिहाय नितरा पापयोगो भवेद्द्विज ॥१८॥ योगोऽयं निष्कलो वाच्य पुरा ब्रह्मप्रणोदितः ॥ इदं फल न भवति योगेस्मिन्निजसत्तम ॥१९॥ नाशयोगस्य वक्तव्य फल वापि भयकरम् ॥ अपुना सप्रवक्ष्यामि गौणरुद्रस्य वै द्विज ॥२०॥

रुद्रशूल दशा पर्यन्त जीवन हो एगे जीवनस्थापन के उत्कृष्ट योग दिखाते (कहते) है॥१३॥ प्राणी रुद्रग्रह-शुभग्रह से दृष्ट होने मात्र से ही जातक का जीवन रुद्रशूलदशा पर्यन्त रहेगा। और प्राणी रुद्र ग्रह यदि शुभग्रह युक्त हो तो जातक के रुद्रशूल दशा के भोग पर्यन्त जीते रहने में कोई सन्देह ही नहीं है॥१४॥ जातक का जीवन कारणान्तर से भी स्थित रह सकता है फिर शुभ सयोग रहने पर तो कहना ही क्या है॥१५॥ हे मैत्रेय! प्रथम निश्चित, दीर्घ, मध्य आयु आदि फल यदि उत्कृष्टयोग युक्त हो तो निष्कलरूप से वही कहना॥१६॥ पहिले कहे हुए आयु के सहायक योगो में कुछ न्यूनता है। क्योंकि- पूर्वयोगानुसार उक्त अर्थात् जात हुए काल जिसका कि छोटन (जापन = जान) नहीं हुआ उगने पहिले या पीछे यदि मृत्यु संभव हो तो पूर्वोक्त योग सापवाद (निन्दित) होते है। (अथवा पूर्वोक्त योग की निष्कलता में 'अपवाद' बाधक भोग कहते है यह तात्पर्य है) सूर्य के बिना अन्य पापग्रहों से योग ही तो यह योग निष्कल होता है और इसका फल नहीं होता॥१९॥ और इसके विपरीत दुर्योग का फल भयकर होता है। अब हम मुख्य रुद्रग्रह का फल बताकर गौण रुद्र का फल कहते है॥२०॥

गुणप्रकर्षेण फल विशेषेण तवाग्रतः ॥ गौणरुद्रे महाप्राज्ञ मदारेन्दुनिरीक्षिते ॥२१॥ अभावे शुभयोगस्य पापयोगातरे तथा ॥ फल विप्रेन्द्र शूलात्तादाधुदायं भवत्यपि ॥२२॥ शुभदृष्टे वा शूलातात्परश्चाधुर्भवेदपि ॥ योगद्वय परस्वेन योजनीयं न सशयः ॥२३॥ एतद्योगद्वय किंचिन्न्यूनतायामपि द्विज ॥ नेदं फल प्रवक्तव्य मैत्रेयाभाषितं पुरा ॥२४॥ शुभदृष्टिर्भावे चैव योगे च परपूर्ववत् ॥ शुभदृष्टावसत्या च पापयोगाद्यभाषतः ॥२५॥ कृत एको हि योगश्च पूर्वयोजनमेव च ॥ अशुभयोगे शुभो दृष्टो योगोऽयमपरो द्विज ॥२६॥ पापयोगैरभावे च शुभदृष्टौ च सपुते ॥ कैमुतिकाल्यन्यायेन सिद्धो योगस्तृतीयकः ॥२७॥ पुरा प्रोवाच पञ्चभुस्तथापि कथयाम्यहम् ॥ द्वितीययोजनायां तु शुभदृष्टिसमन्विते ॥२८॥ पापयोगस्य चाभावे योगः प्रथम उच्यते ॥ पापयोगो महाप्राज्ञ शुभदृष्टे प्रभावके ॥२९॥

‘गौण रुद्रग्रह’ गौण होने पर भी योगरूप गुण के बल से विशेष कथन योग्य है। हे मैत्रेय! गौणरुद्रग्रह शनि, मंगल, चन्द्रमा से दृष्ट हो और शुभ ग्रह के योग का अभाव हो एवं पापग्रहों के मध्य में हो तो भी वह जातक की आयु शूलदशा तक करता है (अतः जातक के लिए तो वही श्रेष्ठ है) और यदि इसके विपरीत शुभयोग हो तो ‘शूल’-दशा के बाद भी उसकी आयु हो सकती है। इस उपर्युक्त आयु के साधक, बाधक दोनों प्रकार के योग से आयु का विचार करो॥२३॥ (यहां गौणरुद्रग्रह के शुभाशुभ दृष्टि तथा योग के ३ भेद कहते हैं)

१- शुभग्रहकी दृष्टि हो और ग्रहयोग पूर्वोक्तके समान हो। तथा शुभ दृष्टि नहीं हो और पापग्रह योग भी नहीं हो। यह एक योगका कथन हुआ, इसमें पूर्व के कहे योग भी युक्त है।

२- अशुभग्रह का योग और शुभ दृष्टि हो यह दूसरा योग है।

३- पापयोग न हो और शुभदृष्टि हो। यह तीसरा योग है। (इसके फल की श्रेष्ठता का तो कहना ही क्या है) इस योग का फल कैमुतिक न्याय से ही सिद्ध है। अर्थात् अतिश्रेष्ठ है॥२७॥ पहिले जो शम्भु ने कहा सो सुनाते हैं। इस दूसरी योजना में पापग्रह योगाभाव और शुभदृष्टि युक्त होता यह प्रथम योग है। पापयोग और शुभदृष्टि यह द्वितीय योग है॥२९॥

द्वितीययोगपक्षेऽहं पूर्वस्मिन् द्विजसत्तम ॥ पापयोगस्य चाभावे चाशुभदृष्टिविवर्जितः ॥३०॥
कैमुतिकाल्पन्यायेन तृतीयो योग उच्यते ॥ अथैव प्राणिरुद्रस्य ह्युक्ता पञ्चातरे कथा ॥३१॥
तत्रैव प्रथमे योगे शुभदृष्टिविवर्जिते ॥ शुभयोगादियोगश्च द्वितीयोक्तेन योगकृत् ॥३२॥
तृतीयेन द्वयस्यापि योगभग्न करोत्यपि ॥ अधुनोक्तस्याभावे मदादिदृष्टिमात्रतः ॥३३॥ एव
स्थिते सुयोगश्च निश्चक प्रतिपद्यते ॥ अशुभे क्षेत्रेर्दृष्टे पापयोग इति स्थितिः ॥३४॥
शुभयोगविहीने च मन्दारेन्दुनिरीक्षिते ॥ तदायुः परतो विप्रः समानादिति योजयेत् ॥३५॥
प्रथमद्वितीये सतः पापयोगैरभावतः ॥ योगो भग्नपक्षे च तृतीयोक्तमिदं वदेत् ॥३६॥
पापदृष्टिमात्रमेव योगनिर्वाहकारणे ॥ अपवादविहीनेन इत्येवोक्तं तृतीयवे ॥३७॥ रुद्राम्या
प्राणिगौणाम्या ताम्यामाश्रितमेव च ॥ गुणविशेष आयुरतः वक्ष्यामीह महामते ॥३८॥

इस द्वितीय योग में तो प्रथम योजनावाले योग से समानता है और पापयोग न हो और अशुभदृष्टि भी नहीं हो तो अतिश्रेष्ठ। अब प्राणी (बली) रुद्र के योग के विषय में भिन्न विचार है। पूर्व ही कह चुके हैं कि-प्रथम योग में शुभदृष्टिरहित हो। और द्वितीययोग में शुभयोग दृष्टि हो॥३२॥ और तीसरे योग में शुभ दृष्टि और शुभयोग दोनों का अभाव कहा है, तथा योगभग्न का प्रकार वही है। अब यह कहते हैं कि-उक्त तीनों प्रकार के योगों के अभाव में शनि, राहु की दृष्टिमात्र से ही योग होता है॥३३॥ इस केवल एक की दृष्टिमात्र से भी सुयोग होता है। और अनेक पापग्रहों की दृष्टि से तो पापयोग होगा, ऐसा समझना॥३४॥ प्राणी रुद्रग्रह शुभदृष्टिहीन हो, चन्द्र, मंगल, शनि से दृष्ट हो तो अपने मान से भी परे आयु जाने। यह पहिले कहा हुआ जानना चाहिए॥३५॥ प्रथम द्वितीय योग में शुभयोग हो और पापयोग न हो। और तीसरे योग में योगभग्न की अपक्षा आदि कहा है। तृतीययोग में एक ग्रह पापग्रह का होने से योग का निर्वाह होता है और अपवाद नहीं होना चाहिए॥३७॥ बली तथा निर्बल, अतएव मुख्य और गौण रुद्रग्रह के योगविशेष के आश्रित ही आयु है, यह अब कहते हैं॥३८॥

गौणरुद्रे शुभैर्योगे शुभदृष्टिसमन्विते ॥ रुद्रशूलातमापुश्च योजनीय द्विजोत्तम ॥३९॥
पूर्वोक्तप्राणिरुद्रेण द्वियोगप्राणकेन च ॥ द्वाभ्यां शूलातमापुश्च तत्रापे कथितं मया ॥४०॥
अपुना सप्रवक्ष्यामि द्वयोर्निर्वाहकारणे ॥ तयो रूप भिन्नमिन्नं शृणुष्व मुनिपुंगव ॥४१॥
प्राणिरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं द्विजसत्तम ॥ शुभयोगेति का वार्ता शूलातापुर्विनिश्चितम् ॥४२॥
गौणरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं क्लेशदायकः ॥ रोगशोकभयं कर्ता मृत्युं नैव करोति चा ॥४३॥
शुभयोगे महाप्राज्ञ योगोऽयं बलवत्तरः ॥ तस्य शूलातमापुश्च निर्विनाशकं न सद्यः ॥४४॥ उभौ
रुद्रे शुभप्रहेयैर्गदृष्टौ द्वयोरपि ॥ शुभप्रहेयं क्लेशञ्च रुद्रशूलातमापुश्चि ॥४५॥ प्राणी
चाप्राणिरुद्राभ्यां कृतयोगद्वयेन च ॥ तयोर्वा सप्रवक्ष्यामि तत्रापे द्विजसत्तम ॥४६॥
मार्तंडरहिते चान्य पापयोगकृते द्विज ॥ योगद्वयं न भवति पापयुक्तं द्वयोरपि ॥४७॥

यदि गौण रुद्रग्रह शुभयुक्त, शुभदृष्ट हो तो रुद्रशूल दशा तक जातक की आयु है। यह समझना चाहिए॥३९॥ पूर्वोक्त प्राणीरुद्रग्रह के सम्बन्ध में प्रथम निश्चित कर दिया है कि-प्रथम कहे हुए दो योगों में भी आयु शूलदशापर्यन्त जानना॥४०॥ अब प्राणिरुद्र में आयु के निर्वाह के कारण आदि के दो योगों में कहते हैं तो अलग २ सुनिये॥४१॥ प्राणिरुद्रग्रह शुभदृष्टि युक्त हो, यह एक योग है। इस शुभ योग में शुभपद यही है कि-जातक की आयु शूल दशा तक निर्वाह है॥४२॥ गौण रुद्र यदि केवल शुभदृष्ट हो तो क्लेशदायक होता है रोग शोक, भयमात्र करता है, मृत्यु नहीं होती॥४३॥ हे महाभाग! शुभग्रह का योग हो तो यह योग अतिशयोक्ती होता है। उस जातक की आयु के शूल दशा तक होने में कोई सन्देह नहीं रहता॥४४॥ दोनों रुद्रग्रह यदि शुभग्रहों से युक्त हो तो आयु तो शूल पर्यन्त है, परन्तु कष्ट सहित हो॥४५॥ हे द्विजयेष्ठ! प्राणी रुद्र और गौण रुद्र इन दोनों से प्रभावकारी योग होते हैं, तो कहते हैं॥४६॥ दोनों ही रुद्रग्रहों से सूर्ययोगरहित अन्य पापग्रहों से योग हो तो व योग विशेष प्रभावकारी नहीं होते॥४७॥

शुभयोग शुभैर्दृष्टैरुभयेऽपि विना रश्मिम् ॥ पापयोगकृते विप्रभययोगो विनश्यति ॥४८॥
शुभयोग शुभैर्दृष्टैरभावे न भवत्यपि ॥ यत्रापि कथयान्कुर्वन्तव्यं द्विजसत्तम ॥४९॥ उभयो
पापयोगे च कश्चिद्विद्वेदोऽपि भवेत् ॥ क्लेशः शोकः क्रूरदूतितिर्यग्पर्यन्तः द्विजः ॥५०॥
शुभदृष्टैरभावे च शुभयोगविवर्जिते ॥ पापयोगप्रभावेण मरणं सारणं दृशा ॥५१॥
शुभयोगदृष्टप्रभावे पापयोगे द्विजोत्तम ॥ पुष्टदशाचलेनैव संप्राप्तादो न सद्यः ॥५२॥
अस्मिन्प्रकरणे चैवमुपपत्तौ द्विजोत्तम ॥ शुभवर्गो पापवर्गो तत्रापे कथयाम्यहम् ॥५३॥
अकारमद्वफणितं क्रमात्क्रूरा अथाश्वम् ॥ चन्द्रोपि क्रूर एवात्र बबचिदगारकाश्वपत् ॥५४॥ गुरु
शित्ति कविज्ञाश्च मयापूर्वं शुभग्रहा ॥ क्रूरखेटा महाप्राज्ञ चाकांक्षा उत्तरोत्तरम् ॥५५॥ क्रूर
क्रूरखेटाश्च क्रूराणि ह्यपपादकम् ॥ शुभलेनगतं क्रूरं क्रूरा ह्यपशम्यति ॥५६॥

दोनों ही रुद्रों में शुभदृष्टि और शुभयोग हो पर सूर्य में न हो तो पाप (मिष्ट) योग का भय नहीं रहता॥४८॥ शुभग्रह का योग तो हो, पर शुभदृष्टि न हो तो जो दीपादि आयु प्राप्त हुई है, वही आयु कहना चाहिए॥४९॥ दोनों रुद्रग्रहों से यदि पापयोग हो तो शोक, क्लेश,

राजभय तथा पर्यटन (मुसाफरी) होता है॥५०॥ शुभदृष्टि और शुभयोग न हो तो पापयोग और दृष्टि के प्रभाव से मरण निश्चित है ॥५१॥ शुभयोग और दृष्टि न हो तथा पापयोग दृष्टि हो तो बलवान् शुभदशा रहगी तब तक ही सुख जानना॥५२॥ हे द्विजोत्तम! इस रत्नप्रकरण में शुभाशुभफल की उत्पत्ति कर्ता जो योग है, उनसे सहायक शुभवर्ग और पापवर्ग (वर्ग-समूह) कहते हैं॥५३॥ प्रथम पापग्रहों का वर्ग (समूह) कहते हैं। सूर्य, मंगल, शनि, राहु, अपने आशयानुसार बुरे हैं और चन्द्रमा भी मंगल के योग से बुरे हैं॥५४॥ (शुभवर्ग) गुरु, शुक्र, बुध तथा केतु पूर्वोक्तानुसार शुभ हैं। और पापग्रह जो अभी बहे हैं वे सूर्य से उत्तरोत्तर बलहीन हैं॥५५॥ क्रूरग्रह तथा क्रूरराशि में जो ग्रह हो वे भी क्रूर हैं। किन्तु यही क्रूरग्रह जब शुभराशि तथा भाव में हो तो इनकी क्रूरता दूर हो जाती है। यह अपवाद है॥५६॥

गुर्वादय शुभग्रहा यथापूर्वं बुध कवि ॥ कवित् केतुर्विज्ञेय केतुतो वाक्पतिर्द्विज ॥५७॥ क्रमेणैव विजानीपाच्छुभखेटोत्तरोत्तरम् ॥ यथापूर्वं क्रूरग्रहा क्रूराश्रयसमागते ॥५८॥ एव क्रौर्य समापन्न क्रौर्यं तु शोभनाश्रय ॥ एव गुर्वाविसौम्याश्च शुभा श्रेयातिशोभना ॥५९॥ क्रूराश्रये सौम्यखेटा सौम्यता नश्यते क्वचित् ॥ एवमेवापरामुक्ति कथयामि द्विजोत्तम ॥६०॥ प्रत्येक शुभराशिस्य उच्चस्थो वा बुध शुभ ॥ गुरुशुक्रौ च सौम्यस्थौ ततोऽन्ये च शुभा स्मृता ॥६१॥ पूर्वस्मिन्वापयोगेन योगभगद्वये द्विज ॥ निरूपित तथापि च निर्विशक न सशय ॥६२॥ योगद्वयेपि भगार्थे पापदृष्टौ विशेषकम् ॥ न दर्शयति कदापि स्यात्तत्रापि कथयामि वै ॥६३॥ शुभग्रहाणा चाभावे मदारेन्दुनिरोक्षिते ॥ पापयोगे शुभेर्दृष्टे परतश्चायुषि द्विज ॥६४॥ प्राणिरुद्वेप्यगौणेन शुभयोगविवर्जिते ॥ पापयोगेऽप्यवा दृष्टे तथा शुभनिरोक्षिते ॥६५॥

बुध शुक्र, केतु, गुरु ये चार ग्रह भी उत्तरोत्तर बलवान् शुभ हैं॥५७॥ पूर्वोक्त शुभग्रह उत्तरोत्तर बलवान् हैं। और क्रूर ग्रह सब यथापूर्व बलवान् हैं। शुभग्रह भी पापराशि में हो तो बुरे हैं॥५८॥ इस प्रकार क्रूरता जाने यदि सौम्यराशि और शुभभाव में बुरेग्रह हो तो शुभ होते हैं। और गुरु आदि सौम्यग्रह शुभ हैं तथा शुभाश्रयी हो तो अति शुभ हैं॥५९॥ सौम्य ग्रह यदि क्रूराश्रयी हो तो वही २ दनकी सौम्यता नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार और नियम कहते हैं॥६०॥ अब प्रत्येक ग्रह के लिए कहते हैं। बुध शुभराशि में या उच्च का हो तो शुभ है। तथा गुरु और शुक्र भी सौम्यराशि में शुभ हैं। इसी प्रकार अन्य ग्रह भी उच्च या शुभराशि में शुभ होते हैं॥६१॥ और पहिले जो हमने पापग्रह के योग में योगभग के दो योग ग्रह हैं, उनमें कोई शका नहीं है॥६२॥ योगभगवरी दो योग में पापदृष्टि रहते भी जो योगभग का फल नहीं होता, उसका कारण कहते हैं॥६३॥ शुभग्रहों के योग का अभाव हो चन्द्र, मंगल शनि की दृष्टि हो तथा शुभग्रहों की भी दृष्टि हो तो प्राप्त आयु अल्प मध्य दीर्घ, योग कुछ और आगे तक जानना॥६४॥ केवल प्राणीरुद्रग्रह शुभयोगरहित हो और पापग्रह का योग अथवा दृष्टि हो एव शुभदृष्टि भी हो॥६५॥

ध्यापारतानुविज्ञेया पूर्ववद्विजस्तम ॥ अत्रोपपदपापाच्च राहोरप्युपतक्षणम् ॥६६॥ एव सूर्यातिरिक्तोपि पापयोगस्तथैव च ॥ तस्यै बेहानुबादाच्च राहोश्चिदुपबृहणात् ॥६७॥

परिग्रहदर्शनाच्च परतो रुद्रपाश्यात् ॥ शुभस्थाने आपुरत. शूलत्रयमलघनात् ॥६८॥ न तु
शूलदशायां च आपुरंत द्विजोत्तम ॥ एव शूले चेतदतशूलरीत्येति वार्धके ॥६९॥
पूर्वोक्तपापयोगेन शुभयोगेन दृष्टितः ॥ कृतयोगद्वयस्यापि भङ्गाय च वदाम्यहम् ॥७०॥
शुभयोगेन वे विप्र पापयोगोऽतिदुर्बलः ॥ शुभदृष्टिकृतो योगः पापदृष्टेः कथं क्षम ॥७१॥ न
भजनसमर्थश्च कोटियत्ने कृते द्विज ॥ शुभकृद्योगभगार्थं पापयोगमपेक्षितम् ॥७२॥ शुभयोगे
दृष्टिकृते पापयोगेपि भङ्गकः ॥ शुभदृष्टिकृते योग पापयोगो विनश्यति ॥७३॥
यदायुर्वार्यामध्यस्य वेदितव्य द्विजोत्तम ॥ पापमात्रस्य शूलत्वे प्रथमार्थं मृति वदेत् ॥७४॥ द्वौ
रुद्रौ पूर्वं वश्येऽह यदि चैकत्र सन्स्थिते ॥ मित्रमाध्यमशूलसं शुभमात्रेऽन्तिमे मृतिः ॥७५॥

तो इसका विचार पूर्व कहे अनुसार जानना ॥ और पहिले जो उपदेश से फल कहा गया है,
उस विचार में और ग्रहों के समान ही राहु को भी समझना चाहिए ॥६६॥ राहु यद्यपि
सूर्यातिरिक्त ग्रह है, तथापि अन्य ग्रहों के साथ होकर सूर्य के समान ही योग कारक है और
स्व-रूप में शिरोभाग होने से चिन्मिश्रित (चित् शक्तियुक्त) है ॥ और ग्रहण में सूर्य का भी
आच्छादक है ॥६७॥ अतः रुद्रग्रह की राशि के स्वामी से यदि सम्बन्ध हो तो अति बलवान्
होता है ॥ अतः राहु शुभस्थान में हो तो अतरदशा तक आयु जाने ॥ क्योंकि—राहुयोग होने पर
तो नौ शूलदशाओं का लपन नहीं हो सकता ॥६८॥ इसी प्रकार राहुयोग होने पर शूलदशा के
अन्त तक आयु नहीं जाती है ॥ शूलदशा में ही तत्-तत् शूलदशा के अन्तर में ही निघन
जानना ॥६९॥ पूर्वोक्त जो शुभ तथा पाप दोनों की दृष्टि अथवा योग में जो 'भगयोग' होता
है, इसके लिए अब हम कहते हैं ॥७०॥ हे भैरव ! शुभयोग से पापयोग दुर्बल हो जाता है।
क्योंकि—शुभदृष्टि की सामर्थ्य भग करने में पापदृष्टि की क्षमता नहीं है ॥७१॥ शुभदृष्टि के
योग को पापदृष्टि यदि कोटि (करोड़ों) यत्न करे तो भी शुभ दृष्टि का नाश नहीं कर
सकती ॥७२॥ शुभयोग और दृष्टि दोनों हो तो शुभदृष्टि से ही पापयोग का नाश हो जाता
है ॥७३॥ जब मध्यायु योग हो और पापग्रह मात्र का योग हो तो शूलदशा के प्रथम चरण में
ही मृत्यु होती है ॥७४॥ और प्रथम जो दो रुद्र गौन मुख्य भेद से कहे हैं, उनके विषय में अब
यह कहना है कि—वे दोनों यदि एक स्थान में हों, या मिश्रराशि में हों तो माध्य या अन्तिम
शूलराशि की दशा में मृत्यु होती है ॥७५॥

द्वयोः पापी च प्रथमे शूले मृत्युर्भवत्यपि ॥ यद्येकः पापी च द्वितीय. शुभलेखः ॥७६॥ मध्ये
शूले मृतिर्विप्र निर्विशंकं भविष्यति ॥ शुभग्रहद्वय विप्र एकत्र यदि तिष्ठति ॥७७॥ अतः शूले
मृतिर्नया शुलिना भाषित पुरा ॥ एव भेदानुभेदेन विद्यात् सर्वत्र बुद्धिमान् ॥७८॥ शूललेखे च
रुद्रौ द्वौ यदि पापीऽथवा शुभः ॥ मिश्रग्रहोऽथ वा विप्र चित्पेटनवत्तरः ॥७९॥ वीर्यापुत्रायुषिण
भङ्गाभावे द्विजोत्तम ॥ मृत्युमृतदशायां च पापयोग विना रविः ॥८०॥ क्रूराश्च पेटु क्षेत्रेषु
शुभनामाश्रयेषु च ॥ निर्वाणमितरेषां तु शूलसं निर्विशेदयम् ॥८१॥ शुमानामत्र एषे तु तथा
क्रूराश्रयेषु च ॥ तस्मिन्नातकशूलसं मृतिं कृष्यान्न सत्पापः ॥८२॥ यद्यप्राणी रुद्रयोगे
यत्किञ्चिन्मृतता द्विज ॥ तर्हि रुद्राश्रयं तज्ज त्रिघा न परतोऽपि च ॥८३॥ रुद्राश्रयेपि चायुर्दा
समाप्तिर्भवति द्रुवम् ॥ प्रायेण चित्पेटिप्र पूर्वापरप्रत्यतः ॥८४॥ यद्वाह्यप्राणिरुद्रस्य

तोमे पूर्णं भवत्यपि ॥ रद्रशूले परत्वेन आयुर्दायसमाप्तये ॥८५॥ रद्राश्रयेण प्रायेण
शूलमेकद्वयप्रयम् ॥ उल्लघनं कृतं विप्र यदि योगविशेषतः ॥८६॥

और दोनों रद्रग्रह पापी हो तो प्रथम शूलदशा में मृत्यु होती है। और दो रद्रों में एक पापी
और एक शुभ हो तो निश्रयरूप से मध्य शूलदशा में मृत्यु होती है ॥८६॥ और दोनों रद्रग्रह
शुभ हो और एक ही स्थान में हो तो अन्तिम शूलदशा में मृत्यु जानना ॥८७॥ ऐसे इसके भेद
और अनुभेद जानना ॥८८॥ शूलदशा के मारक विचार में दोनों रद्रग्रहों का योग हो तो
देखना चाहिये कि वे दोनों पाप हैं या शुभ हैं, अथवा एक पाप एक शुभ है, तो इन दोनों में
बलवान् रद्र को (प्राणी रद्र) लेना चाहिये ॥८९॥ आयुयोग में दीर्घायु प्राप्त हो और
योगभगवत्कारी योग नहीं हो, और पापयोग सूर्य के बिना हो तो शूलदशा में मृत्यु होती
है ॥९०॥ पापग्रह शुभ राशियों में हो और शुभग्रह पाप राशियों में हो तो भी शूलराशिदशा में
मृत्यु होती है ॥९१॥ पापग्रह पापराशियों में हो तो भी जातक की मृत्यु शूलदशा में होती
है ॥९२॥ यदि गौणरद्रग्रह के साथ पूर्वोक्त योग हो तो भी रद्राश्रयफल पूर्वोक्त ही है, उस फल
के तीन प्रकार नहीं होकर एक प्रकार ही है ॥९३॥ अतः हे भूतेश्वर ! रद्राश्रयी विचार में
पूर्वापर का ध्यान से विचार करके आयु समाप्ति का निर्णय करे ॥९४॥ और यदि बाल राशि
में प्राणी रद्र का पूर्ण योग हो तो शेष की शूल दशा में आयु समाप्ति (मृत्यु) होती है ॥९५॥
हे विप्र ! यदि योग के विशेष बलाबल के विचार से शूल दशा पहिली, दूसरी और तीसरी में
निर्याण (मृत्यु) कहे। और विशेष बलवान् योग में तीनों का भी उल्लघन हो सकता
है ॥९६॥

तर्हि रद्राश्रयेत्येव प्रायेणायुर्वेदं ध्रुवम् ॥ तत्राद्वयेण कथं जीवनं जातकस्य च ॥९७॥ इत्युक्ते
च प्रायेण च पूर्वं रद्राश्रयाद्विज्ञ ॥ आयुर्दायसमाप्तिश्च कष्टयोगादिकारके ॥९८॥ रद्राश्रयात्
हेत्य हि निरुक्ते चायुषि द्विज्ञ ॥ सवेद्विशेषणं किं तत्राप्रे दर्शयामि च ॥९९॥ मेघलत्रे विशेषेण
आयुर्हराश्रयातके ॥ कुष्ठरोगादि कुर्वीत पूर्णापुर्न समाप्यते ॥१००॥ इन्द्रराशौ स्थितौ रद्रौ
प्राणी गौणद्वयेऽपि वा ॥ रद्राश्रय तदन्ते वा आयुर्दाय भवत्यपि ॥१०१॥ आयुर्दाय योगभेदेन
प्रथमे मध्यमोत्तमे ॥ दर्शयामि तत्राप्रे च कथां शम्भुप्रणोदिताम् ॥१०२॥ स्वल्पमध्यमदीर्घायुर्णी
गादिकं वदेद्विज्ञ ॥ तत्रायुर्दायमत्यादि पयोक्त कथितं मया ॥१०३॥ स्वल्पायु प्रथमे शूले
मध्यमायुर्द्वितीयके ॥ दीर्घायुश्च तृतीयाते शूलान्ते निधनं भवेत् ॥१०४॥ अपुना सप्रवक्ष्यामि
तत्राप्रे द्विजनवनं ॥ मृत्युर्मुष्माथयीमृतदशाया तदशास्त्वपि ॥१०५॥ ततः फलविशेषार्थं
माहेश्वरग्रहं द्विज्ञ ॥ सक्षयति तत्राप्रे च तस्मादायुर्विनिश्चितम् ॥१०६॥ चिन्तयेत्कारके तत्रे
हृष्टमेशो महेश्वरः । अथैवाज्यप्रकारेण माहेश्वरं बदाभ्यहम् ॥१०७॥ कारके तुङ्गराशित्ये
सप्रहो बलवत्तरः ॥ रिष्करप्राधिपौ मध्ये सोऽपि माहेश्वरो ग्रहः ॥१०८॥ कारकाच्च ग्रहाणां
नायो माहेश्वरो भवेत् ॥ रिष्करप्राधिपौ विप्र बले सामान्यता यदि ॥१०९॥ इयं माहेश्वर
घातो यथा रद्रग्रहौ द्वयम् ॥ तान्या च निर्णयार्थाय प्रकारान्यं वदाम्यहम् ॥११०॥

इसलिये रद्राश्रय योग में भी बल से आयु का निर्णय करे बलाबल के अनुसार जितने वर्ष
प्राप्त हो उतनी आयु कहे ॥९७॥ इस प्रकार अब हमने रद्र ग्रह के योग से प्रायण (मृत्यु) का

विचार किया। और इसके साथ ही कष्ट रोग आदि का विचार किया। ॥८८॥ इस प्रकार द्वात्रिंश विचार है। इसमें जो विशेष विचार है, वह अब कहते हैं। ॥८९॥ मेघलग्न में विशेष करके द्वात्रिंश विचार राशि के अन्तिम शून्य दशा में मृत्यु होती है और 'पूर्वायु' योग हो भी तो पूरी आयु जीवित नहीं रहता। और कुष्ठादि रोग भी हो सकता है। ॥९०॥ प्राणी और गौणरुद्र दोनों ग्रह यदि द्विस्वभाव राशि में हों तो द्वात्रिंश सम्बन्धी प्रथम, मध्यम, उत्तम, शून्य दशा में मृत्यु होती है। ॥९१॥ अब महेश्वर के कहे हुए आयुर्दय सम्बन्धी प्रथम, मध्यम, उत्तम, शून्य दशा में मृत्यु होती है। ॥९२॥ योगानुसार अल्प, मध्य, दीर्घ, आयु का योग निर्देश करो। इसके अल्पादि भेद के योग कह चुके हैं। ॥९३॥ स्वल्पायु हो तो प्रथम शून्य दशा में, मध्यायु हो तो द्वितीय और दीर्घायु हो तो तृतीय शून्य दशा में मृत्यु होती है। ॥९४॥ (अब आगे महेश्वर ग्रह का निरूपण करते हैं) हे द्विजनन्दन ! अब आपको माहेश्वरग्रह का विचार कहते हैं, जो कि मृत्यु की आश्रीभूत मुख्य दशा और अन्तर्दशा विचार में उपयोगी है। उसके पश्चात् उसके सक्षण कहेंगे, जिनसे आयु का विचार या निर्णय कहेंगे। ॥९५॥ कारक कुण्डली में अष्टमाधीश ग्रह महेश्वर सजक होता है। अथवा दूसरी रीति से 'माहेश्वर' कहते हैं। ॥९६॥ कारक यदि उच्च राशि का हो तो द्वादश तथा अष्टमाधीश में जो ग्रह अधिक बली हो वह 'महेश्वर' होता है। ॥९८॥ और कारक से यदि बली ग्रह नहीं मिले तो, अर्थात् १२।८ भावेश बलहीन या समबली हो तो कारकेश ही 'माहेश्वर' होता है। ॥९९॥ तथा ८।१२ द्वादशेश के समबली होने पर दोनों की ही माहेश्वर राजा मानकर दो माहेश्वर हो जाते हैं। ॥१००॥

स्वकारकस्य योगश्रेद्वाहुकेतुरवोन्विता ॥ माहेश्वरो भवत्येव विकल्पेन द्विजोत्तम ॥१॥
कारकस्याष्टमे पापग्रहो माहेश्वरो भवेत् ॥ रविचन्द्री च चांद्रिश्च गुरुः शुक्रः शनिस्तमः ॥२॥
॥३॥ एवं चार्कविभागश्च राशिब्यवहारोच्चता ॥ तदयं तृतीयः खेटो रव्यादीनां महेश्वरः ॥४॥ यद्वा कारकस्यानाच्च पाष्ठाधिपतये स्थिते ॥ सोऽपि माहेश्वरो ज्ञेयो निर्विघ्नं द्विजोत्तम ॥५॥ माहेश्वरग्रहस्यापि ब्रह्मसाहित्यकेन च ॥ ततो ब्रह्मग्रहं बध्ने विशेषेण फलाय वै ॥६॥
लघ्राष्टा सप्तमाष्टापि रिपुसंघबध्नाधिपाः ॥ एतेषु बलवान्विघ्न भेदादिविषयमस्थिते ॥७॥
लघ्नसप्तमयोर्मध्ये राशयोश्च बलवान्भवेत् ॥ उच्चैरपुष्टभागाद्यन्तयोगो विद्यमानतः ॥८॥
एतद्गुणत्रयाद् युक्तः सोऽपि ब्रह्मा ग्रहः स्मृतः ॥ लघ्नस्य पुष्टभाग व यद्वत् च शून्यवादिकम् ॥९॥
सप्तमस्य पुष्टभाग पट्टकलप्रदिकं द्विज ॥ बलवान्विषयमस्योपि ब्रह्मा खेटः स उच्यते ॥१०॥

ऐसी स्थिति में उनके निर्णय के लिये अन्य प्रकार कहते हैं। आत्मकारक का योग, राहु, केतु, सूर्य को छोड़कर किसी भी ग्रह से हो तो वह भी माहेश्वर होता है। ॥१०१॥ (इस प्रकार कितने ही माहेश्वर हो सकते हैं) इनमें से कुछ की गणना तथा सक्षण कहते हैं। प्रथम-कारक से अष्टमभावस्थित ग्रह माहेश्वर होता है। दूसरा-सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन क्रम से आत्मकारक ग्रह से गणना करने पर जो छठा ग्रह है, वह भी माहेश्वर है। यह द्वितीय है। और इसी प्रकार नवमास तथा द्वादशास में भी गणना करना। अर्थात् आत्मकारक के नवमास या द्वादशास से जो छठा हो और बली हो या उच्चोदि बलयुक्त हो वह

तीसरा माहेश्वर सजक ग्रह है और सूर्यादि बाकी सभी ग्रहों का स्वामी है॥४॥ अथवा कारकस्थान (भाव) से छठे घर के स्वामी की राशि में हो, वह भी (चौथा) माहेश्वर होता है॥५॥ यह माहेश्वर ग्रह बताये गये। अब माहेश्वर के समान होने से 'ब्रह्म' नामक ग्रह भी बताया जाता है। विशेष करके फलविचार के लिये भी 'ब्रह्म' ग्रह कथन करते हैं॥६॥ (ब्रह्मग्रहलक्षण) लग्न से या सप्तमभाव से ६।८।१२ स्थानों के स्वामियों में जो बलवान् होता है। वह 'ब्रह्मा' ग्रह है। यह नियम विषम राशि के लग्न के लिये है॥७॥ लग्न, सप्तम भाव तथा इनके स्वामी में जो बलवान् हो और उज्जादि राशि में स्थित ग्रह से संयोग रहित हो। इन तीन गुणों से युक्त ग्रह भी 'ब्रह्मा' ग्रह है॥८॥ लग्न से पीछे की छ राशि, और सप्तम से पीछे की छ राशि (अर्थात् लग्न से छठे भाव तक और सप्तम से १२ भाव तक), इन दोनों भागों में जो ग्रह विषम राशि में हो और बलवान् हो वह भी 'ब्रह्मा' होता है॥९॥११०॥

ब्रह्मणा लक्षणप्राक्ता बलवान्वापि पातयोः ॥ शनिराहुरयो केतुर्यदि षष्ठो ग्रहो द्विज ॥११॥ रवादिगणनाया च शन्यादौ तृतीयो ग्रहः ॥ स्थानात्षष्ठराशिगे च षष्ठराश्यधिपोज्जवा ॥१२॥ सौमि ब्रह्मा ग्रहो ज्ञेयो निर्विशक द्विजोत्तम ॥ बहुना ब्रह्मणाक्ता को ग्रहो ग्राह्यमाणकः ॥१३॥ सदेहे निर्णय चात्र तत्रापि कथयामि च ॥ द्वित्र्यादिको ग्रहाणां च योगो ब्रह्मेति लक्षितः ॥१४॥ योगःस्वजातिर्वो ग्राह्यः कारक पाति यो ग्रहः ॥ बहुनामधिको भागः सौमि ब्रह्मा ग्रहोच्यते ॥१५॥ राहोर्ग्रहत्वयोगेन अधिकारी यदा भवेत् ॥ विपरीत विजानीपात्सर्वेषु न्यूनभागकम् ॥१६॥ इत्येकपापे पूर्वोक्त ब्रह्मणा ग्रहकारकात् ॥ रन्ध्राधीनो षष्ठस्थो वा जात्यप्राणैक्यवाक्यतः ॥१७॥ द्वौ ब्रह्मा विपरीतार्थे ह्यपवा बहुब्रह्मणा ॥ सामान्यभागातरे हि कतमो ग्राह्यमाणकः ॥१८॥ सर्वे भागसमानास्तु अप्रहात्सग्रहो बली ॥ इति न्यायेन विज्ञेय बलवान् ब्रह्मणोच्यते ॥१९॥ ब्रह्मत्वेन प्रधानेन ब्रह्मकार्यं करोत्यपि ॥ स च ब्रह्मा ग्रहो ग्राह्यः पुरा शम्भुप्रणोदितः ॥२०॥

तथा ब्रह्मा के लक्षण से युक्त और अनुपात से जो बली हो। शनि, राहु अथवा केतु को भी गणना करके जो छठा हो या छठे का स्वामी हो वह भी 'ब्रह्मा' होता है। अनेक ग्रह 'ब्रह्म' लक्षण युक्त हो तो कौनसा ग्रह लेना चाहिये॥११३॥ इस सदेह में निर्णय कहते हैं। २-३ ग्रह ब्रह्म लक्षण से युक्त हो तो जो आत्मकारक समान जातीय हो अथवा सब ब्रह्मलक्षण ग्रहों में अधिक अशवाला हो॥११५॥ राहु के ब्रह्मत्व लक्षण-सम्पन्न होने पर (अनेकों में अशाधिक्य निर्णय स्थल में, वक्री होने से कम अश ही अधिक जानना) सब ग्रहों (ब्रह्मलक्षणसम्पन्न ग्रहों) से यदि कम अश हो तो राहु भी ब्रह्मा होता है॥११६॥ इस प्रकार ग्रहों में तो आत्मकारक से तथा अष्टमाधीश या अष्टमभावस्थ, अथवा पूर्वोक्त सजातीयता या बलाधिक्य से 'ब्रह्मा' का निर्णय करना॥११७॥ दो अथवा अनेक ब्रह्मा प्राप्त हो तो जो अधिक अशवाला हो वह ब्रह्मा॥११८॥ और अश भी समान हो तो "अप्रहात् सग्रहो ज्यामान् सग्रहादधिकग्रहः" इस नियम से 'ब्रह्मा' का निर्णय करना चाहिये॥ ब्रह्मस्वरूप होने से प्रधान है और ब्रह्मशक्ति के समान कार्यकारी होने से इस ग्रह को ब्रह्मा कहा गया है॥१२०॥

अधुना सप्रवक्ष्यामि ब्रह्माहेश्वरौ ग्रहौ ॥ विशेषेण फल ब्रूयात्तवाप्रे द्विजनन्दन ॥२१॥
 ब्रह्मपहाश्रितेभ्यः दशादि परिचितयेत् ॥ माहेश्वरर्क्षपर्यन्तं जातकस्यापुपि द्विज ॥२२॥
 तत्तद्वाशिन्त्रिकोणेषु राशिरतर्गते मृति ॥ चरश्च स्थिरपर्यन्तं दशाया चित्पेक्षिद्विज ॥२३॥ तथा
 महादशाया च आयुर्दाय विलोकयेत् ॥ विशोत्तर्पादिकं चैव यथान्यायेषु योजयेत् ॥२४॥
 माहेश्वरश्च यो राशिरष्टमेशाश्रयी द्विज ॥ तत्तद्वाशिन्त्रिकोणेषु राशावतर्गते मृति ॥२५॥
 अथाब्द इति निर्देशात्तत्तद्वाशिदशाक्रमः ॥ अब्दो द्वादशाघा भागे अतर्कैकराशि च ॥२६॥
 एकैकाब्दातरदशा विज्ञेया गणितागमे ॥ द्वादशात्ये तयाधिरूपे भागे सूर्येण दापयेत् ॥२७॥
 प्राप्तैतरदशा ज्ञेया न्यूनाधिक्यं न जायते ॥ धन्वाना द्वादशाधिक्ये भानुराश्वतर दशा ॥२८॥
 दशाब्दे द्वादश न्यून यस्मिन् राशौ दशा द्विज ॥ भागद्वादशमस्ये च समास तदनन्तरम् ॥२९॥
 महादशाक्रमेणैव चालनीयेति नापितम् ॥ अर्कभागेतरदशानयनं द्विजसत्तम ॥३०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे ब्रह्माहेश्वरब्रह्मपहलक्षणकथन
 नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

हे द्विजनन्दन ! हमने वे 'ब्रह्मा' और 'महेश्वर' नामक ग्रह कहे। अब इनका फल कहते हैं ॥२१॥ ब्रह्म ग्रह जिस राशि में हो उसके स्वामी की दशा का विचार करो। माहेश्वर राशि की दशा तक जातक का जीवन जानना ॥२२॥ राशिदशा में तत्तत् राशि के त्रिकोण राशि की अन्तर्दशा में मृत्यु कहना। चरराशि का जन्म हो तो स्थिर राशि तक जीवन है ॥२३॥ ग्रहदशाओं में, महादशा में आयु के विचार करने के लिये विशोत्तरी आदि दशाओं में विचार करना चाहिये ॥२४॥ अष्टमेशस्थित राशि की दशा में—माहेश्वर के अन्तर में या उससे त्रिकोण राशि दशा के अन्तर में 'मृत्यु' कहना ॥२५॥ इस ब्रह्म का वर्ष देने के लिये "अथाब्दः" इस वचन के अनुसार जो राशि दशा है, उसमें १२ का भाग देने से अर्थात् बारह भाग करने से १-१ भाग की १-१ राशि जानना ॥२६॥ और एक एक राशि का १-१ वर्ष जानना। इस प्रकार १-१ वर्ष की अन्तरदशा प्राप्त होगी। १२ से अधिक या कम होने पर १२ का भाग देना ॥२७॥ जो वर्ष प्राप्त हो उसमें मृत्यु जानना, उसमें न्यूनाधिक्य नहीं होता। यदि वर्ष १२ से अधिक हो तो सूर्य राशि के अन्तर में मृत्यु कहना ॥२८॥ अपवा दशावर्षों में १२ कम कर देना। जो शेष रहे उस राशि की दशा जाने। १२ भाग में भीतर ही दशा होती है ॥२९॥ महादशा के क्रम से ही आगे भी विचार करना ॥ और १२ भाग के अनुसार अन्तरदशा का विचार करना। (सम्भवतः यहाँ ग्रन्थ का कुछ भाग छूट गया है) ॥३०॥ ग्रहलक्षण समाप्त ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहो० भा० पूर्वखण्डे भावप्रवाशिकाया खड्ग, माहेश्वर,
 ब्रह्मपहलक्षण नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

अथ पित्रादिनिर्याणमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि पित्रादेश्च द्विजोत्तम ॥ योग निर्याणका स्थ्यात तथा शम्भुप्रणोदितम् ॥१॥
लघुसप्तमयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान्द्विज ॥ तस्य राशे समारम्भ्य क्रमेण पूर्ववद्विज ॥२॥
प्रवर्तकदशारीत्या रुद्रशूलदशातरे ॥ भविष्यति पितुर्मृत्युर्निर्विशकद्विजोत्तम ॥३॥

पित्रादिनिर्याण

हे द्विजोत्तम! अब हम पित्रादिनिर्याण मुने अनुसार कहते हैं ॥१॥ लघु तथा सप्तम से जो राशि बलवान् हो, उस राशि से विचार करके पितृ स्थान दशम के प्रवर्तक ग्रह से रुद्रशूल दशा में पितृमृत्यु होती है ॥२॥३॥

अथमातुर्निर्याणम्-लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली राशि चतुर्थक ॥ तस्या शूलदशाया च मातुर्मृत्युर्न सशय ॥४॥

मातृनिर्याण-लघु या सप्तमभाव में जो इन भावों की बलवान् राशि हो उससे चतुर्थ भाव की रुद्रशूल दशा में माता की मृत्यु होती है ॥४॥

भ्रातृनिर्याणम्-लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली वीक्षेत्तृतीयकम् ॥ तस्या शूलदशाया च भ्रातृनिर्याणमेव च ॥५॥

भ्रातृ निर्याण-लघु से या सप्तम से देखना इनमें जो बली हो और तीसरे भाव को देखता हो उसकी शूल दशा में छोटे भ्राता का निर्याण होता है ॥५॥

भगिनीभगिनीपुत्रनिर्याणमाह-लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि राशिपचमके बली ॥ तस्या शूलदशाया च भगिनीपुत्रयोर्मृति ॥६॥

भगिनी तथा भगिनेय निर्याण-लघु से या सप्तम से पचमभाव में से जो बलवान् हो उसकी शूलदशा में भगिनी तथा भगिनेय की मृत्यु होती है ॥६॥

ज्येष्ठभ्रातृनिर्याणम्-लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि एकादशे बली द्विज ॥ तस्या शूलदशाया च निर्याण ह्यप्रजस्य च ॥७॥ लघ्नाद्वा सप्तमाद्वापि नवराशिर्वली द्विज ॥ निर्विशङ्क भवेत्तस्य शम्भुना कथित पुरा ॥८॥

ज्येष्ठभ्रातृनिर्याण-लघु से या सप्तम से एकादश स्थान में जो बलवान् हो उसकी शूलदशा में ज्येष्ठ भ्राता का निर्याण होता है ॥७॥ लघु से या सप्तम से नवमभाव में जो बली हो उसकी शूलदशा में ज्येष्ठभ्राता की मृत्यु होती है ॥८॥

मातापित्रो कारकाभ्या चितयेत्पूर्ववद्विज ॥ तदापुर्निघ्न चापि दीर्घादीना प्रवेदत ॥९॥
मानुषार्गवयोर्मध्ये सदीर्घाधिष्यती द्विज ॥ ग्रहादित्यादिरीत्या च स सेट पितृकारक ॥१०॥
चन्द्रमालयोर्मध्ये तथैव रविशुक्रयो ॥ बलेन रहित सोऽपि पापग्रहनिरीक्षित ॥११॥

पित्रादिकानां भजते यथाक्रमं द्विजोत्तम ॥ उभयोर्वलसाम्ये च उभौ पित्रादिकारकौ ॥१२॥
द्विविधं चित्तमेतत् प्राण्यप्राणिविभेदतः ॥ पित्रादिकारकस्यैव प्राणिकलं ब्रह्मस्यहम् ॥१३॥
पित्रादिकारके विप्रशुभग्रहनिरीक्षिते ॥ मातृकारकाश्च यो मूतराशिरेतत्त्रिकोणगे ॥१४॥ दशाया
निघ्नं बाह्यं मातापिशोरय त्रयम् ॥ इति प्राणिकारकस्य तवाप्रे कथितं फलम् ॥१५॥
अप्राणिकारकस्यैव मष्टमेशो बलान्वितः ॥ तस्याथ यो मूतराशि त्रिकोणे निघ्नं भवेत् ॥१६॥

मातृकारक से माता की, पितृकारक से पिता की योगानुसार प्रथम दीर्घ मध्य अल्प आयु का विचार करके पूर्वोक्त चतुर्य और दशम भाव से इनकी आयु तथा मृत्यु का विचार करो ॥१॥ सूर्य और शुक्र मे से जो बली हो और अशो मे अधिक हो वह पितृकारक है ॥१०॥ मंगल और चन्द्रामे से तथा सूर्य शुक्रमे से जो बलवान् न हो, पापग्रहदृष्ट हो वह भी पितृ, मातृकारक होता है ॥११॥ और दोनों का समान बल हो तो दोनों ही कारक होते हैं ॥१२॥ और इससे प्राणी अप्राणी भेद से दोनों विचार करो। इन पित्रादि कारक का फल कहते हैं ॥१३॥ पित्रादि कारक के शुभग्रहदृष्ट होने से मातृकारक की आश्रयी राशि तथा उसकी त्रिकोण राशि की दशा मे माता पिता भ्राता की मृत्यु कहना। इस प्रकार बलवान् कारक का फल कहा गया ॥१५॥ तथा निर्वल कारक का अप्रमेश यदि बली हो तो तत् स्थित राशि के त्रिकोण मे निघ्न होता है ॥१६॥

यदा रश्मि रश्मिद्वयं तच्छूले निघ्नं द्विज ॥ पितृमातृकारके च शूले निघ्नमेव च ॥१७॥ यदा प्राणिकारकस्य ह्येव श्रुतातरेपि च ॥ फलं वै निर्दिशेद्विप्र पर तद्भ्रातृव्यायके ॥ अप्राणिकारकफलं निर्दिशेद्विप्रयगे द्विज ॥१८॥ तत्रान् प्रकारानित्येव चित्तमेतद्दशमबलम् ॥१९॥ अल्पाद्यायुर्वर्णके चेदायुर्दानयनं द्विज ॥ दशासवारभेदेन ह्यपुर्दायं च पूर्ववत् ॥२०॥ तत्तत्कारकमाश्रित्य राश्याहं विचिंतयेत् ॥ द्वारबाह्यादिकं सर्वं राश्याद्यं द्विजसत्तम ॥२१॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि पितुर्निघ्नहेतवे ॥ विशेषकं दर्शयति पुनरुक्तं च वै द्विज ॥२३॥ रविर्ज्येष्ठ क्रियायोगे तन्प्रादिष्कर्त्तुं स्थितौ ॥ बुधसूर्याथ यो मूतलप्रमेये दशान्तरे ॥२४॥

और यदि अप्रमेश बली हो तो उसकी शूलदशा मे निघ्न होता है ॥१७॥ अथवा पितृ मातृ कारक की दशा मे (शूलदशा मे) निघ्न होता है ॥१७॥ अथवा बलवान् कारक की शूलदशा मे मृत्यु होती है ॥१८॥ इसी रीति से रुद्र यह के समान पूर्वोक्त सभी प्रकारो से इसम भी विचार करना चाहिए ॥१९॥ अल्प मध्यादि आयु के विचार मे भी पूर्व के समान आयुयोग से आयु निश्चय करना। पश्चात् दशा की कथितरीति से दशा देखना ॥२०॥ तत्तत् भावो के विचार करने के लिए राशि आदि का निर्णय उनके स्वामी आदि का विचार जैसा प्रथम कहा है उनका विषयविशेष का विचार करना, इसी प्रकार १२ भावो का विचार करना ॥२१॥ तथा कारक विचार एवं अस्त्र लघु विचार तथा द्वार, बाह्य राशि विचार आदि पूर्ववत् इसमे भी करना ॥२२॥ अब पिता को मृत्यु का ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ विशेष विचार कहते हैं ॥२३॥ इस कार्य का कर्ता सूर्य है वह सर्वत्र स्थित हो (यह त्रिकोण स्थान मे स्थित हो)

विचार मेघ लग्न मे करना) तो बुध या सूर्य स्थित राशि की दशा मे मृत्यु होती है॥२४॥

लग्नभूतस्य मेघस्य सिंहस्यापि दशातरे ॥ दक्षव्य पितृनिधन निर्विशक द्विजोत्तम ॥२५॥ यदि लग्ने पापलेटा मेघराशौ रविस्तथा ॥ योगे मेघमहापाके वाप्यामर्तगते मृति ॥२६॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि तवापे द्विजनदन ॥ बाल्ये च पित्रोर्मरण मयोक्त च विशेषत ॥२७॥ पित्रो कारकयोर्विप्र प्राण्यप्राणिहीनोऽपि वा ॥ व्यकति पापयोगे च शुभयोगविवर्जिते ॥२८॥ दशाब्दान्त्यूनमित्येव पित्रोर्मृत्युर्यथा क्रमम् ॥ रविदृष्टाशुभ दृष्टौ नाय योगो द्विजोत्तम ॥२९॥ रव्यारूढविलम्बेस्मिन्पित्रोर्भाव विचारयेत् ॥ तद्दशाया फल वाच्य पित्रोर्दुःख सुखादिकम् ॥३०॥

तथा लग्न मेघ मे लग्न की राशि मेघ की सिंह की दशा म पिता की मृत्यु कहनी चाहिए॥२५॥ यदि लग्न मे पापग्रह और मेघराशि म सूर्य हो इस योग मे मघराशि की महादशा मे और के दराशि के अन्तर मे पिता की मृत्यु कहना॥२६॥ अब हम बाल्यावस्था म जिन योगा से पितृमरण होता है वे योग कहते है॥ मातृकारक तथा पितृकारक का निर्णय करके प्राणीरूढ़ तथा अप्राणी-रूढ़ का निर्णय करे और योगा का विचार करे यदि सूर्यरहित पापग्रहो का योग हो और शुभग्रहो से द्वाग नही हो ता प्रथम शून दशा म ही माता तथा पिता की मृत्यु जानना॥२८॥ सूर्य दृष्टि युक्त अशुभ दृष्टि हो ता यह योग नही समझना ॥२९॥ इसी प्रकार सूर्य के आरूढ़ लग्न मे भी माता पिता की मृत्यु का विचार करा॥ और आरूढ़ लग्न की दशा तथा आरूढ़ लग्न म वसन्त भावा म माता पिता के मुख दुःख आदि का भी विचार करे॥३०॥

अथ कलत्रनिधनमाह-कलत्रकारका सैटस्तदा स्त्रीराशिचितनम् ॥ तत्त्रिकोणदशाया च कलत्रनिधन भवेत् ॥३१॥

भात्यानिधन विचार-प्रथम भार्याकारक ग्रह का निर्णय करा पश्चात् उमम मज्जमभाव का विचार करे उस सप्तमभाव या सप्तमभाव म त्रिकोण राशि की दशा म मृत्यु का विचार करना॥३१॥

अथान्यनिधनमाह-तत्तत्कारकाश्रये च त्रिकोणर्षेदशातरे ॥ तेषा च मातुलादीना निधन भवति ध्रुवम् ॥३२॥ एव भावकलत्रादितद्दशारूढग्रहके ॥ चितयेदायु सामर्थ्य सर्व फलसमानकम् ॥३३॥ लग्नाच्च कारकाद्यापि तृतीये पापलेचरे ॥ मृते दृष्टेऽप्यथा विप्र दृष्ट मरणमुच्यते॥३४॥ तत्तत्कारकतदीशान्तृतीये पापयोगहृत्॥तेषा तेषा प्रवक्तव्य दृष्ट मरणमेव च॥३५॥ तत्तद्भावात्कारकेषान्तृतीये शुभदृष्टियुक्॥तेषा तेषां शुभयोगैर्मरण भवति द्विज॥३६॥ शुभाशुभद्वये योगे दृष्टौ नापि तृतीये ॥ शुभाशुभात्मक विप्र मरण भवति ध्रुवम् ॥३७॥

मातुल आदि की मृत्यु का विचार-जिसक निधन का विचार करना हा उमम वारक का

राशि अथवा त्रिकोण राशि की दशा या अन्तरसे उनके निधन का निर्देश करो॥३२॥ इसी प्रकार भार्या आदि के भाव से तथा उन भावों के आरूढ लग्न से प्रथम आयु अत्यादि का निर्णय करो। पश्चात् फलाफल तथा निधन का विचार करो॥ लग्न से या कारक (आत्मकारक) से तीसरे भाव में पापग्रह हो तो कष्ट में मृत्यु होती है॥३४॥ उस २ सम्बन्धी कारक से या कारकेश से तृतीयभाव में यदि पापयोग हो तो उन २ सम्बन्धी का कष्टकारी निधन कहे॥३५॥ तथा यदि उस भाव का कारकेश से तृतीय भाव पर यदि शुभदृष्टि हो तो उन २ सम्बन्धियों का मरण शुभयोग से होता है॥३६॥ यदि शुभ या अशुभ कोई भी दृष्टि नहीं हो तो साधारण रूप से मृत्यु जाने॥३७॥

अथ मरणनिमित्तान्याह

तृतीये भानुना दृष्टे तथा युक्ते बलाहके ॥ राजहेतोश्च मरण निर्विशक द्विजोत्तम ॥३८॥
तृतीयचन्द्रेण युते पष्ठे वा पश्यतो मृति ॥ तृतीयशनिराहुभ्या दृष्टे वापि युतेय वा ॥३९॥
वियार्तिमरण वाध्य जलाद्वा वद्विपीडमात् ॥ यताहुज्वात्प्रपतन बधनाद् वा मृतिर्भवेत् ॥४०॥
तृतीयेचन्द्रमादी चपष्ठे वापि युते द्विज ॥ रुमिकुण्डादिना सत्यमरण च विनिर्दिशत् ॥४१॥ तृतीये
गुरुणा दृष्टे युक्ते शोकादिना मृति ॥ तृतीये भृगुपुण्ड्र दृष्टे मेहरोगेण वै मृति ॥४२॥ बहुयुक्ते तृतीये
च बहुरोगयुता मृति ॥ तृतीयकेतु सत्संज्ञे योगे दृष्टि युतेय वा ॥४३॥ तथैव चन्द्रयोगे च तत्तद्भोगे
वै मृति ॥ अनेन योगभावेन तस्य मृत्यु मुनिञ्चित ॥४४॥

मरण निमित्त

तृतीयभाव यदि बलवान् सूर्य से दृष्ट हो तो मृत्यु में कारण राजसम्बन्धी होता है॥३८॥ इसी प्रकार तीसराभाव चन्द्रमा से युत या दृष्ट अथवा पष्ठभाव में चन्द्रमा हो तो राजनिमित्त ही मृत्यु जानना॥३९॥ तृतीयभाव शनि राहु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो विष से या अग्नि, जल से मृत्यु होती है। अथवा ऊँचे से गिरकर या गढ़े में गिरकर या फाँसी से मृत्यु होती है॥४०॥ तृतीय भाव में चन्द्रमा तथा मान्दी हो अथवा पष्ठभाव में हो तो गलितकुष्ठ आदि या व्याघ्र आदि से मृत्यु हो॥४१॥ तृतीयभाव गुरु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो चिन्ता आदि से तथा शुक्रयुक्त हो तो प्रमह रोग से मृत्यु होती है॥४२॥ यदि अनेक ग्रह युक्त दृष्ट हो तो अनेक रोगों से मृत्यु होती है॥४३॥ तृतीय भाव सौम्यहोसे युक्त दृष्ट हो अथवा चन्द्रमा से युत दृष्ट हो तो उक्त तत् २ रोगों से मृत्यु होती है॥४४॥

अथ निधनदेशभेदमाह

तृतीये शुभयोगेन शुभदेशे मृतिर्भवेत् ॥ पापेन शोकटे देशे मिश्रे मिषस्यते मृति ॥४५॥ तृतीये
गुरुशुक्राभ्या योगे ज्ञानेन वै मृति ॥ गुरुशुक्रातिरिक्तान्ययोगे तिथिलता मृती ॥४६॥ मिश्रे
मित्रा मृतिरिति एव कर्माणि विप्र भी ॥ कर्मभावे विशेषेण फलदाता द्विजोत्तम ॥४७॥
लग्नादीना च भावाना पूर्वार्द्धे द्वादशादिकम् ॥ परार्द्धे स्थितमभ्यादि बोधितेपि न सशय ॥४८॥

लग्नादि यस्य मध्ये तु शुभग्रहनिरीक्षितम् ॥ नामयोगं विजानीयात्पुरा संभुप्रणोदितम् ॥५०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे निधनकथन नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥२३॥

निधन देशभेद

तृतीयभाव शुभग्रह युक्त हो तो शुभदेश में मृत्यु होती है। पापग्रह युक्त हो तो दुष्ट देश में। तथा दोनों प्रकार के ग्रह हो तो मिश्र देश (अच्छे बुरे मिश्रित देश) में मृत्यु होती है॥४५॥ तृतीयभाव में गुरु या शुक्र का योग हो तो ज्ञानावस्था में, इनसे अन्य शुभग्रह योग हो तो शरीर धीरे २ क्षीण होकर मृत्यु होती है॥४६॥ तथा तृतीयभाव में शुभपाप मिश्र योग हो तो मिश्रितभाव से। हे विप्र! इस प्रकार कर्मनुसार मृत्यु होती है। कर्म के ही फलदाता से सूर्यादि ग्रह है॥४७॥ लग्न से बारहवें स्थान में यदि शनि, राहु, केतु हो तो जातक को अपने माता पिता का कर्मकाण्ड करने का सुयोग नहीं प्राप्त होता॥४८॥ लग्नादि बारह भावों में पूर्वार्द्ध और पश्चार्द्ध की छः राशियाँ हैं। पूर्वार्द्ध में शन्यादि का दृष्टियोग हो तो पूर्वोक्त फल होता है। परार्द्ध में अन्य दृष्टियोग हो तो पूर्वार्द्ध का शन्यादि योग व्यर्थ होता है॥४९॥ लग्न आदि भावों में शुभग्रह की दृष्टि जिस भाव पर हो उसका नाम मृत्यु के बाद प्रसिद्ध होता है॥५०॥

इति श्री० वृ० पा० हो० शा० पू० ख० सा० निधनयोगकथन
नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥२३॥

अथ राजयोगाध्यायः

पराशर उवाच—अथातः संप्रख्यामि राजयोगादिक परम् ॥ ग्रहाणां स्थानभेदेन राशिर्दृष्टि-
शात्फलम्॥१॥ तपः स्थानाधिपो मन्त्री मन्त्राधीशो विशेषतः ॥ उभावन्योन्यसदृष्टौ जातश्रेदिह
राज्यमाप्नु ॥२॥ यय कुत्रापि समुक्तां तौ वापि समसप्तमी ॥ राजवशोऽनूचो बालो राजा
सर्वति निश्चितम् ॥३॥ बाह्वेजस्तथा माने मानेशो बाह्वे स्तितः ॥ बुद्धिधर्माधिपाम्यो तु
दृष्टश्रेदिह राज्यमाप्नु ॥४॥

राजयोगाध्याय

अब श्रेष्ठ राजयोग आदि कहते हैं। उन योगों में ग्रहों के स्थान भेद से राजा और दृष्टि द्वारा फल कहा जायगा॥१॥ सूर्यादिग्रहों में स्थान बल में एकादश स्थान का स्वामी मन्त्री होता है। और विशेष करके मन्त्राधीश (पञ्चमाधीश) मन्त्री पद में कहा जाता है। ये दोनों परस्पर दृष्टियुक्त हो तो जातक राजा होता है॥२॥ वे दोनों किसी भी श्रेष्ठस्थान में एक साथ हों, अपवा अपस में सप्तमस्थान में हों तो जातक (राजवशी हो तो) निश्चय राजा होता है॥३॥ चतुर्यस्य स्थान का स्वामी दशमभाव में, और दशमेश चतुर्यभाव में हो तथा नवम नवम के स्वामी से दृष्ट हो तो राज्यभोगी होता है॥४॥

सत्तेजसकर्मेशसंश्लेषप्रनाया यदा धर्मपसमुताश्रेत् ॥ नृपोन्तरश्रेदिह वारणादयः स्वतेजसा

व्याप्तदिगंतरालः ॥५॥ सुलकर्माधिपौ चैव मन्त्रिनाथेन संयुतौ ॥ धर्मशेनाय वा युक्तौ जातश्चेदिह राज्यभाक् ॥६॥ सुतेश्वरी धर्मपसंगुतश्चेत्लघ्वेश्वरेणापि युतो विलघ्ने ॥ सुतेऽप्य वा मानगृहेऽप्य वा स्वाव्राज्याभिषिक्तो यदि राजवंश्यः ॥७॥ धर्मस्थाने गुरुक्षेत्रे स्वगृहे मृगुसंयुते ॥ पञ्चमाधिपसंयुक्ते जातश्चेदिह राज्यभाक् ॥८॥ निशार्द्धाच्च दिनार्द्धाच्च परं सार्द्धं नाडिका ॥ शुभा तदुद्भवो राजा धनी वा तत्समोपि वा ॥९॥ चंद्रः कविं कविश्चन्द्रं पश्यत्यपि तृतीयगः ॥ शुक्राब्धे ततः शुके तृतीये वाहनार्यवान् ॥१०॥

पञ्चमेश, दशमेश, तृतीयेश और लग्नेश ये सब यदि नवमेश से युक्त हो तो जातक यदि राज्यवश में हो तो तेजस्वी, यशस्वी तथा हाथी आदि युक्त राजा होता है ॥५॥ सुख (४) कर्म (१०) के स्वामी यदि पञ्चमेश से युक्त हो अथवा नवमेश से युक्त हो तो जातक राज्यभोगी होता है ॥६॥ पञ्चमेश यदि लग्नेश और नवमेश से युक्त हो और लग्न में स्थित हो या चतुर्थ अथवा दशम में हो तो राजा होता है ॥७॥ नवमभाव में गुरु की राशि हो और गुरु स्वगृही तथा शुक्रयुक्त हो एवं पञ्चमेश से युक्त हो तो राजा होता है ॥८॥ दिनार्द्ध और रात्र्यर्द्ध से २॥ घड़ी (१ घण्टा) के भीतर जिसका जन्म हो वह राजा या धनी होता है ॥९॥ तृतीयभाव में स्थित चन्द्रमा या शुक्र परस्पर देखते हो। अथवा शुक्र से चन्द्रमा तीसरे या चन्द्रमास से शुक्र तीसरे हो तो जातक धन वाहन युक्त होता है ॥१०॥

अथ द्वादशयोगमाह

लग्नवित्तौ स्वर्दुश्चिख्यौ त्रितुर्गो तुर्यपंचमौ ॥ द्विपात्यजौ षष्ठमारौ स्त्रीरन्ध्री मृतिभाग्यौ ॥११॥ धर्मकर्मी खलामी च रिण्णलामी तनुव्यपी ॥ पुण्यकला लाभयोगाद्य राजमृत्यु चमूपकम् ॥१२॥ आमात्यं दारुणं कर्म राजयोग प्रियामृतिम् ॥ भाग्यव्ययं राजयोग मूमिद्रव्यमृणव्ययम् ॥१३॥ वित्तहानिर्द्वाविर्गते योगा वै सर्वदा स्मृता ॥१४॥

अथ चतुर्विधसंबंधमाह

प्रथमः स्थानसंबन्धो दृष्टिजस्तु द्वितीयकः ॥ तृतीयस्त्वेकतो दृष्टिः स्थित्येकत्र चतुर्यकः ॥१५॥ अन्योन्यगौ तथा स्वे स्वे संयुतावन्यत्र स्थितौ पूर्णक्षितौ भिवो वापि चैकवर्गगतौ यदा ॥१६॥

अथाग्रे राजाऽमात्ययोगादिबाधकमाह

तदा योगो भवेत्तत्र विषतो नैव योजसकृत् ॥ शत्रुयुक्तेक्षितो पापवीक्षितो नैव योजकृत् ॥ व्यपमृत्युपण्डायस्थावथवा समसंयुतौ ॥१७॥ यदाऽधीशो तदाप्यत्र भवतो नैव योगदी ॥ राजाभात्यादियोगानां चक्रगौ नाशकारकौ ॥१८॥

द्वादश योग

१२ योग—अको में लिखे हुए भावों के स्वामी का परस्पर स्थान या दृष्टि सम्बन्ध होने से पुष्कल नाम के १२ योग होते हैं। १।२-२।३-३।४-४।५-५।६-६।७-७।८-८।९-९।१०-

१०।११-११।१२-१२।१ क्रम से इनका फल यह है-

लाभयोग, राजा की नौकरी, फौज में बड़ा पद, राजा का मंत्री या मंत्री तुल्य, कठिन कर्म करनेवाला, राजा या धनी, स्त्री की मृत्यु धनहीन राजयोग, भूमि और द्रव्य, खर्चा और कर्जा और धन हानि ॥ ये १२ योग हैं॥११॥१२॥१३॥१४॥

ग्रहों के चार प्रकार के सम्बन्ध

(१) स्थान सम्बन्ध (२) दृष्टि सम्बन्ध (३) एकत्र दृष्टि सम्बन्ध (४) एकत्र स्थिति सम्बन्ध ॥ इनमें विशेष स्थान-सम्बन्ध में परस्पर एक दूसरे के स्थान में होना अथवा अपनी राशियों में किसी राशि का दोनों में होना अथवा मित्र की राशि में एक साथ दोनों का होना अथवा नयमाश आदिक वर्ग में एक वर्ग में होना। इसी प्रकार दृष्टि सम्बन्ध के भी भेद जानना ॥१५॥१६॥

राजा मन्त्री योग के बाधक योग-जहां राजयोग हो किन्तु ग्रह बलहीन हो या शत्रुग्रह से दृष्ट या युक्त हो अथवा पापग्रह देखते हो तो राजयोग का फल नहीं होता॥ अथवा ६।८।११।१२ इन स्थानों में हो तो राजयोग का फल नहीं होता॥१७॥ अथवा राजयोग का एक ग्रह बन्धी हो तो नाशकारक होते हैं॥१८॥

अथ पारिजातादिशुभाशुभविचारमाह

त्रिषड्भाष्यारिष्येष्टा पारिजातव्यवस्थिता ॥ दायिकान्यभवे भावे यत्र ये विचारिता ॥१९॥
द्वितीये चोत्तमास्ते ते तृतीये चान्यदा मता ॥ चतुर्थे ते च राजान पचमे गुरयो मता ॥२०॥
भूदेवाश्च तथा षष्ठे देवा ज्ञेयाश्च सप्तमे ॥ अष्टमे पशवो ज्ञेया दुःखदाश्चात्र जन्मनि ॥२१॥ दुःस्या
६।८।१२ श्रेष्ठ भवत्येते तदातेनैव बाधका ॥ केन्द्रकोणस्थिताश्चैव बाधकाश्चात्र जन्मनि ॥२२॥
विषमे च भवेत्स्त्रीणां समे वै पुरयो मत ॥ षष्ठे वै चोरित द्रव्य ह्यष्टमे हननं कृतम् ॥२३॥ हननं
हरणं रिष्ये तृतीये कैतव कृतम् ॥ पौंश्रत्य बधने प्रोक्तकृतघ्नत्वभवेत्कृतम् ॥२४॥

पारिजात आदि योग

३।६।११।८।१२ इन स्थानों के स्वामी पारिजात योग में पहले जैसा कहा है वैसे स्थित हो तो पारिजात योग होता है तथा पूर्वोक्त स्थानों के स्वामी द्वितीय स्थान में हो तो उत्तम हो तृतीय स्थान में हो तो मध्यम, चौथे में हो तो राजा के समान पचम भाव में हो तो गुरु, षष्ठ भाव में हो तो भूदेव, सप्तम में हो तो देव आठवें में पशु छठे-बारहवें में हो तो बाधक दुःखदायी, जन्म में हो तो दुःख केन्द्र और त्रिकोण में हो तो बाधक। यह योग स्त्रियों के लिये विषम राशि में और पुरुषों के लिये सम राशि में देखना चाहिये। इन योगों का फल-स्त्रीजातक के लिये उपर्युक्त ग्रह छठे घर में हो तो चोरी करनेवाली, आठवें में हो तो हत्यारिणी, बारहवें हो तो हत्या और चोरी करनेवाली तीसरे हो तो धूर्त, सप्तम हो तो व्यभिचारिणी और कृतघ्न होती है॥१९॥२०॥२१॥२२॥२३॥२४॥

सुखाधिपात् ॥ मन्त्रेशोऽमात्यता याति सप्तमाधीशयोगत ॥३९॥ कर्मेशस्य तु योगेन राजा
 साक्षिव्यतामिवात् ॥ केद्रधर्मेशयोर्पेनि राजा च राजवदित ॥४०॥ धर्मकर्माधिपी चैव ध्यत्यये
 तावुभौ स्थितौ ॥ पुक्तश्रेष्ठं तदा वाच्य सर्वसौख्यसमन्वित ॥४१॥ पारिजाते स्थितौ तौ तु
 नृपो लोकानुशिक्षक ॥ उत्तमो चेतमो मूपो गजवाजिरथादिमान् ॥४२॥ गोपुरे नृपशार्दूलो
 पूजिताधिर्नृपैर्मवेत् ॥ सिंहासने चक्रवर्ती सर्वलोणीप्रपात्क ॥४३॥ अस्मिन्योगे हरिश्चन्द्रो
 मानवश्चोत्तमस्तथा ॥ बलिर्वैश्वानरो राजा अन्ये चैव तु चक्रपा ॥४४॥ कलौयुगे च भविता
 तथा राजा युधिष्ठिर ॥ भविता शालिवाहश्च तथा विजयाभिनवन ॥४५॥ नागार्जुनस्तथा
 मूपस्तदन्ये चैव गोपुरे ॥ पारावताशकेन्ये च जाता मन्वादयस्तथा ॥४६॥ देवलोके तु प्रथमे
 हरेश्चैवावतारणम् ॥ मत्स्यादिकल्किपर्यन्ता सर्वे वर्गोद्भवा मता ॥४७॥ द्वितीये देवलोके तु
 जेयाश्चेद्रादय परे ॥ ऐरावते च प्रथमे जात स्वायम्भुवो मनु ॥४८॥ एव सर्वप्रकारेण ज्ञात्वा
 चैवविचक्षण ॥ कोणकेन्द्रादिनायाना योग सर्वविधायक ॥४९॥ चतुःकेन्द्राधिपी द्वौ च
 कौणपी च घनाधिप ॥ ऐरावतादिमस्यास्तेऽकुर्वल्लोकोत्तरोत्तरम् ॥ अनेनैव प्रकारेण वेत्ति
 सर्वत्र बुद्धिमान् ॥५०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डसारागो राजयोगादिविचारकथन
 नाम चतुर्विंशोऽध्याय ॥२४॥

विशेष योग

अब राजयोग में विशेष योग कहते हैं उन्हें यथार्थ रूप से जानना चाहिये। त्रिकोण स्थान
 लक्ष्मी का स्थान है और केन्द्र विष्णु का स्थान है। इनके सम्बन्ध से ही राजयोग होता है।
 केन्द्रेश और पंचमेश के योग से मन्त्री योग होता है और यह योग पारिजात योग के
 नियमानुसार हो तो प्रबल राजयोग और प्रबलमन्त्री योग होता है। लग्नेश वा धनश से योग हो
 तो राजयोग नहीं होता है। लग्नेश का सुखेश से सम्बन्ध हो तो एक योग सुखेश का पंचमेश से
 अथवा सप्तमेश से योग हो ता यह अमात्य योग है अर्थात् मन्त्री योग है। लग्नेश वा दशमेश से
 योग हो तो राजा अथवा मन्त्री होता है। नवमेश का केन्द्रेश से योग हो तो राजा होता है।
 नवम और दशम के स्वामी परस्पर एक दूसरे के स्थान में अथवा दोनों नवम में या दशम में
 हो तो सम्पूर्ण सम्पत्तिशाली होता है। यदि पारिजात योग भी होता हो तो निश्चय राजा होता
 है। हाथी घोड़े आदि युक्त उत्तम राज्य भाग्य होता है। गापुर अश्व में हो तो राजाधिराज
 होता है। सिंहासनाश में हो तो चक्रवर्ती सम्पूर्ण पृथ्वी का शासक राजा होता है। इस
 सिंहासनाश योग में जन्म लेने वाला जातक मानवथेष्ठ हरिश्चन्द्र अथवा राजा बलि के समान
 होता है। बलियुग में जन्म हो तो युधिष्ठिर शालिवाहन के समान होता है। गोपुर अश्व में होने
 से नागार्जुन के समान राजा होता है। पारावताश में ऋषि मनु के समान होता है। तथा
 देवलोक में ईश्वररूप तथा दस लोक में ईश्वराश अवताररूप मत्स्यावतार स कल्कि अवतार
 पर्यन्त के अवतारों का आविर्भाव पारावताश में होता है। देवलाक में इन्द्र होता है एरावताश
 में स्वायम्भुव मनु के समान होता है। इस प्रकार सूक्ष्म विचार करके देखने में प्रतीत होगा कि
 केन्द्र और कोण स्थान के योग ही सब महान् पुरुषों के जनक हैं। चार स्थान केन्द्र के तथा २

स्थान त्रिकोण के और धनस्थान ये ही सात स्थान सप्तर मे उत्तरोत्तर महान् विभूतियो
जन्म देनेवाले है ॥ श्लोक ३६ से ५० ॥

इति श्री कृ० पा० हो० शा० पू० स० सा० राजयोगादिविचारकथन
नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

पराशर उवाच

अथात सप्रवक्ष्यामि राजयोगान्द्विजोत्तम ॥ येषां विज्ञानमात्रेण नृपपूज्यो जनो भवेत् ॥१॥ ये
ये योगा पुरा शम्भुमापिता शैलजायत ॥ तेषां सारमहं वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन ॥२॥
चित्तपैत्कारके लग्ने जनुर्लग्न्ये वा द्विज ॥ राजयोगप्रदातारौ लग्नौ द्वौ प्रणतोदितौ ॥३॥
आत्मकारकपुत्राभ्यां पुत्रात्माकारको द्वयो ॥ विप्रसंबन्धयोगेन ज्ञेया वीर्यवन्निता ॥४॥
विलग्नार्त्तचमाधीशः पुत्रात्माकारको द्वयो ॥ विप्रसंबन्धयोगेन ज्ञेया वीर्यवन्निता ॥५॥
लग्नसप्तमे वापि लग्नसप्तमाधिपे ॥ पुत्रात्माकारको विप्र लग्नौ वा सप्तमेपि च ॥६॥
संबन्धे वीर्यवन्निता तत्र दृष्टव्यं पञ्चमाधिपे ॥ उच्चता च नवाशस्य शुभग्रहनिरीक्षिते ॥७॥
महाराजेति योगोयं सोऽत्र जातः सुखी नरः ॥ गजवाजिरथैर्मुक्तः सेनासंगमनैतया ॥८॥
भाग्येशत्कारके लग्नौ पञ्चमे सप्तमेपि वा ॥ राजयोगप्रदातारौ गजवाजिघनैरपि ॥९॥
कारकाद्द्विचतुर्यं च पञ्चमे भावगे द्विजः ॥ शुभलेटो न सदेहो राजयोगं ददाति
च ॥१०॥

हे द्विजोत्तम ! अब और राजयोग कहते हैं जिनके ज्ञान से मनुष्य राजपूज्य होता है ॥१॥
जो योग भगवान् शंकर ने पार्वती के सामने कहे थे, उन योगों में से कुछ सारभूत योग तुमको
सुनाते हैं ॥२॥ भगवान् ने दो लग्नों से राजयोग का विचार कहा है, अतः उनके ब्ययानुसार
जन्मलग्न तथा कारकलग्न से राजयोग का विचार करना चाहिये ॥३॥ आत्मकारक और
पञ्चमेश से राजयोग होता है। इसी प्रकार लग्ने और पञ्चमेश से राजयोग का विचार
करो ॥४॥ लग्न, पञ्चमभाव का सम्बन्ध यदि आत्मकारक और पुत्रकारक से हो और लग्न,
पञ्चम तथा कारक चलवान् हो तो राजयोग होता है ॥५॥ लग्न अथवा सप्तमभाव में—लग्ने या
सप्तमेश अथवा आत्मकारक और पुत्र कारक (अपने अपने भाव में या परस्पर भाव में)
हो ॥६॥ या परस्पर सम्बन्ध हो अथवा दृष्टि हो और इसी प्रकार पूर्वोक्त सम्बन्ध पञ्चमभाव
या भावेश में हो, तथा उच्चराशि में अथवा उच्चराशि तथा नवाश में हो एवं शुभग्रहों की दृष्टि
हो तो यह 'महाराज' नामक राजयोग होता है। इसमें जन्म सेनवाना मनुष्य गुणी तथा हाथी,
घोड़े मुक्त, चतुरंग सेनायुक्त महाराजा होता है ॥८॥ भाग्येश तथा आत्मकारक लग्न, पञ्चम,
गुप्तम भाव में हो तो भी पूर्ववत् राजा होता है ॥९॥ आत्मकारक से २४५५ इन भावों में
राजात्विज्यते पठ्ये राजयोगस्तथा भवेत् ॥११॥
प्राणीराष्ट्रनाथादने तुर्यं च पञ्चमे ॥ शुभलेटमुने विप्र राजा च भवति ध्रुवम् ॥१२॥ तत्रैव

पष्ठमे पापे राजा च भवति ध्रुवम् ॥ योगद्वये शुभे पापे कथं स्यात्फलान्ध्रय ॥१३॥ न
 दरिद्रो भवेज्जीवो न राजा जायते द्विज ॥ समानकुलज प्राज्ञ प्रतिष्ठा गौरवान्विता ॥१४॥
 कारके पचमे शुक्र सितेन्दुपुतबोधित ॥ तन्वारुद्धपदे लग्ने राजवर्गो भवेन्नर ॥१५॥ जन्मागे
 वापि कालागे लिप्तागे खेचरेक्षिते । रव्यादयस्त्रयस्थाने राजयोगप्रदायका ॥१६॥ जन्मागे च
 हि होरागे कुलागे येन केन चित् ॥ रव्यादिदृष्टिमात्रेण स राजा भवति ध्रुवम् ॥१७॥ स्वक्षेत्रे
 तु नवाशे वा द्वेष्काणे भानुजादय ॥ लग्न च सप्तम विप्र पश्यति राजयोगदा ॥१८॥ पूर्णदृष्टे
 पूर्णयोगमर्द्धं चार्द्धं विधीयते ॥ पादेन पादयोग च राजयोगमिदं कृमात् ॥१९॥ षट्कुण्डल्यतरे
 विप्र पश्यति भास्करादय ॥ राजयोगप्रदातारौ निर्विशक द्विजोत्तम ॥२०॥ लग्नस्थाने
 पूर्णदृष्ट्या सप्तमे स्वल्पबोधिते ॥ स्वल्पराज्यप्रदो विप्र पङ्क्त्यग्रे विचिन्तयेत् ॥२१॥

आत्मकारक से तीसरे तथा छठे भाव में पापग्रह हो तो राजवशी में लिये राजयोग होता है॥११॥ लग्नेश और सप्तमेश से २।४।५ वे स्थान में शुभग्रह हो तो निश्चय राजा होता है॥१२॥ तीसरे छठे भाव में पापग्रह हो तो राजा होता है। यह कह चुके हैं। अब कहते हैं कि यदि ३।६ में पाप और २।४।५ में शुभग्रह हो तो फन का निश्चय क्या हो ? ॥१३॥ तो उसका निर्णय कहते हैं कि जातक न तो राजा ही होगा न दरिद्र ही रहेगा। प्रतिष्ठायुक्त गौरवशाली होकर मध्यम धेणी का होगा॥१४॥ पुत्रकारक शुक्र हो और शुक्लपक्ष के पूर्णचन्द्र से युक्त या दृष्ट हो। ऐसा शुक्र लग्न के आरुद्ध राशि में (भाव) या लग्न में हो तो जातक राजा धेणी में होता है॥१५॥ जन्मलग्न में या कालाग=होरालग्न में एव लिप्ताग=घटीलग्न में शुभग्रह स्थित हो तथा सूर्यादि क्रूरग्रह तीसरे भाव में हो तो राजयोग कारक होते हैं॥१६॥ जन्मलग्न होरालग्न, घटी लग्न में स्थित ग्रह से सूर्यादि ग्रह की दृष्टिमात्र से 'राजयोग' होता है॥१७॥ शनि, राहु, केतु, स्वक्षेत्र में, स्वनवाश में या स्वद्वेष्काण में स्थित होकर लग्न और सप्तमभाव को देखते हो तो 'राजयोग' कारक होते हैं॥१८॥ यह राजयोग पूर्णदृष्टि से पूर्ण तथा अर्द्धदृष्टि से आधा और पाददृष्टि से चौथाई जानना॥१९॥ इसी प्रकार षड्वर्ग की कुण्डली में सूर्यादि ग्रहों की दृष्टि हो तो राजयोग कारक होते हैं। (यहां 'षट्कुण्डल्या' मात्र या ही निर्देश है किन्तु वे छ कुण्डली कौनसी ली जाय यह नहीं बताया गया । अभी तब जिन कुण्डलियों से 'राजयोग' का विचार हो रहा है वे ये हैं। जन्मलग्न, आरुद्धलग्न, कारकलग्न होरालग्न, उपपदलग्न घटीलग्न। क्या यही छ लेनी अथवा षड्वर्ग कुण्डली देना। यह विज्ञान विचार करें) लग्न में पूर्णदृष्टि हो और सप्तमभाव में पाददृष्टि हो तो साधारण धनीयोग जानना॥२१॥

एव नवाशकुण्डल्या द्वेष्काणेषु विचिन्तयेत् ॥ लग्नसप्तमयो खेटो राजयोगप्रदायक ॥२२॥
 उच्चग्रहे राजयोगो लग्नद्वयमथापि चेत् ॥ रागोर्द्वेष्काणतोऽज्ञाच्च राशेरशादयापि वा ॥२३॥
 यद्वा राशिदुष्काणाम्या लग्ने दृष्टे तु योगत ॥ प्रायेणेदं जातव तु प्रभूणामेवदृश्यते ॥२४॥
 जन्मकालघटीलग्न एकेनैव निरीक्षिते । तच्चाहृदे तु सप्राप्ते चक्षुःकान्ते विशेषत ॥२५॥ कान्ते
 वा गुरुशुक्रान्या केनाप्युच्चग्रहेण वा ॥ दुष्टार्णलाग्रहामावे राजयोगो न सशय ॥२६॥
 शुभाहृदे तत्र चदे धने देवगुहस्तया ॥ उच्चदृष्टे ग्रहे वाय ह्युच्चसेते तथा ग्रहे ॥२७॥
 राजयोगप्रदाता च निर्विशक द्विजोत्तम ॥ यत्रयेपि शुभाहृदे चदे सति समानकम् ॥२८॥ उच्चग्रहे

राजयोगो लग्नद्वयमयापि वा ॥ आरुढमवलबाश्च योगो बाहनदाः स्मृताः ॥२९॥ शुक्रास्त्वष्ट्रे ततः
शुक्रे तृतीये बाहनार्थवान् ॥ अन्योन्य पश्यतो विप्र ईत्याचार्यनिशाधिपौ ॥३०॥

इसी प्रकार नवाक्ष लग्न और द्रेष्काण में भी विचार करो लग्न तथा सप्तमभावस्थित ग्रह राजयोग कारक होता है ॥२२॥ जन्मलग्न तथा होरालग्न में (द्रेष्काण और नवाक्ष के सहयोग से यहा दूसरा होरालग्न जानना) ग्रह उच्च राशि में हो, राशि के द्रेष्काण में अथवा राशि नवाक्ष में या ग्रह अपने नवाक्ष में उच्चका हो ॥२३॥ अथवा जन्म लग्न और द्रेष्काण में लग्न को देखते हो तो ऐसा श्रेष्ठ योग प्राप्य बड़े आदमियों के ही होता है ॥२४॥ जन्मलग्न, होरालग्न तथा घटीलग्न को एक ही ग्रह देखता हो तथा वही ग्रह आरुढलग्न में हो और विशेष करके चन्द्रमा से युक्त हो अथवा गुरु शुक्र से युक्त हो, अथवा किसी उच्चग्रह में युक्त हो तथा अर्गलायोगकारक पापग्रह न हो तो 'राजयोग' होता है ॥२५॥२६॥ चन्द्रमा जाम्बू लग्न में दूसरे भाव में गुरु हो उच्च ग्रह की दृष्टि हो। चन्द्र तथा गुरु भी उच्च के हो तो राजयोगकारक है ॥२७॥२८॥ जन्म लग्न और आरुढ लग्न इनमें उच्च का ग्रह होने से तो राजयोग कारक होता है, आरुढ के अवलम्बन से बाहन (सवारी) होता है ॥२९॥ शुक्र में चन्द्रमा नीसरे अथवा चन्द्रमा से शुक्र तीसरे भाव में हो। अथवा चन्द्र शुक्र परस्पर देगते हों तो बाहन तथा सम्पत्तिशाली होता है ॥३०॥

आरुधेऽपि तृतीयस्थे तथा सबधकारक ॥ जन्मलग्नेऽपि सयोगे जायते बाहनार्थवान् ॥३१॥ शुभे लग्ने शुभे त्वर्ये तृतीये पापक्षेत्रः ॥ चतुर्थे तु शुभे प्राप्ते राजा वा तत्समीपि वा ॥३२॥ उच्चो वा हरिणाको वा जीवो वा युक्त एव वा ॥ एको बली धनगतः श्रियं दिशति देहिना ॥३३॥ लग्न पश्यति ये क्षेत्रास्ते सर्वे शुभदायिनः ॥ नीचक्षेत्रेऽपि लग्ने चेत्यस्येद्राजा प्रकीर्तिता ॥३४॥ पष्ठाष्टमे तृतीये च लाभे सबधनीवकृत् ॥ यो ग्रहः पश्यते लग्न राजयोगप्रदायकः ॥३५॥ राजयोगो जन्मलग्न पश्येदुच्चग्रहो यदि ॥ पष्ठाष्टमगते नीचे लग्ने पश्यति योगकृत् ॥३६॥ पष्ठाष्टमाधिपे नीचे लग्न पश्यति वाय वा ॥ तृतीये लाभे नीचे लग्न पश्यति राज्यदः ॥३७॥ पष्ठाष्टमाधिपौ क्षेत्रीयुभौयौ कौ च नायितौ ॥ पश्यतो जन्मलग्न च राजयोग उदाहृतः ॥३८॥ घटे तु पचमे पष्ठे स्थिरे तु नवमे द्विज ॥ उभये क्षेत्रसदृष्टे राजयोगप्रदायकः ॥३९॥

इसी प्रकार चन्द्र, शुक्र आरुढ से तृतीयभाव में हों और त्याग सम्बन्ध हो, और यदि यह योग न होकर अन्य राशि में स्थित होकर भी सम्बन्ध करते हों तो पूर्वोक्त योग करने है ॥३१॥ लग्न, द्वितीय, चतुर्थ भाव में शुभ तथा तृतीयभाव में पापग्रह हो तो राजा या राजा के समान होता है ॥३२॥ चन्द्रमा, गुरु या शुक्र अथवा उच्चस्थ ग्रह द्वितीय भाव में हो तो जातक सम्भोवान् होता है ॥३३॥ जो कोई भी यह लग्न को देखते हैं, वे सब शुभमन्त्र हैं (शुभफल दाता हैं) नीचगणिग्न ग्रह भी लग्न में हो या लग्न को देखे तो राजा होता है ॥३४॥ ६।८।३।११ म्यानों में नीचस्थ ग्रह भी सम्बन्ध कारक हो और लग्न को देगा जो नीच राजयोग कारक होता है ॥३५॥ यदि उच्चगणिग्न ग्रह जन्म लग्न को देगा जो नीच ६।८

स्थान में नीचराशिगत ग्रह लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक है॥३६॥ ६।८ का स्वामी नीच में हो लग्न को देखता हो तो अथवा ३।११ स्थान में नीच का ग्रह लग्न को देखता हो तो राज योग कारक होता है॥३७॥ ६।८ के स्वामी शुभ या पाप कोई भी हो किन्तु आश्रित = बलहीन, आक्रान्त न हो और जन्मलग्न को देखते हो तो भी राजयोग होता है॥३८॥ चर राशि पञ्चम भाव में तथा षष्ठभावे में स्थिर राशि हो और नवम भाव में द्विस्वभाव राशि हो और इनके स्वामी केन्द्रेश से दृष्टि सम्बन्ध करते हो तो राजयोग होता है॥३९॥

चतुर्थ शुभलेटश्रेद्वाजयोग प्रकीर्तित ॥ बलपुक्तचतुर्थोपि राजादिपु यथोत्तरम् ॥४०॥ चतुर्थ स्वल्पफल स्थिरे तुर्ये च मध्यमम् ॥ द्विस्वभावे पूर्णफल राजयोगप्रदायक ॥४१॥ अग्रहात्सग्रहो ज्यायानिति रीत्या विचिन्तयेत् ॥ उच्चयुक्तो ग्रह कश्चित्तामयो वा चतुर्थग ॥४२॥ धनस्थितो वा लग्न चेत्यश्वेद्वाहनकारक ॥ राजयोगाद्यभावे तु धनघान्यविनिर्णय ॥४३॥ शुभपापदृशा लग्ने तत केन्द्रादियोगत ॥ यस्य लग्नाशके सौम्या प्रबल्य तस्य निश्चितम् ॥४४॥ कुबेरश्च पतंगश्च हालाशश्च किरीटक ॥ विह्वलाशसमायाशनोहन किन्नराशक ॥४५॥ भुजगेन्द्रांशको लीलाकोकिलाशोत्तम स्मृत ॥ राशीनां द्वादशांशेषु ग्रहस्थित्या फल वदेत् ॥४६॥ केन्द्रांशांशेषु शुभदा राजयोगफलप्रदा ॥ द्विषड्यं कादशांशा मध्यमा परिकीर्तिता ॥४७॥

चतुर्थ भाव में शुभग्रह हो तो राजयोग होता है। चतुर्थ भाव भी बलयुक्त हो और ग्रह भी हो तो राजयोग होता है॥४०॥ किन्तु चतुर्थभाव में चर राशि हो तो स्वल्प फल, और स्थिर राशि हो तो मध्यम फल तथा द्विस्वभावराशि हो तो पूर्ण फल होता है॥४१॥ 'अग्रहात् सग्रहो ज्यायान्' इसी नियम से विचार करना चाहिए। उच्चराशि स्थित ग्रह यदि धन (२) नाम (११) चतुर्थ भाव में हो और लग्न पर दृष्टि हो तो (यहां द्वितीय भावस्थ ग्रह लग्न को किस दृष्टि से देखेगा यह तो भगवान् ही जाने) वाहन कारक योग है। राजयोग न होने पर धनघान्य युक्त होता है॥४३॥ लग्न में शुभ या पापग्रह की दृष्टि हो तथा केन्द्रस्थानों से भी संयोग हो तथा लग्न के नवांश में सौम्यग्रह हो तो योग की प्रबलता जानना॥४४॥ भावराशियों के द्वादशांश में क्रमशः ये नाम निर्देश करना। कुबेर पतंग (सूर्य) हालाश किरीटक विह्वलाश समायाश उत्तमाश मोहन किन्नर भुजग शन्द्र कोकिल, ये द्वादश नाम हैं। इनमें ग्रहस्थित होने पर फलदायक होते हैं। इनमें केन्द्रस्थ अथवा शुभ और राजयोग कारक होते हैं। २।६।८।११ मध्यम और बाकी अथवा अग्रम है॥४०—४७॥

अन्यांशास्त्वधमा ज्ञेया एवमशविनिर्णय ॥ ग्रहाणां चैव लग्नानामरागत्या फल वदेत् ॥४८॥ लग्नोप्यन्यगोच्येषु जायते यदि मानव ॥ यस्य जन्मनि चद्रो वा युक्तः स्वाशेषु सस्थित ॥४९॥ तस्यैते कथिता योगा सफला परिकीर्तिता ॥ पूर्णं न्यूनफलं विप्रं ग्रहयुक्तानुसारत ॥५०॥ अथ राजचिह्नयोगानाह—कारकातुर्यभावस्थौ सितेन्दू द्विजसत्तम ॥ आदायते विशेषश्च राजचिह्नेन सयुत ॥५१॥ ध्वजा वा दुदुभेनादास्तिष्ठति च दिवानिशम् ॥ सर्वेषां चैव योगानामधिकद्वान् विचिन्तयेत् ॥५२॥

ग्रहो तथा लग्नो का अश के नामानुसार ही फल कहना ॥४८॥ इन अश युक्त लग्न में जिसका जन्म होता है अथवा जिसके जन्म में चन्द्रमा अपने अश में हो उसी जातक के लिए ये योग सफल हैं ॥ हे विप्र! पूर्ण फल या न्यून फल ग्रह के बलावल के अनुसार जानना ४८-५० ॥

राजचिह्नयोग-हे द्विजोत्तम! आत्मकारक से शुक्र और चन्द्रमा चौथे भाव में हो, वह जातक राजचिह्न युक्त होगा ॥५१॥ उसके महल पर ध्वजा अथवा दुदभी (नगाडा आदि) वाद्य आदि रहते हैं। उपर्युक्त सभी योगों का फल देश, काल, परिस्थिति, पात्र आदि का विचार करके जो और जैसा फल सम्भव हो वैसा ही फल का निर्देश करना चाहिए ॥५२॥

अथ धीयोगानाह-कारके वा तथा रुढे त्रिपष्ठे चागता ग्रहाः ॥ बीसते कारकात्लग्न मातृनाथेन दृष्टियुक् ॥५३॥ बुद्धिमाञ्जायते शालस्तीव्रबुद्धिर्विचक्षणः ॥ तथा तृतीयेलेदेश कारकलग्ना बीसते ॥५४॥ तथापि पूर्ववद्योगात्सुधीमाञ्जायते मरः ॥ शास्त्रवेत्ता कविर्वैद्यो भवत्यत्र न संशयः ॥५५॥

बुद्धियोग-कारक लग्न तथा आरूढ लग्न ३१६ यह हो और कारक लग्न को देखते हों, तथा चतुर्थश भी देखता हो तो वास्तव तीव्रबुद्धि और चतुर होता है ॥ तथा तृतीयेन भी कारक लग्न तथा आरूढ लग्न को देखते हो तो भी वास्तव बुद्धिमान्, शास्त्रवेत्ता, कवि और हर काम में चतुर होता है। यह निश्चय है ॥५३ - ५५॥

अथ सुखयोगमाह-लग्नाच्च कारकाद्वापि चतुर्थे यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या भवति सुखिनो नराः ॥५६॥
सुखयोग-जन्मलग्न तथा कारकलग्न से चतुर्थ भाव में ग्रह हो, और लग्न तथा कारक को देखते हो जो जातक सुखी होता है ॥५६॥

अथ सेनाधीशयोगमाह-कारके वा तथा रुढे लग्नाद्वा सप्तमाद्द्विज ॥ तृतीये दृष्टमे पापाः सेनाधीशो भवेन्नरः ॥५७॥
सेनाधीश योग-कारकलग्न या आरूढलग्न से तथा जन्मलग्न या सप्तमभाव से ३१६ भाव में पापग्रह हो तो जातक सेनापति होता है ॥५७॥

अथ प्रधानयोगानाह-राज्येऽपि जनुर्लगाद्वा मात्येऽप्युतेसिते ॥ अमात्यकारकेणापि प्रधानत्व नृपालये ॥५८॥ लाभे च बीसिते लाभे पापदृष्टिर्विचर्जिते ॥ तथा राज्यातये विप्र प्रधानत्व कुलेपि च ॥५९॥
प्रधानमन्त्रीयोग-लग्न (जन्मलग्न) में दशमेश को अमात्यकारक स्थितराशि देवता हो या युक्त हो तथा अमात्य कारक से भी युक्त दृष्ट हो तो प्रधान मन्त्री होता है ॥५८॥ अमात्य कारक दशमभाव में या लाभ में हो या देखता हो किन्तु पापदृष्टि रहित हो तो प्रधानमन्त्री होता है और कुल में भी प्रधान होता है ॥५९॥

स्थान मे नीचराशिगत ग्रह लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक है॥३६॥ ६।८ का स्वामी नीच मे हो लग्न को देखता हो तो अथवा ३।११ स्थान मे नीच का ग्रह लग्न को देखता हो तो राज योग कारक होता है॥३७॥ ६।८ के स्वामी शुभ या पाप कोई भी हो किन्तु आश्रित = बलहीन, आक्रान्त न हो और जन्मलग्न को देखते हो तो भी राजयोग होता है॥३८॥ चर राशि पञ्चम भाव मे तथा षष्ठभावे मे स्थिर राशि हो और नवम भाव मे द्विस्वभाव राशि हो और इनके स्वामी केन्द्रेश से दृष्टि सम्बन्ध करते हो तो राजयोग होता है॥३९॥

चतुर्थे शुभलेदध्रेद्वाजयोग प्रकीर्तिता ॥ बलयुक्तचतुर्थोपि राजादिषु मयोत्तरम् ॥४०॥ चो तुर्थे स्वल्पफल स्थिरे तुर्थे च मध्यमम् ॥ द्विस्वभावे पूर्णफल राजयोगप्रदायक ॥४१॥ अग्रहास्तग्रहो ज्यायानिति रीत्या विचिन्तयेत् ॥ उच्चयुक्तो ग्रह कश्चिन्नामनो वा चतुर्थग ॥४२॥ धनस्थितो वा लग्न चेत्यदयेद्वाहनकारक ॥ राजयोगाद्यभावे तु धनधान्यविनिर्णय ॥४३॥ शुभपापदृशा लग्ने ततः केन्द्रादियोगतः ॥ यस्य लग्नासके सौम्या प्राबल्य तस्य निश्चितम् ॥४४॥ कुबेरश्च पतगश्च हालाशश्च किरीटक ॥ विद्वलाशसमायाशमोहन किन्नराशक ॥४५॥ भुजगेन्द्राशकौ लीलाकोकिलाशोत्तम स्मृत ॥ राशीनां द्वादशाशेषु ग्रहस्थित्या फल वदेत् ॥४६॥ केन्द्राशाश्रेषु शुभदा राजयोगफलप्रदा ॥ द्विपङ्कटैकादशाशा मध्यमा परिकीर्तिता ॥४७॥

चतुर्थ भाव मे शुभग्रह हो तो राजयोग होता है। चतुर्थ भाव भी बलयुक्त हो और ग्रह भी हो तो राजयोग होता है॥४०॥ किन्तु चतुर्थभाव मे चर राशि हो तो स्वल्प फल, और स्थिर राशि हो तो मध्यम फल तथा द्विस्वभावराशि हो तो पूर्ण फल होता है॥४१॥ अग्रहात् सग्रहो ज्यायान्० इसी नियम से विचार करना चाहिए। उच्चराशि स्थित ग्रह यदि धन (२) लग्न (११) चतुर्थ भाव मे हो और लग्न पर दृष्टि हो तो (यहा द्वितीय भावस्थ ग्रह लग्न को जिस दृष्टि से देखेगा वह तो भगवान् हो जाने) वाहन कारक योग है। राजयोग न होने पर धनधान्य युक्त होता है॥४२॥ लग्न मे शुभ या पापग्रह को दृष्टि हो तथा केन्द्रस्थानो से भी संयोग हो तथा लग्न के नवांश मे सौम्यग्रह हो तो योग की प्रबलता जानना॥४३॥ भावराशिषो के द्वादशांश मे क्रमशः ये नाम निर्देश करना। कुबेर पतग (सूर्य) हालाश किरीटक विद्वलाश समयाश उत्तमाश मोहन किन्नर भुजग इन्द्र कोविल ये द्वादश नाम है। इनमे ग्रहस्थित होने पर फलदायक होते है। इनमे केन्द्रस्थ अश शुभ और राजयोग कारक होते है। २।६।८।११ मध्यम और बाकी अश अधम है॥४०—४७॥

अन्याशास्त्वधमा ज्ञेया एवमशविनिर्णय ॥ ग्रहाणां चैव लग्नानामशगत्या फल वदेत् ॥४८॥ लग्नेष्वशरानेष्वेषु जायते यदि मानव ॥ यस्य जन्मनि चन्द्रो वा युक्तः स्वाशेषु सत्स्थित ॥४९॥ तस्यैते षड्विंशता योगा सफला परिकीर्तिता ॥ पूर्ण न्यूनफल विप्र ग्रहयुक्तानुसारतः ॥५०॥ अथ राजचिह्नयोगानाह—कारकाचतुर्थभावस्थी सितेन्दू द्विजसत्तम ॥ आदावते विशेषश्च राजचिह्नेन संपुत ॥५१॥ ध्वजा वा दुदुभेर्नादास्तिष्ठति च दिवानिशम् ॥ सर्वेषां चैव योगानामविरुद्धान् विचिन्तयेत् ॥५२॥

ग्रहो तथा लग्नो का अश के नामानुसार ही फल कहना ॥४८॥ इन अश युक्त लग्न में जिसका जन्म होता है अथवा जिसके जन्म में चन्द्रमा अपने अश में हो उसी जातक के लिए ये योग सफल हैं ॥ हे विप्र! पूर्ण फल या न्यून फल ग्रह के बलाबल के अनुसार जानना ४८-५०॥

राजचिह्नयोग-हे द्विजोत्तम! आत्मकारक से शुक्र और चन्द्रमा चौथे भाव में हो, वह जातक राजचिह्न युक्त होगा ॥५१॥ उसके महल पर ध्वजा अथवा दुदभी (नगाडा आदि) वाद्य आदि रहते हैं। उपर्युक्त सभी योगों का फल देश, काल, परिस्थिति, पात्र आदि का विचार करके जो और जैसा फल सम्भव हो वैसा ही फल का निर्देश करना चाहिए ॥५२॥

अथ धीयोगानामह-कारके वा तथारूढे त्रिपण्डे चागता ग्रहाः ॥ बीसते कारकाललग्न मातृनाथेन बुद्धियुक् ॥५३॥ बुद्धिमाज्जापते बालस्तीव्रबुद्धिर्विवक्षणा ॥ तथा तृतीयेऽप्येतेषां कारकलग्नौ बीसते ॥५४॥ तथापि पूर्वबद्योगात्सुधीमाज्जापते नर ॥ शास्त्रवेत्ता कविर्दत्ता भवत्यत्र न सशय ॥५५॥

बुद्धियोग-कारक लग्न तथा आरूढ लग्न ३।६ ग्रह हो और कारक लग्न को देखते हो, तथा चतुर्थेश भी देखता हो तो बालक तीव्रबुद्धि और चतुर होता है ॥ तथा तृतीयेश भी कारक लग्न तथा आरूढ लग्न को देखते हो तो भी बालक बुद्धिमान्, शास्त्रवेत्ता, कवि और हर काम में चतुर होता है। यह निश्चय है ॥५३-५५॥

अथ सुखयोगमाह-सप्राञ्च कारकादापि चतुर्ये यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या भवति सुखिनो नराः ॥५६॥
सुखयोग-जन्मलग्न तथा कारकलग्न से चतुर्य भाव में ग्रह हो, और लग्न तथा कारक को देखते हो जो जातक सुखी होता है ॥५६॥

अथ सेनाधीशयोगमाह-कारके वा तथारूढे लग्नादा सप्तमाद्विज ॥ तृतीये षष्ठ्यमे पाया सेनाधीशो भवेन्नरः ॥५७॥
सेनाधीश योग-कारकलग्न या आरूढलग्न से तथा जन्मलग्न या सप्तमभाव से ३।६ भाव में पापग्रह हो तो जातक सेनापति होता है ॥५७॥

अथ प्रधानयोगानामह-राज्येशोपि जनुर्लगादमात्येणपुतेक्षिते ॥ अमात्यकारकेणापि प्रधानत्व नृपालये ॥५८॥ लाभे च वीक्षिते लाभे पापदृष्टिर्विवर्जिते ॥ तथा राज्यालये विप्र प्रधानत्व कुलेपि च ॥५९॥
प्रधानमन्त्रीयोग-लग्न (जन्मलग्न) में दशमेश को अमात्यकारक स्थितराजि देयता हो या युक्त हो तथा अमात्य कारक से भी युक्त दृष्ट हो तो प्रधान मन्त्री होता है ॥५८॥ अमात्य कारक दशमभाव में या लाभ में हो या देखता हो किन्तु पापदृष्टि रहित हो तो प्रधानमन्त्री होता है और कुल में भी प्रधान होता है ॥५९॥

अमात्य कारकेणापि कारकेन्द्रशसयुते ॥ तीव्रबुद्धिपुतो बाल सेनाधीशोऽपि जायते ॥६०॥
 स्वक्षेत्रेऽयं च मध्ये वा वार्द्धके द्विजसप्तम ॥६१॥ क्रमेण भाग्यवृद्धिः स्यान्नृपवेशोय वा भवेत्
 ॥६२॥ पचमात्कारके लग्ने सप्तमे नवमेपि वा ॥ राजयोग इति प्रोक्तो विख्यातो विजयी भवेत्
 ॥६३॥ कारकात्केद्रकोणेषु तुगर्शे चापि सस्थिते ॥ भाग्यपेन युतो वृष्टो राजमन्त्री प्रजायते ॥६४॥
 कारके यस्य राशीशे लग्ने सयुतेऽक्षिते ॥ मन्त्रित्वमुल्लस्ययोगेऽयं वार्द्धके नात्र तस्य ॥६५॥ कारके
 शुभसयुक्ते पचमे सप्तमेपि वा ॥ यत्कारके पदा प्राप्ते तत्कारकधनं लभेत् ॥६६॥ नीचेक्षेत्रवलैर्पुंके
 उक्तस्थानगतेर्द्विज ॥ तदा शुभफलं वाच्यं कारकेणो न दृष्टियुक् ॥६७॥

अमात्य कारक से कारकेन्द्र (आत्मकारक) राशिनाथ (राशिस्वामी) युत हो तो बाल अवस्था से ही तीव्र बुद्धि सम्पन्न तथा सेनापति होता है ॥६०॥ अमात्यकारक स्वगृहो हो या दशमभाव में हो तो वृद्धावस्था में प्रधानमन्त्री होता है ॥६१॥ इस योग में या तो क्रम से भाग्यवृद्धि हो या केवल नाममात्र का राजा हो ॥६२॥ पचमभाव से कारकलग्न सप्तमभाव में या नवमभाव में हो तो राजयोग होता है। इस योग में उत्पन्न हुआ विख्यात और विजयी होता है ॥६३॥ आत्मकारक से भाग्येक केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हो अथवा उच्चराशि में हो भाग्येशसे युत अथवा दृष्ट हो तो प्रधानमन्त्री होता है ॥६४॥ कारकभाव कुण्डली में अमात्यकारकराशि का स्वामी लग्न में अथवा अमात्यकारक में युक्त या दृष्ट हो तो वृद्धावस्था में प्रधानमन्त्री होता है ॥६५॥ अमात्यकारक शुभग्रह युक्त होकर पचमभाव या सप्तमभाव में हो तो मन्त्री होता है। यह योग जिस कारक के साथ हो उस जातक को वही पद प्राप्त होता है ॥६६॥ बलवान् पापीग्रह पचम या सप्तमभाव में हो और अमात्यकारक से युत या दृष्ट हो तो भी मन्त्री समान होता है ॥६७॥

भाग्याल्लपदे लग्ने कारकाग्रवमेपि वा ॥ राज्ययोगप्रदातारी निर्विशक द्विजोत्तम ॥६८॥
 लाभेशो लाभभवने पापदृष्टिद्विर्जित ॥ कारके शुभसयुक्ते लाभ तस्य नृपालये ॥६९॥ शुभर्शे
 शुभसयुक्ते शुभदृष्टे च राज्यमाक् ॥ धनुलग्ने तथा रुदे एतस्मिन् राज्यभागभवेत् ॥७०॥

भाग्यस्थान का आल्ल पद लग्नगत हो अथवा अमात्यकारक में नवमभाव में हो तो राजयोग कारक है ॥६८॥ लाभेश लाभस्थान में हो, पापहीष्टरहित हो तथा आत्मकारक शुभग्रह युक्त हो तो राजा से लाभ होता है ॥६९॥ आत्मकारक शुभराशि में या शुभग्रह अथवा शुभदृष्टि हो और यह योग धनु लग्न में अथवा धनुलग्न के आल्ल स्थान में हो तो राजभोगी होता है ॥७०॥

अथ रसायनसिद्धियोगः—स्वाशे बर्गोत्तमे केद्रे पुण्येश कारकोऽयं वा ॥ राज्याल्लपदे वापि तदा सिध्येद्रसायनम् ॥७१॥ कारके कारकाग्रदे धने स्वर्गोच्चने लग्ने ॥ ऋद्धिर्वा सिद्धिसयुक्ते तथा तत्ररसायनम् ॥७२॥ धर्मकर्माधिपौ स्वोच्चे तथा बर्गोत्तमे यदि ॥ नवमे पचमे लाभे राज्याप्तिर्वा रसायनम् ॥७३॥ मूलत्रिकोणगे लग्ने कारकेरशो द्विजोत्तम ॥ मन्त्रनाथेन सयुक्तं कीर्तिपुत्तरसायनम् ॥७४॥ धर्मेशो धर्मलाभस्य पचमेशोपि पचमे ॥ कारकेऽयुते दृष्टे स्वच्छापूर्णधनानि च ॥७५॥

रसायन सिद्धियोग-आत्मकारक अथवा नवमेश अपने नवाश में हो या वर्गोत्तमी हो तथा ऐसा होकर केन्द्रस्थानों में हो या दशमभाव के आरूढपद में हो तो रसायन सिद्धि प्राप्त होती है॥७१॥ आत्मकारक कारकलग्न में हो, धनेश स्वगृही या उच्च का हो तो रसायनी होती है॥७२॥ नवमेश तथा दशमेश उच्च के होकर या वर्गोत्तमी होकर नवम, पचम या लाभस्थान में हो तो राज्यप्राप्ति या रसायन सिद्धि होती है॥७३॥ आत्मकारक का स्वामी मूलत्रिकोणी होकर लग्न में हो तथा पचमेश से युक्त हो तो कीर्ति भी होती है और रसायन भी सिद्ध होती है॥७४॥ नवमेश नवम या लाभस्थ हो तथा पचमेश भी पचमभाव में हो और आत्मकारक से युक्त या दृष्ट हो तो इच्छानुसार धन की प्राप्ति होती है॥७५॥

स्वोच्चादि पदसंयुक्ते कारकेराः शुभालये ॥ सतत सुखमाप्नोति धातुमस्मरसायनात् ॥७६॥ मुखेशे मानभावस्ये भानेशे सुखसंयुते ॥ लग्नकारकयोर्दृष्टे सिपयोगोतिषमतः ॥७७॥ कर्मेशो नवमे पश्य मुखेशः पचमेपि वा ॥ परस्पर तदीशो वा स्वर्णाप्तिस्तत्र कर्मतः ॥७८॥ चागोश कारके लग्ने स्वोच्चादिपदसंयुते ॥ भौमांशो मृत्युरादित्यः सौख्येशः कालसन्नकः ॥७९॥ सौम्याशोर्द्धग्रहरकः स्पष्टकर्म स्वदेशतः ॥ एव प्राणपदस्पष्टे पूर्वार्ध्याये मया कृतम् ॥८०॥ गुलिके कारकांशे च पूर्णन्दुवीक्षिते द्विज ॥ सत्य चौर्याक्षितीतिश्च स चोरो जायतेऽप्यवा ॥८१॥ सगुलिके कारकांशे ह्यन्यग्रहयुतेक्षिते ॥ बुधदृष्टियुते वापि अडवृद्धिः प्रजायते ॥८२॥ कारकांशे स्थिते केतो रविशोमनिरीक्षिते ॥ बलवीर्येण रहितो जायते सोपि मानवः ॥८३॥ सकेतो कारकांशे तु बुधशुक्रनिरीक्षिते ॥ राजयोनी जन्म चेत्तयाद्वासीपुत्रोय वा भवेत् ॥८४॥

आत्मकारक का स्वामी स्वोच्च, मूलत्रिकोणी हो और शुभस्थान में स्थित हो तो निरन्तर सुखी और पारे की भस्म से रसायन का वाता हो॥७६॥ मुखेश दशमस्थान में हो एवं दशमेश सुखभाव में हो लग्न और कारक को देखते हैं तो राजपद और सम्मानों होता है॥७७॥ जिसके दशमेश नवमभाव में हो और मुखेश पचमभाव में हो अथवा नवमेश दशम में और पचमेश चतुर्थ में हो तो उद्योग करने से सुवर्ण सिद्धि होती है॥७८॥ बृहस्पति कारक में या लग्न में उच्चादि राशि का होकर स्थित हो, और मंगल का नवाश अष्टमभाव में हो, सूर्य तथा मुखेश कालाशक में हो॥७९॥ बुध के नवाश 'अर्दयाम' हो तो अपने देश में ही सिद्धि प्राप्त होती है। यह हमने पूर्वार्ध्याय 'प्राणपद' साधन के विषय में स्पष्ट कहा है॥८०॥ गुलिक लग्न में या कारकांश में आत्मकारक स्थित हो और पूर्ण चन्द्र दृष्ट हो तो चोरी आदिक्रान्तिमान अथवा चोर होता है॥८१॥ आत्मकारक का नवाश -गुलिक (नग्यश) में हो और विमी में युक्त अथवा दृष्ट हो या बुध की दृष्टि हो तो अडवृद्धि होती है॥८२॥ कारकांश में केतु हो सूर्य, चन्द्र से दृष्ट हो तथा बलहीन हो तो अडवृद्धि होती है॥८३॥ कारकांश में केतु बुध तथा शुक्र दृष्ट हो तो राजकुल में दानी का पुत्र होता है॥८४॥

मकेतो कारकांशे वा मृगुभास्करबीक्षिते ॥ सिद्ध शास्त्रातरे प्राह्य विशेष राजयोगकम् ॥८५॥ रुद्रेण यत्पुरा प्रोक्त तन्मया मदितं द्विज ॥ देय स्वशिष्यपुत्रेभ्यो न देयं यत्थ कस्यचित् ॥८६॥ कुशुभ्राय कुशिष्याय प्राणान्ते न प्रकाशयेत् ॥ गृह्याद्गृह्यामिदं शास्त्रं प्राप्तं शम्भुप्रमादतः ॥८७॥

इति श्रीबृहस्पतराशरहोराशास्त्रे पूर्वषष्ठे पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥२५॥

कारकाक्ष मे केतु, शुक्र, सूर्य दृष्ट हो तो भी दासीपुत्र होता है। (इन योगों की प्रशंसा) विशेष राजयोग अन्यशास्त्रों से भी ग्रहण करना॥८५॥ प्राचीन काल में जो महादेवजी ने कहा था, हमने तुमको सुनाया है। यह शास्त्र अपने शिष्य या पुत्र को देना चाहिए। जिस किसी को तथा कुपुत्र और कुशिष्य को भी नहीं देना चाहिए। यह अतिगुप्त शास्त्र भगवान् शंकर की कृपा से प्राप्त हुआ है॥८६॥८७॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० स्व० भा० प्र० राजयोगादि कथन नाम
पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

अथ धनयोगाध्यायमाह

पराशर उवाच—अयातः सप्रवक्ष्यामि धनयोग विशेषतः ॥ पचमे तु मृगक्षेत्रे तस्मिन् शुक्रेण संयुते ॥१॥ लाभे शनैश्चरयुते बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे सौम्यक्षेत्रे तस्मिन्सौम्ययुते यदि ॥२॥ लाभे च चंद्रभौमी तु बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन्तूर्ययुते यदि ॥३॥ लाभे सोमात्मजस्य वा बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे तु रविक्षेत्रे तस्मिन् रविपुते यदि ॥४॥ लाभे रवींद्रपूज्यस्य बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन् शनिपुते यदि ॥ लाभे भीमेन संयुते बहुद्रव्यस्य नायकः ॥५॥ पचमे तु गुरुक्षेत्रे तस्मिन् गुरुपुते यदि ॥ लाभे तु चंद्रभौमी चेद्रुद्रव्यस्य नायकः ॥६॥ भानुक्षेत्रगते तस्मिन्लघ्रे भानौ स्थिते यदि ॥ भीमेन गुरुणा युक्ते दृष्टौ वास्याद्युतो धनैः ॥७॥ चंद्रक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्भद्रयुते यदि ॥ जीवभौमयुते यस्तु दृष्टे जातो धनी भवेत् ॥८॥ भौमक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्भौमयुते यदि ॥ सोमशुक्रार्कजैर्युक्ते दृष्टे श्रीमान्नरो भवेत् ॥९॥ गुरुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्गुरुयुते यदि ॥ सौम्यभौमयुते दृष्टे जातो यस्तु धनीश्वरः ॥१०॥ बुधक्षेत्रयुते तस्मिन् दृष्टे सौम्ययुते यदि ॥ शनिशुक्रयुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः ॥११॥

धनयोग विचार

अब विशेष धनयोग कहते हैं। पचमभाव में शुक्र की राशि हो और शुक्र युक्त हो। लाभस्थान में शनि हो तो विशेष धनी होता है॥१॥ पचमभाव में बुध स्वगृही हो। लाभस्थान में चन्द्र, मंगल हो तो विशेष धनी होता है॥२॥ पचमभाव में शनि की राशि में सूर्य स्थित हो। लाभस्थान में बुध हो तो महाधनी होता है॥३॥ पचमभाव में सूर्य स्वगृही हो। लाभस्थान में सूर्य, चन्द्र, गुरु हो तो विशेष धनी होता है॥४॥ पचमभाव में शनि स्वगृही हो। लाभस्थान में मंगल हो तो विशेष धनी होता है॥५॥ पचमभाव में गुरु स्वगृही हो। लाभस्थान में चन्द्रमंगल हो तो विशेष धनी होता है॥६॥ पचमभाव में सूर्य स्वगृही हो मंगल अथवा गुरु में दृष्ट या युक्त हो तो विशेष धनी होता है॥७॥ पचमभाव में सूर्य राशि हो और सूर्य लग्न में हो। मंगल गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥ पचमभाव में शनि स्वगृही हो। लाभस्थान में मंगल हो तो विशेष धनी होता है॥८॥ लग्न में चन्द्रमा स्वगृही हो तथा मंगल गुरु युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥ मंगल स्वगृही लग्न में हो चन्द्र, शुक्र, शनि में युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥९॥ लग्न में गुरु स्वगृही हो, बुध, मंगल में युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥१०॥ लग्न में बुध स्वगृही हो तथा शुक्र शनि में युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥११॥

मृगुत्सेत्रे गते तस्ये तस्मिन् मृगुयुते यदि ॥ शनिसौम्ययुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः ॥१२॥ ये
ये ग्रहा धर्मय बुद्धिपाम्यायुक्ताश्च दृष्टाश्च सुखप्रदास्ते ॥ रंघ्रेभरादिभ्यपर्युताः स्युः शोकप्रदा
मारकनायकैश्च ॥१३॥ क्रूरसौम्यविभागेन स्वस्यानादिवसास्तथा ॥ ग्रहाणां स्थानमेवेन
राशिदृष्टिवशात्फलम् ॥१४॥

श्रीबृहत्पारासारहोराशास्त्रेपूर्वखंडसारंशे धनयोगविचारकथन नाम
षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥

सप्त मे शुक्र स्वगृही हो। बुध शनि युक्त हो तो जातक धनी होता है ॥१२॥ जो २ ग्रह ५/९
के स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट हो वे सुखदायक होते हैं। तथा ८/१२ के स्वामी से युक्त हो तथा
२/७ के स्वामी से युक्त हो तो शोक विन्ताकारक होते हैं ॥१३॥ अन्य ग्रहों का क्रूर तथा
सौम्यभाव तथा राशि एवं भाव का विचार करके फल कहना चाहिए। और अपने स्थान से
समय का निर्देश करना चाहिए ॥१४॥

इति वृ० पा० हो० शा० पू० ख० भा० प्र० धनयोगविचारकथन नाम
षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥

अथ दरिद्रयोगाध्यायमाह

लग्नेशे वै रिष्कगते रिष्केसौ लग्नमागते ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्यतो नरः ॥१॥
लग्नाधिपे शत्रुगृहं गते वा षष्ठेश्वरे लग्नगतेपि वा चेत् ॥ विलग्नये मारकनायदृष्टे जातो
भवेन्निर्यतकोपि मुख्यः ॥२॥ लग्नेद्र केतुयुक्तौ वा लग्नेशे निधन गते ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातो
वै निर्यतो भवेत् ॥३॥ षष्ठाष्टमव्ययगते लग्नेशे पापसयुते ॥ मारकेशयुते दृष्टे राजवशोऽपि
निर्यतः ॥४॥ विलग्ननायेरिवितानारिष्कनायेन युक्ते यदि पापदृष्टे ॥ मित्रात्मने नाययुतेऽपि
दृष्टे शुभैर्न दृष्टे स भवेदरिद्रः ॥५॥ मित्रेशो धर्मनायश्च षष्ठकर्मस्थितौ क्रमात् ॥ दृष्टौ
चेन्मारकेशेन जातः स्यान्निर्यतो नरः ॥६॥ पापग्रहे लग्नगते राज्यधर्माधिपौ विना ॥
मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्यतो नरः ॥७॥ मरूत्वेशो रंघ्ररिष्कारिसस्यो मरूत्वावस्था
रंघ्ररिष्कारिभेसाः ॥ पापैर्दृष्टो मंददृष्टोऽथ वा चेद्दृष्टाक्रान्तश्चैतौ निर्यतः स्यात् ॥८॥
चंद्राक्रान्तनवशेशो मारकेशयुतो यदि ॥ मारकस्थानगो वापि जातोऽसौ निर्यतो नरः ॥९॥
विलग्नानवांशेशो रिष्कषष्ठाष्टयौ यदि ॥ मारकेशयुतौ दृष्टौ जातोऽसौ निर्यतो नरः ॥१०॥
दरिद्रयोग—लग्नेश द्वादशभाव मे हो, द्वादशेश लग्न मे हो, मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो
जातक निर्यत होता है ॥१॥ लग्नेश षष्ठभाव मे हो और षष्ठेश लग्न मे हो तथा लग्नेश को
मारकेश देखता हो तो जातक नामी दरिद्र होता है ॥२॥ लग्न या चन्द्रमा केतु युक्त हो और
लग्नेश अष्टमभाव मे हो तथा लग्नेश को मारकेश देखता हो या युक्त हो तो जातक निर्यत होता
है ॥३॥ लग्नेश पापग्रहयुक्त होकर ६/८/१२ भाव मे हो, मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो जातक
निर्यत होता है ॥४॥ लग्नेश यदि ६/८/१२ भाव के स्वामी से युक्त हो और पापदृष्ट हो तथा
शनि अपने भावेश से युक्त हो तथा शुभग्रह को दृष्टि नहीं हो तो जातक दरिद्र होता है ॥५॥

पञ्चमेश पण्डभाव मे और नवमेश दशमभाव मे हो तथा मारकेश से दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥६॥ लग्न मे पापग्रह हो, उनमे ९/१० के स्वामी नही हो तथा मारकेश से युत या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥७॥ जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ भाव मे हो अथवा जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ भाव का भी स्वामी हो और पापग्रह तथा शनिदृष्ट हों तो जातक दुखी चंचल तथा दरिद्री होता है॥८॥ चन्द्रमा जिस नवाश मे हो उस नवाश का स्वामी मारकेश से युक्त हो या मारक स्थान मे हो तो जातक निर्धन होता है॥९॥ लग्नेश और नवाशपति ६।८।१२ स्थान मे हो तथा मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥१०॥

धनसत्त्वौ च भीमेद्र कथितौ धननाशकौ ॥ बुधेक्षितौ महावित्तं कुलस्तत्रग शनि ॥११॥ निःस्वता कुलते तत्र रविर्नित्य यमेक्षित ॥ महाधनयुत स्यात् शन्यदृष्टं करोत्यसौ ॥१२॥ धनभावगता सौम्या कुर्वत्येव धन बहु ॥ बुधवृष्टो गुरुस्तत्र निर्धनं कुलते नरम् ॥१३॥ बुधश्चन्द्रे क्षितस्तत्र सर्वस्य हति निश्चितम् ॥ क्रूरसेटादियोगैश्च दारिद्र्यं सभवेन्नृणाम् ॥१४॥ ये ये ग्रहा धर्मपबुद्धिपान्या युक्ता न दृष्टा बहुदुःखदास्ते ॥ रधे चरादिव्ययैर्घृतास्ते व्ययप्रदा मारकनापकेन ॥१५॥ प्रोक्तयोगे यदा भावे दरिद्रे जायते ध्रुवम् ॥ शुभस्थानगता पापा पापस्थाने गता शुभा ॥१६॥ धनार्तिर्जायते बालो भोजनेन प्रपीडित ॥ कदापि लभतेऽन्नं च वस्यार्चितयान्वित ॥१७॥ कारकाद्वा विलग्राद्वा रधे रिप्ते द्विजोत्तम ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या दरिद्रार्तिपुतो नरः ॥१८॥

चन्द्र मंगल दूसरे घर मे हो तो धननाशक होत है॥ और बुधदृष्ट हो तो धनी होता है यदि शनि धनस्थान मे हो॥११॥ यदि धनस्थान मे सूर्य शनि दृष्ट हो तो दरिद्री और शनि से दृष्ट नही हो तो धनी करता है॥१२॥ धनभाव मे सौम्यग्रह धनवान करते है। किन्तु बुधदृष्ट गुरु निर्धन करते है॥१३॥ बुध चन्द्र से दृष्ट गुरु तो जातक को सर्वस्वहीन करते है। पापग्रहों के योग से मनुष्य दरिद्री होता है॥१४॥ जो २ ग्रह ५/९ भाव के स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट नही होते वे दुःखदायी होते है। तथा अष्टमभाव मे तथा व्ययभावेशयुक्त चरराशि मे स्थित तथा मारकेश दृष्ट हो तो बहुत मर्चबारी होते है॥१५॥ उक्त योग अष्टमभाव मे होने से निश्चय दरिद्री होता है। शुभस्थानो मे पापग्रह और अशुभ स्थानो मे सौम्य ग्रह हो तो जातक दरिद्री होता है। भोजन मिले तो वस्य की चिन्ता रहे। यह हालत रहती है॥१७॥ आत्मवारक से या लग्न से ८।१२ स्थान मे ग्रह हो, लग्न तथा वारकभाव को देखत हो तो जातक दरिद्री होता है॥१८॥

लग्नाद्वा कारकाद्वापि द्वादशे यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या व्ययशीतो भवेन्नरः ॥१९॥ लग्नेसो बीजते लग्न कारकेशोपि वारकम् ॥ प्रावत्यव्ययशीतोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥२०॥

अथ बधनयोगमाह

पञ्चास्तप्रात्कारकाद्वा यदा वा वित्तद्वादशे ॥ पञ्चमे नवमे वापि तथा घट्टेपि द्वादशे ॥२१॥

तृतीयैकादशे विप्र चतुर्थे दशमेपि वा ॥ ग्रहसाम्ये तंया विप्र एकमेक इय इयम् ॥२२॥ तथा
त्रय त्रय तिष्ठेदिति रीत्या नमश्चरा ॥ विते द्वौ द्वादशे द्वौ च तथा स्यात्त्र त्रये त्रयम् ॥२३॥
इति क्रमेण साम्येन बधकारक उच्यते ॥ श्रुत्वावधयोगोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥२४॥
राशिना राशिना याना शुभसम्बन्धके द्विज ॥ तदा निरोध सजातस्तनुपीडा विधीयते ॥२५॥
द्वादशे द्वितये वापि त्रिकोणे रिष्कयष्टमे ॥ ताम्रे त्रये व्योमतुर्थे पापा वै बधकारका ॥२६॥

लग्न से या कारक से १२ भाव में ग्रह हो लग्नकारक को देखते हो तो व्ययशील होता है ॥१९॥ लग्न से लग्न को और कारकेश कारक को देखता हो तो जातक बहुत सर्वोत्तम होता है ॥२०॥

बधन योग

लग्न से या कारक लग्न से २।१२ में ५।९ में ६।१२ में ३।११ में ४।१० में बराबर २ ग्रह हो अपात् १-१ या २-२ अथवा ३।३ ग्रह हो अथवा २।१२ में २-२ और स्थानों में ३-३ ग्रह हो तो बन्धन (कैद) होने का योग है ॥२१॥ २४। भाव तथा भावेशों का शुभसम्बन्ध हो तो कैद तो नहीं हो परन्तु शरीरपीडा अवश्य हो ॥२५॥ तथा २।१२ में ५।९ में ६।१२ में और ३।११ तथा ४।१० में पापग्रह हो तो बन्धन कारक होते हैं ॥२६॥

तथा तत्तदशाना च सम्यध सतखेटत ॥ प्रहारश्रुत्वादिप्र बधयोगो न सशय ॥२७॥
भार्गवात्कारकाद्वापि लग्नाखेटपदाद्द्विज ॥ त्रिकोणस्यो यदा राहु सूर्यदृष्टोपि नेत्ररक् ॥२८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखेटसारो दरिद्रयोगकथन सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

तथा इन उपर्युक्त भावराशियों की दशा का सम्बन्ध पापग्रह से हो तो मार तथा कैद दोनों निःशय होती है ॥२७॥ शुक से या कारक से अथवा लग्नाखेटपद से त्रिकोण स्थान में राहु यदि सूर्य दृष्ट हो तो नेत्ररोगी होता है ॥२८॥

इति श्री वृ० पा० हो० शा० पू० ल० भा० प्र० दरिद्रबधनयोग कथन
नामसप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

अथ पूर्वजन्मवर्णनाध्यायः

अथ बन्धने विशेषेण पूर्वपापस्य निश्चयम् ॥ नवाशान्मेपमारम्य मेपादी हि कमाद्वदेत् ॥१॥
निशाकरनवाशाधिपाप निश्चित्य सर्वश ॥२॥ मेये मेयनवाशाकेषु च क्रमान्मेपस्य भूयाद्वध
उष्णवेमपराधक च मुघियो निश्चित्य गोसजकम् ॥ इदं चारायधस्तथा मुनियत गर्भेण
वदेत्कर्त्तव्यं सर्ववधस्तथा मुनियत सिंहे चतुष्पाद्वध ॥३॥ यन्त्याना मृगजातीना यद्यो दाया नलेन
हि ॥ सिंहे निश्चित्य मतिमान्देवचारापरि द्विज ॥४॥

पूर्वजन्मवर्णन

अब विशेषरूप से पूर्वजन्म में पाप के निश्चय की रीति कहते हैं। इसका विचार पूर्व कहें

अनुसार १-१ राशि के ९-९ नवाश हैं। मेष से आरभ होते हैं। क्रम से गणना करना चाहिए॥१॥ जन्मलग्न के नवाश से तथा चन्द्रमा के नवाश से एक चन्द्रनवाशश से पूर्व जन्म तथा वर्तमान जन्म एवं पर जन्म का विचार करना चाहिए॥२॥ मेष राशि में मेष के नवाश में जन्म हो तो जातक ने पूर्वजन्म में भेड़-बकरी का वध किया है। वृष के नवाश में बैल की हत्या अथवा गोहत्या की है। ऐसा निश्चय करना। मिथुन के नवाश में गर्भहत्या (भ्रूणहत्या) की है। कर्क के नवाश में सर्प हत्या तथा सिंह के नवाश में चौपाया पशु की हत्या अर्थात् जंगल में आग लगाकर पशुओं की हत्या। ऐसा सिंह के नवाश में निर्णय करो।

कन्याया च वदेद्विद्वान्पाप स्त्रीत्यागज मुने ॥ धनस्याहरण व्याजितुलाया च वदेदुबुध ॥५॥
 वृश्चिके ग्रामचटके वध चैवाडजस्य हि ॥ मित्रद्रोहकृते ब्रूयाद्विनिव्यय विशक्ति ॥६॥ फलाना
 वृक्षजातीना मकरे चौर्यभेदनम् ॥ कुम्भे चैवानुसूयत वाच्य विप्र विप्रश्चित ॥७॥ ब्रूयाद्विप्रधन
 मीने पूर्वाद्धिं तु विप्रश्चित ॥ उत्तरार्धे धनादान तद्वध परिकल्पितम् ॥८॥ एकाशे
 चैकजन्मस्याद्विद्वदशे चैव द्विजन्मनी ॥ त्र्यशे चैव त्रिजन्म स्याच्छेषे जन्मचतुष्टयम् ॥९॥ एवं
 सर्वत्र निश्चित्य लग्ने चैवेह जन्मनि ॥ कर्काद्या विप्र जन्माद्य वदेत्सर्वत्र निश्चयम् ॥१०॥
 अन्यथा जारजो भूयाल्लग्नन्दु नेक्षते पुरु ॥ एवं चाष्टोत्तरशत नवाशा परिकीर्तिता ॥११॥
 क्षत्रिये क्षत्रियादीना वैश्ये चैव पिडादिकान् ॥ शूद्रे शूद्रादिकान्वाच्य विप्रे वै
 ब्राह्मणादिकान् ॥१२॥

कन्या में विवाहित स्त्री का त्याग तथा तुला के नवाश में ठगी से धनहरण एवं वृश्चिक के नवाश में चिड़िया आदि पक्षी के अंडों का नाश तथा धनु के नवाश में मित्रद्रोह एवं मकर के नवाश में चोरी से फल तथा वृक्षों का छेदन कुम्भ में परद्रोह तथा मीन के पूर्वाद्धि में विप्रधन की चोरी या बरजोरी (जबर्दस्ती से लेना) और उत्तरार्ध में विप्र को मारकर धन लेना॥३ से ८ तक॥ (इस प्रकार ९ नवाशों में जो राशि हो उसी के अनुसार पूर्वजन्म के पाप का निश्चय करो। यह फल नवाशराशि का वही। लग्न के अशो से नवाश का ज्ञान सहज है) प्रथम नवाश में एक जन्म का पाप और द्वितीय नवाश में दो जन्म का, तीसरे में तीन और शेष नवाशों में चार जन्म कहना॥९॥ इस प्रकार लग्न से इस जन्म में पूर्वपाप का फल कहना। बर्ष आदि नवाश राशि से ब्राह्मण आदि वर्ण का निर्देश करना॥१०॥ लग्न और चन्द्रमा पर गुरु दृष्टि न हो तो जारज सतान कहना। इस रीति से १२X८= १०८ नवाशों का फल वही॥११॥ नवाश में क्षत्रिय राशि हो तो पूर्वजन्म में क्षत्रिय जाति में जन्म और वैश्य में वैश्य तथा शूद्र में शूद्र कहना चाहिए॥१२॥

परे जन्मनि जन्म स्यादुबुद्धया चैवैहिक वदेत् ॥ तदीशे स्वोच्चता प्राप्ते मृते स्वर्गं गतो भवेत् ॥१३॥ तदीशे नीचता प्राप्ते नरकादागत्य जन्मिवान् ॥ समत्वे च समात्त्वोक्तान्मित्रे तीर्थे तनु त्यजेत् ॥१४॥ तदीशे वारिवेश्मस्ये मृतं प्रेतत्वमाप्नुयात् ॥ तस्मादागत्य जज्ञेप्सी पाप पुण्य भुनक्ति हि ॥१५॥ तदीशे पापसपुक्ते नीचे वापि स्थिते सति ॥ बृजिन तामस पूर्व कृत तामसनिश्चितम् ॥१६॥ कुजकेतुसमापुक्ते समस्ये राजस वदेत् ॥ शुभेष्वुच्चस्थिते वाच्य

सात्त्विकं धृजिनं बुधैः ॥१७॥ अनेनैव प्रकारेण लग्ने निश्चित्य बुद्धिमान् ॥ इह जन्मनि सयोग्यं क्रूरसाम्यं समत्वकम् ॥१८॥ सर्वस्य मानवस्यापि नक्षत्रत्रयमीरितम् ॥ जन्मनक्षत्रमेकं तु द्वितीयं मनुजन्म च ॥१९॥ त्रिजन्मं च तृतीयं स्याद्भ्रातृव्यं मुनिसत्तम ॥२०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डसारांशे पूर्वजन्मवर्णनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

इसी प्रकार अपनी बुद्धि से उपर्युक्त ग्राम्यानुसार विचार करके पूर्व वर्तमान और आगामी जन्म का फल कहना चाहिए। जैसे नवाशपति उज्ज्वराशि में हो तो मरण पर स्वर्ग में गति (गमन) ॥१३॥ और नीच का हो तो नरक से आकर जन्म लिया है। समम इस लोक में इसी लोक में आना जाना हो रहा है। मित्र राशि में हो तो तीर्थ में मरण होगा ॥१४॥ नवाशेष जलराशि में हो तो मरने के बाद प्रेतगति में था और वह भोगकर अब मृत्यु लोक में जन्म लेकर पाप पुण्य का फल भोगता है ॥१५॥ नवाशेष पापग्रह युक्त हो तो पूर्वजन्म में तामस योनि (पशु-पक्षि) भोग कर आया है। यह निश्चय है ॥१६॥ मंगल चेतु से युक्त (नवाशेष) हो और सम राशि में हो तो समान राजस योनि में था। शुभराशि में उज्ज्वल हो तो सात्त्विक योनि में था। इस प्रकार जैसी योनि में था वैसा ही तामस राजस, सात्त्विक पाप भी रहना ॥१७॥ इसी प्रकार से बुद्धिमान को चाहिए कि-लग्न के नवाश में निश्चय करके इस जन्म के भी तामस, राजस तथा सात्त्विक कर्म का कथन करे ॥१८॥ सम्पूर्ण मानव समाज के तीन जन्म के तीन नक्षत्र जाने ॥१९॥ दूसरा यह मनुष्य जन्म का नक्षत्र तीसरा बन्धु वर्ण का जानो ॥२०॥

इति श्रीबृ० पा० हा० शा० पू० स० सा० पूर्वजन्मवर्णनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

जीवानां सुखदुःखवर्णनाध्यायः

मुजन्मोवाच—आजन्ममृत्युर्पपन्नं जगत् सुखदुःखकम् ॥ बृहि मे रूपया सौम्य विवाहादि सुतादिकम् ॥१॥ लोमश उवाच—सूर्यागारागुमदानामशान्सयोग्यं सत्कृतं ॥ तदापु शरदाद्यस्य भागं कृत्वा वदेत्फलम् ॥२॥ तद्भागे दुर्वृतं वाच्यं ब्रूयात्ते पण्डितं क्वचित् ॥ वेदोनाप्ते सुखं किञ्चित्पूनाप्ते स्त्रियां भयम् ॥३॥ दशोनाप्ते हि हृत्पौडां भूषोनाप्ते हि भेषजम् ॥ विशोनाप्ते स्फुटतनुं तत्त्वोनाप्ते श्रुती व्यया ॥४॥ त्रिशोनाप्ते शीतलाशीन् द्विवेदोनाप्ते भयं मृते ॥ पचाराज्यूनकेनाप्ते वारिभीतिर्निगद्यते ॥५॥

सुखदुःखवर्णनाध्यायः (लोमश सहिता से)

(मुजन्मा, लोमश सवादा) मुजन्मा ने कहा-जन्म से मृत्यु तक के सुख, दुःख विवाह, सन्तान आदि का विचार चाहिए ॥१॥ ऋषि लोमशजी ने कहा-सूर्य, मंगल, राहु तथा शनि के अश यत्ना, विरुद्धा अथवा जो जोड़ना पश्चात् आगे कह दूँ अथवा जो पटाकर शेष जो रहे उसकी (यहां राशि अथवा नहीं रहना) केवल अशदि अथवा रहना) अश सत्या हो आयु की

सप्राप्ते मित्रमृत्युः स्याद्गुरुणा सहचारिणाम्। पचमाशे प्राप्तिकारस्तत्पचाशे धनं लभेत् ॥१५॥
 पष्ठाशो दुःखदस्तस्य तत्पष्ठाशं च वा दिशेत् ॥ सप्ताशे तद्दशाशे वा घाता वाच्या शिलादित् ॥१६॥
 लग्ने वित्ते शिलाघातो जलघातस्त्रितुर्ययो ॥ पुत्रे पठे वृक्षघातो मन्वे मृत्यो चतुष्पदात् ॥१७॥
 धर्मे कर्मे कर्कघातो व्यये लाभे सरीसृपात् ॥ एव स्थिति स्याद्ग्रहाणा सप्ताशकफलं ॥१८॥
 आशाशे पुण्यदानादि रुद्राशे समदुःखकम् ॥ अष्टमाशे मित्रयोगो नवमाशे ॥१९॥
 अकशितिव्ययो वाच्यो विश्वाशो मानहानिदः ॥ शक्राशे कलहः ॥२०॥
 चौरकान्वदेत् ॥ भूपाशे परजायादिसगावाप्तिर्निगद्यते ॥
 अत्यष्टमशे हि नोद्वेगो धृत्यशे शुचमादिशेत् ॥२१॥ अतिधृत्यः शके यात्रा विशाशे ॥२२॥
 वधनादिकान् ॥ अर्को व्यवस्थितो यत्र तत्रैव पितृजं सुखम् ॥२३॥

लग्नाश में गुरु, मित्र आदि की मृत्यु। पचमाश प्राप्तिकारक है। २५ वे भाग में धनप्राप्ति हो। पष्ठाश दुःखदायी है। ३६वा भाग भी दुःखदायी है। सप्ताश या दशाश में शिला आदि से घात हो। १५॥१६॥ लग्न के तथा धनभाव के भाग में शिला से घात। ३४ वे भाग में जलाघात ५१६ में वृक्षघात। ७८ में चीपायेसे घात। १७॥ १११० से कर्क (केकडा) जलजन्तु से घात। १११२ में सर्प से घात होता है। इस प्रकार १२ भाग करके १२ भावों पर फल समझना। और ७ भाग करके ७ ग्रहों के अनुसार फल समझना। १८॥ १० म अश में मित्रयोग और नवमाश में गुरुयोग होता है। ११॥ १२ वे अश में साधारण दुःख। ८ म अश में मित्रयोग और नवमाश में गुरुयोग होता है। ११॥ १२ वे अश में अतिखर्च। १३ वे में मानहानि। १४ वे में कलह। १५ वे में चौरभय। २०॥ १६ वें अश में परस्त्रीसगा। १७ में थैला। १८ में चिन्ता होती है। २१॥ १९ वे में यात्रा। २० वे में वधन होता है। सूर्य स्थित जो अश है उसमें पिता को सुख होता है। २२॥

यत्र चन्द्र स्थितस्तत्र विवाहं परिकल्पितम् ॥ भ्रातृयोगो भवेत्तत्र यत्रागारकतस्थितिः ॥२३॥
 स्वसायोगो हि यत्र सौ यत्र वाचस्पति स्थितः ॥ तत्र पुत्रो यत्र गुरुस्तत्र कन्या प्रकीर्तिता ॥२४॥
 यत्र मरु स्थितस्तत्र मातृजं सुखमादिशेत् ॥ एव ग्रहानुसारेण सुखादि परिचितयेत् ॥२५॥
 लग्नाधीशमदाधीशी भागादिवेदं सगुणौ ॥ कृत्वा तदंतरमिमे वर्षे वाच्यो विवाहकः ॥२६॥ तत्पौ
 यत्र स्थिती भावयोगे चांतरके तथा ॥ राशि विवाहद्विगुणौ तद्वर्षे वा विवाहकम् ॥२७॥
 तत्पत्न्योरंतरं कार्यं राशिभागादिकान्हरेत् ॥ सव्याकृत्यमुद्गाहमेपाके वा विनिर्दिशेत् ॥२८॥
 एव शुतर्कलाभाभ्यां पुत्रकन्ये विचिन्तयेत् ॥ तथैव भ्रातृभागाभ्यां भ्रातृभगिनीं विचिन्तयेत् ॥२९॥
 व्ययलाभातरं कार्यतत्पत्न्योरपि चांतरम् ॥ भावांतरं व्ययं ज्ञेयं ताम् स्वाम्य-
 तरकमात् ॥३०॥

जिस अश में चन्द्रमा हो उसमें विवाह हो। मंगल के अश में भ्रातृयोग होता है। २३॥
 बुधराश में वहिन और गुरु अश में पुत्र तथा शुक्रराश में कन्या हो। २४॥ शन्यराश में मातृ सुख।
 इस प्रकार ग्रहों से सुख की कल्पना करे। २५॥ लग्न सप्तमेश के अशादि को ४ से गुणा करे तो
 अशों के वर्ष में विवाह होता है। २६॥ लग्न सप्तमेश जिन स्थानों में हो उन भावों की राशियों

का योग और अन्तर करे तो विवाह का वर्ष होगा। अथवा द्विगुण अक विवाह का वर्ष होगा॥२६॥ अथवा १।७ के स्वामीके राश्यादि अकका अन्तर करे और भावों के योग में भाग दे तो लब्धाव तुल्य वर्ष में विवाह होता है॥२८॥ इसी प्रकार ५।११ भाव से पुत्रकन्या का विचार करे। तथा आतृ भाग्य से भाई बहन का विचार करे॥२९॥ १।१।१२ भाव का अन्तर करे तो व्ययवर्ष और भावेशों के अन्तर लाभ वर्ष होते हैं॥३०॥

सूर्येन्द्वारजेज्यशुक्रमदाना भार्गवादयः ॥ तत्तत्स्थितभावाना राशिभागादिका युति ॥३१॥
तद्योगे द्वादशे तष्टे जन्ममासे मृति घटेत् ॥ त्रिशद्विगुण्य दिन ज्ञेयमेव नाडीपलादिकम् ॥३२॥
लग्नचक्रांतर कार्य तत्कला तत्पलादिकम् ॥ जन्मकाले विहीने तु जलप्रसव उच्यते ॥३३॥
सूर्यचक्रांतर कार्य तनुयुक्त तयोत्तरम् ॥ तत्तत्प्रमितिके वर्षे लाभ वै पुष्कल घटेत् ॥३४॥
राशिलग्नप्रयोर्योगे मृत्युयुक्ते विनिदिशे ॥ ऋण वा ऋणमुक्त वा भवेद्वै चद्रयोगके ॥३५॥
सूर्येन्दुलग्नसंयोगे राशीशस्पर्शसंयुते ॥ तद्वर्षे महती पीडा हीने सौख्यं न सशय ॥३६॥
मुतभाग्यांतर कार्य तद्वर्षे शीतलादिकम् ॥ लग्नस्वांतरसंयोगे पितुर्मृत्युर्न सशय ॥३७॥
राशीशकर्मसंयोगे तदा कर्मोदये वदेत् ॥ धर्मव्ययसमायोगे तद्वर्षे व्ययनिश्चय ॥३८॥
मदनांतरभावेषु सर्वत्रैव विलक्षयेत् ॥ भाग्यादिमृत्युपर्यंत ग्रहाणा फलमुच्यते ॥३९॥ यत्तथा
खलु मे पृष्ट तदिदं कथितं मया ॥ यस्मै कस्मै न दातव्यं स्ववाक्यपरितिरिद्धये ॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडसारांशे जीवानां सुखदुःखवर्णनं
नामैकोनविंशत्तमोऽध्यायः ॥२९॥

सू० च० म० बु० बु० शु० श० इन ग्रहों के ग्रहस्थित भावों का याग कर॥३१॥ इस जोड़ में १२ का भाग दे तो उस वर्ष में जन्म के मास में मृत्यु कहे। तीस ३० से गुनने पर दिन घटी पल समय होगा॥३२॥ लग्न चन्द्रका अन्तर करे। उसमें इष्ट घटावे तो जलप्रसव (गर्भाधान) का इष्ट होता है॥३३॥ सूर्य चन्द्रान्तर में लग्न जोड़े। आगत वर्ष में बहुत लाभ हो॥३४॥ लग्न और लग्नेश की जोड़कर अष्टमभाव भी जोड़े। उस वर्ष में ऋण होता है। चन्द्रयोग के वर्षमें ऋण मुक्त होता है॥३५॥ लग्न सू० च० योगवर्ष में पीडा और अन्तरवर्ष में सुख होता है॥३६॥ ५।९ भावान्तर वर्ष में शीतला तथा १/२ के अन्तर के योग वर्ष में पिता की मृत्यु॥ लग्न दशम संयोग वर्ष में भाग्योदय। १/१२ योगवर्ष में व्यय होता है। सातवें भाव तक के ग्रहों का पल कहा गया। जो तुमने हमसे पूछा था सो सब हमने तुमसे कह दिया है। अपनी वाकसिद्धि की रक्षार्थ यह ज्ञान जिस किसी को नहीं देना॥३१-४०॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० ख० सा० जीवानां सुखदुःखवर्णनं
नामैकोनविंशत्तमोऽध्यायः ॥२९॥

उदाहरणार्थ स्पष्टचक्र

सर्व ग्रह अशादि भाव राश्यादियोग मे निम्न अंक घटाकर १२० का भाग दे। शेष आयु के वर्ष हैं।

अनांक

धी

| | | | | |
|---|-----|-----------|------|--------------------|
| ७ | २- | पीडा | ६० | चौरभय |
| | ४- | मुल | ७०- | अग्निभय |
| | ६- | स्त्रीभय | ८० | अल्पघात |
| | १०- | हृत्पीडा | ९०- | " " |
| १ | १४- | औषधसेवन | १००- | पुत्रसाम |
| | २०- | स्फुटतनु | १०८- | व्याधि |
| | २५- | कर्णव्यथा | ११६- | विवाह |
| | ३०- | शीतलामय | १२० | मृत्यु (१ मास बाद) |
| | ३२ | मृत्युभय | ० | |
| | ५०- | वारिशीति | ० | |

त्रिभागे
तुपति

तत्रिभागे—

तनुपति—

धनागे—

महनागे—

मुक्तागे—

मुक्तागे—

रिपुभागे—

जायागे—

अष्टमागे—

आयुभागे—

कर्मणि—

साधनागे—

व्यप्रागे—

सप्रागे—

पाताद् कणाति

मात्रादि मरण

धनहरण

मृत्यु

मातृमृत्यु

पुत्रमृत्यु

रिपुमृत्यु

जायामृत्यु

अष्टममृत्यु

प्रभूमृत्यु

पितृमृत्यु

जीविना हाति

पशुप्राह्म हाति

मित्रमृत्यु

बाद—गु० घ० रा० म० से (भागयोग से) अगुमरण
और ब० बुध० शु० म० से (भागयोग से) शुभमरण

| | | |
|---|--------------|------------|
| | पञ्चमाशे— | प्राप्ति |
| | तत्पञ्चमाशे— | घनप्राप्ति |
| | षष्ठाशे— | दुःखद |
| ३ | तत्षष्ठाशे— | " " |
| | सप्ताशे— | घात |
| | दशाशे— | घात |

| | | |
|---|---------------|-------------|
| | सप्ते वित्ते— | शिलाघात |
| | ३-४— | जलघात |
| ४ | ५-६— | वृक्षघात |
| | ७-८— | चतुष्पद घात |
| | ९-१०— | कर्कघात |
| | ११-१२— | सर्पघात |

एव स्थिति स्याद् ग्रहाणां सप्ताराकफलं भवेत्—

| | | |
|---|-----------------|--------------|
| | आश्विाशे— | पुन्यदान |
| | रक्षाशे— | समदुःख |
| | अष्टमाशे— | मिश्रयोग |
| | नवमाशे— | गुरो र्भदेत् |
| | अकशि— | अतिव्यय |
| | १३ विश्वाशे— | मानहानि |
| ५ | १४ शक्राशे— | कलह |
| | १५ तिष्यशे— | घोरभय |
| | १६ भूपाशे— | परज्वालासम |
| | १७ अत्यष्टमाशे— | उद्वेगान्ति |
| | १८ धृत्यशे— | शोक |
| | १९ अतिधृत्यशे— | यात्रा |
| | विशि २० अशे— | अयन |

| | | |
|---|-------------------|---------------|
| | सूर्यस्थितिबलात्— | पितृमुख |
| | चन्द्र " "— | विवाह मुख |
| | भौम " "— | भ्रातृयोग मुख |
| | बुध " "— | भगिनी मुख |
| ६ | शुक्र " "— | पुत्र योग मुख |
| | शुक्र " "— | स्नानयोग मुख |
| | शनि " "— | मातृ मुख |

- ७- विवाह- १-तप्रेष, सप्तमेश के अशादि चतुर्गुणित करके अन्तर करे।
अशमित वर्ष में विवाह हो।
२-तप्रेष, सप्तमेश स्थित भाव योग या अन्तर के वर्ष में अथवा
द्विगुण में
३-तप्रेष, सप्तमेश का अन्तर करके अश करे, तत्तुल्य वर्ष में
विवाह हो।

- १ इसी तरह ५१११ भावशों से-पुत्र कन्या का विवाह
कहना।
२-३१९ भावशों से भाई बहन का विवाह देखना।

ताम तथा ध्यय भावों के अन्तर से वर्ष,
और १११२ के स्वाग्री के अन्तर से ताम

सूर्य से शनि तक के ग्रहों के भागादि तथा ग्रहस्थित भावों के
राश्यादि (सब) जोड़कर (अश करके १२० का भाग दे, शेष
अक अल्प, मध्य दीर्घ आयु के अनुसार आयु क वर्ष हैं। तथा उस
सख्या में १२ का भाग दे, शेष मास हैं। ३० से दिन और ६० से
घटी एव पल हैं।

(इसीमें न० १ क्रिया का योग है)

ग्रहयोग से विचार

- | | | |
|-----|--------------|--------------------------------------|
| १- | आधान- | सप्त सन्धान्तर से। |
| २- | अधिकताम- | सूर्य सन्धान्तरमे सप्त योग। |
| ३- | श्रुणमुक्ति- | सन्ध सप्तेश योग से। |
| ४- | अश- | सन्ध अष्टमेश योग से। |
| ५- | सहान् कष्ट- | सू० व० स० स० स० स० से। |
| ६- | कष्टमुक्ति- | सू० व० स० इनका योग राशीरुते अन्य हो। |
| ७- | शीतला- | ५१९ भावोंके अन्तर से (भाग वर्ष) |
| ८- | पितृमुक्त- | ११२ के अन्तर, या योग में |
| ९- | भाग्योदय- | स० स० तथा दशम के योग में |
| १०- | विरोध ध्यय- | १-१२ के योग वर्ष में |

ग्रहों के शुभांक (जातक तब से)

सू० व० म० बु० ह० शु० रा० रा०
१९, ४, १९, १०, १३, ८, ३०, १८

ग्रहाद्यवस्थाफलमाह

मैत्रेय उवाच—आदित्यादि ग्रहाणां च ह्यवस्था च पृथक्पृथक् ॥ भेदाः कतिविधाः सन्ति
कथय त्वं कृपानिधे ॥१॥

पराशर उवाच—भास्करादिग्रहाणां च ह्यवस्था विविधापि च ॥ पृष्णवत्यामितावस्था
सारभूतं वदाम्यहम् ॥२॥

ग्रहाद्यवस्था फल कथन

मैत्रेयजी ने कहा—सूर्य आदि ग्रहों की अलग अलग अवस्था तथा भेद कितने हैं सो कहिये॥
पराशरजी ने कहा—सूर्य आदि ग्रहों की अनेक अवस्था है, उनमें मुख्य १६ अवस्था है। उनमें से
सारभूत अवस्था कहते हैं॥१-२॥

अथ जाग्रदाद्यवस्थामाह

अश्विनादंश त्रिभाग च कल्पयित्वा पृथक् पृथक् ॥ विषमादिक्रमेणैव समे वै विपरीतकम् ॥३॥
विज्ञाय प्रथमं पुस्तं जाग्रत्स्वप्नमुपुप्तिका ॥ विशेषतः परीक्षा स्याज्जागरः कार्यसाधकः ॥४॥
स्वप्नाऽवस्था मध्यफला उपदेष्टा गुरुर्पदि ॥ निष्फला चरमावस्था ज्ञातव्या
मुनिसत्तम ॥५॥

अथ दीप्ताद्यवस्थामाह

दीप्तः स्वस्थः प्रमुदितः शांतो दीनोऽतिदुःखितः ॥ विकलश्च खल कोपी नवघा खेचरो भवेत्
॥६॥ उच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वस्थः स्वोच्चातिमित्रभे ॥ मुदितो मित्रभे शांतः समभे दीन
उच्यते ॥७॥ शत्रुभे दुःखितोऽतीव विकल पापसंयुतः ॥ खलः खलग्रहे ज्ञेयः कोपी
स्पादकसंयुतः ॥८॥ पाके प्रदीप्तस्य घराधिपत्यमुत्साहशौर्यं धनवाहने च ॥ स्त्रीपुत्रलाभ
शुभबधुपूजां क्षितोश्चरान्मा नमुपैति विद्याम् ॥९॥

जाग्रत आदि अवस्था

राशि के ३० अंशों के ३ भाग कल्पना करें। प्रत्येक भाग में जाग्रत, स्वप्न, मुपुप्ति ३
अवस्था होती हैं। विषम राशियों में पहले १० अंश तक जाग्रत, बाद २० अंश तक स्वप्न,
उसके बाद ३० अंश तक मुपुप्ति। और सम राशि में १० अंश तक मुपुप्ति और २० अंश तक
स्वप्न तथा ३० तक जाग्रत अवस्था होती है॥३॥ प्रथम ग्रह की अवस्था जानकर

कथिता प्रहाणाम् ॥१८॥ फलं तु किञ्चित्प्रितनोति बास्तभ्राद्धं कुमारो यतते न पुंसाम् ॥ युवा समग्रं
सचरोऽथ वृद्धः फलं च दुष्टं मरणं मृताख्यम् ॥१९॥

अथ प्रवासाद्यवस्थामाह

प्रवासनष्टा च मृता जया हास्या रतिर्मुदा ॥ मुप्ता भुक्ता ज्वरा कंया सुस्थितिर्नमसन्निभा ॥२०॥
घष्टिष्ठं गतभं भुक्तघटोपुक्तं युगाहतम् ॥ शराग्निहृत्लब्धतोऽर्कान्धेयावस्थाद्विजोत्तम ॥२१॥

खल ग्रह की दशा में कलह, वियोग, माता पिता की मृत्यु या वियोग, शत्रु से भय, धन और भूमि का नाश तथा नित्य नई निन्दा होती है ॥१६॥ क्रोधी ग्रह की दशा में अनेक प्रकार के दुःख, धन, स्त्री, सुत, बन्धु इनका नाश, पुत्र आदि को पीडा तथा नेत्र में बीमारी होती है ॥१७॥ बाल आदि अवस्था तथा फल—बाल आदि ५ अवस्था होती हैं। बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृता ६-६ अंशों की १-१ अवस्था होती है। विषम राशि में लिखित क्रम से तथा सम राशि में उल्टे क्रम से सूर्यादि ग्रहों की ये दशाये होती हैं। फल—ग्रह बाल अवस्था में हो तो कुछ फल देता है। कुमार अवस्था में यत्न करने से आधा फल तथा युवा अवस्था में पूरा फल। वृद्ध अवस्था में उद्योग हानि। और मृत्यु अवस्था में मरणकारी है ॥१८॥१९॥

प्रवास आदि अवस्था—प्रवास आदि १२ अवस्थाएँ होती हैं। प्रवास, नष्टा, मृता, जया, हास्या, रति, मुदा, मुप्ता, भुक्ता, ज्वरा, कंया, सुस्थिति। इन अवस्थाओं का फल इनके नाम के समान है ॥२०॥ वर्तमान नक्षत्र की भुक्त घटी (भयात्) में गत नक्षत्र सख्या को ६० से गुणा करके योग करना। इस योग को पुन ४ से गुणा करना। फिर ४५ से भाग देना। जो शेष बचे वह यदि १२ से अधिक हो तो १२ से भाग देना। शेष बचे उस सख्या की अवस्था जानना ॥२१॥

प्रवासः प्रवासोपगे जन्मकालेऽर्धनाशस्तु नष्टोपगे मृत्युभीतिः ॥ मृतावस्थिते स्याज्जयायां जयस्तु विलासस्तु हास्योपगे कामिनीभिः ॥२२॥ रतौ स्याद्रतिः क्रीडिता सौख्यदात्री प्रमुत्तापि निद्रा कलि देहपीडाम् ॥ भय तापहानिः मुख स्यात् भुक्त्वा ज्वरा कंप्तिता सुस्थिता सुक्रमेण ॥२३॥

अथ लज्जिताद्यवस्थामाह

लज्जितो गर्वितश्चैव क्षुधितस्तृपितस्तथा ॥ मुदितः क्षोभितश्चैव प्रहमावा प्रकीर्तितः ॥२४॥
पुत्रगेहगतः खेदोः राहकेतुपुतो भवेत् ॥ रविमदकुजेर्मुक्तो लज्जितो ग्रह एव च ॥२५॥

फल—जन्मकाल में ग्रह की प्रवास अवस्था हो तो मुसाफिरी। नाश अवस्था में धन का नाश। मृत अवस्था में मृत्यु से भया। जया अवस्था में जय। हास्य अवस्था में स्त्रियों से विलास। रति अवस्था में रमण। मुत्ता अवस्था में निद्रा। कलि अवस्था में देह पीडा। कामित अवस्था में ज्वरा। भुक्त अवस्था में मुख और चिन्ता—हानि। सुस्थिर अवस्था में ज्ञान्ति—दायिनी होती है ॥२२॥२३॥

लज्जित आदि अवस्था—लज्जित, गर्वित, क्षुधित, तृपित, मुदित क्षुभित ये ६ अवस्थाये भी ग्रहो को होती है॥२४॥ पंचम भाव मे ग्रह स्थित हो। सूर्य, मंगल, शनि से युक्त हो अथवा राहुकेतु से युक्त हो तो 'लज्जित' अवस्था होती है॥२५॥

तुंगस्थानगतो वापि त्रिकोणेपि भवेत्पुनः ॥ गर्वितः सोपि गदितो निर्विरांकं द्विजोत्तम ॥२६॥
शत्रुगेही शत्रुयुक्तो रिपुदृष्टो भवेद्यदि ॥ क्षुधितः स च विज्ञेयः शनिमुक्तो यथा तथा ॥२७॥
जलराशौ स्थितः खेटः शत्रुणा चावलोकितः ॥ शुभग्रह न पश्यति तृपितः स ज्वाहतः ॥२८॥
मित्रगेही मित्रयुक्तो मित्रेण चावलोकितः ॥ गुरुणा सहितो यश्च मुदितः स प्रकीर्तितः ॥२९॥
रविणा सहितो यश्च पापाः पश्यन्ति सर्वथा ॥ क्षोभितं तं विजानीयाच्छत्रुणा यदि वीक्षितः ॥३०॥
येषु येषु च भावेषु ग्रहास्तिष्ठन्ति सर्वथा ॥ क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखमाजनः ॥३१॥
एवं क्रमेण बौद्धव्यं सर्वभावेषु पंडितः ॥ बलाबलविचारेण वक्तव्यः फलनिर्णयः ॥३२॥

उच्च स्थान मे हो अथवा त्रिकोण मे हो तो 'गर्वित' अवस्था होती है॥२६॥ शत्रु गृह मे शत्रु ग्रह से युक्त या दृष्ट हो अथवा शनिमुक्त हो तो 'क्षुधित' अवस्था होती है॥२७॥ ग्रह जलराशि मे शत्रु से दृष्ट हो, शुभग्रह की दृष्टि नहीं हो तो 'तृपित' अवस्था होती है॥२८॥ ग्रह मित्र के घर मे मित्रग्रह से युक्त तथा दृष्ट तथा गुरु सहित हो तो 'मुदित' होती है॥२९॥ जो ग्रह सूर्य युक्त हो पापग्रह देखते हो तथा शत्रु दृष्ट हो तो 'क्षुभित' है॥३०॥
फल-जिन २ भावो मे 'क्षुधित' और 'क्षुभित' ग्रह हो उन भावो का फल मनुष्य के लिये दुःखदायी होता है॥३१॥ इसी प्रकार भावो मे बलाबल का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए॥३२॥

अन्योन्यं च मुदा युक्तं फलं मिश्रं वदेत्पुनः ॥ बलहीने तदा हानिः सबले च महाफलम् ॥३३॥
कर्मस्थाने स्थितो यस्य लज्जितस्तृपितस्तथा ॥ क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखमाजनः ॥३४॥
सुतस्थाने भवेद्यस्य लज्जितो ग्रह एव च ॥ सुतनाशो भवेत्तस्य एकस्तिष्ठति सर्वदा ॥३५॥
क्षोभितस्तृपितश्चैव सप्तमे यस्य वा भवेत् ॥ क्षिपते तस्य नारी च सत्यमाहुर्द्विजोत्तम ॥३६॥
नवालपाराममुखं नृपत्यं कलापदुत्वं विदधाति पुंसाम् ॥ तदार्थलाभं ध्यवहारवृद्धिं फलं विशेषादिह गर्वितस्य ॥३७॥ भवति मुदितप्रोगे वासशालाविशाला विमलवसनमूयामूमियोगासु सौख्यम् ॥ स्वजनजनविशालो भूमि पागारवासो रिपुनिवहविनाशो बुद्धिविद्याविकासः ॥३८॥
विशति लज्जितभावकादिति विगतराममतिं विमतिक्षयम् ॥ सुतगदाममनं गमनं वृथा कसिकयाभिरुचिं न रुचिं सुभे ॥३९॥

मुदित अवस्था मे ग्रह हो तो मिश्रित फल कहना चाहिए। ग्रह बलहीन हो तो हानि, बलवान् हो तो महाफल होता है॥३३॥ जिस जातक के दशमभाव मे लज्जित, तृपित, क्षुधित, क्षोभित ग्रह हो, वह मनुष्य सदा सुखी रहता है॥३४॥ जिसके पंचम भाव मे लज्जित ग्रह हो उसके एक ही पुत्र सतान होती है और सतान का नाश होता है॥३५॥ हे मित्रेय! जिसके सप्तम स्थान मे क्षोभित या तृपित ग्रह हो उसकी स्त्री की मृत्यु होती है यह निश्चय है॥३६॥ गर्वितग्रह खेट भाव मे होने से नये मकान, बागीचा, धन लाभ, व्यापार वृद्धि, अनेक प्रकार

की विद्या प्राप्त कराता है॥३७॥ मुदित ग्रह के योग से विशाल महल, निर्मल वस्त्र, भूषण, भूमि, सुख, मित्रों में आनन्द, शत्रुओं का नाश, विद्या और बुद्धि का विकास करता है॥३८॥ लज्जित ग्रह भक्ति हीनता, सुबुद्धि, कलहप्रियता, वृथा यात्रा, सतान की बीमारी और शुभ कार्य में अरुचि करता है॥३९॥

ससोमितस्यापि फल विशेषादरिद्रजात कुमति च कष्टम् ॥ करोति वित्तक्षयमग्निबाधा घनाग्निबाधामयनीशकोपात् ॥४०॥ क्षुधितग्रहवशाद्ध शोकमोहादिपातः परिजनपरितापादा धिमीत्या कृशत्वम् ॥ कलिरपि रिपुलोकेरर्थबाधा नराणामखिलबलनिरोधो बुद्धिरोधो विषादात् ॥४१॥ तृपितक्षणमवे स्यादंगनासगमध्ये भवति गदविकारो दुष्टकार्याधिकार ॥ निजजनपरिवादादर्थहानिः कृशत्व खलकृतपरितापो मानहानि सदैव ॥४२॥

क्षोभित ग्रह विशेष दरिद्री, कुमति, रोगी, धन हानि, पैर की बीमारी, राजकोप से व्यापार में हानि कराता है॥४०॥ क्षुधित ग्रह शोक, मोह, दुःख, चिन्ता, भय, परिताप, कृपता, शत्रुओं से कलह, धन हानि, किकर्तव्यविमूढता तथा दुर्बलता देता है॥४१॥ तृपित ग्रह स्त्री को बीमारी, बुरे काम में रति, निन्दा, धन-हानि, मानहानि, कृशता और शत्रु से दुःख पहुंचाता है॥४२॥

अथ शयनाद्यवस्थामाह

शयन चोपवेश च नेत्रपाणिप्रकाशनम् ॥ गमनागमन चाय समाया वसति तथा ॥४३॥ आगम भोजन चैव नृत्य लिप्ता च कौतुकम् ॥ निद्रा ग्रहाणा चेष्टा च कथयामि तवाग्रत ॥४४॥ यस्मिन्नृक्षे भवेत्खेटस्तेन त परिपूरयेत् ॥ पुनरशेन सपूर्य स्वतन्त्रे नियोजयेत्॥४५॥ यातदद तथालग्नमेकीकृत्य सदा बुध ॥ रविणा हरते भाग शेष कार्यं नियोजयेत् ॥४६॥ नाक्षत्रिकदशाक्रमेण पुन पूरणमाचरेत् ॥ नामाक्षरेण सयुक्ते हर्तव्य रविणा तत ॥४७॥ रुक्मी पक्ष तथा देय घट्टे दद्याद्द्वय तथा ॥ कुजे द्वय च सयुक्ते बुधे त्रीणि नियोजयेत् ॥४८॥ गुरो ज्ञाना प्रदेयाश्च त्रय दद्याच्च मार्गवे ॥ शनी त्रयमयो देय राहौ दद्यान्तुष्टयम् ॥४९॥ शेष हृत च रामेण ग्रहाणा त्रिविध भवेत् ॥ दृष्टि चेष्टा विचेष्टा च कथयामि तवाग्रत ॥५०॥

शयन आदि अवस्था—शयन, उपवेशन, नेत्र-हस्त प्रकाशन गमन, आगमन, सभा स्थिति, आगम, भोजन, नृत्य, लिप्ता कौतुक और निद्रा; ग्रहों की ये चेष्टायें कहते हैं॥४३॥४४॥ ग्रह जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र सख्या से ग्रह की सख्या की गुणा करना बाद ग्रह के भुज्जान सख्या से गुणा करना। पश्चात् वर्तमान नक्षत्र सख्या जन्म की ईष्ट घटी और जन्म का वर्ष ये सब जोड़ना। बाद १२ का भाग देना, जो सख्या शेष रहे उस सख्या की पूर्वोक्त अवस्था जानना। और पूर्वगित सख्या में ३ का भाग देने से जो शेष बचे वह क्रमशः दृष्टि, चेष्टा और विचेष्टा अवस्था होती है॥४५॥४६॥ नाक्षत्रिक दशा के लिये क्रम से पूर्वगित सख्या ने मूर्ध की दशा के लिये ५, चन्द्रमाका २, मयल का २, बुध का ३, गुरु का ५, शुक्र का ३, शनि का ३, राहु का ४ तथा केतु का ४ होते हैं॥४७ से ५०॥

| स्वरांशचक्रमिदम् | | | | |
|------------------|---|---|---|---|
| १ | २ | ३ | ४ | ५ |
| अ | इ | उ | ए | ओ |
| क | ख | ग | घ | च |
| छ | ज | झ | ट | ठ |
| ड | ढ | त | थ | द |
| ध | न | प | फ | ब |
| भ | म | य | र | ल |
| व | श | ष | स | ह |

| सुप्तिविशेषाः कवचम् | | | | | | | | |
|---------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|-----|
| सू० | ख० | म० | बु० | वृ० | शु० | श० | रा० | के० |
| ५ | २ | २ | ३ | ५ | ३ | ३ | ४ | ४ |

दृष्टिभेदमाह

दृष्टौ स्वल्पफलं ज्ञेयं चेष्टायां विपुलं फलम् ॥
विचेष्टायां फलं न स्यादेव दृष्टिफलं विदुः ॥५१॥
शुभाशुभ ग्रहाणां च समीक्षया यत्तावत्फलम् ॥
तुंगस्थाने विशेषेण बलं ज्ञेयं यथा बुधैः ॥५२॥

दृष्टिभेद तथा फल

दृष्टि मे स्वल्प फल, चेष्टा मे पूर्णफल, विचेष्टा मे
हीन फल ॥५१॥ इस प्रकार ग्रहों का शुभाशुभ फल
देखकर और उच्च स्थान मे विशेष करके बल
जानना चाहिए ॥५२॥

अथ प्रत्येकद्वादशावस्थाफलमाह

मंदोग्निरोगो बहुधा नराणां स्थूलत्वमंघ्रेरपि पित्तकोपः ॥ वर्णं गुदे शूलमुरः प्रवेशे यदोष्णभांती
शयनं प्रयाते ॥५३॥ दरिद्रता भारविहारशाली विवादविद्याभिरतो नरः स्यात् ॥ कठोरचित्तः
सलु नष्टचित्तः मूर्खो यदा चेदुपवेशनस्थः ॥५४॥ नरः सदानंदधरो विवेकी परोपकारी
बलवित्तयुक्तः ॥ महामुखी राजकृपाभिमानो दिव्यधिनायो यदि नेत्रपाणौ ॥५५॥ उदारचित्तः
परिपूर्णचित्तः सभामु वक्ता बहुपुण्यकर्ता ॥ महाबली सुंदरहृषशाली प्रकाशने जन्मति
पथिनीशे ॥५६॥ प्रवासशाली क्लिप्त दुःखशाली सदात्तसी धीघनवर्जितश्च ॥ ममातुरः कोपपरो
विशेषदिव्यधिनाथे गमने मनुष्यः ॥५७॥ परदाररतो जनतारहितो बहुधामगमे गमनाभिच्छिः
कृपणः क्षलताकुशलो मलिनो दिव्यसाधिपती मनुजः कुपति ॥५८॥

द्वादश अवस्था के फल

सूर्य के फल—सूर्य जयन अवस्था मे हो तो मन्दाग्नि, स्थूलता, नेत्ररोग, पित्तप्रकोप, व्रण, छाती मे शूल आदिरोग होते हैं॥५३॥ सूर्य यदि उपवेशन अवस्था मे हो तो दरिद्रता, विहारशाली, (धुमकड) विद्या सम्बन्धी विवाद, कठोर चित्त तथा दरिद्र होता है॥५४॥ सूर्य नेत्रपाणि प्रक्रमन अवस्था मे हो तो मनुष्य आनन्दी, विवेकी, परोपकारी, धनी तथा बलवान्, महासुखी, तथा राजकृपायुक्त होता है॥५५॥ ग्रह यदि प्रकाशन अवस्था मे हो तो उदार, महाधनी, व्याख्याता धर्मात्मा, महाबली तथा सुन्दर होता है॥५६॥ सूर्य गमन अवस्था मे हो तो प्रवासशाली, दुःखी, आलसी, निर्धन, भयातुर, क्रोधी होता है॥५७॥ आगमन अवस्था में पर स्त्रीगामी, समाज बहिष्कृत, प्रवासी, कृपण सल (दुष्ट) कुमति तथा मलिन होता है॥५८॥

सभागते हिते नरः परोपकारतत्परः सदा र्थरत्नपूरितो दिवाकरे गुणाकरः॥ वसुंधरानवांबरालया-
न्वितो महाबली विचित्रमित्रवत्सलः कृपाकलाधरः परः॥५९॥ क्षोभितो रिपुगणैः सदा
नरश्रृंखलः खलमतिः कृशस्तया ॥ धर्मकर्मरहितो मदोद्धतश्चागमे विनपती यदा तदा ॥६०॥
सदांगसंधिवेदनापरांगनाघनक्षयो बलक्षयः पदे पदे यदा तदा हि भोजने ॥ असत्यता
शिरोव्यया तथा व्याघ्रभोजन खावसक्तपारतिः कुमारगणामिनी मतिः ॥६१॥ विज्ञलोकैः
सदा भंडितः पंडितः काव्यविद्यानयप्रलापान्वितः ॥ राजपूज्यो धरामंडले सर्वदा
नृत्यलिप्सागते पद्मिनीनायके ॥६२॥ सर्वदानदधर्ता जनो ज्ञानवान्यज्ञकर्ता धराधीरासपस्पितः
॥ पद्मबंधावरतेभ्यं स्वाननः काव्यविद्याप्रलापी मुदा कौतुके ॥६३॥ निद्राभरारक्तनिभे भवेतां
निद्रागते लोचनपद्मयुगे ॥ रघो विदेशे वसतिर्जनस्य क्लृप्तब्रह्मनिः कतिधार्यनाशः ॥६४॥

सूर्य सभा मे हो तो मनुष्य परोपकार तत्पर, धनधान्य पूरित, गुणी, भूमि सम्पत्तियुक्त, महाबली, मित्र-वत्सल और कृपालु होता है॥५९॥ सूर्य आगम अवस्था मे हो तो जातक शत्रु पीडित, चंचल, दुष्टबुद्धि, दुर्बल, धर्मवर्म रहित तथा घमण्डी होता है॥६०॥ सूर्य भोजन अवस्था मे हो तो संधि-वेदना, परांगना रत, निर्धन, निर्बल, असत्यभाषी, असत्यपारति, (गपाडी) व्याघ्रभोजी तथा कुमारगामी होता है॥६१॥ सूर्य नृत्यलिप्सा अवस्था मे हो तो जातक विद्वत्समाज का मान्य पण्डित, मेधावी तथा राजपूज्य होता है॥६२॥ सूर्य कौतुक अवस्था मे हो तो जातक सदानदी ज्ञानी, यज्ञकर्ता, राजनिवासी, काव्य विनोदी, तथा सुखी होता है॥६३॥ सूर्य निद्रावस्था मे हो तो निद्रालु, प्रवासी, भार्यारहित, दरिद्री होता है॥६४॥

अथ चंद्रफलम्—जनु काले क्षयनाये शयनं चेदुपागते॥मानो रातप्रधानश्च कामी बितविना-
शकः ॥६५॥ रोगार्दितो मदमतिर्विशेषाद्विनेन होनो मनुजः कठोरः ॥ अकार्यकारी
परबितहारी क्षपाकरे चेदुपवेशनस्ये ॥६६॥ नेत्रपाणी क्षयनाये महारोगी नरो भवेत् ॥
अनल्पजल्पको धूर्तः शुक्रमनिरतः सदा ॥६७॥ यदा राक्षानाये गतवति विद्याया च जने
विकाराः ससारे विमतगुणराशेरवनिषात् ॥ नवराशामाला स्यात्स्वरितुरगलक्ष्या परिवृता
विनूषा योषामि सुखमनुदिन तीर्द्यगमनम् ॥६८॥ सितेतेरे पापरतो निगाहरे विरोधत

क्रूरतरो नरो भवेत् ॥ सदाशिरोगैः परिपीड्यमानो बलक्षयसे गमने भयातुरः ॥६९॥
विधवागमनो मानी पादरोगी नरो भवेत् ॥ गुप्तपापरतो दीनो मतितोषविंबर्जितः ॥७०॥
सकलजनवदान्यो राजराजेन्द्रमान्यो रतिपतिसमकांतिः शान्तिकृत्कामिनीनाम् ॥ सपदि सबसि
पाते चादृबिंबे शशांके भवति परमरीतिप्रीतिविज्ञो गुणज्ञः ॥७१॥

चन्द्रफल—जन्मकाल मे यदि चन्द्रमा शयनअवस्था मे हो तो अभिमानी, कफप्रकृति, कानी
और शात स्वभाव का होता है॥६५॥ यदि चन्द्रमा उपवेशन मे हो तो रोगी, मदमति, दरिद्र,
कठोर चोर, अकार्यकारी होता है॥६६॥ चन्द्रमा नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो महारोगी,
बकवादी, धूर्त, कुकर्मी होता है॥६७॥ यदि चन्द्रमा विकाश अवस्था मे हो तो जातक
विकासवृद्धि राजाश्रयी, ससारप्रसिद्ध महाधनी, भोगी, तीर्थयात्राभिलाषी होता है॥६८॥ यदि
चन्द्रमा कृष्णपक्ष मे तथा गमनअवस्था मे हो तो मनुष्य पापी, अतिक्रूर, शिर रोग से पीडित होता
है। और शुक्ल पक्ष मे जन्म हो तो भयातुर होता है॥६९॥ यदि चन्द्रमा आगम अवस्थामे हो तो
जातक विधवागामी, अभिमानी, पादरोगी, गुप्तपापी, दीन, बुद्धिहीन तथा असन्तोषी होता
है॥७०॥ यदि जन्मसमय मे चन्द्रमा सभा मे हो तो जातक समाज मे मान्य, राजमान्य, अतिमुन्दर,
कीर्तिमान्, कामिनीभोगी, रीतिनोति का जानने तथा गुणज्ञ होता है॥७१॥

विधवागमनो मर्त्यो वाचालो धर्मपूरितः ॥ कृष्णपक्षे द्विभार्यः स्याद्रोगी दुष्टतरो हठी ॥७२॥
भाजने जनुषि पूर्णचंद्रमा मानयानजनतासुख नृणाम् ॥ आतनोति यनितामुतामुखं सर्वमेव न
सितेतरे शुभम् ॥७३॥ नृत्यलिप्तागते चद्रे सबले बलवाधरः ॥ गीतज्ञो हि रसज्ञश्च कृष्णे
पापकरो भवेत् ॥७४॥ कौतुकभवनं गतवति चद्रे भवति नृपत्वं वा धनपत्वम् ॥ कामलासु
सदा कुशलत्वं वारवधूरतिरमणपदुत्वम् ॥७५॥ निद्रागते जन्मनि मानवाना कलाधरे जीवपुते
महत्त्वम् ॥ पदांगनासंचितवित्तनाशः शिवालयं रीति विचित्रमुच्चैः ॥७६॥

चन्द्रमा आगम अवस्था मे हो तो जातक विधवासेवी, वाचाल, धर्मार्तिमा, दो स्त्रीवाला,
अतिदुष्ट, रोगी तथा हठी होता है॥७२॥ यदि चन्द्रमा भाजन अवस्था मे हो तो सम्मान,
सवारी, स्त्री, धन, सतान का सुख होता है। तथा कृष्णपक्ष मे विपरीत फल होता है॥७३॥
यदि चन्द्रमा नृत्यलिप्ता अवस्था मे हो तो मनुष्य बलवान्, गायन विद्या रसिक होता है। और
कृष्णपक्ष मे पापी होता है॥७४॥ यदि चन्द्रमा कौतुक भवन मे हो तो मनुष्य राजा, धनपति,
कुशल, तथा वारवनिता विलासी होता है॥७५॥ यदि चन्द्रमा निद्रा अवस्था मे हो तो स्त्री,
धनहीन, संचित धन का नाश करनेवाला तथा शिवालय मे विचित्र प्रकार से शब्द करनेवाला
होता है॥७६॥

अयं कुलफलम्—शयने यमुधापुत्रे जतुरंगे जनो भवेत् ॥ बहूना फंडुना युक्तो दद्रुणा च विशेषतः
॥७७॥ बत्ती सदा पापरतो नरः स्यादसत्यवादी नितरां प्रगल्भः ॥ धनेन पूर्णो निजधर्महीनो
धरामुतश्रेदुपवेशनस्थः ॥७८॥ यदा भूमिमुते लक्षे नेत्रपाणिमुपागते ॥ दरिद्रता सदा
पुसाभन्यमे नगरेशता ॥७९॥ प्रकाशो गुणस्यापि धातः प्रकाशे धराधीशमर्तुः सदा मानवृद्धिः
॥ सुते भूमुते पुत्रकातावियोगो भवेद्राहुणा दारणो वा निपातः ॥८०॥ गमनागमने

कुरुतेऽनुदिन वणजालभयं वनिताकलहः ॥ बहुदद्रुककण्डुभयं बहुधा वसुधातनयो वसुहानिकरः ॥८१॥ आगमने गुणशाली मणिमाली करालकरवाली ॥ गजगता रिपुहन्ता परिजनसंतापहारको भौमे ॥८२॥ तुंगे युद्धकलाकलापकुशलो धर्मध्वजो वित्तपः कोणे भूमिसुते सभामुपगते विद्याविहीनः पुमान् ॥ अंतेऽपत्यकलयमित्ररहितः प्रोक्तेतरस्यान्वोऽवश्यं राजसम्बाधुयो बहुधनी मानी च दानी जनः ॥८३॥

मंगल का फल—यदि मंगल शयन अवस्था में हो तो मनुष्य खाज, खुजली वाला होता है ॥७७॥ यदि मंगल उपवेशन अवस्था में हो तो मनुष्य बलवान सदा पापरो अस्त्यभापी, बकवादी, धनहीन, धर्महीन होता है ॥७८॥ मंगल जब लग्न में नेत्रपाणि अवस्था में हो तो पुरुष को दरिद्र करता है। वह मंगल अन्यराशि में हो तो नगर का स्वामी करता है ॥७९॥ जब मंगल प्रकाश अवस्था में हो तो तब जातक के गुणों का प्रकाश करता है। राजा से सदा सन्मान की वृद्धि होती है। और पचमभाव में हो तो पुत्र स्त्री से वियोग करता है। राहु से युक्त या दृष्ट हो तो दुःखदायी पतन होता है ॥८०॥ मंगल गमनागमन अवस्था में हो तो पावों से भय, स्त्री से कलह, दाद, खाज, खुजली तथा धनहानि कारक है ॥८१॥ मंगल आगमन अवस्था में हो तो गुणी, मणि—माणिक युक्त, करवाल (शस्त्र) धारी, हाथी की सवारी तथा शत्रुनाशकारी तथा बन्धुओं का दुःखहारी होता है ॥८२॥ मंगल तुंग (उच्च) का होकर 'सभा' अवस्था में हो तो युद्धविद्या निपुण, धर्मात्मा, धनी होता है। यदि त्रिवेण स्थान में हो तो विद्याहीन तथा १२ भाव में हो तो स्त्री पुत्ररहित करता है। अन्य स्थान में बहुधनी, मानी तथा दानी होता है ॥८३॥

आगमे भवति भूमिजे जनो धर्मकर्मरहितो गदातुरः ॥ कर्णमूलगुरुगूलरोगवानेव कातरमति कुसगम्भी ॥८४॥ भोजने मिष्टभोजी च जनने सबले कुजे ॥ नीचकर्मकरो नित्य मनुजो मानवर्जितः ॥८५॥ नृत्यलिप्सागते भूमिजे जन्मनामिदिराराशिरायाति भूमिपतेः ॥ स्वर्णरत्नप्रवालेः सदाभंडितो यासशाला नराणा मयेत्सर्वदा ॥८६॥ कौतुकी भवति कौतुके कुजे मिश्रपुत्रपरिपूरितो जनः ॥ उच्चगे नृपतिगेहमंडितः पूजितो गुणवरेर्गुणाकरः ॥८७॥ निद्रावस्था गते भौमे शोधी धीघनवर्जित ॥ धूर्तो धर्मपरिभ्रष्टो मनुष्यो गदपरोक्षितः ॥८८॥

यदि मंगल आगम अवस्था में हो तो जानक धर्मवर्म रहित, रोगी, कर्णमूल में रोगी, डरपोक तथा कुसगति वाला होता है ॥८४॥ यदि मंगल भोजन अवस्था में हो और वनवान् हो तो मिष्टान्नभोजी, नीचकर्मकारी, तथा मानहीन होता है ॥८५॥ मंगल 'नृत्यलिप्सा' अवस्था में हो तो बहलभो की प्राप्ति होती है। मुक्ता रत्न आदि प्राप्ति होता है। रहने को निजी विद्यास भवन होता है ॥८६॥ मंगल कौतुक अवस्था में हो तो जानक कौतुक के आभरणजनक सेव जाननेवाला, मित्र—पुत्र युक्त हो तथा राशि में हो तो राजमहलों में पुन गुणियों से पूजित होता है ॥८७॥ मंगल निद्रावस्था में हो तो जानक शोधी, भूर्म, शक्ति, धूर्त, धर्मभ्रष्ट तथा रोगी होता है ॥८८॥

अथ बुधफलम्
क्षुधातुरो भवेदंगे संजो गुंजानिभक्षणः ॥ अन्यमे तपटो धूर्तो मनुजः शपने बुदे ॥८९॥
राशाकपुत्रे जनुरगनेहे धदोपवेशे गुणराशिपूर्णः ॥ पापेसिते पापयुते दरिद्रो हिते शुभे वित्तमुत्थो
मनुष्यः ॥९०॥ विद्याविवेकरहितो हिततोषहीनो भानो जनो भवति चद्रमुतेऽसपाणो ॥
पुत्रालये सुतकलत्रमुत्थेन हीनः कन्याप्रजो नृपतिगेहबुधो बरार्यः ॥९१॥ दाता दयालुः क्षत्र
पुण्यकर्ता बिकासने चद्रमुते मनुष्यः ॥ अनेकविद्यार्थवपारगता विवेकपूर्णः क्षत्रवर्गहन्ता
॥९२॥ गमनागमने भवतो गमने बहुधा बमुद्याधिपतेर्भवने ॥ भवनं च विचित्रमल रमया
विदि मुञ्च जनुः समये नितराम् ॥९३॥

बुध का फल-बुध शयन अवस्था में हो तो मनुष्य सजा (सगडा), लाल आसवाला, अन्य
राशि में हो तो लम्पट और धूर्त होता है ॥८९॥ यदि बुध उपवेश अवस्था में हो और सप्त में
हो तो अनेक गुणशाली होता है और यदि पापराशिमें पापग्रह युक्त हो तो दरिद्र तथा मित्र
राशि में शुभग्रह युक्त हो तो धनवान् और सुखी होता है ॥९०॥ यदि बुध नेत्रपाणि अवस्था में
हो तो जातक विद्या और विवेक से हीन तथा असन्तोषी और अभिमानी होता है। यदि पंचम
भाव में हो तो पुत्र व स्त्री सुख से हीन तथा कन्या सन्तान वाला, राजमान्य तथा धनी होता
है ॥९१॥ यदि बुध विकास अवस्था में हो तो जातक दयालु, दानी, धर्मात्मा और अनेक विद्या
पारंगत, विवेकी तथा दुष्टों का नाश करनेवाला होता है ॥९२॥ यदि बुध गमनागमन अवस्था
में हो तो मनुष्य यात्रा प्रेमी, राजभवन में मान्य, बहुलक्ष्मी स्वामी विद्वान् तथा धनी होता
है ॥९३॥

सपदि विद्वज्जनानामुच्चगो जन्मकाले सदसि धनसमृद्धिः सर्वदा पुण्यवृद्धिः ॥ धनपतिसमता वा
सूयता मन्त्रिता वा हरिहरपदभक्तिः सात्त्विकी मुक्तिर्लाभ्य ॥९४॥ आगमे जगुषि जन्मिना
यदा चन्द्रजे भवति हीनसेवया ॥ अर्थसिद्धिरपि पुत्रपुमता बालिका भवति मानदायिका
॥९५॥ भोजने चन्द्रमा जन्म काले यदा जन्मिनामर्पयति, सदा वादतः ॥ राजभोत्या कृगत्वं
क्षत्रत्वं मतेरगसगो न जाया न मायामुलम् ॥९६॥ नृत्यलिप्सापते चन्द्रजे मानवो
मानयानप्रवालव्रजैः समुतः ॥ मित्रपुत्रप्रतापं सभापठितः पापमे वारवामारते सम्पटः ॥९७॥

यदि जन्म समय में बुध उच्च राशि का होकर सभा स्थान में हो तो धन समृद्धि तथा
धर्मात्मा, पुत्रों के समान ऐश्वर्यशाली, राजा का मंत्री, ईश्वर भक्ति परायण, सात्त्विक
भाववाला होता है तथा अन्त में मुक्ति प्राप्त होती है ॥९४॥ जब जन्मलग्न में बुध आगम
अवस्था में हो तो नीन की सेवा करनेवाला विन्तु धनी और दो पुत्र और एक कन्या होती
है ॥९५॥ जन्म काल में बुध जब भोजन अवस्था में हो तो मनुष्य का धन मुक्तदम बाजी में खर्च
होता है। राजभय से सदा दुःखी रहता है। नचल बुद्धि तथा भावामिन् और धन सुख से हीन
है ॥९६॥ जब बुध नृत्य लिप्सा अवस्था में हो तो मनुष्य सन्तान, मबारी, रत्नों में युक्त,
मित्र-पुत्रयुक्त, प्रतापी और सभा पण्डित होता है। पाप राशि में हो तो
वार-वनिता-विलासी तथा लम्पट होता है ॥९७॥

कौतुके चद्रजे जन्मकाले नृणामगभे गीतविद्याऽनवद्या भवेत् ॥ सप्तमे नैधने वारवध्वा रति पुण्यभे पुण्ययुक्ता मति सद्गति ॥९८॥ निद्राश्रिते चद्रमुते न निद्रामुक्त सदा ध्याधिसमाधियोग ॥ सहोत्थवैकल्यमनल्पतापो निजेन वादो धनमाननाश ॥९९॥

अथ गुरुफलमाह

वचसामधिपे तु जनु समये शयने बलवानपि हीनरव ॥ अतिगौरतनुं खलु बीर्घहनु सुतरामरिभीतिपुतो मनुज ॥१००॥ उपवेश गतवति यदि जीवे वाचालो बहुवर्षपरीत ॥ क्षोणीपतिरिपुजनपरितप्त पबजघास्यकरवणयुक्त ॥१०१॥ नेत्रपाणि गते देवराजार्चितरोग युक्तोविद्युक्तोवरार्थधिया ॥ गीतनृत्यप्रिय कामुक सर्वदा गौरवर्णो विवर्णोद्भव प्रीतिपुक् ॥१०२॥

जब बुध जन्म समय मे कौतुक अवस्था मे हो तो निष्पाप गायन विद्यायुक्त होता है। ७ वे और ८ वे स्थान मे हो तो वेश्यागामी होता है। शुभ राशि मे हो तो पवित्र बुद्धिवाला होता है और अन्त मे सद्गति होती है॥९८॥ जब बुध निद्रा अवस्था मे हो तो जातक सदा रोगी विकल दुखी कलहकारी और धन मान से हीन होता है॥९९॥

गुरुफल-जन्म समय मे यदि बृहस्पति बलवान् होकर शयन अवस्था मे हो तो धीमी आवाज वाला गौर वर्ण लम्बी ठोड़ीवाला तथा शत्रु से भय माननेवाला होता है॥१००॥ जब बृहस्पति उपवेश अवस्था मे हो तो जातक बकवादी घमण्डी राजा और शत्रु से दुखी तथा पैर जघा हाथ और मुख वणयुक्त होता है॥१०१॥ जब बृहस्पति नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो रोगी दरिद्री नाचगानप्रिय कामी गौरवर्ण वर्णशकर तथा प्रेमी होता है॥१०२॥

गुणानामानन्द विमलसुखकद वितनुते सदा तेजः पुनः धनपतिनिकुजप्रतिगमम् ॥ प्रकाश चेदुज्ज्वे द्रुतमुपगतो चासवगुरुर्गुल्व लौकाना धनपतिसमत्वं तनुमृताम्॥१०३॥साहसो भवति मानव सदा मित्रवर्गसुखपूरितो मुदा ॥ पण्डितो विविधवित्तमण्डितो वेदविद्यदि गुरो गम गते ॥१०४॥ आगमनेजनता वरजाया यस्य जनुसमये हरिमाया ॥ भुवति नालमिहालयमद्धा देवगुरो परितः परिबद्धा ॥१०५॥ सुरगुरुसमयक्ता शुभ्रमुक्ताफलादधः सदसि सपदि पूर्णो वित्तमार्णिक्यमाने ॥ यजनुरग्यराडधो देवताधोऽसंपूज्यो जनुयि विविधविद्याएर्वितो मानव स्यात् ॥१०६॥ नानावाहनमानयानपटलोसौख्य गुरावागमे भृत्यापत्यकलप्रमित्रजमुख विद्याऽनवद्या भवेत् ॥ क्षोणीपालसमानतानवरत चातीवहृद्या मति काव्यानन्दरति सदा हितगति सर्वत्र मानोन्नति ॥१०७॥

जब बृहस्पति प्रकाश अवस्था मे हो तो गुणी सुखी तजस्वी राजमान्य नोबमान्य मद्राधनी होता है॥१०३॥ जब बृहस्पति गमन अवस्था मे होता है तो मनुष्य साहसी मित्रवर्गयुक्त पण्डित धनी तथा विद्वान् होता है॥१०४॥ जब बृहस्पति जन्मपत्र मे आगम अवस्था मे होता है तो श्रेष्ठ भार्या तथा म्यिर नदमीवाना होता है॥१०५॥ जब बृहस्पति मभा अवस्था मे हो तो जातक बृहस्पति के गमान् वत्ता मणिमार्णिक्ययुक्त एश्वर्यशाली तथा

अनेक विद्यापारगत होता है॥१०६॥ बृहस्पति यदि आगम अवस्था मे हो तो मनुष्य के अनेक सवारी तथा नौकर-चाकर, भार्या, पुत्र, मित्र का सुख तथा श्रेष्ठ विद्या होती है। और निरन्तर राजा के समान ऐश्वर्य तथा निर्मल बुद्धि और काव्य विनोद तथा कल्याण एव सन्मान की उन्नति होती है॥१०७॥

भोजने भवति देवपुरोधाः यस्य तस्य सततं सुभोजनम् ॥ नैव भुञ्चति रमात्थं तदा वाजिवारणरथैश्च मंडितम् ॥१०८॥ नृत्यलिप्तागते राजमानी धनी देवताधीरावधः सदा धर्मवित् ॥ तत्रविशो बुधैर्मंडितः पंडितः शब्द विद्यामवधो हि सद्यो जनः ॥१०९॥ कुतूहली सकौतुके महाधनी जनः सदा ॥ निजान्वये च भास्करः कृपाकलाधरः सुखी ॥ निर्विपराजपूजिते सुतेन भूयसेन वा युतो महाबली धराधिपेन्द्रसप्तपंडितः ॥११०॥ गुरौ निद्रागते यस्य मूर्खता सर्वकर्मणि ॥ दरिद्रतापरिक्रान्तं भवं पुंश्चबर्जितम्॥१११॥

देवगुरु जब भोजन अवस्था मे हो तो निरन्तर अच्छा भोजन, सदा रहनेवाली लक्ष्मी तथा अनेक प्रकार की सवारी वाला होता है॥१०८॥ बृहस्पति नृत्य लिप्ता अवस्था मे हो तो जातक राजमानी, धनी धर्मात्मा, तन्त्र विद्या विचारद, विद्वद्गोष्ठीगुप्त, पण्डित तथा श्रेष्ठ वैयाकरण होता है॥१०९॥ जब बृहस्पति कौतुक अवस्था मे हो तो कौतुहल प्रिय, महाधनी, कृपालु, अपने कुल का सूर्य, सुखी, भूमि तथा सन्तानयुक्त, महाबली तथा राजाधिराज की सभा का पण्डित होता है॥११०॥ बृहस्पति यदि निद्रा अवस्था मे हो तो कर्मज्ञानहीन, मूर्ख, पुण्यहीन, दरिद्री होता है॥१११॥

अथ मृगुफलमाह

जनो बलीयानपि दंतरीगो मृगौ महारोषसमन्वितः स्यात् ॥ धनेन हीनः शयनं प्रयाते चारांगनासंगमसंपटश्च ॥११२॥ यदि भवेदुराना उपवेशने नक्षमणिप्रजकांचनभूषणैः ॥ सुलभजलमरिचय आदराद्भवनिपादपि भानसमुन्नतिः ॥११३॥

शुक्र फल-जिस मनुष्य के जन्म लग्न मे शुक्र कीधी अवस्था मे होता है तो मनुष्य दन्त-रोगी होता है। और यदि जपन अवस्था मे हो तो अन्हीन, वैश्याप्राप्ती और लम्पट होता है॥११२॥ यदि शुक्र उपवेश अवस्था मे हो तो मणि, काचन, भूषणयुक्त, निरन्तर सुखी, शत्रु शय, राजा से सम्मान पानेवाला होता है॥११३॥

नेत्रपाणिं गते सप्तमे गते कौ सप्तमे मानये यस्य तस्य ध्रुवम्॥नेत्रपाते निपातो घनानामलं चान्यमे वासरात्ता विरात्ता भवेत्॥११४॥स्वालये तुंगमे मित्रमे भार्गवे तुंगमातंगलीसाकलापी जनः ॥ भूपतेस्तुल्य एव प्रकाश गते काव्यविद्याकलाकौतुकी गीतवित् ॥११५॥ गमने जनने शुके तस्य माता न जीवति ॥ आधियोगो वियोगश्च जनानामरिभोतिः ॥११६॥ आपयनं नृपुत्रे गतवति बितेश्वरे मनुजः ॥ सतीर्थश्चमशाली नित्योत्साही कराग्रिरेगो च ॥११७॥ अनायासेनालं सपदि महसा याति सहसा प्रगल्भत्व राजः सदसि गुणवित्तः कित्वा क्वचि ॥

सभायामायाते रिपुनिबहहन्ता धनपतेः समत्व वा दाता बलतुरगगता नरवरः ॥११८॥
आगमे भार्गविनागमो जन्मिनामर्थराशेररातेरतीव क्षतिः ॥ पुत्रपातो निपातो जना नामपि
व्याधिमीतिः प्रियाभोगहानिर्भवेत् ॥११९॥

यदि शुक्र नेत्रपाणि अवस्था मे लग्न, सप्तम या दशम भाव मे हो तो हर तरह से धन की प्राप्ति हो। अन्य राशि मे हो तो विशाल भवन हो॥१०४॥ यदि शुक्र प्रकाश अवस्था मे अपनी राशि का या उच्च राशि अथवा मित्र राशि मे हो तो उस मनुष्य के हाथी घोड़े हों, राजा के तुल्य ऐश्वर्य हो। काव्य विनोदी एव गायन विद्या रसिक हो॥११५॥ जिस मनुष्य के जन्म लग्न मे शुक्र गमन अवस्था मे हो उसको माता का सुख नहीं होता तथा सदा रोगी, इष्ट जनों का वियोग एव शत्रुभय होता है॥११६॥ शुक्र यदि आगमन अवस्था मे हो तो धनी, तीर्थ यात्रा प्रेमी, उत्साही तथा हाथ पैर का रोगी होता है॥११७॥ यदि शुक्र समा अवस्था मे हो तो बिना परिश्रम के सहस्रा लक्ष्मी आती है। राजा की सभा मे चतुर, विद्वान्, कवि और गुणी होता है, शत्रु ज्ञाश करनेवाला, धन कुबेर, सवारीवाला और माननीय होता है॥११८॥ यदि शुक्र आगम अवस्था मे हो तो शत्रु के कारण धन की हानि, पुत्र तथा बन्धुओं की हानि, भार्या हानि एव रोग भय होता है॥११९॥

क्षुधानुरो व्याधिनिपीडितः स्यादनेकधारातिमयार्द्रितश्च ॥ कबौ यदा भोजनगे पुबत्या
महाधनीः पण्डितमडितश्च ॥१२०॥ काव्यविद्यानवद्या च हृद्या मतिः सर्वदा नृत्यतिप्सागते
भार्गवे ॥ शखवीणामृदंगादिगानध्वनिप्रातनैपुण्यमेतस्य वित्तोप्रातिः ॥१२१॥ कौतुकभवन
गतयति शुके शक्रेशत्व सवसि महत्त्वम् ॥ हृद्या विद्या भवति च पुस पद्या निवसति सप्तादरत
॥१२२॥ परसेवारतो नित्य निद्रामुपगते कबौ ॥ परनिदापरो वीरो वाचातो भ्रमते
महोम् ॥१२३॥

जब शुक्र क्षुधित अवस्था मे हो तो रोगी, शत्रुभय तथा दुखी होता है। और शुक्र जब भोजन अवस्था मे हो तो महाधनी भार्यामय और पण्डितो मे मान्य होता है॥१२०॥ जब शुक्र मृत लिप्सा अवस्था मे हो तो निष्पाप कविता बनानेवाला, मुबुद्धि, अनेक प्रकार के वाद्य तथा गान मे निपुण और धनी होता है॥१२१॥ जब शुक्र कौतुक अवस्था मे हो तो सभा मे इन्द्र के समान आदर पानेवाला, विद्वान और मदा नरमीवाला होता है॥१२२॥ जब शुक्र निद्रा अवस्था मे हो तो दूसरे वर नौकर निन्दक वाचाल और घुमसरत होता है॥१२३॥

अथ शनिफलम्

क्षुत्पिपासापरिकांतो विभ्रांतः शयने शनौ ॥ ययसि प्रथमे रोगो ततो भाग्यवता वरः ॥१२४॥
भानोः गुते चेदुपवेशनस्ये करालकारातिजनानुत्पत्तः ॥ अपायभाती शत्रु ददुमासी
नरोऽभिमानो नृपदङ्कुत् ॥१२५॥ नयनपाणिगते रश्मिदने परमया रमपारमयापुत् ॥
मयतितो हिततो मतितीपकृद्दहकलाकलितो विमलोक्तिहृत् ॥१२६॥ मानागुणप्रामधनाधिमाती
सदा नरो बुद्धिबिन्दोदभाती ॥ प्रकाशने भानुमुते मुभानुः कृपानुरक्तो हृत्पादभक्त

॥१२७॥ महाधनीनन्दननदितः स्वादपायकारी रिपुभूमिहारी ॥ गमे शनौ पडितराजभाव
धरापतेरापतने प्रयाति ॥१२८॥ आगमने पदगर्दभयुक्तं पुत्रकलत्रसुखेन विमुक्तं ॥ भानुसुते
भ्रमते भुवि नित्यं वीनमना विजनाभ्रयभावम् ॥१२९॥ रत्नावलीकाचनमौक्तिकानां वातेन
नित्यं व्रजति प्रमोदम् ॥ सभागते भानुसुते जितात नयेन पूर्णो मनुजो महौजा ॥१३०॥ आगमे
गदसमागमो नृणामब्जबधुतनये यदा तदा ॥ मदमेव गमन धरापतेर्याचनाविरहिता मति
सदा ॥१३१॥

शनिफल—यदि शनि शयन अवस्था मे हो तो भूख प्यास से व्याकुल तथा प्रथम अवस्था मे
रोगी और वृद्धावस्थामे भाग्यशाली होता है ॥१२४॥ शनि यदि उपवेश अवस्थामे हो तो समाज से
दुखी, कैदी, विप्रवाधायुक्त, दाद, खाजका रोगी तथा राजदंडभोगी होता है ॥१२५॥
शनि यदि नयन पाणि अवस्था मे हो तो परम श्रेष्ठ लक्ष्मीयुक्त राजा तथा बान्धवों का हितैषी
और सतोष पानेवाला तथा कलाकुशल एव मिष्टभाषी होता है ॥१२६॥ शनि जब प्रकाश
अवस्था मे हो तो अनेक गुणयुक्त तथा ऐश्वर्यशाली तथा विनोदी, कृपालु तथा हरिभक्त होता
है ॥१२७॥ शनि गमन अवस्था मे हो तो जातक महाधनी, पुत्रयुक्त, दृष्टबुद्धि तथा शत्रु की
भूमि का हरण करनेवाला एव राजभवन मे पण्डितराज तुल्य माननीय होता है ॥१२८॥ शनि
यदि आगमन अवस्था मे हो तो गधे के समान तथा स्त्री-पुत्र सुखहीन, व्यर्थ विचरणशील
दीन तथा जनाश्रयहीन होता है ॥१२९॥ शनि यदि सभा अवस्था मे हो तो रत्न, सुवर्ण, मोती
आदि की प्राप्ति का सुख तथा नीतिमान् तेजस्वी होता है ॥१३०॥ शनि आयम अवस्था मे हो
तो जातक रोगी मन्दगामी, मनरखी एव कभी याचना नहीं करता ॥१३१॥

संगतेजनुधि भानुनदने भोजन भवति भोजन रस ॥ सयुत नयनमदतातता
मोहतापपरितापिता मति ॥१३२॥ नृत्यलिप्सागते मन्दे धर्मात्मा वित्तपूरित ॥ राजपूज्यो
नरो धीरो महावीरो रणागणे ॥१३३॥ भवति कौतुकभावमुपागते रविमुते बसुधाबसुपूरित
॥ अतिमुखी सुमुखोसुखपूरित कवितयामलया कलया नर ॥१३४॥ निद्रागते वासरनाथपुत्रे
धनी सदा चारुगुणैरुपेत ॥ पराक्रमी चद्रविषहता सुवारकातारतिरीतिविज्ञ ॥१३५॥

शनि यदि भोजन अवस्था मे हो तो जातक को रसयुक्त भोजन प्राप्त होता है; दृष्टि गात्र,
तथा मोह एव दुःख से दुःखी रहता है ॥१३२॥ शनि नृत्यलिप्सा अवस्था मे हो तो धर्मात्मा
धनी, राजपूज्य, धीर तथा रणशूर होता है ॥१३३॥ शनि यदि कौतुकभाव मे हो तो जातक
धन, भूमियुक्त होता है। अतिमुखी तथा स्त्रीसुखयुक्त श्रेष्ठवित्त्वशक्ति युक्त होता है ॥१३४॥
शनि निद्रा अवस्था मे हो तो जातक सदा धनी, सुन्दर गुणयुक्त पराक्रमी, शत्रुनाशकारी तथा
बारविलासिनी रति प्रिय होता है ॥१३५॥

अथ राहफलम्

यदागमो जन्मनि पश्य राहौ कलेशाधिकत्व शयन प्रयाति ॥ उपवेशयुगमेपि च कन्यकायामजे समाजो
धनधान्यरागो ॥१३६॥ उपवेशनमिह गतवति राहौ ददुगदेन जन परितप्त ॥ राजस
माजयुतो बहूमानो विसुखेन सदा रहितः स्यात् ॥१३७॥ नेत्रपाणावगौ नेत्रे भवतो

रोगपीडिते ॥ दुष्टव्यासारिचौराणां भयं तस्य धनक्षयः ॥१३८॥

राहु फल-जन्म लग्न में राहु शयन अवस्था में हो तो अधिक क्लेशकारी होता है। तथा १।२।३।६ राशि में हो तो धन, धान्य समूहाधिपति होता है॥१३६॥ राहु उपवेश अवस्था में हो तो जातक दाद रोग से दुःखी रहता है। राजसभा में गति होने पर भी घमण्डी होने से सदा धनहीन रहता है॥१३७॥ राहु नेत्रपाणि अवस्था में हो तो जातक के नेत्र रोगी ही रहते हैं तथा सर्प, चोर, आदि से भय और धन हानि होती है॥१३८॥

प्रकाशने शुभासने स्थितिः कृतिः शुभा नृणां धनोन्नतिर्गुणोन्नतिः सदा विदामगाविह ॥ धराधिपाधिकारता यशोलता तदा भवेन्नवीननीरदाकृतिर्विदेशतो महोन्नतिः ॥१३९॥ गमने च यदा राहौ बहुसंतानवाग्ररः ॥ पंडितो धनवान्दाता राजपूज्यो नरो भवेत् ॥१४०॥ राहावागमने क्रोधी सदा धीधनवर्जितः ॥ कुटिलः कृपणः कामी नरो भवति सर्वथा ॥१४१॥ सभागतो यदा राहुः पंडितः कृपणो नरः ॥ नानागुणपरिक्रान्तो वित्तसौख्यसमन्वितः ॥१४२॥ चेदगावागमं यस्य याते तदा व्याकुलत्वं सदा रातिभीत्याभयम् ॥ महद्बन्धुवादो जनानां निपातो भवेद्वित्तहानिः शठत्वं कृशत्वम् ॥१४३॥ भोजने भोजनेनालं विकलो मनुजो भवेत् ॥ मन्दबुद्धिः क्रियाभीरुः स्त्रीपुत्रमुखवर्जितः ॥१४४॥ नृत्यलिप्सागते राहौ महाव्याधिवर्द्धनम् ॥ नेत्ररोगो रिपोर्भीतिर्दैन्यधर्मज्ञयो नृणाम् ॥१४५॥

राहु प्रकाशन अवस्था में हो तो शुभआसन (स्थान) में स्थिति हो, धनवृद्धि तथा गुणों की उन्नति होती है राजपद का अधिकारी होता है। श्याम वर्ण और विदेश में उन्नति होती है॥१३९॥ राहु गमन अवस्था में हो तो सन्तान बहुत होती है। जातक पंडित तथा मेधावी, धनवान्, दानी, राजपूज्य होता है॥१४०॥ राहु आगमन अवस्था में हो तो जातक निर्बुद्धि, धनहीन, कुटिल, कृपण तथा कामी होता है॥१४१॥ राहु सभा अवस्था में हो तो पंडित, कृपण, कामी, नाना गुणयुक्त तथा धनी और सुखी होता है॥१४२॥ यदि राहु आगमन अवस्था में हो व्याकुल तथा शत्रुभय से पीडित, बन्धुओं से विवादी और धन हानि, शठ, कृश और जनहीन होता है॥१४३॥ राहु भोजन अवस्था में हो तो जातक को भोजन की ही चिन्ता रहती है। मन्दबुद्धि कामचोर तथा स्त्री पुत्र सुख हीन होता है॥१४४॥ राहु नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो रोग बढ़ता ही रहता है। नेत्र रोगी ही रहते हैं, शत्रु से भय, धन तथा धर्म का क्षय होता है॥१४५॥

कौतुके च यदा राहौ स्थानहीनो नरो भवेत् ॥ परदाररतो नित्य परवितापहारकः ॥१४६॥ निद्रावस्थां गते राहौ गुणघामयुतो नरः ॥ कातासन्तानवान्धीरो गर्वितो बहुवित्तवान् ॥१४७॥

अथ केतुफलम्

मेघे व्येऽथ वा पुंगे कन्यायां शयनं गते ॥ केतो धनसमृद्धिः स्यादन्त्ये रोगवर्धनम् ॥१४८॥

उपवेश गते केतौ बहुरोगविवर्द्धनम् ॥ अरिवातनृपव्यालचौरशका समततः ॥१४९॥ नेत्रपाणि गते केतौ नेत्ररोग प्रजायते ॥ दुष्टसर्पादिभीतिश्च रिपुराजकुलादपि ॥१५०॥ केतौ प्रकाशने सजे धनवान्धार्मिक सदा ॥ नित्य प्रवासी चोत्साही सात्त्विको राजसेवक ॥१५१॥ गमेच्छाया भवेत्केतुर्बहुपुत्रो महाधनः ॥ पण्डितो गुणवान्वाता जायते च नरोत्तमः ॥१५२॥ आगमे च यदा केतुर्नानारोगो धनक्षयः ॥ दतधातो महारोगो पिशुन परनिन्दक ॥१५३॥

जब राहु कौतुक अवस्था में हो तो मनुष्य को रहने का ठिकाना भी नहीं रहता। परस्त्रीगामी तथा चोर होता है॥१४६॥ राहु निद्रावस्था में हो तो गुण समूह युक्त, स्त्री पुत्र से सुखी धनी, गर्वीला तथा धीर होता है॥१४७॥

केतु फल—केतु शयनअवस्था में ॥१२॥३॥६ राशि में हो तो धनसमृद्धि हो, और राशियों में हो तो रोग की वृद्धि हो॥१४८॥ केतु उपवेश अवस्था में हो तो दाद—खाज आदि रोग तथा शत्रु, सर्प, चोर तथा राज भय रहता है॥१४९॥ केतु नेत्रपाणि अवस्था में हो जो जातक को नेत्ररोग तथा सर्पभय एव शत्रु और राजकुल से भय होता है॥१५०॥ केतु प्रकाश अवस्था में हो तो धनवान्, धार्मिक, प्रवासी, उत्साही सात्त्विकभाववाला और राजसेवक होता है॥१५१॥ केतु गमन अवस्था में हो तो पुत्र बहुत हो तथा धनी पण्डित, गुणी और दाता होता है॥१५२॥ जब केतु आगम अवस्था में हो जो जातक को नाना रोग धनक्षय, दन्तरोग आदि होते हैं और चुगलखोर तथा परनिन्दक होता है॥१५३॥

सभावस्था गते केतौ वाचालो बहुवर्धितः ॥ कृपणो लम्पटश्चैव धूर्तविद्याविशारदः ॥१५४॥ यदागमे भवेत्केतुः केतुः स्यात्पापकर्मणाम् ॥ बन्धुवादरतो दुष्टो रिपुरोगनिपीडितः ॥१५५॥ भोजने तु जतो नित्य क्षुधया परियोजितः ॥ दरिद्रो रोगसततः केतौ भ्रमति मेदिनीम् ॥१५६॥ नृत्यलिप्सागते केतौ व्याधिना विकृतो भवेत् ॥ बुद्धबुदालो दुराधर्षो धूर्तोजन्यकरो नरः ॥१५७॥ कौतुकी कौतुके केतौ नटवामारतिप्रियः ॥ स्थानभ्रष्टो दुराचारी दरिद्रो भ्रमते महोम् ॥१५८॥ निद्रावस्था गते केतौ धनधान्यसुख महत् ॥ नानागुणविनोदेन कालो गच्छति जनिनाम् ॥१५९॥

केतु 'सभा' अवस्था में हो तो वाचाल, अभिमानी, कृपण, लम्पट तथा धूर्त होना है॥१५४॥ केतु यदि 'आगम' अवस्था में हो तो जातक पापी, बन्धु में बन्धु बान्धवाना दुष्ट एव शत्रु तथा रोगी होता है॥१५५॥ केतु यदि 'भोजन' अवस्था में हो तो जातक भिममगा, दरिद्र, रोगी तथा घुसकड़ होता है॥१५६॥ केतु 'नृत्यलिप्सा' में हो तो मदा रोगी तथा आम की बीमारी वाला, धूर्त तथा अनर्थकारी होता है॥१५७॥ केतु 'कौतुक' अवस्था में हो तो नटजाति की स्त्री का प्रेमी, स्थानभ्रष्ट, दुराचारी, दरिद्र तथा यात्राप्रेमी होता है॥१५८॥ केतु 'निद्रा' अवस्था में हो तो धनधान्य का विगेष मुग होता है और अनेक गुण विनोद में गमय पापन होता है॥१५९॥

अथ सर्वभावफलम्

शयनाद्येषु भावेषु यस्य तिष्ठति सद्ग्रहा ॥ नित्य तस्य शुभ ज्ञान निर्विशक द्विजोत्तम ॥१६०॥ भोजनाद्येकभावेषु पापास्तिष्ठति सर्वथा ॥ तदा सर्वविनाशोऽपि नात्र कार्या विचारणा ॥१६१॥ निद्राया च यदा पापो जायास्थाने शुभ वदेत् ॥ यदि पापग्रहैर्दृष्टो न शुभ च कदाचन ॥१६२॥ सुतस्थाने स्थित पापो निद्राया शयनेऽपि वा ॥ तदा शुभ भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥१६३॥ मृत्युस्थानस्थित पापो निद्राया शयनेपि वा ॥ तदा तस्यापमृत्यु स्याद्वाजन्त परतस्तथा ॥१६४॥ शुभग्रहैर्मदा युक्त शुभैर्वा यदि बोधित ॥ तदा च मरण तस्य गमया च विशेषत ॥१६५॥ कर्मस्थाने यदा पाप शयने भोजनेऽपि वा ॥ तदा कर्मविपाक स्याद्भानादुत्तरप्रदायक ॥१६६॥ दशमस्थो निशानाथ कौतुकी च प्रकाशने ॥ तदैव राजयोग स्यान्निर्विशक द्विजोत्तम ॥१६७॥ बलावलविचारेण ज्ञायते च शुभाशुभम् ॥ एव क्रमेण बौद्धव्य सर्व भावेषु बुद्धिमन् ॥१६८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे ग्रहाद्यवस्थाफलकथन
नाम त्रिंशोऽध्याय समाप्त ॥३०॥

सर्वभावफल—ऊपर कहे गये भावफलों में यदि शुभग्रहों का योग हो तो समय समय पर सद्बुद्धि होती रहती है ॥१६०॥ भोजन अवस्था में यदि पाप ग्रह हो तो सब प्रकार में विनाश ही होता है ॥१६१॥ पापग्रह निद्रावस्था में सप्तमभाव में हो तो शुभफल होता है और यदि पापग्रह से दृष्ट हो तो शुभफल नहीं होता ॥१६२॥ पापग्रह निद्रावस्था में पचमभाव में हो तो सन्तान के लिए शुभकारी है ॥१६३॥ यदि अष्टम भाव में पापग्रह निद्रावस्था में हो तो जातक की अकाल मृत्यु राज के कारण या अन्य कारण से होती है ॥१६४॥ यदि शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो विशेष करके भगा में डूबकर मृत्यु होती है ॥१६५॥ यदि दशम भाव में पापग्रह शयन या भोजन अवस्था में हो तो जातक को अनेक दुखों का सामना करना पड़ता है ॥१६६॥ यदि चन्द्रमा दशमभाव में कौतुक अथवा प्रवास अवस्था में हो तो निःसन्देह राजयोग कारक होता है ॥१६७॥ इस प्रकार ग्रहों का बलावल विचार करके शुभाशुभ फल का निर्देश करना चाहिये और इसी क्रम से सभी भावों में विचार करना चाहिए ॥१६८॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० ग्रहावस्था फलकथन
नाम त्रिंशोऽध्याय ॥३०॥

मैत्रेय उवाच

दशा कतिविधा सति होतन्मेबूहि तत्त्वत ॥ महर्षे त्व समर्थोसि कृपया करुणानिधे ॥१॥

पराशर उवाच

अथातः सप्रवक्ष्यामि दशामेदानेकश ॥ विंशोत्तरी दशा चोक्ता दशा तु षोडशोत्तरी ॥२॥

द्वादशोत्तरिका ज्ञेया तथैवाष्टोत्तरी दशा ॥ पचोत्तरी दशा तद्दश शततमा स्मृता ॥३॥ दशा हि चतुराशीति प्राह चाय द्विसप्तति ॥ तथा षष्टिसमा चोक्ता दशा षड्विंशति समा ॥४॥ नवमाणनवदशा राश्यशकदशा स्मृता ॥ दशा कालाभिधा चक्रदशाचक्र मुनीश्वरे ॥५॥ चरपर्या दशा विप्र द्विजोत्तमदशा स्थिरा अयोत्तरदशा विप्र ब्रह्मता चापरा दशा ॥६॥ केडाख्या च दशा ज्ञेया कारकादिप्रहा दशा ॥ माडूकी च दशा प्रोक्ता तथा शूलदशापि वा ॥७॥ योगार्द्धगा दशा विप्र दृग्दशा कथयाम्यहम् ॥ दशा त्रिकोणनामा वै राशीना च दशा तथा ॥८॥ तारादशा तथा ज्ञेया दशा ज्ञेया च वर्णदा ॥ पचस्वरदशा विप्र योगिनी च दशा स्मृता ॥९॥ तत पैडघदशा ज्ञेया तथाशी च दशा द्विज ॥ नैसर्गिकदशा विप्र अष्टवर्गदशा स्मृता ॥१०॥ सध्या दशा च ज्ञातव्या पाचका च दशा द्विज ॥ द्विचत्वारिंशद्देवा स्यु कथयामि तवाग्रत ॥११॥

अनेक दशाभेद कथन

मैत्रेय जी बोले—हे महर्षि! दशा कितने प्रकार की है यह आप कहिये क्योंकि हे कृष्णानिधि! इस विषय के कहने में आप ही समर्थ हैं॥१॥ महर्षि पराशरजी ने कहा—अब हम अनेक दशा भिन्न भिन्न रूप से कहते हैं। विशोत्तरी दशा तथा षोडशोत्तरी द्वादशोत्तरी अष्टोत्तरी, पचोत्तरी, शताब्दिका, तथा चतुरशीति वर्षा, द्विसप्तति वर्षा षष्टि समा, तथा षड्विंशति समा, नवमाण दशा, राश्यश दशा तथा कालदशा कालचक्रदशा चरपर्यायदशा स्थिरदशा, ब्रह्मदशा, केन्द्रदशा, कारकदशा माडूकीदशा शूलदशा योगार्द्ध दशा दृग्दशा त्रिकोण दशा, राशि दशा, तारा दशा वर्णद दशा पचस्वर दशा योगिनी दशा, पैण्डी दशा अशी दशा, नैसर्गिक दशा, अष्टवर्ग दशा सध्या दशा पाचक दशा आदि ४२ प्रकार की दशा है। उनमें से कुछ प्रसिद्ध प्रसिद्ध दशा का विचार कथन करते हैं॥श्लोक २ से ११ तक॥

अथ विशोत्तरीदशामाह

आनयनप्रकार च धृगुष्व द्विजपुंगव ॥ नामनस्तत्रपर्यंतमाधार कृतिकादित ॥१२॥ दहनात्स्वर्गपर्यन्त गणयेन्नवभिहरेत् ॥१३॥ सूर्येन्दुक्षमाजतमसो वाक्पतिर्मदचक्रजौ ॥ केतुशुक्रौ क्रमादेते विज्ञेयाश्च दशाधिपा ॥१४॥ रसायामुनिघृत्यब्दा भूपतिर्धृतिवत्सरा ॥ सप्तद्वयो नगा व्योमबाहवो भास्करादित ॥१५॥

विशोत्तरी दशा प्रकार

विशोत्तरी दशा स्पष्ट करने का प्रकार यह है कि—कृतिका नक्षत्र से गणना बरनी चाहिये॥१२॥ कृतिका से अपने नक्षत्र तक गणना करके अधिक हो तो ९ का भाग देना चाहिये॥१३॥ दशा के क्रम से स्वामी बहते हैं। सू० च० म० रा० वृ० श० बु० के० शु० । आई हुई सख्या क अनुसार स्वामी होता है॥१४॥ क्रम से वर्ष सख्या ६, १०, ७, १८, १६ १९ १७, ७ २० जानना॥१५॥

उदाहरण—वत्पना किया किसी का जन्म कृतिका नक्षत्र में है, अतः भयात् १५।१० है भयोग ६०।३० है, पयमय भयात् ९१० को सूर्य के वर्ष ६ से गुणा किया तो ५४६० हुए,

इनमे पलमय भभोग ३६३० का भाग दिया तो लब्धि १ वर्ष प्राप्त हुआ। शेष १८३० को १२ से गुणा किया तो २१९६० हुए, ३६३० का भाग दिया तो ६ मास लब्ध हुए, शेष १८० को ३० से गुणा किया तो ५४० हुए, ३६३० का भाग दिया तो ०० दिन प्राप्त हुआ, पुन ५४० को ६० से गुणा किया तो ३२४०० हुए, इसमे ३६३० का भाग दिया लब्ध ८ घटी प्राप्त हुई, शेष ३३६० को ६० से गुणा करके ३६३० के भाग से लब्ध ५५ पल प्राप्त हुए। इन वर्षादि सूर्य के वर्ष ६ मे घटाया तो ४।५।२९।५।१०५ यह भोग्य वर्षादि हुए।

विशोत्तरीदशा मानचक्रम्

| | | | | | | | | | |
|-----|-----|-----|-------|------|------|------|-----|------|------------|
| मू० | च० | म० | रा० | बृ० | श० | बु० | के० | शु० | घ० |
| ६ | १० | ७ | १८ | १६ | १९ | १७ | ७ | २० | द्वय |
| हृ० | रो० | मृ० | आ० | पुन० | पु० | आ० | म० | पूफा | नक्षत्राणि |
| उफा | ह० | वि० | स्वा० | वि० | ऽनु० | न्ये | मू० | पूपा | " |
| उया | श० | घ० | श० | पूमा | उभा | रे० | अ० | म० | " |

विशोत्तरी दशाक्षरम्

[illegible]

विंशोत्तरीदशाचक्रम्

| २०१४ | २०१८ | २०२८ | २०३५ | २०५३ | २०६९ | २०८८ | संवत् |
|------|------|------|------|------|------|------|-------|
| ३ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | राशि |
| ५ | ०४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | अश |
| ८ | ५९ | ५९ | ५९ | ५९ | ५९ | ५९ | घटी |
| १३ | १८ | १८ | १८ | १८ | १८ | १८ | पल |

अथ षोडशोत्तरीदशमाह

एक पचयुतौ वदामृत्यत बत्सरा क्रमात् ॥ रविर्मासो गुरुमन्दकेतुश्चन्द्रो बुधो मृगु ॥१६॥
 अष्टौ दशाधिपा प्रोक्ता राहुहीना नवग्रहा ॥ पुष्यमाज्जन्मभ यावद्गणयेद्दशभिर्हरित् ॥१७॥
 सूर्यहोरागते शुक्ले चन्द्रस्य कृष्णपक्षके ॥ तदा नृप कलार्याय विधित्या षोडशोत्तरी ॥१८॥

षोडशोत्तरी दशा प्रकार

षोडशोत्तरी दशा में वर्ष सख्या ११ से १८ तक जानना और दशास्वामी सू० म० गु० म० के० च० बु० शु० होते हैं। ये आठ दशास्वामी ग्रह हैं ॥१६॥ इन दशाधिपों में राहुग्रह की गणना नहीं है। पुष्य नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर आठ का भाग देना चाहिये ॥१७॥ शुक्लपक्ष में सूर्य की होरा और कृष्णपक्ष में चन्द्रमा की होरा से विचार करो। इस प्रकार मनुष्यों का शुभाशुभ विचार षोडशोत्तरी दशा से करो ॥१८॥

उदाहरण—पूर्वोदाहरण में जन्मनक्षत्र कृ० पलमय भयात् ९१० तथा भ्रमोग ३६३० है। दशा बुध की है, अतः ९१० को बुध के वर्ष १७ से भायात् ९१० को गुणा किया तो १५४७० हुए, इसमें भ्रमोग ३६३० का भाग दिया तो लब्ध ४ वर्ष प्राप्त हुए, शेष ९५० को १२ से गुणा किया और ३६३० का भाग दिया तो ३ मास प्राप्त हुए और आगे भी ४ मास ३०।६०।६० से गुण कर भ्रमोग ३६३० के भाग से प्राप्त अरु दिन, घटी, पल प्राप्त ४।१४।१८ हुए, इस प्रकार ४।३।४।१४।१८ वर्षादि दशा का भुक्तमान प्राप्त हुआ, इसको बुध के मान १७ वर्ष में घटाया तो १२।८।२५।४५।४२ यह बुध की भोग्य वर्षादि दशा हुई।

| षोडशोत्तरी दशमानम् | | | | | | | | |
|-----------------------|------|-------|------|------|------|-----|-------|-------|
| सू० | म० | वृ० | श० | के० | च० | बु० | शु० | घ० |
| ११ | १२ | १३ | १४ | १५ | १६ | १७ | १८ | व० |
| पु० | भे० | म० | पूफा | उफा | ह० | वि० | स्वा० | न० |
| बि० | जु० | ज्ये० | मू० | पूषा | उषा | ष० | घ० | न० |
| श० | पूषा | उषा | रे० | अ० | म० | कृ० | रो० | न० |
| मृ० | आ० | पुन० | X | X | X | X | X | न० |
| षोडशोत्तरी दशा चक्रम् | | | | | | | | |
| बु० | शु० | सू० | म० | वृ० | श० | के० | च० | घ० |
| १२ | १८ | ११ | १२ | १३ | १४ | १५ | १६ | व० |
| ८ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | मा० |
| २५ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | दि० |
| ४५ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | घ० |
| ४२ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ष० |
| २०२४ | २०२७ | २०४५ | २०५६ | २०६८ | २०८१ | | | संवत् |
| ३ | ०० | ० | ० | ० | ० | | | |
| ५ | ०० | ० | ० | ० | ० | | | |
| ८ | ५३ | ५३ | ५३ | ५३ | ५३ | | | |
| १३ | ५५ | ५५ | ५५ | ५५ | ५५ | | | |

अथ द्वादशोत्तरीदशामाह
सूर्यो गुरुः शिखी ज्येष्ठः कुम्भो मघो निशाकरः ॥ शुक्रहीना दशा होतद्वि चयात्सप्तमात्समाः ॥१९॥ जन्मभात्पीणपर्यन्त गणयेवष्टभिर्भजेत् ॥ नवमासो यदा जाता शुक्रस्य द्वादशोत्तरी ॥२०॥

द्वादशोत्तरी दशा
स्वामी ग्रह सूर्य ७ गुरु ९ के ११ बु १३ रा १५ म १७ श १९ च २१ इनमें शुक्र ग्रह को छोड़ कर बाकी ग्रहों की सात से २-२ बढ़ाकर वर्ष सख्या की दशा जानना ॥१९॥ जन्म नक्षत्र से रेवती नक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग दे, शेष सख्या की दशा जाने, शुक्र के नवाश में जन्म हो तो द्वादशोत्तरी का विचार करो ॥१९॥२०॥

| द्वादशोत्तरी दशा क्रम चक्रम् | | | | | | | | |
|------------------------------|-----|-----|-----|-----|----|----|----|---------|
| स० | बु० | के० | बु० | रा० | म० | श० | च० | ग्रहा |
| ७ | ९ | ११ | १३ | १५ | १७ | १९ | २१ | वर्षाणि |

उदाहरण-भयात भभोग से पूर्ववत् दशा स्पष्ट करना।

अथाष्टोत्तरीदशामाह
सूर्यश्चन्द्रः कुजः शमीयः शनिर्जीवस्तमो मृगुः ॥ एते दशाधिपाः प्रोक्ता विना फेतु नवग्रहा ॥२१॥ रसाः पञ्चैन्दवो नागाः शैलवंदा नभेन्दवः ॥ गोव्राः सूर्यकुनेत्राश्च समाः प्रद्योतमादयः ॥२२॥ सप्तेशात्कोणकोणस्थे राहौ लग्ने स्थित विना ॥ अष्टोत्तरी द्विधा प्रोक्ता शिवाद्या कृतिकादितः ॥२३॥ चतुष्क त्रितय तस्मान्चतुष्कं त्रितय पुनः ॥ यावत्स्वजन्मस तावद्गणयेच्च यथाक्रमम् ॥२४॥

अष्टोत्तरी दशा
सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, शनि, गुरु, राहु, शुक्र ये ग्रह वेतु के विना दशास्वामी हैं ॥२१॥ तथा इनके वर्ष-सूर्य ७ च १५ म ८ बु १७ श १० गुरु १९ राहु १२ शुक्र २१ क्रम से हैं ॥२२॥ सप्तेश से राहु लग्न को छोड़कर केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हो तो अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करना ॥ अष्टोत्तरी की गणना दो प्रकार की होती है, एक आर्द्रा से दूसरी कृतिका से ॥२३॥ कथित नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करो। प्रथम पर्याय में ४ नक्षत्र, दूसरे में तीन, पुनः ४ और पश्चात् ३, इसी प्रकार जन्म नक्षत्र तक गणना करनी चाहिये ॥२४॥ (वक्र में स्पष्ट समझना)

विशेष-“दशामानं चतुर्धा च त्रिधा चैव पुनःपुनः । अशुमानां शुमानाञ्च ग्रहाणां साधवेद्विज !” अर्थात् पापग्रहोंके दशा वर्षोंके ४ भाग करके प्रति नक्षत्र १ भाग तथा शुभग्रहों के ३ भाग करके प्रतिनक्षत्र १ भाग दशामान ग्रहण करना। इस प्रकार जन्म नक्षत्र का जो मान प्राप्त हो उससे पूर्ववत् भयात भोग से दशास्पष्ट करना चाहिए। तथा उत्तराषाढ का चतुर्थ चरण और श्रवण का १५ वाँ भाग 'अभिजित्' नक्षत्र माना गया है, अतः उत्तराषाढ के ३ चरण को ही भोग मानना और श्रवण के आदि के १५वें भाग रहित को भोग मानना तथा उत्तराषाढ का चतुर्थ चरण और श्रवण के १५वें भाग को मिलाकर अभिजित नक्षत्र का भोग मानना। और इस भोग के अनुसार ही भयात स्पष्ट करके दशा का साधन करना चाहिये॥२४॥

| अष्टोत्तरीदशायन्त्रम् | | | |
|-------------------------------------|--------------------------------------|---------------------------------------|------------------------------------|
| सू० म० ७२ | सं० भा० म० १८० | मं० १५ | बुध २५४ |
| ६ | १५ | ८ | १७ |
| आ० १८ पु० १८ शु० १८ भा० १८ | मं० ६० पू० ६० उ० ६० ० ० | ह० २४ वि० २४ स्वा० २४ वि० २४ | अ० ६८ ज्ये० ६८ मू० ६८ ० ० |
| श० १२० | बु० २२८ | रा० १४४ | शु० २५२ |
| १० | १९ | १२ | २१ |
| पू० ३० उ० ३० अभि० ३० अ० ३० | श० ७६ मं० ७६ पू० भा० ७६ ० ० | उ० ३६ रे० ३६ मं० ३६ म० ३६ | ह० ८४ रो० ८४ मू० ८४ ० ० |

उदाहरण-कल्पना किया कि-किसी जातक का जन्म उत्तराषाढ के द्वितीय चरण में है, और भयात ३०।५ है, तथा भोग ६०।४० है तो यहाँ पर अभिजित् के भाग के नाम का चतुर्धा १५।१८ घटाया तो शेष ४५।३० यह उत्तराषाढ का भोग हुआ और भयात वही ३०।५ है, इसके पलात्मक १८०५ को शनिदशा के द्वितीय नक्षत्र (ऊपर चक्र में देखिये) के मान ३०

(मास) से गुणा किया तो ५४१५० हुए, इससे १४।५२।३६ मातादि प्राप्त हुए। यह उत्तराषाढ का भुक्तमान हुआ। इसको ३० (मास) में घटाया तो १५।७।२४ यह उत्तराषाढ का भोग्य मान हुआ, इसमें अभिजित् और श्रवण के मान ३०-३० मास का योग किया तो ७५।७।२४।०० हुआ मास सख्या में १२ का भाग दिया तो ६।३।७।२४।०० यह शक्ति की भाग्य दशा हुई।

विशेष सूचना—केवल अष्टोत्तरी और षष्ठघण्डिका दशामे अभिजित् की गणना है। अतः उषा अभि और श्रवण का भोग्य मान पूर्वोक्त रीति से ग्रहण करना। अन्य नक्षत्रों में नक्षत्र के पूर्ण भोग्य तथा भयात से विशोत्तरी के समान ही दशा साधन करना किन्तु दशा मान ऊपर चक्र में लिखे अनुसार पापग्रह का १/४ और शुभग्रह का १/३ पूर्ण भोग्य के लिये ग्रहण करना चाहिए। भुक्त नक्षत्र के मान को छोड़कर भोग्यनक्षत्र के मानका योग करके भोग्यदशा साधन करना।

| अष्टोत्तरी दशा चक्रम् | | | | | | | | |
|-----------------------|------|------|------|------|------|----|-----|--------|
| श० | ह० | रा० | गु० | स० | च० | ध० | पु० | |
| ६ | १९ | १२ | २१ | ६ | १५ | ८ | १७ | ब० |
| ३ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | मा० |
| ७ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | दि० |
| २४ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | घ० |
| ०० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | प० |
| २०१४ | २०२० | २०३९ | २०५१ | २०७२ | २०७८ | | | सम्बत् |
| ३ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | | | रा |
| ५ | १२ | १२ | १२ | १२ | १२ | | | अ |
| ८ | ३९ | ३२ | ३२ | ३२ | ३२ | | | क |
| १५ ब | १५ | १५ | १५ | १५ | १५ | | | वि |

अथ पञ्चोत्तरीदशामाह

तमो विनाशुराधावि विज्ञेय जन्मभावधि ॥ गणयेत्सप्तभिर्महते शेषे कल्प्या दशा शुभा ॥२५॥ रविर्जर्मिमुतो भीमो भार्गवो रजनीकरः ॥ याचस्पतिश्च कर्कगो तस्यैव द्वादशांगिके ॥२६॥ पञ्चोत्तरी दशा जित्या द्वादशाद्या क्रमात्तमा ॥ बलाबलधिवेकेन पथान्यायेन योजयेत् ॥२७॥

पञ्चोत्तरी दशा

जिस जातक के बृहस्पति कर्कराशि में तथा कर्क के द्वादशांश में हो उसके लिए इस पञ्चोत्तरी दशा का विचार करना चाहिए। अनुराधा नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करना।

अथ द्विसप्ततिकां दशामाह

लग्नेरो सप्तमे घत्र लग्ने वै मदनाधिपे ॥ चिंतनीया दशा तत्र द्व्यधिकाः सप्ततिः समाः ॥३३॥
नव वर्षाणि सर्वेषां यिकेतूनां ग्रहात्मनाम् ॥ मूलान्जन्मर्लपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्हरित् ॥ शेषा
दशा विचिंत्या च यदेज्जैव महामुने ॥३४॥

अथ द्विसप्ततिकादशायन्त्रम्

| र० | च० | म० | पु० | वृ० | शु० | श० | रा० | ग्रहा. |
|-------|-----------|----------|---------|----------|------|-----------|----------|---------|
| १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | वर्षाणि |
| मूल० | पूर्वाषा० | उत्तरा० | थवण० | घनिष्ठा० | शत० | पूर्वाभा० | उ०भा० | न- |
| रेवती | अश्वि० | भरणी | कृत्ति० | रोहिणी | मृग | आर्द्रा | पुनर्वसु | स- |
| पुष्य | भाद्र० | मघा | पूर्वा | उत्तरा | हस्त | चित्रा | स्वाती | त्रा- |
| विशा० | अनुरा० | ज्येष्ठा | ० | ० | ० | ० | ० | णि |

द्विसप्ततिका दशा

जिस जातक के लग्नेश सप्तमभाव में अथवा सप्तमेश लग्न में हो उसके लिए ७२ वर्ष की दशा का विचार करना चाहिए ॥३३॥ केतु को छोड़कर क्रम से सूर्यादि ग्रह दशास्वामी हैं। सबके ९-९ वर्ष हैं। मूलनक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग देना। शेष सस्या से दशा जानना ॥३४॥

उदाहरण—किसी का जन्म थवण नक्षत्र में है तो बुध की दशा हुई, अतः थवण का भयात भोग स्पष्ट करके विशोत्तरी दशा के समान ही दशा स्पष्ट करनी चाहिए।

अथ षष्टिहायनीदशामाह

गुर्यर्कभूसुतानां च वर्षाणि दशकानि च ॥ ततः शशितशुक्रार्कपुत्रापूर्णां समाश्रयत् ॥३५॥
दाक्षारत्र्यं चतुष्कं च त्रयं वेदं पुनः पुनः ॥ यदैको लग्नराशीशश्चिन्त्या षष्टिसमा तदा ॥३६॥

षष्टिहायनी दशा

गुरु, सूर्य, मंगल, चंद्रमा, बुध, शुक्र, शनि, राहु ये दशा स्वामी तथा वर्षसस्या क्रम से १०-१०-१०-६-६-६-६-६ जानना ॥३५॥ अश्विनी नक्षत्र से ३-४-३-४ आदि क्रम से पुनः

पुनः दशा की गणना करना। सप्त की राशि तथा चन्द्र राशि एक ही हो उस जातक के लिए इस दशा का उपयोग है॥३६॥

सूचना—इस दशा की वर्षसंख्या भी अष्टोत्तरी दशा के समान तीन या चार नक्षत्रों पर विभाग करके १-१ भाग १-१ नक्षत्र का जानना। जिस ग्रह के तीन नक्षत्र हो, उसकी दशा के तीन करना, जैसे—बुध के तीन नक्षत्र हैं तो उसके ६ वर्षों के ३ भाग २-२ वर्ष के १-१ नक्षत्र के जानना। और ४ नक्षत्र हो तो ४ भाग करना, जैसे सूर्य के ४ नक्षत्र हैं तो दशा वर्ष १० के भाग २॥-२॥ वर्ष १-१ नक्षत्र के समझना।

उदाहरण—जैसे किसी का जन्म नक्षत्र स्वाती है तो बुध की दशा हुई, और स्वाती नक्षत्र का भयात भोग क्रमशः २०१०० और ६०१०० है, तो स्वामी के २ वर्ष सख्या से भयात के पलाक को गुणा कर भोग के पलाक का भाग देने से सन्ध भुक्त ०१८१०१० को २वर्ष में घटाया तो १४१०१० हुआ, इसमें विशाखा के २ और अनुराधा के २वर्ष भुक्त किसे तो ५१४१०१० हुए।

| अथ षष्टिहायनीदशायंत्रम् | | | | | | | | |
|-------------------------|--------------------------------------|------------------------|-----------------------------------|--------------------------|---------------------------------------|--------------------|-----------------------------------|----------------------|
| वृ० | र० | मं० | चं० | बु० | शु० | श० | रा० | घराः |
| १० | १० | १० | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | वर्षाणि |
| अभि मरणी कृति | रोहिणी मृग आर्द्रा पुनर्वसु | पुष्य आश्ले० मघा | पूर्वा उ०फा० हस्त चित्रा | स्वाती बिशा० अनुरा | ज्येष्ठा मूल पूर्वाषा उत्तरा | मिथुन धन एनि | शत पूर्वाभा उत्तरा रेवती | न ज प्रा जि |

अथ षट्त्रिंशत्कांदशामाह

अवधायजन्मर्षं यावदुगणयेदष्टमिर्भजेत् ॥ शमांकार्कसुरेज्यारकार्कजी शुकराहवः ॥३७॥
एकोयं च यतश्चेकावर्षाण्येषां क्रमात्समृताः ॥ दिवसे सूर्यहोरायां चित्या वै षट्गुणाब्दिका
॥३८॥ रात्रौ चांशदष्टतष्टाद्रेकास्त नृपजन्मभात् ॥ सूर्येन्दुमूमिजनिशाघीरापुत्रसुरेज्यकाः
॥३९॥ मृगुमंदागुमिखिनो सप्तस्थाच्चिन्तिता दशा ॥४०॥ शेटक्रमादशा चित्या यदा सप्त
शनिः स्थितः ॥ क्वचिद्ग्रहस्तदानीं च न चित्या बहुतो ब्रह्मात् ॥४१॥

३६ षट्त्रिंशद् वर्षा दशा

अथ नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग दे, शेष अंक से दश से च०, मू०, वृ०, मं०, बु०, चं०, शु०, रा०॥३७॥ वर्ष सख्या क्रम से १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, जानना। दिन से जन्म हो तो सूर्य की होरा से विचार करे और इस ३६ वर्षवाली दशा का उपयोग करे॥३८॥

राशि में जन्म हो तो उपर्युक्त प्रकार से दशा गणन लेकर दशास्वामी सूर्य, चन्द्र भगल बुध गुरु, शुक, शनि, राहु, इस क्रम से ग्रहण करना ॥३९॥ लग्न में स्थित ग्रह से दशा का आरम्भ करे ॥४०॥ तथा सूर्यादि क्रम से जो वर्ष ऊपर बहे है वे ही देना ॥ यदि लग्न में शनि हो तो इस दशा का विचार करना ॥ और यदि लग्न में दूसरा बलवान ग्रह स्थित भी हो तो भी शनि को ही ३६ वर्षों दशा लेने में कारण माना जाता है ॥ दूसरे ग्रह के कारण दशा का त्याग नहीं होता है ॥४१॥

इसका उदाहरण विशोत्तरी दशा के समान ही जानना ॥

अथ षट्त्रिंशत्यब्दिकादशायत्रम्

| च० | सू० | मृ० | म० | बु० | श० | गु० | रा० | ग्रहा |
|--------|--------|-------|--------|-------|-------|--------|----------|---------|
| १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | वर्षाणि |
| श० | ध० | न० | पू०भा० | उ०भा० | रे० | अश्वि० | भर० | न |
| क० | रो० | मृ० | आ० | पुन० | पुष्य | आश्ले० | मघा | अ |
| पूर्व० | उ० | ह० | चि० | म्या० | वि० | अनु० | ज्येष्ठा | त्रा |
| मू० | पु०पा० | उ०षा० | ० | ० | ० | ० | ० | णि |

अथ नवमाशिनवदशामाह

अथ राशिक्रम वक्ष्ये धृषुष्व द्विजपुत्राव ॥ ग्रहे राश्यादिके चाल्ये दशा तस्यादिमा भवेत् ॥४२॥ ततस्तदधिकस्थैश्च तुल्ये नैसर्गिकाद्बलात् ॥ राशीशात्सप्तमागेराञ्चित्या राशिक्रमाद्दशा ॥४३॥ यस्मिन्नवाराकस्थैके दशा तस्यादिमा मता ॥ अप्रादब्जाच्च ये खेटा केवता सन्धिता क्रमात् ॥४४॥ दशामान प्रवक्ष्यामि यथोक्त ब्रह्मणा पुरा ॥ लिप्तीकृत्वा ग्रह सोमलाभिमर्माजिते फलम् ॥४५॥ पुन सूर्ये ह्येते लग्न्य समाशकता दशा ॥ सर्वेषा मानवाना च दशास्त्वेता विवर्तयेत् ॥४६॥

नवारा नवदशा

हे द्विजश्रेष्ठ! अब हम नवारा दशा का राशिक्रम कहते हैं आप ध्यान कर। प्रथम ग्रहदशा कहते हैं। ग्रहों में—सबसे कम राशि अश वाले की दशा प्रथम होती है इन दशाओं का विम्वट्ट विवरण इस प्रकार जानना—

दशा सख्या

विवरण

प्रथम—जो ग्रह राशि अश्व, कला, विकला में सबसे कम हो उसकी दशा प्रथम होगी तथा बाद उससे अधिक बल की और बाद उससे अधिक राश्यादिवाले की। इसी प्रकार ९ ग्रहों में दशा जानना। यदि दो ग्रहों में राश्यादि समान हो तो नैसर्गिक बल से निर्णय करना।

द्वितीय—जो ग्रह सबसे अधिक राश्यादि हो, उसकी सर्वप्रथम तथा उसके बाद उससे कम और उसके बाद उससे कम, इसी प्रकार ९ ग्रहों की दशा होगी। राश्यादि समान होने पर नैसर्गिक बल से निर्णय करे।

तृतीय—नैसर्गिक बल से जिसका बल सबसे कम हो उसकी दशा सबसे प्रथम होगी। बाद उससे अधिक बल की, उसके बाद उससे अधिक बल की। इसी प्रकार आगे भी जानना। (यह "तुल्ये नैसर्गिकाद् बलात्" इस पद की आवृत्ति होती है। जिससे पछले दो दशाओं में तो राश्यादि समान होने पर नैसर्गिक बल से यह अर्थ प्राप्त होता है। और तीसरे पदार्थ में स्वतन्त्ररूप से दशाक्रम का बोधक होता है।) यह तीन ग्रह दशा हैं। इनमें वर्ष सख्या प्रत्येक दशा में १२ वर्ष जानना।

चतुर्थ—जन्मराशि के स्वामी से प्रथम दशा। अर्थात् जन्मराशि की प्रथम दशा बाद राशिक्रम से दशा जानना। जैसे जन्म राशि मेष है तो मेष, वृष, मिथुन इसी प्रकार से आगे भी। इसमें प्रति राशि दशा में वर्ष सख्या ९ लेना। यह सब दशाएँ १०८ वर्ष की होने से।

पंचम भेद—सप्त से सप्तमेश की राशि से दशा जानना। क्रमराशि से ही जानना। यथा सप्तमेश राशि तुला है तो तुला, वृश्चिक, धनु, मकर आदि।

षष्ठ भेद—सप्तम की प्रथमदशा, बाद द्वितीयेश की, तब तृतीयेश की, बाद चतुर्थेश की, पञ्चात् पंचमेश की, इसी प्रकार आगे भी जानना। (यह ग्रहों में ७ ग्रह ही लेना। राहु केतु की राक्षसीता नहीं है अतः उनका ग्रहण नहीं है। वर्ष सख्या ९-९ लेना।)

सप्तम भेद—सप्त में जो नवांश हो उसमें स्वामी से आरम्भ करके राहु केतु सहित मूषादि ग्रहों के नैसर्गिक क्रम से ९ ग्रहों की दशा जानना। वर्ष सख्या १०-१२ लेना।

अष्टम भेद—सप्तम भेद में जो नवांश हो तो दशा ही है उससे नवम नवांश के स्वामी से यथाक्रम दशा जानना, ग्रहों में गणना नैसर्गिक क्रम से। वर्ष सख्या १२-१२।

नवम भेद—चन्द्रमा से दशा जानना। मेष पूर्ववत् ॥४२-४४॥

सप्त आयु निवातना—जैसा कि पहले ब्रह्माजी ने कहा है सो कहते हैं। चन्द्रमा के सप्त राश्यादि को लेकर वत्सात्मक करो। (राशि की ३० से गुणा कर अश्व जोड़ना, पञ्चात् अश्व के ६० से गुणा करके घटी घुल करना तो वत्सात्मक चन्द्र होता है। फिर २० का भाग देकर सप्त अरु से १२ का भाग देने में जो अंक वर्ष, मास, दिन आदि प्राप्त हो उनको १०८ परमायु में घटाना जो मेष रहे वह सप्त वर्ष, मास आदि जानने की आयु जानना। सभी मनुष्यों में यह प्रयोग आयुमान के लिये करना चाहिए॥४५॥४६॥

उदाहरण—अथवा की कि विगी जानने के जन्मकाल में चन्द्रमा ८।२५।२५।३८। है तो

इसकी कलात्मक सख्या १५९२९।३८ हुई। इसमें २० का भाग दिया तो लब्ध ७९६।९ पुन १२ का भाग दिया तो ६६।४।१।८ प्राप्त हुआ। इसको १०८ वर्ष में घटाया तो ४१।७।२८।५२ यह आयु का वर्षादि मान स्पष्ट हुआ।

अथ राश्यंशकदशामाह

तन्वादिभावाः संस्पष्टाः प्रोक्तमार्गेण चानयेत् ॥ तन्नेशांशस्थितो यत्र दशास्तस्य इमाः स्मृताः ॥४७॥ द्वितीयेषादितश्चाग्रे ज्ञेया राश्यंशका दशा ॥ चित्वा तन्ने बलवति तन्नेषो वा बलान्विते ॥४८॥

अथ कालदशामाह

संध्या पंचघटी प्रोक्ता दिनषष्ठ्यंशनाडिका ॥ सूर्यबिबादितःपूर्वं परस्तादुदयादपि ॥४९॥ संध्याद्वयं च विंशत्या घटिकाभिः प्रकीर्तितम् ॥ दिनस्य विंशतिर्षट्पथः पूर्णसंज्ञा उदाहृताः ॥५०॥ निशाया भुग्धसंज्ञाश्च घटिका विंशतिश्च याः ॥ सूर्योदयस्य या संध्या खण्डाख्या दशनाडिकाः ॥५१॥ अस्तकालस्य या संध्या मुग्धाख्या दश नाडिकाः ॥ पूर्णमुग्धे शतघटी पङ्गुणे नवधा लिखेत् ॥५२॥ तथा खण्डमुग्धामूर्धे हते तु नवधा लिखेत् ॥ विभक्तानिन्द्रिययुगैर्मानाख्यानफलानि च ॥५३॥ क्रमात्सूर्यादिकाना वै मानमुक्तं मुनीश्वरैः ॥ स्वस्वमानं स्वसख्याभिर्गुणिते स्युः समादयः ॥५४॥

राश्यंशक दशा

पहले कही हुई रीति से लग्न आदि १२ भाव स्पष्ट करे। लग्नेश का नवांश जिस भाव में हो वहा से दशा का आरंभ करना॥४७॥ इसी प्रकार आगे भी द्वितीयादि भावों के अधिपति से दशा रखना। यह दशा जहां लग्न या लग्नेश बलवान हो वहा प्रयुक्त करना॥४८॥

काल (होरा) दशा

यहां दिन शब्द से अहोरात्र का ग्रहण है। अहोरात्र मान ६० घटी का होता है। उसमें सूर्य के अर्द्धोदय काल से ५ घटी तक संध्या (औदयिकी संध्या) होती है और इसकी 'खण्डा' संज्ञा है। इसी प्रकार सूर्यास्त से पूर्व की भी ५ घटी संध्या काल है और उसकी 'मुग्धा' संज्ञा है। इस प्रकार सूर्यास्त (अर्द्धास्त) से पहिले की ५ घटी और बाद की ५ घटी संध्या काल है। इस तरह प्रात की १० घटी पूर्वापर की 'खण्डा' और अस्तकाल की पूर्वापर की १० घटी 'मुग्धा' नाम की संध्या है। और दिन की बाकी २० घटी की 'पूर्णा' संज्ञा है। तथा रात्रि की बाकी २० घटी की 'मुग्धा' संज्ञा है। यदि 'पूर्णा' नामक दिन की २० घटी में जन्म हो तो (अर्थात् सूर्योदय से इष्टकाल यदि ५ घटी से अधिक हो तो प्रात संध्या (खण्डा) की ५ घटी इष्ट में से घटा कर बाकी) ६ से गुणा करना। इसी प्रकार रात्रि की 'मुग्धा' नाम की मध्य घटी में जन्म हो तो संध्याकाल की घटी घटाकर बाकी को ६ से गुणा करना। यदि 'खण्डा' या 'मुग्धा' नाम की संध्या में जन्म हो तो इष्ट घटी को १२ से गुणा करना। गुणित अंक को ९ स्थान में रखना।

और सब जगह अलग ४५ का भाग देना तो लब्ध दशा मान का ध्रुवाक होगा। इसको सूर्यादि ग्रहों की सख्या (सू०१, च०२, म०३, बु०४, शु०५, श०६, रा०७, के०९) से गुणा करने से सूर्यादि ग्रहों की वर्ष, मास आदि दशा स्पष्ट होगी॥४९-५४॥

उदाहरण-इष्ट ८।१६ में प्रातः संध्या की ५ घटी कम करने से शेष ३।१६ को ६ से गुणा किया तो १९।३६ हुआ, इसमें ४५ का भाग दिया तो ००।२६।०८।०।०, इस सूर्यादि ग्रहों की क्रम सख्या से गुणा करके दिनों में ३० और मास सख्या में १२ का भाग देने से नीचे चक्र में दिखाई हुई वर्षादि दशा प्राप्त होगी।

| अथ कालचक्रमहादशायन्त्रम् | | | | | | | | |
|--------------------------|----|----|-----|-----|----|-----|-----|----|
| सू० | च० | म० | बु० | शु० | श० | रा० | के० | |
| २ | ४ | ६ | ८ | १० | १२ | १४ | १७ | १९ |
| २ | ४ | ६ | ९ | ११ | १ | ३ | ६ | ८ |
| ८ | १६ | २४ | २ | १० | १८ | २४ | ४ | १२ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ |
| ०० | ०३ | ०७ | १३ | २२ | ३२ | ४५ | ६१ | ७८ |
| १७ | १७ | १७ | १७ | १७ | १७ | १८ | १८ | १८ |
| ६५ | ६८ | ७२ | ७८ | ८७ | ९८ | ११ | २७ | ४४ |
| १० | ० | ४ | ११ | ८ | ८ | ९ | ९ | ७ |
| ४ | १२ | २८ | २२ | २४ | ४ | २२ | १८ | २२ |
| १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ |
| २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ |

अथ कालचक्रदशामाह

कालचक्रं प्रवक्ष्यामि नराणां हितकाम्यया ॥ यावद्देहादिजोवातमिति चक्रस्य निर्णयः ॥५५॥
 सप्तविंशतिश्लोकाणि अनुलोमविलोमतः ॥ वक्ष्येऽहं वै तवाशेषं न अभिन्यादि यथाक्रमम् ॥५६॥
 द्वे द्वे रेखात्मके चक्रे चतुष्कोणं लिखेत् क्रमात् ॥ द्वादशग्रहनिर्माणं भेदादिद्वादश न्यसेत् ॥५७॥
 ईशान्यादिक्रमेणैवमीनात् द्वादश न्यसेत् ॥ एव क्रमेण चक्रं तद्विलिखेत्तद्विजयनम् ॥५८॥

द्वादशार लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्व समानकम् ॥ गृहाणि द्वादशैश्च स्पृत्साव्येषु च यथाक्रमम् ॥५९॥
द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेपादिकान्यसेत् ॥ एवं द्वादशराश्याख्यं कालचक्रमुदीरितम् ॥६०॥
अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गं प्रतिष्ठितम् ॥ तिस्रोऽपसव्यास्त्युत्तारा रोहिण्याद्या यथाक्रमम् ॥६१॥ कालचक्रदशासव्यापसव्यमार्गमग्रे स्फुटं वक्ष्यति ॥

कालचक्रदशा

कालचक्र नामक दशा का पूर्ण विवरण आगे कहेंगे जिससे मनुष्यों का बड़ा हित होता है। देहग्रह से जीवग्रह पर्यन्त उसका भोग (दशा) होता है, यह उस चक्र में निर्णय किया गया है ॥५५॥ २७ नक्षत्र क्रम से तथा व्युत्क्रम से (सीधे और उलटे क्रम से गणना होना) अश्विनी आदि नक्षत्र उसमें रखे गये हैं ॥५६॥ दो दो रेखा सीधी और तिरछी बनाकर उनके कोणों में १-१ रेखा करके बारह घर का निर्माण करें, इन घरों में १२ राशियां रखें ॥५७॥ अश्विनी आदि नक्षत्र और मीन पर्यन्त राशि लिखें। हे द्विजनन्दन! इस प्रकार लिखें ॥५८॥ अथवा बारह कोठों का गोल चक्र लिखें, पूर्वोक्त रीति से तिरछी और सीधी रेखा करने से १२ कोष्ठक होंगे ॥५९॥ दूसरे ऊपर के कोष्ठक में १२ मेपादि राशि लिखें। इस प्रकार १२ राशियों का कालचक्र नामक चक्र बहा है ॥६०॥ अश्विनी आदि ३ नक्षत्र सीधे क्रम से, उसी क्रम से रोहिणी आदि तीन नक्षत्र उलटे क्रम से रखें ॥६१॥ इसका विशेष विवरण आगे कहेंगे।

कालचक्रम्



अथ चक्रदशामाह

राशीभरादशा ज्ञेया सूर्यादिना क्रमात्पुनः ॥ दिवा रात्रिस्तथा सध्या त्रिकाले त्रिविधा दशा ॥६२॥ चक्राख्या च दशा प्रोक्ता तथाग्रे द्विजनन्दन ॥ तत्रस्थस्य दशा चादौ ततो वितन्मितादयः ॥६३॥ त्रिधादयो यदेकस्पृष्टादा भागादयोधिकत्वात् ॥ तत्रापि तुल्यो नैसर्गाद्विजात्ययोधिकस्य च ॥६४॥ राशिप्रमितवर्षाणि भागाद्यान्यपथाततः ॥ भावानामपि तत्राच्च वर्षाणि दिदमितानि च ॥६५॥

चक्रदशा

यह चक्रदशा दिन, रात्रि, सध्या इन ३ समयों में भिन्न भिन्न प्रकार से होती है। दिन में जन्म हो तो जातक की राशि के स्वामी की राशि से दशा आरम्भ होती है ॥६२॥ यह दशा 'चक्रदशा' नाम की है। और रात्रि में जन्म हो तो जन्मलग्न से दशा आरम्भ होती है तथा सध्याकाल में जन्म हो तो द्वितीयभाव से आरम्भ होती है ॥६३॥ तीनों प्रकार के स्वामी तथा राशि एक ही स्थान में हों या दो प्रकार एक स्थान में हों तो अथाधिक्य से निर्णय करना। और अशादिक भी समान हों तो नैसर्गिक दश से निर्णय करना। यह भी समान होने पर मूर्ख

से लेना॥६४॥ अशादि का त्याग करके चक्र मे राशि के समस्थान मे वर्ष सख्या रखना। सभी भावो की वर्ष सख्या १०-१० होती है॥६५॥

उदाहरण-कल्पना किया कि, किसी का दिन मे जन्म है और राशि का स्वामी गुरु है और वह एकादश भाव मे स्थित है, अत एवादश भाव से चक्र मे दशा आरम्भ की गई और प्रत्येक भाव की १०-१० वर्ष सख्या रखी गई। चक्र मे देखो।

अथ चक्रदशामाह

| ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | भावा |
|------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|------|------|-----------------------|
| १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | वर्षाणि मासा दय |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ११०० | १० | २० | ३० | ४० | ५० | ६० | ७० | ८० | ९० | २००० | २०१० | सयत् |
| | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | १९ | | | |
| १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | रवि |
| ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | |
| १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | |
| २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | |

अथ चरपर्यादशामाह

मैत्रेय मुमहाराज परोपहितकारक ॥ आपुर्दायविचारो हि गहनं सर्वदा द्विज ॥६६॥
 आपुर्द्वहप्रकारेण भाषितं ब्रह्मणा पुरा ॥ तत्प्रसंगहयोत्तेन आपुर्दयि वदामि ते ॥६७॥ नक्षत्रामु
 पुरा विप्र तवाग्रे कथितं मया ॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि राश्यापुर्द्विजसत्तम ॥६८॥
 लग्नादिव्ययपर्यंत राशयो द्वादश द्विज ॥ आपुर्द्वये प्रदातव्या एभिश्चरपर्या दशा ॥६९॥
 ओजसाणा क्रमाद्विप्र समाना व्युत्क्रमात्पुनः ॥ नापातेन समा मेधा निर्विशाक द्विजोत्तम
 ॥७०॥ मेयो वृषोऽथ मियुनस्तुलातिथ्य धनुर्धर ॥ एतेषामोत्तमज्ञा स्यादब्दाना गणनाक्रमात्
 ॥७१॥ कर्क सिंहश्च कन्या च नक्षत्रभक्षया द्विज ॥ एतेषा समसज्ञा स्याद्वर्षाणा व्युत्क्रमाद्द्विज
 ॥७२॥ स्वर्गसंस्थितसेठस्य वर्षाणि द्वादशीव हि ॥ घनस्य चैकवर्षं तु तृतीये हायनद्वयम् ॥७३॥

हे परहितकारक महाप्राज्ञ मैत्रेय! आयु का विचार बड़ा गहन है॥६६॥ पहिले ब्रह्माजी ने अनेक प्रकार से आयु का वर्णन किया है॥ लग्न आदि राशियों में ग्रहों के योग से आयु का निर्णय करना कहेंगे॥६७॥ हमने पहले नक्षत्र से आयु का विचार कहा है। अब राशि से आयु का विचार कहते हैं॥६८॥ लग्न से व्ययभाव तक १२ राशि है। इन राशियों से आयु के सम्बन्ध में वर्ष ग्रहण करना और इन वर्षों से 'चरपर्याय' नाम की (चरपर्याय) दशा होती है॥६९॥ इन राशियों से वर्ष लेने की रीति यह है कि विषम नाम की राशियों से वर्ष गणना क्रम से होती है, तथा सम राशियों से विपरीत क्रम से वर्ष गणना होती है। यह गणना राशि के भाव से उस राशि का स्वामी जहाँ स्थित हो वहाँ तक गिन कर जो सख्या हो वह वर्ष सख्या लेना॥७०॥ मेष, वृष, मिथुन तथा तुला, वृश्चिक, धनु इनकी ओज (विषम) सज्ञा है। इनके वर्षों की गणना क्रम से होती है॥७१॥ कर्क, सिंह, कन्या तथा मकर कुम्भ, मीन इनकी समसज्ञा है। इनकी वर्ष गणना उलटे क्रम से होती है॥७२॥ (स्पष्ट विवरण) स्वराशि में स्थित ग्रह की वर्ष सख्या १२ होती है। दूसरे भाव में स्थित ग्रह से १ वर्ष होता है। और तीसरे भाव में ग्रह हो तो २ वर्ष लेना॥७३॥

तुर्ये वर्षत्रय विप्र पचमे तुर्यहायनम् ॥ रिपुस्ये पच वर्षाणि षड्वर्षाणि च सप्तमे ॥७४॥
 रधस्ये नववर्षाणि चाष्टवर्षाणि पुण्यने ॥ नभस्ये चाकवर्षाणि दिग्वर्षाणि तु तामरे ॥७५॥
 व्ययस्ये रुद्रवर्षाणि राश्यब्दाश्च मयानघ ॥ पूर्वोक्तेन प्रकारेण कयिता वै द्विजोत्तम ॥७६॥
 वृश्चिकाधिपती द्वौ च कुजकेतू द्विजोत्तम ॥ स्वर्भानुपगू कुम्भस्य पती द्वौ चितयेद्विज ॥७७॥
 स्वर्से यदि स्थिती द्वौ व भानुवर्षप्रदायकौ ॥ परसे समती द्वौ च नाथाते न विधितयेत् ॥७८॥
 परसे भिन्नभिन्नस्थी द्वयोर्नख्ये तु यो बली ॥ तस्य नाथातरीत्या च वर्षाणि सतिलेद्विज ॥७९॥
 अग्रहात्सग्रह प्राणो सग्रहादधिकग्रह ॥ साम्ये चरस्थिरद्वद्वा क्रमात्स्युर्वलितो द्विज ॥८०॥

चौथे भाव में स्वामी होने से ३ वर्ष, पचम भाव में स्वामी हो तो ४ वर्ष। षष्ठभावास्थित में ५ वर्ष, सप्तम में हो तो ६ वर्ष॥७४॥ अष्टम भाव में ७ वर्ष। नवम भाव में ८ वर्ष। दशम भाव में ९ वर्ष। एकादश भाव में स्वामी हो तो १० वर्ष॥७५॥ व्यय भाव में हो तो ११ वर्ष, इस प्रकार राशियों से वर्ष सख्या लेना, इस प्रकार वर्ष सख्या लेने की रीति तुमसे कहीं गई है॥७६॥ वृश्चिक राशि के दो ग्रह स्वामी हैं—मंगल और केतु। इसी तरह कुम्भ राशि के भी दो स्वामी हैं—शनि और राहु॥७७॥ यदि ये स्वराशि में हो तो १२ वर्ष लेना। यदि परराशि में हो तो वहाँ तक की सख्या लेना॥७८॥ यदि परराशि में भिन्न २ राशि में हो, इनमें से जो बलवान् हो उस तक की सख्या लेना॥७९॥ बलवत्ता विचार में नैसर्गिकरूप से ग्रहहीन से तो ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है तथा ग्रहयुक्त राशि से अधिक ग्रहवाली बलवान् होती है। अधिक ग्रहों में भी समान हो तो चर, स्थिर, और द्विस्वभाव राशिवा उत्तरोत्तर बलवान् होती हैं॥८०॥

राशिसाम्ये यदा विप्र बहुवर्षप्रदो बली ॥ तद्वाद्यादुच्चग सेतो बलवान्नीबली द्विज॥८१॥

उदाहरण—कल्पना किया कि—प्रथम भाव का स्वामी मंगल द्वादश भाव में है अतः ११ वर्ष प्राप्त हुए। इसी प्रकार पूर्वोक्त रीति से तत् २ भाव के स्वामी से भावस्थिति पर्यन्त सख्या गिन कर वर्ष लिखना।

ये दशाएँ अप्रचलित हैं अतः अनुपयुक्त हैं। अतः काल्पनिक उदाहरण ही दिखाये गये हैं।

अथ नवमाशस्थिरदशामाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि दशास्थिरविशेषतः ॥ नवाशकदशामान तवाप्ये कथयाम्यहम् ॥८८॥
प्रतिराशिप्रदिष्टैवमङ्काङ्काब्दा दशा स्थिरा ॥ तन्वादिष्ययभावात्ता स्पष्टीकृत्वा द्विजोत्तम ॥८९॥ ग्रहनवाशापुरीत्या दशा तुल्या नवाशका ॥ अस्थिरा इति विज्ञेया परपक्षमिदं क्रमम् ॥९०॥ पक्षद्वयं प्रवक्ष्यामि चरस्थिरद्वयं द्विज ॥ पूर्व चरदशा वक्ष्ये तवाप्ये द्विजनन्दन ॥९१॥ ओजस्तप्ते जनुर्यस्य नवाशकदशा द्विज ॥ लग्नादिक समारम्भ या जन्मप्रभृतिदशा ॥९२॥ समराशौ जनुर्यस्य नवाशकदशा द्विज ॥ राश्यादिक समारम्भ पुरा शमुप्रणोदितम् ॥९३॥ ओजराशिगते खेटे क्रमात्तत्तद्दशा नयेत् ॥ तत्तद्वाशिनवाशाद्या समे तु विपरीततः ॥९४॥ दशाप्रवर्तकं खेटो विषमर्शगतो द्विज ॥ राशिप्रतिनवाब्दाना सर्वेषां गणयेत्क्रमात् ॥९५॥ अष्टोत्तरशताब्दाना सख्यापूर्वं तवाशका ॥ ख्याता स्थिरदशा ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥९६॥ दशाप्रवर्तकं खेट समराशि गतो द्विज ॥ तत्तद्वाशि समारम्भ गणयेद्दृष्टकमेण च ॥९७॥

नवाश स्थिरदशा

अब हम नवाशदशा स्थिरस्वरूप वाली कहते हैं ॥८८॥ इस दशा में प्रतिराशि में ९-९ वर्ष होते हैं। प्रथम १२ भाव स्पष्ट करना चाहिए। तब भावों पर विचार करना ॥८९॥ ग्रह के नवाश की आयु की रीति से नवाश के बराबर वर्ष सख्या ग्रहण करना ऐसा दूसरा पक्ष भी है और इसका नाम नवाश अस्थिर दशा है ॥९०॥ हम तुमको स्थिरदशा और चर—(अस्थिर) दशा दोनों ही पक्ष कहेंगे। पहिले नवाश चरदशा ही कहते हैं ॥९१॥ जिसका जन्म विषम राशि में हो तो जन्मलग्न से ही दशा का आरम्भ करना चाहिए ॥९२॥ यदि समराशि में जन्म हो तो जातक की राशि से नवाशदशा का आरम्भ होता है ॥९३॥ (अब स्थिरदशा की रीति कहते हैं) ग्रह विषमराशि में हो तो क्रम से राशियों की दशा लगाना चाहिए वह विषम नवाशदशा है। यह समराशि में हो तो विपरीत गणना करना ॥९४॥ दशादाता स्थान विषम में होने से प्रतिराशि ९-९ वर्ष रखकर १२ राशियों के १०८ वर्ष रखना ॥९५॥ हे द्विजवर! यह स्थिर दशा का क्रम कहा ॥९६॥ दशादाता ग्रह यदि समराशि में हो तो राशिगणना विपरीत क्रम से करना चाहिए ॥९७॥

तत्तद्वाशिगताना च नवाशास्ते द्विजोत्तम ॥ अष्टोत्तरशत सख्या ह्यब्दाना च दशा स्थिरा ॥९८॥ विषमर्शं दशाप्राप्ते मेधे मेधादिक गणेत ॥ वृषे वृषादिक गण्य क्रमेण द्विजसत्तम ॥९९॥ समराशिदशाप्राप्ते नवाशकक्रमेण च ॥ समुख राशिसमारम्भ गणयेद्द्विजसत्तम

॥१००॥ एव तत्तद्दशकाले वियमे पूर्ववत्कामम् ॥ समे समुखमारभ्य नवाशकक्रमेण च
 ॥१०१॥ मेये मेयादिक गण्य वृषे च मकरादिकम् ॥ मियुने च तुलाय च कर्क कर्कादिक द्विज
 ॥१०२॥ एव क्रमेण गणयैद्विषमर्शदशातरे ॥ समशान्तिर्दशाप्राप्ते गणना समुत्तेन च ॥१०३॥
 मेये च धनुराय च वृषे कन्यामृग गणेत् ॥ मियुने च तुलाय च कर्क मीनादिक च यत् ॥१०४॥
 एव क्रमेण गणयैतमे समुखाराशित ॥ द्वयो क्रममह वश्ये त्रिशुत्यमिहित
 यया ॥१०५॥

१२हो भावों के ९-९ वर्ष रखन से १०८ वर्ष की पूरी दशा होगी॥९८॥ विषमराशि में दशा हो तो मेष में मेष से ही तथा वृष में वृष में ही इसी क्रम से आरम्भ करना और समराशि में रीति से विषम राशि में अपने नवाश के आरम्भ से क्रम स गणना करना और समराशि में अपने नवाश के नौवें नवाश से आरम्भ करके विपरीत उलटा गिनत हुए क्रम स दशा रखना॥१००॥१०१॥ मेष राशि में नवाश मेष से तथा वृष में मकर स मियुन में तुला स कर्क में कर्क राशि से गणना करो॥१०२॥ विषम राशि की नवाश दशा में उपर्युक्त क्रम स गणना करो। समराशि की गणना सम्मुखीन (नौवीं) राशि से करो॥१०३॥ यथा मेष में धनु से उलटी रीति से वृष में मकर से बन्या तक उलटी रीति से मियुन में मियुन से उलटा तुला से तथा कर्क में मीन से उलटा कर्क तक॥१०४॥ (सूचना-विषम राशि में वर्ष गणना क्रम से तथा सम राशि में वर्ष गणना विपरीत क्रम में करना चाहिए) इस उलटे क्रम से सम राशि में नौवें नवाश स प्रथम नवाश तक उलटा गिना जाता है॥१०५॥

अथ नवाशस्थिरदशाचक्रम्

[illegible]

अथोत्तरदशाचतुर्विधप्राणमाह

अथोत्तरदशाविप्रो^१ निरूपणमिहोच्यते। प्राणबलेन समुत्ते तत्रादौ राशिदृश्यते ॥१११॥ आद्य प्राणबलं वाच्य कारके योग समतात् ॥ स्वस्वकारकसंबन्धे तत्तद्वाशिर्बलप्रदः ॥११२॥ कारकयोगेबलसाम्यग्रहयोगाच्च साम्यता ॥ भूयसा ग्रहयोगेन बलं वाच्य द्विजोत्तम ॥११३॥ ग्रहाधीनं ग्रहबलमिति न्ययेन धितयेत् ॥ तदापि साम्यता विप्र यदापि निर्णयं वदेत् ॥११४॥ राश्याधिपे स्वतुल्यस्य मिश्रक्षेत्रादिकेऽपि वा ॥ एव राशिबलं ज्ञेयं निर्विशक द्विजोत्तम ॥११५॥ ततो बलविशेषोर्ध्वो नैसर्गिकमतः पुरा ॥ तस्मात्प्रसर्गबलं संप्राप्तं द्विजमतम ॥११६॥ अप्रहास्तग्रहो ज्याध्यान्तग्रहादधिकग्रहा ॥ साम्ये चरस्थिरद्विर्वा क्मात्स्पूर्वतःशान्तिनः ॥११७॥ एव चरस्थिरप्राणिस्थिरोद्भूतबलोद्विज ॥ ध्यापेटिलबलसर्वाचितयित्वा न सप्तम ॥११८॥ पूर्वोक्तेकरकध्यापेक्षितयेद्विजसत्तम ॥ कारकयोषादि बलं तस्मात्प्राणवतो भवेत् ॥११९॥ राशौ कारकयोगेषु निजनाथेन समुते ॥ स राशिर्बलवान् विप्र कारकेयोगकेमते ॥१२०॥ स्वाभिपुक्तं कारकेषु यत्तद्वाशिर्बली द्विज ॥ तत्तद्वाशौ चितनीयमग्रमपे विरोधतः ॥१२१॥

चतुर्विधप्राणदशा

हे मेनेय^१ अथ उत्तरदशा या चतुर्विध प्राणदशा का निरूपण करते हैं। उक्त निरूपण में प्रथम प्राणबल से युक्त राशि कहते हैं॥१११॥ प्राणबल चार प्रकार के हैं, उनमें सहाता प्राणबल कारक ग्रह का योग होने से होता है। अर्थात् अपने २ कारक से (जो राशि जिस भाव में है उस भाव का कारक जो ग्रह है उससे) सम्बन्ध होने से वह राशि बलवान् होती है॥११२॥ कारकयोग में भी बल की समानता हो (दो राशियों का बल समान हो) तथा ग्रह योग से भी बल की समानता हो तो अधिक ग्रहयोग से बल का निर्णय बरे॥११३॥ ग्रहयोग से होनेवाला बल ग्रह के आधीन है इस नियम से विचार बरे। जब बल में समानता हो तब निर्णय (विचार) करना चाहिए॥११४॥ (ग्रहबल कहते हैं) राशि का स्वामी उच्च राशि में हो या मिथराशि में (अथवा स्वगृही हो) तो वह राशि बलवान् होती है॥११५॥ और इनके अभाव में रहिते जैसा कहा है, वैसा नैसर्गिक बल देखना। उक्त नैसर्गिक बल में राशि का बलवान् जानना॥११६॥ ग्रहहीन राशि से ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है। ग्रहयुक्त में अधिक ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है। दोनों प्रकार समान होने से चर, स्थिर द्विस्वभाव राशि उत्तरोत्तर निसर्गत (स्वभावतः) बलवान् है। इस प्रकार चर स स्थिर और स्थिर स द्विस्वभाव राशि बलवान् होती है। इस नैसर्गिक बल का विचार बरे॥११८॥ पूर्वोक्त कारकाध्याय में कहे हुए कारकयोग का बल विचार कर उक्त बल स राशि का बल जाने॥११९॥ राशि में कारक ग्रह स्थित हो, या स्वस्वामी हो तो वह राशि कारकयोग से अथवा योग (स्वामी योग से) बलवान् होती है॥१२०॥ यदि स्वामी ही कारक भी हो तो वह राशि बलवान् होती है। यह विचार हर एव राशि में करना चाहिए॥१२१॥

एकराशौ बहुग्रहा समुक्ता द्विजमतम ॥ राशिद्वारा बली ज्ञेयो यदि अग्रपक्षेऽधिकः ॥१२२॥ स्वत्याशात्पबन्ती ज्ञेयो मध्याशान्मध्योर्ध्वकः ॥ अग्रार्धस्थिते ज्ञेयो प्रामुख्यवितरणत्

॥१२३॥ अजरराशौ वैशिके च पुरतः पार्श्वसंस्थिताः ॥ पृष्ठतो वा प्राण इति बलदत्त्वेन कथ्यते॥१२४॥इति प्रथमभेदः ॥ यस्मिन् राशेः स्वामियोगे गुरुवांस्त्रिनिरीक्षिते ॥ स राशिर्बलवान्प्रोक्तो द्वितीयेषु च प्राणिनि ॥१२५॥ राशीनां द्वादशानां च बलमेव द्वितीयकम् ॥ इति प्रोक्तप्रकारेण द्वितीयं जायते बलम् ॥१२६॥ इति द्वितीयप्राणभेदः ॥ स्वामिवां तृतीय प्राणि तवाग्रे गदितं मया ॥ स्वात्मकारककुण्डल्यां चिन्तयेद्द्विजसत्तम ॥१२७॥ केन्द्रे पणफरे प्रोक्तं स्वामिदौर्बल्यमेव हि ॥ केन्द्रदुर्बलवांश्चैवं पणफरे चैकसंज्ञकः ॥१२८॥

एक राशि में यदि अनेक ग्रह हो तो वह राशि राशिबल से बली है। यदि अगले भाव में अन्यबल हो तो इस राशि को बलवान् समझे॥१२२॥ इसी प्रकार कम अश वाली राशि अल्पबली है और मध्य अशवाली मध्यबली और अधिक अशवाली अधिकबली होती है॥ जैसे ग्राम्य शूकर से वन्य शूकर बलवान् होता है॥१२३॥ राशि यदि विपम या 'वैशि' सजावाली हो, या २।१२ में शुभग्रह हो अथवा किसी गृष्ठभावं स्थित ग्रह बल प्रदान करता हो तो वह राशि 'बलद' अर्थात् बलवान् है॥१२४॥ यह प्रथम भेद है॥ जो राशि अपने स्वामी से युक्त होकर गुरु या बुध से दृष्ट हो वह राशि भी (द्वितीय प्रकार से) बलवती है॥१२५॥ १२ राशियों का यह द्वितीय बल है। इस प्रकार से दूसरा बल जाना जाता है॥१२६॥ द्वितीय प्राणभेद॥ तीसरा प्राण बल हमने आत्मकारक लग्न में कहा है। उस प्रकार से विचार करना॥१२७॥ तथा इस भेद में स्थान बल से भी विचारना कि—केन्द्र से पणफर में एक विश्वा दुर्बलता है। अर्थात् पणफरभाव स्थित ग्रह केन्द्र से १ दुर्बल है॥१२८॥

आपोक्लिमे द्विगुणितमेव दौर्बल्यमेव च ॥ तृतीय प्राणि इत्येव जानीयाद्द्विजानन्दन॥१२९॥ इति तृतीयप्राणभेदः ॥ चतुर्थप्राणि विज्ञेय तवाग्रे च यदाम्यहम् ॥ पापयोगेन रहितः पापक्रांतो न पश्यति ॥ स राशिर्बलवान् विप्र प्राणधारे चतुर्थकः ॥१३०॥ चतुर्विधे प्राणसंज्ञे एतेषां बलवीर्ययुक् ॥ स राशिरत्र भागे च अतः पाके द्विजोत्तम ॥१३१॥ इति चतुर्थभेदः ॥

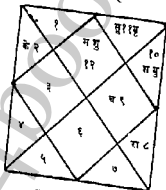
पणफर से आपोक्लिम भावस्थ राशि दुर्बलतर २ बल से न्यून है। इस प्रकार यह तीसरा प्राणबल जानना॥१२९॥ यह तृतीय प्राणबल है॥ चतुर्थ प्राणबल तुम्हारे सामने कहते हैं। जो राशि पापग्रह युक्त न हो तथा पापदृष्ट भी न हो वह राशि चौथी श्रेणी की बली है॥१३०॥ यह हमने चार प्रकार का प्राणबल कहा। इनमें जो राशि प्राणबल से बली हो उसकी प्रथमदशा तथा द्वितीय प्राणबल से युक्त राशि की चौथी दशा, त० से, स० च० से दशमभाव की दशा जानना॥१३१॥ चतुर्थ भेद समाप्त ॥

उदाहरण तथा चक्र इस कल्पित उदाहरण में आत्मकारक मंगल ही प्रथम प्राण है, द्वितीय शनि प्राण है, तृतीय प्राण शुक्र और चतुर्थप्राण चन्द्रमा है।

अथ चतुर्विधप्राणदशायंत्रम्

| १२ म० | १ | २ | १० श० | ११ | १२ | १२ शु० | १ | २ | १ च० | १० | ११ | मा |
|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|
| १ ० ० ० | ११ ० ० ० | ११ ० ० ० | १२ ० ० ० | १२ ० ० ० | १ ० ० ० | १ ० ० ० | ११ ० ० ० | ११ ० ० ० | २ ० ० ० | १२ ० ० ० | १२ ० ० ० | वर्ष |
| १९०० | १९०१ | १९१२ | १९२३ | १९३२ | १९४० | १९४८ | १९५९ | १९६० | १९७१ | १९७३ | १९८५ | १९९७ |
| १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ | १० ४ १४ २२ |

कारकालप्रमाह



अस्या दशम्या वर्षाणि
षडदशावसानाणि

अथ ब्रह्मप्रहाश्रितपष्ठांत्यब्दिकां दशमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि ब्रह्मतामपरा दशाम् ॥ तस्या प्रचारो वै विप्र तवाग्रे गदितो मया ॥२२॥
पूर्वोक्तलक्षणाकाले यत्र ब्रह्मगृहे स्थिते ॥ तस्मादन्य दशा ज्ञेया पष्ठांत्यब्दा सामानयेत् ॥२३॥

ओजलप्रे रविश्वंद्रो मंगलादिक्रमेण च ॥ यस्य राशिस्थिते ब्रह्मा तद्ग्रहात्पष्ठलेखरः ॥३४॥
 रवेर्भृगुं विजानीयाच्छिखिनोगुरिति क्रमः ॥ पष्ठांतिमसमा विप्र गणनीया यथोक्तकम् ॥३५॥
 समलप्रयदा प्राज्ञ ब्रह्मलेखः समाश्रितः ॥ तत्तद्वाशितमोराशिपर्यन्तान्दसम नयेत् ॥३६॥

ब्रह्मग्रहाश्रित दशा

अब हम ब्रह्मा नाम के ग्रह के आश्रित दशा कहते हैं। इसका कुछ विवरण प्रथम भी कर चुके हैं॥३२॥ प्रथम कहे हुए लक्षणों से युक्त ब्रह्मग्रह जिस राशि में हो उस राशि से यह दशा आरम्भ की जाती है॥३३॥ राशि यदि विषम हो तो क्रम गणना से सूर्य, चन्द्रादि के समान दशाराशि की गणना करे। ब्रह्मा जिस ग्रह की राशि में हो (फलविचार) उससे छोटे ग्रह की राशि से करना चाहिए॥३४॥ छोटी राशि स्वामी का गणनाक्रम इस प्रकार जाने, जैसे सूर्य का छोटा शुक्र है और आगे शनि राहु आदि। और वर्षसंख्या भी सब राशियों में ६-६ वर्ष लेना॥३५॥ हे विप्र! जब ब्रह्मग्रह समराशि में हो तो उस लघुराशि से तमोराशि (सूर्यास्त राशि = सप्तमराशि) सप्तमभाव से दशा आरम्भ करना॥३६॥

यद्वा ब्रह्मममां राशिमारम्य क्रियते द्विज ॥ पष्ठराश्यतमन्वांश्च सप्ताष्टपरलकः ॥३७॥ दशा ब्रह्मग्रहपरा राशिमारम्य कीर्त्यते ॥ पदलेखे यत्र पूर्णाश्च भवति द्विजसत्तम ॥३८॥ तावद्वि राशिपर्यन्त समा ग्राह्याः प्रयत्नतः ॥ यत्तत्समायुः सजेय निर्विशंक द्विजोत्तम ॥३९॥ ओजक्रमेण गणना समेषु चितयेत्क्रमः ॥ समोपि सप्तमाच्चेत्तत्तद्वाशिर्ब्रह्मणाश्रितः ॥ ४०॥ ओजब्रह्मग्रहाश्रित्येतद्ग्रहात्पष्ठमातकः ॥ समाना गणना विप्र पुरा शम्भुप्रणोदिता ॥४१॥ समे ब्रह्मग्रहाश्रिते सप्तमः पष्ठमान्तकः ॥ गणनीया समा ज्ञेया निर्विशंक द्विजोत्तम ॥४२॥

और दूसरा यह भी पक्ष है कि ब्रह्मग्रहाश्रित राशि से ही दशा आरम्भ करना और ६-६ वर्ष ग्रहण करना॥३७॥ यह दशा ब्रह्मग्रहाश्रित है, अतः यही से आरम्भ की जाती है। जिसमें कि ६ वर्ष ही यह राशि के पूर्ण वर्ष होते हैं॥३८॥ उस राशि तक राशियों की वर्ष संख्या लेना, जहां तक स्वल्प, मध्य, दीर्घ आयु की अवधि हो॥३९॥ ओज=विषम राशि में क्रम से गणना करना और समराशि में ब्रह्माश्रित राशि से सप्तमभाव से (व्युत्क्रम) गणना करना॥४०॥ विषम राशि में ब्रह्माश्रित राशि से अन्तिम राशि पर्यन्त ६ वर्ष के हिमाव से गणना होती है, यह जम्भु कथित है॥४१॥ ब्रह्मग्रह के आश्रित यदि समराशि हो तो सप्तम राशि ही गणना में प्रधान है और सप्तम राशि से ही पष्ठमान्तक दशा की गणना करनी चाहिए॥४२॥

अथ बलविशेषं दर्शयति

लप्रेशाल्ताभमावेशी लप्र इत्यादितो द्विज ॥ स्यात्तस्य च पितुः प्राण इत्येव ब्रह्मणोदितम् ॥४३॥ पद्बर्गादिस्तु सबधः स्यान्तस्यतिकरो द्विज ॥ तथा पूर्वोक्तमवधे तस्याः स्पष्ट धदाम्यहम् ॥४४॥ ओजलप्राश्रिते लप्रे तद्वाशिगणनाक्रमात् ॥ पष्ठस्वाम्यन्तरीत्या च समानीया द्विजोत्तम ॥४५॥ ब्रह्माश्रितसमे लप्रे सप्तमाद्व्युत्क्रमेण च ॥ गणयेत्पष्टिसंख्याहि

ह्यन्धामिह द्विजोत्तम ॥४६॥ एकमेकादशे पापे दृष्टियोगे भवत्यपि ॥ ग्रहयोग तथा विप्र
प्रवले च व्यतीकर ॥४७॥ रुद्रशूलदशादौ च स्वचित्प्राणो भवत्यपि ॥ तदप्रे तुगादिवल
व्यतिकरार्थचतुर्यक ॥४८॥ तुगमूलत्रिकोणेषु स्वर्धमित्रादिवर्गके।ग्रहयोगबलप्राप्ताश्वत्वारो
द्विजसत्तम ॥४९॥ इत्यास्यानव्यतिकरो भेदार्या च चतुर्विधा ॥ अथ कारकयोगानां चतुर्धा
भेद उच्यते ॥१५०॥

ग्रह तथा राशि का बल

लग्न तथा लग्नेश से लाभ राशि और लाभेश के बलावल विचार से पिता का विचार किया
जाता है ॥१४३॥ ग्रह का बल व्यतिकर पड़वगादि सम्बन्ध और पूर्वोक्त सम्बन्ध जानना ।
इसको स्पष्ट कहते हैं ॥१४४॥ लग्न यदि विषम राशि में हो तो दशा राशि की गणना क्रम से
होती है। और छठे भाव के स्वामी के स्थान तक दशा रखना चाहिए ॥४५॥ यदि ब्रह्माश्रित
राशि सम हो तो लग्न के सप्तम भाव से दशा रखना चाहिए और वर्ष सख्या सब राशियों की
६-६ वर्ष होगी। ग्यारहवें भाव में पापग्रह की दृष्टि या पापग्रह का योग हो तो विप्र की
सभावना होती है ॥४७॥ रुद्र शूल दशा में किसी भाव में बलवान ग्रह हो तो उसके बल का
विचार चार प्रकार से किया जाता है ॥४८॥ हे मैत्रेय! वे चार प्रकार ये हैं। उच्च में, मूल
त्रिकोण में, स्व राशि में, मित्रवर्ग में, इस प्रकार ग्रह योग के चार प्रकार होते हैं ॥४९॥ इस
प्रकार स्थान बल के ४ भेद हुए। चार ही प्रकार कारक योग के भी कहे जाते.
हैं ॥१५०॥

चतुर्धा प्राणतज्ञेय पूर्ववद्विजसत्तम ॥ प्राण इत्युपसहारः पुरा शमुप्रणोदित ॥५१॥ पचम
इत्युपपद केतुपचमक शुभम् ॥ ओजे क्रमेण गणना समे वा व्युत्क्रमेण च ॥५२॥
दशाऽऽनेयाऽब्दसख्या च पर्यायाष्टक्रमेण च ॥ नायातेन समाज्ञेया पूर्ववद्विजसत्तम ॥५३॥
त्रिक त्रिक राशिपदमोजे चतु क्रमेण च ॥ समे व्युत्क्रमरोत्या च राशे पदत्रिक त्रिकम् ॥५४॥
क्रमेण पचमे केतुर्नवमे व्युत्क्रमेण च ॥ शुभ फल न दत्त्वेन पचमे शिति-
सीम्यवत् ॥५५॥

इस प्रकार से यह बल जो कि प्राण सजक और जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं, उसी
को यहाँ समझना ॥५१॥ पाचवा एक बल और होता है जिसको 'उपपद' या केतु पचम कहा
जाता है। जिस जातक के पचम भाव में केतु हो उसके लिये यह चर-दशा नाम की दशा बही
जाती है। इस दशा में भी विषम राशि हो तो क्रमशः गणना करना और सम राशि में विपरीत
क्रम से गणना करनी चाहिए ॥५२॥ और इस दशा में वर्ष सख्या चरपर्या पहले वह अनुसार
राशि के स्वामी तक जो प्राप्त हो बही जानना, इसका विवरण पहले वह चुके हैं ॥५३॥
विषम राशि में ३-३ राशियों के ४ विभाग क्रम से होते हैं। और सम राशि में ३-३ राशि के
४ विभाग विपरीत क्रम से होते हैं ॥५४॥ क्रम गणना और व्युत्क्रम गणना में इस प्रकार
समझना चाहिए। जैसे-क्रम गणना से लग्न से पचम भाव में यदि केतु हो तो व्युत्क्रम गणना में
वह केतु नवम भाव में समझा जायेगा। विपरीत गणना अशुभ फल कारक और क्रम गणना
शुभ फल कारक होती है ॥५५॥

पंचम इत्युपपदं पदार्हदे विचिंतयेत् ॥ ओजक्रमेण गणना समे लग्ने च व्युत्क्रमः ॥५६॥ नवमे संस्थिते केतावारुढ-राशितो द्विज ॥ विपमे पूर्ववत्तर्हि क्रमेण पचमे स्थिते ॥५७॥ शुभे फलप्रदातारः पचमे चरसप्तकाः ॥ केतोर्दशायां वै पापा दहत्येवं शुभ फलम् ॥५८॥ ग्रहनवांशकरीत्या च समानीत द्विजोत्तमः ॥ चरनवांशाब्दसमेयं भावे बलद्वितीयकम् ॥५९॥

पचम भाव जैसे लग्न से होता है, इसी प्रकार लग्न के आरुढ पद से जो पचम राशि हो उससे भी पूर्वोक्त प्रकार के अनुसार विचार किया जाता है। उस भाव की दशा में भी विपम राशि में क्रम गणना और सम राशि में विपरीत गणना होती है ॥५६॥ यदि लग्न से नवम भाव में केतु हो अथवा आरुढ राशि में नवम भाव में केतु हो तो भी विपम राशि में पूर्ववत् क्रम से गणना और सम राशि में विपरीत गणना होती है ॥५७॥ पचम भाव में चर राशि हो तो शुभ फल देती है। तथा केतु की दशा में भी पचम भाव में पापग्रह होने पर भी शुभ फल होता है ॥५८॥ ग्रह के नवांश की रीति से तथा राशि की नवांश रीति से दशा में अन्तर्दशा का विचार करना चाहिए। और इस दशा का नाम 'चर-नवांश' वर्ष दशा है ॥५९॥

स्वस्वाम्यादि दशा ग्राह्या फलादेशाय हेतवे । स्थिरनवांशे वर्षाणि राशि प्रति नवैव हि ॥६०॥ चरराशिनवांशाब्दे मासान्येव चरस्थिरा ॥ विधेयेद्विजोत्तमं बले ग्राह्य द्विजोत्तम ॥६१॥ यस्मिन्काले यस्य राशेर्यदा सा च चरस्थिरा ॥ पर्यायस्तद्दशाया च स राशिर्द्विर्मुच्यते ॥६२॥ लग्नाद्यावद्भूत स्याद्द्वारराशिर्द्विजोत्तम ॥ तस्माच्च तावद्भूतो हि बाह्यराशिर्भवत्यपि ॥६३॥ चरानुक्तितमार्गः स्यादष्टपष्टादिका स्थिरे ॥ उभये कटका जेया लग्नपचमभागतः ॥६४॥ चरस्थिरद्विःस्वभावे ओजेषु प्राक्क्रमोत्तमः तेषु च त्रिषु युग्मेषु ग्राह्या व्युत्क्रमतोऽस्तिला ॥६५॥ एवमुत्तिष्ठितो राशि पाकराशिरिति स्मृत ॥ स एव भोगराशिश्च पर्यायि प्रथमे स्थिरः ॥६६॥ लग्नाद्यावत्तत्प्राक्. पर्याय इव दृश्यते ॥ तावन्मात्र ततोभोग पर्यायि तत्र गृह्यताम् ॥६७॥ तदिदं चरपर्यायिस्थिरपर्याययोर्द्वयो ॥ त्रिकोणाख्यदशाया च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६८॥

इस नवांश दशा में भी राशि के स्वामी से दशा आरंभ होती है। और महादशा के वर्ष प्रति राशि ९ जानने चाहिए ॥६०॥ हे मैत्रेय! चर राशि महादशा के नवांश के अन्तर में विशेष फल जानने के लिये आधा भाग चर राशि और आधा भाग स्थिर राशि का जानना चाहिए ॥६१॥ जिस समय में जो आयु (अथ मध्य दीर्घ) प्राप्त हुई हो, उस दशा की उस आयु के लिये वह 'द्वार राशि' है ॥६२॥ लग्न में जितने स्थान मख्या पर द्वार राशि हो, उतनी ही मख्या और आगे 'बाह्य राशि' होती है ॥६३॥ राशि दशा में चर राशि के लिये कोई विशेष स्थान बधित नहीं है। स्थिर राशि के लिये पष्ट और अष्टम स्थान बधित है। और द्विस्वभाव राशि में केन्द्र तथा त्रिजोन भाव बड़े गये हैं ॥६४॥ ओज राशियों के चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशि में पहले बड़े अनुमात्र पहले क्रम में, पौर्ण्य व्युत्क्रम से गणना होती है। और शेष की ३-३ राशियों में विपरीत गणना होती है ॥६५॥ उस प्रकार बताई हुई राशि दशा की राशि है और अपने पर्याय में पहली नवांश की भी राशि है ॥६६॥ लग्न में जितनी मख्या पर द्वार राशि हो भोग में उस लिये की उतनी ही मख्या पर बाह्य दशा जानना ॥६७॥ यह

करना॥७९॥ चर दशा मे पूर्व प्रकार से दशा लगाना। स्थिर दशा मे पष्ठादि क्रम से दशा लगाना। इस प्रकार चारहवो भाव की दशा लगाना॥१८०॥ चर राशि मे एक ही प्रकार है और स्थिर राशि मे पष्ठादि प्रकार है॥८१॥ हे द्विजोत्तम! इस प्रकार यह चरपर्या दशा कही गई और ७।८।९ वर्ष के प्रमाण से स्थिरपर्या दशा कही गई॥८२॥

उदाहरण तथा चक्र—

कल्पना किया कि—बुध ब्रह्मग्रह है अत उपर्युक्त नियमानुसार बुध के स्थान से दशा आरम्भ की और सब भावो के ६-६ वर्ष योग करके चक्र का निर्माण किया गया।

| अथ ब्रह्मदशायांत्रम् | | | | | | | | | | | | |
|----------------------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|-------------|
| १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | भावा |
| बु० | | के० | | बु० | | शु० | | शु० | | ब० | | |
| ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ७२ वर्षा नि |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| १९०० | १९०६ | १९१२ | १९१८ | १९२४ | १९३० | १९३६ | १९४२ | १९४८ | १९५४ | १९६० | १९६६ | १९७२ |
| १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० |
| ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ |
| १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ |
| २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ |

अथ केद्रादिदशायात्रा

अथ केद्रदशायात्राया भेदानाह द्विजोत्तम ॥८३॥ प्रथमे चरराशौ च तन्त्रे वा सप्तमेऽपि वा ॥ बलवद्वाशिमारभ्य उत्तमार्गे दशायात्रम् ॥८४॥ विषमे ममभेदाच्च प्रथमे प्राक्कर्मोत्तमः ॥ प्रथमादि द्वितीयादि द्वादशाना व्रमेण च ॥८५॥ सप्राक्कर्मोत्तपदमप्यनुज्ञितश्चमोपरि ॥ दशा द्वादशराशीनां क्रमव्युत्क्रमभेदतः ॥८६॥ स्थिरराशौ द्वितीयेऽपि तन्त्रे वा सप्तमे द्विज ॥ पदपष्ठादि च रीत्या च दशायात्र प्रकाशयेत् ॥८७॥ पदाल्प पूर्वमुत्तेन व्रमव्युत्क्रमभेदतः ॥ व्रमाद्वृषे वृश्चिरे च व्युत्क्रममात्रमभिहित्यो ॥८८॥ पृथक्व्रमेण तृतीयाद्विष्यमावदशा द्विज ॥ तन्त्रे वा सप्तमे वापि बलवाञ्च विनोवृषेत् ॥८९॥ अनुज्ञेन्द्रादिदिशा सप्तपञ्चमाव्यत ॥ केद्रे तन्त्रे ततो मेधाव्यतकरे पञ्चमादितः ॥९०॥ आपोऽप्येवमे भाग्यतश्च दशायात्रो द्विजोत्तम ॥ नव नव समा प्राज्ञा मैत्रेयस्यष्ट भाषिते ॥९१॥

केन्द्रादिदशा

अब केन्द्रदशा की रीति से दशा के चर, स्थिर, तथा द्विस्वभावराशिदशा के भेद कहते हैं (महादेवजी ने) उनमें प्रथम चरराशि दशा में लग्न में चर राशि हो तो लग्न और सप्तम में जो बलवान् राशि हो, उससे दशा का आरम्भ करो॥८३॥८४॥ (लग्न या सप्तम भाव की चरराशि जो बलवान् हो वह) यदि विषम हो तो क्रम गणना से और सम हो तो विपरीत क्रम से दूसरी, तीसरी आदि १२ राशियों तक दशा होती है॥८५॥ प्रथम कहे हुए क्रम का उत्लघन नहीं करना॥१२॥ राशियों की दशा क्रम तथा विपरीतक्रम से ही जानना॥८६॥ (अब स्थिरराशि की दशा कहते हैं) द्वितीय पर्याय में लग्न में स्थिर राशि हो तो लग्न या सप्तम में जो बलवान् हो, लग्न से दशा का आरम्भ होकर उसके बाद उससे छोटे भाव की दशा, बाद उससे छोटे भाव की दशा होती है॥८७॥ पहिले कही हुई रीति से सीधे और उलटे क्रम से दशा रखना। वृष और वृश्चिक लग्न हो तो क्रम से और सिंह कुम्भ हो तो उलटे क्रम से दशा की गणना करना॥८८॥ (द्विस्वभावराशि की दशा) द्विस्वभावराशि यदि लग्न में हो तो लग्न सप्तम में जो बलवान् हो उससे देखना॥८९॥ केन्द्र के चार भावों की दशा इस प्रकार रखना कि—प्रथम लग्न आदि चारों केन्द्र भावों की बाद पणफर स्थानों में से केवल एक पंचमभाव की उसके बाद पड़नेवाले तीन केन्द्र स्थानों की॥१९०॥ और बाद आपोक्लिम स्थानों में से प्रथम नवमभाव की और बाद में पड़नेवाले तीन केन्द्र के भावों की दशा होती है। और सब राशियों की दशा में वर्ष सख्या ९-९ ही होती है॥९१॥

अथ कारककेन्द्रदशामाह

सूर्यादिनवखेटाश्च आयुर्दायिनवाशकान् ॥ नवभिर्नवभिर्वर्षे कारककेन्द्रादिका दशा॥९२॥ या नवाशकानां च ह्यब्दानां द्विजसत्तम ॥ कारकेन्द्रादि सत्याप्य क्रमात्पूर्वं समानयेत् ॥९३॥ आदौ केन्द्रस्थराशिश्च तस्याधिपक्रमेण च ॥ नवभिर्नवभिर्वर्षे कारककेन्द्रादिसंस्थिता॥९४॥ आदौ केन्द्रस्थराशिश्च तस्याधिपक्रमेण च ॥ बलाधिक्येन प्रथमस्ततो दुर्बलसन्नक ॥९५॥ प्रतिभे नव वर्षाणि कारकाश्रितराशितः ॥ जन्मसप्तद्विषोमप्रत्यरीताधको बध ॥९६॥ मैत्रातिमैत्रमित्येव तत्तदतर्दशा नयेत् ॥ स्वकेन्द्रस्थाधिपानां च सूर्यादीनां ग्रहाद्विज ॥९७॥ कारकलघ्रे समानोऽथ लग्नसप्तमयो र्बली ॥ तदारभ्य क्रमेणैव क्रमव्युत्क्रमभेदतः ॥९८॥ गृहकारकपर्यंत राशिमाख्या दशाद्विकारः ५, नतः काउककेन्द्राद्विजिभ्योऽनन्तरं बली भवेत् ॥९९॥

कारककेन्द्रदशा

सूर्यादि नवग्रह इस कारककेन्द्रदशामें ९-९ वर्ष की आयुरूप दशा तथा नवाशरूप में अन्तरदशा देने वाले हैं॥९२॥ उन ग्रहों तथा नवाशों की वर्ष दशा पहिले स्थापित करनी चाहिए॥९३॥ प्रथम केन्द्रस्थ राशि अपने स्वामी ग्रह के क्रम से ९-९ कारककेन्द्रदशामें लगानी चाहिए॥९४॥ केन्द्रराशियों में अपने स्वामी के क्रम से जो राशि बलवान् होगी उसकी दशा प्रथम रखी जायगी, उसके बाद उससे दुर्बल की (और उसके बाद उससे दुर्बल की) ॥९५॥ प्रति राशि के ९-९ वर्ष होते हैं, उन नौ वर्षों की अन्तरदशा में जन्म, सम्पत् विपत्, श्रेय, प्रत्यदि, साधक बध॥९६॥ मैत्र, अतिमैत्र इन ताराणामो से अन्तरदशा रखना,

यह अन्तरदशा अपने केन्द्रस्वामी सूर्य आदि ग्रह की कही जाती है॥१७॥ इस दशा के आरम्भ करने में भी लग्न और सप्तमभाव में जो बलवान् हो उससे विषम तथा सम राशि के अनुसार क्रम और व्युत्क्रम भेद से दशा रखनी होती है॥१८॥ अपने स्वामी तक यह दशा केन्द्र के स्थानों में बलवान् ग्रह के विभाग से रखी जाती है॥१९॥

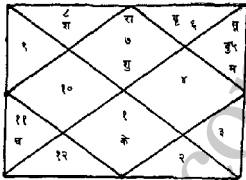
आदौ केन्द्रस्थितानां च स्थितानां पणफरे ततः ॥ आपोक्लिमे स्थितानां च ततोपि बलवद्द्विजः ॥२०॥ बलादयं प्रथमे विप्रक्रमेण सर्वदुर्बलः ॥ केन्द्रादित्यग्रहाणां च दशाब्दानयनं कृतम् ॥२१॥ खेटात्कारकपर्यन्तं राशिसंस्थाप्रमाणतः ॥ एव दूर महाप्राज्ञ नवत्यब्दाभ्येत्येकमात्रं ॥२२॥ यथा कारकग्रहस्याब्दास्तथा कारकपुत्तकाः ॥ तत्तद्ग्रहाणामब्दानामानेयं द्विजसत्तमः ॥२३॥ एव स्थिरदशारम्भात्स्थानं दर्शयति द्विजः ॥ अतर्दशाब्दमानेयं ह्यर्कं भाना क्रमेण च ॥२४॥ लग्नादिचतुः केन्द्रेषु वैषम्याधिके वै द्विजः ॥ तद्वाग्रे स्थितिमारम्य होकाब्देन क्रमेण च ॥२५॥ चतुःकेन्द्रेषु विप्रेक्ष्य विषमातिबलाधिकाः ॥ दशाप्रदत्वात्सराशि कारक पर्यवस्थितः ॥२६॥ अतर्दशा तदारम्य द्वादशराशिषु द्विजः ॥ प्रतिराशयेकं भव्यं च सर्वं स्पष्टाधिपा क्रमात् ॥२७॥

प्रथम केन्द्रस्थित राशियों की अपने बलाबल के अनुसार बाद पणफर राशियों की, पञ्चात् आपोक्लिम राशियों की दशा रखनी चाहिए॥२०॥ हे विप्र! सबसे बली राशि की प्रथम इसी तरह उससे दुर्बल और उससे दुर्बल ग्रह की अर्थात् केन्द्र के चारों भावों में ग्रहों के बलाबल से अन्त में (चौथी) सबसे दुर्बल ग्रह की दशा होगी॥२१॥ पूर्वोक्त प्रकार से ग्रहों से बलका विचार करते हुए शेष तक १२ भावों की दशा रखना॥२२॥ जिस कारक ग्रह के वर्ष दशा में रखे गये हैं वे वर्ष उसी दशा में उसी ग्रह के रख कर (समझकर) राशि के वर्ष अपने स्वामी (कारक) के श्री समझना॥२३॥ इस प्रकार अपने २ भावों की दशा स्थिर होने पर अन्तर्दशा भी १२ हों भावों की रखना॥२४॥ लग्न आदि ४ केन्द्र स्थानों में जो बलाधिक राशि है प्रथम उसीसे अन्तर्दशा भी आरम्भ होगी। भोग प्रमाण १-१ वर्ष का होगा॥२५॥ हे विप्रेन्द्र! चारों केन्द्रस्थानों में विषम राशि भी बल में अधिक है अतः प्रथम दशादात्री होनेसे कारकके दशा में स्थित है। अर्थात् अपने विषमत्व बल से ही उसका इस दशा में महत्व है॥२६॥ १२ राशियों में अपने २ स्पष्टक्रम से प्रतिराशि १-१ वर्ष देकर अन्तर्दशा रखनी चाहिए॥२७॥

एव महादशाब्दानां द्वादशराशिषु भ्रमेत् ॥ तदनन्तर्दशा शेषा भानू राशयोपरिभ्रमन् ॥२८॥ नवराशाभ्यां दशाब्दानामित्यनुवृत्त्यमेव च ॥ आदिराशिराज्याब्दानां सप्ताहो द्विजसत्तमः ॥२९॥ एव केन्द्रबलाधिक्यमारम्य प्रथमा दशा ॥ दुर्बलानां च सर्वेषामब्दानामानयेत्क्रमात् ॥ १०॥

इस प्रकार महादशा के १२ राशियों में तत्तद् ग्रह की अन्तर्दशा भी भ्रमण करती है (होगी है)॥२८॥ राशि के ९ वर्षों में अन्तर की अनुवृत्ति से आदि राशि ही अपने २ नवांश वर्षों की स्वामिनी होती है॥२९॥ पूर्वोक्त प्रकार में इस प्रकार बनाकर विचार में केन्द्र में बलाधिक प्रथम होती हुई अन्त तक १२ राशियों की दशा होती है ॥२८-१०॥

जन्मलग्नम्



अथ मङ्कदशामाह

मङ्क इति विख्याता त्रिकूटाख्या दशा द्विज ॥ सप्ताष्टनवसख्याश्च क्रमाब्दा स्थिरदशा इति ॥१९॥ चरस्थिरद्विस्वभावे सप्ताष्टनवसख्यया ॥ अब्दास्तु पूर्वरीत्या च ह्यानीय च दशा स्थिरा ॥२०॥ तद्वाशेषाब्दकूटश्च घटितत्वाद्द्विजोत्तम ॥ चरस्थिरद्विस्वभावाना त्रिकोणार्धं प्रवर्तते ॥२१॥ क्रमेण प्रोक्तरीत्या च प्रवृत्तत्वात्त्रिकूटका ॥ मङ्केति समाख्याता पुरा शम्भुप्रणोदिता ॥२२॥ केद्रात्पणफराच्चैवापोक्लिमलप्रपचत ॥ क्रमेणभागादिति च त्रिकोणाख्या च पूर्ववत् ॥२३॥ त्रिकूटघटितत्वाच्च केद्रादिति द्विजोत्तम समुद्र घटितत्वाच्च दशा स्थूला त्रिकूटका ॥२४॥ विषम्याद् यदि विप्रेन्द्र लग्नसप्तमयोस्तथा ॥ मध्ये बलवती राशिस्तमारम्य प्रवर्तते ॥२५॥

मङ्कदशा

मङ्कदशा नाम ते प्रसिद्ध, तीन समूहवाली (अर्थात् प्रथम केन्द्र से, द्वितीय पर्याय मे पणफर से, तृतीय पर्याय मे आपोक्लिम से होने वाली है) अत त्रिकूट नामवाली दशा है। इसमे ७, ८, ९ वर्ष क्रम से होने से स्थिर दशाओ की श्रेणी की है ॥१९॥ चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियो मे ७, ८, ९ वर्ष सख्यायुक्त पूर्व रीत्यनुसार रखना चाहिए ॥२०॥ तत् तत् राशि के वर्ष निश्चित होने से प्रथम केन्द्र से पञ्चात् त्रिकोण ५, ९ से यह दशा प्रवृत्त होती है ॥२१॥ क्रम से केन्द्र से त्रिकोण मे प्रवृत्त होने से 'त्रिकूटदशा' अथवा मङ्कदशा कही गई है ॥२२॥ अथवा दूसरे शब्दो मे प्रथम केन्द्र से और बाद पणफर से पञ्चात् आपोक्लिम से लग्न, पचम, नवम भावो से प्रवृत्त होने से भी 'त्रिकूट' सजा सार्वक है ॥२३॥ तीन समूह- घटित (युक्त) होने से तथा हे द्विजोत्तम! यह दशा ४-४ स्थानो के तीन कूट (समूह) युक्त होने से भी 'त्रिकूट' है ॥२४॥ हे विप्रेन्द्र! यदि लग्न तथा सप्तम भाव मे विषमराशि हो तो उनमे जो बलवती राशि हो उसी से यह दशा आरम्भ होती है ॥२५॥

पुनो जातकवान् विप्र लग्नसप्तमयोर्द्वयो ॥ बलादप्येन दशा ज्ञेया पूर्वोक्तेन क्रमेण च ॥२६॥ स्त्रीजातकवती विप्र बलयत्सप्तमा दशा ॥ आनीय पूर्वरीत्या च पुनरुक्त प्रणोदितम् ॥२७॥

अथ नक्षत्रदशामाह

नक्षत्राण्युर्महाप्राज्ञ पूर्णमग्रे प्रभाषितम् ॥ विशोत्तरी पञ्चधा च द्विधा चाष्टोत्तरी मता ॥३५॥
मनुष्यगोपरि दशा सर्वेषां वितयेद्द्विज ॥ ततो निर्याणमालेख्य निर्विराक्
भविष्यति ॥३६॥

अथ योगार्द्धदशामाह

चरस्विरदशा विप्र य च योग समाचरेत् ॥ तस्यार्धं च समायुर्दा योगार्द्धाख्या तु सा दशा
॥३७॥ लग्नसप्तमयोर्मध्ये चितयेत्तु बलाश्रयम् ॥ लग्ने बलयुते लग्नाद्दशारभ प्रकाशयेत् ॥३८॥
तस्मात्सप्तमवीर्यादिषु ॥ दशारभ प्रकल्पयेत् ॥ पुसा स्त्रीजातक वक्ष्ये क्रमभ्युत्क्रमभेदत
॥३९॥ बलिनस्तु दशाऽऽनेया राशेर्हि शशिशुक्रयो ॥ स्त्रीचेद्दर्पणतो नेया पुरुषश्च ततो
नयेत् ॥४०॥

नक्षत्र दशा

हे महाभाग! नक्षत्र द्वारा प्राप्त होनेवाली ५ प्रकार की विशोत्तरी दशा-अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, सूक्ष्मदशा प्राणदशा भेद से तथा अष्टोत्तरी के २ प्रकार (आर्द्रा तथा कृतिका से आरम्भ) सम्पूर्ण रूप से कही गई हैं। उन सब नक्षत्र दशाओं के फल का विचार मनुष्य वर्गों पर विचार करना तथा फलरूप भोग के समाप्त होने पर मृत्यु का विश्रय करना ॥३५-३६॥

योगार्द्ध दशा

चरराशि के दशावर्ष तथा स्थिर राशि के दशा वर्ष जोड़ कर आधे करने से (अर्थात् प्रत्येक राशि के चरदशा के वर्ष लेना और स्थिरदशा के वर्ष लेना योग कर आधा करने से) योगार्द्ध दशा होती है ॥३७॥ लग्न और सप्तमभाव में से जो बलवान् हो उसीसे दशारभ करना। जैसे लग्न बलवान् हो तो लग्न से दशारभ करना ॥३८॥ सप्तमराशि बलवान् हो तो सप्तमभाव से दशा का आरम्भ करना। तथा विषम सम भेद से क्रम व्युत्क्रम गणना का भी ध्यान रखना ॥३९॥ जो राशि बलवान् हो उससे दशा का आरम्भ करना। जिस जातक के चन्द्र शुक्र बलवान् हो उसके लिए यह दशा देखना। स्त्री जातक हो तो लग्न तथा सप्तमभाव में जो राशि बलवान् हो उससे जो सप्तमभाव है, उससे दशा लेना। और पुरुष जातक हो तो लग्न मज्जम में जो बलवान् हो उसी से दशारभ लिया जाता है ॥४०॥

उदाहरण-इस 'योगार्द्धदशा' में वषादि इस रीति से लेना वि-प्रथम 'चरदशा' के तथा 'स्थिर दशा' की वर्षसंख्या का योग करके आधा करना (२ का भाग देना) लग्न वर्ष मान उसी भाव के 'योगार्द्धदशा' के वर्ष मान लीये। चक्र से स्पष्ट समझना।

त्रिराश्यात्मकूटपदं ततोपि दशमस्य च ॥ दृग्दशैकादशे ज्ञेया नवमस्यापि दृग्दशा ॥४६॥
फलार्थे दृग्दशा विप्र संगृह्ये कादशेपि च ॥ तस्याः प्रकारं वक्ष्येह पुनरुक्तं विशेषतः ॥४७॥
अयौज्युग्मभेदेन गणनाक्रम उच्यते ॥ यथा सामान्यं संज्ञेयं युग्मेषु पञ्चमाययोः ॥४८॥ गणनायां च
सामान्यं पंचमैकादशे द्विज ॥ क्वचिदित्यात्मकं ज्ञेयं सामान्यत्रयकूटके ॥४९॥ अयौजपदयोर्विप्र
संज्ञेयं विपरीततः ॥ युग्मे च युग्मपदयोर्यथा सामान्ययोजनम् ॥२५०॥

हे द्विजसत्तम! चतुर्थाध्याय में यह दृष्टिक्रम कहा है कि—राशियां अपनी संमुख राशि को
तथा पार्श्वराशि को देखती हैं। उस पूर्वोक्त रीति से ही 'त्रिकूट' स्यात् कहा जाता है ॥४५॥
तीन राशियों के मेल का नाम 'त्रिकूट' है। अतः ९।१०।११ भाव की राशियों से यह 'दृग्दशा'
होती है ॥४६॥ फलनिर्देश के लिए यह 'दृग्दशा' कही गई है। इसका प्रकार पुनः स्पष्ट करके
कहते हैं ॥४७॥ अब विपम, समभेद से गणना का क्रम कहते हैं। युग्मराशि में सामान्य रीति से
ही ५।११ भाव की दशा जानना ॥४८॥ तीनों राशियों ९।१०।११ में पंचम एकादश राशि
की गणना सामान्यरूप से जैसे चतुर्थाध्याय में कही है उसी प्रकार करना ॥४९॥ विपमराशि
हो तो विपरीत क्रम से और समराशि हो तो क्रमगणना से ५।११ भाव की दशा
रखना ॥२५०॥

क्रमो वृषे वृश्चिके च हीत्युक्तेन द्विजोत्तम ॥ अत्रापि ह्योजकूटस्ये पंचमैकादशात्क्रमात् ॥५१॥
दृग्योगं च भवेद्विप्र दृग्दशा बलदायिका ॥ युग्मकूटस्य सामान्यं व्युत्क्रमात्सिंहकुंभयोः ॥५२॥
पंचमैकादशी विप्र दृग्योगौ भवतस्तथा ॥ राशीनां द्विस्वभावानां पंचमैकादशे स्थिते ॥५३॥
दृग्योगस्याप्यभावश्च दृष्टिचक्रे विचिंतयेत् ॥ यत्रभावे भवेद्दृष्टिस्तत्र तस्याश्रयादिके
॥५४॥ नवमेशानंतरं च विज्ञेया गणिताग्रणीः ॥ सप्तमस्य ततो ज्ञेया नवमादि
त्रिकोणगे ॥५५॥

वृष और वृश्चिक राशि विपम वर्ग में होने के कारण प्रथम पंचम पश्चात् एकादशभाव
राशि की दशा लेना ॥५१॥ इसी तरह सिंह और कुम्भराशि के समवर्ग में होने के कारण
विपरीत क्रम से दृग्दशा ग्रहण करना ॥५२॥ द्विस्वभाव राशि पंचम एकादश में हो तो उनसे
भी दशा वर्ग लेना ॥५३॥ दृष्टियोग पूर्वोक्त 'दृष्टिचक्र' से देखना। जिस भाव में दृष्टि हो उस
भाव से दशा ग्रहण करना ॥५४॥ नवमभाव के बाद दशम आदि राशि की दशा लेना। सप्त
सप्तमभाव में सप्तमभाव बलवान् हो तो सप्तमभाव से नवमादि राशि लेना ॥५५॥

द्विधा राशिर्दृग्दशायां पार्श्वराशिद्वयं दशा ॥ पुराशिर्द्विस्वभावस्य ज्ञेया तस्य क्रमेण च ॥५६॥
स्त्रीराशिर्द्विस्वभावेपि व्युत्क्रमेण द्विजोत्तम ॥ चतुर्थदशमी ग्राह्यो पार्श्वं तु न संशयः ॥५७॥
चरराशिक्रमेणैव संस्थिते व्युत्क्रमेण च ॥ पंचमैकादशी विप्र दृग्योगं च भवत्यपि ॥५८॥
पार्श्वराशौर्महाप्राज्ञ दशा ज्ञेया क्रमोक्तमात् ॥ द्विस्वभाव नवमादौ संज्ञेयाः सप्तमस्य च ॥५९॥
ओजसंज्ञा द्विस्वभावे क्रमेण तुर्यं व्योमके ॥ समे व्युत्क्रमतो ज्ञेया सा ग्राह्या व्योमनुर्ययोः
॥६०॥ राशीनां द्वादशानान्तु संख्या नवनवाब्दकैः ॥ 'संघातं' दृग्दशानां च क्रमं
पूर्वप्रकारतः ॥६१॥

यदि जातक पुरुष हो और लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो पार्श्व राशि पचम एकादश नहीं होती, द्विस्वभावराशि की दृष्टि 'दृष्टिचक्र' में चतुर्थ, दशम पर होती है, अतः वही लेना॥५६॥ इसी प्रकार जातक स्त्री हो तो भी विपरीत क्रम से चतुर्थ, दशम राशि ग्रहण करना॥२७॥ चरराशि हो तो नियमानुसार क्रमसे या व्युत्क्रमसे पचम तथा एकादश भाव की दशा ग्रहण करना॥५८॥ हे महाप्राज्ञ! पार्श्वराशि की दशा क्रम और व्युत्क्रम से लेना। द्विस्वभाव राशि के नवमादि भावों में तथा सप्तमभावसे दशारम्भ हो तो पूर्वोक्तानुसार दशा लेना॥५९॥ द्विस्वभावराशि यदि विपम हो तो प्रथम चतुर्थ भाव की बाद दशम भाव की दशा लेना। सम राशि हो तो प्रथम दशम भाव की, बाद चतुर्थ की दशा लेना ॥६०॥ बारह राशियों की वर्ष सख्या ९-९ वर्ष की ही जाने। यह हमने दृग्दशा कही। इसका फल पूर्वोक्त प्रकार से ही जानना ॥६१॥

| अथ दृग्दशाचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
|------------------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|
| १ | ५ | ११ | ५ | १ | ७ | ३ | ६ | १२ | १२ | ९ | ३ | योग. |
| १ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | १०८ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १९०० | १९०९ | १९१८ | १९२७ | १९३६ | १९४५ | १९५४ | १९६३ | १९७२ | १९८१ | १९९० | १९९९ | २००८ |
| १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० |
| ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ |
| १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ |
| २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ |

उदाहरण—उपर्युक्त कल्पित उदाहरण में लग्न से नवम चरराशि है अतः चरराशि में ही दशा पश्चात् इसकी दृष्ट राशियों की दशा रखी गई है, पश्चात् दशम और उसकी दृष्टराशियों की, इसके बाद एकादश और उसकी दृष्ट राशियों की दशा रखी गई है। दृष्टिविचार मूल में पूर्णरूप से कहा ही गया है। वर्ष सख्या ९-९ स्पष्टरूप से मूल में कही ही है।

अथ त्रिकोणदशामाह

इति त्रिकोणदशामाह या यथान्यायप्रकल्पना ॥ चरपर्यायरीत्यादिभूकोक्तेन प्रदर्शित ॥६२॥
तत्रात्रिकोणेषु राशिर्बलवानुत्तरेतुमिः । तदारम्भानयेज्जरीमंश्चरपर्यायदशा ॥६३॥

युग्मराशिभवां पुंतामोजे मूलौत समुषः ॥ ओजराशिभवां स्त्रीणां युग्मे चैव समाश्रयेत् ॥६४॥ क्रमोत्क्रमेण गणयेदोजयुग्मेपु राशिषु ॥ संपन्नचरपर्यायदशामिति प्रकल्पयेत् ॥६५॥ ततोपि द्वारबाह्याभ्या फलमेव विचिंतयेत् ॥ पाकभोगद्वयं विप्र पापयोगेन सौख्यदाम् ॥६६॥ तदिदं चरपर्यायस्थिरपर्यायकं द्विज ॥ त्रिकोणाख्यदशायां च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६७॥

त्रिकोणदशा

त्रिकोण दशा नाम की यह दशा चरपर्यायदशा की रीति से कही गई है ॥६२॥ लग्न से तथा त्रिकोण राशिओं से यह दशा आरम्भ होती है। जो राशि पूर्वोक्त हेतुओं से बलवान् हो उसी से दशा आरम्भ करना ॥६३॥ (समराशि में उत्पन्न पुरुष जातक की दशा राशि सम्मुखीन विषम राशि में दशा कल्पना होती है। तथैव विषमराशि में उत्पन्न स्त्री जातक की दशा की परिकल्पना समराशि में होती है ॥६४॥) यथाक्रम और विपरीतक्रम से विषम, समराशियों में चरपर्यायदशा के समान ही दशा की कल्पना करो ॥६५॥ इस दशा से द्वारराशि तथा बाह्यराशि से दशा और अन्तरदशा का विचार करे, द्वार राशि का दूसरा नाम 'पाकराशि' और बालराशि का 'भोगराशि' नाम है ॥६६॥ इस प्रकार चरदशा और स्थिरदशा दोनों से इस त्रिकोणदशा के फलभोग का विचार किया जाता है ॥६७॥

पाकभोगे च पापादये देहपीडा मनोव्यथा ॥ नृपाद्वीति भय क्लेशमहारुह्यां प्रपीडित ॥६८॥ अधुना सप्रवस्थामि कारकाणां फल द्विज ॥ सप्तमश्च तृतीयश्च प्रथमो नवमोऽपि च ॥६९॥ नवमात्स्वल्या विज्ञेया पितृसौख्य विचिन्तयेत् ॥ शरीरारोग्यमैश्वर्यं चित्तप्रेतप्रपन्नादद्विज ॥७०॥

राशि की दशा में पापग्रह योग होने पर देहपीडा, मनश्चिन्ता राजभय, क्लेश तथा रोगभय होता है ॥६८॥ अब यह विचार कहा जाता है कि—प्रथमकारक (आत्मकारक) से इसी प्रकार तृतीय, सप्तम, नवम कारक से तत् २ कारकोक्त फल का विचार करना चाहिए ॥६९॥ नवमकारक से पितृसौख्य का विचार तथा प्रथमकारक से अपनी आरोग्यता आदि का विचार करो ॥७०॥

उदाहरण—लग्न से त्रिकोण अर्थात् लग्न, पञ्चम, नवम भाव राशियों में जो बलवान् राशि हो उससे दशा का आरम्भ करना, जैसे—कल्पित उदाहरण में प्रथम बलवान् होने से लग्न की, पञ्चात् ५-९ की, एव बाद में २॥६१० की इसी प्रकार ३॥७११ और ४॥८१२ की दशा ही है। इनके पूर्व चर पर्याय के तथा स्थिर पर्याय के समान रखना चाहिए।

अथ त्रिकोणदशाचक्रम्

| १ | ५ | ९ | ३ | ६ | १० | ३ | ७ | ११ | ४ | ८ | १२ | योगः |
|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|
| ११ | ६ | २ | ११ | ८ | १२ | ७ | ६ | १२ | ७ | ६ | १ | ८९ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १९०० | १९११ | १९१७ | १९१९ | १९३० | १९३८ | १९५० | १९५७ | १९६३ | १९७० | १९८२ | १९८८ | १९८९ |
| १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० |
| ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ |
| १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ |
| २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ |

अथ नक्षत्राद्वाशिदशाक्रममाह

जन्मादौ चंद्रनक्षत्रे सर्वत्र घटिकौघके ॥ मानुना दीयते भागशेषनाडीः प्रकल्पयेत् ॥७१॥ प्रथमं खण्डमारम्य द्वादशे खंडके द्विज ॥ तन्नाद्द्वादशराशीनां गणनीयं क्रमेण च ॥७२॥ या घटी कर्मवत्खण्डे जन्मखण्डश्च आदितः ॥ आरम्य गणनायां च जन्मलघादितो द्विज ॥७३॥ तन्नाद्द्वादशराशीशमारम्य द्विजसत्तम ॥ क्रमव्युत्क्रममेवेन द्वादशर्तदशा भता ॥७४॥

नक्षत्र से राशिदशा

नक्षत्र के भभोग में १२ का भाग देकर बारहवां भाग प्राप्त करके जन्मकाल का कौनसा भाग है यह निम्नय करे ॥७१॥ प्रथम खण्ड से बारह खंडों में से जिस खंड में जन्म हो उस खण्ड तक जन्मलग्न से गणना करके जो राशि प्राप्त हो उसीसे १२ राशियों की दशा विषम तथा समराशि में क्रम तथा व्युत्क्रम से दशा का आनयन करे ॥७४॥

उदाहरण—कल्पना किया कि किसीका जन्म पूर्वाषाढा नक्षत्र में है, उसका भभोग ५७।४८ है। १२ का भाग दिया तो लब्ध ४ तथा शेष ९।४८ है, अतः कल्पित लग्न ५ से पञ्चम धनु राशि प्राप्त हुई, इसी से दशा आरम्भ की, और प्रतिराशि ९-९ वर्ष रहे गये। चक्र में देखिये—

पुष्कराशिभवां पुतामोजे गृहीत संमुखः ॥ ओजराशिमुवां स्त्रीणां पुग्मे चैव समाश्रयेत् ॥६४॥ क्रमोत्क्रमेण गणयेदोजपुष्मेपु राशिषु ॥ संपन्नचरणपर्यायदशामिति प्रकल्पयेत् ॥६५॥ ततोपि द्वारवाह्याभ्यां फलमेवं विचिंतयेत् ॥ पाकभोगद्वयं विप्र पापयोगेन सौख्यदाम् ॥६६॥ तविदं चरणपर्यायस्थिरपर्यायिकं द्विज ॥ त्रिकोणाख्यदशायां च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६७॥

त्रिकोणदशा

त्रिकोण दशा नाम की यह दशा चरणपर्यायदशा की रीति से कही गई है ॥६२॥ लग्न से तथा त्रिकोण राशियों से यह दशा आरभ होती है। जो राशि पूर्वोक्त हेतुओं से बलवान् हो उसी से दशा आरभ करना ॥६३॥ (समराशि में उत्पन्न पुरुष जातक की दशा राशि सम्मुखीन विपम राशि में दशा कल्पना होती है। तथैव विपमराशि में उत्पन्न स्त्री जातक की दशा की परिकल्पना समराशि में होती है ॥६४॥) यथाक्रम और विपरीतक्रम से विपम, समराशियों में चरणपर्यायदशा के समान ही दशा की कल्पना करो ॥६५॥ इस दशा से द्वारराशि तथा वाह्यराशि से दशा और अन्तरदशा का विचार करे, द्वार राशि का दूसरा नाम 'पाकराशि' और बालराशि का 'भोगराशि' नाम है ॥६६॥ इस प्रकार चरदशा और स्थिरदशा दोनों से इस त्रिकोणदशा के फलभोग का विचार किया जाता है ॥६७॥

पाकभोगे च पापादधे देहपीडा मनोव्यथा ॥ नृपाद्भूति भय क्लेशमहाह्वयां प्रपीडिता ॥६८॥ अधुना सप्रबक्ष्यामि कारकाणां फल द्विज ॥ सप्तमश्च तृतीयश्च प्रथमो नवमोऽपि च ॥६९॥ नवमात्स्वल्या विजेया पितृसौख्यं विचिन्तयेत् ॥ शरीरारोग्यमैश्वर्यं चितयेत्प्रथमाद्विज ॥७०॥

राशि की दशा में पापग्रह योग होने पर देहपीडा, मनश्चिन्ता राजभय, क्लेश तथा रोगभय होता है ॥६८॥ अब यह विचार कहा जाता है कि—प्रथमकारक (आत्मकारक) से इसी प्रकार तृतीय, सप्तम, नवम कारक से तत् २ कारकोक्त फल का विचार करना चाहिए ॥६९॥ नवमकारक से पितृसौख्य का विचार तथा प्रथमकारक से अपनी आरोग्यता आदि का विचार करो ॥७०॥

उदाहरण—लग्न से त्रिकोण अर्थात् लग्न, पञ्चम, नवम भाव राशियों में जो बलवान् राशि हो उससे दशा का आरभ करना, जैसे—कल्पित उदाहरण में प्रथम बलवान् होने से लग्न की पञ्चात् ५-९ की, एवं बाद में २॥६॥१० की इसी प्रकार ३॥७॥११ और ४॥८॥१२ की दशा ही है। इनके पूर्व चरण पर्याय के तथा स्थिर पर्याय के समान रखना चाहिए।

अथ नक्षत्रराशिदशाचक्रमिदम्

| ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | योगा |
|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|--------|
| ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | ९ | १०८ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १२०० | १२०९ | १२१८ | १२२७ | १२३६ | १२४५ | १२५४ | १२६३ | १२७२ | १२८१ | १२९० | १२९९ | सम्पत् |
| १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० |
| ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ |
| १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ |
| २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ |

अथ तारादशामाह

जन्मसप्तद्विपक्षेमप्रत्यरीसाधको वध ॥ मैत्रातिमैत्रमित्येव दशा ज्ञेया द्विजोत्तम ॥
विशोत्तर्पाक्रमेणैवमब्दानिह विजानत ॥ आदौ केद्रग्रहा यस्य विज्ञेया तारका दशा ॥७५॥

तारादशा

जन्म सम्पत् विपत् क्षेम प्रत्यरि, साधक वध, मैत्र अतिमैत्र य नौ तार है। विशोत्तरी दशा के अनुसार ही इनकी दशा है। जातक की जन्मकुंडली में जो ग्रह केन्द्र में है। उनमें जो ग्रह बलवान हो सूर्यादि क्रम से उस ग्रह की तारा स दशा आरम्भ होगी और जान की दशाएँ उपर्युक्त ताराक्रम से होगी। प्रथम की दशा का भोग्य वर्षादिमान गणित द्वारा स्पष्ट निबान कर रखना तथा आगे के वर्षमान विशोत्तरी दशा के वर्ष ही जानना॥७५॥

उदाहरण—इस दशा में सूर्य चन्द्र आदि ग्रहों के स्थान में जन्म, सम्पत् आदि नाम रखना और सूर्यादि ग्रहों के विशोत्तरी में कथित वर्ष ही इनके वर्ष हैं, और साधन रीति भी वही है।

अथ तारादशाचक्रमाह

| साधक | मुघ | सैत्र | अतिनेत्र | जन्म | सप्त | विषत् | शेम | प्रत्यरो | इमादशा |
|------|------|-------|----------|------|------|-------|------|----------|--------|
| १ | १७ | ७ | २० | ६ | १० | ७ | १८ | १६ | १०२ |
| ८ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ८ |
| १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ |
| ३८ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ३८ |
| ६ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ६ |
| १९०० | १९०२ | १९१९ | १९२६ | १९४६ | १९५२ | १९६२ | १९६९ | १९८७ | २००३ |
| १० | १० | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ | ६ |
| ४ | ४ | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ |
| १४ | १४ | १४ | ५२ | ५२ | ५२ | ५२ | ५२ | ५२ | ५२ |
| २२ | २२ | २२ | २६ | २६ | २६ | २६ | २६ | २६ | २६ |

अथ वर्णदशामाह

जन्महोराक्षलप्रक्षसख्या प्राह्य पृथक् पृथक् ॥ ओजलप्रे च युग्मे तु चक्रगुदैकसयुता ॥७६॥
 युग्मौजसाम्ये सयोज्य वियोज्यान्योन्यमन्यथा ॥ मेघादित क्रमादौजे मीनादेशक्रमात्समे
 ॥७७॥ एव घल्लप्रमायात वर्णद तत्प्रकीर्तितम् ॥ एव द्वादशमावाना वर्णद तत्प्रकीर्तितम्
 ॥७८॥ एव द्वादशमावाना वर्णद तत्प्रमानयेत् ॥ प्रहार्णा वर्णदा नैव राशीना वर्णदा दशा
 ॥७९॥ वर्णसख्या विज्ञानीयान्वरूपप्रमाणत ॥८०॥

वर्णद दशा

जन्मकाल के होरालेख और जन्मलग्न से (अध्याय १० में कथनानुसार) अलग अलग सख्यायें ग्रहण करना, दोनो राशि बिषम सम में हो तो पूर्वोक्तानुसार आगत सख्या १२ में अधिक हो तो १२ से शोधित करके १ जोड़े ॥७६॥ और दोनो राशि एक ही जाति की हो तो सयोजन, अन्यथा वियोजन करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह बिषम हो तो मेघादि क्रम से और सम हो तो मीनादि विपरीत क्रम में जो लग्न प्राप्त हो वह 'वर्णद' लग्न है ॥७७॥ इसी रीति से बारहो भावों का 'वर्णद' निकालना। यह 'वर्णदा' दशा ग्रहों की नहीं होती, केवल राशियों की होती है ॥७९॥ चरण्या दशा में अनुमान राशि के स्वामी तक बिषम सम में क्रम, व्युत्क्रम भेद से वर्ण सख्या प्राप्त वने ॥८०॥

उदाहरण—कल्पना किया कि किसी का जन्म मेष लग्न में है, अतः जन्मलग्न विषम है तो सख्या १ प्राप्त हुई और होरा लग्न वृषभ है तो सम होने से विपरीत गणना से सख्या १० प्राप्त हुई दोनों विषम सख्या होने से योग किया तो '११' यह वर्णद दशा राशि प्राप्त हुई, इसी प्रकार प्रत्येक भाव से वर्णद राशि का अंक प्राप्त करना चाहिए।

| अथ वर्णददशाचक्रम् | | | | | | | | | | | | | योग |
|-------------------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|-----|
| ११ | ५ | ८ | ६ | ६ | ४ | ४ | २ | २ | ८ | १२ | ९ | | |
| १२ | ६ | ६ | ८ | ८ | ७ | ७ | ११ | ११ | ४ | ३ | २ | ८५ | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| १९०० | १९१२ | १९१८ | १९२४ | १९३२ | १९४० | १९४७ | १९५४ | १९६५ | १९७६ | १९८० | १९८३ | १९८५ | |
| १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | |
| ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | |
| १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | |
| २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | |

अथ पंचस्वरदशामाह

पचाकान्त्रयमे दत्त्वा स्वरान्वर्णाश्च विन्यसेत् ॥ आदावकछडाघाश्च अत ओचद्दबावप
॥८१॥ कादिहातांलिसेद्वर्णान्स्वराधोऽज्जोन्निताम् ॥ तिर्यक्पत्तिक्रमेणैव पंच पंच विभागत
॥८२॥ न प्रोक्ता इज्जणा वर्णा नामादौ सति तेन हि ॥ चेद्भवति तदा ज्ञेया गजज्ञाते
पयाक्रमम् ॥८३॥ यदि नास्ति स्युस्तद्वर्णा सयोगाक्षरलक्षणा ॥ ग्राह्यस्तदादिमो वर्ण इत्युक्त
ब्रह्मणा पुरा ॥८४॥

पंचस्वरदशा

(छ लाइन सीधी और १० लाइन तिरछी लिखने से, सडे ५ कोष्टक और तिरछे ९ कोष्टक होते हैं। यह चक्र हुआ, अब इसमें वर्ण विन्यास कहते हैं।) ऊपर की तिरछी लाइन में १ से ५ तक के अंक लिखो। उनके साथ ५ स्वरो आ, ई, ऊ, ए, ओ, लिखो (यह दो लाइन हुईं)। प्रथम की खड़ी पंक्ति में अ, क, छ, ड, घ आदि अब लिखो और अत की पंचम खड़ी पंक्ति में

ओ, च, छ, द, व आदि अक्षर लिखे॥८१॥ पञ्चात् आदि की सही पक्ति के वर्णों से मिलान करते हुए 'क' से 'ह' तक के अक्षर लिखे, प्रत्येक स्वर के नीचे पक्षिचार अक्षर लिखे। ड, झ, ण इनको नहीं लिखे। तिरछी पक्ति में क्रम से ५-५ अक्षर लिखे॥८२॥ ड, झ, ण ये वर्ण नहीं कहे गए क्योंकि—नाम के आदि में ये वर्ण नहीं होते। यदि हो तो उनके स्थान में क्रमशः ग, ज, ङ इन अक्षरों को मानना चाहिए॥८३॥ यदि नाम के आदि में समुक्त अक्षर हो तो उसके आदि का एक अक्षर लेना, यह कहा है॥८४॥

अकाराद्या स्वरा पञ्च ब्रह्माद्या पञ्च देवता ॥ निवृत्त्याद्या कला पञ्च इच्छाद्य शक्तिपञ्चकम् ॥८५॥ मायाद्याश्च भेदाश्च धराद्या भूतपञ्चकम् ॥ शब्दादिविषयास्ते च कामदाणा इतीरिता ॥८६॥ प्रभववादिक्रमेणैषा स्वराणामस्वरादिक ॥ उदयो द्वादशाब्दानां प्रत्येक द्वादशाब्दिक ॥८७॥ अस्यात्तरादयो वर्षमेको मासो दिनद्वयम् ॥ लोकाब्धिनाडिका प्रोक्त अष्ट त्रिशत्पलानि च ॥८८॥ द्वादशाब्दादिनाड्यता स्वस्थानाच्च स्वकालतः ॥ उदयाते पुनस्त्वत्रातरेरेकादशोदये ॥८९॥ जन्मकर्माधानपिण्ड छिद्रा सज्ञा स्वरादिषु ॥ यत्र नामाक्षर प्राप्त तत्रैव उदितः स्वरः ॥९०॥ तस्माद्वर्षान्विजानीयाद्वर्षान्मासो भवेत्पुनः। मासद्वयं च विज्ञेय दिनद्वादशकाधिकम् ॥९१॥ एव क्रमेण जानीयाद्वर्षान् मासाश्च पञ्चमु ॥९२॥

आकार आदि ५ स्वरो के ब्रह्मा आदि ५ देवता हैं। निवृत्ति आदि ५ कला इच्छा आदि ५ शक्ति है॥८५॥ माया आदि ५ भेद और पृथ्वी आदि ५ भूत तथा शब्द आदि ५ विषय है इच्छा आदि ५ शक्ति हैं॥८६॥ प्रभव आदि ६० वर्षों में से १२-१२ वर्ष एक एक स्वर में हैं॥८७॥ इसके अन्तरोदय में १ वर्ष १ मास २ दिन ४७ घटी ३८ पल (अतरदशा)॥८८॥ १२ वर्ष की दशा में तथा अन्तरोदय अपने पर्याय तथा अपने काल में ११ अन्तर होते हैं॥८९॥ प्रत्येक स्वर की सज्ञा जन्म कर्म आधान पिण्ड, छिद्र ये हैं। जिस स्वर के नीचे नाम का आद्यक्षर होगा, उस जातक का वही उदित स्वर है ॥९०॥ उस उदित स्वर से दशा का आरम्भ होता है। वह दशा १२ वर्ष की और उसके अन्तरोदय के ११ अन्तर है। और उनमें प्रत्येक अन्तरोदय में पाँचों स्वरो का भोगकाल होता है। जिसमें प्रत्येक स्वर का भोगकाल २ मास १२ दिन होते हैं॥९१॥ इस क्रम से ५ स्वरो के वर्ष और मास जानना॥

मार्गनीयमासौ तु आद्यास्यादिदिनव्ययम् ॥ एव विभागश्चाद्वादशे सप्रदायानुसारतः ॥९३॥ त्रियम् प्रतिपत्पूर्वा कुजादेर्बार्निर्णयः ॥ नदा भद्रा जया रिक्ता पूर्णा चापि ध्याक्रमम् ॥९४॥ क्रमेणाका प्रदातव्या प्राह्याश्वाकसमुच्चयाः ॥ चद्राष्टावस्वरे श्रेया ईश्वरे नागकुजराः ॥९५॥ उत्सरे रामरक्षाणि एवरे चद्रलेखराः ॥ ओत्सरे पञ्चदशभिः स्थितियोगसमुद्भवः ॥९६॥ अत्सरे कौर्वैसिहाजा ईत्सरे जैदुराशयः ॥ उत्सरे चापजलजायेत्सरे तु तुलावृषौ ॥९७॥ ओत्सरे मृगकुम्भी च रासीगाह्वारजा स्वराः ॥ स्वराद्य स्यापयेत्लेहान् राशौर्वो यस्य नायकः ॥९८॥

इन पाँच स्वरो में क्रम से २-२ मास और १२-१२ दिन के विभाग में एक वर्ष का

भोगमान कहा है। अस्वर मे मार्गशीर्ष और पौष मास तथा माघ के १२ दिन है। आगे इसी प्रकार ७२-७२ दिन ईकार आदि के है॥९३॥ तथा प्रतिपदा आदि ३-३ तिथि क्रम से, एव मंगल आदि वार जानना। तिथियो मे नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा ये अकारादि स्वरो की जानना॥९४॥ आगे कहे जाने वाले अब अकारादि स्वरो के नीचे देना और जिस स्वर के अब की आवश्यकता हो उसको ग्रहण करना। 'अ' स्वर के नीचे ८१ और 'ई' स्वर के नीचे ८७ देना॥९५॥ 'ऊ' स्वर मे ९३ तथा 'ए' स्वर मे ९१ एव 'ओ' स्वर मे १०५ स्थापन करना॥९६॥ इसी प्रकार 'अ' स्वर मे वृश्चिक सिंह तथा मेष और 'ई' स्वर मे ३॥४॥६ तथा 'ऊ' स्वर मे ९॥१२ एव 'ए' स्वर मे २॥७ एव 'ओ' स्वर मे १०॥११ तथा इन राशियों के स्वामी भी राशि के समान जानना, अर्थात् जिस राशि का जो स्वामी है वह राशि स्वर के नीचे ही रखना॥९८॥

| अथ पंचस्वरचक्रम् | | | | | |
|------------------|----|----|----|----|--|
| अ | ई | उ | ए | ओ | |
| १२ | १२ | १२ | १२ | १२ | |
| क | ख | ग | घ | च | |
| छ | ज | झ | ट | ठ | |
| ड | ड | त | थ | द | |
| ध | न | प | फ | ब | |
| भ | म | य | र | ल | |
| व | श | ष | स | ह | |

| अथ पचस्वरदशाचक्रमाह | | | | | |
|---------------------|------|------|------|------|------|
| ई | उ | ए | ओ | अ | योगा |
| १२ | १२ | १२ | १२ | १२ | ६० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १९०० | १९१२ | १९२४ | १९३६ | १९४८ | १९६० |
| १० | १० | १० | १० | १० | १० |
| ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ |
| १४ | १४ | १४ | १४ | १४ | १४ |
| २२ | २२ | २२ | २२ | २२ | २२ |

उदाहरण—जानना किया कि 'ईकार' स्वर मे किसी का जन्म है, तो ईकार से ही दशा आरम्भ की गई। इसका विशेष विवरण दशा अन्तर्दशा आदि 'नरपतिजयचर्या' नामक ग्रन्थ मे है जिज्ञामु को वही देखना चाहिए।

अथ योगिनीदशामाह

मगता पिगता धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ॥ योगिन्योऽष्टीसमाख्याता उत्का सिद्धा च
सकटा ॥९९॥ पिगलातो भवेत्सूर्यो मगलातो निशाकरः ॥ भ्रामरीतो भवेद्भूमौ भद्रिकानो

बुधस्तथा ॥३००॥ धान्यकातो गुरुसूतिसिद्धातः कविसंभवः ॥ उल्कातो भानुतनयः
संकटातस्तमोऽभवत् ॥१॥ स्वर्क्ष पिनाकिनयनयुक्त च घमुभिर्हरेत् ॥ शेषेण योगिनी ज्ञेया
शून्यपातेन सकटा ॥२॥ एकाभिवृद्ध्या वर्षाणि भगलाप्रमुखासु च ॥३॥ गताभिर्भस्य
नाडीभिर्गुणयित्वा तु तैर्दिनैः ॥ विहीना सा प्रकृतव्या स्फुटा चैव भवेद् ध्रुवम् ॥४॥

योगिनी दशा

भगला, पिगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा, सकटा ये आठ नामकी योगिनी
दशा है ॥१९॥ पिगला से सूर्य की उत्पत्ति है और भगला से चन्द्रमा, भ्रामरी से मंगल तथा
भद्रिका से बुध की उत्पत्ति है ॥३००॥ धान्या से गुरु, सिद्धा से शुक्र, उल्का से शनि, सकटा से
राहु की उत्पत्ति है ॥१॥ जन्म नक्षत्र सख्या में ३ जोड़कर ८ का भाग देना, शेष रहे तो एकादि
क्रम से भगला आदि दशा जानना ॥ ०, शेष रहे तो सकटा दशा जानना ॥२॥ एकोत्तर वृद्धि
१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ इनकी वर्ष सख्या है ॥३॥ नक्षत्र की गतघटी = भयात से दशावर्ष सख्या
को गुणा कर ३६ का भाग देने से दशा भुक्त प्राप्त होगी ॥४॥ (भुक्त को दशामान में घटाने से
भोग्यदशा प्राप्त होगी)

उदाहरण-कल्पना किया कि-किसीका जन्म पूर्वाषाढामें है अतः नक्षत्र सख्या २० में ३ युक्त
किया तो २३ हुआ इसमें ८ का भाग दिया तो शेष ७ रहे, अतः सिद्धा में जन्म हुआ
विशोत्तरी के समान ही युक्त भोग्य दशा प्राप्त करने पर ००१०७११३९१८ भोग्य वर्षादि
प्राप्त हुए।

अथ योगिनीदशाचक्रम्

| सि. | स | म | पि | ध | भ्रा | म | उ | योगिन्य |
|------|------|------|------|------|------|------|------|---------|
| ० | ८ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | २९ |
| ७ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ११ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ३९ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १८ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १९०० | १९०१ | १९०२ | १९१० | १९१२ | १९१५ | १९१९ | १९२४ | १९३० |
| १० | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ |
| ४ | १५ | १५ | १५ | १५ | १५ | १५ | १५ | १५ |
| १४ | ५३ | ५३ | ५३ | ५३ | ५३ | ५३ | ५३ | ५३ |
| २२ | ४० | ४० | ४० | ४० | ४० | ४० | ४० | ४० |

अथ पिडांशनैसर्गिकाष्टकवर्गचतुर्णामायुः परिदशामाह

पैडघाशनैसर्गिदशामायुः परिविचितयेत् ॥ तथा ह्यष्टकवर्गं च विजानीहि द्विजोत्तम ॥५॥

पिडादि चतुर्विध दशा

पिडायु, अशायु, नैसर्गिकायु तथा अष्टकवर्गायु इन चार प्रकार की दशाओं से आयु का विचार करे ॥५॥ इनके उदाहरण आगे कहेंगे।

अथ संध्यादशामाह

परायुर्द्वादशोभाग स्फुट सध्या भवेत्तत ॥ स्वल्पस्य दशाच्चादौ ततोऽन्येषु गृहेषु च ॥६॥

सध्यादशा

परमायु (१२०) वर्ष का जो बारहवा भाग है वह सध्या दशा का भोगकाल है और प्रथम लग्न की दशा उसके बाद क्रमशः दशा जानना ॥६॥

सन्ध्यादशाचक्रम्

| १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
|------|------|------|------|------|------|------|------|------|----|----|----|
| १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० | १० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| २००० | २०१० | २०२० | २०३० | २०४० | २०५० | २०६० | २०७० | २०८० | | | |
| ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | | | |
| ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | ४ | | | |

अथ पाचकदशामाह

सध्या रसगुणा कार्या चद्रवह्निहृता फलम् ॥ सत्पाप्य प्रथमे कोष्ठे हृदमर्द्धत्रिकोष्ठे ॥७॥
त्रिभाग वसुकोष्ठेषु तिलेद्विद्वान्प्रयत्नत ॥ एव द्वादशमाखेषु पाचकानि प्रवक्ष्येत् ॥८॥

पाचकदशा

सध्यादशा के बर्षादि मान को ६ से गुणा करने ३१ वा भाग देने पर जो फल प्राप्त हो वह प्रथम कोष्ठक में रखे। बाद उसका आधा २ भाग आने में ३ कोष्ठों में और तीसरा भाग बाकी के ८ कोष्ठों में रखने से पाचकदशा होती है ॥७॥८॥

महादशा फलकथनाध्याय

श्रीपराशरजी ने कहा—सूर्यनारायण को नमस्कार करके तथा सब चराचर जगत के स्वामी, सबके हृदयदेश में (साक्षी रूप से) रहनेवाले तेजस्वरूप पार्वती पति श्री पशुपति तथा कल्याणकारी शम्भु को प्रणाम करके तीनों लोकों की उत्पत्ति स्थिति तथा नाश करनेवाले भगवान् विष्णु को नमस्कार करके महेश्वर की कृपा से दाय (दशा) के फलप्रकाश प्रकरण कहते हैं॥१॥

अथ विंशोत्तरीपञ्चविधांतरमाह

अथ वक्ष्ये खगेशाना भुक्ति पञ्चविधामहम् ॥ दशा चातर्दशाचैव तत्तदतर्दशा तथा ॥२॥ सूक्ष्मभुक्तिप्राणदशाप्येव पञ्च दशा स्मृता ॥३॥ मार्तण्डेन्दुकुजाहिजीवशनिवित्केतु सितोते क्रमात्पद्मशक्तिर्मुनयो धृतिर्धरणिपा एकोनिता विशति ॥ अत्यष्टिर्मुनयो नखा इति विदुर्नाया इमे खेचरा सप्तार्च्यर्मविश्वमादिनयकर्षाणां दिनेसादय ॥४॥

विंशोत्तरी दशा के पांच प्रकार—

अब हम सूर्यादि ग्रहों के पांच प्रकार भोगकाल कहते हैं। महादशा, अतर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, सूक्ष्मदशा, प्राणदशा॥२॥३॥ क्रम से सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक ये विंशोत्तरी दशा के स्वामी हैं। तथा दशा के वर्ष सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ६, १०, ७, १८, १६, १९, १७, ७, २०। ये दशा वर्ष हैं। कृतिका रोहिणी, मृगशिरा आदि नक्षत्रों पर तीन बार आवृत्ति करने से उपर्युक्त दशासप्तति ग्रह ज्ञात होगा॥४॥

अथ विंशोत्तरीमहादशावर्षनक्षत्राणि

| सू | च | म | रा | बु | श | गु | के | शु | ग्रहा |
|-----|----|----|------|----------|-------|-------|-------|----------|------------|
| ६ | १० | ७ | १८ | १६ | १९ | १७ | ७ | २० | वर्षाणि |
| कृ | रो | मृ | आ | पु | पुष्य | आश्ले | म | पूर् | इमानि- |
| उ | ह | चि | स्वा | वि | अशु | ज्ये | मू | पूर्वाषा | नक्षत्राणि |
| उषा | म | घ | श | पूर्वाभा | उषा | रेवती | अश्वि | भरणी | |

अथ भुक्तभोग्यानयनमाह

स्फुटतरो हिमगुः कलिकात्मकः खलगाजैर्विभजेद्गतश्रवणम् ॥ तदुदुवर्षगुणं च समारिखलगाजैर्विभजेत्कलमत्र च ॥५॥

दशाभुक्त योग्य साधन

जन्मकालीन स्पष्ट चन्द्रमा को घटयात्मक करके ८०० का भाग देने से सन्ध गतनक्षत्र प्राप्त होगा। शेषांक से दशावर्ष गुणा कर पुन ८०० का भाग देने से वर्ष, मास, दिन, घटी, पलरूप भुक्त दशा प्राप्त होगी। उसको दशा के वर्ष में घटाने से भोग्यदशा प्राप्त होगी॥५॥

अथ सूर्यस्य दशावर्षाणि ६ तत्फलम्

सूर्योत्कृष्टदशा करोति सुतधीप्रजाधिकारोच्छ्रयज्ञानार्थागमकीर्तिवीर्यसुखप्राप्तीश्वरानुग्रहान् ॥ भानोपापदशा करोति विफलोद्योगार्थहान्यामयाज्ञाजलोभमहीशकोपजनकारिष्ठाग्निबाधो-
दयान् ॥६॥ भूतत्रिकोणे स्वक्षेत्रे स्वोच्चै वा परमोच्चगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभस्ये
भाग्यकर्माधिपैर्युते ॥ दस सूर्य समायुक्ते रघी वर्गे बलैर्युते ॥ तस्मिन्दाये महासौख्य
धनलामादिक शुभम् ॥७॥ अत्यन्त राजसम्मानमश्वादोल्यादिक शुभम् ॥ सुताधिपसमायुक्ते
पुत्रलाभ च विवति ॥८॥ धनेशस्य च सद्ये गजातैर्भयमादिरोत् ॥ बाहनाधिपसद्ये
बाहनप्रपलाभकृत् ॥९॥

सूर्य दशाफल वर्ष ६

सूर्य की श्रेष्ठ दशा हो तो पुत्र प्राप्ति, धेष्ठ वृद्धि, अच्छे अधिकारो की प्राप्ति ज्ञान का उदय, धनप्राप्ति यश विस्तार, पौरुष वृद्धि, सुख प्राप्ति और ईश्वरानुग्रह होता है। और यदि सूर्य की पापदशा हो तो मनोरथ की विफलता उद्योग और धन की हानि अनेक रोगों की उत्पत्ति, राजलोभ, परिवार कलह, पिता को अरिष्ट अग्नि बाधा आदि उपद्रव होते हैं॥६॥ सूर्य अपने मूल त्रिकोण में अपनी राशि में उच्च में अथवा परमोच्च में केन्द्र त्रिकोण या लाभ में स्थित हो और भाग्येश अथवा दशमेश स युक्त हो तथा बलवान् हो एव अपने वर्गों में हो तो उसकी दशा में महान् सुख और पूर्वोक्त धन लाभ आदिक होते हैं॥७॥ और विशेष करके राजकुल में सम्मान, घोड़ा मोटर आदि की सवारी प्राप्त होती है। यदि सूर्य पञ्चमेश से युक्त हो तो मुग्धोत्सव होता है॥८॥ यदि धनेश से सम्बन्ध हो तो विशेष ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। यदि बाहनेश से सम्बन्ध हो तो कम में कम ३ सवारी होती है॥९॥

नृपालतुष्टिर्विस्तारद्वय सेनाधीश मुखी नर ॥ वस्त्रबाहनलाभश्च इति दामे रघी बली ॥१०॥ नीचे पदपटके रिखे दुर्बले पापसयुते ॥ राहुकेतुसमायुक्ते दुःस्थानाधिपसयुते ॥११॥ तस्मिन्दाये महापीडा धनधान्यविनाशकृत् ॥ राजकोप प्रवास च राजदंड धनसमम् ॥१२॥ ज्वरपीडा यशोहानिर्बन्धुमित्रविरोधकृत् ॥ प्रवास रोगचिद्वेषो हृणपृथुभय भवेत् ॥१३॥ चौराहिषणमीतिश्च ज्वरबाधा भविष्यति ॥ मित्रसयमय चैव गृहे त्वनुभवेव च ॥१४॥ पितृवर्गे मनस्ताप जननैव च विवति ॥ शुभदृष्टियुते सूर्य मध्ये तस्मिन्व्यवित्सुतम् ॥ पापग्रहेण सद्ये वदेत्पापफल नरः ॥१५॥

और राजा की प्रसन्नता विशेष धन लाभ या मेना पत्नित्व, उत्तम वस्त्र आदि लाभ होता है

और मनुष्य सुखी रहता है। (यह तो उत्तम फल कहा अब अधम फल कहते हैं) ॥१०॥ सूर्य नीच का हो, ६।८।१२ वे स्थानों में हो, बलहीन और पापग्रहयुक्त हो अथवा राहु-केतु से युक्त हो या त्रिपढाय के स्वामी से युक्त हो ॥११॥ तो उस दशा में महान् पीडा, धनधान्य का नाश, राजकोप और प्रवास, राजदण्ड, ज्वरपीडा, अपकीर्ति, बन्धु और मित्रों से विरोध तथा अपमृत्यु का भय होता है ॥१२॥१३॥ चौर, सर्प, घाव का भय, पिता के मरने का भय, घर में अशुभ कार्य, पितृवर्ग में चिन्ता तथा परिवार में कलह होती है ॥१४॥ सूर्य पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो कुछ सुख। पापग्रहों की दृष्टि हो तो अधिक दुःख होता है ॥१५॥

अथ चंद्रस्य महादशावर्षाणि १० तत्फलम्

चन्द्रोत्कृष्टदशा करोति जननीश्रेयस्तटागादिक क्षेत्रारामगृहासनद्विजवरश्रीशोभनादोलिका ॥ इन्दो पापदशान्नहीनकृपणानतार्थनारायणप्रज्ञाहीनशुभपुत्रमातृमरणलोभातिशोतन्वरात् ॥१६॥ स्योच्चे स्वक्षेत्रगे धैव केद्रे लाभत्रिकोणगे ॥ शुभग्रहेण सयुक्ते वृद्धिचन्द्रबलेयुते ॥१७॥ कर्मभागाधिपे चद्रे बाहनीये बलेयुते ॥ आद्यतेश्वोरभाग्येशधनधान्यादिलाभकृत् ॥१८॥ गृहे तु शुभकार्याणि वाहन राजदर्शनम् ॥ यत्नकार्यसिद्धिः स्याद्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥१९॥ मित्रप्रभुवशाद्भान्य राज्यलाभ महत्सुखम् ॥ अन्धादोल्पादिलाभ च श्वेतवस्त्रादिलाभकृत् ॥२०॥ पुत्रलाभादिसतोष गृहेगोधनसकुलम् ॥ धनस्थानगते चद्रे तुगे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥२१॥ अनेकधनलाभ च भाग्यवृद्धिर्महत्सुखम् ॥ निक्षेपराजसन्मान विद्यालाभ च विदति ॥२२॥

चन्द्रदशा फल वर्ष १०

चन्द्रमा की श्रेष्ठ दशा हो तो माता को सुख, मवान वाग-वगीचा, तलाव आदि, ममाज में श्रेष्ठता, उत्तम सवारी आदि प्राप्त होती है। चन्द्रमा की पापदशा हो तो धन हीनता, कृपणता, बहुधननाश, रोग विकर्तव्यबिमूढता निन्दा मातृ मरण, दुःख, शीतज्वर आदि होता है ॥१६॥ (विशेष रूप से फल) चन्द्रमा यदि उच्च में अपनी राशि में, मूल त्रिकोण आदि में, केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो और शुभ ग्रह से युक्त हो, बलवान तथा शुक्ल पक्ष का हो, अथवा ९वे दशवे का मानिव हो अथवा बलवान् शुभग्रह से युक्त हो तो उसकी दशा में भाग्य की बहुत वृद्धि होती है, धन-धान्य का लाभ होता है ॥१७॥१८॥ और घर में विवाह आदि शुभ कार्य होते हैं। वाहन वा लाभ होता है। राज दर्शन, उद्योग की सिद्धि, मनोरथ सिद्धि, घर में लक्ष्मी की चकाचौध रहती है। मित्र या स्वामी की कृपा में भाग्य वृद्धि राज्य में लाभ तथा महान् सुख होता है। घोडा, मोटर आदि मवागी प्राप्त होती है ॥१९॥२०॥ पुत्र लाभ होता है। और यदि चन्द्रमा उच्च राशि का या स्वक्षेत्री होकर धन स्थान में हो ॥२१॥ तो अनेक धन का लाभ, भाग्य वृद्धि, महान् सुख विद्या लाभ, अवस्थात् विशेष धन की प्राप्ति तथा राज सम्मान होता है ॥२२॥

नीचे वा क्षीणचद्रे वा धनहानिर्भविष्यति ॥ दुश्चिन्त्ये बलसयुक्ते स्वचित्मोष्य स्वचिद्वनम् ॥२३॥ दुर्वले पापसयुक्ते देहजादय मनोरजम् ॥ मृत्यपीडा वित्तहानिर्मानुषवर्गजनदण्ड

॥२४॥ पण्डितमव्यये चद्रे दुर्बले पापसमुते ॥ राजद्वेषो मनोदुःख घनघान्यादिनाशनम् ॥२५॥
मातृबलेश मनस्ताप देहजाड्य मनोरुजम् ॥ दुःखे चद्रबलैर्युक्ते क्वचित्ताम क्वचित्सुखम् ॥
देहजाड्य क्वचिच्चैव शात्ययेन विनाशनम् ॥२६॥

चन्द्रमा नीच राशि का या क्षीण हो तो धन हानि होती है। तीसरे भाव में यदि बलवान् होकर स्थित हो तो कभी सुख कभी धन होता है ॥२३॥ चन्द्रमा बल रहित, पापग्रह से युक्त हो तो बरीर में बात व्याधि, मन में चिन्ता, नौकर द्वारा धन हानि मातृ वर्ग की मृत्यु होती है ॥२४॥ चन्द्रमा ६।८।१२ वे स्थान में बलरहित तथा पापग्रह युक्त हो तो राजद्वेष, मन में दुःख, घनघान्य का नाश ॥२५॥ माता को बलेश, देह में जडता आदि फल होता है। बलवान् चन्द्रमा यदि तीसरे भाव में हो तो कभी २ लाभ तथा तथा देह में जडता होती है। शान्ति करने से सुख होता है ॥२६॥

अथ कुजदशावर्षाणि ७ तत्फलम्

भौमोक्तदशा करोति वसुधाप्राप्ति धनस्यागमान्प्रजास्वच्छमन पराक्रमदधत्यारिख्यान्या-
नुजान् ॥ पापो भौमरुजार्तिद च कल्ह चौराग्रिबधवणमक्षिणीणमहोशपीडनरजः क्षोभसति
दास्यति ॥२७॥ परमोच्चगते भौमे स्वोच्चे मूलत्रिकोणे ॥ स्वर्षे केन्द्रत्रिकोणे वा लाभे वा
धनगोत्रि वा ॥२८॥ सपूर्णबलसमुक्ते शुभदृष्टे शुभाशके ॥ राज्यलाभ भूमिलाभ धनघान्या-
दिलाभकृत् ॥२९॥ आधिक्य राजसन्मान वाहनावरभूषणम् ॥ विदेशे स्थानलाभ च
सोवराणां सुख लभेत् ॥३०॥ केन्द्र गते सवा भौमे दुःश्रिक्ये बलसमुते ॥ पराक्रमाद्विह्वलाभो
युद्धे शत्रुजयो भवेत् ॥३१॥ कलत्रपुत्रविभव राजसन्मानमेव च ॥ दशादौ सुखमाप्नोति दशाते
कष्टमादिशेत् ॥३२॥ नीचादिदुःस्थगे भौमे वलावलविवर्जिते ॥ पापयुक्ते पापदृष्टे सा दशा
नेष्टदायिका ॥३३॥

भौम दशाफल वर्ष ७

मंगल की श्रेष्ठ दशा हो तो भूमि की प्राप्ति, धन का आगमन, सुबुद्धि चिन्तारहित मन, पराक्रम का उदय, भाइयों से लाभ आदि फल होते हैं। यदि मंगल पापी हो तो रोग और कष्ट देनेवाला तथा बलह, चोरी, अग्नि, कैद, घाव, दृष्टि मन्दता, राजा में पीडा क्रोध आदि होते हैं ॥२७॥ मंगल उच्च का या परमोच्च वा अथवा मूल त्रिकोण में, स्वगृही केन्द्र त्रिकोण, लाभ या धन स्थान में हो ॥२८॥ सम्पूर्ण बलयुक्त हो, शुभग्रह से दृष्ट हो, शुभ नवाश में हो तो बहुत भूमि लाभ, राजा से लाभ, धन लाभ, ऐश्वर्य वृद्धि ॥२९॥ अधिक राज सम्मान, मवागी, वस्त्र, भूषण, तालाव विदेश में भूमि, मकान का लाभ, भाइयों का सुख होता है ॥३०॥ मंगल बलवान् होकर केन्द्र या तीसरे भाव में हो तो अपने उद्योग से धन का लाभ, युद्ध में शत्रु में जय होती है ॥३१॥ स्त्रीपुत्र म सुख तथा राज में सम्मान होता है। दशा के आदि म मुख परन्तु अन्त में कष्ट होता है। मंगल यदि नीच वा, ६।८।१२ वे हो, बलरहित हो, पापयुक्त या दृष्ट हो तो नेष्ट फल होता है ॥३२॥३३॥

अथ राहुदशावर्षाणि १८ तत्फलम्

राहुत्कृष्टदशा करोति सकलश्रेयो महद्वाज्यकुटुम्भार्यागमपुण्यतीर्थचलनज्ञानप्रभावोच्छ्रयान् ॥
 राहो पापदशा हि भीतिविषमो सर्वांगरोगार्तिकृच्छराघातविरोधवृक्षपतनमारातिषोडो-
 दयान् ॥३४॥ राहोस्तु वृषभकेतोर्वृश्चिकतुलसप्तकम् ॥ मूलत्रिकोणकर्कच युग्मचाप तथैव च
 ॥३५॥ कन्या च स्वगृह प्रोक्त मीन च स्वगृह स्मृतम् ॥ तद्वाप्ये बहुसौख्यं च धनधान्यादि-
 सपदाम् ॥३६॥

राहु दशाफल वर्ष १८

राहु की श्रेष्ठ दशा महान् कल्याणकारी राज्यवृद्धि धनप्राप्ति धर्म वृद्धि, तीर्थयात्रा
 ज्ञान और प्रभाव की उन्नति करता है। राहु की पापदशा भय तथा सर्वांग रोग कष्ट अस्त्र से
 घात, विष से भय स्वजन विरोध वृक्ष स गिरना शत्रु स पीडा आदि नेष्ट फल कारक
 है ॥३४॥ (विशेष फल) राहु का वृष राशि उच्च तथा कर्क राशि मूल त्रिकोण है। केतु का
 वृश्चिक राशि उच्च और मिथुन राशि मूल त्रिकोण है। और राहु का कन्या राशि और केतु
 का मीन राशि स्वगृहि है। राहु की श्रेष्ठ दशा में बहुत सुख धन-धान्य का लाभ होता
 है ॥३५॥३६॥

मित्रप्रभुवशादिष्ट वाहन पुत्रसम्भव ॥ नूतनगृहनिर्माण धर्मचितामहोत्सव ॥३७॥
 विदेशराजसन्मान वस्त्रालकारभूषणम् ॥ शुभयुक्ते शुभेदृष्टे योगकारकसमुत्ते ॥३८॥ केन्द्रत्रि-
 कोणलाभे वा वृश्चिक्ये शुभराशिगे ॥ महाराजप्रसादेन सर्वसपत्सुखावहम् ॥३९॥ यवनप्रभुस-
 न्मान गृहे कल्याणसम्भवम् ॥ रधे वा व्ययगे राही तद्वाप्ये कष्टदो भवेत् ॥४०॥ पापग्रहेण
 सबधे मारकग्रहसमुत्ते ॥ नीचराशिगते वापि स्थानभ्रश मनोरुजम् ॥४१॥ विनश्येद्द्वारपुत्राणां
 कुत्सितताना च भोजनम् ॥ दयादौ देहपीडा च धनधान्यपरिच्युति ॥४२॥ दशामध्ये तु सौख्यं
 स्यात्स्वदेशे धनलाभकृत् ॥ दशाते कष्टमाप्नोति स्थानभ्रशो मनोव्यया ॥४३॥

राहु की श्रेष्ठ दशा में मित्र वा स्वामी के द्वारा मनारथ मिद्धि वाहन का लाभ पुत्रोत्पत्ति
 नये मकान का बनाना धार्मिक कार्य करना विवाहादि उत्सव होते है ॥३७॥ विदेश यात्रा
 राज सम्मान, अस्त्राल कार भूषणादि की प्राप्ति और यदि शुभ ग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो
 राज्ययोग बारक ग्रह स युक्त हो ॥३८॥ केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो, तीसरे स्थान में वा
 शुभग्रह की राशि में हो तो राजा अथवा बड़े आदमी के सम्पर्क में बहुत लाभ हो। यवन जनि
 स लाभ हो घर में कल्याण हो ॥३९॥ आठवें या बारहवें स्थान में हो तो कष्टदायी होता
 है ॥४०॥ पापग्रह स सम्बन्ध हो या मारक ग्रह स युक्त हो, नीच राशि में हो तो स्थान हानि
 सम्पत्ति हानि, मन में घोर चिन्ता स्त्री पुत्र का नाश, हीन भोजन प्राप्त होता है। तथा दशा
 की आदि में दह पीडा धन धान्य का नाश होता है ॥४१॥४२॥ दशा के मध्य में सुख अपन दश
 में ही धन लाभ होता है। अन्त में कष्ट स्थान हानि, चिन्ता होती है ॥४३॥

अथ गुरुमहादशावर्षाणि १६ तत्फलम्

जीवौत्कृष्टदशा करोति विपुलश्रामाधिकारात्मजश्रीसौभाग्यगुणकराश्रितजनाद्यांदोलिकावैभवं ॥ जैव्या पापदशा महीश्वरभयाद्वाधाधि च धैर्यच्युतिं धान्यानर्थमहीमुसार्तिजनकलोभाश-
नार्तिक्षयान् ॥४४॥ स्वोच्चे स्वप्नेत्रगे जीवे केद्रे लाभत्रिकोणपे ॥ मूलत्रिकोणलाभे वा तुंगाशे
स्वांशगेऽपि वा ॥४५॥ राज्यलाभं महत्सौख्यं राजसन्मानकीर्तनम् ॥ गजवाजिसमायुक्तं
देववाह्यपूजनम् ॥४६॥ दारपुत्रादिसौख्यं च वाहनांबरलाभगम् ॥ यज्ञादिकर्मसिद्धिः
स्याद्देवांतश्रवणादिकम् ॥४७॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ आंदोलिकादितामश्च
कल्याणं च महत्सुखम् ॥४८॥ पुत्रदारादिलाभश्च अन्नदानं महत्प्रियम् ॥ नीचास्तपापसंयुक्ते
जीवे रिष्काष्टसंयुक्ते ॥४९॥ स्थानभ्रंशं मनस्तापं पुत्रपीडामहद्भयम् ॥ पश्चादिघनहानिश्च
तीर्थयात्रादिकं लभेत् ॥५०॥ आदौ कष्टफलं चैवं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ मध्यांते
सुखमाप्नोति राजसन्मानवैभवम् ॥५१॥

गुरु महादशा फल वर्ष १६

बृहस्पति की श्रेष्ठ दशा में विपुल धन लाभ, अधिकार प्राप्ति, पुत्रप्राप्ति, सौभाग्य वृद्धि, गुणों का उदय, अनेक नौकर, मोटर आदि सवारी बहुत विभव होता है। और पाप दशा में राजभय, व्याधि, धैर्य, हानि, धन हानि, पृथ्वी और पुत्र की हानि, पिता को कष्ट, चोरी आदि का भय होता है ॥४४॥ (विशेष फल) बृहस्पति उच्च का या स्वगृहि होकर केन्द्र, लाभ या त्रिकोण में हो, मूल त्रिकोण में या उससे लाभ में हो अथवा परमोच्च हो या अपने नवमाश में हो तो ॥४५॥ राज्य से लाभ, महान् सुख, सम्मान और कीर्ति, हाथी, घोड़े आदि सवारी, देव-वाह्यण की पूजा, स्त्री-पुत्र का सुख, वज्र आदिक श्रेष्ठ कर्म, वेदान्त ज्ञान का श्रवण होता है ॥४६॥४७॥ महाराज की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। मोटर आदि सवारी का लाभ। घर में कल्याण और सुख होता है। स्त्री पुत्र का लाभ होता है। अन्न आदिक का दान होता है ॥४८॥ बृहस्पति नीच का, अस्त या पापग्रह युक्त हो, ८।१२ वे स्थान में हो तो स्थान हानि, चिन्ता, पुत्र-पीडा, महान् भय, धन-हानि, तीर्थ यात्रा आदि होती है ॥४९॥५०॥ गुरुदशा में पहले कुछ कष्ट, मध्य और अन्त में लाभ, सुख, राज सम्मान और वैभव होता है ॥५१॥

अथ शनिमहादशावर्षाणि १९ तत्फलम्

मदौत्कृष्टदशा करोति विम्वप्रज्ञानयत्नादिकक्षेत्रग्रामपुरादिनायक्यदृष्ट्यापारदसोत्सुकान् ॥ मन्दः पापविषप्रयोगधनहृद्देहार्तिव्यर्थोदयान् राजक्रोधविरुद्धकार्यविकलोद्योगपीडोदयान् ॥५२॥ स्वोच्चे स्वप्नेत्रगे भन्दे मित्रसेत्रेऽप्य वा यदि ॥ मूलत्रिकोणभागे वा तुङ्गाशे
स्वांशगेऽपि वा ॥५३॥ दुश्चिक्ये लाभगे चैव राजसन्मानवैभवम् ॥ सत्कीर्तिर्धनलाभश्च
विद्यावादविनोदकृत् ॥५४॥

शनि महादशा फल वर्ष १९

शनि की श्रेष्ठ दशा में सम्पत्ति, ज्ञान यज्ञादि, ग्राम नगर आदि का नायक होना, व्यापार

वृद्धि आदि तथा उत्सव होते हैं। शनि की पापदशा में विप प्रयोग, धन की चोरी, देह में कष्ट, रोग, राजकोप, कार्य की विरुद्धता, उद्योग की हानि और शरीर पीड़ा होती है॥५२॥ (विशेष फल) शनि यदि उच्च वा, स्वगृही, मित्र क्षेत्री, मूल त्रिकोणी अथवा भाग्य स्थान में हो, परमोच्च या अपने नवमाश में हो, ३।११ वे स्थान में हो तो राज से सम्मान और विभूति की प्राप्ति हो। अच्छी कीर्ति या धन का लाभ हो। महाराज की कृपा से हाथी, घोड़ा भूषण का लाभ हो॥५३॥५४॥

महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ॥ राजयोग प्रकुर्वीत सेनाधीनान्महत्सुखम् ॥५५॥
लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभ करोति च ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत्॥५६॥
पष्ठाष्टमव्यये मदे नीचे वास्तगतेऽपि वा ॥ विपशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रश महद्द्वयम् ॥५७॥
पितृमातृविभोग च दारपुत्रादिपीडनम् ॥ राजवैयम्यकार्याणि ह्यनिष्ट बधन तथा ॥५८॥
शुभयुक्तेष्विते मदे योगकारकसमुते ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शतौ ॥५९॥
राज्यलाभ महोत्साह गजाश्वावरसकुलम् ॥६०॥

यदि शनि राजयोग करता हो तो सेनापति से सुख हो। घर में खूब लक्ष्मी हो तथा कल्याण, सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र लाभ आदिक होते हैं॥५५॥५६॥ शनि ६।८।१२ वे हो, नीच अथवा अस्त हो तो विप और शस्त्र से पीड़ा होती है। स्थान हानि और महान् भय होता है॥५७॥ माता-पिता का विभोग, स्त्री-पुत्र को पीड़ा होती है। राजकोप से अनिष्ट और बन्धन होता है॥५८॥ शनि शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होकर तथा राजयोग कारक ग्रह से समुक्त होकर केन्द्र या त्रिकोण में हो, मीन अथवा धनराशि में हो तो महान् उत्साहयुक्त हो और राज्य से बहुत बड़ा लाभ हो॥६०॥

अथ बुधमहादशावर्षाणि १७ तत्फलम्

सौम्योत्कृष्टदशा करोति यत्नानतादिधान्योच्छ्रयाञ्छ्रेय सौख्यगृहस्ववपुर्विजयप्राप्तीष्टव-
स्वागमान् ॥ बोध्या पापदशाविदेशगमन क्षोभ स्वबधुक्षय प्रजाहीनमतिर्धनार्तिकलह-
क्षेपार्यनाशपद ॥६१॥ स्वोच्चै स्वदोत्रसमुक्ते केद्रलाभत्रिकोणगे ॥ मित्रदोत्रसमायुक्ते सौम्ये
दाये महत्सुखम् ॥६२॥

बुधमहादशाफल वर्ष-१७

बुध की श्रेष्ठ दशा में सुन्दर वस्त्र, अनन्त धान्यराशि प्राप्ति, बल्याण सुख स्वजन परिवार सुख, विजय प्राप्ति, इष्ट वस्तु की प्राप्ति आदि फल होता है। तथा नेष्ट दशा में विदेश यात्रा, दुःख, बन्धुक्षय, बुद्धिहीनता धनक्षय कष्ट आपत्ति, बन्धु भूमि तथा धन का नाश होता है॥६१॥ बुध उच्चराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र या त्रिकोण में अथवा लाभस्थान में हो, मित्रक्षेत्र में स्थित या युक्त हो तो दशा में महान् सुखा॥६२॥

धनधान्यादिलाभ च सत्कीर्तिधनसपदाम् ॥ ज्ञानाधिक्य नृपप्रीति सत्कर्मगुणवर्द्धनम् ॥६३॥
 पुत्रदारादि सौख्य च देहारोग्य महत्सुखम् ॥ क्षीरेण भोजन सौख्य व्यापारेण धनागमम्
 ॥६४॥ शुभदृष्टियुते सौम्ये भाग्ये कर्माधिपे यदा ॥ आधिपत्ये बलवती सपूर्णफलदायिका
 ॥६५॥ पापग्रहयुते वृष्टे राजद्वेष मनोरुजम् ॥ बधुजन विरोध च विदेशगमन तथा ॥६६॥
 परप्रेष्य च कलह मूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥ पष्ठाष्टमव्यये सौम्ये लाभभोगार्थनाशनम् ॥६७॥
 वातपीडा धन चैव पाण्डुरोग तथैव च ॥ नृपचौराग्निमीति च कृपिगोभूतिनाशनम् ॥६८॥
 दशादौ धनधान्य च विद्यालाभ महत्सुखम् ॥ पुत्रकल्याणसंपत्ति सन्मार्गे धनलामकृत् ॥६९॥
 मध्ये नरैर्द्रसन्मानमते दुःख भविष्यति ॥७०॥

धनधान्यलाभ, सत्कीर्ति, धन, सम्पत्ति की प्राप्ति, ज्ञानवृद्धि, राजप्रीति, सत् कर्म तथा गुण की वृद्धि होती है ॥६३॥ स्त्री पुत्र का सुख, देह की आरोग्यता, क्षीरभोजन, सौख्य तथा व्यापार से लाभ होता है ॥६४॥ बुध शुभ ग्रह की दृष्टि से युक्त होकर भाग्यस्थान में या दशमेश से युक्त हो। अथवा नवम-दशम का स्वामी हो तो फल पूर्ण होता है ॥६५॥ यदि बुध पापयुक्त अथवा दृष्ट हो तो राजद्वेष, मन में चिन्ता बन्धुओं से विरोध विदेश यात्रा होती है ॥६६॥ दूसरे की नौकरी, कलह, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी होती है। ६८/१२ भाव में हो तो लाभ, सुख तथा धन का नाश करता है ॥६७॥ वातरोग, पाण्डुरोग, राजा चोर अग्नि से भय, खेती गौ भूमि का नाश होता है ॥६८॥ दशा के आदि में-धन विद्या का लाभ, महान् सुख, पुत्र-प्राप्ति तथा घर में कल्याण, सम्पत्ति, सन्मार्ग प्रवृत्ति, धन का लाभ होता है ॥६९॥ दशामध्य में राजसन्मान प्राप्त होता है और अन्त में दुःख होता है ॥७०॥

अथ केतुभुक्तिमहादशावर्षाणि ७ तत्फलम्

केतुकृष्टदशा करोति विजयकूरक्रियार्थागम स्नेच्छश्मापतिलब्धभाग्यकवनप्रारमशव्रतयान्
 ॥ केतो। पापदशातिकष्टविकलानर्थक्रियायोगहृच्छूलास्थिज्वरकपनद्विजनद्वेषातिमूर्खक्रियान्
 ॥७१॥ केद्वलाभत्रिकोणे वा शुभराशि शुभेक्षिते ॥ स्वोच्चे वा शुभवर्गे वा राजप्रीति
 मनोरुजम् ॥७२॥ देशप्राप्ताधिपत्य च बाहन पुत्रसम्भयम् ॥ देशांतरप्रयाण च अन्यदेशे
 मुक्तावहम् ॥ ७३॥ पुत्रदारसुख चैव चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ दुश्चिक्ये पष्टलाभे वा केतुदये-
 सुख भवेत् ॥७४॥ राज्य करोति मित्रास गजवाजिसमन्वितम् ॥ दशादौ राजयोगाश्च
 दशामध्ये महद्भयम् ॥७५॥ अते दूरगमन चैव देहविधमन तथा ॥ धने रघ्रे व्यये केतो
 पापदृष्टियुतेक्षिते ॥७६॥ निगड बधुनाश च स्थानभ्रस मनोरुजम् ॥ शूद्रगुन्यादिलाभ च
 नानारोगाकुल भवेत् ॥७७॥

केतुदशा फल वर्षा

केतु की श्रेष्ठदशा में विजय, कूर कर्म से धनप्राप्ति यवन या स्नेच्छराज से भाग्यवृद्धि और शत्रुनाश होता है। केतु की पापदशा में अतिकष्ट विकल मनोरथ धनप्राप्ति के योग की हानि, शूलरोग, अस्थिज्वर कपनरोग, ब्राह्मणद्वेष, तथा अति मूर्खता होती है ॥७१॥ केतु यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में शुभराशि में शुभग्रह दृष्ट हो और स्वोच्च में या शुभवर्ग में हो तो राज में

वृद्धि आदि तथा उत्सव होते हैं। शनि की पापदशा में विप प्रयोग, धन की चोरी, देह में कष्ट, रोग, राजकोप, कार्य की विरुद्धता, उद्योग की हानि और शरीर पीड़ा होती है॥५२॥ (विशेष फल) शनि यदि उच्च का, स्वगृही, मित्र क्षेत्री, मूल त्रिकोणी अथवा भाग्य स्थान में हो, परमोच्च या अपने नवमाश में हो, ३।११ वे स्थान में हो तो राज से सम्मान और विभूति की प्राप्ति हो। अच्छी कीर्ति या धन का लाभ हो। महाराज की कृपा से हाथी, घोड़ा भूषण का लाभ हो॥५३॥५४॥

महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ॥ राजयोग प्रकुर्वीत सेनाधीशान्महत्सुखम् ॥५५॥
लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभ करोति च ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत्॥५६॥
षष्ठाष्टमव्यये मदे नीचे वास्तगतेश्चि वा ॥ विपशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रश महद्भयम्
॥५७॥ पितृमातृवियोग च दारपुत्रादिपीडनम् ॥ राजवैषम्यकार्याणि ह्यनिष्ट बधन तथा
॥५८॥ शुभयुक्तेक्षिते मदे योगकारकसमुत्ते ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शनौ ॥५९॥
राज्यलाभ महोत्साह गजाश्वावरसकुलम् ॥६०॥

यदि शनि राजयोग करता हो तो सेनापति से सुख हो। घर में खूब लक्ष्मी हो तथा कल्याण सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र लाभ आदिक होते हैं॥५५॥५६॥ शनि ६।८।१२ वे हो, नीच अथवा अस्त हो तो विप और शस्त्र से पीड़ा होती है। स्थान हानि और महान् भय होता है॥५७॥ माता-पिता का वियोग, स्त्री-पुत्र को पीड़ा होती है। राजकोप से अनिष्ट और बन्धन होता है॥५८॥ शनि शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होकर तथा राजयोग कारक ग्रह से समुक्त होकर केन्द्र या त्रिकोण में हो मीन अथवा धनराशि में हो तो महान् उत्साहयुक्त हो और राज्य से बहुत बड़ा लाभ हो॥६०॥

अथ बुधमहादशावर्षाणि १७ तत्फलम्

सौम्योत्कृष्टदशा करोति वसनानताविधान्योच्छ्रयाञ्छ्रेयः सौख्यगृहस्ववभुविजयप्राप्तीष्टव-
स्वागमान् ॥ बोध्या पापदशाविदेशगमन क्षोभ स्ववधुक्षय प्रशाहीनमतिर्धनार्तिकतह-
क्षेत्रार्थनाशपद ॥६१॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रसमुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणे ॥ मित्रक्षेत्रसमायुक्ते सौम्ये
दाये महत्सुखम् ॥६२॥

बुधमहादशाफल वर्ष-१७

बुध की श्रेष्ठ दशा में सुन्दर वस्त्र, अनन्त धान्यराशि प्राप्ति, बल्याण सुख, स्वजन परिवार सुख, विजय प्राप्ति, इष्ट वस्तु की प्राप्ति आदि फल होता है। तथा नेष्ट दशा में विदेश यात्रा, दुःख, बन्धुक्षय, बुद्धिहीनता धनक्षय, बन्ध आपत्ति, बलह भूमि तथा धन का नाश होता है॥६१॥ बुध उच्चराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र या त्रिकोण में अथवा लाभस्थान में हो, मित्रक्षेत्र में स्थित या युक्त हो तो दशा में महान् सुख॥६२॥

तो आत्मीय स्वजनो से द्वेष स्त्री आदि को पीडा हो, व्यापार से होनेवाले फल की हानि गौ-मैस आदि का नाश॥८४॥ स्त्री-पुत्र को पीडा, आत्मीय-बन्धु से वियोग होता है। ९।१० का स्वामी होकर लग्न तथा तृतीय भाव में हो॥८५॥ तो शुक्र की दशा में महान् सुख एव देश या नगर का आधिपत्य, देवालय (देवमन्दिर) तालाब आदि धर्म कार्य में रुचि॥८६॥ अन्नदान हो तथा महान् सुख हो, नित्य मिष्टान्न भोजन हो। उत्साह की वृद्धि, कीर्ति, सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र धन सम्पत्ति हो॥८७॥ अपने अन्तर में तो उपर्युक्त फल होता है। अन्यान्य अन्तर अपना २ विशेष फल देते हैं। द्वितीय तथा सप्तम भाव का स्वामी हो तो देहपीडा होती है॥८८॥ उस दोष के नाश के लिए रुद्रपाठ या त्र्यम्बक मन्त्र का जप करे। तथा श्वेत वर्ण की गौ दूधवाली का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है॥८९॥

अथ द्वादशभावाधीशदशाफलमाह

लग्नेशस्य दशा बल बहुधन वित्तेशितु पचता कष्ट वेति सहोदरालयपते पाप फल प्राप्यश ॥
तुर्मस्वामिन आत्मय किञ्च मुताधीशस्य विद्यामुख रोगागारपतेररातिजमय जायापते शोक-
ताम् ॥९०॥ मृत्यु मृत्युपते करोति नित्य धर्मेशितु सत्क्रिया चित्त राजपतेर्नृपाश्रयमयी लाभ
हि लाभेशितु ॥ रोग द्रव्यविनाशन च बहुधा कष्ट व्ययेशस्य वै पूर्वैरगमृतामुदीरितमिद
तन्वादिभावेशजम् ॥९१॥ भावाधिपो बलपुतो निजगेहपामी तुङ्ग त्रिकोणशुभवर्गगतोपि पूर्णम्
॥ जतो फल खलु करोति यदारिनीचस्थानस्थितोऽशुभफल विबलो विशेषात् ॥९२॥ आहु
शुभा-शुभफल नृणा कालविदो जना ॥ एतद्धृत विनिर्णीतमायुषा निश्चयो नृणाम् ॥९३॥
पचमेशदशाया तु धर्मपस्य दशा तु या ॥ अतीव शुभदा प्रोक्ताकालविद्भिर्मुनीश्वरै ॥९४॥
समन्ननायस्य तपोधिपस्य दशा शुभा राज्यसुतप्रदा स्यात् ॥ सत्कीर्तिनायस्य सुखेश्वरस्य दशा
तथा प्राहुरदार चित्ता ॥९५॥ पचमेशेन युक्तस्य ग्रहस्य शुभदा दशा ॥ नाये धर्मपयुक्तस्य
दशा परमशोभना ॥९६॥

द्वादशभावाधीश दशाफल

लग्नेश की दशा आरीरिक्त बल देती है। धनेश की दशा शुभ हो तो धनदाता, अशुभ हो तो कष्ट और मृत्यु। तृतीयेश की दशा प्रायः नेष्ट फल दायक होती है। सुखेश की दशा में भूमि और मकान का विचार। पचमेश की दशा में विद्या सम्बन्धी और सतान सम्बन्धी विचार किया जाता है। षष्ठेश की दशा में शत्रु का भय तथा सप्तमेश की दशा में रोग और कष्ट का विचार होता है। अष्टमेशकी दशामें मृत्यु का विचार। नवमेशमें सत्कार्य का विचार। दशमेश से राज्य से लाभ का विचार। लाभेश से लाभ तथा व्ययेश की दशा में रोग धन हानि और कष्ट का विचार होता है। मनुष्यों के लिये इस प्रकार कुण्डली में १२ भावों के विचार करने योग्य पदार्थों का निर्णय किया है॥९१॥ किसी भी भाव का स्वामी बलवान् हो स्वगृही हो उच्च तथा त्रिकोण में अथवा शुभ वर्ग में हो तो सम्पूर्ण शुभ फल करता है। और यदि शत्रु राशि में, नीच राशि में तथा निर्बल हो तो अशुभ फलकारक है॥९२॥ और प्राचीन आचार्यों ने कहा है कि शुभग्रह प्रायः शुभ फल देते हैं। और आयु का भी निर्णय किया है॥९३॥ पचमेश और नवमेश की दशा बहुत श्रेष्ठ होती है, एसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है॥९४॥ पचमेश

प्रीति, मन मे चिता ॥७२॥ देश या ग्राम का आधिपत्य, सवारी, पुत्रोत्पत्ति, देशान्तर यात्रा, तथा अन्य देश मे सुख ॥७३॥ स्त्री पुत्र का सुख, गौ आदि का लाभ होता है ॥ ३६११ भाव मे हो तो केतुदशा मे सुख होता है ॥७४॥ राज्य समान वैभव, मित्र प्राप्ति, सवारी आदि प्राप्त होती है ॥ दशा के आदि मे राजयोग और मध्य मे महान् भय, अन्त मे दूर की यात्रा तथा देहकष्ट या मृत्यु होती है ॥७५॥ केतु यदि २१८।१२ मे हो और पापयुक्त तथा दृष्ट हो तो कैद, बन्धुनाश, स्थानहानि, चिन्ता, रोग और नीच जाति से लाभ होता है ॥७६॥७७॥

अथ शुक्रमहादशशवर्षाणि २० तत्फलम्

शौक्ली श्रेष्ठदशा करोति सुखसौभाग्योच्छ्रयादोलिकाऽष्टैश्वर्यैर्पुतधर्मबुद्धिकनकारामाश्रगीतो-
त्सवान् ॥ शौक्ली पापदशा क्लेशप्रभवकृद्ग्रीवार्थहानिप्रदा तिर्यग्जनुसामुत्थबोधयिपुलस्त्रीवर्गरोगो-
द्भवान् ॥७८॥ परमोच्चगते शुके स्वोच्चे स्वधेनकेदने ॥ नृपामिपेकसंप्राप्तिर्विहनाबरभूषणम्
॥७९॥ गजाश्वपशुलाभ च नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ अस्रद्धमङ्गलाधीशराजसन्मानवैभवम्
॥८०॥ मृदगवाद्यधोप च गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥ त्रिकोणस्थे मीनशुके राज्यायार्थगृहसपद ॥८१॥
विवाहोत्सवकार्याणि पुत्रकल्याणवैभवम् ॥ सेनाधिपत्यं कुरुते इष्टवधुसमागमम् ॥८२॥
नष्टराज्याद्धनप्राप्तिर्गृहे गोधनसप्रहम् ॥ पष्ठाष्टमव्यये शुके नीचे वा व्ययराशिने ॥८३॥

शुक्रमहादशा फल वर्ष २०

शुक्र की श्रेष्ठ दशा मे सुख सौभाग्य की उत्पत्ति मोटर आदि सवारी तथा अष्टविध ऐश्वर्य धर्मबुद्धि सुन्दर वागीचा घोडा आदियुक्त सवारी गीतोत्सव आदि श्रेष्ठ फल होता है ॥ शुक्र की पापदशा मे स्त्री-पुत्र से भय नीचसग स धनहानि पशु आदि से भय तथा स्त्रीवर्ग को रोग आदि नेष्ट फल होता है ॥७८॥ शुक्र उच्च या परमोच्च मे या स्वधेन मे होवर केन्द्र मे हो तो राजकुलोत्पन्न को राज्यप्राप्ति होती है ॥ वाहन, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते है ॥७९॥ हाथी-घोडे आदि पशुओं का लाभ होता है ॥ नित्य सुन्दर भोजन और अलण्ड मण्डल (जिना) का अधीशत्व तथा राजा से सन्मान और वैभव प्राप्त होता है ॥८०॥ मृदग आदि वाद्यों का शब्द (गाना बजाना) होता रहता है ॥ घर मे लक्ष्मी की वृष्टि रहती है ॥ यदि शुक्र मीनराशि का त्रिकोण मे हो तो राजा के समान धन-व्ययति होती है ॥८१॥ विवाह आदि उत्सव के कार्य, पुत्रीउत्पत्ति तथा सनापतित्व, इष्ट-मित्र सम्मिलन ॥८२॥ नष्ट हुआ राज्य भी प्राप्त होता है ॥ घर मे गोधन होता है ॥ यदि शुक्र ६।८।१२ स्थान मे हो अथवा नीच का वा व्ययेशराशि मे हो ॥८३॥

आत्मवधुजनद्वेष दारवर्गादिपीडनम् ॥ व्यवसायात्फल नष्ट मोमहिष्यादिहानिकृत् ॥८४॥
दारपुत्रादिपीडा वा आत्मवधुवियोगकृत् ॥ भाग्यकर्माधिपत्येन सङ्गवाहनराशिने ॥८५॥
तद्दशाया महत्सील्य देशग्रामाधिपत्यताम् ॥ देवालयादगादिपुण्यकर्मसु सप्रहम् ॥८६॥
अन्नदाने महत्सील्य नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ उत्साह कीर्तिसपत्नी स्त्रीपुत्रधनसपद ॥८७॥
स्वभुक्ती फलमेव स्याद्व्रतान्यन्यानि भुक्तिषु ॥ द्वितीयचूनाये तु देहपीडा भविष्यति ॥८८॥
तद्दोषपरिहारार्थं रुद्र वा श्रवक जपेत् ॥ श्रेता या महिषी दद्यादारोग्य च भविष्यति ॥८९॥

तो आत्मीय स्वजनो से द्वेष, स्त्री आदि को पीडा हो, व्यापार से होनेवाले फल की हानि सौ-भैस आदि का नाश॥८४॥ स्त्री-पुत्र को पीडा, आत्मीय-बन्धु से वियोग होता है। ९।१० का स्वामी होकर लग्न तथा तृतीय भाव में हो॥८५॥ तो शुरु की दशा में महान् सुख एव देश या नगर का आधिपत्य, देवालय (देवमन्दिर) तालाब आदि धर्म कार्य में रुचि॥८६॥ अन्नदान हो तथा महान् सुख हो, नित्य मिष्टान्न भोजन हो। उत्साह की वृद्धि, कीर्ति, सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र धन सम्पत्ति हो॥८७॥ अपने अन्तर में तो उपर्युक्त फल होता है। अन्यान्य अन्तर अपना २ विशेष फल देते हैं। द्वितीय तथा सप्तम भाव का स्वामी हो तो देहपीडा होती है॥८८॥ उस दोष के नाश के लिए रुद्रपाठ या त्र्यम्बक मन्त्र का जप करे। तथा श्वेत वर्ण की गौ दूधवाली का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है॥८९॥

अथ द्वादशभावाधीशदशाफलमाह

लग्नेशस्य दशा बल बहुधन वितेशितु पचता कष्ट वेति सहोदरास्तपते पाप फल प्रापय ॥
तुर्यस्वामिन आलय फिल सुताधीशस्य विद्यामुख रोगागारपतेररातिजभय जायापते शोक-
ताम् ॥९०॥ मृत्यु मृत्युपते करोति नियत धर्मेणितु सत्क्रिया चित्त राजपतेनृपाश्रमयो लाभ
हि लाभेशितु ॥ रोग द्रव्यविनाशन च बहुधा कष्ट व्ययेशस्य वै पूर्वैरगमृतामुदीरितमिद
तत्वादिभावेशजम्॥९१॥ भावाधिपो बलपुतो निजगृहगामी सुहृत्त्रिकोणगुमवर्गगतोपि पूर्णम्
॥ जतो फल खलु करोति यदारिनीचस्थानस्थितोऽगुमफलं विबलो विशेषात् ॥९२॥ आहु
शुभा-शुभफल नृणा कालविदो जना ॥ एतदृत विनिर्णयमायुषा निश्चयो नृणाम् ॥९३॥
पचमेशदशाया तु धर्मपस्य दशा तु या ॥ अतोब शुभदा प्रोक्ताकालविद्भिर्मुनीश्वरैः ॥९४॥
समन्ननाथस्य तपोधिपस्य दशा शुभा राज्यमुत्तप्रदा स्यात् ॥ सत्कीर्तिनाथस्य सुखेश्वरस्य दशा
तथा प्राहुरदार चित्ता ॥९५॥ पचमेशेन पुक्तस्य ग्रहस्य शुभदा दशा ॥ नाथे धर्मपयुक्तस्य
दशा परमशोभना ॥९६॥

द्वादशभावाधीश दशाफल

लग्नेश की दशा शारीरिक बल देती है। धनेश की दशा शुभ हो तो धनदाता, अशुभ हो तो कष्ट और मृत्यु। तृतीयेश की दशा प्रायः नेष्ट फल दायक होती है। सुखेश की दशा में भूमि और पक्कन का विचार। पचमेश की दशा में विद्या सम्बन्धी और सत्तान सम्बन्धी विचार किया जाता है। षष्ठेश की दशा में शत्रु का भय तथा सप्तमेश की दशा में रोग और कष्ट का विचार होता है। अष्टमेशकी दशामें मृत्यु का विचार। नवमेशमें सत्कार्य का विचार। दशमेश से राज्य से लाभ का विचार। लाभेश से लाभ तथा व्ययेश की दशा में रोग, धन हानि और कष्ट का विचार होता है। मनुष्यो के लिये इस प्रकार कुण्डली में १२ भावों के विचार करने योग्य पदार्थों का निर्णय दिया है॥९१॥ किसी भी भाव का स्वामी बलवान् हो, स्वगृही हो उच्च तथा त्रिकोण में अथवा शुभ वर्ग में हो तो सम्पूर्ण शुभ फल करता है। और यदि शत्रु राशि में, नीच राशि में तथा निर्बल हो तो अशुभ फलकारक है॥९२॥ और प्राचीन आचार्यों ने कहा है कि शुभग्रह प्रायः शुभ फल देते हैं। और आयु का भी निर्णय किया है॥९३॥ पचमेश और नवमेश की दशा बहुत श्रेष्ठ होती है, ऐसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है॥९४॥ पचमेश

और दशमेश की दशा सन्तान और ऐश्वर्य देनेवाली होती है। सुखेश तथा नवमेश की दशा सुख तथा कीर्तिदायक होती है॥९५॥ कोई भी दशा पचमेश से युक्त हो तो शुभदायक होती है। नवमेश से युक्त हो तो अति सुखदायक होती है॥९६॥

पापदृष्टस्य खेटस्य दशा राजप्रदायिनी ॥ शुभपुक्तस्य खेटस्य दशा द्रव्यप्रदायिनी ॥ सपचमेशलग्ने वा दशा राज्यप्रदायिनी॥९७॥ सपचमेशस्य तपोधिपस्य दशा भवेद्राज्यमुद्धा-
र्थलाभदा ॥ तथैव मानाधिपस्यपुतस्य सुतेश्वरस्यापि दशा शुभा स्यात् ॥९८॥ पचमेशेन
पुक्तस्य मानेशस्य दशा शुभा ॥ सुखेशसहितस्यापि धर्मेशस्य दशा शुभा ॥ पञ्चमस्थानागस्यापि
मानेशस्य दशा शुभा ॥९९॥ शुभाशुभस्थानगमा न यस्य तथैव मानार्थमुद्धान्विता स्यात् ॥
तदा नृणा सौख्यकरी भवेद्धि सुखेशपुक्तस्य च मानवस्य ॥१००॥

पचमेश से दृष्ट या युक्त हो तो ऐश्वर्य देनेवाली तथा द्रव्यदाता होती है। पचमेश लग्न में हो तो राज्य देनेवाली होती है॥९७॥ पचमेश और दशमेश की दशा राज्य, सुख और धन लाभ देती है। पचमेश, दशमेश से युक्त हो तो बहुत थोड़ा होती है॥९८॥ पचमेश से युक्त दशमेश की दशा शुभ होती है। सुखेश से युक्त नवमेश की दशा शुभ होती है। दशमेश पचमभाव में हो तो भी उसकी दशा शुभ होती है॥९९॥ ऊपर कही हुई दशाये अशुभ स्थान में न हो तो मान, धन, सुख देनेवाली होती है। तब ये दशाये सुख भाव के स्वामी से युक्त हो तो विशेष सुखकारी होती है॥१००॥

षष्ठस्य सप्तमस्यैको नायको मानराशिग ॥ दशा तस्य शुभा ज्ञेया तथा तेन युतस्य च ॥१०१॥
एको द्विसप्तमस्थाननायको यदि सौख्यग ॥ तेन युक्ता दशा ज्ञेया शुभा प्राहूर्ध्वनीयिणि ॥१०२॥
षष्ठाष्टमव्ययाधीशा पञ्चमाधिसयुता ॥ तेषा दशा च शुभदा प्रोच्यते कालवित्तमै ॥१०३॥
सुखेशो मानभावस्यो मानेशमुखराशिग ॥ तयोर्दशा शुभा प्राहुर्ज्योति शास्त्रविदो जना
॥१०४॥ सुतेशमानेशसुखेशधर्मपा एकत्र युक्ता यदि यत्र कुत्र ॥ तेषा दशा राज्यफलप्रदा
तैर्युक्तग्रहणागमिष्वे वदेद्वा ॥१०५॥ ब्राह्मनस्थानसयुक्तमत्रनाथदशा शुभा ॥ मुखराशिस्यकर्मेश-
दशा राज्यप्रदायिनी ॥१०६॥

छठे, सातवें स्थान का यदि एक ही स्वामी होकर दशम भाव में हो तो उसकी दशा शुभ होती है। यदि सुखेश से युक्त हो तो अधिक शुभ होती है॥१०१॥ (यह योग वैवल सिंह लग्न में ६-७ का स्वामी शनि होने से प्राप्त होता है।) एक ही ग्रह दूसरे सातवें घर का मालिक होकर चतुर्थ भाव में हो और चतुर्थेश से युक्त हो तो उसकी दशा शुभ होती है॥१०२॥ (यह योग मेष लग्न में शुक्र तथा तुला लग्न में मंगल से होता है।) ६।८।१० के स्वामी पचमेश से युक्त हो तो उसकी दशा शुभ होती है॥१०३॥ सुखेश दशम में दशमेश सुखभाव में हो तो दोनों दशाये शुभ होती हैं, ऐसा ज्योतिषशास्त्र के जाननेवाले कहते हैं॥१०४॥ ४।५।९।१० का स्वामी यदि किसी भी भाव में मिलकर म्रियत हो तो उसकी दशा राज्य देनेवाली होती है। और इनमें मन्वन्धित दशा भी शुभ होती है॥१०५॥ तृतीयेश पचमेश के साथ युक्त हो तो शुभ तथा दशमेश चतुर्थ भाव में हो तो ऐश्वर्य दानी होती है॥१०६॥

तान्मां युक्तस्य खेटस्य दृष्टियुक्तस्य चेतयोः ॥ राज्यप्रदां दशां प्राहुर्विद्वांसो दैवचितकाः ॥७॥
 कर्मस्थानस्य बुद्धीशदशा संपत्करो भवेत् ॥ मानस्थिततपोधीशदशा राज्यप्रदायिनी ॥८॥
 यस्मिन्मावे शुभस्वामिसंबंधस्तुङ्गखेचरः ॥ स्यात्तद्भावदशायां तु अत्यैश्वर्यमसंशितम् ॥९॥
 यद्भावेशः स्वार्थराशिभक्षितिष्ठति पश्यति ॥ स्यात्तद्भावदशाकाले धनलाभो महत्तरः
 ॥१०॥ यस्माद्वधपगतौ यस्तु तद्दशायां धनसयम् ॥ यस्मात्त्रिकोणगाः पापास्तथात्मशम-
 नाशनम् ॥११॥ पुत्रहानिः पितुः पीडा मनस्तापो महान् भवेत् ॥ यस्मात्त्रिकोणगा
 रिः करं प्रेशाकैन्दुसूर्यजाः ॥१२॥

पञ्चमेश दशमेश से युक्त तथा दृष्ट ग्रह की दशा ज्योतिषियों ने शुभ कही है ॥१०॥ इसी प्रकार पञ्चमेश दशमभाव में हो तो उसकी दशा सम्पत्ति देनेवाली और नवमेश दशम भाव में हो तो राज्य दायिनी होती है ॥१०८॥ जिस भाव में शुभग्रह युक्त उच्च राशि का ग्रह हो उस भाव की राशि की दशा अखण्डित महान् ऐश्वर्य देनेवाली होती है ॥१०९॥ जिस भाव का स्वामी अपने राशि में स्थित है उस भाव की दशा के समय महान् धन लाभ होता है ॥११०॥ जिस भाव से उस भाव का स्वामी १२ वें भाव में हो उस भाव की दशा में धन हानि होती है। और जिस भाव से पापग्रह त्रिकोण भाव में हो तो चित्त चिन्तित और दुःखित रहता है ॥१११॥ जिस भाव में सूर्य, चन्द्रमा, शनि तथा व्ययेश और अष्टमेश त्रिकोण भाव में हो तो उस भाव राशिकी दशामें पुत्र हानि, पिताको पीडा तथा महान् दुःख होता है ॥११२॥

पुत्रपीडा द्रव्यहानिस्तत्र केत्वहितगमे ॥ विदेशभ्रमण क्लेशो भयं चैव पदे पदे ॥१३॥
 यस्मात्खेटाष्टमे क्रूरनीचखेटादयः स्थिताः ॥ रोगशय्यनुपादा स्यान्मुहुः पीडा मुहुः सहा ॥१४॥
 यस्मात्क्षतुर्थः क्रूरः स्याद्भूगृहक्षेत्रनाशनम् ॥ पशुहानिस्तत्र मौमे गृहेदाहप्रमातृधृक् ॥१५॥
 शनी हृदयशूलं स्यात्सूर्यं राजप्रकोपनम् ॥ सर्वस्वहरणं राहौ विषचौरादिजं भयम् ॥१६॥
 यस्माद्वृशमभे राहुः पुण्यतीर्याटनं भवेत् ॥ तस्मात्कर्माविभाग्यहर्गतः
 शोभनखेचरः ॥१७॥

जिस भाव में राहु या केतु हो, उस भाव की दशा में पुत्र पीडा, धनहानि, विदेशभ्रमण, भय तथा क्लेश होता है ॥११३॥ जिस भाव से ६८ वें पापग्रह तथा नीचम्यग्रह हो तो रोग, शत्रु, राजा से अत्यन्त पीडा होती है और बार बार होती है ॥११४॥ जिस भाव से पापग्रह चौथे स्थान में हो तो उसकी दशा में भूमि, मकान, खेत का नाश और पशु हानि होती है। यदि मंगल चौथे हो तो गृह स्वामीयुक्त मकान अग्नि से नष्ट होता है ॥११५॥ शनि चौथे हो तो हृदयशूल, मूर्ख से राजभय, राहु से सर्वस्व हानि तथा विष, चोर आदि का भय होता है ॥११६॥ जिस भाव में दशम भाव में राहु हो और राहु में ९११०११ में शुभ ग्रह हो तो शुभ मंगलकारी, तीर्थयात्रा होती है ॥११७॥

विद्यार्थधर्मसत्कर्मस्थानिपौरुषसिद्धयः ॥ यतः पञ्चमकारिणतः स्वोच्चशुभग्रहाः ॥१८॥

पुत्रदारादिसंप्राप्तिर्नृपपूजा महत्तरा ॥ यस्मिन् ज्ञानाय कमधुनवलग्राधिपा स्थिता ॥१९॥
तत्तद्वावार्थसिद्धिः स्याच्छ्रेयो योगानुसारतः ॥ यस्मिन् गुरुर्वा शुभो वा शुभेशो वापि सस्यतः
॥ २०॥ कल्याणोत्सवसप्ततिर्देवब्राह्मणतर्पणम् ॥ यच्चतुर्थे तुग्लेष्टा शुभस्वामी ग्रहश्च
वा ॥२१॥

जिस भाव से पाचवे छठवे, सातवे उच्च राशि स्थित शुभ ग्रह हो तो विद्या धन धर्म सत्कर्म ख्याति और पौरुष की सिद्धि होती है ॥१९॥ जिस भाव में ४।५।९।१०।११ भावों के स्वामी हो उस दशा में पुत्र स्त्री आदि प्राप्ति तथा राजकुल में महान आदर होता है ॥१९॥ जिस भाव में बृहस्पति अथवा शुक्र या शुभभाव का स्वामी हो उस भाव की सिद्धि तथा योगानुसार कल्याण होता है ॥२०॥ जिस भाव के चौथे स्थान के उच्चराशिगत ग्रह हो या शुभ ग्रह हो तो उसकी दशा में कल्याण उत्सव सम्पत्ति तथा देव-ब्राह्मण की पूजा होती है ॥२१॥

वाहनग्रामलाभश्च पशुवृद्धिश्च भूयसी ॥ तत्र चंद्रशेखराभः स्याद्बहुधान्यरसान्युत ॥२२॥ पूर्ण
विधौ निधिप्राप्तिर्लभेद्वा मणिसचयम् ॥ तत्र शुक्रं मृदगादिवाद्यगानपुरस्कृत ॥२३॥
आदोलिकापतिर्जंवि तु कनकादोलिका ध्रुवम् ॥ लग्नकर्मेशभाग्येशतुग्लस्यशुभयोगतः ॥२४॥
सर्वोत्कर्षमहेश्वर्यसाम्राज्यादिमहत्फलम् ॥ एव तत्तद्वावदायफलं यत्स्याद्विचित्रयेत् ॥२५॥
एकैकोद्दशा स्वीया गुणैरष्टादशात्मना ॥ भिन्ना फलविपाकस्तु कुयद्विचित्रसप्ततम् ॥२६॥
परमोच्चं तुग्लमात्रे तदवर्तुतदुपर्यपि ॥ मूल त्रिकोणभे स्वर्गं स्वाधिमित्रग्रहस्य मे ॥२७॥

तथा वाहन और भूमि का लाभ होता है पशुओं की वृद्धि होती है। चन्द्र या चन्द्रेण युक्त हो तो बहु धान्य रस (घी चीनी) प्राप्त होती है ॥२२॥ जिस भाव में चतुर्थ स्थान में पूर्ण चन्द्रमा हो और उच्चराशि का हो तो भूमिगत द्रव्य अथवा मणि आदि की प्राप्ति होती है। और यदि शुक्र हो तो नाच गान का आनन्द रहता है ॥२३॥ बृहस्पति हो तो मोटर आदि की सवारी। लग्नेश कर्मेश भाग्येश और उच्चस्थ शुभग्रह का योग हो तो सुवर्ण रत्न-युक्त सिंहासन प्राप्त होता है ॥२४॥ और उच्चस्थ बृहस्पति का योग हो तो सर्वोत्कर्ष युक्त महान् ऐश्वर्यशाली साम्राज्य प्राप्त होता है। इस प्रकार भाव की दशा का फल अच्छी तरह बिचार कर कहना चाहिए ॥२५॥ एक २ ही राशि की दशा अपने शुभग्रह और पापग्रहों के १८ प्रकार के योगों से भिन्न २ विचित्र फलदायक होती है ॥२६॥ (अब अठारह प्रकार के योग दिखाते हैं) प्रथम शुभयोग-परमोच्च ग्रह का सम्बन्ध केवल उच्च का सम्बन्ध अथवा उम भाव से सम्बन्धित प्रथम अथवा द्वितीय भाव में उच्च ग्रह का सम्बन्ध या मूल त्रिकोण स्वगृही अधिमित्रगृही या मित्र गृही अथवा दृष्टियुक्त रामगृही हो ॥२७॥

तत्कालमुद्दयो मेहे उदासीनस्य मे तथा ॥ शत्रोर्भेदधि रिपोर्मे च नीचातादूर्ध्वदेशमे ॥२८॥
तस्मादवर्द्ध नीचमात्रे नीचाते परमाशके ॥ नीधारिवर्गं शकते स्ववर्गं केद्रकोणमे ॥२९॥
अवस्थितस्य खेटस्य समरे पीडितस्य च ॥ गाढमूढस्य च दशापचिति स्वगुणैः फलम् ॥ ३०॥
परमोच्चगतो यस्तु योजितवीर्यपरश्वान् ॥ सपूणाख्या तदृशा तु राज्यभोग्यशुभप्रदा ॥३१॥

पूर्वखण्डे द्वात्रिंशोऽध्यायः

तस्मीकटाक्षचिह्नानां चिदावासग्रहप्रदा ॥ तुलमाग्रगतस्यापि तथा वीर्याधिकस्य च ॥३२॥
पूर्णाख्या बहुधैर्यदायिन्यपि रजप्रदा ॥ अतिनीचगतस्यापि दुर्बलस्य ग्रहस्य तु ॥३३॥
रिक्तासानिष्टफलदा व्याध्यनर्यमृतिप्रदा ॥ अत्युच्चादतिनीचांश्च मध्यगतस्य च
रोहिणी ॥३४॥

अब अशुभ सम्बन्ध दिखाते हैं—शत्रु की राशि में, अधिशत्रु की राशि में, नीच और परम नीच में अथवा पिछली अगली राशि में पापग्रह का योग, नीच अश में, नीच वर्ग में और बलहीन होना ये पाप योग-के ९ भेद हुए ॥ शुभयोग में विशेष कहते हैं। अपने वर्ग में, केन्द्र या त्रिकोण में शुभ होता है। ऐसे ही पापग्रहों से पीड़ित और पराजित ग्रह सुपुष्टि अवस्था में अथवा मूढ़ अवस्था में होने से अशुभ होता है और उसकी दशा नेष्ट होती है ॥ जो ग्रह परमोच्च राशिगत तथा पूर्ण बलवान् हो उसकी दशा सम्पूर्ण राज्यभोग और शुभफल दायक होती है ॥३३॥ उस दशा में घर में लक्ष्मी का भण्डार भरा रहता है। श्रेष्ठ भवन आदि का सुख होता है। उच्च राशि गत होने पर भी यदि पूर्ण बलवान् हो ॥३२॥ तो उस दशा में अनेक प्रकार के ऐश्वर्य रहते हुए भी कुछ रोगों की चिन्ता रहती है। अति नीचगत दुर्बल ग्रह की दशा में ॥३३॥ जो अपने उच्च से नीच राशि की तरफ आता हुआ ग्रह मध्य में हो, उस ग्रह की दशा अयरोहिणी कहलाती है। (अयरोहण = नीचे उतरना) फल—व्याधि, अर्थहानि, क्लेश आदि तथा मृत्युदायक है ॥३४॥

मित्रोच्चभावप्राप्तस्य मध्याख्या ह्यर्थदा दशा ॥ नीचातादुच्चभागान्त भयदके मध्यगतस्य च ॥३५॥ दशा चाऽऽ रोहिणी नीचरिपुभासगतस्य च ॥ अधमाख्या भयक्लेशज्याधिदुःखविवर्द्धिनी ॥३६॥ नामानुरूपफलदा पाककाले दशा इमा ॥ भाग्येशगुरुसवधा योगदूर्क्कटभारविमि ॥३७॥ परेषामपि दायेषु भाग्योपक्रममुद्रयेत् ॥ जातको यस्तु फलदो भाग्ययोगप्रदोऽयम् ॥३८॥ सफलौ वक्रिमादूर्ध्वमन्यातपि च सेचरान् ॥ दुर्बलानसमर्याश्च फलदानेऽपि योगतः ॥३९॥ तारतम्यास्तुसवधा दशा होता फलप्रदा ॥ स्वकेद्रादिजुषा तेषा पूर्णाङ्गीप्रव्यवस्थया ॥४०॥

अपनी नीच राशि में उच्च राशि की तरफ जाता हुआ मध्य में जो ग्रह है अथवा जो मित्र की उच्च राशि में हो तो वह मध्या नाम की दशा है और घनदातृ है। और इस दशा का नाम आरोहिणी है ॥३५॥ (आरोहण = उपर चढ़ना) जो ग्रह नीच राशि में या शत्रु के नवाश में हो उसकी दशा अधमा नाम की है। वह दशा भय, क्लेश, व्याधि और दुःख बढ़ानेवाणी होती है ॥३६॥ अपने दशाकाल में नाम के अनुसार फल देनेवाली ये दशाएँ हैं ॥३७॥ यदि ग्रह भाग्येश अथवा बृहस्पति में मुक्त अथवा दृष्टि सम्बन्ध रखता हो तो दूमरे ग्रहों की दशा में भी अपने अन्तर में भाग्य वृद्धि कारक होता है ॥३८॥ जो ग्रह भाग्य योग देनेवाला है, वह मार्गी हो अथवा होन पर और जो बलहीन ग्रह है उनमें दृष्टि आदि सम्बन्ध करता हो तो उनको भी श्रेष्ठ फलदान में समर्थ कर देता है ॥३९॥ बलाबल के अनुगता यथामुबन्ध में उन ग्रहों की दशा शुभफल दान में समर्थ होती है ॥४०॥

प्रसङ्गकार इत्येतत्सतत सपदा बलात् ॥ शीर्षोदयस्यगा स्वस्वदशादीं स्वफलप्रदा ॥४१॥
 उदयोदयराशिस्वदशा मध्यफलप्रदा ॥ पृष्ठोदयर्षगा सेदा स्वदशाते फलप्रदा ॥४२॥
 जन्मकाले दशानायस्वेष्टगाना विचारणे ॥ निसर्गतश्च तत्काले सुहृदा हरणे शुभम् ॥४३॥
 सपादयेत्तदा कष्ट तद्विपर्ययगामिनाम् ॥ दशेशाकृतभावाना दारस्य द्वादशार्क्षम् ॥४४॥
 भुक्त्वा द्वादशराशीना दशामुक्ति प्रकल्पयेत् ॥ एकैकराशेर्षा तत्र सुहृत्स्वसेत्रगामिनी ॥४५॥
 तस्या राज्यादिसप्तपूर्वक शुभमीरयेत् ॥ दुःस्थानरिपुनीचस्थनीचकूरयुता च या ॥४६॥
 तस्यामनर्त्यकलह रोगमृत्युभयादिकम् ॥ विदुभूयस्त्वशून्यत्ववशात्वीयाष्टवर्गके ॥४७॥ वृद्धि
 हानि च तद्वाशि भावस्य स्वग्रहात्कमात् ॥ भावयोजनया विद्यास्तुताद्यादि
 शुभाशुभम् ॥४८॥

यदि ग्रह स्वग्रही अथवा केन्द्र आदि शुभस्थान में हो तो अपने विश्वावल के अनुसार पूरा, आधा या चौथाई जितना फल देने में समर्थ हो तथा शीर्षोदयी राशि में हो तो निरन्तर ही सम्पत्तियों को जबरदस्ती खींचकर लानेवाला तथा अपनी दशा के आदि में पूरा फल देनेवाला होता है ॥४१॥ सूर्योदयी राशि में जो दशा हो वह मध्यम काल में फल तथा पृष्ठोदयी राशि की दशा मध्यम फल देनेवाली होती है ॥ वह फल भी दशा के अन्त में ही देती है ॥४२॥ मनुष्य के जन्म समय में दशा के स्वामी ग्रह तथा अन्य ग्रहों के विचार करने में नैसर्गिक बल तथा तात्कालिक बल और मैत्रीबल का विचार करो ॥४३॥ इस बल के अनुसार शुभ और अशुभ फल का निर्णय करो और ग्रह के शत्रु सम ग्रहों का भी निरीक्षण करो दशा के स्वामी से विपरीत भाववाले ग्रहों वा सम्बन्ध तथा दशास्वामी से सम्बन्धित भावों का विचार वारहों राशियों में करो ॥४४॥ बारह राशियों की दशा तथा अन्तर-दशा की कल्पना करो जिस भाव की राशि अपने मित्र या स्वग्रही ग्रह से युक्त हो ॥४५॥ उस दशा में राजा के समान सम्पत्ति और सुख होता है और जो राशि शत्रु नीचत्व, अथवा नीच तथा पापग्रह युक्त हो उसकी दशा में अनर्थ बलह रोग और मृत्युभय होता है इसी प्रकार उस राशि के अष्टवर्ग के विचार में यदि बिन्दु अधिक हो अथवा केवल शून्य हो अथवा रेखा अधिक हो ॥४७॥ तो हानि या वृद्धि भाव के ग्रह के अनुसार जाने भावराशि की दशा में सन्तान आदि पदार्थों का भी शुभाशुभ विचार करो ॥४८॥

धात्वादिराशिभेदाच्च धात्वादिग्रहयोगत ॥ शुभपापदशाभेदाच्चभुभपापयुतैरपि ॥४९॥
 द्रष्टानिष्टस्थानभेदात्फलभेदात्सामुग्रयेत् ॥ एव सर्वग्रहाणा च स्वा स्वामतर्दशामपि ॥१५०॥
 स्वराशितो राशिभुक्ति प्रकल्प्य फलमीरयेत् ॥ अन्तरतर्दशा स्वोया विभज्यैव पुन पुन ॥५१॥
 कालसंक्षेपत सूक्ष्मफल ब्रूयाद्दिन प्रति ॥ स्वाधारभक्तो होराप्रयेज्यमपि वाग्मुना ॥५२॥
 केन्द्रे कोणे कारका भावनाथा भावप्रान्तिर्दुःस्थिता भावहृत्यै ॥ अर्थे लाभे विज्जमा वा
 पदा ते भावात्तर्धमातृपित्रादितुल्या ॥५३॥ भाव पश्यति भावेशो भावस्ये सप्रज्ञेऽपि वा ॥
 बलिन स्वोच्चगे याऽपि तद्भावात्स्विष्टपुष्टया ॥५४॥

राशि के बलावल भेद में तथा बलवान ग्रहों के योग आदि में शुभ या अशुभ ग्रहों के योग

अथान्तर्दशाकरणमाह

दशा दशाहता कार्या दशभिर्भागमाहरेत् ॥ तद्धाकाश्च भवेन्मासास्त्रिंशद्वे च दिनानि च ॥१॥

| अथ सूर्यविशोत्तरीवर्षाणि ६ तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | | अथ चंद्रविशोत्तरीवर्षाणि १० तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | |
|--|---|---|----|----|----|----|----|----|---|---|---|----|----|---|----|----|----|---|-----|
| सू | ष | म | रा | बृ | श | जु | के | गु | घ | च | ष | रा | बृ | श | जु | के | गु | घ | प्र |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | ० | ० | १ | १ | १ | १ | ० | १ | ० | ० |
| ३ | ६ | ४ | १० | ९ | ११ | १० | ४ | ० | ० | १० | ७ | ६ | ४ | ७ | ५ | ७ | ८ | ६ | ० |
| १८ | ० | ६ | २४ | १८ | १२ | ६ | ६ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

| अथ भीमविशोत्तरीवर्षाणि ७ तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | | अथ राहुविशोत्तरीवर्षाणि १८ तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | |
|--|----|----|---|----|----|----|---|---|-----|--|----|----|----|----|----|----|---|---|-----|
| ष | रा | बृ | श | जु | के | गु | घ | ष | प्र | रा | बृ | श | जु | के | गु | घ | ष | ग | प्र |
| ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | ० | ० | ० | २ | २ | २ | २ | १ | ३ | ० | १ | १ | ० |
| ४ | ० | ११ | १ | ११ | ४ | २ | ४ | ७ | ० | ८ | ४ | १० | ६ | ० | ० | १० | ६ | ० | ० |
| २७ | १८ | ६ | ९ | ७ | २७ | ० | ६ | ० | ० | १२ | २४ | ६ | १८ | १८ | ० | २४ | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

अन्तर्दशाकरण

जिसकी दशा में जिसका अन्तर माधन करना हो उन दोनों ग्रहों की दशाओं को परस्पर गुणा करना। गुणिताव में १० का भाग देने पर मासमय्य प्राप्त होगी। जेय को ३० में गुणा कर १० का भाग देने पर दिन संख्या प्राप्त होगी॥१॥

(सरल रीति—जिस ग्रह में जिस ग्रह का अन्तर जानना हो उन दोनों ग्रहों की दशा परस्पर गुणा करना तो गुणित अंक की दहाई के अव मास होते हैं। और इक्काई का अव त्रिगुणित दिन होते हैं।)

उदाहरण—सूर्यदशा में सूर्य का अन्तर जानना है सूर्य दशा की वर्ष संख्या ६-६ को परस्पर गुणा किया तो ३६ हुए, १० का भाग दिया तो ३ मास लब्ध हुए, जेय ६ को ३० में गुणा किया तो १८० हुए, १० का भाग दिया तो लब्ध १८ दिन हुए।

अथवा—सूर्यदशावर्ष परस्पर गुणा किया तो ३६ हुए, इस संख्या में दहाई का अव ३ मास है, और इक्काई का अव ६ त्रिगुणित १८ दिन हैं।

पूर्वस्थे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

| अथ विंशोत्तरीपुरुषवर्षाणि १९ तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | | अथ विंशोत्तरीशनिवर्षाणि १९ तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | |
|--|----|----|----|----|----|---|----|----|---|--|----|----|----|----|---|---|----|----|---|
| शु | ग | बु | के | गु | मू | च | म | रा | ध | श | सु | के | गु | मू | च | म | रा | ध | श |
| २ | २ | २ | ० | २ | ० | १ | ० | २ | ० | ३ | २ | १ | २ | ० | १ | १ | २ | २ | ० |
| १ | ६ | ३ | ११ | ८ | १ | ४ | ११ | ४ | ० | ० | ८ | १ | २ | ११ | ७ | १ | १० | ६ | ० |
| १८ | १२ | ६ | ६ | ० | १८ | ० | ६ | २४ | ० | ३ | १ | ९ | ० | १२ | ० | ९ | ६ | १२ | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

| अथ विंशोत्तरीबुधवर्षाणि १७ तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | | अथ विंशोत्तरीशुक्रवर्षाणि ७ तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | |
|--|----|----|----|---|----|----|---|---|---|---|----|----|---|----|----|----|---|----|---|
| शु | के | गु | मू | च | म | रा | ध | श | ध | के | गु | मू | च | म | रा | ध | श | बु | ध |
| २ | ० | २ | ० | १ | ० | २ | २ | २ | ० | ० | १ | ० | ० | ४ | ० | ११ | १ | ० | ० |
| ४ | ११ | १० | १० | ५ | ११ | ६ | १ | ८ | ० | ४ | २ | ४ | ७ | ४ | १८ | ६ | १ | ११ | ० |
| २७ | २७ | ० | ६ | ० | २७ | १८ | ६ | ० | ० | २७ | ० | ६ | ० | २७ | ० | ० | ० | २७ | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

| अथ विंशोत्तरीभृगुवर्षाणि २० तन्मध्येन्तरम् | | | | | | | | | |
|--|-----|----|----|-----|-----|----|-----|-----|--|
| शु० | मू० | च० | म० | रा० | गु० | श० | बु० | के० | |
| ३ | १ | १ | १ | ३ | २ | ३ | २ | १ | |
| ४ | ० | ८ | २ | ० | ८ | ० | १० | २ | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |

भावयोगफलमाह

स्वढादशाशके लग्नाथे वा स्वदुकाणो ॥ तस्य भुक्ति शुभामाहुर्मुनयः कालचितका ॥२॥
 स्वत्रिंशोऽथ वा मित्रत्रिंशो वा स्थितो यदि ॥ तस्य भुक्ति शुभा प्रोक्ता
 कालविद्भिर्मनीषिभिः ॥३॥ मित्रक्षेत्रे नवाशस्ये मित्रस्य द्विरसाशके ॥ तस्य भुक्ति शुभा
 प्रोक्ता कालविद्भिर्मनीषिभिः ॥४॥ बुद्धिलेखनवाशस्ये पुत्रस्य द्विरसाशके ॥ मित्रद्रेष्काण्ये
 वापि तस्य भुक्ति शुभावहा ॥५॥ तयो राशिनवाशस्ये धर्मस्य द्विरसाशके ॥ गुरुद्रेष्काण्ये
 वापि तस्य भुक्ति शुभावहा ॥६॥ सुखराशिनवाशस्ये वाहनद्विरसाशके ॥ सुखद्रेष्काण्ये वापि

तस्य भुक्ति शुभावहा ॥७॥ विलग्रनाथस्थितमाशनाये मित्राशने मित्रसंगेन दृष्टे ॥
गुहृद्दृकाणस्थनवाशके या तदास्य भुक्ति शुभदा यदति ॥८॥

भावयोगफल

लग्नेश अपने द्वादशांश में अथवा द्रेष्काण में हो तो उसकी अन्तर्दशा शुभ होती है, ऐसा त्रिकालज मुनि कहते हैं ॥२॥ अथवा अपने त्रिंशश या मित्र के त्रिंशश में हो तो उसका भी अन्तर शुभ होता है ॥३॥ अथवा मित्र के घर में या मित्र के नवांश में या मित्र के द्वादशांश में हो तो उस ग्रह का अन्तर शुभ होता है ॥४॥ अथवा लग्नेश पंचमभाव में या नवांश में अथवा पंचम भाव के १२ अंश में या मित्र द्रेष्काण में हो तो भी अन्तर शुभ होता है ॥५॥ लग्नेश पंचमेश की राशि या नवांश में अथवा नवमभाव के द्वादशांश में हो तो अन्तर शुभ होता है ॥६॥ लग्नेश चतुर्थभाव में या चतुर्थ के नवांश में अथवा चतुर्थ के द्वादशांश में या चतुर्थके द्रेष्काण में हो तो उसका अन्तर शुभ होता है ॥७॥ लग्नेश जिस राशि में हो उस राशि के नवांश का स्वामी अपने मित्रग्रह के नवांश में हो तथा मित्रदृष्ट हो तो अन्तर शुभ होता है। अथवा मित्र के द्रेष्काण में स्थित नवांश के मित्रांश में हो और मित्र दृष्ट हो तो अन्तर शुभ होता है ॥८॥

अथ वक्ष्ये विशेषेण दशा कष्टप्रदा नृणाम् ॥ षष्ठाष्टमव्ययेशाना दशा कष्टप्रदायिनी ॥९॥
एषा भुक्तिर्हि कष्टा स्यान्मारकस्य दशा यदि ॥ मारकेशेन पठ्यते युक्ते लग्नाधिपे यदि ॥१०॥
तस्य भुक्ता ज्वरप्राप्ति प्राहुः कालविदो जनाः ॥ सरोगे सशरीरेशश्चन्द्रपङ्कगो यदि ॥११॥
जलदोषस्तस्य भुक्ता स्यादजीर्णो न सशयः ॥ पठ्येशमुत्तलग्नेशो बुधपङ्कगो यदि ॥१२॥ तस्य
भुक्ता भवेद्वायुवर्तो वा देहजाड्यकृत् ॥ सारिनाथविलग्नो गुरु पङ्कगो यदि ॥ तस्य भुक्ता
भवेद्गो पीडा वा ब्राह्मणेन तु ॥१३॥ नक्षत्रेशो विलग्नो भृगुपङ्कगो यदि ॥ तस्य भुक्ता
भवेत्पीडा रोगसूत्री सगमेन च ॥१४॥ सरोगे सविलग्नो शनिपङ्कगो यदि ॥ तस्य भुक्ता
भवेद्वात सन्निपातोय वा नृणाम् ॥ लग्नेशरोगेशपयोर्भवेन्मारकभुक्तिषु ॥१५॥ मृत्यौ स्थितं
सैहिकमदकेतुभिर्मनोहिकाश्वासविषूचिकाभिः ॥ रोगो नराणामथ तस्य भुक्ता भवेच्छ्वा
मारकसमुत्तिष्ठ ॥१६॥ एव भ्रात्रादिभावानां नायकौ यत्र सस्थिताः ॥ तत्तत्पङ्कगयोगेन
तत्तद्भावफलं वदेत् ॥१७॥

अब कष्टकारी दशा कहते हैं। ६।८।१२ भाव के स्वामी की दशा कष्टदायक होती है ॥९॥
यदि लग्नेश, मारकेश से युक्त अथवा पठ्येश से युक्त या दृष्ट हो तो अन्तर कष्टकारी होता
है ॥१०॥ उसके अन्तर में ज्वर होता है। लग्नेश रोगेश युक्त होकर चन्द्रमा के पङ्कग में हो तो
ज्वर होता है ॥११॥ अथवा जलदोषयुक्त बीमारी या अजीर्ण की बीमारी होती है। यदि बुध
के पङ्कग में हो तो ॥१२॥ उसके अन्तर में वातव्याधि या देहजाड्य की बीमारी होती है।
यही यदि गुरु के पङ्कग में हो तो उसके अन्तर में ब्राह्मण द्वारा पीडा प्राप्त हो ॥१३॥ चन्द्रमा
और लग्नेश यदि शुक्र पङ्कग में हो तो अन्तर में स्त्रीसंग से रोग या कष्ट होता है ॥१४॥
पठ्येश युत लग्नेश यदि शनि पङ्कग में हो तो उसके अन्तर में वातव्याधि या सन्निपात होता

पूर्वखण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

है॥१५॥ मारकेश ग्रह की दशा में रोगेशयुक्त लग्नेश का अन्तर हो तथा अष्टमभाव में राहु, शनि, केतु हो तो हिचकी, खासी, दमा या हैजा की बीमारी होती है॥१६॥ जिस प्रकार ये योग लग्नेश के साथ बताये गये हैं, उसी प्रकार अन्य सभी भावों से भी विचारने चाहिए॥१७॥

अथाग्रे फलमाह

केन्द्राधीश्वरकोणनायकदशाश्चातर्दशा शोभना सामान्याश्च धनत्रितामभवनाधीशप्रहाणा वशा ॥ दृष्टाष्टमध्यमावनायकदशा कष्टा भवेयुःसदा नेतुर्लग्नमवेक्ष्य तत्तदधिपाततद्दशा-
भुक्तिषु ॥१८॥

रविमहादशायां खेरंतर्दशा मास ३ दिन १८ तत्फलम्

उच्चक्षेत्रे गते सूर्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ रविदयि स्वमुक्तौ च धनधान्यादिलाभकृत् ॥१९॥
देहुरोग वित्तलाभ राजप्रीतिकर शुभम् ॥ सर्वकार्यार्थसिद्धिं स्याद्विवाह राजदर्शनम् ॥२०॥
द्वितीयद्यूननाये तु अपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥२१॥
सूर्यप्रीतिकरीं शान्तिं कुर्यादारोग्यमादिशेत् ॥२२॥

केन्द्रेश तथा त्रिकोणेश की दशा और अन्तर्दशा शुभ होती है। धनेश, तृतीयेश, लाभेश की दशा, अन्तर्दशा मध्यम होती है। ६।८।१२ भावों के स्वामी की दशा कष्टकारी होती हैं। इस प्रकार से उपर्युक्त सभी योगों से फल विचार करना चाहिये॥१८॥

सूर्यदशा में सूर्यान्तर मास ३ दिन १८ फल

सूर्य उच्च राशि का हो स्वगृही हो। केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो तो धन, धान्य आदि का लाभ होता है॥१९॥ शरीर में निरोगता, धन का लाभ, राजा से प्रीति, सम्पूर्ण कार्य और अर्थ की सिद्धि तथा विवाह आदि शुभ कार्य होता है॥२०॥ द्वितीय तथा सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु होनेका भय होता है। इस दोष को दूर करने के लिये महामृत्युंजय का जप करना या कराना चाहिए॥२१॥ सूर्य की शान्ति करने से आरोग्यता प्राप्त होती है॥२२॥

रविदशायां चंद्रभुक्तिमासाः ६ दिना० तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते चन्द्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ विवाह शुभकार्यं च धनधान्यसमृद्धिकृत् ॥२३॥
गृहक्षेत्राभिवृद्धिं च पशुवाहनसपदाम् ॥ तुये वा स्वर्लगे वाऽपि दारसौख्यं धनायगम् ॥२४॥
पुत्रलाभमुल्लेखं सौख्यं राजसमागमम् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिमुल्लासहम् ॥२५॥ क्षीणे वा पापसयुक्ते दारपुत्रादिपीडनम् ॥ वैषम्यजनसंवादमृत्युवर्गविनाशनम् ॥२६॥ विरोध राजकलहं धनधान्यपशुलपम् ॥ दृष्टाष्टमध्यमे चन्द्रे जलमीति मनोरजम् ॥२७॥

सूर्य दशा मे चन्द्रान्तर ६ मास फल

सूर्य के अन्तर मे चन्द्रमा हो, लग्न से वेन्द्र या त्रिकोण मे हो तो विवाह आदि शुभकार्य होते है। धन-धान्य की वृद्धि होती है॥२३॥ भूमि और मकान मे वृद्धि, पशु और बाहन आदि सम्पत्ति प्राप्त होती है। चन्द्रमा यदि उच्च वा या स्वगृही हो तो स्त्री वा सुख और धन की प्राप्ति होती है॥२४॥ पुन सन्तान की प्राप्ति और सुख तथा राज-समाज मे आना-जाना होता है। महाराज या बड़े आदमी की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि और सुख होता है॥२५॥ चन्द्रमा यदि क्षीण वा पापग्रह युक्त हो तो स्त्री-पुन को वष्ट होता है। परिवार मे विषमता, बन्धुओं से विरोध तथा नौकर चले जाते है॥२६॥ राज से मुकदमा, धन और पशु की हानि होती है। चन्द्रमा ६।८।१२ मे हो तो जल मे डूबने का भय अशान्ति होती है॥२७॥

बधन रोगपीडा च स्थानविच्युतिकारकम् ॥ दुःस्थान चापि चित्तेन दामादजनविग्रहम् ॥२८॥ निर्धन कुत्सितान्न च चौरादिनृपपीडनम् ॥ भूत्रकृच्छादिरोगश्च देहपीडास्तयो भवेत् ॥२९॥ दापेशाल्ताभभागे च केद्रे वा शुभसयुते ॥ भोगभोग्यादिसतोषदारपुत्रादिवर्द्धनम् ॥३०॥ राज्यप्राप्ति महत्सौख्य स्थानप्राप्ति च शाश्वतीम् ॥ विवाह यज्ञदीक्षा च मुग्धान्याबरनूपणम् ॥३१॥ बाहन पुत्रपौत्रादि लभते सुखवर्द्धनम् ॥ दापेशादिपुरधस्ये ध्यये वा बलवर्जिते ॥३२॥ अकाले भोजन चैव देशादेश गमिष्यति ॥ द्वितीयपूननायेन अपमृत्युर्भविष्यति ॥ श्वेता वा महिषी दद्याच्छाति कुर्यात्सुख लभेत् ॥३३॥

बन्धन रोग और पीडा तथा स्थान अश होता है। नेष्ट स्थान वा रहना तथा परिवार मे विग्रह होता है॥२८॥ धनहीन, कुभोजन, चोर, शत्रु, राजा आदि से पीडा होती है। भूत्र-कृच्छ की बिमारी तथा दर्द की बिमारी होती है॥२९॥ चन्द्रमा सूर्य से यदि लाभ अथवा भाग्यस्थान मे हो, वेन्द्र या त्रिकोण मे तथा शुभग्रह युक्त हो तो उत्तम भोग प्राप्त होते है। भाग्य की वृद्धि होती है। मन मे सन्तोष, घर मे स्त्री पुन की वृद्धि होती है॥३०॥ राज्य से प्राप्ति, महान सुख, स्थान या भूमि की प्राप्ति स्वायी रूप से होती है। घर मे विवाह आदि मंगल कार्य तथा यज्ञ आदि धर्म कार्य, दीक्षा नूपण वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है। बाहन की प्राप्ति, पुत्र पौत्र आदि का उत्सव होने से सुख वृद्धि होती है। सूर्य से ६।८।१२ स्थान मे हो और बल रहित हो॥३२॥ तो कुसम्य भोजन देश-विदेश की यात्रा आदि होती है। चन्द्रमा यदि द्वितीय सप्तम वा स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।

उपाय - दूध देनेवाली भफेद गाय वा दान करने मे सुख होता है॥३३॥

रविदशायां कुजभुक्तिमासाः ४ दिना ०६ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते भीमे स्वोच्चे स्वसेत्रलाभगे ॥ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणे वा शुभकार्य शुभादिकम् ॥३४॥ मूलाभ कृषिलाभ च धनधान्यादिवृद्धिदम् ॥ गृहक्षेत्रादिलाभ च रक्तवस्त्रादिलाभकृत् ॥३५॥ लग्नाधिपेन सयुक्ते सौख्य राजप्रिय सुखम् ॥ भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते लाभश्रेयभविष्यति ॥३६॥ षट्सेनाधिपत्य च शत्रुनाश मनोवृद्धम् ॥ आत्मबधुमुक्त चैव भ्रातृवर्द्धनक तथा ॥३७॥

पूर्वखण्डे त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः

दायेशाद्रिपुरधस्थे पापयुक्ते च वीक्षिते ॥ आधिपत्यबलैर्हीने क्रूरबुद्धि मनोरुजम् ॥३८॥
कारागृहे प्रवेशे च निर्गल बहुनाशनम् ॥ भ्रातृवर्गविरोधे च कर्मनाशमथापि वा ॥३९॥ नीचे वा
बहुले भीमे राजमूलाढनक्षय ॥ द्वितीयघननाथे तु देहे जाड्य मनोरुजम् ॥४०॥ सुबह्यजपदान च
अनङ्गवाह तथैव च ॥ शांतिं कुर्वीत विधिवदापुरारोग्यसिद्धिदाम् ॥४१॥

सूर्य दशा मे भौमान्तर ४ मास ६ दिन फल

सूर्य मे मंगल का अन्तर हो और मंगल उच्च का स्वगृही केन्द्र त्रिकोण या लाभ मे हो तो
घर मे मंगल कार्य होते है ॥३४॥ पृथ्वी का लाभ खेती का लाभ धन-धान्य वा लाभ मकान
खेत आदि का लाभ होता है। व्यापार मे लाल वस्त्र से अधिक लाभ होता है ॥३५॥ लग्नेश से
युक्त हो तो सुखकारी, राजप्रिय होता है। भाग्येश तथा लाभेश से युक्त हो तो विघ्नेश
लाभकारी होता है ॥३६॥ सेनापति की पदवी मिलती है शत्रु का नाश होता है। मन मे दृढता
तथा बल बुद्धि होती है। परिवार मे सुख तथा वृद्धि होती है ॥३७॥ सूर्य रा ६।८ वे स्थान मे
हो पापग्रह से युक्त दृष्ट हो तो अधिकार से हीन क्रूर बुद्धि मन मे अशान्ति होती है ॥३८॥
कारागृह मे बास वेडी तथा हथकड़ी बन्धु का नाश, भ्रातृ वर्ग मे विरोध तथा इच्छा का
नाश होता है ॥३९॥ मंगल नीच का या बलहीन हो तो राजकार्य से घन की हानि होती है
और द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो देह मे जडता, मन मे दुःख होता है ॥४०॥ मंगल का दान
तथा जप और वेल का दान करने से आयु और आरोग्य प्राप्त होता है ॥४१॥

अथ रविदशाया राहुभुक्तिमासा. १० दि० २४ तत्फलम्

सूर्यस्थातर्गते राहौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणो ॥ आदौ द्विमासपर्यन्तं घननाश महद्भयम् ॥४२॥
चौराहिव्रणभोतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥ तत्परं सुखमाप्नोति शुभयुक्ते शुभाशके ॥४३॥
बेहारेण्य मनस्तुष्टी राजप्रीतिकरं सुखम् ॥ लग्नाद्युपचये राहौ योगकारकसमुत्ते ॥४४॥
दारेशाच्छुभराशित्ये राजसन्मानकीर्तिदम् ॥ भाग्यवृद्धिं यशोलाभं दारपुत्रादिपीडनम् ॥४५॥
पुत्रोत्सावादिसतोषं गृहे कल्याणशोभनम् ॥ दायेशात्पृष्ठरिष्कस्थे रक्षे वा बलवर्जिते ॥४६॥
वधनं स्थाननाशश्च कारागृहनिवेशनम् ॥ चौराहिव्रणभोतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥४७॥
चतुष्पाज्जीवनाशश्च गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥ गुल्मक्षयादिरोगश्च अतिसारादिपीडनम् ॥४८॥
द्विस्तप्तस्थे तथा राहौ तत्स्थानाधिपसमुत्ते ॥ अपमृत्युभयं चैव सर्वभोतिश्च समवेत् ॥४९॥ दुर्गाजप च
कुर्वीत छागदानं समाचरेत् ॥ कृष्णा गा महिषी दद्याच्छान्तिमाप्नोत्यसशयम् ॥५०॥

सूर्य दशा मे राहु अन्तर १० मास २४ दिन फल

सूर्य के अन्तर मे राहु हो, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो पहले २ मास मे घन वा नाश,
महान भय ॥४२॥ चौर, सर्प पाय आदि वा भय, स्त्रीपुत्र को पीडा होती है। २ मास के बाद
सुख होता है। मंगल आदि शुभग्रह युक्त शुभ नवाश मे हो तो ॥४३॥ नीरोगता, मनोप,
राजप्रीति और सुख होता है। यदि मंगल रा केन्द्र स्थान मे हो, योग कारक ग्रह से युक्त
हो ॥४४॥ सप्तमेश मे शुभ स्थान मे हो तो राजसन्मान, कीर्ति, भाग्यवृद्धि, लाभ होता है तथा
स्त्री-पुत्र को कुछ पीडा भी होती है ॥४५॥ और पुत्रोन्मेष आदि मंगल कार्य, घर मे सुख

शान्ति होती है। मगल यदि बलहीन होकर सूर्य से ६।८।१२ स्थान में हो तो॥४६॥ बन्धन, स्थान-नाश, कैद, चोर, सर्प, धाव से भय, स्त्री पुत्र को पीडा होती है॥४७॥ पशु की हानि मकान और खेत की हानि, गुल्म का रोग तथा क्षय रोग तथा अतिसार आदि रोग होते हैं॥४८॥ राहु यदि २ या ७वे स्थान में स्थानेश से युक्त हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है तथा अन्य प्रकार के भी भय होने सम्भव है॥४९॥

उपाय — दुर्गमित्र का जप एवं छाग (बकरा) दान करे तथा काली गाय का दान करे तो निश्चय शान्ति रहती है॥५०॥

अथ रविमध्ये गुरुभुक्तिमा० १९ दि० १८ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्पिते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे मित्रस्य वर्गस्थे विवाह राजदर्शनम् ॥५१॥
 धनधान्यादिलाभ च पुत्रलाभ महत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन दृष्टकार्यविलाभकृत् ॥५२॥
 ब्राह्मणप्रियसन्मान प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ॥ भाग्यकर्माधिपवशाद्वाज्यलाभ महोत्सवम् ॥५३॥
 नरवाहनयोगाश्च स्थानाधिक्य महत्सुखम् ॥ दायेशाच्चभूराशस्थे भाग्यवृद्धि सुखावहा ॥५४॥
 दानधर्मक्रियायुक्तो देवताराधना प्रिय ॥ गुरुभक्तिर्मेन सिद्धि पुण्यकर्मादिसग्रह ॥५५॥
 दायेशाद्रिपुरधस्थे नीचे वा पापसपुते ॥ दारपुत्रादिपीडा च देहपीडा महद्भूषम् ॥५६॥
 राजकोप प्रकुर्वते दृष्टवस्तुविनाशनम् ॥ पापमूलाद्द्रव्यनाश देहभ्रष्ट मनोरजम् ॥५७॥
 स्वर्णदान प्रकुर्वीत दृष्टजाप्य च कारयेत् ॥ गवा कपिलवर्णाना दानेनारोग्यमा-
 दिशेत् ॥५८॥

सूर्य में गुरु का अन्तर मास १९ दिन १८ फल

सूर्य में गुरु का अन्तर हो तथा गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, उच्चराशि में हो या मित्र वर्ग में हो तो विवाह, राजदर्शन होता है॥५१॥ धन-धान्य का लाभ, महान सुख होता है। राजा या बड़े आदमी की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि और विशेष लाभ होता है॥५२॥ देव ब्राह्मण की पूजा और सम्मान, प्रियवन्धु का मिलन वस्त्र-भूषण का लाभ होता है। नवम्, दशम् स्वामी से युक्त हो या दृष्ट हो तो राज्यलक्ष तथा यद्देस्यव होता है॥५३॥ नीचे, चाकर तथा मोटर आदि सवारी होती है, बड़ा मकान होता है महान सुख होता है। सूर्य में शुभग्यान और शुभराशि में हो तो भाग्य वृद्धि और मगल होता है॥५४॥ दान, धर्म, क्रिया से युक्त, देवता की आराधना में प्रीति, गुरुभक्ति मन में मन्तोष, दान धर्म आदि पुण्य कार्य का मग्न होता है॥५५॥ सूर्य से ६।८ स्थान में हो, नीचे वा हो या पापग्रह युक्त हो तो स्त्री पुत्र को पीडा, देह को पीडा तथा महान भय होता है॥५६॥ राजकोप होता है, दृष्ट वस्तु का नाश होता है, पाप के कारण द्रव्य का नाश, देह में रोग, मन में अशान्ति होती है॥५७॥

उपाय — गुरु का जप और दान, सुवर्ण का दान तथा बपिना गऊ का दान करने में आगेग्यता होती है॥५८॥

अथ रविदशायां शनिभुक्तिमा० ११ दि० १२ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते मदे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ शत्रुनाश महत्सौख्य स्वल्पधान्यार्थलामकृत् ॥५९॥
 विवाहोत्सवकार्याणि शुभकार्यं शुभावहम् ॥ स्वोन्ने स्वसेत्रगे मदे मुहूर्दग्रहसमन्विते ॥६०॥
 गृहे कल्याणसंपत्तिर्विवाहादिषु सत्क्रियाम् ॥ राजसन्मानकीर्तिश्च नानावस्त्रधनप्राप्तम् ॥६१॥
 दायेशास्त्रिपुरधस्ये व्यये वा पापसंयुते ॥ वातशूलमहाव्याधिज्वरातोसारपीडनम् ॥६२॥
 बध्न कार्यहानिश्च वितनाश भङ्गदुःखम् ॥ अकस्मात्कलहश्चैव दायादजनविग्रहम् ॥६३॥
 भुक्त्वादी मित्रहानि स्थानमध्ये किञ्चित्सुखावहम् ॥ अते क्लेशकर चैव नीच तेषां तथैव च ॥६४॥
 पितृभ्रातृवियोग च गमनागमन तथा ॥ द्वितीयदूननाथे तु अपमृत्युभय भवेत् ॥६५॥ कृष्णा या
 महिषी दद्यान्मृत्युजयजप चरेत् ॥ छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्प्रदायकम् ॥६६॥

सूर्य दशा मे शनि का अन्तर ११ मास १२ दिन फल

सूर्य को दशा मे शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से, त्रिकोण स्थान मे हो तो शत्रु का नाश, सुख धन-धान्य का साधारण लाभ करता है ॥५९॥ विवाह आदि उत्सव शुभ कार्य होते हैं। शनि उज्ज्वराक्षि का या स्वगृही हो, अपने मित्रग्रह से युक्त हो ॥६०॥ तो घर मे कल्याण सुख, सम्पत्ति, विवाह आदि उत्सव, राज से सम्मान, कीर्ति, नानाप्रकार वस्त्रभूषण आदि की प्राप्ति होती है ॥६१॥ सूर्य से ६।८।१२ स्थान मे हो, पापग्रह युक्त हो तो वायु, शूल, तपेदिक, ज्वर, अतिसार आदि बीमारिया होती है ॥६२॥ बन्धन, कार्य-हानि, धननाश तथा महान् भय होता है। परिवार मे अकस्मात् फलह तथा लडाई होती है ॥६३॥ अन्तर के आदि मे मित्र की हानि हो, मध्य मे कुछ सुख हो तथा अन्त मे क्लेश हो। यदि शनि नीच राशि का तथा पाप संयुक्त हो ॥६४॥ वो मत्ता-पिता का वियोग यात्रा होती है। शनि यदि द्वितीयसप्तम का स्वामी हो वो अकाल मृत्यु का भय होता है ॥६५॥

उपाय - दूधवाली कालीगज्जा दान करे, मृत्युजप का जप करावे तथा छाग (बकरा) का दान करे तो यही दशा सभी सम्पत्ति की देनेवाली होती है ॥६६॥

अथ रविदशायां बुधभुक्तिमा० १० दि० ६ तत्फलम्

सूर्यास्यातर्गते सौम्ये स्वोन्ने वा स्वर्सेत्रेऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभस्ये युधे वर्गबलेयुति ॥६७॥
 राज्यलाम महोत्साह दारपुत्रादिसौख्यकृत् ॥ महाराजप्रसवेन वाहनावरभूषणम् ॥६८॥
 पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्गृहिगोघनसकुलम् ॥ भाग्ये लाभार्थिर्पुण्ये लाभवृद्धिकरो भवेत् ॥६९॥
 भाग्यपचमकर्मस्ये सन्मानो भवति ध्रुवम् ॥ स्वकर्मधर्मबुद्धिश्च मुक्तधर्मद्विजार्जनम् ॥७०॥
 धनधान्यादिसंयुक्त विवाह पुत्रसम्भवम् ॥ दायेशास्त्रमराशिस्ये सौम्यमुक्ती महत्सुखम् ॥७१॥
 वैवाहिक यज्ञकर्म दानधर्मजपादिकम् ॥ स्थानाभासितपराणि नामद्वयमयाऽपि वा ॥७२॥
 भोजनावरभूषाप्तिरभरेशो भवेत्प्रार ॥ दायेशास्त्रमुभस्याने रिपुक्ते नीचगैऽपि चर ॥७३॥
 देहनीश मारुतयो दारपुत्रादिपीडनम् ॥ भुक्त्वादौ दुःसमानोति मध्ये किञ्चित्सुखावहम् ॥७४॥
 अते तु राजकीर्तिश्च गमनागमनतथा ॥ द्वितीये दूननाथे तु देहज्ज्वरश्च ज्वरादिकम् ॥
 विष्णुनाभसहस्र च ह्यप्रदान च कारयेत् ॥ रजतप्रतिपादानं बुभुक्षारोग्यमादिशेत् ॥७५॥

सूर्य दशा मे बुध का अन्तर १० मास ६ दिन

सूर्य की दशा मे बुध का अन्तर हो और बुध उच्च का या स्वगृही हो, लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान मे हो, शुभ वर्ग मे हो॥६७॥ तो राज्य लाभ, महान् उत्साह, स्त्री पुत्र आदि का सुखकारक होता है। राजा या बड़े आदमी की कृपा से वाहन, भूषण आदि की प्राप्ति होती है॥६८॥ पुण्य और तीर्थ फल की प्राप्ति, घर मे गौ आदि पशु होते है। भाग्य स्थान मे बुध लाभेश से युक्त हो तो बहुत लाभदायक होता है॥६९॥ पचम, नवम, दशम स्थान मे बुध हो तो अपने व्यापार और धर्म की वृद्धि होती है तथा धर्म-कर्म मे निष्ठा होती है एवं गुरु, ब्राह्मण की पूजा होती है॥७०॥ धनधान्य सयुक्त सुख होता है, विवाह तथा पुत्रोत्पत्ति होती है। सूर्य से शुभ राशि मे हो, सौम्य ग्रह युक्त हो तो महान् सुख होता है॥७१॥ विवाह सम्बन्धी मंगल कार्य, यज्ञ कर्म, दान, धर्म, जप आदिक होते है। तथा अभिनन्दन होता है॥७२॥ उत्तम भोजन, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते है। देवोपम सुख होता है। सूर्य से बुध १२ वे स्थान मे हो अथवा नीच राशि का हो॥७३॥ तो देह पीडा मन मे चिन्ता जलन और स्त्री पुत्र को पीडा होती है। अन्तर के आदि मे दुःख होता है। मध्य मे कुछ सुख प्राप्ति होती है॥७४॥ बुधान्तर के अन्त मे राजभय, यात्रा होती है। बुध यदि द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो वात, व्याधि, ज्वर आदि की बीमारी होती है।

उपाय -विष्णुसहस्रनाम स्तोत्र पाठ अन्नदान तथा बुधकी चादी की प्रतिमा का दान करना चाहिए। उससे आरोग्यता और सुख होगा॥७५॥

रविमध्ये केतुभुक्तिमासाः ४ दिना ० ६ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गति केतौ देहपीडा मनोव्यथा ॥ अर्थव्यय राजकोप स्वजनादेरुपद्रवम् ॥७६॥
लग्नाधिपेन सयुक्ते आदौ सौख्य धनागमम् ॥ मध्ये तत्त्वेशमाप्नोति मृतवार्तागम वदेत् ॥७७॥
पट्टाष्टमध्यमे चैव दापेशात्पापसयुते ॥ कपोलदन्तरोगश्च भूजकुच्छ्रस्य समवम् ॥७८॥
स्थानविच्युतिरर्थस्य मित्रहानि पितुर्मृति ॥ विदेशगमन चैव शत्रुपीडा महद्भयम् ॥७९॥
लग्नादुपचये केतौ योगकारकसयुते ॥ शुभाशे शुभवर्गश्च शुभकर्मफलप्रदम् ॥८०॥
पुत्रदारादिसौख्य च सतीथ प्रियवर्द्धनम् ॥ विचित्रवस्त्रलाभ च यशोवृद्धि सुखावहा ॥८१॥
द्वितीयचूत नाथे वा ह्यपमृत्युभय वदेत् ॥ दुर्गाजप च कुर्वीत छागदान तथैव च ॥८२॥
महामृत्युञ्जयजप कुर्याच्छांतिमवाप्नुयात् ॥८३॥

सूर्य दशा मे केतु अन्तर मास ४ दिन ६ फल

सूर्य की दशा मे केतु का अन्तर हो तो देह मे पीडा, मन मे व्यथा, धन का नर्न, राज का कोप तथा उपद्रव होते है॥७६॥ केतु यदि लग्नेश मे युक्त हो तो आरम्भ मे सुख और धन की प्राप्ति होती है। मध्य पूर्वोक्त क्रेश होते है। तथा अन्त मे मृत व्यक्ति (स्वसम्बन्धी) की खबर मिलती है॥७७॥ किन्तु ६।८।१२ स्थान मे हो अथवा सूर्य से ६।८।१० स्थान मे एवं पापग्रह युक्त हो तो कपोल और दात की बीमारी होती है। तथा भूज कुच्छ्र की बीमारी भी नभव है॥७८॥ स्थान हानि, धन हानि, मित्र हानि, पिता की मृत्यु, विदेश गमन, शत्रु पीडा तथा महान् भय होता है॥७९॥ लग्न से केन्द्र मे कारक ग्रह मे युक्त केतु हो, शुभ नवमास मे और

शुभ वर्ग में हो तो किये हुए शुभ कर्म का फल होता है॥८०॥ और पुत्र, स्त्री का सुख, सन्तोष, विविध वस्त्र का लाभ, यश और सुख होते हैं॥८१॥ केतु द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है।

उपाय—दुर्गामन्त्र जप तथा छाग दान॥८२॥ अथवा महामृत्युञ्जय का जप करने से शान्ति होती है॥८३॥

रविदशायां शुक्रान्तर्दशा मा० १२ दि० तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते शुक्रे त्रिकोणे चन्द्रोऽपि वा ॥ स्वोच्चे मित्रस्ववर्गस्ये द्वाष्टस्त्रीभोग्यसपदाम् ॥८४॥ ग्रामांतरप्रयाण च ब्राह्मणप्रभुदर्शनम् ॥ राज्यलाभ महोत्साह छत्रचामरवैभवं ॥८५॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ विद्वत्प्रादिरत्नलाभ मुक्तावस्त्रादिलाभकृत् ॥८६॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्याद्बहुधान्यघन्यादिकम् ॥ उत्साह कीर्तिसंपत्तिर्नरवाहनसपदाम् ॥८७॥ सप्रात् घृष्टाष्टमव्यये, शुक्रे वा बलवर्जिते ॥ राजकोप मन क्लेश पुत्रस्त्रीघननारातम् ॥८८॥ मृक्यादौ वाहन मध्ये लाभ शुभकरो भवेत् ॥ अन्ते यशोनाशन च स्थानभ्रममयापि वा ॥८९॥ बहुद्वेषनत च स्वकुलाद्भोगनारातम् ॥ द्वितीयघूननाये तु देहे जाड्य मनोरजम् ॥९०॥ रघ्नरिक्तसमायुक्तैरपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥९१॥ श्रेतो गा महिषी दद्याद्ब्रजाप्य च कारयेत् ॥९२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे सूर्यान्तरदशाफलकथन
नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३३॥

सूर्य दशा में शुक्र का अन्तर मास १२ फल

सूर्य की दशा में शुक्रका अन्तर हो, शुक्र लग्नमें त्रिकोणमें या चन्द्रमाकी राशिमें हो, उल्बका अथवा मित्रकी राशिमें अथवा मित्रके या अपने वर्गमें हो तो इच्छित स्त्री, धन आदि प्राप्त होते हैं, ग्रामान्तरकी यात्रा होती है, राजदर्शन होता है, अधिकारका लाभ, महान् उत्साह तथा पदवृद्धि होती है॥८५॥ घर में कल्याण, सम्पत्ति और नित्य मिष्टान्न भोजन प्राप्त होता है। हीरा, पत्रा आदि रत्न का लाभ, कीमती वस्त्र का लाभ होता है॥८६॥ चौपाया जीव का लाभ, बहुत धनधान्य का लाभ होता है। उत्साह, कीर्ति, सम्पत्ति, मोटर आदि सवारी का लाभ होता है॥८७॥ लग्न से १।८।१२ के स्थान में शुक्र हो। (पाठक यह जान ले कि—बुध और शुक्र सूर्य से छठे आठवें अथवा केन्द्र, कोण ४।५।७।९।१० भावों में कभी भी नहीं होते) और बलहीन हो तो राजकोप, क्लेश, स्त्री, पुत्र घन की हानि॥८८॥ शुक्रान्तर के आदि में सवारी का लाभ और मध्य में शुभ, लाभ तथा अन्तः के अन्त में अपमश (मिन्दा) अथवा स्थान हानि॥८९॥ तथा चण्डूओ से द्वेष, परिवार से बलह हो और २।७ का स्वामी शुक्र हो तो देहजाड्य की बीमारी होती है। मन में अशान्ति भी होती है॥९०॥ २।७ का स्वामी होते हुए भी ८।१२ के स्वामी से भी युक्त हो तो अकालमृत्यु होती है। इस दोष के लिये उपाय—महामृत्युञ्जयजप या रुद्रमन्त्र जप तथा श्वेत गौ का दान करो॥९१॥९२॥

इति श्रीबृ० श० हो० शा० पू० भावप्रका० सूर्यान्तरदशाफलकथन

१२ — नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३३॥

१ टिप्पणी—सूर्य, बुध, शुक्र के अन्तरो मे यह ध्यान रखना चाहिए कि—सूर्य के बाद बुध की तथा बुध के बाद शुक्र की कथा है, अतः सूर्य से बुध का अन्तर अधिक से अधिक २८ अंश (दोनों तरफ) और शुक्र का ४८ अंश, इससे अधिक अन्तर नहीं होता, तब सूर्यसे बुध २-१२ से अधिक दूर नहीं होता और शुक्र ॥१११२१२१३॥ से अधिक दूर नहीं होता। इसलिये सूर्यसे बुध, ३।४।५।६।७।८।९।१०।११ भावोंमे कभी नहीं होता और शुक्र ४।५।६।७।८।९।१० भावों मे कभी नहीं होता।

बुध और शुक्र परस्पर १०।११।१२।१३।१४ मे होते हैं, परन्तु ये भी परस्पर ५।६।७।८।९ भावों मे नहीं होते।

अथ चन्द्रदशायां चन्द्रभुक्तिमासाः १० दि० तत्फलम्

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चंद्रे त्रिकोणेलाभगेषि वा ॥ भाग्यकर्माधिपयुक्ते गजाश्वान्तरसंकुलम् ॥१॥
देवतागुरुभक्तिश्च पुण्यश्लोकादिकीर्तितम् ॥ राज्यलाभं महत्सौख्यं यशोवृद्धिः सुखवहा ॥२॥
पूर्णचंद्रे पूर्णबलं सेनाधिपमहत्सुखम् ॥ पापयुक्तेऽथवा चंद्रे नीचे वा रिणःपृष्ठमे ॥३॥ तत्काले
धननाराः स्यात्स्थानच्युतिमयापि वा ॥ देहालस्य मनस्तापं राजमंत्रिविरोधकृत् ॥४॥
मातृक्लेशमनोदुःख निगडं बन्धुनाशनम् ॥ द्वितीयघ्ननाये तु रंघ्रिणःसमन्विते ॥५॥
देहाडधं महाभागमपमृत्योर्भयं भवेत् ॥ श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ॥६॥

चन्द्रदशा मे चन्द्रान्तर मास १० फल

चन्द्रमा स्वगृही, उच्च का तथा त्रिकोण या लाभस्थान मे हो और १।१० भाव के स्वामी से युक्त हो तो जातक का घर हाथी घोड़े आदि से युक्त हो ॥१॥ देवता गुरु की भक्ति तथा पवित्र वेद आदि का पाठ, राज्यलाभ, महान् सुख, यशोवृद्धि तथा सुख होता है ॥२॥ चन्द्रमा यदि पूर्णवली हो तो सेनाधिपति हो और महान् सुख हो। चन्द्रमा पापयुक्त या नीच का हो और ६।१२ भाव मे हो ॥३॥ तो चन्द्रान्तर मे धननाश हो या स्थान हानि हो। देह मे आलस्य, मन अशान्त, राजा या मन्त्री से विरोध होता है ॥४॥ माता को क्लेश, मन मे दुःख, कैद तथा बन्धु की हानि होती है। यदि २।७ का स्वामी हो और ८।१२ के स्वामी से युक्त हो तो देह मे जड़ता, हानि तथा अपमृत्यु का भय होता है। उपाय-दूधवाली श्वेत गौ का दान करे तो शान्ति आरोग्यता होती है ॥५॥६॥

अथ चन्द्रदशायां कुजभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणे ॥ सौभाग्यं राजसम्मानं वस्त्राभरणभूषणम् ॥७॥ यत्न-
कार्यार्थसिद्धिस्तु मविष्यति न सशयः ॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च घ्यवहारे जपो भवेत् ॥८॥
कार्यलाभं महत्सौख्यं स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे फलम् ॥ पृष्ठाष्टमध्यगे भौमे पापयुक्तेऽथवा यदि ॥९॥
दायेशादगुप्तस्थाने देहार्तिपदवीक्षिते ॥ गृहक्षेत्रादिहानिश्च घ्यवहारं तपैव च ॥१०॥
मृत्यवर्गेषु बालहं मृपातस्य विरोधनम् ॥ आत्मबन्धुविपरीणं च नित्यं निष्ठुरभाषणम् ॥११॥
द्वितीय घ्ननाये तु रंघ्रे रंघ्राधिपो यदा ॥ तद्दोषपरिहार्यं ब्राह्मणस्यार्चनं चरेत् ॥१२॥

चन्द्रदशा में मंगल का अन्तर ७ मास फल

चन्द्रमा की दशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में हो तो ऐश्वर्य, राजा से सम्मान प्राप्ति, वस्त्र आभूषण की प्राप्ति होती है॥७॥ यत्न करने से कार्यसिद्धि, धनलाभ निःसंदेह होता है। भूकान तथा भूमि की वृद्धि होती है तथा व्यवहार में जय होती है॥८॥ मंगल उच्चराशि में या स्वगृही हो तो कार्य की सिद्धि तथा अधिक सुख होता है। यदि मंगल ६।८।१२ भाव में हो॥९॥ अथवा चन्द्रमा से अशुभ स्थान में हो तो और पट्टेश में दृष्ट हो तो गृह (मकान), क्षेत्र (भूमि) की हानि तथा व्यापार में भी हानि होती है॥१०॥ परिवार में कलह (अथवा नौकरोमें कलह) राजसे विरोध अपने बन्धु का वियोग तथा नित्य बकवाद स्त्री कलह॥११॥ सप्तमेश द्वितीय भाव में तथा अष्टमेश अष्टमभाव में हो तो विशेष अनिष्ट की सम्भावना है। इस दोष की निवृत्ति के लिए ब्राह्मणों की पूजा तथा दान देना चाहिए॥१२॥

अथ राहुमुक्तिमासाः १८ तत्फलमाह

चद्रस्यातन्तरे राहौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणयो ॥ आदौ स्वल्पफलं ज्ञेयं शत्रुपीडा महद्भयम् ॥१३॥
चौराहिराजभीतिश्च चतुष्पाञ्जीवपीडनम् ॥ बन्धुनाश मित्रहानि मानहानि मनोव्यथाम् ॥१४॥
शुभपुक्ते शुभैर्दृष्टे लग्नादुपचयेपि वा ॥ योगकारकसन्ध्ये पत्र कार्पाससिद्धिकृत् ॥१५॥
नैर्ऋत्ये पश्चिमे भागे कञ्चित्प्रभुसमागमम् ॥ घाहनावरलाभ च दृष्टकार्यसिद्धिकृत् ॥१६॥
दायेशाद्रिपुरास्त्ये व्यये वा बलवर्जिते ॥ स्थानभ्रम मनोदुःख पुत्रक्षेत्र महद्भयम् ॥१७॥
राजकार्यकलाप च दारपीडा महद्भयम् ॥ वृश्चिकादिविषाद्वीरतिशौराहिनृपपीडनम् ॥१८॥
दायेशात्केन्द्रकोणे वा वृश्चिक्ये ताम्नेषि वा ॥ पुष्पतीर्यफलावप्लिर्देवतादर्शनं महत् ॥१९॥
परोपकारधर्मादिपुण्यधर्मादिसप्रहम् ॥ द्वितीयछूनराशित्ये देहबाधा भविष्यति ॥२०॥
छागवान प्रकुर्वीत देहारोग्य प्रजामते ॥२१॥

चन्द्रदशा में राहु अन्तर १८ मास फल

चन्द्रमा की दशा में राहु का अन्तर हो, राहु लग्न से केन्द्र या त्रिकोणस्थान में हो तो दशारम में कुछ श्रेष्ठ, पश्चात् शत्रुपीडा तथा महान् भय हो॥१३॥ चोर, सर्प तथा राज से भय, गौ आदि पशु की पीडा, बन्धु नाश, मानहानि, मित्रहानि तथा मन में अगान्ति होती है॥१४॥ शुभपुक्ते शुभैर्दृष्टे लग्नादुपचयेपि वा ॥ योगकारकसन्ध्ये पत्र कार्पाससिद्धिकृत् से सम्बन्ध हो तो उद्योग की सिद्धि तथा धनलाभ होता है॥१५॥ नैर्ऋत्य दिशा या पश्चिम दिशा में निम्नी बड़े आदमी से मेल हो और उसमें इच्छित कार्य की निधि तथा सवारी आदि का लाभ हो॥१६॥ दायेश - चन्द्रमासे ६।८वे हो या १२ वे में हो और बलवर्जित हो तो स्थान हानि, मन क्षेत्त, सन्तान से दुःख, महान् भय॥१७॥ राजकार्य हानि, स्त्री को पीडा, भय, सर्पादि में भय, चोरभय तथा राजा में भी पीडा होती है॥१८॥ चन्द्रमा में केन्द्र या त्रिकोण में तीमरे या साभस्थान में हो तो पवित्र तीर्थ यात्रा देवदर्शन होता है॥१९॥ परोपकारी कार्य, पुण्य, दान, आदि श्रेष्ठ कार्य होते हैं। राहु दूसरे या सातवें भाव में हो तो शरीर बण्ट होता है॥२०॥ इसको शान्ति छाग (बकरा) के दान में होती है और दान के पत्र में आगोप्यता होती है॥२१॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः १६ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्गते जीवे लग्नात्केन्द्र त्रिकोणम् ॥ स्वगेहे लाभस्वोच्चे वा राज्यलाभ महोत्सवम् ॥२२॥
 वस्त्राञ्जलिकारभूषाप्ति राजप्रीति धनागमम् ॥ इष्टदेवप्रसादेन गर्भाधानादिक फलम् ॥२३॥
 शुभशोभनकार्याणि गृहेलक्ष्मी कटाक्षकृत् ॥ राजाश्रय धन भूमिगजवाजिसमन्वितम् ॥२४॥
 महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ पष्ठाष्टमध्यमे जीवे नीचे वाऽस्तगते यदि ॥२५॥
 पापमुक्तेऽशुभ कर्म गुरुपुत्रादिनाशनम् ॥ स्थानभ्रश मनोदुःखमकस्मात्कलह ध्रुवम् ॥२६॥
 गृहक्षेत्रादिनाश च वाहनावरनाशनम् ॥ दापेणात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिह्नये लाभगैःपि वा ॥२७॥
 भोजनावरणपञ्चादि महोत्साह करोति च ॥ आश्रादि सुखसंपत्तिर्धैर्य वीर्यपराक्रमम् ॥२८॥
 यज्ञवीर्यविवाहश्च राज्यधीधनसपद ॥ दापेणाद्रिपुरध्रुव्ये व्यये वा बलवर्जिते ॥२९॥ करोति
 कुत्सिताश्र च विदेशगमन तथा ॥ भुक्त्यादौ शोभन प्रोक्तमते क्लेशकर भवेत् ॥३०॥
 द्वितीय-यून-नाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रक जपेत् ॥ स्वर्णदानमिति
 प्रोक्त सर्वसपत्प्रदायकम् ॥३१॥

चन्द्रदशा मे गुरु का अन्तर १६ मास फल

चन्द्रदशा मे बृहस्पति का अन्तर हो, लग्न से गुरु केन्द्र या त्रिकोण मे हो या स्वगृही, उच्च का, लाभ भाव मे हो तो राज्यलाभ तथा महोत्सव होता है ॥२२॥ वस्त्र, अलंकार, आभूषण की प्राप्ति, राजप्रीति, धनलाभ होता है। इष्टदेव की कृपा से सन्तान सुख होता है ॥२३॥ भगल कार्य सम्पन्न होते हैं। घर मे लक्ष्मी की कृपा रहती है। राजा के आश्रय से धन, भूमि तथा सवारी का लाभ होता है ॥२४॥ इच्छित कार्य सिद्ध होते हैं। गुरु यदि लग्न से ६।८।१२ मे हो या नीचराशि मे अस्त हो ॥२५॥ पापग्रह युक्त हो तो अशुभ कार्य होते हैं। गुरु-पुत्र या गुरु तथा पुत्र आदि की हानि होती है। स्थानहानि चिन्ता तथा अचानक ही बलह होती है ॥२६॥ मकान, भूमि आदि की हानि, सवारी आदि का नाश होता है। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण मे तीसरे या लाभ स्थान मे हो तो ॥२७॥ उत्तम भोजन वस्त्र पशु आदि की प्राप्ति होती है। उत्साह बढ़ता है। भाई आदि से और सम्पत्ति धैर्य बल प्राप्त होता है ॥२८॥ यज्ञ आदि पुण्य कार्य, विवाह आदि भगलकार्य, राजा के समान ऐश्वर्य, धनसम्पत्ति होती है। चन्द्रमा मे ६।८।१२ स्थान मे तथा बलहीन हो ॥२९॥ तो कुभोजन और विदेशयात्रा होती है। अतर्दशा के आरम्भ मे शुभ हो और अन्त मे क्लेश हो ॥३०॥ २।७ वा स्वामी यदि गुरु हो तो अपमृत्यु होती है ॥ इसकी शान्ति के लिए शिवसहस्रनामका पाठ बरे या करावे। भुवर्ण का दान बरे तो मय सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥३१॥

अथ शनिभुक्तिमासाः १९ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्गते मदे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणम् ॥ स्वसेव्रत्वाशमे चैव मदे तृणाशसपुते ॥३२॥
 शुभदृष्टिपुते वाऽपि लाभे वा बलसपुते ॥ पुत्रमिश्रायसपत्ति शूद्रप्रभूतमागमम् ॥३३॥
 व्यवसायात्कृताधिक्य गृहक्षेत्रादिवृद्धिदम् ॥ पुत्रलाभ च वस्याण राजानुग्रहवैभवम् ॥३४॥
 पष्ठाष्टमध्यमे मदे नीचे वा धनगैःपि वा ॥ तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थे स्नान चैव तु वरीतम् ॥

॥३५॥ अनेकजनत्रासश्च शस्त्रपीडा भविष्यति ॥ दायेशाल्केन्द्रराशिस्ये त्रिकोणे बलमेपि वा ॥३६॥ स्वचित्तसौख्य धनाप्तिश्च दारपुत्रविरोधकृत् ॥ द्वितीयचूनरघस्ये देहबाधा भविष्यति ॥३७॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥ कृष्णा या महिषी दद्याद्दानेनारोग्य-
मादिशेत् ॥३८॥

चन्द्रदशा मे शनि का अन्तर १९ मास फल

चन्द्रमा की दशा मे शनि का अन्तर हो और शनि लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे अथवा स्वक्षेत्र या उच्च मे हो एव परमोच्च का हो ॥२३॥ तथा शुभ दृष्टि या युक्त हो अथवा बलवान् होकर लाभस्थान मे हो तो पुत्र, मित्र, धन, सम्पत्ति प्राप्त होती है। तथा धनी शूद्र (या गृध्र आदि) से मेल होता है ॥३३॥ व्यापार से अधिक लाभ होता है। मकान भूमि आदि की वृद्धि होती है। पुत्रलाभ तथा कल्याण एव राजकृपा से ऐश्वर्य प्राप्त होता है ॥३४॥ शनि ६।८।१२ स्थान मे नीचराशि मे, द्वितीय भाव मे हो तो इसके अन्तर मे प्रथम तो पवित्र तीर्थ मे स्नान, देवदर्शन होता है ॥३५॥ अनेक शत्रुओं से भय तथा शस्त्राघात होता है। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण राशि मे बलवान् हो ॥३६॥ कुछ सुख, धनलाभ होकर स्त्री पुत्र से विरोध होता है। २।७।८ इन स्थानों मे हो तो देहवृष्टि होता है ॥३७॥ इसकी शान्ति के लिए मृत्युञ्जय जप करो। काशी गौ का दान देने से शान्ति और आरोग्यता होती है ॥३८॥

अथ बुधभुक्तिमासाः १७ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्जिते सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणो ॥ स्वर्स नवाराके सौम्ये तुगे वा बलमयुते ॥३९॥ धनायम राजमान प्रियवस्त्रादि लाभकृत् ॥ विद्याविनोदसङ्गोष्ठी ज्ञानवृद्धिं सुखावहा ॥४०॥ सत्तानप्राप्तिं सतोप वाणिज्याद्धनलाभकृत् ॥ याहनच्छत्रसयुक्तं नानालकारनूपितम् ॥४१॥ दायेशाल्केन्द्रकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ॥ विवाह यज्ञदीक्षा च दानधर्मशुभादिष्वम् ॥४२॥ राजप्रीतिकरं चैव विद्वज्जनसमागमम् ॥ भुक्तामणिप्रवालानि वाहनाबरनूपणम् ॥४३॥ आरोग्यप्रीतिसौख्यं च सोमपानादिकं सुखम् ॥ दायेशाद्रिपुरघस्ये व्यये वा नीचगेऽपि वा ॥४४॥ तद्भुक्तिर्देहबाधा च कृषिगोभूमिनाशनम् ॥ कारागृहप्रवेशा च दारपुत्रादिपीडनम् ॥४५॥ द्वितीयचूननामे तु ज्वरपीडा महद्भयम् ॥ छागदानं प्रकुर्वीत विष्णुमाहस्यं जपेत् ॥४६॥

चन्द्रदशा मे बुधान्तर १७ मास फल

चन्द्रदशा मे बुधान्तर हो, बुध लग्न से केन्द्र, लाभ, त्रिकोण मे हो, स्वगृही स्वनवाश, उच्च का शुभराशि मे तथा बली हो ॥३९॥ तो धनप्राप्ति, राजमान, सुन्दर वस्त्रादि प्राप्ति विद्या, वाच्य विनोद, मित्रगोष्ठी, ज्ञान की वृद्धि, सुखा ॥४०॥ सत्तानप्राप्ति सन्तोष, व्यापार मे लाभ, मकारी, छात्र, नाव अलकार की प्राप्ति होती है ॥४१॥ दायेश, चन्द्रमा से केन्द्र मे, त्रिकोण मे, लाभस्थान मे या धनभाव मे हो तो विवाह यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म तथा शुभकर्म ॥४२॥ राजा मे प्रीति, विद्वज्जन का समागम, हीरा मोनी की प्राप्ति मकारी, आभूषण, आरोग्यता प्रीति, सुग तथा आनन्दकर पेष आदि की प्राप्ति होती है ॥४३॥

चन्द्रमा से ६।८।१२ में या नीचराशि में हो॥४४॥ तो बुधान्तर में देहवृष्ट, सेती, पशु, भूमि का नाश होता है। बैदखाने में बास, स्त्रीपुत्र को पीडा होती है॥४५॥ २।७ का स्वामी हो तो ज्वरपीडा तथा महान् भय होता है। उपाय-छाय दान करे या विष्णुसहस्र नाम स्तोत्र का पाठ करे या करावे॥४६॥

अथ केतुभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्गते केतौ केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ दुश्चिक्वे बलसयुक्ते धनलाभ महत्सुखम् ॥४७॥ पुत्रदारादिसौख्यं च विघ्नकर्म करोति च ॥ भुक्त्यादी धनहानि स्यान्मध्यमे मुखमाप्नुयात् ॥४८॥ दायेशात्केन्द्रलाभे वा त्रिकोणे बलसयुक्ते ॥ स्वचित्फल दशादौ तु ह्यल्पसौख्यं धनागमम् ॥४९॥ गोमहिष्यादिलाभं च भुक्त्यतेचार्थनारागम् ॥ पापयुक्तेऽथ वा दृष्टे दायेशाद् धरिफो ॥५०॥ हीनशत्रुत्वकार्पाणि अकस्मात्कलह ध्रुवम् ॥ द्वितीयचूनराशित्ये अनारोग्यं महद्रूपम् ॥५१॥ मृत्युजप प्रकुर्वीत सर्वसप्तप्रवादकात् ॥५२॥

चन्द्र दशा में केतुन्तर ७ मास फल

चन्द्रदशा में केतु का अन्तर हो केतु केन्द्रलाभ त्रिकोण में तीसरे भाग में, बलवान् हो तो धनलाभ, महान् सुखा॥४७॥ स्त्रीपुत्र का सुख तथा कुछ विघ्नकारक भी होता है। अन्तरके आदि में धनहानि मध्य में सुख प्राप्त होता है॥४८॥ चन्द्रमा से केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभस्थान में तथा बलवान् हो तो दशा के आदि में कुछ कम रूप में सुख, धन की भी साधारण प्राप्ति होती है॥४९॥ गौ, भैस आदि का लाभ तथा अन्तर के अन्त में धन की हानि होती है। यदि केतु पापग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तथा चन्द्रमा से ८।१२ में हो तो ॥५०॥ हीन कार्य, शत्रु कार्य, अकस्मात् कलह होती है। द्वितीय सप्तम की राशि में हो तो नीरोगता तथा महान् भय होता है॥५१॥ उपाय-महामृत्युञ्जय जप करने से सब प्रकार शुभ होता है॥५२॥

अथ शुक्रभुक्तिवर्षः १ मासाः ८ तत्फलम्

चन्द्रस्यातर्गते शुके केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि राज्यलाभ करोति च ॥५३॥ महाराजप्रसादेन बाहनाबरनूपणम् ॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्याद्दारापुत्रादिवर्धनम् ॥५४॥ नूतनगारनिर्माणं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ सुगन्धपुष्पदायादिरम्यस्त्रारोग्यसपदाम् ॥५५॥ वसाधिपेन सयुक्ते वैहसीत्य महत्सुखम् ॥ सत्कीर्तिमुखसप्तपितृहोत्रादिबुद्धिकृत् ॥५६॥ नीचे वास्तवते शुके पापग्रहयुतेऽसिते ॥ मूनाश पुत्रमित्रादिनाशन पत्निनाशनम् ॥५७॥ चतुष्पाज्जीवहानि स्याद्वाजद्वारे विरोधकृत् ॥ धनस्थानगते शुके स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुक्ते ॥५८॥ निधिलाभ महत्सौख्यं भूलाभ पुत्रसमवम् ॥ भाग्यलाभाधिपैर्धुक्ते भाग्यवृद्धिश्चो भवेत् ॥५९॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिं मुखावहा ॥ देवब्राह्मणभक्तिभ्रमुक्ताविदुर्मत्तामहृत् ॥६०॥ दायेशात्लाभगे शुके त्रिकोणे केन्द्रगोपि वा ॥ गृहोत्राभिषुद्धिश्च वितलाभ महत्सुखम् ॥६१॥ दायेशाद्विपुलभृत्ये ध्ये वा पापसयुक्ते ॥ विदेशवासदुःखार्तिमृत्युचौरादिपीडनम् ॥६२॥

द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युभयं भवेत् ॥ तद्दोषविनिवृत्त्यर्थं रुद्रजापं च कारयेत् ॥६३॥ श्वेतां गां रजतं दद्याच्छांतिमाप्नोत्यसंशयः ॥६४॥

चन्द्रदशा में शुक्रान्तर १ वर्ष ८ मास फल

चन्द्रमा की दशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र केन्द्र में त्रिकोण में, लाभ में, स्वगृही, उच्च का हो तो राज्यलाभ कारक होता है ॥५३॥ राजा की कृपा से वस्त्र, भूयण, घोड़ा आदि की प्राप्ति, स्त्री पुत्र परिवार की वृद्धि ॥५४॥ नया मकान बनाना, नित्य मिष्टान्न भोजन, बाग की सैर, सुन्दर स्त्री, आरोग्यता आदि की प्राप्ति होती है ॥५५॥ दशास्वामी चन्द्रमायुक्त हो तो, देहसौख्य, धनप्राप्ति, कीर्ति, सुख, सम्पत्ति, मकान, भूमि आदि की वृद्धि होती है ॥५६॥ शुक्र नीचराशि में, अस्त, पापग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो भूमिनाश, पुत्र मित्रनाश, भार्यानाश हो ॥५७॥ पशुहानि, राज में विरोध हो। शुक्र यदि स्वगृही, उच्च का होकर धनभाव में हो ॥५८॥ तो धरोहर की प्राप्ति, महान सुख, भूमिलाभ, पुत्रोत्पत्ति होती है। १।११ के स्वामी से युक्त हो तो भाग्य वृद्धि होती है ॥५९॥ राजा की कृपा से इष्टसिद्धि, सुख, देववाह्याण भक्ति, हीरा मोती आदि की प्राप्ति होती है ॥६०॥ शुक्र चन्द्रमा से त्रिकोण में, केन्द्र में लाभभाव में हो तो भूमि, मकान की वृद्धि, धनलाभ, अधिक सुख होता है ॥६१॥ चन्द्रमा से ६।८।१२ में पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो विदेशवास, दुःख क्लेश, मृत्यु, चौर तथा सर्पादि से पीड़ा होती है ॥६२॥ द्वितीय सप्तमभाव का स्वामी शुक्र हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए रुद्रमन्त्रजप या रुद्री पाठ तथा श्वेत गौ का दान करे तो निश्चय शान्ति होती है ॥६४॥

अथ रविभुक्तिमासाः ६ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते भानौ स्वोच्चे स्वभेदसंयुते ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा धने वा सोदरे बले ॥६५॥ नष्टराज्य धनप्राप्तिं गृहे कल्याणशोभनम् ॥ मित्रराजप्रसादेन पापभूम्यादिलाभकृत् ॥६६॥ गर्भाधानफलप्राप्तिर्गृहे लक्ष्मीः कदाश्नकृत् ॥ भुक्त्यन्ते देहआलस्यं ज्वरपीडा भविष्यति ॥६७॥ दायेशादिपुरंद्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ॥ नृपचीरादिभीतिश्च ज्वररोगादिसमयम् ॥६८॥ विदेशगमनं चार्तिं समते फलवैभवम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ज्वरपीडा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवपूजां च कारयेत् ॥६९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे चंद्रांतर्दशाफलकथनं

नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४॥

चन्द्रदशा में सूर्यान्तर ६ मास फल

चन्द्रदशा में सूर्य का अन्तर हो, सूर्य उच्च का, स्वगृही केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभ में, दूसरे या तीसरे भाग में हो ॥६५॥ तो नष्टराज्य की प्राप्ति, धनलाभ, घर में सुखशान्ति, मित्र तथा राजा की कृपा से ग्राम लाभ, भूमिलाभ ॥६६॥ सन्तान की आशा, घर में लक्ष्मी की स्थिति हो, अन्तर के अन्त में आलस्य, वर्महीनता, ज्वर, पीडा होती है ॥६७॥ यदि चन्द्रमा में

पापयुक्त होकर ६।८।१२ में हो तो राजा चौर आदि का भय, ज्वर आदि पीडा ॥६८॥
विदेशयात्रा तथा दुःख होता है। २।७ का स्वामी यदि सूर्य हो तो ज्वरपीडा होती है। इसकी
शान्ति के लिए शिवपूजा करनी चाहिए ॥६९॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० भावप्र० चन्द्रान्तर्दशाफलकथन
नाम चतुस्त्रिंशोऽध्याय ॥३४॥

अथ कुजदशायां कुजांतरमा० ४ दि० २७ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते भीमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ लाभे वा धनसयुक्ते दुःश्रिक्ये धनसयुक्ते ॥१॥
लग्नाधिपेन सयुक्ते राजाऽनुग्रहवर्धनम् ॥ लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्यलामकृत् ॥२॥
पुत्रोत्सवादिसतोष गृहे गोशीरसकुलम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्शगे भीमे स्वाशे वा बलसयुक्ते ॥३॥
गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गोमहिष्याविलामकृत् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिं सुसाधहा ॥४॥
पष्ठाष्टमध्यमे भीमे पापदृग्योगसयुक्ते ॥ मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च प्रेष्ठाधिक्यं वृणाद्भयम् ॥५॥
चौरादिराजपीडा च धनधान्यपशुक्षयम् ॥ द्वितीये छूतनाथे तु देहजाड्य मनोरुजम् ॥६॥
सदोषपरिहारार्थं रुद्रजाप्यं च कारयेत् ॥ अनद्वाहं प्रदद्याच्च कुजदोषनिवृत्तये ॥७॥ आरोग्यं
पुण्यं तस्य सर्वसंपत्तिदायकम् ॥८॥

मंगल की दशा में मंगल का अन्तर मा० ४ दि० २७ फल

मंगल दशा में मंगल का अन्तर हो और मंगल लग्न में केन्द्र में त्रिकोण में लाभ में, दूसरे,
तीसरे भाव में ॥१॥ लग्नेश से युक्त हो तो राजा की कृपा में सम्पत्ति की वृद्धि हो और घर में
लक्ष्मी स्थिर रहे। मष्ट हुआ ऐश्वर्य और धन का लाभ हो ॥२॥ पुत्र जन्म का उत्सव हो। घर
में कल्याण, सतोष, गौ आदि हो। मंगल उच्च वा स्वगृही, अपने नवाश में तथा बलवान्
हो ॥३॥ तो मकान, भूमि की वृद्धि, गौ, पशु आदि की वृद्धि हो। राजा या बड़े आदमी की
कृपा से मनोरथ सिद्ध हो ॥४॥ मंगल यदि ६।८।१२ स्थान में पापग्रह की दृष्टि या योग हो तो
मूत्रकृच्छ्र की बीमारी, पाव से भय हो ॥५॥ चोर आदि का भय राज में भय, धनधान्य, पशु
का क्षय हो। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो देह जाड्य तथा मन में अशान्ति हो ॥६॥ इसकी
शान्ति के लिये रुद्र जप करे। लाल बैल का दान करे ॥७॥ तो मंगल का दोष दूर होता है।
आरोग्यता होती है तथा सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥८॥

अथ राहुभुक्तिमासाः १२ दिना० १८ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते राहौ स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ॥ गुप्तयुक्ते गुप्तेष्टे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥९॥
तत्काले राजसन्मानं गृहभूम्यादिलामकृत् ॥ बलप्रयुक्तलाभं स्याद्विषयसाम्राज्यसिद्धिम् ॥१०॥
गयाज्जनफलावाप्तिं विदेशगमनं तथा ॥ पष्ठाष्टमध्यमे राहौ पापयुक्तेऽयं बीक्ष्णे ॥११॥
चौराहिरण्यमीतिश्चतुष्पाञ्जीवनानाम् ॥ बातपित्तप्रथं चैव कारागृहनिवेशनम् ॥१२॥
भक्तस्थानगते राहौ धननाशं महद्भयम् ॥ द्वितीये सप्तमे वापि ह्यपमृत्युभयं महत् ॥१३॥ नागद्वान्

प्रकुर्वीत देवब्राह्मणभोजनम् ॥ मृत्युञ्जयजपं कुर्मादिपुरारोग्यमादिशेत् ॥१४॥

राहु का अन्तर मास १२ दिन १८ फल

मगल की दशा में राहु का अन्तर हो तथा राहु लग्न से उच्च राशि में, मूलत्रिकोण में हो॥१॥ तो दशकाल में राजकुल में सम्मान, मकान, भूमि आदि का लाभ, स्त्रीपुत्र का लाभ तथा व्यापार से अधिक लाभ होता है॥१०॥ गन्ना खान का फल मिलता है। विदेश की यात्रा होती है। ६।८।१२ में राहु पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो॥११॥ चोर, सर्प, घाव आदि से भय होता है। चौपाया की हानि, वात पित्त व्याधि तथा कैव होती है॥१२॥ राहु धन स्थान में हो तो धन का नाश और महान् भय हो। राहु २।७ वे स्थान में हो तो अकाल मृत्यु का भय हो॥१३॥ उपाय-सुवर्ण सर्प का दात, देवपूजा, ब्राह्मणभोजन, मृत्युञ्जय जप करने से आयु और आरोग्यता होती है॥१४॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते जीवे त्रिकोणे केन्द्रोपि वा ॥ लाभे वा धनसंयुक्ते तुंगांशे स्वांशोपि वा ॥१५॥ सत्कीर्ती राजसम्मान धनधान्यस्य वृद्धिक्त् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिलाभक्त् ॥१६॥ दापेशात्केन्द्रराशिस्थे त्रिकोणे लाभोपि वा ॥ भाग्यकर्माधिपैर्पुक्ते बाह्याधिपसंयुक्ते ॥१७॥ सन्नाधिपसनायुक्ते शुभाशे शुभवर्गे ॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गृहे कल्याणसंपदः ॥१८॥ देहारोग्यं महत्कीर्तिर्गृहे गोकुलसंग्रहः ॥ चतुष्पाज्जीवलाभःस्याद्भवसायात्फलाधिकम् ॥१९॥ कलत्रपुत्रविभव राजसम्मानवैभवम् ॥ यष्टाष्टमव्यये जीवे नीचे वास्तगते यदि ॥२०॥ पापग्रहेणसंयुक्ते दृष्टे वा दुर्वले यदि ॥ चौराहिनृपभीतिश्च नित्ररोगादिसम्भवम् ॥२१॥ प्रेतबाधां भृत्यनाशं सोदराणां विनारानम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युज्वरादिकम् ॥ सद्योऽपपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥२२॥

गुरु अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

मगलकी दशामें गुरुका अन्तर हो, गुरु केन्द्र, त्रिकोण या लाभमें अथवा धनस्थानमें हो अपने उच्चांशमें, अपने अंश में हो॥१५॥ तो सत्कीर्ति, राजसम्मान, धनधान्यकी वृद्धि, सुख, सम्पत्ति, स्त्रीपुत्रका लाभ होता है। मगलसे गुरु केन्द्रमें, त्रिकोण या लाभमें हो, नयनेश, दशमेश तथा चतुर्थेशसे युक्त हो॥१७॥ लग्नेश से युक्त, अपने अंश में, शुभ वर्ग में हो तो मकान, भूमि की वृद्धि होती है तथा कल्याण और सम्पत्ति की वृद्धि होती है॥१८॥ शरीर निरोग, महान् कीर्ति, गौ आदि चौपाया का लाभ, व्यापार से विपुल धन लाभ होता है॥१९॥ स्त्री और पुत्र, वैभव, राज सम्मान होता है। गुरु यदि ६।८।१२ स्थान में या नीच का अथवा अस्त हो॥२०॥ पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो, बलहीन हो तो चोर, सर्पादि, राजभय होता है। पित्त जनित रोग होता है॥२१॥ प्रेत बाधा, नौकर की हानि, भाइयो का नाश होता है। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो ज्वर आदि रोग तथा अकाल मृत्यु का भय होता है। इगवी शान्ति के लिये 'शिवमहसनाम' स्तोत्र का पाठ करना चाहिए॥२२॥

अथ शनिभुक्तिमासाः १३ दिना० ९ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते मदे स्वर्शे केन्द्रत्रिकोणगे ॥ मूलत्रिकोणकेन्द्रे वा तुगारो स्वाशगे पवि ॥२३॥
 सप्राधिपतिना वापि शुभदृष्टियुतैश्चले ॥ राज्यसौख्य यशोवृद्धि स्वग्रामे धान्यवृद्धिकृत् ॥२४॥
 पुत्रपौत्रसमायुक्ते गृहे गौधनसग्रह ॥ स्ववारे राजसन्मान स्वमासे पुनर्वृद्धिकृत् ॥२५॥
 नीचादिलेत्रगे मन्दे पष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥ म्लेच्छवर्गप्रभुभय धनधान्यादिनाशनम् ॥२६॥
 निगड बध्न रोगमते क्षेत्रनिवासकृत् ॥ द्वितीयचूनाये तु पापयुक्ते महद्भयम् ॥२७॥ धननाश
 च संचार राजद्वेष मनोरुजम् ॥ चौराग्रिनुपपीडा च सहोदरघिनाशनम् ॥२८॥ बधुद्वेषकर चैव
 जीवहानिश्च जापते ॥ अकस्माच्च मृतेर्भौति पुनदाराविपीडनम् ॥२९॥ कारागृहादिभीतिश्च
 राजदण्डो महद्भयम् ॥ दायेशात्केन्द्रराशित्ये लाभस्ये वा त्रिकोणगे ॥३०॥ विदेशयान लभते
 दुष्कीर्तिर्विविधा तथा ॥ पापकर्मरतो नित्य घहुजीवादिहिसक ॥३१॥ विजय क्षेत्रहानिश्च
 स्थानभ्रशो मनोव्यथा ॥ मृधेष्पजय चैव मूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥३२॥ दायेशात्पृष्ठरश्मे वा
 व्यपे वा पापसयुते ॥ तदभुक्ती मरण ज्ञेय नृपचौरादिपीडनम् ॥३३॥ वातपीडा च
 शूलादिजातिशत्रुभय भवेत् ॥३४॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥३५॥

शनि का अन्तर मा० १३ दि० ९ फल

मंगल की दशा में शनि का अन्तर हो, शनि अपनी राशि में, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में,
 मूल त्रिकोण अथवा मूलत्रिकोण से केन्द्र में, परमोच्च या नवमास म हो ॥२३॥ लग्नेश से युक्त,
 शुभ, दृष्टियुक्त बलवान् हो तो राजा के समान ऐश्वर्य यश की वृद्धि अपने देश में ही धन की
 वृद्धि हो ॥२४॥ पुत्र, पौत्र से युक्त, घर में गौ और धन का सग्रह हो। शनिवार को राज
 सन्मान हो। माघ, फाल्गुन में पुत्र हो ॥२५॥ शनि यदि ६।८।१२ स्थान में नीच या शत्रु गृह में
 हो तो म्लेच्छ वर्ग के अधिकारी से भय हो धनधान्य का नाश हो ॥२६॥ कैद या हवालात हो।
 दशा के अन्त में रोग हो जिसके कारण अपने घर में ही रहना हो। द्वितीय सप्तम का स्वामी
 पापयुक्त हो तो महान् भय हो ॥२७॥ धन का नाश राजद्वेष मन में व्यथा चोर अग्नि,
 राजपीडा, सहोदर भाई का नाश ॥२८॥ बन्धुओं में द्वेष जीव की हानि अकस्मात् किसी की
 मृत्यु का भय, स्त्री पुत्र को पीडा हो ॥२९॥ कैद होने का भय हो, राजदण्ड का भय हो। मंगल
 से शनि केन्द्र में, लाभ या त्रिकोण में हो ॥३०॥ तो विदेश यात्रा हो और इस यात्रा में अनेक
 प्रकार की गुराइया हो। पाप कर्मरत तथा जीव हिसक होता है ॥३१॥ मकान, भूमि आदि का
 विजय, स्थान हानि, मन में व्यथा, मुकदमे में पराजय, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी होती है ॥३२॥
 मंगल से शनि ६।८।१२ स्थान में, पापग्रह युक्त हो तो गज, चोर से पीडा होती है ॥३३॥
 वात व्याधि, शूल रोग, शत्रुभय या मृत्यु होती है ॥३४॥ इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय
 जप होना चाहिए ॥३५॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ११ दिना० २७ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते सौम्ये सप्रात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ सत्कयश्चाजपादान धर्मवृद्धिर्महदय ॥३६॥
 नीतिमार्गप्रसगश्च नित्य मिष्टाष्टभोजनम् ॥ वाहनावरपश्वादिराजकर्म मुक्तानि च ॥३७॥
 कृषिकर्मफल सिद्धिर्वारिणावरभूषणम् ॥ नीचे वास्तवते वापि पष्ठाष्टव्ययनेपि वा ॥३८॥

हृद्रोग मानहानिश्च निगड बहुमाशनम् ॥ दारपुत्रार्थनाश स्याच्चतुष्पाञ्जीवनाशनम् ॥३९॥
दशाधिपेन सयुक्ते सत्रुवृद्धिर्महद्भयम् ॥ विदेशागमनं चैव नानारोगस्तथैव च ॥४०॥ राजद्वारे
विरोधश्च कलहः सौम्यभुक्तिषु ॥ दायेशात्केद्रकोणे वा स्योन्त्वे युक्तार्थलाभकृत् ॥४१॥
अनेकधननापत्य राजसन्मानमेव च ॥ भूपासयोगे कुरुते धनावरविभूषणम् ॥४२॥

बुध का अन्तर मा० ११ दि० २७ फल

मंगलकी दशा में बुध का अन्तर हो, बुध लगने केन्द्र या त्रिकोण में हो तो सत्कथा धवण,
अज्ञातमन्त्र का ग्रहण, धर्म बुद्धि तथा महान् यश होता है ॥३६॥ नीति मार्ग में प्रवृत्ति,
मिष्टान्न भोजन, वाहन वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, राजकर्म का सुयोग और सुख होता
है ॥३७॥ सेती से अच्छा लाभ, सवारी, वस्त्र-भूषण प्राप्ति होता है। बुध यदि मंगल से
६।८।१२ भावों में, नीच राशि में, अस्त हो ॥३८॥ तो हृदय रोग, मानहानि, बन्धुनाश, कैद,
स्त्रीपुत्र का नाश, चौपाया का नाश होता है ॥३९॥ मंगल से युक्त हो तो शत्रु वृद्धि, महान्
भय, विदेश यात्रा तथा अनेक रोग होते हैं ॥४०॥ राज द्वार में विरोध, कलह होती है। मंगल
से बुध केन्द्र, त्रिकोण में हो, उच्च का हो तो उचित धन का लाभ होता है ॥४१॥ अनेक
सम्पत्ति का दृष्टी, राज सम्मान और धन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है ॥४२॥

सूरिबाद्यमृदगादि सेनापत्य महत्सुखम् ॥ विप्राविमोदविमला वस्त्रवाहनभूषणम् ॥४३॥
दारपुत्रादिविभवगृहेलक्ष्मी कटाक्षकृत् ॥ दायेशात्पण्डरि फल्धे रन्ध्रे वा पापसयुते ॥४४॥ तद्वापे
मानहानि स्यात्क्रूरबुद्धिस्तु क्रूरवाक् ॥ चौराग्निनृपपीडा च मार्गे चौरभयादिकम् ॥४५॥
अकस्मात्कलहश्चैव बुधभुक्तौनसराय ॥ द्वितीयशूननापे तु महाव्याधिर्भयकरा ॥४६॥ अन्नदान
प्रकुर्वीत विष्णोर्नामसहस्रकम् ॥ सर्वसप्तप्रदं सौख्यं सर्वांरिष्टप्रशान्तये ॥४७॥

अनेक प्रकार के वाद्य यन्त्र तथा गात विद्या से सुख तथा सेनापति होता है। स्त्रियों का
सुल, वस्त्र भूषण प्राप्ति होती है ॥४३॥ स्त्री पुत्र का सुख लक्ष्मी की स्थिरता होती है। मंगल
से बुध ६।८।१२ स्थान में, पापग्रह युक्त हो ॥४४॥ तो मानहानि क्रूर बुद्धि तथा झगडाव
होता है। चोर, अग्नि, राजा से पीडा और मार्ग में चोर का भय होता है ॥४५॥ अकस्मात्
कलह होती है। द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो भयकर व्याधि होती है ॥४६॥ इसकी शान्ति
के लिये अन्नदान, विष्णुसहस्रनाम जप करने में सुख, सम्पत्ति और आरिष्ट शान्ति होती
है ॥४७॥

अथ केतुभुक्तिमासाः ४ दिना० २७ तत्फलम्

कुलस्यातर्गते केतौ त्रिकोणे केद्रेणैपि वा ॥ दुःशिक्ष्ये लाभोवापि शुभयुक्ते शुभेक्षिते ॥४८॥
राजानुग्रहातिशय बहुसीख्य धनागमम् ॥ किञ्चित्कल दशादौ तु भूलाभ पुत्रलाभकृत् ॥४९॥
राजसत्ताभकापीणि घतुष्याञ्जीवलाभकृत् ॥ योगकारकसंस्थाने वलवीर्यसमन्विते ॥५०॥
पुत्रलाभो यशोवृद्धिर्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥ भृत्यवर्गधनप्राप्ति सेनापत्य महत्सुखम् ॥५१॥
भूपासमित्र कुरुते पागावरविभूषणम् ॥ दायेशात्पण्डरिः फल्धे रन्ध्रे वा पापसयुते ॥५२॥

कलहो दतरोगश्च चौरव्याघ्रादिपीडनम् ॥ ज्वराती सारकुण्डादिदारपुत्रादिपीडनम् ॥५३॥
द्वितीयसप्तमस्थाने देहे व्याधिर्भविष्यति ॥ सन्मान जनसत्ताप धनधान्यस्य
प्रच्युतिम् ॥५४॥

केतु का अन्तर मा० ४ दि० २७ फल

मगल की दशा में केतु का अन्तर हो, केतु लग्न से निकोण या केन्द्र में, तीसरे अथवा
लाभ स्थान में हो, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो ॥४८॥ तो राजा का अनुग्रह हो, बहुत सुख और
धन की प्राप्ति हो। दशा के आदि में साधारण फल हो। भूमि और पुत्र का लाभ हो ॥४९॥
राजा से मैत्री हो। चौपाया का लाभ होता है। यदि केतु बरक स्थान में बलवान् होकर स्थित
हो ॥५०॥ तो पुत्र लाभ यश वृद्धि लक्ष्मी की स्थिरता मुनीम आदि नौकर के द्वारा धन की
प्राप्ति, राजकुल में अधिकार तथा महान् सुख होता है ॥५१॥ राजा से मैत्री यज्ञ आदि धर्म
कार्य होते हैं। मगल से बुध ६।८।१० स्थान में पापग्रह युक्त हो ॥५२॥ तो बलह दन्तरोग,
चोर, व्याघ्र आदि से पीडा ज्वर अतिसार कुष्ठ आदि की बीमारी तथा स्त्री पुत्र को पीडा
होती है ॥५३॥ द्वितीय सप्तम स्थान में हो तो अपन शरीर में व्याधि परिवार में सन्ताप,
धनधान्य की हानि तथा सन्मान होता है ॥५४॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः १४ दिना० तत्फलम्

कुजस्यातर्गते शुक्रे केन्द्रलाभत्रिकोणम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्सगे वापि शुभस्थानाधिपेऽप्य वा ॥५५॥
राज्यलाभ महत्सौख्य गजाश्वारभूषणम् ॥ सप्राधिपेन सबधे पुत्रदारादिवर्धनम् ॥५६॥
आयुषो वृद्धिरैश्वर्य भाग्यवृद्धिसुख भवेत् ॥ दायेशात्केन्द्रलाभस्थे लाभे वा धनपेऽपि वा
॥५७॥ तत्काले श्रियमाप्नोति पुत्रलाभ महत्सुखम् ॥ स्वप्रमोश्च महत्सौख्य श्वेतवस्त्रादिलाभ-
कृत् ॥५८॥ महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभदम् ॥ भुक्त्यतेफलमाप्नोति गीतनृत्यादिलाभ-
कृत् ॥५९॥ पुण्यतीर्थस्नानलाभ कर्माधिपसमन्विते ॥ पापधर्मदयापुण्य तडाग कारयिष्यति
॥६०॥ दायेशाद्भरिष्फस्ये पट्टे वा पापसपुते ॥ करोति दुःखबाहुल्य बेहपीडा धनक्षयम् ॥६१॥
राजचौरादिमीतिश्च गृहे कलहमेव च ॥ वारपुत्रादिपीडा च गोमहिष्यादिनामाकृत् ॥६२॥
द्वितीयधूमनाये तु देहवाधा भविष्यति ॥ श्वेता गा महिषी दद्यादायुरारोग्यमादिशत् ॥६३॥

शुक्र का अन्तर मा० १४ फल

मगल की दशा में शुक्र का अन्तर हो शुक्र लग्न में केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो, उच्च वा
स्वराशि में वा शुभ स्थानाधिपति हो ॥५५॥ तो राज्य लाभ महान् सुख हाथी, घोडा, वस्त्र
आभूषण का लाभ होता है। लग्नेश में सम्बन्ध हो तो स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है ॥५६॥ आयु
वृद्धि, ऐश्वर्य, भाग्य वृद्धि और सुख होता है। मगल में शुक्र केन्द्र, लाभ, केन्द्र में लाभ स्थान या
धन स्थान में हो ॥५७॥ तो दशावतार में लक्ष्मी की प्राप्ति, पुत्र लाभ, महान् सुख होता है।
श्वेत वस्त्र में लाभ होता है। वेतन वृद्धि होती है ॥५८॥ राजा की कृपा में ग्राम, भूमि का लाभ
होता है। अन्तर दशा के अन्त में विजय पत्र होता है। गाना, यज्ञाना आदि आनन्द के कार्य

होते है॥५९॥ पुण्य तीर्थ मे ज्ञान का लाभ होता है। दशमेश से युक्त हो तो दया धर्म आदि पुण्य कार्य होते है॥ जलाशय बनाता है॥६०॥ मंगल से शुक्र ६।८।१२ स्थानो मे पापग्रह युक्त हो तो बहुत क्लेश दायक देह पीडा, धन क्षय॥६१॥ राज-वीर का भय, परिवार मे कलह, स्त्री-पुत्र को पीडा, चौपाया की हानि होती है॥६२॥ द्वितीय सप्तम का स्वामी होने से देह बाधा (बीमारी) होती है। दूध वाली सफेद गौ का दान करने से आरोग्य होता है॥६३॥

अथ रविभुक्तिमासाः ४ दिन ६ तत्फलम्

कुजस्यातर्गति सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेद्रेगे ॥ मूलत्रिकोणलाभे वा भाग्यकर्मशसयुते ॥६४॥ तद्भुक्तौ वाहन कीर्ति पुत्रलाभ च विदति ॥ धनधान्यसमृद्धिं स्याद्गृहे कल्याणसपदं ॥६५॥ क्षेमारोग्य महदैर्य राजपूज्य महत्सुखम् ॥ व्यवसायात्कलाधिक्य विदेशे राजदर्शनम् ॥६६॥ दायेशात्पृष्ठरिफे वा व्यये वा पापसयुते ॥ देहपीडा मनस्ताप कार्यहानिर्महद्भयम् ॥६७॥ शिरोरोग ज्वरादिश्च अतिसारमथापि वा ॥ द्वितीयदूननाये तु सर्पज्वरविधाद्भयम् ॥६८॥ सुतपीडाकर चैव शान्तिं कुर्याद्विधाविधि ॥ देहा रोग्य प्रकुरुते धनधान्यसमृद्धिदम् ॥६९॥

सूर्य का अन्तर मा० ४ दि० ६ फल

मंगल मे सूर्य का अन्तर हो सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण लाभ स्थान मे, अपने उच्च राशि मे स्वगृही, भाग्येश, कर्मेश से युक्त हो॥६४॥ तो वाहन प्राप्ति, कीर्ति, पुत्र लाभ, धनधान्य वृद्धि, घर मे कल्याण, सम्पत्ति ॥६५॥ आरोग्यता हिम्मत, सुख, राज पूजा प्राप्त होती है। व्यापार से अधिक लाभ, विदेश यात्रा, राज दर्शन होता है॥६६॥ मंगल से सूर्य ६।८।१२ स्थान मे पापग्रह युक्त हो तो देह पीडा, मन मे चिन्ता, कार्य हानि, महान् भय होता है॥६७॥ सिर मे दर्द, ज्वर, अतिसार की बीमारी होती है। यदि सूर्य द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो ज्वर और सर्प के विष से भय होता है॥६८॥ सन्तान को भी पीडा होती है। इसकी यथा विधि शान्ति करने से आरोग्यता धनधान्य की वृद्धि होती है॥६९॥

अथ चद्रभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

कुजस्यातर्गति चद्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेद्रेगे ॥ भाग्यवाहनकर्मशतप्राधिपसमन्विते ॥७०॥ करोति विपुल राज्य गधमात्पारवराधिकम् ॥ तडाग योपुरादीना पुण्यधर्मादिसग्रहम् ॥७१॥ विवाहोत्सवकर्माणि दारपुत्रादिसौख्यकृत् ॥ पितृमातृमुखावाप्ति गृहे लक्ष्मी वटावृत् ॥७२॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिमुखादिवम् ॥ पूर्णचद्रे पूर्णफल क्षीणे स्वल्पफल भवेत् ॥७३॥ नौचारित्थेष्टमे पृष्ठे दायेशाद्विपुरघ्नके ॥ मरण दारपुत्राणा कष्ट भूपतिनाशनम् ॥७४॥ पशुधान्यक्षय चैव जोरादिरणभीतिकृत् ॥ द्वितीयदूननाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥७५॥ देहजाड्य मनोदुःख दुर्गावलम्बीजपवरेत् ॥ भेता वा महिषी दद्याद्दानेनारोग्यमादिरोत् ॥७६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भौममहादशातरफलकथननाम
पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५॥

चन्द्रमा का अन्तर मा० ७ फल

मंगल की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा स्वराशि में उच्च का या केन्द्र में हो, ४।९।१० के स्वामी से युक्त तथा लग्नेश युक्त हो॥७०॥ तो विपुल ऐश्वर्य, सुन्दर वस्त्रादि की प्राप्ति, तालाब भकान आदि का बनाना, धर्म व्रतादि का सग्रह होता है॥७१॥ विवाहादि उत्सव कार्य, स्त्री-पुत्र का सुख, माता पिता का सुख तथा घर में लक्ष्मी की स्थिरता होती है॥७२॥ राजा की कृपा से मनोरथ की सिद्धि तथा सुख होता है। चन्द्रमा पूर्ण हो तो फल पूर्ण होता है। क्षीण हो तो फल साधारण होता है॥७३॥ चन्द्रमा नीच का, शत्रु गृह में, लग्न से या मंगल से ६।८ स्थान में हो तो स्त्री-पुत्र की मृत्यु, कष्ट, राजकोप, पशु, धान्य का क्षय, चोर, भय, लड़ाई, झगडा आदि होते हैं। चन्द्रमा द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥७५॥ अथवा देह जाड्य, चिन्ता, दुःख होता है।

उपाय-दुर्गा-लक्ष्मी मन्त्र का जप, श्वेत गौ का दान करने से आरोग्य होता है॥७६॥

इति धीवृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्रका० भौमदशान्तरफलकथन नाम
पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५॥

अथ राहुदशायां राहुभुक्तिमासाः ३२ दिना० १२ तत्फलम्

कुलीरे वृश्चिके चैव कन्याया चापगोऽपि वा ॥ तद्भुक्ती राजसन्मान वस्त्रवाहनभूषणम् ॥१॥
व्यवसायात्फलाधिक्यं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ प्रयाण पश्चिमे भागे वाहनाबरलाभकृत् ॥२॥
तप्राद्युपचयेराहौ शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥ मित्रांशे तुगलामेसे योगकारकसमुत्ते ॥३॥ राज्यलाभ
महोत्साह राजप्रीति शुभावहाम् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिदार्पुत्रादिवर्द्धनम् ॥४॥ पट्टाष्टमे व्यये
राहौ पापयुक्तेऽथ क्षीयते ॥ चौरादिवधनपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥५॥ राजद्वारजनद्वेष-
इष्ट बधुविनाशनम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥६॥ द्वितीयचूननाथे तु सप्तम-
स्थानमाश्रित ॥ सदा रोग महाकष्ट शान्ति कुर्याद्यथाविधि ॥ आरोग्य सपदश्चैव भविष्यन्ति
न सशय ॥७॥

राहुदशा में राहु का अन्तर २ व ८ मा १२ दिन फल

राहु की महादशा में राहु का अन्तर हो, राहु ४।६।९।८ राशियों में हो तो अन्तर्दशा में राजसन्मान, सवारी, भूषण वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है॥१॥ व्यापार में लाभ अधिक हो। चौपाया का लाभ हो। पश्चिम दिशा की यात्रा हो। यात्रा से विशेष लाभ हो॥२॥ लग्न आदि केन्द्रस्थान में शुभदृष्टियुक्त या दृष्ट राहु हो। मित्रनवाश में, उच्च राशि में, लाभ हो, कारकग्रहयुक्त हो॥३॥ तो राज्य से लाभ, महान् उत्साह, राजप्रीति, तथा सुख होता है। घर में सुख शान्ति, स्त्री पुत्र की वृद्धि॥४॥ राहु यदि ६।८।१२ स्थान में पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो चोर आदि द्वारा आघात का भय तथा सर्वत्र अशान्ति होती है॥५॥ राज भय, बन्धु द्वेष, द्रष्टवन्धु की हानि, स्त्री पुत्र को पीडा तथा जनमात्र से पीडा होती है॥६॥ राहु २।७ भाव का स्वामी होकर सप्तमभाव में स्थित हो तो सदा रोगी तथा महाकष्ट होता है। इसकी यथाविधि शान्ति करना चाहिए। शान्ति करने से आरोग्यता और संपत्ति होती है॥७॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः २८ दिना० २४ तत्फलम्

राहोरंतर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणमे ॥ स्वोच्चै स्वक्षेत्रगे वापि तुगे स्वांशेशनेपि वा ॥८॥ स्थान-
लाभं मनोर्ध्वं शत्रुनाशं महत्सुखम् ॥ राजप्रीतिकरं सौख्यं महतीव समदनुते ॥९॥ दिने दिने
वृद्धिरपि सितपक्षे शशी यथा ॥ बाह्नादिर्धनं भूरि गृहे गोधनसंकुलम् ॥१०॥ नैर्ऋत्याः पश्चिमे
भागे प्रयाणं राजदर्शनम् ॥ युक्तकार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ॥११॥ उपकारो
ब्राह्मणानां तीर्थयात्रादिकर्मणाम् ॥ बाहनं ग्रामलाभं च देवब्राह्मणपूजनम् ॥१२॥
पुत्रोत्सवादिमंतोषं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययराशिमे ॥१३॥
शत्रुक्षेत्रे पापयुक्ते धनहानिर्भविष्यति ॥ कर्मविघ्नो मनोहानिः सा पतिघ्नी भविष्यति ॥१४॥
कलत्रपुत्रपीडा च हृद्रोगं राजकार्यकुत् ॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा धननेपि वा ॥१५॥
दुश्चिक्वे बलसंपूर्णे गृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ॥ भोजनांबरपञ्चादिवानधर्मजपादिकम् ॥१६॥ भुक्त्यते
राजकोणच्च द्विमासं देहपीडनम् ॥ ज्येष्ठभ्रातुर्विनाशं च भ्रातृपित्रादिपीडनम् ॥१७॥
दायेशात्पृष्ठरंघ्रे वा रिःके वा पापसंयुते ॥ तद्भुक्तौ धनहानिः स्याद्देहपीडा भविष्यति ॥१८॥
द्वितीयचूननाये वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ स्वर्णस्य प्रतिमादानं शिवपूजा च कारयेत् ॥१९॥
देहारोग्यं प्रकुप्ते शांतिं कृपाद्विचक्षणः ॥२०॥

गुरु का अन्तर द० २ मा० ४ दि० २४ फल

राहु की दशा में गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र में, त्रिकोण में, स्वगृही, उच्चराशि में,
अपने नवांश में हो ॥८॥ तो भक्तान का लाभ, मन में धैर्य, शत्रुनाश, महान् सुख, राज से प्रीति
तथा आनन्द होता है ॥९॥ शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान सम्पत्ति की प्रतिदिन वृद्धि होती है।
सवारी, धन तथा गौ आदि से घर भर रहा रहता है ॥१०॥ नैर्ऋत्य या पश्चिम दिशा में यात्रा,
राजदर्शन, उचित कार्य की सिद्धि होकर पुन स्वदेश में आना होता है ॥११॥ ब्राह्मणों का
उपकार, तीर्थयात्रा, बाहन, ग्रामलाभ तथा देव, ब्राह्मणपूजा ॥१२॥ पुत्रोत्सव में आनन्द,
नित्य उत्तम भोजन होता है। यदि गुरु नीच राशि में, अलगत, ६।८।१२ भाव में हो ॥१३॥
शत्रु राशि में, पापग्रह युक्त हो तो धनहानि होती है। काम में बाधा, मन में अशान्ति, यह
अन्तर्दशा जातक की नाशकारक होती है ॥१४॥ स्त्री, पुत्र को पीडा, हृदय रोग तथा
राजकार्यकारी होता है। दशास्वामी से केन्द्र, त्रिकोण में, लाभ तथा धनस्थान में ॥१५॥
तीसरे स्थान में बलयुक्त हो तो गृह, भूमि की वृद्धि, वस्त्र, भूषण, पशु आदि का लाभ, दान,
धर्म, जप आदि पुण्यकार्य होते हैं ॥१६॥ अन्तर के अन्त में राजकोप तथा दो मास तक
देहपीडा ज्येष्ठभ्राता को मृत्यु, भ्राता, पिता आदि को पीडा होती है ॥१७॥ दशास्वामी राहु
से ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो धनहानि, देहपीडा होती है ॥१८॥ द्वितीय, सप्तम का
स्वामी गुरु हो तो अपमृत्यु होती है। उपाय-सुवर्ण मूर्ति (गुरु की) का दान तथा शिव की
पूजा-अभिषेक करावे ॥१९॥ तो शरीर की आरोग्यता प्राप्ता होती है ॥२०॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३४ दिना० ६ तत्फलम्

राहोरंतर्गते मंदे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणमे ॥ स्वोच्चै मूलत्रिकोणे वा दुश्चिक्वे नामराशिमे ॥२१॥

तद्भुक्तिवाहन सेवा राजप्रीतिकर शुभम् ॥ विवाहोत्सवकार्याणि कृत्वा पुण्यानि भूरिश ॥२२॥
 आरामकरणे युक्त तडाग कारयिष्यति ॥ शूद्रप्रभुवशादिष्ट लाभ गोधनसग्रहम् ॥२३॥ प्रयाग
 पश्चिमे भागे प्रभुनूलाङ्गनस्य ॥ देहायास फलात्यत्व स्वदेशे पुनरेष्यति ॥२४॥ नीचारिक्षेत्रगे मदे
 रध्रे वा व्ययगेपि वा ॥ नीचारौ राजभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥२५॥ आत्मबधुमनस्ताप
 दायावजनविग्रहम् ॥ व्यवहारे च कलहभक्तस्माद्भूषण लभेत् ॥२६॥ दायेशात्यष्टरिफे वा
 व्यये वा पापसपुते ॥ हृद्रोग मानहानि च विवाहे शत्रुपीडनम् ॥२७॥ अन्यदेशादिसार च
 गुल्मबन्धाधिभाग्भवेत् ॥ कुमोजन कोदवादि जातिदुःखाद्भूय भवेत् ॥२८॥ द्वितीयघ्ननाये तु
 ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ कृष्णां गा महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ॥२९॥

राहुवशा मे शनि का अन्तर व० २ मा० १० दि० ६ फल

राहु की दशा मे शनि का अन्तर हो, लग्न से शनि केन्द्र, त्रिकोण मे, उच्चराशि मे, मूलत्रिकोण मे, तीसरे भाव या लाभराशि मे ॥२१॥ शनि के अन्तर मे सवारी तथा नौकर चाकरो का सुख होता है। राजा से मैत्री तथा शुभकार्य होता है। विवाह आदि उत्सव के कार्य तथा अनेक पुण्यकार्य होते है ॥२२॥ बगीचा तथा तालाब करता है। शूद्र स्वामी द्वारा विशेष लाभ तथा गोधन का सग्रह होता है ॥२३॥ पश्चिम दिशा की यात्रा तथा स्वामी के कारण धनक्षय होता है। देहकष्ट, अधिक फल कम तथा पुन स्वदेश मे वापस आता है ॥२४॥ शनि यदि नीचराशि मे, शत्रुराशि मे ६।८।१२ भाव म हो तो राजभय तथा स्त्री, पुत्र को पीडा होती है ॥२५॥ अपने बन्धु तथा मन को असतोष, परिवार मे विग्रह व्यापार मे कलह तथा अकस्मात् भूषण का लाभ होता है ॥२६॥ राहु से शनि ६।८।१२ मे पापयुक्त हो तो हृदय का रोग, मानहानि तथा विवाह मे शत्रुकृत बाधा हो ॥२७॥ अन्य देश यात्रा तथा उदर आदि मे गुल्मव्याधि होती है। सराव कोदव (कोदो) आदि अन्न का भोजन तथा जाति म अपमान का भय होता है ॥२८॥ २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। काली गौ के दान से अरोग्यता प्राप्त होती है ॥२९॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ३० दिना० १८ तत्फलम्

राहोरतर्गते सौम्ये भाग्ये वा स्वर्क्षेगेपि वा ॥ तुगे वा केन्द्रराशिस्ये पुत्रे वा बलगेपि वा ॥३०॥
 राजयोग प्रकुरते गृहे कल्याणवर्धनम् ॥ व्यापारेण धनप्राप्तिर्विद्यावाहनमुत्तमम् ॥३१॥
 विवाहोत्सवकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ सौम्यमासे महत्सीस्य स्ववारे राजदर्शनम् ॥३२॥
 मुगधपुण्यसव्यादि स्त्रीसौख्य चातिशोभनम् ॥ महाराजप्रसादेन धनलाभो महदश ॥३३॥
 दायेशात्केद्रलाभे वा दुश्चिन्त्ये भाग्यकर्मगे ॥ देहारोग्य हृदुत्साह इष्टसिद्धि सुलाबहा ॥३४॥
 पुण्यभूषणदिकोर्तिश्च पुराणश्रवणादिकम् ॥ विवाहो यज्ञदीक्षा च दानधर्मदयादिकम् ॥३५॥
 पण्डाष्टमव्यये सौम्ये मदे राशिपुतेक्षिते ॥ दायेशात्यष्टरिफे वा रध्रे वा पापसपुते ॥३६॥
 देवब्राह्मणनिदा च भोगभाग्यविहीनभाक् ॥ सत्यहीनश्च दुर्बुद्धिश्चौराहितृपपीडनम् ॥३७॥
 अकस्मात्कलहश्रेव गुरुपुत्रादिनाशनम् ॥ अर्थव्ययो राजकोपो दारपुत्रादिपीडनम् ॥३८॥
 द्वितीयघ्ननाये वा ह्यपमृत्यु तथाग्रथियम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रक जपेत् ॥
 स्वगृहोक्तविधानेन शान्तिं कुर्याद्विचक्षण ॥३९॥

राहुदशा मे बुधान्तर मा० ३० दि० १८ फल

राहु की दशा मे बुध का अन्तर हो। बुध लग्न से भाग्यस्थान मे, स्वराशि मे, उच्च मे, केन्द्र मे, पचम मे, बलवान् होकर स्थित हो॥३०॥ तो राजयोगकारक होता है। घर मे कल्याण की वृद्धि तथा व्यापार से धनप्राप्ति एवं विद्या प्राप्ति तथा सकारी प्राप्ति होती है॥३१॥ विवाह आदि उत्सव के कार्य चौपाया (गौ आदि) पशु की प्राप्ति तथा बुध की राशि ३।६ के सौरमास मे महान् सुख और बुधवार को राजा या बड़े आदमी से मिल होता है॥३२॥ सुगन्धित पुष्पयुक्त शय्या तथा सुन्दर स्त्री-सुख प्राप्त होता है। राजकृपा से धनलाभ तथा पशु प्राप्त होता है॥३३॥ राहु से बुध केन्द्र मे, लाभ मे, तीसरे ९।१० भाव मे हो तो देह मे आरोग्यता, हृदय मे उत्साह तथा इच्छित कार्य की सुख कर सिद्धि होती है॥३४॥ उसकी कीर्ति तथा यशमान होता है। पुराण आदि सद्गुणदेशो का श्रवण, विवाह, यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म, दया आदि शुभगुण प्राप्त होते है॥३५॥ बुध यदि ६।७।८।९ स्थान मे हो या इनके स्वामी से युक्त या दृष्ट हो अथवा राहु से ६।८।९ स्थान मे पापग्रह युक्त हो॥३६॥ तो देवब्राह्मण को निन्दा, उत्तमभोग तथा भाग्य से हीन होता है। सत्यहीन, दुर्वृद्धि तथा चौर, सर्प, राजा से पीडा होती है॥३७॥ अकस्मात् कलह तथा गृह और पुत्र आदि का नाश होता है॥३८॥ द्वितीयेन तथा सप्तमेश हो तो धनहीन और अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए विष्णुसहस्रनाम का पाठ तथा गृहमूरोक्त विधान से शान्ति करना चाहिए॥३९॥

अथ केतुभुक्तिमा० १२ दिनानि १८ तत्फलम्

राहोरतर्गते केतौ भ्रमण राज्यकुडनम् ॥ वातज्वरादिरोगश्च चतुष्पाज्जीवहानिकृत् ॥४०॥
अष्टमाधिपसमुक्ते देहजाड्य मनोरजम् ॥ शुभयुक्ते शुभेर्दृष्टे देहसौख्य धनागम ॥
राजसन्मानभूदाप्तिर्गृहे शुभकरो भवेत् ॥४१॥ सप्तमिपेन संबधे इष्टसिद्धिं सुखावहा ॥
तामाधिपसमायुक्ते लाभो वा भवति धुवम् ॥४२॥ चतुष्पाज्जीवतामस्यात्केन्द्रे बाध त्रिकोणो
॥ १८ स्थानगतं केतौ व्यये वा बलवर्जितं ॥४३॥ तद्भुक्तौ बहुरोगं स्याज्ज्वराहिरूपपोडनम् ॥
पितृमातृवियोगश्च भ्रातृद्वेष मनोरजम् ॥४४॥ स्वप्रमोश्च महत्पाटं वैपम्यं चित्तहिंसकम् ॥
द्वितीयसूनवाये तु देहयाधा भविष्यति ॥ तद्विषपरिहारार्थं छामदानं च कारयेत् ॥४५॥

राहुदशा मे केतु अन्तर १२ मा० १८ दिन फल

राहुकी दशामे केतुका अन्तर हो तो भ्रमण, राजसाहाय्यसे धनप्राप्ति, वातज्वर आदि रोग तथा चौपाया पशु आदि की हानि होती है। अष्टमेश युक्त हो तो देहजाड्य तथा क्लेश हो। शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो देहसौख्य, धनप्राप्ति, राजमान्यता, आभूषण प्राप्ति तथा घर मे शुभनारी होता है॥४१॥ सप्तमेश मे युक्त हो तो मुषकर, इष्टसिद्धि होती है। लाभयुक्त हो तो निश्चय लाभ होता है॥४२॥ चौपाया जीव का लाभ होता है। यह शुभ फल केतु के केन्द्र या त्रिकोण मे होने से होते है। केतु ८।१२ मे बलहीन होकर स्थित हो॥४३॥ तो अन्तर मे अनेक रोग, चौर, सर्प, पाव मे कष्ट हो। माता पिता का वियोग हो। भ्रातृद्वेष, चिन्ता हो॥४४॥ अपने स्वामी से दृष्ट, विपत्ति, हिंसावृत्ति होती है। २।७ का स्वामी हो तो देहकष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिये छाम (बकरा) वा दान करना चाहिए॥४५॥

अथशुक्रभुक्तिमासाः ३६ तत्फलम्

राहोर्न्तर्गते शुके सप्राक्केन्द्रत्रिकोणो ॥ लाभे वा बलसयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत् ॥४६॥
 बिप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गौमहिष्यादिलाभकृत् ॥ पुत्रोत्सवादिसतोप गृहे कल्याणसम्भवम् ॥४७॥
 सन्मान राजसन्मान राज्यलाभ महत्सुखम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्गमे वापि तुगाशे स्वाशयेऽपि वा ॥४८॥
 नूतन गृहनिर्माणं नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ कलत्रपुत्रविभव मित्रसयुक्तभोजनम् ॥४९॥
 अन्नदानप्रियं नित्य दानधर्मादिसप्रहम् ॥ महाराजप्रसादेन बाह्यनगरभूषणम् ॥५०॥
 व्यवसायात्फलाधिक्यं विवाहो मीजिबन्धनम् ॥ यष्टाष्टमव्यये शुके नीचे शत्रुगृहे स्थिते ॥५१॥
 मदारफणिसयुक्ते तद्भुक्ती रोगमादिशेत् ॥ अकस्मात्कलहं चैव पितृपुत्रवियोगकृत् ॥५२॥
 स्वबधुजनहानिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ॥ दायादिकलहं चैव स्वप्रभो स्वस्य मृत्युकृत् ॥५३॥
 कलत्रपुत्रपीडा च शूलरोगादि सभयम् ॥ दायेशात्केन्द्रराशिस्ये त्रिकोणे वा समन्विते ॥५४॥
 लाभे वा धर्मराशिस्ये क्षेत्रपालमहत्सुखम् ॥ सुगन्ध-वस्त्रशय्यादि गानविद्यापरिधमम् ॥५५॥
 छत्रचामरबाद्यादिगन्धपद्मरामन्वितम् ॥ दायेशाद्रिपुरधस्ये व्यये वा पापसयुते ॥५६॥
 विषाहिनृपचौरादिभूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥ प्रमेहादुधिर रोग कुत्सिताश्च शिरोरुजम् ॥५७॥
 कारागृहप्रवेशं च राजदडाद्धनक्षयम् ॥ द्वितीयदूतनाथे वा दारपुत्रादिनाशनम् ॥५८॥
 आत्मपीडा भय चैव ह्यपमृत्युस्तथा भवेत् ॥ दुर्गतिध्मीजप कुर्णान्मृत्युनाशकरो भवेत् ॥५९॥

राहु मे शुक्र का अन्तर वर्ष ३ मास ० फल

राहु की महादशा मे शुक्र का अन्तर हो तथा शुक्रलग्न से केन्द्र त्रिकोण, लाभस्थान मे बलसयुक्त हो तो प्रबल शुभ योग होता है॥४६॥ किसी ब्राह्मण के कारण धन की प्राप्ति तथा गाय-भैस आदि की प्राप्ति होती है। पुत्रजन्म आदि उत्सव घर मे सुख शान्ति हो॥४७॥ समाज मे तथा राज मे प्रतिष्ठा, राजा के समान ऐश्वर्य तथा महान् सुख होता है। शुक्र यदि उच्च मे, स्वगृही, परमोच्च मे या अपने नवाश मे हो॥४८॥ तो नये मवान बने तथा नित्य मिष्टान्न भोजन, स्त्री, पुत्र का सुख एवं मित्रगोष्ठी का सुख होता है॥४९॥ नित्य अन्नदान, धर्म होता है। राजा की वृषा से बाहन वस्त्र, भूषण होते है॥५०॥ व्यापार से अधिक लाभ तथा विवाह आदि मंगलकार्य, दीक्षा, आदि शुभकार्य होते है॥ यदि शुक्र ६।८।१२ मे हो, शत्रुराशि मे हो॥५१॥ मंगल, शनि, राहु युक्त हो तो उसके अन्तर मे रोग होता है। अकस्मात् कलह होता है। पिता पुत्र वा वियोग होता है॥५२॥ अपने वन्धुजन की हानि होती है। स्वजाति से पीडा, परिवार मे कलह तथा गृहस्वामी की मृत्यु होती है॥५३॥ स्त्री पुत्र को पीडा, शूलरोग होता है। राहु से शुक्र केन्द्र या त्रिकोण मे हो॥५४॥ लाभ मे या नवम मे हो तो बड़े अधिकारी के समान सुख हो, सुगन्धित वस्त्रयुक्त शय्या तथा गान विद्या वा रसिक होता है॥५५॥ छत्र-चमर युक्त सिंहासन एवं सुगन्ध पुष्पयुक्त रहता है। राहु से शुक्र ६।८।१२ स्थान मे पापग्रह युक्त हो तो॥५६॥ विष, मर्ष, राज, चोर से भय तथा भूत्र वृच्छ आदि बीमारी मे महान् भय होता है। प्रमेह मे रक्तस्राव तथा निवृष्ट अन्न वा भोजन, सिरदर्द॥५७॥ वैदखानो मे वाम, राजदड से धनक्षय होता है। द्वितीय मन्त्रम वा स्वामी हो तो स्त्री पुत्र वा नाश होता है॥५८॥ अपने शरीर मे पीडा, भय, तथा अपमृत्यु होती है। 'दुर्गतिध्मी' मन्त्र के जप से रक्षा होती है॥५९॥

अथ रविभुक्तमासाः १० दिनानि २२ तत्फलम्

राहोर्न्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रोऽत्र त्रिकोणे लाभो वापि तुगाशे स्वाशयेऽपि वा ॥६०॥

शुभग्रहेण सदृष्टे राजप्रीतिकर शुभम् ॥ धनधान्यसमृद्धिश्च ह्यल्पसौख्यं सुखावहम् ॥६१॥
 अल्पशामाधिपत्यं च स्वल्पसत्तामो भविष्यति ॥ भाग्यलप्रेषसप्तयुक्ते कर्मणोऽन निरीक्षिते ॥६२॥
 राजाश्रयो महाकीर्तिर्विदेशगमनं महत् ॥ देशाधिपत्यभोगं च गजाश्रावरसूषणम् ॥६३॥
 मनोभीष्टप्रदानं च पुत्रकल्याणसम्बन्धम् ॥ दापेशादिकरधस्ये दृष्टे वा नीचगोऽपि वा ॥६४॥
 ज्वरातिसाररोगं च कलहं राजवृद्धिपत् ॥ प्रमाणं शत्रुवृद्धिं च नृपचौराग्निपीडनम् ॥६५॥
 दापेशात्कैदकोणे वा दुश्चिन्त्ये लाभोऽपि वा ॥ विदेशे राजसन्मानं कल्याणं च शुभावहम् ॥६६॥
 द्वितीयद्यूननाथे तु महारोगो भविष्यति ॥ सूर्यप्रमाणशान्तिं च कुर्यादारोग्यसम्भवम् ॥६७॥

राहुदशा मे सूर्यान्तर मास १० दिन २२ फल

राहु की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो और सूर्य जप से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ, स्थानो मे, उच्चराशि, स्वराशि या परमोच्च अथवा अपने नवाश मे हो॥६०॥ शुभग्रह से दृष्ट हो तो राजप्रीति प्राप्त होती है। धनधान्य की वृद्धि, साधारण सुख होता है॥६१॥ साधारण अधिकार, मध्यम लाभ होता है। भाग्येश तथा लप्रेष से युक्त हो, दक्षमेघ से दृष्ट हो॥६२॥ तो राजा का आश्रय, महान् कीर्ति, विदेश यात्रा होती है। देशाधिपति का समोग होता है तथा हाथी, घोडा, आदि आदि ऐश्वर्य होता है॥६३॥ मनोरथ सिद्ध होते हैं, पुत्र का सुख प्राप्त होता है। राहु से सूर्य ६।८।१२ मे नीच राशिगत हो तो॥६४॥ ज्वर, अतिसार रोग, कलह, राजद्वेष, यात्रा, शत्रुवृद्धि, सजा, चोर तथा अग्नि से हानि होती है॥६५॥ राहु से सूर्यकेन्द्र, त्रिकोण मे या तीसरे तथा लाभस्थान मे हो तो विदेश मे राजा से सन्मान, कल्याण तथा शुभ होता है॥६६॥ दूसरे मातवे का स्वामी हो तो महारोग होता है। सूर्य की ययायोग्य शान्ति करने से आरोग्यता प्राप्त होती है॥६७॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १८ तत्फलम्

राहोरतर्गति चन्द्रे स्वक्षेत्रे स्वोच्चमेऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा मिश्रार्थे शुभसप्तयुते ॥६८॥ राजत्व राजपूज्यत्व धनार्थं धनलाभकृत् ॥ आरोग्यभूषणं चैव मिश्रस्त्रीपुत्रसप्तयु ॥६९॥ पूर्णचन्द्रे पूर्णफलं राजप्रीत्या शुभावहम् ॥ अथवाहनलाभं स्याद्गृहभेदादि वृद्धिकृत् ॥७०॥ दापेशात्सुखभाग्यस्ये केन्द्रे वा लाभोऽपि वा ॥ सप्तमीकटाक्षविह्वलि गृहे कल्याणसम्भवम् ॥७१॥ यष्टकावर्षसिद्धिं स्याद्वनधान्यसुखावहम् ॥ सत्कीर्तितामसन्मानं देव्याराधनमाचरेत् ॥७२॥ दापेशात्पण्डरप्रस्ये ध्ये वा बलसप्तयुते ॥ पिशाचभूद्व्याघ्रादिगृहभेदाद्यर्थनाशनम् ॥७३॥ मार्गे चौरभयं चैव वृषाधिक्यं महोदरम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युस्तथा भवेत् ॥७४॥ श्वेता वा महिषी दद्याद्दानमारोग्यमाहरेत् ॥७५॥

राहुदशा मे चन्द्रातर १८ मास फल

राहु की दशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण तथा लाभस्थान मे उच्चराशि वा या स्वगृही, मिश्रगृही अथवा शुभग्रहयुक्त हो तो॥६८॥ राजा के समान या राजपूज्य तथा धन लाभकारी होता है। आरोग्यता तथा आभूषण की प्राप्ति, मित्र, स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति प्राप्त होती है॥६९॥ चन्द्रमा पूर्ण हो तो पूर्णसुख तथा राजा की कृपा मे शुभ होता है। पौंडे की मयारी तथा मन्त्रान, भूमि की वृद्धि होती है॥७०॥ राहु मे चन्द्रमा ६।९ मे केन्द्र मे या लाभ मे हो तो घर मे सप्तमी का वास होता है तथा मुग प्राप्ति रहती है॥७१॥ मनोरथ सिद्ध होने है। धनधान्य का सुख होता है। सत्कीर्ति लाभ सन्मान तथा देवी का देवता का आराधन होता है॥७२॥ राहुमे चन्द्रमा ६।८।१२ मे बलयुक्त हो तो पिशाच प्रादि भूद्व्याघ्रादि तथा गृह,

भूमि, धन की हानि होती है॥७३॥ मार्ग में चोरी तथा फोडा-फुन्ती एव उदरवृद्धि होती है।
द्वितीय सप्तमाधीश हो तो अपमृत्यु होती है॥७४॥ श्वेत गौ का दान करने से आरोग्यता प्राप्त
होती है॥७५॥

अथ कुजभुक्तिमासाः १२ दिना० १९ तत्फलम्

राहोरतर्गतं भीमे लग्नात्त्रिकोणगे ॥ केद्रे वा शुभसंयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेणि वा ॥७६॥
नष्टराज्यधनप्राप्तिर्गृहक्षेत्राभिवृद्धिकृत् ॥ इष्टदेवप्रसादेन सतानमुखभोजनम् ॥७७॥ मित्रमौ-
ज्यान्महत्सौख्य भूषणाश्चावरादिकृत् ॥ दायेशात्केद्रेकोणे वा दुश्चिक्वे सामगेऽपि वा ॥७८॥
रक्तवस्त्रादिलाभः स्यात्प्रयाण राजदर्शनम् ॥ पुत्रवर्गेषु कल्याण स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ॥७९॥
सेनापत्य महोत्साह भ्रातृवर्गधनानाम् ॥ दायेशाद्भ्रिक्के वा पृष्ठे पापक्षमन्विते ॥८०॥
पुत्रदारादिहानिश्च सोदराणां च पीडनम् ॥ स्थानभ्रंश बहुवर्गदारपुत्रविरोधनम् ॥८१॥
चौराहिषणमीतिश्च सोदराणां च पीडनम् ॥ आदौ क्लेशकरं चैव मध्याते सौख्यमाप्नुयात् ॥८२॥
द्वितीयघननाथे तु देहालस्य महद्भयम् ॥ अनङ्गाहं च गा दद्यादारोग्यं च भविष्यति ॥८३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे विशोत्तर्या राहोरतर्दशाफलकथन
नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६॥

राहुदशा मे भीमान्तर भास १२ दिन १८ फल

राहु की महादशा में मंगल का अन्तर ही और मंगल लग्न से केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह युक्त
उच्च का या स्वगृही हो॥७६॥ तो नष्टराज्य तथा धनप्राप्ति हो। मवान भूमि की वृद्धि हो।
इष्टदेव की कृपा से पुत्र सन्तान का सुख तथा सुन्दर भोजन हो॥७७॥ भोग सामग्री से महान्
सुख, भूषण घोडा आदि की सवारी हो। राहु से मंगल केन्द्र त्रिकोण लाभ तथा तृतीयभाव में
हो॥७८॥ तो लाल वस्त्र से लाभ हो यात्रा तथा राजदर्शन एव पुत्रवर्ग में कल्याण तथा अपने
स्वामी से महान् सुख होता है॥७९॥ सेनापतित्व महान् उत्साह हो भ्रातृवर्ग से धनप्राप्ति हो।
राहु से मंगल ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो॥८०॥ तो स्त्री पुत्र की हानि भ्राता से पीडा
स्थानहानि तथा बहुवर्ग स्त्रीपुत्र से विरोध होता है॥८१॥ चोर सर्प फोडा-फुन्ती का भय,
भ्राताओ को पीडा होती है। अन्तर के आदि में क्लेश तथा मध्य और अन्त में सुख होता है॥८२॥
द्वितीय सप्तम का स्वामी होने से आलस्य तथा भय होता है। बैल का दान करने से आरोग्यता
होती है॥८३॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भास्करवा० विशोत्तरीदशाया
राहोरतर्दशा कथन नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६॥

अथ गुरुदशाया गुरुभुक्तिमासाः २५ दिना० १८ तत्फलम्

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे लग्नात्केद्रेत्रिकोणगे ॥ अनेकराजाधीशश्च सपन्नो राजपूजितः ॥१॥
गोमहिष्यादिलाभश्च वस्त्रवाहनभूषणम् ॥ नूतनस्थाननिर्माणं हर्म्यप्रारारसयुतम् ॥२॥
गजातेभ्यस्तपस्वित्ताम्यकर्माणि सयुते ॥ ब्राह्मणप्रभुसन्मानं समानप्रभुदर्शनम् ॥३॥ स्वप्रभो
स्वफलाधिक्यं दारपुत्रादिलाभकृत् ॥ नीचाशे नीचराशिस्ये षष्ठाष्टव्यदराशिगे ॥४॥

नीचसग महादुःख दायादजनविग्रहम् ॥ कलह न विचारोऽस्य स्वप्नमृषमृत्युकृत् ॥५॥
पुत्रदारवियोग च धनधान्यार्थहानिकृत् ॥ सप्तमाधिपदोषेण देहबाधा भविष्यति ॥६॥
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रक जपेत् ॥ रुद्रजाप्य च गोदानं कुर्यादिष्टं समाप्नुयात् ॥७॥

गुरुमहादशा मे गुरु का अन्तर मा० २५ दि० १८ फल

गुरुमहादशा मे गुरु का ही अन्तर हो और गुरु लग्न से केन्द्र त्रिकोण मे उच्चराशि मे, स्वराशि मे हो तो अनेक राजाओं का राजा ऐश्वर्यवान् राजपूज्य होता है॥१॥ गौ, भैंस आदि का लाभ, वस्त्र, वाहन, भूषण का लाभ नये महल तथा अन्य स्थानों का निर्माण होता है॥२॥ हाथी, घोड़े रहे, इतना ऐश्वर्य, महान् सम्पत्ति सम्पन्न होता है। ब्राह्मण, साधु का सम्मान, राजाओं से मित्रता होती है॥३॥ अपने स्वामी से अधिक फल होता है। स्त्री, पुत्र का लाभ होता है। बृहस्पति यदि नीचग्रह के साथ हो नीच नवमास मे हो ६।८।१२ राशि मे हो॥४॥ तो नीच जाति के मनुष्यों से सग महान् दुःख परिवार मे विग्रह तथा कलह और इतने नीच विचार हो जाते है कि अपने स्वामी को मारने मे भी नहीं हिचकते॥५॥ स्त्री, पुत्र से वियोग, धनधान्य की हानि होती है। गुरु यदि सप्तमेश हो तो देह बाधा होती है॥६॥ इसकी शान्ति के लिये 'शिवसाहस्रनाम' का पाठ, रुद्र जप तथा गोदान करे तो इच्छित मनोरथ सिद्ध हो॥७॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३० दिना० १२ तत्फलम्

जीवस्यातर्गते मदे स्वोऽस्य स्वलेत्रमित्रगे ॥ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणस्ये लाभे वा बतसपुते ॥८॥
राज्यलाभ महत्तीत्य वस्त्राभरणसपुतम् ॥ धनधान्यादिलाभ च स्त्रीलाभ बहुसौख्यकृत् ॥९॥
वाहनावरणभूषादिभूलाभ स्थानलाभगम् ॥ पुत्रमित्राविसौख्य च नरबाहनयोगकृत् ॥१०॥
नीलवस्त्रादिलाभश्च नीलाभ लाभते च स ॥ पश्चिमा दिशमाश्रित्य प्रमाणं राजदर्शनम् ॥११॥
अनेकपानलाभ च निर्दिश्य भद्रभुक्तिषु ॥ लग्नात्पञ्चाष्टमे मदे व्यये नीचेस्ततोऽप्यरी ॥१२॥
धनधान्यादिनाशश्च ज्वरपीडा मनोहलम् ॥ स्त्रीपुत्रादिषु पीडा वा वणात्यादिकमुद्भवेत् ॥१३॥
गृहे त्यगुमकार्याणि भृत्यवगादि पीडनम् ॥ गोमहिष्यादिहानिश्च बहुद्वेषो भविष्यति ॥१४॥
दायेशात्केन्द्रकोणस्ये लाभे वा धनोऽपि वा ॥ भूलाभश्चार्थलाभश्च पुत्रलाभमुख भवेत् ॥१५॥
गोमहिष्यादिलाभश्च शूद्रभूलाद्धनप्रदम् ॥ दायेदशाद्रिपुरघस्ते व्यये वा पाप सपुते ॥१६॥
धनधान्यादिनाश च बहुमित्रविरोधकृत् ॥ उद्योगमगो वेहार्ति स्वजनानां महद्भयम् ॥१७॥
द्विसप्तमाधिपे मदे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रक जपेत् ॥१८॥ कृष्णा गा महिषीं दद्यादनेनारोग्यमादिशेत् ॥१९॥

बृहस्पति की दशा मे शनि का अन्तर मा० ३० दि० १२ फल

बृहस्पति की दशा मे शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान मे हो तथा उच्च का स्वदेशी या मित्र राशि मे हो एव बलवान् हो॥८॥ तो राज्य लाभ, महान् सौख्य, वस्त्र आभरण की प्राप्ति, धन धान्य का लाभ, स्त्रीलाभ तथा बहुत सुख होता है॥९॥ वाहन, वस्त्र, पशु भूमि, स्थान, मकान का लाभ होता है॥ पुत्र, मित्र वा सुख होता है॥ नर

वाहन (पालकी, रिक्सा) का योग होता है॥१०॥ नीले रंग के उत्तम वस्त्र की प्राप्ति तथा नीले रंग का घोड़ा प्राप्त होता है॥ पश्चिम दिशा की यात्रा तथा गजदर्शन होता है॥११॥ अनेक सवारी भी प्राप्त होती है। यदि शनि लग्न से ६।८।१२ स्थान में नीचराशि का अथवा शत्रु राशि में तथा अस्त हो॥१२॥ तो धनधान्य का नाश, ज्वर पीडा, मन में चिन्ता, स्त्री पुत्र को रोग, फोडा, फुन्सी, दर्द आदि की बिमारी होती है॥१३॥ घर में अशुभ कार्य, नौकरी में बीमारी, गौ आदि की हानि तथा बन्धुओं से द्वेष होता है॥१४॥ बृहस्पति से यदि शनि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धनभाव में हो तो भूमि और धन का लाभ तथा पुत्र का लाभ होता है॥१५॥ गौ भैस आदि चौपाया का लाभ होता है। किसी शूद्र जाति के पुरुष द्वारा लाभ होता है॥ गुरु से शनि ६।८।१२ में पापयह्युक्त हो॥१६॥ तो धनधान्य का नाश, भाई और मित्र से विरोध, व्यापार भग्न देह में पीडा स्वजनो से महान् भय होता है॥१७॥ शनि यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये विष्णुसहस्रनाम का पाठ॥१८॥ तथा काली गौ का दान करे॥१९॥

अथ बुधभुक्तिमासा २७ दिना० ६ तत्फलम्

जीवस्यातगति सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्धने वापि दशाधिपसमन्विते ॥२०॥ अर्थलाभ बेहसौख्य राज्यलाभ महत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धि सुखावहा ॥२१॥ वाहनावरपञ्चादिगोधनैस्सकुल गृहम् ॥ महीसुतेन सङ्घृष्टे शत्रुवृद्धि सुखसयम् ॥२२॥ व्यवसायात्फल नेष्ट ज्वरातीसारपीडनम् ॥ दायेशाद्भाग्यकोणे वा केन्द्रे वा तुगनायके ॥२३॥ स्वदेशे धनलाभश्च पितृमातृसुखावहम् ॥ यजयाजिसमायुक्तो राजमित्रप्रसादक ॥२४॥

गुरु दशा में बुधान्तर मा० २७ दि० ६ फल

गुरु दशा में बुध का अन्तर हो बुध लग्न से केन्द्र त्रिकोण लाभ में उच्च राशि का या स्वगृही तथा गुरु युक्त हो॥२०॥ तो धन लाभ देह सौख्य राज्यलाभ महान् सुख राजा की कृपा से मनोरथ पूर्ण होता है॥२१॥ सवारी गौ आदि पशु होते हैं। मंगल की दृष्टि हो तो शत्रु वृद्धि तथा सुख हानि होती है॥२२॥ व्यापार में धन हानि ज्वर अतिसार की बीमारी होती है। गुरु से बुध केन्द्र त्रिकोण तथा भाग्य स्थान में हो॥२३॥ तो अपने देश में ही धन लाभ माता पिता का सुख, हाथी घोड़ा युक्त सवारी राजा की मित्रता प्राप्त होती है॥२४॥

बादेशात्पठरधस्थे व्यये वा पापसयुते ॥ शुभदृष्टिविहीनश्रेद्धनधान्यपरिच्युति ॥२५॥ विदेशगमन चैव मार्गे चौरभय तथा ॥ वणदाहाक्षिरोग्रश्च नानादेशपरिच्युतम् ॥२६॥ लग्नात्पञ्चाष्टरिक्के वा व्यये वा पापसयुते ॥ अवस्मात्कलहश्चैव गृहे निष्ठुरभाषणम् ॥२७॥ चतुष्पाज्जीयहानिश्च व्यवहारस्तथैव च ॥ अपमृत्युभय चैव शत्रूणां कलहो भवेत् ॥२८॥ शुभदृष्टौ शुभेर्भुक्ते द्वारसौख्य धनागमम् ॥ आदौ शुभ देहसौख्य वाहनान्भरत्लाभम् ॥२९॥ अते तु धनहानिश्च स्वात्मसौख्य च जायते ॥ द्वितीयदूननाये वा ह्यपमृत्युर्मविध्यति ॥३०॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसहस्रक जपेत् ॥ बुधप्रीतिकर चैव दान शक्ति च कारयेत् ॥ आयुर्वृद्धिकर चैव सर्वसौभाग्यसपदम् ॥३१॥

गुरु से बुध ६।८।१२ में पापयुक्त शुभ दृष्टि रहित हो तो धनधान्य की हानि होती है॥२५॥ विदेश यात्रा, मार्ग में चोरी, घान, अग्नि से भय, आस्र में रोग, अनेक देशों में परिभ्रमण होता है॥२६॥ बुध यदि लग्न में ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो तो अकस्मात् कलह तथा रोपपूर्ण व्यवहार होता है॥२७॥ चौपाया जीव की हानि, व्यापार में हानि, अपमृत्यु का भय, शत्रु से कलह होती है॥२८॥ यदि बुध शुभग्रह से युक्त और दृष्ट भी हो तो दशा के आरम्भ में स्त्री को सुख, धनलाभ आरोग्यता, वाहन आदि का लाभ होता है॥२९॥ दशा के अन्त में धन हानि होती है। यदि बुध २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये 'विष्णु सहस्रनाम' का जप तथा दान करे तो आयु की वृद्धि तथा सुख-सम्पत्ति प्राप्त होती है॥३०॥३१॥

अथ केतुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

जीवस्यातर्गते कर्ता शुभग्रहसन्निविते ॥ अन्यसौख्यघनावाप्तिं कुत्सिताश्रय भोजनम् ॥३२॥ पराश्रयं चैव श्राद्धाश्च पापमूलाद्वानि च ॥ दायेशास्त्रिपुरघ्नस्ते व्यये वा पापसमुते ॥३३॥ राजकोपं धनच्छेदं वधनं रोगपीडनम् ॥ बलहानि पितृद्वेषो भ्रातृद्वेषो मनोरुज ॥३४॥ दायेशास्तुतमाग्न्यस्ये वाहने कर्मोपरि वा ॥ नरबाहनयोगश्च गजाश्वारसकुलम् ॥३५॥ महाराजप्रसादेन इष्टकार्यार्थलाभकृत् ॥ व्यवसायात्कलाद्यिष्य गोमहिष्यादिलाभकृत् ॥३६॥ यवनप्रभूमूलाद्वा वस्त्रभूषादिलाभकृत् ॥ द्वितीयपूजनस्ये तु देहबाधा भविष्यति ॥३७॥ छागदानं प्रकुर्वीत मृत्युजयजपं चरेत् ॥ सर्वदोषोपरामर्शं शान्तिं कुर्याद्विधानतः ॥३८॥

गुरुदशा में केतु का अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

गुरुदशा में केतु का अन्तर हो और केतु शुभग्रहयुक्त हो तो अन्य व्यक्ति के साहाय्य से सुख और धन की प्राप्ति होती है तथा निकृष्टभोजन प्राप्त होता है॥३२॥ धर्म में प्राप्त अथवा श्राद्धीय-भोजन प्राप्त होता है। पापदोष से धन हानि होती है। गुरु म केतु ६।८।१२ में पापयुक्त हो तो॥३३॥ राजकोप, धनहानि, वधन, रोग तथा पीडा, बलहानि, पिता तथा भाई से द्वेष, मन में अशान्ति होती है॥३४॥ गुरु में केतु ५।९।४।१० स्थान में हो तो शत्रु, पीडे, पालकी (मोटर) युक्त होता है॥३५॥ राज साहाय्य से इच्छित लाभ व्यापार में अधिक लाभ, गौ भैस आदि का लाभ॥३६॥ यवन जाति के अधिकारी द्वारा लाभ, वस्त्रभूषण आदि का लाभ होता है। २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है॥३७॥ शान्ति के लिए छाग (बकरा) का दान, मृत्युञ्जय मन्त्र जप कर और सर्वदोष नाशक शान्ति करे॥३८॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः ३० दिनानि० तत्फलम्

जीवस्यातर्गते शुक्रे भाग्यकेन्द्रेणसमुते ॥ लाभे वा सुतराशित्ये स्वसेत्रे शुभसमुते ॥३९॥ नरबाहनयोगश्च गजाश्वारसमुते ॥ महाराजप्रसादेन देशाधिक्यं महत्सुखम् ॥ नीलावरणि शस्त्राणि ताम्रश्रेव भविष्यति ॥४०॥ पूर्वस्या दिशि आश्रित्य प्रमाणं धनलाभगम् ॥ बत्स्यान् च महाप्रीतिं पितृभ्रातृमुखावह॥४१॥ देवतागुरुभक्तिश्च अप्रदानं महत्सुखा ॥ तद्भागोपुरादीनि कृत्वा पुण्यानि मूर्तिना ॥४२॥ दण्डाष्टमध्यमे नीचे दायेशाद्वा तर्पणं च ॥

कलहो बंधुवैषम्यं दारपुत्रादिपीडनम् ॥४३॥ मंदारराहुसंयुक्ते कलहो राजविग्रहम् ॥
स्त्रीमूलात्कलहं चैव अशुरात्कलहं तथा ॥४४॥ सोदरेण विवादः स्याद्वनधान्यपरिच्युतिः ॥
दायेशात्केद्रराशिस्ये धने वा भाग्यगेऽपि वा ॥४५॥ धनधान्यादिलाभश्च स्त्रीलाभं राज-
दर्शनम् ॥४६॥

गुरुदशा मे शुक्र का अन्तर मास ३० दि. ० फल

गुरुमहादशा मे शुक्र का अन्तर हो, शुक्र भाग्येश तथा केन्द्रेण से युक्त हो, लाभभाव मे या
पञ्चमभाव मे हो तथा स्वगृही, शुभग्रह युक्त हो तो॥३९॥ नरवाहन (पालकी या रिक्सा) का
योग तथा हाथी, घोडा, वस्त्र, भूषण की प्राप्ति होती है। राजकृपा से अधिकार भूमि महान्
सुख, नीलवर्ण पोशाक, तथा हथियार प्राप्त होते है॥४०॥ पूर्वदिशा मे यात्रा, धनलाभ,
कल्याण तथा समाज मे प्रेम एवं मातापिता को सुख होता है॥४१॥ देवता, गुरु मे भक्ति तथा
अन्नदान, तालाब, महल, मन्दिर आदि का पुण्य प्राप्त होता है॥४२॥ बृहस्पति से शुक्र
६।८।१२ मे नीच राशि का हो अथवा लग्न से हो तो कलह, बन्धुओं मे वैमनस्य, स्त्री पुत्र को
पीडा होती है॥४३॥ मंगल, शनि राहु युक्त हो तो घर मे कलह तथा राजवर्ग से विग्रह होता
है। विशेष करके स्त्री के कारण कलह और अशुर से भी कलह होता है॥४४॥ भाई से विवाद,
धन सम्पत्ति की हानि होती है। यदि शुक्र, गुरु से केन्द्र, धनस्थान, भाग्यस्थान मे हो॥४५॥ तो
धन सम्पत्ति का लाभ, स्त्री लाभ तथा राजदर्शन होता है॥४६॥

वाहनं पुत्रलाभ च पशुवृद्धिमहत्सुखम् ॥ गीतवाद्यप्रसगादिविद्वज्जनसमागमम् ॥४७॥
दिव्यान्न भोजन सौख्य स्वबधुजनपोषकम् ॥ द्विसप्तमाधिपे शुके तद्दशायां युतेक्षिते ॥४८॥
अपमृत्युभय तस्य स्त्रीमूलादौषधादिभिः ॥ तस्य रोगस्य शात्यर्थं शातिकर्म समाचरेत् ॥४९॥
श्वेतां गा महिषीं दद्यादापुरारोग्यवृद्धिदृक् ॥५०॥

सवारी, पुत्र लाभ, पशु वृद्धि, महान् सुख होता है। नवि, गायक, वादक, पण्डित गोष्ठी एवं
मित्र गोष्ठी होती रहती है॥४७॥ उत्तम भोजन सुख, परिवार सुख होता है। शुक्र राशि का
स्वामी हो, पापयुक्त तथा दुष्ट हो॥४८॥ अपमृत्यु का भय और यह अपमृत्यु भी किसी स्त्री
द्वारा औषधि मे विष देने से होती है। इसकी शान्ति के लिये ग्रह शान्ति करना चाहिए तथा
सफेद गौ का दान करे तो आयु वृद्धि और आरोग्यता होती है॥४९॥५०॥

अथ रविभुक्तिमासाः ९ दिना० १८ तत्फलम्

जीवस्यातर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रेऽपि वा ॥ केन्द्रेबाध त्रिकोणे च दुश्चित्रके लाभगेऽपि वा
॥५१॥ भाग्ये वा बलसंयुक्ते दायेशाद्वा तथैव च ॥ तत्काले धनलाभः स्याद्वान्नसन्मानवैभवं
॥५२॥ बाह्यावरणवादिभूषण पुत्रसम्भवं ॥ मित्रप्रभुवशादिष्ट सर्वकार्यं शुभावहम् ॥५३॥
पञ्चाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वा तथैव च ॥ शिरोरोगादिपीडा च ज्वरपीडा तथैव च ॥५४॥
सत्कर्मणि विहीनत्वं पापकर्म तथैव च ॥ सर्वजनविद्वेषो ह्यात्मवपुर्विप्रयोगकृत् ॥५५॥
अकस्मात्कलहं चैव जीवस्यातर्गते रवौ ॥ द्वितीयप्लूतनाथे तु देहपीडा भविष्यति ॥५६॥

पूर्वचण्डे सप्तत्रिंशोऽध्यायः

तद्दोषपरिहारार्थमादित्यहृदयं जपेत् ॥ सर्वपीडोपशमनं सूर्यप्रीतिं च कारयेत् ॥५७॥

गुरु वशा में सूर्य का अन्तर मा० ९ दि० १८ फल

बृहस्पति की दशा में सूर्य का अन्तर हो, सूर्य लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में, तीसरे या लाभ में, उच्च का या स्वगृही हो अथवा बलवान् होकर भाग्य स्थान में हो अथवा पूर्वोक्त प्रकार से बृहस्पति से ऐश्वर्य योग हो तो इस अन्तर में धन का लाभ, ऐश्वर्य, राज सम्मान होता है॥५१॥५२॥ सवारी, गौ आदि पशु, सम्पत्ति तथा पुत्र होता है। किसी मित्र के कारण उन्नति, मनोरथ पूर्ति तथा समस्त कार्य सिद्ध होते हैं॥५३॥ सूर्य लग्न से या बृहस्पति से ६।८।१२ में हो तो सिर दर्द, ज्वर पीडा होती है॥५४॥ धार्मिक कार्य की हानि, पापकर्म की वृद्धि, समाज विरोध, परिवार में कलह होता है। तथा अकस्मात् विशेष कलह होता है॥५५॥ सूर्य यदि २।७ का स्वामी हो तो देह पीडा होती है॥५६॥ इसकी शान्ति के लिये 'आदित्य हृदय' का पाठ तथा हवनादि करे॥५७॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १६ दिनानि० तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते चंद्रे केन्द्रे लाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षराशिस्ये पूर्वचंद्रयत्नेभ्युते ॥५८॥
बापेशाब्जुभराशिस्ये राजसन्मानवर्भवम् ॥ दारपुत्रादिसौख्यं च क्षीराणां भोजनं तथा ॥५९॥
सत्कर्म च तथा कीर्तिः पुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ॥ महाराजप्रसादेन सर्वसौख्यं धनागमम् ॥६०॥
अनेकजनसौख्यं च दानधर्मादिसंग्रहः ॥ पष्ठाष्टमव्यये चंद्रे त्रिकोणे पापसंयुते ॥६१॥
बापेशास्वपठरंघ्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥ मानार्थबंधुहानिश्च विदेश परिधिच्युतिः ॥६२॥
नृपचौरादिपीडा च दायादिजनविद्वारम् ॥ मातुलादिबिभोगश्च मातृपीडा तथैव च ॥६३॥
द्वितीयपष्ठमोरोशे देहपीडा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गापाठं च कारयेत्॥६४॥

चन्द्रमा का अन्तर मा० १६ फल

गुरु महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा लग्न से या बृहस्पति से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो, स्वगृही या उच्च का अथवा शुभ राशि में हो॥५८॥ तो राजा के समान वैभव, स्त्रीपुत्र का सुख, प्रतिदिन दूध का भोजन प्राप्त होता है॥५९॥ मत्कर्म तथा कीर्ति, पुत्र पौत्र की वृद्धि, राजा की कुशा से धन लाभ और सर्वसुख होता है॥६०॥ दान आदिक धर्म के कार्य होते हैं, जिससे समाज का उत्थान होता है। यदि चन्द्रमा लग्न में ६।८।१२ में या त्रिकोण में पापग्रह युक्त हो॥६१॥ अथवा बृहस्पति से ६।८।१२ में बलहीन हो तो प्रतिष्ठा, धन और बन्धु की हानि होती है। विदेश यात्रा होती है॥६२॥ राज, बीम में पीडा होती है। परिवार में विग्रह, मामा पक्ष का विभोग तथा माता की पीडा होती है॥६३॥ चन्द्रमा यदि २।७ का स्वामी हो तो देह, पीडा होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गा पाठ करना चाहिए॥६४॥

अथ कुजभुक्तिमासाः ११ दिनानि ६ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते श्रीमे सप्तार्चत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षे वापि तुङ्गशि स्वांशगेऽपि वा

॥६५॥ विद्याविवाहकार्याणि ग्राम भूम्यादिलामकृत् ॥ जनसामर्थ्यमाप्नोति सर्वकार्यार्थसिद्धिदम् ॥६६॥ दायेशात्केन्द्रलामस्ये लाभे वा धनगोपि वा ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे धनधान्यादिसंपदम् ॥६७॥ मिष्टान्नदानविभवं राजप्रीतिकरं शुभम् ॥ स्त्रीसौख्यं च सुतावाप्तिः पुण्यतीर्थफलप्रदम् ॥ ६८॥ दायेशात्पृष्ठरंघ्रे वा व्यये वा नीचगोपि वा ॥ पापयुतेक्षिते वापि धान्यार्थगृहनाशनम् ॥६९॥ नानारोगभयं दुःखं नेत्ररोगादिसंभवम् ॥ पूर्वार्द्धे क्लेशमधिकमपराद्धं महत्सुखम् ॥७०॥ द्वितीयघूननाथे तु देहजाड्यं मनोरुजम् ॥ अनर्द्धाहं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्प्रदायकम् ॥७१॥

मंगल का अन्तर मा० ११ वि० ६ फल

बृहस्पति की दशा में मंगल का अन्तर हो, मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में उच्च राशि का, स्वगृही या परमोच्च हो अथवा अपने नवाश में हो॥६५॥ तो विद्या प्राप्ति, विवाह कार्य, ग्राम भूमि का लाभ तथा जनबल प्राप्त होता है जिससे सब कार्य सिद्ध होते हैं॥६६॥ बृहस्पति से केन्द्र तथा लाभ स्थान में, धन स्थान में, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है॥६७॥ मिष्टान्न, दान, वैभव, राजप्रीति, स्त्री सौख्य, पुत्र प्राप्ति तथा तीर्थयात्रा होती है॥६८॥ बृहस्पति से मंगल ६।८।१२ स्थान में नीच राशि गत हो, पापयुक्त या दृष्ट हो तो धन सम्पत्ति और मकान का नाश होता है॥६९॥ अनेक रोग से भय, दुःख, नेत्र रोग भी संभव है। अन्तर के पूर्वार्द्ध में अधिक क्लेश हो। उत्तरार्द्ध में सुख हो॥७०॥ मंगल यदि २।७ का स्वामी हो तो वात व्याधि, क्लेश होता है। वैल का दान करने से सुख सम्पत्ति होती है॥७१॥

अथ राहुभुक्तिमासाः २८ दिनानि २४ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते राहौ स्योच्च्ये वा केद्रगोपि वा ॥ मूलत्रिकोणमाग्ये च केद्राधिपसमन्विते ॥७२॥ शुभयुक्तेक्षिते वापि योगप्रीति समादिशेत् ॥ भुक्त्याद्यौ शरमासाश्च धनधान्यपरिश्रमम् ॥७३॥ वेश्यामाधिकारं च यवनप्रभुदर्शनम् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्बहुसेनाधिपत्यताम् ॥७४॥ दूरयात्राधिगमन पुण्यधर्मादिप्रहः ॥ सेतुब्रानफलावाप्तिरिष्टसिद्धिमुखावहम् ॥७५॥ दायेशात्पृष्ठरंघ्रे वा व्यये वा पापयुते ॥ चौराह्विषणमीतिश्च राजवैयम्यमेव च ॥७६॥ गृहे कर्मकलापेन व्याकुले भवति ध्रुवम् ॥ सोद्रेण विरोधः स्पादायादिजनविग्रहम् ॥७७॥ गृहे त्वशुभकार्याणि दुःस्वप्नादिभयं ध्रुवम् ॥ अकस्मात्कलहश्चेव क्षुद्रशून्यादिरोगकृत् ॥७८॥ द्विसप्तमस्थिते राहौ बेहवायां विनिर्विशेत् ॥ तदोपपरिहोरार्थं मृत्युंजयजप चरेत् ॥७९॥ घागदानं प्रकुर्वीत सर्वसौख्यादिमादिशेत् ॥८०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे विशोत्तर्यां गुरोस्तर्दशाफलकथनं
नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥

समझना। अन्तर के आरम्भ के ६ महीने में धन सम्पत्ति प्राप्त होती है॥७३॥ नगर या देश में अधिकार प्राप्ति, यवन जातीय स्वामी का दर्शन, घर में सुख सम्पत्ति अथवा सेनापति होता है॥७४॥ दूर देश की यात्रा, पुण्य धर्म के कार्य, रामेश्वर की यात्रा तथा मनोरथ सिद्धि होती है॥७५॥ बृहस्पति से मंगल ६।८।१२ में पापमुक्त हो तो सर्प, चोर, आदि से आघात का भय, राज से विपमता॥७६॥ घर के झगड़ से व्याकुलता, सहोदर भाई से विरोध, परिवार में विग्रह होता है॥७७॥ घर में अशुभ कार्य, अकस्मात् कलह, दुःस्वप्न, फोडा-फुत्ती अथवा शून्य रोग होता है॥७८॥ राहु यदि २।७ स्थान में हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप कराये॥७९॥ तथा छाग (बकरा) का दान करे तो सर्वप्रकार सुख होता है॥८०॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० विशोतर्या गुरोरन्तर्दशा
फलकथन नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥

अथ शनिदशायां शनिमुक्तिमासाः ३६ दिनानि० तत्फलम्

मूलत्रिकोणस्वर्गों वा तुलायामुच्चोऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलामे वा राजयोगादिसप्तमे ॥१॥
राज्यलाभ महत्सौख्य दारपुत्रादिवर्धनम् ॥ याहनप्रयसप्त्युक्त गजाश्वाबरसकुलम् ॥२॥
महाराजप्रसादेन अभ्यदौत्यादिलाभकृत् ॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्यादग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥३॥
षष्ठाष्टमध्यमे भदे नीचे वा पापसप्तमे ॥ तद्भुक्त्यादौ राजभोतिर्विपशास्त्रादिपीडनम् ॥४॥
रक्तघाव गुल्मरोगमतिस्तृतादिपीडनम् ॥ मध्ये चौरादिभोतिश्च देशत्याग मनोरजम् ॥५॥
अते शुभकर चैव ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥ द्वितीयघननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥६॥
तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युञ्जयजप चरेत् ॥७॥

शनिमहादशा में शनि की अन्तर्दशा मास ३६ दि० फल

अन्तर्दशा में शनि जन्म लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ (११) में या तुलाराशि में, परमोच्च में, मूलत्रिकोण में, स्वराशि में एव योग वारक ग्रहयुक्त हो तो ॥१॥ राजा से लाभ या राज्य का लाभ, महान् सुख, स्त्रीपुत्र की वृद्धि, तीन मोटर की सबारी, हाथी घोड़े तक ऐश्वर्य ॥२॥ राजानुग्रह से पुढसवार दूत हो, गौ आदि चौपाया पशु की स्थिति, ग्राम या विपुल भूमिलाभ होता है॥३॥ यदि शनि ६।८।१२ स्थान में नीचे वा हो पापग्रहयुक्त हो तो राज में भय, विप भय द्वारा पीडा॥४॥ रक्तघाव, गुल्मरोग, अतिमार आदि रोग, चोर आदि से भय, स्वदेश त्याग, मन में अशान्ति हो॥५॥ दशा के अन्त में शुभपत्र हो, ग्राम भूमि वा लाभ हो। यदि शनि २।७ वा स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥६॥ इसकी शान्ति के लिए महामृत्युञ्जय मन्त्र वा जप करना चाहिए॥७॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ३२ दिनानि ९ तत्फलम्

मन्वस्यान्तर्गते सौम्ये त्रिकोणे केन्द्रेण वा ॥ सन्मान च यशःकीर्तिर्विद्यालाभ धनागमम् ॥८॥
 स्वदेशे सुखमाप्नोति वाहनादिफलैर्युते ॥ यज्ञादिकर्मसिद्धिश्च राजयोगादिसम्भवम् ॥९॥
 देहसौख्यं हृदुत्साहं गृहे कल्याणसम्भवम् ॥ सेतुग्रानफलावाप्तिस्तोत्रयात्रादिकर्मणा ॥१०॥
 वाणिज्याद्धनलाभश्च पुराणश्रवणादिकम् ॥ अन्नदानफलं चैव नित्यमिष्टान्नभोजनम् ॥११॥
 षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये नीचे वास्तगते सति ॥ रव्यारफणिसंयुक्ते दापेशाद्वा तथैव च ॥१२॥
 नृपामिवैकमयाप्तिर्देशग्रामाधिपत्यता ॥ फलमीदृशमादी तु मध्याते रोगपीडनम् ॥१३॥
 नष्टानि सर्वकार्याणि व्याकुलत्वं महद्दुःखम् ॥ द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ॥१४॥
 तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥ अन्नदानं प्रकुर्वीत सर्वसप्तप्रदायकम् ॥१५॥

बुध का अन्तर मास ३२ दिन ९ फल

शनि की महादशा में बुध का अन्तर हो। बुध केन्द्र, त्रिकोण में हो तो सन्मान, यश, विद्यालाभ, धनलाभ ॥८॥ तथा स्वदेश में सुखप्राप्ति, सवारो आदि का सुख, यज्ञ आदि धर्मकार्य, राजयोग के सम्मान ऐश्वर्य होता है ॥९॥ देहसौख्य, परिवार में सुख, रामेश्वरजी की यात्रा, तीर्थाटन होता है ॥१०॥ व्यापार से धनलाभ पुराण आदि का श्रवण, अन्नदान तथा नित्य उत्तम भोजन ॥११॥ यदि बुध ६।८।१२ भाव में हो, नीच राशि में, तथा अस्त हो या सूर्य, मंगल, राहुयुक्त हो। ये सब योग लग्न से या शनि से किसी से भी हो ॥१२॥ तो अन्तर्दशा के आदि में तो राज्याभिषेक में प्राप्ति, देश या नगर में पदाधिकार आदि शुभ फल होकर मध्य में तथा अन्त में रोग पीडा (दर्द) ॥१३॥ सम्पूर्ण कार्य में हानि, व्याकुलता, महान् भय होता है। द्वितीय सप्तम भाव का स्वामी हो तो देह में बीमारी होती है ॥१४॥ इसकी शान्ति के लिए, 'विष्णुसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ होना चाहिए। तथा अन्नदान करने से सर्वसम्पत्ति प्राप्त होती है ॥१५॥

अथ केतुभुक्तिमासाः १३ दिनानि ९ तत्फलम्

मन्वस्यान्तर्गते केतौ शुभग्रहयुतेक्षिते ॥ स्वोच्चे वा शुभराशित्ये योगकारकं सयुते ॥१६॥
 लग्नाधिपेन सयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमः ॥ गंगादि सर्वतीर्थेषु स्थानदैवत दर्शनम् ॥१७॥
 दापेशात् केन्द्रकोणे वा शुभयोग-समन्विते ॥ समर्थो धर्मं बुद्धिश्च सौख्यं नृप समागमः ॥१८॥
 षष्ठाष्टमव्यये केतौ दापेशाद्वा तथैव च ॥ दारिद्र्यं बध्नन् भीतिं पुत्रदारादिनाशनम् ॥१९॥
 स्थानभ्रमं महद्भीतिं कुत्सिताग्रस्य भोजनम् ॥ शीतज्वरातिसारश्च व्रणचौरादिपीडनम् ॥२०॥
 पुत्रदार-वियोगश्च ससारे भवति ध्रुवम् ॥ स्वप्नभोगं महाक्लेशं विदेश गमनं तथा ॥२१॥
 द्वितीयद्वय राशित्ये अपमृत्युर्भविष्यति ॥२२॥ छान्दानं प्रकुर्वीत हृष्यमृत्युभयं हरेत् ॥२३॥

केतु का अन्तर मास १३ दिन ९ फल

शनि की महादशा में केतु का अन्तर हो तथा केतु स्वोच्चराशि में शुभदृष्टि या शुभयुत हो अथवा शुभराशि में योगकारक से युक्त हो ॥१६॥ लग्ने से सयुक्त हो तो प्रथमार्द्धदशमें

सुख तथा धनलाभ हो। गंगा आदि तीर्थों में स्नान, देवदर्शन हो॥१७॥ शनि से केन्द्र या त्रिकोण स्थान में शुभयोग युक्त हो तो सामर्थ्य की प्राप्ति तथा धर्मवृद्धि हो, सुखवृद्धि तथा राजा से मेल हो॥१८॥ लग्न से या शनि से ६।८।१२ स्थान में केतु हो तो दरिद्रता, बधन, भय, स्त्री पुत्र का नाश होता है॥१९॥ स्थान हानि महत् भय निकृष्ट भोजन, शीतज्वर, अतिसार, पाव, चोर आदि से पीडा होती है॥२०॥ स्त्रीपुत्र का वियोग होता है। स्वामी से कष्ट होता है। विदेश यात्रा होती है॥२१॥ यदि केतु द्वितीय तथा सप्तम राशि में हो तो अपमृत्यु होती है॥२२॥ इसकी शान्ति के लिए छाग (बकरा) का दान करना चाहिए। यह दान करने से आगमृत्यु का भय दूर होता है॥२३॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः २६ दिनानि० तत्फलम्

मन्दस्यातर्गति शुके स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥ केन्द्रे वा शुभसयुक्ते त्रिकोणे लाभगेपि वा ॥२४॥
 दारपुत्रधनप्राप्तिर्देहारोग्य महोत्सव ॥ गृहे कल्याणसप्तौ राज्यलाभ महत्सुखम् ॥२५॥
 महाराजप्रसादेन हीष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ सन्मान प्रभुसन्मान प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ॥२६॥
 द्वीपातराद्वस्त्रलाभः श्वेताश्वो महिषी तथा ॥ गृहचारवशाद्भ्रातृ सौख्यं च धनसंपदः ॥२७॥
 शनिचारान्मनुष्योत्ती योगमाप्नोत्यसशयम् ॥ शत्रुनीचास्तमे शुके पट्टाष्टव्यपराशिगे ॥२८॥
 दारनाश मनःक्लेश स्थाननाश मनोरुजम् ॥ दाराणां स्वजनक्लेशः सतापो जनविग्रहम् ॥२९॥
 दापेशाद्भ्रातृभ्यो नैव केन्द्रे वा लाभसयुते ॥ राजप्रीतिकरं चैव मनोभीष्टप्रदायकम् ॥३०॥
 दानधर्मदयायुक्तस्तीर्ययात्रादिकं फलम् ॥ शास्त्रार्थकाव्यरचना वेदातथ्यवणादिकम् ॥३१॥
 दारपुत्रादिसौख्यं च बाह्यनष्टप्रलाभकम् ॥ दापेशाद्वधपणे शुके पट्टे वा ह्यष्टमेपि वा ॥३२॥
 नैत्रपीडा ज्वरभय स्वकुलावारवर्जित ॥ कपोले वन्तसूलादि हवि गृहे च पीडनम् ॥३३॥
 जलभीतिर्मनस्तापो वृषात्पतनसमय ॥ राजद्वारे जनद्वये सोदरेण विरोधनम् ॥३४॥
 द्वितीयसप्तमाधीशे आत्मक्लेशो भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुग्दिदीनप चरेत् ॥३५॥
 श्वेता गा महिषी दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥३६॥

शनिदशा में शुक्रान्तर मास २६ दिन ० फल

शनि की दशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र लग्न से केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो। उच्चराशि में हो या स्वगृही और शुभ ग्रहयुक्त हो तो॥२४॥ स्त्री पुत्र, धन की प्राप्ति हो, देह की आरोग्यता, महोत्सव, घर में सुख सम्पत्ति, राज से लाभ तथा महान् सुख होता है॥२५॥ तथा राजदृष्टा से मुन्यदायक इच्छित फल होता है। प्रतिष्ठा तथा स्वामी में घर में आदर, तथा प्रिय वस्त्रादि का लाभ हो॥२६॥ और द्वीपान्तरसे वस्त्र (या वस्त्र व्यापार से) लाभ हो तथा श्वेतरंग का अश्व (घोडा) एवं भैर हो। (गुरुमचार में भाग्योदय, मुग, धन संपत्ति होती है॥२७॥ शनिमचार में जातक अवश्य योग प्राप्त करता है॥२७॥
 (सूचना-यह दो अर्द्धश्लोक वास्तव में एक ही श्लोक है और यह प्रकरण भी दूसरा ही है। लेखकों के प्रमाद से सम्मिलित हो गया है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मादि कारकों के अगादि पर में जब गुरु संचार करता है तो उक्त पत्र तथा शनि संचार करता है तो शनि के लिए बड़े हुए दुष्पत्र होते हैं। यह विषय स्पष्टरूप में देवदेव आदि पन्थों में देमना चाहिए।)

शुक्र यदि शत्रु राशि मे, नीचराशि मे अथवा अस्त होकर ६।८।१२ वे स्थान मे हो॥२८॥
तो स्त्री की मृत्यु मन मे क्लेश, स्थानहानि, मन मे अशान्ति, स्त्रियो को क्लेश, बन्धुदुःख,
सताप, परिवारिक कलह होती है॥२७॥ यदि शुक्र शनि से भाग्य, लाभ या केन्द्र मे हो तो
राजप्रीति हो, इच्छित कार्य सिद्ध होता है॥३०॥ दान, धर्म, दया, तीर्थयात्रा आदि फल होता
है। शास्त्रविचार, काव्यरचना, वेदान्तश्रवण॥३१॥ स्त्री पुत्र का सुख, वाहन (मोटर आदि
सवारी) छत्र का लाभ होता है। शनि से शुक्र ६।८।१२ स्थान मे हो तो॥३२॥ नेत्रपीडा,
ज्वरभय, कुलाचारहीनता, कपोल या दात मे शूल, हृदय तथा गुह्यदेश मे (पेट के नीचे का
भाग) पीडा होती है॥३३॥ जल से भय, मन मे सन्ताप तथा वृक्ष से गिरना भी सम्भव है।
राजकीय अधिकारी तथा सहोदर भाई से विरोध होता है॥३४॥ द्वितीय सप्तम भाव का
स्वामी यदि शुक्र हो तो आत्मक्लेश होता है। इसकी शान्ति के लिए दुर्गादेवी का जप करना
चाहिए॥३५॥ श्वेत रंग की गाय का दान करने से आयु और आरोग्यता की वृद्धि होती
है॥३६॥

अथ रविभुक्तिमासाः ११ दिनानि १२ तत्फलम्

भद्रस्यातर्गते सूर्यं स्योन्वे स्वक्षेत्रेण वा ॥ भाग्याधिपेन सयुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणे ॥३७॥
शुभदृष्टियुते वापि स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ॥ गृहे कल्याणसंपत्ति पुत्रादिमुखवर्द्धनम् ॥३८॥
वाहनावरपश्यादिगोक्षीरसकुल गृहम् ॥ पण्डाष्टमव्यये सूर्यं दायेशाद्वा तथैव च ॥३९॥ हृद्रोगो
मानहानिश्च स्थानभ्रशो मनोरुजा ॥ इष्टबन्धु वियोगश्च उद्योगस्य विनाशनम् ॥४०॥
तापज्वरादिपीडा च व्याकुलत्व भय तथा ॥ आत्मसबधमरणमिष्टबन्धुवियोगकुत् ॥४१॥
द्वितीयद्यूननाये तु वेहवाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यपूजा च कारयेत् ॥४२॥

शनिदशा मे सूर्यान्तर मास ११ दिन १२ फल

शनि की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो। सूर्य उच्चराशि मे स्वगृही, तथा भाग्येशयुक्त हो।
केन्द्र, लाभ या त्रिकोण मे हो॥३७॥ शुभदृष्टियुत हो तो अपने स्वामी से महान् सुख हो। घर
मे कल्याण, सुख तथा सम्पत्ति हो तथा पुत्र आदि सुख की वृद्धि हो॥३८॥ सवारी गृन्दर
वस्त्र, गौ आदि पशुओं से गृह सम्पन्न हो। शनि से सूर्य ६।८।१२ मे, अथवा लग्न मे ६।८।१२ मे
हो॥३९॥ तो हृदयरोग, मानहानि, स्थानविच्युति, मन मे दुःख, इष्टबन्धु का वियोग तथा
उद्योग का नाश होता है॥४०॥ ज्वर आदि पीडा, भय और व्याकुलता, अपने सम्बन्धी का
मरण तथा इष्ट बन्धु से वियोग होता है॥४१॥ यदि सूर्य २।७ वा स्वामी हो तो देहवाधा
होती है। इसकी शान्ति के लिए सूर्य की आराधना करनी चाहिए॥४२॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १९ दिनानि ० तत्फलम्

भद्रस्यातर्गते चन्द्रे जीवदृष्टिसमन्विते ॥ स्योन्वे स्वक्षेत्रकेन्द्रस्ये त्रिकोणे लाभोपि वा ॥४३॥
पूर्वचन्द्रे सौम्ययुक्ते राजप्रीतिसमागमम् ॥ महाराजप्रसादेन वाहनावरभूषणम् ॥४४॥ सौभाग्य
सुखवृद्धि च भृत्यानां परिपालनम् ॥ पितृमातृकुले सौख्यं पशुवृद्धिं मुखावहा ॥४५॥ क्षीणे वा

पापसंयुक्ते पापदृष्टौ विनीचगे ॥ कूरांशकगते वापि कूरसैत्रागतेपि वा ॥४६॥ जातकस्य महत्कष्टं
 राजकोपो धनक्षयः ॥ पितृमातृवियोगश्च पुत्रीपुत्रादिरोगकृत् ॥४७॥ व्यवसायात्फलं नेष्टं
 नानामार्गे धनव्ययम् ॥ अकाले भोजनं चैव मौषधस्य च भक्षणम् ॥४८॥ कलामिदृष्ट्यमावौ तु
 आदौ सौख्यं धनागमम् ॥ वायेशात्केद्रराशिस्ये त्रिकोणे लाभोपि वा ॥४९॥
 बाह्यावरपश्चाद्विभ्रातृवृद्धिः सुखावहा ॥ पितृमातृसुखावाप्तिः स्त्रीसौख्यं च धनागमम् ॥५०॥
 मित्रप्रभुयशादिष्टं सर्वसौख्यं शुभावहम् ॥ वायेशात्पृष्ठरिष्के वार ध्रे वा चलवर्जिते ॥५१॥ शयनं
 रोगमालस्यं स्थानभ्रष्टं सुखावहम् ॥ शत्रुवृद्धिविरोधं च इष्टबन्धुवियोगकृत् ॥५२॥
 द्वितीयद्यूनतार्ये तु देहालस्यो भविष्यति ॥ तद्दोषशमनार्थं च तिलहोमादिकं चरेत् ॥५३॥ गुडं पृतं
 च दध्नाक्तं तदुलं च यथाविधि ॥ श्वेतां गां महिषीं वद्यादापुरारोग्यवृद्धिकृत् ॥५४॥

शनिदशा में चन्द्रान्तर मास १९ दिन ० फल

शनि की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभस्थान में
 गुरुदृष्टियुक्त, स्वोच्च राशि में या स्वगृही तथा गुरुयुक्त या दृष्ट हो ॥४३॥ यदि पूर्णचन्द्र
 सौम्यग्रहयुक्त हो तो राजासे प्रीति तथा मैत्री और आना जाना होता है। और उसकी कृपा से
 सवारी, वस्त्र, आभूषण ॥४४॥ मीमांसा, सुख वृद्धि और आश्रित का पालन, मातृकुल तथा
 पितृकुल में सौख्य तथा सुखदायक पशुवृद्धि होती है ॥४५॥ यदि चन्द्रमा क्षीण हो, पापग्रहयुक्त,
 पापदृष्ट, नीच राशिगत, पावग्रह के नवांश में हो या पाप्मराशि में हो ॥४६॥ तो जातक को
 महान् कष्ट, राजकोप और धन का क्षय होता है। माता पिता का वियोग होता है। पुत्र, बन्धा
 को बीमारी होती है ॥४७॥ व्यापार में हानि तथा अनेक प्रकार से धनव्यय, कुसमय भोजन,
 औषधसेवन होता रहता है ॥४८॥ इस नेष्ट योगयुक्त में भी यदि चन्द्रमा एक कलारूप (मुदी
 द्वितीया का) हो तो अन्तर के आदिकाल में सुख और धनलाभ होता है। यदि चन्द्रमा शनि में
 केन्द्र, त्रिकोण, या लाभस्थान में हो ॥४९॥ तो सवारी, वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, भ्राता की
 वृद्धि, माता पिता का सुख, स्त्री का सुख, धनलाभ ॥५०॥ मित्र या स्वामी द्वारा इष्टपूर्ति,
 सर्वसौख्य, शुभ होता है। शनि से चन्द्रमा ६।८।१२ स्थान में ॥५१॥ हो तो अतिनिद्रा, रोग,
 आलस्य, स्थानहानि, सुख, प्रभुवृद्धि, विरोध तथा बन्धुवियोग होता है ॥५२॥ २।७ का स्वामी
 हो तो आलसी करता है, रोगी होता है। इसकी शान्ति के लिए तिलहोम, गुड, घी, दही-भात,
 चावल का दान करे। श्वेत गौ का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है ॥५४॥

अथ कुजभुक्तिमासाः १३ दिनानि ९ तत्फलम्

मंत्रस्यांतर्गते भीमे केद्रलामत्रिकोणगे ॥ तुगे स्वक्षेत्रगे वापि दशाधिपसमन्विते ॥५५॥
 लग्नाधिपेन समुक्ते आदौ सौख्यं धनागमम् ॥ राजप्रीतिकरं सौख्यं बाह्यावरमूषणम् ॥५६॥
 सेनाधिपस्य नृपप्रीतिः कृषिणोऽध्यात्मसंपदः ॥ नूतनस्थाननिर्माणं भ्रातृवर्गोऽसौख्यकृत् ॥५७॥
 नीचे चाक्षतगते भीमे षष्ठाष्टध्वपरशिगे ॥ पापदृष्टियुक्ते वापि घनहानिर्भविष्यति ॥५८॥
 घौराहिष्णुशस्त्रादिप्रविरोणादिपोहनम् ॥ भ्रातृविप्रादिपीडा च दायादजनविषहम् ॥५९॥
 शत्रुप्याज्जोषहानिश्च कुत्सितप्रस्य भोजनम् ॥ विद्वेगमग्नं चैव नानामार्गे धनव्ययः ॥६०॥
 अष्टमद्यूनतार्ये तु द्वितीयस्थेऽप्य वा घटि। अपमृत्युमयं चैव नानादृष्टपरामवम् ॥६१॥

तद्दोषपरिहारार्थं शांतिहोमं च कारयेत् ॥ अनङ्गवाहं प्रकुर्वीत सर्वारिष्टनिवारणम् ॥६२॥

मंगल का अन्तर मा० १३ दि० ९ फल

शनिदशामे मंगल का अन्तर हो। मंगल केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में, उच्चराशि में, स्वगृही, तथा शनि से युक्त हो तो॥५५॥ और लग्नेश से युक्त हो तो प्रथम सुख और धनप्राप्ति, राजप्रीति, सुख, वाहन, वस्त्र, भूषण की प्राप्ति होती है॥५६॥ सेनापतित्वं, राजा से प्रीति, कृषि, गौ, संपत्ति, तथा नूतन स्थान का निर्माण, भ्रातृवर्ग को सुख देनेवाला होता है॥५७॥ यदि अस्त हो और ६।८।१२ स्थान में पापदृष्टियुक्त हो तो धनहानि होती है॥५८॥ चोर आदि का उपद्रव, शस्त्राघात, ग्रथि रोग, पीडा, तथा भ्राता, पिता आदि को पीडा, परिवार में विग्रह होता है॥५९॥ गौ आदि पशु की हानि निकृष्ट भोजन विदेशयात्रा, विशेष सर्च होता है॥६०॥ यदि मंगल ७।८ का स्वामी होकर द्वितीय भाव में स्थित हो तो अपमृत्यु का भय होता है, अनेक कष्ट तथा हार होती है॥६१॥ इसकी शान्ति के लिए होम करे, बैल का दान करे तो सर्वथा अरिष्ट का निवारण होता है॥६२॥

अथ राहुभुक्तिमासाः ३४ दिनानि ६ तत्फलम्

मदस्यातर्गते राहौ कलहश्च मनोव्यथा ॥ देहपीडा मनस्ताप पुत्रद्वेषो मनोरुज ॥६३॥ अर्थव्यय राजभयं स्वजनादिदुष्पद्रवम् ॥ विदेशगमनं चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥६४॥ लग्नाधिपेन सयुक्ते योगकारकसंयुते ॥ स्वोच्चैः स्वक्षेत्रे केद्रे दायेशाल्लाभराशिगे ॥६५॥ आदौ सौख्यं घनावाप्ति गृह क्षेत्रादिसंपदम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिं च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ॥६६॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्याद्गृहे कल्याणवर्द्धनम् ॥ मध्ये तु राजभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम् ॥६७॥ मेघादिकन्यका चैव कुलीरे वृषभे तथा ॥ मीनकोदण्डसिंहेषु गजातैश्चर्यमादिशेत् ॥६८॥ राजसम्मान-भूषाप्तिं मृदुलाबरसौख्यकृत् ॥ द्विसप्तमाधिपैर्युक्ते देहबाधा भविष्यति ॥६९॥ मृत्युं जप प्रकुर्वीत् छागदानं च कारयेत् ॥ अनङ्गवाहं प्रकुर्वीत सर्वसपत्सुखावहम् ॥७०॥

राहु का अन्तर मास ३४ दिन फल

शनिदशा में राहु का अन्तर हो तो (यदि शुभयोग युक्त न हो तो) कलह, मनोव्यथा, देहपीडा, सन्ताप, पुत्र से द्वेष, मन में अशान्ति॥६३॥ धन का अधिक सर्च, राजभय, स्वजनों से उपद्रव, विदेश यात्रा तथा गृह भूमि का नाश होता है॥६४॥ और यदि राहु लग्नेश से युक्त और योगकारक युक्त हो और उच्च राशि में, स्वगृही, केन्द्र या लाभसे (शनि से)॥६५॥ हो तो प्रथम धनप्राप्ति, सुख, भूमि, मनान आदि सम्पत्ति, देवब्राह्मणभक्ति तथा तीर्थयात्रा होती है॥६६॥ गौ आदि जीपाया वी प्राप्ति, घर में सुख शान्ति होती है। मध्य में राजभय, पुत्र मित्र से विरोध होता है॥६७॥ यदि राहु, मेघ, कन्या, कर्क, वृष, मीन, धन और सिंह में हो तो हाथी होने योग्य ऐश्वर्य होता है॥६८॥ राज सम्मान, भूषण प्राप्ति, सुन्दर वस्त्र का सुख होता है। २।७ के स्वामी से युक्त हो तो देहबाधा होती है॥६९॥ मृत्युञ्जय मन्त्र जप और छागदान या बैलदान करने से गर्वसम्पत्ति का सुख होता है॥७०॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ३० दिनानि १४ तत्फलम्

मदस्यातर्गते जीवे केद्रे सामन्त्रिकोणगे ॥७१॥ लग्नाधिपेन सयुक्ते स्वोच्चैः स्वक्षेत्रेणैव वा ॥

सर्वकार्यार्थसिद्धिं स्याच्छोभनं भवति ध्रुवम् ॥७२॥ महाराजप्रसादेन धनवाहनभूषणम् ॥
 सन्मानं प्रभुसन्मानं प्रियवस्त्रार्थलाभकृत् ॥७३॥ देवतागुरुभक्तिश्च विद्वज्जनसमागमः ॥
 दारपुत्रादिलामश्च पुत्रकल्याणवैभवम् ॥७४॥ पाठाष्टमव्यये जीवे नीचे वा पापसंयुते ॥
 देहसंबन्धमरणं धनधान्यविनाशनम् ॥७५॥ राजद्वेषं स्थानहानिं कार्यहानिर्भविष्यति ॥
 विदेशगमनं चैव कुष्ठरोगादिसंभवः ॥७६॥ दायेशात्केद्रकोणे वा धने वा लाभोपि वा ॥
 विभवः दारसौभाग्यं राजश्रीधनसंपदः ॥७७॥ भोजनावरसौख्यं च दानधर्मादिकं भवेत् ॥
 ब्रह्मप्रतिष्ठासिद्धिश्च कृतकर्मफलप्रदम् ॥७८॥ अन्नदानं महाकीर्तिर्वेदातप्रवणादिकम् ॥
 दायेशात्पठारधे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥७९॥ बधुद्वेषं मनोदुःखं ब्राह्मणपदविच्युतम् ॥
 कुभोजनं कर्महानीं राजदंडाद्धनव्ययम् ॥८०॥ कारागृहप्रवेशं च पुत्रदारादिपीडनम् ॥
 द्वितीयधूननाये तु देहबाधा मनोरुजम् ॥८१॥ आत्मसंबन्धमरणं भविष्यति न सत्यम् ॥
 तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥८२॥ स्वर्णदानं प्रकुर्वीत ह्यारोग्यं भवति
 ध्रुवम् ॥८३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विशोत्तरीशान्तर्दशाफलकथनं
 नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥३८॥

शनिदशा मे गुरु अंतर मा० ३० दि० १४ फल

शनि की महादशा मे गुरु वा अन्तर हो गुरु लग्न से केन्द्र त्रिकोण लाभस्थान मे हो।
 लग्नेश युक्त उच्च राशि मे स्वगृही हो तो सर्वकार्य सिद्धि धनलाभ तथा शुभ होता है॥७२॥
 राजकुपा से धन वाहन, भूषण, सन्मान, स्वामी मे मान, इच्छित धन प्राप्त होता है॥७३॥ देव
 गुरु मे भक्ति तथा विद्वानो मे आदर, स्त्री पुत्रादि वा लाभ तथा परिवार मे उत्तम होता
 है॥७४॥ यदि गुरु ६।८।१२ स्थान मे हो नीचराशि मे पापयुक्त हो तो मृत्यु तथा धनधान्य
 का नाश होता है॥७५॥ राजभोग, स्थान हानि, कार्य हानि होती है, विदेशयात्रा तथा कुष्ठ
 आदि की बीमारी होती है॥७६॥ यदि गुरु शनि से केन्द्र, त्रिकोण, धनभाव या लाभभाव मे
 हो तो वैभव, स्त्रीमुख राजसमान नटमी, धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है॥७७॥ भोजन, वस्त्र का
 सुख तथा दान धर्म आदि होता है, ब्राह्मणो का सम्मान करने मे सिद्धि होती है यज्ञ का फल
 होता है॥७८॥ अन्नदान, महान् यज्ञ वेदान्तज्ञान ध्वषण मे प्रवृत्ति होती है। शनि मे गुरु
 ६।८।१२ मे बलरहित हो॥७९॥ तो बधुद्वेष, मन मे अशान्ति ब्राह्मणाचार हानि, पदहानि
 कुभोजन, कर्महानि राजदण्ड मे धनहानि॥८०॥ वैद, मंत्री-गुरु को पीडा होती है। यदि गुरु
 २।३ भाव वा स्वामी हो तो देहपीडा होती है॥८१॥ दसकी शान्ति के लिए शिवसहस्रनाम
 स्तोत्र का पाठ करे॥८२॥ सुवर्ण वा दान कर तो आरोग्यता प्राप्त होती है॥८३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखण्ड भावप्रकाशिकाया वि० दशाया
 शान्तर्दशा फल कथन नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥३८॥

अथ बुधदशायांबुधभुक्तिमासाः २२ दिन २७ तत्फलम्

मुक्ताविद्रुमलाभश्च ज्ञानकर्मसुखादिकम् ॥ विद्यामहत्त्व कीर्तिश्च नूतनप्रभुदर्शनम् ॥१॥ विभव वारपुत्रादिवितृमातृमुखावहम् ॥ नीचोपश्लेष्टसमुक्ते दृष्टाद्व्ययराशिगे ॥२॥ पापयुक्तेऽथवा दृष्टे धनधान्यपशुक्षयम् ॥ आत्मबधुविरोधं च शूलरोगादिसंभवम् ॥३॥ राजकार्यकलापेन व्याकुलो भवति ध्रुवम् ॥ द्वितीयचूनायां तु दारक्लेशो भविष्यति ॥४॥ आत्मसंबन्धमरण वातशूलादिसंभवम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥५॥

बुध दशा मे बुधान्तर
मास २२ दिन २७ फल

बुध की महादशा में बुध का अन्तर हो तथा शुभग्रह योग युक्त हो तो स्त्री का लाभ, ज्ञान तथा सुख प्राप्ति कर्मनिधि विद्यावृद्धि कीर्ति तथा नये स्वामी का योग होता है ॥१॥ अनेक वैभव तथा स्त्री पुत्र, माना पिता को सुख होता है। नीचराशि में पापग्रह युक्त हो। ६।८।१२ भाव में हो ॥२॥ पापदृष्ट हो तो धन-सम्पत्ति की हानि अपने बन्धुओं से विरोध, शूलरोग आदि होते हैं ॥३॥ राजकार्य समूह से व्याकुल रहता है। २।७ का स्वामी हो तो स्त्री को दुःख होता है ॥४॥ अपने सम्बन्धी का मरण होता है। वातव्याधि होती है। इसकी शान्ति के लिए विष्णुसहस्रनाम का पाठ होना चाहिए ॥५॥

केतुभुक्तिमासाः ११ दिनानि २७ तत्फलम्

बुधस्यातर्गते केतौ लग्नात्केद्रविकोणगे ॥ शुभयुक्ते शुभेर्दृष्टे लग्नाद्यपसमन्विते ॥६॥ योगकारकसंबन्धे दायेशात्केद्रलाभगे ॥ देहसौख्य धनात्मव्य बधुग्रेहसहायकृत् ॥७॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्यात्ससारे देहतापनम् ॥ विद्याकीर्तिप्रसंगश्च समानप्रभुदर्शनम् ॥८॥ भोजनावरसौख्यं च ह्यादौ मध्ये मुखावहम् ॥ दायेशाद्रिपुरधस्ये अष्टमे पापसमुक्ते ॥९॥ बाहनात्पतनं चैव पुत्रक्लेशसमाकुलम् ॥ चौरादिराजभीतिश्च पापकर्मरतं सदा ॥१०॥ वृश्चिकादिविषाद्भीतिर्नीचैः कलहं सयुतं ॥ शोकरोगादिदुःखं च ससारादिचलं भवेत् ॥११॥ द्वितीयचूनायां तु देहमाज्जं भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहाराय छागदानं तु कारयेत् ॥१२॥

केतु अन्तर मास ११ दिन २७ फल

बुध दशा में केतु का अन्तर हो, केतु लग्न से केन्द्र त्रिकोण भाव में शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो और संश्लेष में युक्त हो ॥६॥ योगवारक यह में सम्बन्ध हो तथा बुध से भी केन्द्र या लाभ में हो तो देहसौख्य, सामान्य धन, बन्धु का स्नेह तथा साहाय्य ॥७॥ चौपाया पशु का लाभ तथा ससार से विरक्ति, विद्या की प्रसिद्धि, कीर्ति समान आयुवाले प्रभु का दर्शन ॥८॥ उत्तम भोजन आदि प्रथम और मध्य अवधि में प्राप्त होता है। बुध में केतु ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो ॥९॥ सवारों में गिरना तथा पुत्र को क्लेश चोर तथा राजभय, पाप बुद्धि ॥१०॥ सर्प, बिच्छू आदि से भय, नीचों में कलह, शोक रोग आदि दुःख तथा जनसमाज में क्लेश होता है ॥११॥ केतु यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो देह जाद्व्य रोग होता है। इसकी शान्ति के लिए छागदान करना चाहिए ॥१२॥

पूर्वसप्तमे एकोनवत्वारिंशोऽध्यायः

अथ शुक्रभुक्तिमासाः ३४ दिनानि ० तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते शुके केंद्रे सामत्रिकोणते ॥ सत्कयापुण्यधर्मादिसंग्रहः पुण्यकर्मकृत् ॥१३॥
मित्रप्रभुवशादिष्टं क्षेत्रलाभः सुखं भवेत् ॥ दशाधिपात्केन्द्रगतेऽयवास्तत्तामगेपि वा ॥१४॥
तत्काले श्रियमाप्नोति राजप्रीधनसंपदः ॥ वापीकूपतडागादिबानधर्मादिसंग्रहः ॥१५॥
व्यवसायात्कलाधिक्यं धनधान्यसमृद्धिदम् ॥ दायेशादशुभस्याने व्यये वा बलवर्जिते ॥१६॥
हृद्रोगो मानहानिश्च ज्वरातीसारपीडनम् ॥ आत्मबधुविषयोश्च संसारो देहनिःशमम् ॥१७॥
आत्मदुःखं मनस्तापमायदायादिक तथा ॥ द्वितीयधूननाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥१८॥
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवोजपं चरेत् ॥१९॥

बुध दशा में शुक्र का अन्तर मास ३४ दिन ० फल

बुधमहादशा में शुक्र का अन्तर हो, शुक्र लग्न से केन्द्र, लाभ त्रिकोणभाव में हो तो मत्कया
यवण, धर्मकार्य आदि होते हैं ॥१३॥ मित्र या प्रभु के कारण इच्छित कार्यसिद्धि, भूमिलाभ
तथा सुख होता है। यदि शुक्र, बुध में चतुर्थ दशम या लाभ में हो तो अन्तरकाल में लक्ष्मी की
प्राप्ति, राजा के समान ऐश्वर्य, कूप, वापी (बावड़ी), तडाग (तालाब) दान, धर्म आदि पुण्य
कार्य होते हैं ॥१५॥ व्यापार से अधिक लाभ, धन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। बुध में शुक्र
अशुभम्यान या १२ में बलहीन हो तो ॥१६॥ हृदयरोग, मानहानि, ज्वर, अतिसार आदि
पीडा, आत्मबन्धु का वियोग, तथा अशान्ति रहती है ॥१७॥ आत्मक्लेश, मन में कष्ट,
आमदनी तथा परिवार की स्थिति भी असन्तोष पूर्ण रहती है। शुक्र यदि २७ का स्वामी हो
तो अपमृत्यु होती है ॥१८॥ इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा देवी' का जप करना
चाहिए ॥१९॥

अथ रविभुक्तिमासाः १० दिनानि ६ तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते सूर्ये स्वोच्च स्वक्षेत्रकेन्द्रो ॥ त्रिकोणे धनलाभे तु तुंगति स्वांशगेपि वा ॥२०॥
राजप्रसादसौभाग्यं मित्रप्रभुवशात्सुखम् ॥ भूम्यात्मजेन सदृष्टे आदौ भूलाभमेव च ॥२१॥
लघाधिपेन संदृष्टे बहुसौख्यं धनागमम् ॥ ग्रामभूम्याविलाभं च भोजनाबरसौख्यकृत् ॥२२॥
पक्षाष्टमव्यये वापि शन्यारफणिसंयुते ॥२३॥ चौराग्रिशस्त्रपीडा च पिताधिक्यं भविष्यति ॥
शिरोरुध्मनस्तत्ताप दृष्टबन्धुविषयकृत् ॥२४॥ द्वितीयसप्तमाधीरो ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥
तद्दोषपरिहारार्थं शान्तिं कुर्याद्ययाविधि ॥ सूर्यप्रीतिकर्तुं चैव दशादेनु हिरण्यकम् ॥२५॥

सूर्य का अन्तर मास १० दिन ६ फल

बुध की दशा में सूर्य का अन्तर हो। सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, धनभाव, लाभम्यान में
स्वगृही, उच्चराशि में, स्वनवाश में या उच्चांग में हो तो ॥२०॥ राजा के समान महल में
रहने या बनाने का सौभाग्य हो। मित्र या प्रभु के सहयोग से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है।
मंगल की दृष्टि हो तो प्रथम भूमि का लाभ होता है ॥२१॥ लग्ने भी देसना हो तो बहुसौख्य,
धनलाभ। ग्रामभूमिलाभ तथा उत्तम भोजन, वस्त्र, भूयस लाभ होता है ॥२२॥ यदि सूर्य लग्न से
६।८।१० स्थान में शनि, मंगल, राहु युक्त हो तो चोर, अप्रि, शत्रु में पीडा होती है।

पित्ताधिनय, शिरोवेदना, सताप,^१ प्रियवन्धु का वियोग होता है॥२४॥ यदि सूर्य २१७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए सुवर्ण तथा गौ का दान और सूर्य की शान्ति करनी चाहिए॥२५॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १७ दिनानि ० तत्फलम्

सौम्यस्यातर्गते चन्द्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणयो ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षणे वापि गुरुदृष्टिसमन्विते ॥२६॥ योगस्थानाधिपत्येन योगप्राबल्यमादिशेत् ॥ स्त्रीलाभ पुत्रलाभ च वस्त्रवाहनसूयणम् ॥२७॥ नूतनालयसाम च नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ गीतवाद्यप्रसंग च शास्त्रविद्यापरिश्रमम् ॥२८॥ दक्षिणा दिशमाश्रित्य प्रयाण च भविष्यति ॥ द्वीपातरादिवस्त्राणा लाभश्चैव भविष्यति ॥२९॥ मुक्ताविद्रुमरत्नानि धौतवस्त्रादिलाभगम् ॥ नीचारिक्षेत्रसंयुक्ते देहबाधा भविष्यति ॥३०॥ दायेशात्केन्द्रकोणस्थे दुश्चिन्त्ये लाभोऽपि वा ॥ तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थस्थानदेवतदर्शनम् ॥३१॥ मनोधैर्यं हृदुत्साहं विदेशघनलाभकृत् ॥ दायेशात्पण्डरग्रे वा ध्ये वा पापसंयुते ॥३२॥ चौराग्निनृपभीतिश्च स्त्रीसंगे गमन भवेत् ॥ दुष्कृतिर्धनहानिश्च कृषिगोश्वदिनासकृत् ॥३३॥ द्वितीयपक्षूननायेतु देहबाधाभविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गविदो जप चरेत् ॥३४॥ वस्त्रदान प्रकुर्वीत आयुर्वृद्धिमुखावहम् ॥३५॥

चन्द्रमा का अन्तर मास १७ दिन ० फल

बुध की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में, स्वगृही, उच्च राशि में, गुरुयुक्त या दृष्ट हो॥२६॥ चन्द्रमा यदि कारकेण हो तो बलवान् शुभयोग होता है। इसमें स्त्री पुत्र का लाभ, सबारी वस्त्रसूयण प्राप्त होते हैं॥२७॥ नया मकान बनाना उत्तम भोजन, गानवाद्य का प्रसंग शास्त्रीय विद्या में परिथम होता है॥२८॥ दक्षिण दिशा की यात्रा तथा द्वीपान्तर से व्यापार और उसमें लाभ होता है। मोती, मूषा आदि रत्न से तथा कपड़े के व्यवसाय से लाभ होता है॥२९॥ यदि चन्द्रमा नीचराशि या शत्रुराशि में हो तो शरीर में अरिष्ट होता है॥३०॥ यदि चन्द्रमा बुध से केन्द्र, त्रिकोण, तृतीय, लाभ स्थान में हो तो उसके अन्तर में पवित्र तीर्थ तथा देवदर्शन होते हैं॥३१॥ मन में धैर्य हृदय में उत्साह एवं विदेश में धन की प्राप्ति होती है। बुध से चन्द्रमा ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो तो चोर, अग्नि, राज से भय, स्त्रीसंग में प्रवृत्ति, दुश्चरित्रता, धन हानि, खेती, गौ आदि पशु का नाश होता है॥३३॥ चन्द्रमा २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गामन्त्र जप करना चाहिए॥३४॥ श्वेत वस्त्र का दान करने से आयु वृद्धि और सुख होता है॥३५॥

अथ कुजभुक्तिमासाः ११ दिनानि २७ तत्फलम्

सौम्यस्यातर्गते भीमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणयो ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षणे भीमे लग्नाधिपसमन्विते ॥३६॥ राजानुग्रहाति च गृहे कल्याणसमयम् ॥ लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ॥३७॥ पुत्रोत्सवादिस्तोष गृह गोघनसकुलम् ॥ गृहक्षेत्रादिलाभवज्रवाजिसमन्वितम् ॥३८॥

राजप्रीतिकरं चैव स्त्रीसौख्यं चातिशोभनम् ॥ नीचक्षेत्रसमायुक्ते ह्यष्टमे वा ध्येयपि वा ॥३९॥
पापदृष्टियुते वापि देहपीडा मनोव्यथा ॥ उद्योगभगो देहादौ स्वप्नमे धान्यनाशनम् ॥४०॥
अग्निशस्त्रघपादीनां भयं तापज्वरादिकम् ॥ दायेपात्केद्वग्रे भौमे त्रिकोणे लाभग्रेपि वा ॥४१॥
शुभदृष्टेश्च संप्राप्तिर्देहसौख्यं धनागमम् ॥ पुत्रलाभं यशोवृद्धिं भ्रातृवर्गो महाप्रिय ॥४२॥
दायेशाग्निपुरधस्थे व्यये वा पापसयुते ॥ तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशं भ्रातृवर्गे महद्भयम् ॥४३॥
नृपाग्निचौरभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम् ॥ स्थानभ्रंशो महद्वैर्यं मध्ये सौख्यं धनागमम् ॥४४॥ अन्ते तु
राजभीतिः स्वात्स्थानभ्रंशो ह्यथापि वा ॥ द्वितीयघ्नननाये च ह्यपमृत्युभयं भवेत् ॥४५॥
अनङ्गवाहं प्रकुर्वीत मृत्युजयजपं चरेत् ॥४६॥

मंगल का अन्तर मास ११ दिन २७ फल

बुध की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र त्रिकोण में स्वगृही या उच्चराशि वा हो और लग्नेश से युक्त हो ॥३६॥ तो राजा का अनुग्रह, घर में सुख शान्ति लक्ष्मी की स्थिरता, नष्ट सम्पत्ति की प्राप्ति होती है ॥३७॥ पुत्रोत्पन्न, घर, गौ आदि की स्थिति, मकान, भूमि का लाभ होता है। हाथी-घोड़े आदि सवारी तथा राजमैत्री, स्त्री से सुख होता है ॥३८॥ यदि मंगल नीच राशि में स्थित ८।१२ स्थानों में हो तो ॥३९॥ तथा पाप दृष्टियुक्त हो तो देह पीडा, मनोव्यथा, उद्योग भग, अपने देश में धनहानि होती है ॥४०॥ शस्त्र से घाव, ग्रन्थी आदि रोग, भय, ज्वर आदि होते हैं। बुध से मंगल केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में ॥४१॥ शुभ दृष्टि युक्त हो तो धन लाभ देह सौख्य पुत्र लाभ यश वृद्धि तथा भ्राताओं से प्रेम होता है ॥४२॥ बुध से मंगल ६।८।१२ भाव में पापग्रहयुक्त हो तो अन्तर के आदि में महान् क्लेश, परिवार में महान् भय होता है ॥४३॥ राज, अग्नि, चोर का भय, पुत्र और मित्र से विरोध, स्थान हानि तथा धैर्य होता है। अन्तर के मध्य भाग में धनप्राप्ति होती है ॥४४॥ अन्त में राजभय, स्थानहानि होती है। मंगल २।७ वा स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। शान्ति के लिए मृत्युञ्जय जप तथा दान का दान करे ॥४५-४६॥

अथ राहुभुक्तिमासाः ३० दिना १८ तत्फलम्

बुधस्यातर्गते राहौ केद्वलाभत्रिकोणगे ॥ कुलीरकुम्भगे वापि कन्याया वृषभेपि वा ॥४७॥
राजसम्मानकीर्तिं च समये राजपिप्सां च ॥ बुधपतिर्पितृस्वामिनाम् देवतापरां तथा ॥४८॥
दृष्टापूर्ते च महतो मानभ्रातृभक्त्या भूतम् ॥ भुक्त्यादौ देहपीडा च अते सौख्यं विनिर्दिशेत ॥४९॥
पठ्याष्टव्ययराशस्थे तद्भुक्ती धननाशनम् ॥ भुक्त्यादौ देहनाशं च वातज्वरमजीर्ण-
कृत् ॥५०॥ सप्राद्युपघये राहौ शुभग्रहसमन्विते ॥ राजसत्तापसतोयं नूतनप्रभुदर्शनम् ॥५१॥
दायेशात्पृष्ठति के वा ह्यष्टमे पापसयुते ॥ निन्दुर राजन्याग्निं स्थानभ्रंशो महद्भयम् ॥५२॥
बधन रोगपीडा च आत्मबधुमनोव्यथा ॥ हृदोगो मानहानिश्च धनहानिर्भविष्यति ॥५३॥
द्वितीयपक्षमास्ये वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गात्मजीजपं चरेत् ॥५४॥
भेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यदायिनीम् ॥५५॥

राहु का अन्तर मास ३० दिन १८ फल

बुध की महादशा में राहु का अन्तर हो, राहु लग्न में केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो, बुध,

कर्क, कन्या तथा कुम्भ राशि में हो॥४७॥ तो राज सम्मान, कीर्ति तथा राजा के समान ऐश्वर्य, तीर्थयात्रा, देवता दर्शन, स्थान लाभ॥४८॥ चान्द्रायण आदि व्रत, यज्ञ, दान आदि शुभ कर्म होते हैं। समाज में प्रतिष्ठा, वस्त्र से लाभ, अन्तर के आदि में देह पीड़ा, अन्त में मूल होता है॥४९॥ राहु ६।८।१२ भाव में हो तो उसके अन्तर में धननाश, वातज्वर, अजीर्ण रोग होता है॥५०॥ लग्न आदि केन्द्र स्थान में शुभग्रह युक्त राहु हो तो राजा से मेलजोल, सन्तोष, किसी बड़े आदमी से मिलाप हो॥५१॥ बुध से राहु ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो राजकार्य में त्रुटि, अतएव राजा का निष्ठुर व्यवहार, स्थानभ्रम, महान् भय हो॥५२॥ वधन, रोग और पीड़ा, परिवार में चिन्ता, हृदय में रोग, मानहानि, धनहानि हो॥५३॥ राहु २।७ स्थान में हो तो अपमृत्यु होती है। इसका उपाय दुर्गालक्ष्मी मंत्र का जप है॥५४॥ सफेद गौ का दान करने से आयु वृद्धि तथा आरोग्यता होती है॥५५॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः २७ दिना० ६ तत्फलम्

बुधस्थान्तर्गते जीवे लग्नात्केद्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्धगे वापि लाभे वा धनराशिगे ॥५६॥ देहसौख्यं धनप्राप्तिं राजप्रीतिं तथैव च ॥ विवाहोत्सवकार्याणि नित्यमिष्टान्नभोजनम् ॥५७॥ गोमहिष्याविलाभं च पुराणश्रवणादिकम् ॥ देवतागुरुभक्तिं च दानधर्ममत्सादिकम् ॥५८॥ यज्ञकर्मप्रवृद्धिं च शिवपूजाफलं तथा ॥ नीचे वास्तगते वापि रिःकाष्टव्ययगोऽपि वा ॥५९॥ शन्यारपतिसमुक्ते कलहो राजविग्रहम् ॥ चौरादिदेहपीडा च पितृमातृविनाशनम् ॥६०॥

गुरु का अन्तर मा० २७ दि० ६ फल

बुध की महादशा में गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो, उच्च अथवा स्वगृही हो, लाभ या धनराशि में हो॥५६॥ तो देह सौख्य, धन प्राप्ति, राजप्रीति, विवाहादि उत्सव, उत्तम भोजना॥५७॥ गौ आदि का लाभ, पुराण श्रवण, देवता-गुरु की भक्ति, दान, धर्म, यज्ञ आदि होते हैं॥५८॥ उपासना तथा पूजा का फल प्राप्त होता है। गुरु यदि ६।८।१२ स्थान में नीच राशि अथवा अस्तागत हो॥५९॥ शनि, मंगल युक्त हो अथवा शनि, मंगल की राशि के स्वामी से युक्त हो तो कलह, राज विग्रह, चोरी, रोग, देह पीड़ा, माता-पिता की मृत्यु॥६०॥

मानहानी राजदण्डे धनहानिर्भविष्यति ॥ विषाहिज्वरपीडा च कृषिभो भूमिनाशनम् ॥६१॥ दायेरात्केद्रकोणे वा लाभे वा बलसमुत्ते ॥ बहुपुत्रहृदुत्साह शुभ शोभनसमुत्तम् ॥६२॥ पशुवृद्धिपशोलाभमन्नदानादिक फलम् ॥ दायेरात्पच्छरद्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥६३॥ अंगतापश्च वैकल्य देहबाधा भविष्यति ॥ कलत्रचपुर्वपम्प राजकोपो धनलयः ॥६४॥ अकस्मात्कलहाद्भोति प्रमोहो राजविग्रहम् ॥ द्वितीयसप्तमस्थे वा देहबाधा भविष्यति ॥६५॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रक जपेत् ॥ गोभूतिरूप्यदानेन सर्वादिष्टं व्यपोहति ॥६६॥

मानहानि, राजदण्ड, धनहानि, विष, सर्प, ज्वर, पीडा, कृषि हानि, भूमि नाश होता है॥६१॥ बुध से गुरु केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में बलवान् हो तो पुत्र, प्राप्ता के उत्साह की

वृद्धि, शुभ कार्य होता है॥६२॥ पशु वृद्धि, यज्ञ विस्तार, अन्नदान आदि शुभ कर्म होते हैं। बुध से गुरु ६।८।१२ भाव में बलहीन हो तो॥६३॥ ज्वर, विवर्तता, देह बाधा, परिवार में विषमता, राजकीय, भय, मोह, राज विग्रह होता है। २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है॥६५॥ इसकी शान्ति के लिये शिव सहस्र जप, गौ भूमि सुवर्ण का दान करने से सब अरिष्ट की शान्ति होती है॥६६॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३२ दि० ९ तत्फलम्

सौम्यस्यातर्जते भन्दे स्वोच्चैः स्वक्षेत्रकेन्द्रो ॥ त्रिकोणताभो वापि गृहे कल्याणवर्द्धनम् ॥६७॥ राज्यलाभ महोत्साह गृह गोधनसकुलम् ॥६८॥ शत्रुस्थानफलावाप्ति भुक्त्या तीर्थविनाशनम् ॥ पष्ठाष्टमध्यमे मदे दापेष्टाद्वा तथैव च ॥६९॥ अरातिदुःखबाहुत्य दारपुत्रादिपीडनम् ॥ बुद्धिभ्रश बधुनाश कर्मनाश मनोरुजम् ॥७०॥ विदेशगमन चैव स्वप्न दूराभिसपदम् ॥ द्वितीयघ्नननाथे तु ह्यपमृत्युर्मविष्यति ॥७१॥ तद्गोपपरिहारार्थं मृत्युञ्जयजप चरेत् ॥ कृष्णा गा महिषी दद्यादापुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥७२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विंशोत्तरीबुधान्तर्दशाफलकयन नामोत्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९॥

शनि का अन्तर मा० ३२ दि० ९ फल

बुध की महादशा में शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान में, स्वगृही या उच्च राशि का हो॥६७॥ तो राज्य लाभ महान् उत्साह होता है। घर में गौ आदि पशु रहते हैं॥६८॥ शत्रु की सम्पत्ति प्राप्त होती है। तीर्थ यात्रा होती है। यदि बुध से शनि ६।८।१२ स्थान में अथवा लग्न से हो तो शत्रु द्वारा अति दुःख प्राप्त हो॥६९॥ स्त्री-शुत्र को पीडा हो। ज्ञान हानि, बन्धुनाश, कर्मनाश, अशान्ति॥७०॥ विदेश यात्रा घर से दूर रहना होता है। शनि यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥७१॥ इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप तथा बाली गौ दान करे तो आरोग्यता और वृद्धि होती है॥७२॥

इति श्री बृ० सा० हो० सा० पू० भा० पू० त्रिशोत्तरी बुधान्तर दशाफलकयन नाम उत्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९॥

अथ केतुभुक्तिदशायामन्तर्दशामासाः ४ दि० ६ तत्फलम्

केन्द्रे त्रिकोणताभे वा लग्नाधिपसमन्विते ॥ भाग्यकर्मसुखवर्धे दाहनेशसमन्विते ॥१॥ तद्भुक्ती धनधान्यादि चतुष्पाद्भोवताभृत् ॥ पुत्रदारादिसौख्यं च राजप्रीतिमनोरथम् ॥ धामभूम्यादिलाभश्च गृह गोधनसकुलम् ॥ शीघ्रास्तथेदसपुक्ते ह्यष्टमेऽप्यप्येव वा ॥३॥ दृष्टोग भानहानि च धनधान्यपशुशपम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च मनभ्रातृत्वमेव च ॥४॥ द्वितीयघ्नननाथेन सवधे तत्रसन्विते ॥ अनारोग्य महत्पष्टमात्मबधुविपोगहृत् ॥५॥ दुपदिबोजप कुर्यान्मृत्युजपजप चरेत् ॥६॥

केतु महादशा में केतु की अन्तर्दशा मास ४ दिन ६ फल

केतु यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभस्थान में लग्नेश युक्त तथा ९।१० भावों से सम्बन्ध रखता हो तथा चतुर्यंशयुक्त हो॥१॥ तो इसके अन्तर में धन सम्पत्ति तथा गौ आदि प्राप्त होती है। स्त्री पुत्र का सुख तथा राजा से प्रीति, इच्छापूर्ति॥२॥ ग्राम, भूमि का लाभ तथा घर में गोधन होता है। यदि केतु नीच राशि में, अस्तका स्वयं हो या ऐसे ग्रह से युक्त हो अथवा ८।१२ भाव में हो॥३॥ तो हृदयरोग, मान हानि, तथा धन सम्पत्ति का नाश, स्त्री पुत्र को पीडा, मन की चञ्चलता होती है॥४॥ यदि केतु २।७ के स्वामी से सम्बन्ध करता हो या २।७ में स्थित हो तो रोग, कष्ट, तथा बन्धुवियोग करता है॥५॥ उपाय—दुर्गादेवीमंत्र जप या 'मृत्युञ्जय मन्त्र' जप॥६॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः १४ दिनानि० तत्फलम्

केतोरतगतिं शुके स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुते ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा राज्यप्राप्तेन सयुते ॥७॥ राजप्रीतिं च सौभाग्यं राजत्वावरसकुलम् ॥ तत्काले धियमाप्नोति भाग्यकर्मशतयुते ॥८॥ नष्टराज्यघनप्राप्तिं सुखवाहनमुत्तमम् ॥ सेतुबानादिकं चैव देवतादर्शनं महत् ॥९॥ महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभोपि वा ॥१०॥ बेहारोग्यं शुभं चैव गृहे कल्याणशोभनम् ॥ भोजनाद्वरद्व्याप्तिसम्पदोलादिलाभकृत् ॥११॥ दायेशाद्रिपुरं धस्ये व्यये वा पापसयुते ॥ अकस्मात्कलहं चैव पशुधान्यादिपीडनम् ॥१२॥ नीचस्थे श्वेतसयुक्ते लग्नात्पञ्चाष्टराशिगे ॥ स्वबन्धुजनवैषम्यं शिरोसिखणपीडनम् ॥१३॥ हृद्रोगं मानहानिं च धनधान्यपशुक्षयम् ॥ कलत्रपुत्रपीडायास्तचारं देहविह्वलम् ॥१४॥ द्वितीयदूतनामे तु देहजाड्यमनोरुजम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ॥ श्वेता गा महिषीं दद्यादापुरारोग्यदायिनीम् ॥१५॥

शुक्र का अन्तर मास १४ दि ० फल

केतु महादशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र केन्द्र, त्रिकोण लाभ में दशमेश युक्त हो॥७॥ तो राजप्रीति, ऐश्वर्य राजसी पोशाक लक्ष्मी प्राप्त होती है॥८॥ यदि ९।१० के स्वामी से युक्त हो तो नष्ट ऐश्वर्य की प्राप्ति, उत्तम वाहन सुख, रामेश्वरयात्रा देवदर्शन प्राप्त होता है॥९॥ राजा की कृपा से ग्राम भूमि का लाभ होता है। केतु यदि केन्द्र त्रिकोण, लाभ तथा तृतीयभाव में हो॥१०॥ तो देहारोग्य, शुभ तथा घर में सुखशान्ति, उत्तम भोग्य पदार्थ तथा घोडा गाडी आदि का लाभ करता है॥११॥ केतु यदि ६।८।१२ भाव में पापयुक्त हो तो अकस्मात् कलह तथा अन्न, पशु की हानि होती है॥१२॥ यदि केतु लग्न से ६।८ भाव में नीचग्रह से युक्त हो तो परिवार में वैमनस्य, सिर आँख में व्रण से पीडा॥१३॥ हृदयरोग, मानहानि, धन ऐश्वर्य पशु का क्षय, स्त्री-पुत्र को पीडा, देह विह्वल रहे॥१४॥ यदि केतु २।७ का स्वामी हो तो देहजाड्य तथा मन में अशान्ति होती है। इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा' मन्त्र का जप करना चाहिए तथा श्वेत गौ का दान करना चाहिए॥१५॥ (यहां केतु की दशा में ही केतु का अन्तर है। अतः 'दायेशाद्' पद व्यर्थ है।)

अथ रविभुक्तिमासाः ४ दिना० ६ तत्फलम्

केतोरतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रेण वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा शुभयोगनिरीक्षिते ॥१६॥
 धनधान्यादिलाभश्च राजानुग्रहवैभवम् ॥ अनेकशुभकार्याणि चेष्टसिद्धिं मुखावहा ॥१७॥
 पष्ठाष्टव्ययराशिस्थे पापग्रहसमन्विते ॥ तद्भुक्तौ राजभीतिश्च पितृमातृवियोगकृत् ॥१८॥
 विदेशगमनं चैव चौराहिबिषपीडनम् ॥ राजमित्रविरोधश्च राजदण्डाद्वनक्षयः ॥१९॥
 शोकरोगमथ चैव उष्णाधिक्यं ज्वरो भवेत् ॥ यातु कार्यासिद्धिं स्यात्स्वल्पपामाधिपत्यं ॥२०॥
 देहसीत्य चार्थलाभं पुत्रलाभं मनोदृढम् ॥ यातु कार्यासिद्धिं स्यात्स्वल्पपामाधिपत्यं ॥२१॥
 दापेशादष्टरिफे वा पठे वा पापसप्तपुते ॥ अप्रविशो मनोभीतिर्धनघातपशुस्य ॥२२॥
 आदी मध्ये महाक्लेशानन्ते सौख्यं विनिदिशेत् ॥ द्वितीयसप्तमाधौ शेषे
 ह्यपमृत्युर्मविष्यति ॥२३॥ दर्शशांतिं प्रकुर्वीत स्वर्णधेनुं प्रदापयेत् ॥२४॥

सूर्य का अन्तर मा० ४ दि० ६ फल

केतु महादशा मे सूर्य का अन्तर हो। सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में स्वगृही, उच्चराशि का हो शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो ॥१६॥ तो धन सम्पत्ति का लाभ, राज कृपा प्राप्त वैभव, अनेक शुभ कार्य तथा सुखकर इष्टसिद्धि हो ॥१७॥ यदि सूर्य पापग्रह युक्त होकर ६।८।१२ भाव में हो तो अन्तर में राजभय, माता पिता से वियोग ॥१८॥ विदेश यात्रा, चोर, सर्प, विष से पीडा तथा राजमित्र से विरोध और राजदण्ड से घनहानि होती है ॥१९॥ शोक, रोग का भय तथा ज्वर की तीव्रता होती है। केतु से सूर्य केन्द्र त्रिकोण या २।११ भाव में हो ॥२०॥ तो देहसीत्य, धनलाभ, पुत्रलाभ मन की दृढता तथा यात्रा का साफल्य एवं शम का साधारण अधिकार प्राप्त होता है ॥२१॥ यदि सूर्य केतु से ६।८।१२ भाव में पापयुक्त हो तो भोजन में भी त्रुटि, धन, सम्पत्ति, पशु की हानि होती है ॥२२॥ प्रथम और मध्य में महान् दुःख और अन्त में सुख हो। २।७ का स्वामी यदि सूर्य हो तो अपमृत्यु होती है ॥२३॥ उपाय-“दर्श यज्ञ” तथा “सुवर्ण धेनु” का दान करना चाहिए ॥२४॥

अथ चन्द्रभुक्तिमासाः ७ दिना० ० तत्फलम्

केतोरतर्गते चन्द्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रराशिगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा धने शुभसमन्विते ॥२५॥
 राजभीतिर्महोत्साहः कल्याणचमहत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन गृहभूम्यादिलाभकृत् ॥२६॥
 भोजनावरणभ्रादिव्ययसापेक्षधिकं फलम् ॥ अश्वबाहनलाभश्च धनभ्रातरणभूषणम् ॥२७॥
 देवान्यतडागादिपुण्यधर्मादिसंग्रहम् ॥ पुत्रदारादिसौख्यं च पूर्णचन्द्रस्तर्धेव च ॥२८॥ नीते वा क्षीणगे चन्द्रे पष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥ आत्मदौस्थ्यं मनस्तापं कार्यविघ्नं महदूषणम् ॥२९॥
 पितृमातृवियोगं च देहनाशं मनोव्यथाम् ॥ व्यसायात्पक्ष नष्टगोमहिष्यादिनाशकृत् ॥३०॥
 दापेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा दत्तसप्तपुते ॥ कृषिगोभूमिलाभं च इष्टधनसमागमम् ॥३१॥
 ताम सात्कार्यसिद्धिं च गृहे गोक्षीरमेव च ॥ भ्रूहृत्य शुभमारोग्यं मध्ये राजप्रियं शुभम् ॥३२॥
 अते तु राजभीतिं च विदेशगमनं तथा ॥ दूरयात्राविमचारं सर्वाघजनपूजनम् ॥३३॥
 दापेशात्पठरिफे वा रग्ने वा बलवर्जिते ॥ घनधान्यादिहानिश्च मनोव्याकुलमेष च ॥३४॥
 स्वधनुजनदातृत्वं भ्रातृपीडा तपेव च ॥ निघनाधिपदोषेण द्विमत्तमाधिपे मुने ॥३५॥
 अपमृत्युमथ तप्यं भाति कुर्यात्कार्याविधिं ॥ चन्द्रानिन्धत् चैव ह्यापुनरायोगमवम् ॥३६॥

केतु दशा में चन्द्रान्तर मास ७ दि० फल

केतु की महादशा में चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धनस्पायन में स्वोच्च या स्वगृही और शुभ ग्रहयुक्त हो॥२५॥ तो राजप्रीति, महान् उत्साह, कल्याण, महान् सुख एवं राजकृपा से गृह भूमिका लाभ होता है॥२६॥ उत्तम भोजन, सुन्दर वस्त्र, गौ आदि पशु, व्यापार से अधिक लाभ, घोड़े की सवारी, श्रेष्ठ आभूषण,॥२७॥ देवमन्दिर, तालाब, पुण्य, धर्म आदि का राग्रह, स्त्री-पुत्र का सुख यह सुलभ होते हैं, यदि चन्द्रमा पूर्ण हो तो॥२८॥ चन्द्रमा नीच तथा क्षीण और ६।८।१२ राशि में हो तो कि कर्तव्यविमूढता, मन में असन्तोष, कार्य में विघ्न, महान् भय,॥२९॥ पिता-माता का वियोग, देह की जड़ता, मन में व्यथा, व्यापार में हानि, गौ आदि पशुनाश होता है॥३०॥ केतु से चन्द्रमा केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में बलवान् हो तो कृषि गौ, भूमि का लाभ, प्रेमी बन्धु का दर्शन॥३१॥ कार्यसिद्धि, गोरस भोज्य, भूमि से सुन्दर खेती आरोग्यता, तथा अन्तर के मध्यकाल में राजानुग्रह प्राप्त होता है॥३२॥ अन्तर के अन्त में राजा से भय विदेशयात्रा, तथा दूर की यात्रा, सबन्धियों में आदर॥३३॥ होता है। केतु से चन्द्रमा बलहीन तथा ६।८।१२ भाव में हो तो धन सम्पत्ति की हानि मन में व्याकुलता॥३४॥ स्वीयबन्धुओं से साहाय्य आताओ से पीड़ा होती है। चन्द्रमा अष्टमाधिपति हो और २।७ भावाधीन से युक्त हो तो॥३५॥ अकालमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति करना चाहिए। चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए दानादि करे तो आयु और आरोग्यता होती है॥३६॥

अथ कुजभुक्तिमासः ४ दिना० २७ तत्फलम्

केतोरतर्मते भीमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे भीमे शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥३७॥ आदौ शुभफलं चैव ग्राम्यभूम्यादिलाभकृत् ॥ धनधान्यादिलाभश्च चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥३८॥ गृहारामक्षेत्रलाभ राजानुग्रहवैभवम् ॥ माण्य कर्मशसवधे भूलाभ सौख्यमेव च ॥३९॥ दायेशात्केद्रकोणे वा दुश्शिक्ष्ये लाभगेपि वा ॥ राजप्रीतियशोलाभ पुत्रमित्रादिसौख्यवृत् ॥४०॥ षष्ठाष्टमव्यये भीमे दायेशाद्धनगेपि वा ॥ द्रुत करोति भरण विदेश चापद भ्रमम् ॥४१॥ प्रमेहमूत्रकुष्ठद्विचौरादिनृपपीडनम् ॥ कलहादौ व्यथापुक्त र्वित्सुखवियर्दनम् ॥४२॥ द्वितीयछूननाथे तु तापज्वरविषाद्भयम् ॥ दारपीडा मनःक्लेशमपमृत्युभयभवेत् ॥४३॥ अनद्याह् प्रदद्यात् सर्वसपत्सुलाबहम् ॥४४॥

मंगल का अन्तर मास ४ दि० २७ फल

केतु की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न में केन्द्र, त्रिकोण, अग्ने उच्च में या स्वगृही हो शुभग्रहदृष्टि युक्त या दृष्ट हो॥३७॥ तो अन्तर में पूर्वार्द्ध में शुभफल होता है। ग्रामभूमि का लाभ होता है, धन सम्पत्ति तथा गौ आदि प्राप्त होते हैं॥३८॥ मकान, बागीचा, खेत की भूमि आदि सब राजकृपा में प्राप्त होती है। ९।१० में मन्वन्ध हो गौ पृथ्वी का लाभ और सुग होता है॥३९॥ केतु में मंगल केन्द्र, त्रिकोण, तृतीय तथा लाभभाव में हो तो राजप्रीति, यशोविस्तार, पुत्र मित्र आदि का सुख होता है॥४०॥ मंगल ६।८।१२ भाव में तो विदेश में भ्रमण, आपत्ति तथा मृत्यु वाग्व होता है॥४१॥ प्रमेह, मूत्रवृच्छ की बीमारी,

चोर तथा राजा से पीडा कलह, दुःख तथा कभी कुछ सुख होता है॥४२॥ २।७ का स्वामी हो तो ज्वर और विष से भय हो, स्त्री को पीडा, मन में क्लेश तथा अपमृत्यु का भय होता है॥४३॥ बैल का दान करने से सब सुख होता है॥४४॥

अथ राहुभुक्तिमासाः १२ दिना . १८ तत्फलम्

केतोरतर्गते राहौ स्वोच्चे मित्रस्वराशिगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये धनसङ्गके ॥४५॥ तत्काले धनलाभ स्यात्ससारो भवति ध्रुवम् ॥ म्लेच्छप्रभुवशात्सौख्यं धनधान्यफलादिकम् ॥४६॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्याद्वायामभूम्यादिलाभकृत् ॥ भुक्त्यादौ क्लेशमाप्नोति मध्याते सौख्यमाप्नुयात् ॥४७॥ रध्रे वा व्यपगे राहौ पापसङ्घट्टिसमुते ॥ बहुपुत्रं कृशं देहं शीतज्वरविषाद्भयम् ॥४८॥ चातुर्थिकज्वरं चैव क्षुद्रोपद्रवपीडनम् ॥ अकस्मात्कलहं चैव प्रमेहं शूलमेव च ॥४९॥ द्वितीयसप्तमस्थे वा तदा क्लेशमहद्भयम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ॥ अपुतहोमं कर्तव्यं सर्वसौख्यप्रदायकं ॥५०॥

केतु की दशा में राहु का अन्तर भा० १२ दि० १८ फल

केतु की महादशा में राहु का अन्तर हो। राहु स्वोच्च या मित्रराशि में केन्द्र त्रिकोण, लाभ, तथा २।३ भाव में हो तो॥४५॥ अन्तर में धन लाभ समार सुखमय होता है। यवन आदि अधिकारी द्वारा सुख तथा धन मपति होती है॥४६॥ चौपाया पशु का लाभ, तथा ग्राम भूमि का लाभ होता है। अन्तर के आदि में क्लेश तथा मध्य और अन्त में सुख होता है॥४७॥ ८।१० में पापग्रह से युक्त राहु हो तो बहुत मन्तान के भरण पोषण में असमर्थता, शीतज्वर, विषभय,॥४८॥ चौथीया ज्वर तथा उपद्रवों से पीडा, अकस्मात् कलह, प्रमेह तथा शूल॥४९॥ होता है। और यदि राहु २।७ की राशि में हो तो महान् भय और क्लेश होता है। उसको शान्ति के लिए 'दुर्गा' मन्त्र का जप करा और दश हजार आहुति में होम करे तो सब प्रकार का सुख होता है॥५०॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

केतोरतर्गते जीवे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि लग्नाधिपसमन्विते ॥५१॥ कर्मभागधाधिपैर्मुक्ते धनधान्यार्थसंपदम् ॥ राजप्रीतिं मनोत्साहमभ्यादौल्यादिलाभकृत् ॥५२॥ गृहे कल्याणसंपत्तिं मुत्रलाभं महोत्सवम् ॥ पुष्पतीर्थं तयोत्साहं सत्कर्म च सुखावहम् ॥५३॥ इष्टदेवप्रसादेन विजयं वार्यलाभकृत् ॥ राजसंल्लापकार्याणि नूतनप्रभुदर्शनम् ॥५४॥ पष्ठाष्टमध्यगे जीवे दायेशास्त्रीचगेपि वा ॥ चौराहिव्यभर्षीति च धनधान्यादिनाशनम् ॥५५॥ पुनर्दारविषोगं च अतीवक्लेशसंभवम् ॥ आदौ शुभफलं चैव अन्ते क्लेशकरं भवेत् ॥५६॥ दायेशात्केद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ॥ शुभमुक्ते नृपाद्भौतिर्विचित्रावरभूषणम् ॥५७॥ दूरदेशप्रयाणं च स्वयंपुजनपोषणम् ॥ भोजनावरपश्चादिभुक्त्यादौ देहपीडनम् ॥५८॥ अन्ते तु स्यान्चलनमकस्मात्कलहो भवेत् ॥ द्वितीययूननाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥५९॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥ महामृत्युजयं जाप्यं सयौपद्रवनाशनम् ॥६०॥

गुरु का अन्तर मास ११ दि० ६ फल

केतु महादशा में गुरु का अन्तर हो। गुरु केन्द्र त्रिकोण तथा लाभ में उच्च राशि का वा

स्वगृही या लग्नेश युक्त हो॥५१॥ गुरु ९।१० भाव के स्वामी में युक्त हो तो धनसम्पत्ति होती है। राजप्रीति, मन में उत्साह तथा घोडा गाडी या मोटर की सवारी होती है॥५२॥ घर में कल्याण, सम्पत्ति, पुत्रलाभ से महोत्सव तथा पवित्र तीर्थ यात्रा, उत्साह और सुख होता है॥५३॥ इष्ट देव कृपा से विजय और कार्य में लाभ होता है। राजा से मेलमिलाप, नये प्रभु का दर्शन॥५४॥ यदि गुरु ६।८।१२ में (लग्न से या केतु से) नीचस्थित हो तो चौर, सर्प, घाव से भय और धन-सम्पत्ति का नाश होता है॥५५॥ स्त्री-पुत्र से वियोग और बहुत क्लेश होता है। आदि में शुभ फल और अन्त में क्लेशकारी होता है॥५६॥ यदि केतु से गुरु केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव तथा तृतीयभाव में शुभयुक्त हो तो राजभय, सुन्दर विचित्र भूषण॥५७॥ दूरदेश की यात्रा, परिवार का भरण-पोषण, उत्तम भोजन, सुन्दर गौ आदि पशु की प्राप्ति हो। अन्तर के आदि में कुछ देहपीडा हो॥५८॥ अन्त में स्थानविच्युति हो, अचानक कलह हो। गुरु यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥५९॥ इसकी शान्ति के लिए 'शिवसहस्रनाम' का पाठ और 'महामृत्युञ्जय' का जप करे तो सब उपद्रवों का नाश होता है॥६०॥

अथ शनिभुक्तिमासाः १६ दिना० ९ तत्फलम्

केतोरत्तर्गते मदे स्वदशाया तु पीडनम् ॥ बधो क्लेशे मनस्तापश्चतुपाज्जीवलाभकृत् ॥६१॥ राजकार्यकलापेन धननाश महद्भयम् ॥ स्थानाच्च्युति प्रवासश्च मार्गे चौरभय भवेत् ॥६२॥ आलस्य मनसो हानिश्चाष्टमे व्ययराशिगे ॥ मीनत्रिकोणगे मदे तुलाया स्वर्क्षेपि वा ॥६३॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये वा शुभाशके ॥ शुभदृष्टिसमाप्तौ च सर्वकार्यसिंसाधनम् ॥६४॥ स्वप्नभोश्च महत्सौख्य भ्रमण रणलाभगम् ॥ स्वग्रामे सुखसंपत्ति स्ववर्गे राजदर्शनम् ॥६५॥ दायेशात्पण्डरि के वा अष्टमे पापसमुत्ते । देहतापो मनस्ताप कार्ये विप्रो महद्भयम् ॥६६॥ आलस्य मानहानिश्च पितृमात्रोर्बिनाशनम् ॥ द्वितीयचूननाथे तु ह्यपमृत्युभय भवेत् ॥६७॥ तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोम च कारयेत् ॥ कृष्णा गा महिषी दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥६८॥

शनि का अन्तर मास १६ तथा दिन ९ फल

केतु की दशा में शनि का अन्तर हो तो पीडा, बधन, क्लेश, सताप, पशुहानि होती है॥६१॥ राज कार्य के कारण धन हानि, महान् भय, स्थानभ्रम, परदेश में वास, यात्रा में चोरो का भय॥६२॥ आलस्य, चिन्ता हो। यदि शनि ८।१२ भाव में मीन राशि के त्रिकोणभाव में या तुलाराशि में अथवा स्वराशि में हो॥६३॥ केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव में या तीसरे भाव में शुभग्रह के नवाश में हो, शुभदृष्टि हो तो सम्पूर्ण कार्य तथा मनोरथ सिद्ध होते हैं॥६४॥ अपने स्वामी द्वारा महान् सुख भ्रमण तथा रण में लाभ होता है, अपने ग्राम में सुख सम्पत्ति प्राप्त हो और यदि शनि अपने वर्ग में हो तो राजदर्शन हो॥६५॥ केतु में यदि शनि ६।८।१२ भाव में पापग्रह युक्त हो तो देह में ज्वर, मन में अशान्ति, कार्य में विघ्न तथा महान् भय होता है॥६६॥ आलस्य, मानहानि, माता पिता का निधन होता है। और २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है॥६७॥ इसकी शान्ति के लिए 'तिल-होम' तथा काली गौ का दान करे तो आयु तथा आरोग्यता होती है॥६८॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ११ दि० २७ तत्फलम्

केतोरतर्गते सौम्ये केदलाभत्रिकोणे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुक्ते राज्यलाभो महत्सुखम् ॥६९॥
सत्कथाश्रवण दान धर्मसिद्धि सुखावहा ॥ मूलाभ पुत्रलाभश्च शुभगोष्ठीधनागम ॥७०॥
अयत्नाद्धर्मलब्धिश्च विवाहश्च भविष्यति ॥ गृहे शुभकर चैव वस्त्राभरणभूषणम् ॥७१॥
भाग्यकर्मधिर्पुङ्क्ते भाग्यवृद्धि सुखावहा ॥ विद्वद्गोष्ठीकलापेन सत्तापो भूषणादिकम् ॥७२॥
पष्ठाष्टमध्यमे सौम्ये मदाराहियुतेक्षिते ॥ विरोधराजकार्याणि परगेहनिवासनम् ॥७३॥
वाहनावरपश्चादिधनधान्यादिनाशकृत् ॥ भुक्त्यादौ शोभन प्रोक्त मध्ये सौख्य धनागमम् ॥७४॥

बुध का अन्तर मा० ११ दि० २७ फल

केतु की महादशा में बुध का अन्तर हो। बुध लग्न में केन्द्र, लाभ त्रिकोण में उच्चराशि का या स्वगृही हो तो राजा स लाभ और महान् सुख होता है ॥६९॥ इसके अन्तर में सत्कथा श्रवण, दान, धर्म, तथा सुख और भूमिलाभ पुत्र लाभ, मित्रगोष्ठी तथा धन प्राप्ति होती है ॥७०॥ प्रायः बिना परिश्रम ही धर्मलब्धि विवाह तथा घर में वस्त्राभरण, मंगल होता है ॥७१॥ ९।१० भाव का स्वामी भी युक्त हो तो भाग्य की वृद्धि हो, विद्वद्गोष्ठी का आनन्द रहे, भूषण आदि की प्राप्ति हो ॥७२॥ यदि बुध ६।८।१२ भाव में मंगल गति राहु युक्त हो तो राजकार्य में विरोध परगृह में निवास होता है ॥७३॥ वाहन वस्त्र पशु, धन, सम्पत्ति आदि का नाश होता है। अन्तरवे आदिमें शुभ तथा मध्यमे सुख और धनप्राप्ति हो ॥७४॥

अते क्लेशकर चैव दारपुत्रादिपीडनम् ॥ दायेशात्केद्रेण सौम्ये त्रिकोणे लाभोपि वा ॥७५॥
देहारोग्य महान् लाभ पुत्रकल्याणवैभवम् ॥ भोजनावरपश्चादिध्यवसायेऽधिक फलम् ॥७६॥
दायेशात्पृष्ठरध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥ तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशो दारपुत्रादिपीडनम् ॥७७॥
राजभीतिकर चैव मध्ये तीर्थंकर भवेत् ॥ द्वितीयदूननाये तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥
तदोपपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रक जपेत् ॥७८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे वि० केत्वतर्दशाफलकथन नाम
चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥

अन्तर के अन्त में दुःख, स्त्री पुत्र की पीडा हो। केतु म बुध केन्द्र म त्रिकोण में या लाभभाव में हो तो ॥७५॥ आरोग्यता, महान् लाभ पुत्र कल्याण वैभव, उत्तम भोजन, वस्त्रादि गौ आदि पशु तथा लाभकारी व्यापार होता है ॥७६॥ केतु में बुध ६।८।१२ में वषहीन हो तो उसके अन्तर के आदि में महाक्लेश, स्त्री, पुत्र की पीडा ॥७७॥ गजभय होता है, मध्य में तीर्थयात्रा होती है। २।७ का स्वामी बुध हो तो अपमृत्यु होता है। इसकी शान्ति के लिए 'विष्णुसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ करे ॥७८॥

इति श्रीधृ० पा० हो० शा० गू० भा० प्र० केत्वन्तर्दशाफलकथननाम
चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥

अथ शुक्रदशायां शुक्रभुक्ति मासाः ४० दिना० ० तत्फलम्

भृगोरतर्गते शुके लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ लाभे वा बलसयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत् ॥१॥
 विप्रमूलाद्वनप्राप्तिर्गोमहिष्यादिलाभकृत् ॥ पुत्रोत्सवादिस्तोष गृहे कल्याणसम्भवम् ॥२॥
 सम्मान राजसम्मान राज्यलाभो महत्सुखम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्धगे वापि तुगाशे स्वाशेपि वा ॥३॥
 नूतनालघनिर्माणे नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ कलत्रपुत्रविभव मित्रसमुक्तभोजनम् ॥४॥
 अन्नदान प्रिय नित्य दानधर्मादिराप्रह ॥ महाराजप्रसादेन बाह्यावरणभूषणम् ॥५॥
 व्यवसायात्फलाधिक्य चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ प्रयाण पश्चिमे भागे वाहनावरणभूषणम् ॥६॥
 लग्नाद्युपचये शुके शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥ मित्राशे तुगलाभेशयोगकारकसयुते ॥७॥
 महोत्साहो राजप्रीति शुभबह्व ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिवर्द्धनम् ॥८॥
 पष्ठाष्टमव्यये शुके पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ॥ चौरादिव्रणभीतिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ॥९॥
 राजद्वारे जनद्वेष इष्टयधुविनाशनम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥१०॥
 द्वितीयद्वूननाथे तु स्थिते चेन्मरण भवेत् ॥ शुके दुर्गाजिप कुर्याद्विनुदान च वारयेत् ॥११॥

शुक्रदशा मे शुकान्तर वर्ष ३ मा० ४ दि ० फल

शुक्र की महादशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र लग्न संचन्द्र त्रिकोण में या लाभ में बलवान् होकर स्थित हो तो प्रयत्न योग होता है॥१॥ ब्राह्मण के द्वारा धन प्राप्ति हो, गौ आदि पशु का लाभ तथा पुत्रोत्सव आदि सन्तोष हो घर में सुख शान्ति हो॥२॥ समाज में सम्मान राजा से मान तथा लाभ एवं महान् सुख होता है। यदि शुक्र अपन उच्चस्थान में स्वराशि वा, उच्चाश में अपने नवाश में हो॥३॥ तो नया मकान बन तथा नित्य उत्तम भोजन, स्त्री पुत्र का वैभव इष्टमित्रों सहित भोजन (मित्रगोष्ठी)॥४॥ अन्नदान, दान-धर्म आदि का सप्रह होता है। राजदृष्टा में वाहनादि प्राप्त होता है॥५॥ व्यापार में अधिक लाभ, चौपाया जीव का लाभ तथा पश्चिम दिशा की यात्रा में भी वाहनादि का लाभ होता है॥६॥ लग्नादि केन्द्र में शुभदृष्टियुक्त शुक्र हो या मित्र नवाश में उच्च में तथा लाभश योग हो या वारवेश का योग हो तो॥७॥ राजा से लाभ महान् उत्साह, राजप्रीति, घर में सुख शान्ति, स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है॥८॥ शुक्र यदि ६।८।१० भाव में पापयुक्त या दृष्ट हो तो चोर सर्व पाषा आदि में भय तथा जनपीडा होती है॥९॥ राजद्वार में पराजय इष्ट वन्धुओं में द्वेष तथा हानि, स्त्री पुत्र आदि की पीडा प्रायः समाज में निन्दा होती है॥१०॥ शुक्र २।७ का स्वामी हो तो मृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गा मन्त्र जप तथा गौदान करना चाहिए॥११॥

अथ रविभुक्तिमासाः १२ दिना . ० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गते सूर्ये सताप राजविद्वजम् ॥ दायादिकसह चेव व्यवहारमयापि वा ॥१॥
 स्वोच्चे स्वोत्प्रेगे सूर्ये मित्रसे केन्द्रकोणगे ॥ दायेशाश्रुमभावे वा लाभे वा धनशेपि वा ॥२॥
 तद्भुक्तौ धनलाभ स्याद्दान्यस्त्रीधनसपद ॥ स्वप्रमोक्ष महत्सौख्यमिष्टवधौ समाप्य ॥३॥
 पितृमात्रो सुखप्राप्ति भ्रातृलाभ गुणवहम् ॥ भर्तृर्ति मुलमौभाग्य पुत्रलाभ च

विदति ॥१५॥ पष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाब्दादशे तथा ॥ नीचे वा पापवर्गस्य देहताप मनोरुजम् ॥१६॥

शुक्र दशा मे सूर्यान्तर मा० १२ फल

शुक्र की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो, सूर्य सप्त से केन्द्र, त्रिकोण मे अथवा शुक्र से शुभस्थान मे लाभ, धन भावो मे हो, उच्च राशि, स्वगृही या मित्र राशि मे हो तो धनलाभ, ऐश्वर्य, स्त्री, धन सम्पत्ति, स्वामी से मुक्त प्राप्ति, इष्ट बन्धु का समागम, माता पिता को मुक्त प्राप्ति, भ्राता का लाभ, सत्कीर्ति, सुख, सौभाग्य तथा पुत्र लाभ होता है ॥१२॥१३॥१४॥ शुभ योग तथा पापयोग रहित सूर्य की दशा सताप, राजविग्रह, रोग, परिवार मे कलह, व्यापार मे साधारण लाभ करती है ॥१५॥ सूर्य लग्न से ६।८।१२ मे या शुक्र से १२ वें नीच अथवा पापवर्ग मे हो तो ज्वर, चिन्ता होती है ॥१६॥

स्वजनात्परिसक्लेशो नित्य निष्ठुरभाषणम् ॥ पितृपीडा बधुहानी राजद्वारे विरोधकृत् ॥१७॥ व्रणपीडाहिबाधा च स्वर्क्षमे च भय तथा ॥ नानारोगभय चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥१८॥ सप्तमाधिपदोषेण ग्रहबाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यप्रोति च कारयेत् ॥१९॥

स्वजनो से क्लेश, नित्य लड़ाई झगडा, पिता की पीडा, बन्धु की हानि, राजद्वार मे विरोध होता है ॥१७॥ घाव जनित पीडा, सर्प बाधा तथा भय होता है। नानारोग से भय, मकान, भूमि का नाश होता है ॥१८॥ सूर्य यदि सप्तमेश हो तो ग्रह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये सूर्य का दान, जप आदि करना चाहिये ॥१९॥

अथ चन्द्रभुक्तिमासाः २० दिना ०० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गते चन्द्रे केन्द्रलाभत्रिकोणमे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव भाग्यकर्मशतयुते ॥२०॥ शुभयुक्ते पूर्णचन्द्रे राज्यनाथेन सयुते ॥ तद्भुक्ता वाहनाधिक्येनापत्येन महत्सुखम् ॥२१॥ महाराजप्रसादेन गजातैश्वर्यमाविशेत् ॥ महानदोद्यानपुष्प देवब्राह्मणपूजनम् ॥२२॥ गीतवाद्यप्रसगादिविद्वज्जनविभूषणम् ॥ गोमहिष्यादिवृद्धिश्च व्यवसायेऽधिक फलम् ॥२३॥ भोजनाद्वरसौख्यं च बधुसयुक्ताभोजनम् ॥ नीचे वास्तवते वापि पष्ठाष्टव्यपरासिमे ॥२४॥

चन्द्रमा का अन्तर मा० २० फल

शुक्र की महादशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा केन्द्र, लाभ, त्रिकोण मे उच्च राशि या स्वगृही अथवा ९।१० वें स्वामी मे युक्त हो ॥२०॥ शुभग्रह युक्त पूर्ण चन्द्र हो अथवा वाक् ग्रह मे युक्त हो तो बहुत सवारियां तथा मकानों मे बहुत सुख होता है ॥२१॥ राजरूपा मे शायी पर्यन्त ऐश्वर्य हो। गंगा आदि नदी का स्थान, देव ब्राह्मण पूजा ॥२२॥ गानवाद्य का प्रमग, विद्वज्जन गोष्ठी होनी है। गौ आदि पशु की वृद्धि, व्यापार मे लाभ अधिक होना है ॥२३॥ उत्तम भोग पदार्थ, मित्र गोष्ठी होनी रहती है। चन्द्रमा यदि नीच का अग्र होकर ६।८।१२ भाव मे हो ॥२४॥

दायेशात्पृष्ठगे वापि रंध्रे वा व्ययराशिगे ॥ तत्काले धननाशः स्यात्संचरेत् महद्भयम् ॥२५॥
 देहायासो मनस्तापो राजद्वारे विरोधकृत् ॥ विदेशगमनं चैव तीर्थयात्रादिकं फलम् ॥२६॥
 दारपुत्रादिपीडा च आत्मबधुवियोगकृत् ॥ दायेशात्केद्रलाभस्थे त्रिकोणे व्ययगेपि वा ॥२७॥
 राजप्रीतिकरं चैव देशग्रामाधिपत्यता ॥ धैर्यं यशः सुखं कीर्तिर्वाहनावरमूषणम् ॥२८॥
 कूपारामतडागादिनिर्माणं धनसंग्रहः ॥ भुक्त्यादौ देहसौख्यं स्यादन्ते क्लेशकर भवेत् ॥२९॥

शुक्र से ६।८।१२ में हो तो अन्तर में धन नाश, भ्रमण, महान् भय होता है ॥२५॥ देह, दुःखी, मन चिन्तित, राजद्वार में विरोध, विदेश यात्रा तथा तीर्थ यात्रा होती है ॥२६॥ स्त्री पुत्र आदि की पीडा, बन्धु वियोग होता है। शुक्र से चन्द्रमा केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या व्यय भाव में हो ॥२७॥ तो राजा की प्रसन्नता, देश या ग्राम का अधिकार, धैर्य, कीर्ति, सुख, वाहन आदि प्राप्त होते हैं ॥२८॥ कूप, तडाग, बागीचा आदि निर्माण होता है। धन का संग्रह होता है। अन्तर के आदि में सुख, अन्त में क्लेश होता है ॥२९॥

अथ कुजभुक्तिमासाः १४ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गते भीमे लग्नात्केद्रत्रिकोणगे स्वोच्चे वा स्वर्क्षणे भीमे लाभे वा बलसयुते ॥३०॥
 लग्नाधिपेन सयुक्ते कर्मभागेन सयुते ॥ तद्भुक्तौ राजयोगादिसपद शुभशोभनम् ॥३१॥
 वस्त्राभरणभूम्यादेरिष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ पृष्ठाष्टमव्यये वापि दायेशाद्वा तथैव च ॥३२॥
 शीतज्वरादिपीडा च पितृमातृभयावहा ॥ ज्वराद्यधिकरोगाश्च स्थानभ्रशो मनोरुजा ॥३३॥
 स्वबन्धुजनहानिश्च कलहो राजविग्रहम् ॥ राजद्वारजनद्वेषो धनधान्यव्ययोधिकम् ॥३४॥
 व्यवसायात्फलं नेष्ट ग्रामभूम्यादिहानिकृत् ॥ द्वितीयचूननाये तु देहवाधा भविष्यति ॥३५॥

मंगल का अन्तर मा० १४ दि० ० फल

शुक्र की महादशा में मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में स्वोच्च या स्वराशि का हो या बलवान् होकर लाभ में हो ॥३०॥ अथवा लग्नेन युक्त हो या ९।१० के स्वामी से युक्त हो तो अन्तर में राजयोग के समान सम्पत्ति और शुभ है ॥३१॥ उत्तम वस्त्रादि से इष्ट सिद्धि और शुभ होता है। लग्न से या शुक्र से ६।८।१२ भाव में ॥३२॥ हो तो शीत ज्वर आदि पीडा, माता पिता को भय तथा ज्वर आदि रोग, स्थानभ्रम, मन में चिन्ता, बन्धु हानि ॥३३॥ कलहादि, राज से विरोध, राजद्वार के जन से विरोध, अधिक खर्च ॥३४॥ व्यापार में हानि, ग्राम भूमि की हानि होती है। यदि मंगल २।७ का स्वामी हो तो देहवाधा होती है ॥३५॥

अथ राहुभुक्तिमासाः ३६ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यातर्गते राहौ केद्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा शुभसद्वृत्ते योगकारकसयुते ॥३६॥ तद्भुक्तौ बहुसौख्यं च धनधान्यादिलाभकृत् ॥ इष्टवधुसमाकीर्णं भोजनावरलाभम् ॥३७॥ यातु कार्थसिद्धिः स्यात्प्रशुभेष्टादिमभवः ॥ लग्नाष्टपञ्चमे राहौ तद्भुक्तिः सुखदा भवेत् ॥३८॥

राहु का अन्तर मास ३६ दिन ० फल

शुक्र की महादशा में राहु का अन्तर हो। राहु लग्न में केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में हो, उच्च राशि में,

शुभ दृष्ट अथवा कारकग्रह से युक्त हो ॥३६॥ तो अंतर में बहुत सुख, धन सम्पत्ति का लाभ, इष्ट मित्रों से युक्त, उत्तम भोगों का लाभ हो ॥३७॥ यदि यात्रा करे तो कार्य तथा धन की सिद्धि हो, पशु तथा भूमि की प्राप्ति होती है। यदि राहु केन्द्र में हो तो अन्तर शुभ होता है ॥३८॥

शत्रुनाशो महोत्साहो राजप्रीतिकरी शुभा ॥ भुक्त्यादौ शरमासाश्च अते ज्वरमजीर्णकृत् ॥३९॥ कार्यं विघ्नमदाप्रोति सचर च मनोव्यथाम् ॥ परं मुखं च सौभाग्यं महानिव समश्नुते ॥४०॥ नैर्ऋतीं दिशमाश्रित्य प्रयाणं प्रभुदर्शनम् ॥ यातु कार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ॥४१॥ उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्राफलं भवेत् ॥ दायेशादिपुराणस्ये व्ययेवापापसमुते ॥४२॥ अशुभं सभते कर्म पितृमातृजनावधि ॥ सर्वत्र जनविद्वेषं तानाकृपादिसम्भवम् ॥४३॥ द्वितीये सप्तमे वापि देहात्तस्य चिनिर्दिशेत् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजपजपं चरेत् ॥४४॥

शत्रु का नाश, महान् उत्साह, राजा से प्रीति होती है। आरम्भ में ६ महीने तक शुभ है। अन्त में ६ मास ज्वर और अजीर्ण की विमारी हो ॥३९॥ कार्य में विघ्न, व्यर्थ की यात्रा, मन में चिन्ता होती है। शुभ योग में परम सुख और सौभाग्य होता है ॥४०॥ नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा, बड़े आदमी से मिलाप तथा मनोरथ सिद्ध करके पुनः देश में आना होता है ॥४१॥ ब्राह्मणों का उपकार, तीर्थयात्रा होती है। शुक से राहु ६।८।१२ स्थानों में पापमुक्त हो ॥४२॥ तो अशुभ होता है। संपूर्ण परिवार तथा समाज में नेष्ट फल होता है ॥४३॥ राहु यदि २।७ में हो तो आलस्य और कार्य हानि होती है। इसकी शान्ति के लिये 'मृत्युजप' जप होना चाहिए ॥४४॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ३२ दिना० ० तत्फलम्

शुकस्यातर्गते जीवे स्वोल्बे स्वक्षेत्रक्षेत्रे ॥ दायेशाच्छुभराशिस्ये भात्ये वा कर्मराशिगे ॥४५॥ नष्टराज्याद्धनप्राप्तिमिष्टार्थान्स्वरसपदम् ॥ मित्रप्रभोश्चतन्मानधनधान्यपरा पतिम् ॥४६॥ राजसन्मानकीर्तिं च अश्वादोलादिलाभकृत् ॥ विद्वत्प्रभुसमाकीर्णं शास्त्रापारं परिश्रमम् ॥४७॥ पुत्रोत्सवावित्ततोपमिष्टबन्धुसमागमम् ॥ पितृमातृसुखप्राप्तिं भ्रातृपुत्रादि-सौख्यकृत् ॥४८॥ दायेशात्पराशिस्ये व्यये वा पापसमुते ॥ राजचौरादिपीडा च देहपीडा भविष्यति ॥४९॥ आत्मभुक्त्युपकटः स्यात्कलहेन मनोव्यथा ॥ स्थानच्युतिं प्रवासच नानारोगं समामुयात् ॥५०॥ द्वितीये सप्तमाधीशे देहबाध भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं महामृत्युजपं चरेत् ॥५१॥

गुरु का अन्तर मा० ३२ दि० ० फल

शुक की महादशा में वृहस्पति वा अन्तर हो वृहस्पति मन्त्र में या शुक्र में उल्बराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र में, त्रिकोण में, भाग्य या दशम में हो ॥४५॥ तो नष्ट हुआ ऐश्वर्य प्राप्त होता है। मनोरथ पूर्ति तथा सम्पत्ति, मित्र तथा प्रभु में सम्मान, धन सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥४६॥ राजा से सम्मान और कीर्ति तथा सवांगी प्राप्त होती है। विद्वद्जन-संगीति होती रहती है। शास्त्र में अपार परिश्रम होता है ॥४७॥ पुत्रोत्सव आदि मनोरथ, इष्ट बन्धु वा

तमागम होता है। माता पिता को सुख तथा भ्राता को पुत्र का सुख होता है॥४८॥ शुक्र से पुत्र ६।१२ भाव में पापमुक्त हो तो राज, चोर आदि से पीडा तथा देह पीडा होती है॥४९॥ अपने पास रहनेवाले बन्धु को कष्ट होता है। पारिवारिक कलह से मन में चिन्ता रहती है। स्थान हानि, प्रवास तथा अनेक रोग होते हैं॥५०॥ गुरु यदि २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये 'महामृत्युञ्जय' का जप करना चाहिए॥५१॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३८ दिना ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते मदे स्वोच्चे तु परमोच्चग्रे ॥ स्वर्लकेन्द्रत्रिकोणस्थे तुगाशे स्वराशेपि वा ॥५२॥ तद्भुक्ती बहुसौख्य स्यादिष्टबधुसमन्विते ॥ सन्मान बहुसम्मान पुत्रिकागमन शुभम् ॥५३॥ पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्दानधर्मादिपुण्यकृत् ॥ स्वप्रभोश्च विशेष स्यादति वा बलेसमागमेत् ॥५४॥ देहालस्यमवाप्नोति आदायादधिकव्ययम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये मदे दायेशाद्वा तथैव च ॥५५॥ भुक्त्यादी देहआरोग्य पितृमातृजनावधि ॥ दारपुत्रादिषोडा च सहारे देहविभ्रमम् ॥५६॥ व्यवसायात्फल नष्ट गोमहिष्यादिहानिकृत् ॥ द्वितीयसप्तमाधीसे देहबाधा भविष्यति ॥५७॥ तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोम च कारयेत् ॥५८॥ यो गा ददाति भृगुजस्य दशाविपाके सौख्य सदा नृपतितुल्य उपैति सत्त्वोम् ॥ श्रेयो यश सुविजयो बहुराज्यताम श्रीसूर्यपाराकज-निर्वहृभाग्यभाक् स्यात् ॥५९॥

शनि का अन्तर मा० ३८ दि ० फल

शुक्र की दशा में शनि का अन्तर हो शनि लग्न ग बन्ध या त्रिकोण में, मन्गलि, उच्चराशि, परमोच्च में या अपने अंश में हो तो॥५२॥ अन्तर में बहुत सुख इष्ट बन्धु में मित्राण, सम्मान, समाज में प्रतिष्ठा, परिवार में बन्धु का जन्म होता है॥५३॥ पवित्र तीर्थ यात्रा, दान धर्म आदि पुण्य कार्य आदि शुभ फल के बाद दशा के उत्तमार्ध में अपने स्वामी में वैमनस्य अथवा बलेज हो॥५४॥ देह में आलस्य आमदनी में अधिक मर्ब होना है। शनि लग्न से या शुक्र से ६।८।१० में हो॥५५॥ तो अन्तर के आदि में परिवार में आरोग्यता, उत्तमार्ध में स्त्रीपुत्र को पीडा और अपने शरीर में विभ्रम (चक्कर आना) होता है॥५६॥ व्यापार में लाभ नष्ट, पशु आदि की हानि होती है। यदि शनि २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है॥५७॥ इसकी शान्ति के लिये तिल का हवन करना चाहिए॥५८॥ जो मनुष्य गुरु दशा में शनि के अन्तर में गी का दान करता है वह राजा के समान सुख और लक्ष्मी प्राप्त करता है। बन्ध्याण, यश, विजय तथा राज्य लाभ होता है॥५९॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ३४ दिना ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते सौम्ये बंद्दे सामप्रिकोणगे ॥ ध्वोच्चे वा स्वर्लके वापि रात्रप्रान्तिरश्च शुभम् ॥६०॥ सौभाग्य पुत्रलाभ च सम्मार्गे धनलाभकृत् ॥ पुराणधर्मयवज धृगारिजनसमगम् ॥६१॥ इष्टबधुजनावीर्ण विप्रभूमगमागमम् ॥ स्वप्रभोश्च महन्मोक्ष विप मिष्टाप्रभोक्तम् ॥६२॥ लग्नेशाम्यापत्तरक्षे ध्यये वा वनवर्जिते ॥ पापपटो तथा युने जत्रुणाज्जीवहानिकृत् ॥६३॥ अन्यालपनिवासश्च मनोवैकल्यसमव ॥ शान्तिनिश्चयभूत्वा च श्रद्धायाव्ययमेव च

शिरोवेदना, चिन्ता, कलह तथा बेकारी होती है॥७१॥ प्रमेह आदि बीमारी, धन का अपव्यय, भार्या पुत्र से विरोध, यात्रा, कार्य हानि होती है॥७२॥ केतु यदि २१७ स्थान में हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप ॥७३॥ तथा छाग दान करे तो सब सम्पत्ति प्राप्त होती है॥७४॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० विशो० भृगोरतर्दशाफल कथनं नाम
एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४१॥

अथोपदशाप्रकरणमाह

स्वातर्दशाब्दबृद्धं च हन्यात्स्वाब्दैर्गृहस्थ च ॥विशोत्तरशतेनाप्त घन्त्राः शेष
कलादिकम्॥१॥

प्रत्यन्तरदशाध्याय

ग्रह के अन्तरदशा के वर्ष, मास, दिन के एकरस (अर्थात् दिनमध्या) करके जिस ग्रह का अन्तर निकालना हो उसको वर्ष मध्या से गुणा करके १२० का भाग देकर दिन, घटी, पल अक लेकर दिन में ३० का भाग देकर भाग प्राप्त करें॥१॥

उदाहरण-यथा, सूर्य महादशा में सूर्य का अन्तर मा० ३ दि० १८ है। इसके दिन विये तो १०८ हुए। अब इसमें सूर्य का प्रत्यन्तर निकालना है, इसलिये सूर्य के वर्ष ६ की मध्या में गुणा किया तो ६४८ हुए। इसमें १२० का भाग किया तो सन्धि ५ तथा शेष ४८ रहे। घटी अब बचेना है, इसलिये ६० से गुणा किया तो २८८० हुआ। पुन १२० का भाग किया तो सन्धि २४ तथा शेष कुछ भी नहीं रहा। अतः सूर्य प्रत्यन्तर दशा ५ दिन २४ घटी हुई। इसमें चन्द्रमा का प्रत्यन्तर निकालने के लिये चन्द्रमा के वर्ष १० से १०८ को गुणा किया जायेगा और १२० का भाग करने में दिन आदि दशा होगी। इसी प्रकार भगन आदि का प्रत्यन्तर निकालने के लिये सूर्य की अन्तर दशा के दिन १०८ को सत्तन् ग्रह के वर्ष मध्या में गुणा करना और १२० का भाग देना। तो तत्तन् ग्रह की प्रत्यन्तर दशा प्राप्त होगी।

अथ सूर्यमध्ये शुद्धयतरम्

[illegible]

अथ सूर्यमध्यै शनिष्यतरम्

[illegible]

अथ सूर्यमध्य बुधव्यतरम्

[illegible]

अथ सूर्यमध्ये केतुव्यतारम्

[illegible]

[illegible][illegible][illegible][illegible]

पूर्वखण्डे द्विजत्वारिसोऽध्यायः

| अथ चद्रमण्ड्ये भृगुव्यतरम् | | | | | | | | | |
|-----------------------------|-------------------------|-------------------------|--------------------------|--------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|---|
| शु० | मू० | च० | म० | रा० | वृ० | श० | बु० | के० | पहा |
| ३ १० ० ० ० | १ ० ० ० ० | १ २० ० ० ० | १ ५ ० ० ० | ३ ० ० ० ० | २ २० ० ० ० | ३ ५ ० ० ० | २ २५ ० ० ० | १ ५ ० ० ० | मासा दिनानि घटघ पलानि विपलानि |
| अथ चद्रमण्ड्ये सूर्यव्यतरम् | | | | | | | | | |
| मू० | च० | म० | रा० | वृ० | श० | बु० | के० | शु० | पहा |
| ० १ ० ० ० | ० १५ ० ० ० | ० १० ३० ० ० | ० २७ ० ० ० | ० २४ ० ० ० | ० २८ ३० ० ० | ० २५ ३० ० ० | ० १० ३० ० ० | १ ० ० ० ० | मासा दिनानि घटघ पलानि विपलानि |
| अथ भौमण्ड्ये भौमव्यतरम् | | | | | | | | | |
| म० | रा० | वृ० | श० | बु० | के० | शु० | र० | च० | पहा |
| ० ८ ३४ ३० ० | ० २२ ३ ० ० | ० १९ ३६ ० ० | ० २३ १६ ३० ० | ० २० ४९ ३० ० | ० ८ ३४ ३० ० | ० २४ ३० ० ० | ० ७ २१ ० ० | ० १२ १५ ० ० | मासा दिनानि घटघ पलानि विपलानि |
| अथ भौमण्ड्ये राहुव्यतरम् | | | | | | | | | |
| रा० | वृ० | श० | बु० | के० | शु० | मू० | च० | म० | पहा |
| १ २६ ४२ ० ० | १ २० २४ ० ० | १ २९ ५१ ० ० | १ २३ ३३ ० ० | ० २२ ३ ० ० | २ ३ ० ० ० | ० १८ ५४ ० ० | १ ३० ० ० ० | ० २२ ३ ० ० | मासा दिनानि घटघ पलानि विपलानि |

अथ भौममाष्ये नृगुण्यतरम्

| गु० | मू० | व० | स० | रा० | कु० | श० | ख० | के० | पहा० |
|------------------------|------------------------|-----------------------|-------------------------|-----------------------|------------------------|------------------------|-------------------------|-------------------------|--|
| २ १० ० ० ० | ० २१ ० ० ० | १ ५ ० ० ० | ० २४ ३० ० ० | २ ३ ० ० ० | १ २६ ० ० ० | २ ६ ३० ० ० | १ २९ ३० ० ० | ० २४ ३० ० ० | मासा दिग्गजि रूप पलाजि विपलाजि |

अथ श्रीमन्मह्ये सूर्यभ्यंतरम्

[illegible]

अथ भौममाध्यै चन्द्रव्यतरम्

| व० | म० | रा० | सु० | श० | बु० | के० | शु० | घ० | प्रहा |
|-------------------------|-------------------------|------------------------|------------------------|------------------------|-------------------------|-------------------------|-----------------------|-------------------------|--|
| ० १७ ३० ० ० | ० १२ १५ ० ० | १ १ ३० ० ० | ० २८ ० ० ० | १ ३ १५ ० ० | ० २९ ४५ ० ० | ० १२ १५ ० ० | १ ५ ० ० ० | ० १० ३० ० ० | मासा- दिनानि घटघा- पलानि विपलानि |

अथ राहुमध्ये राहुव्यतरम्

| रा० | बृ० | श० | तु० | के० | गु० | सू० | घ० | म० | प्रहा |
|-------------------------|------------------------|------------------------|-------------------------|-------------------------|------------------------|-------------------------|------------------------|-------------------------|---|
| ४ २५ ४८ ० ० | ४ १ ३६ ० ० | ५ ३ ५४ ० ० | ४ १७ ४२ ० ० | १ २६ ४२ ० ० | ५ १२ ० ० ० | १ १८ ३६ ० ० | २ २१ ० ० ० | १ २६ ४९ ० ० | भासा- दिनानि घटप- पत्तानि विपत्तानि |

[illegible][illegible][illegible][illegible]

| अथ गुरुमध्ये भृगुव्यतरम् | | | | | | | | | |
|--------------------------|------------------------|------------------------|------------------------|------------------------|-----------------------|-----------------------|------------------------|------------------------|---|
| शु० | सू० | च० | म० | रा० | बु० | श० | धु० | के० | पहा |
| ५ १० ० ० ० | १ १८ ० ० ० | २ २० ० ० ० | ३ २६ ० ० ० | ४ २४ ० ० ० | ४ ८ ० ० ० | ५ २ ० ० ० | ४ १६ ० ० ० | १ २६ ० ० ० | मासा दिनानि घटका पालाणि विपलाणि |

[illegible][illegible][illegible]

[illegible]

| अथ शनिमध्ये शनिय्यत्तरम् | | | | | | | | | |
|--------------------------|-------------------------|-------------------------|------------------------|------------------------|------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|---|
| श० | सु० | के० | गु० | मू० | च० | म० | रा० | वृ० | पहा |
| ५ २१ २८ ३० ० | ९ ३ २५ ३० ० | २ ३ १० ३० ० | ६ ० ३० ० ० | १ २४ ९ ० ० | ३ ० १५ ० ० | २ ३ १० ३० ० | ५ १२ २७ ० ० | ४ २४ २४ ० ० | माता दिनाति घटण एलाति विषयानि |

[illegible][illegible]

पूर्वसूत्रे द्विसत्वारिंशोऽध्यायः

पूर्वपक्षे द्विजत्वारिरोज्याय

| अथ शनिमन्त्रे मृगुभ्यतरम् | | | | | | | | | |
|---------------------------|-----|----|----|-----|-----|----|-----|-----|---------|
| शु० | सू० | च० | म० | रा० | वृ० | श० | बु० | के० | ग्रहा |
| ६ | १ | ३ | २ | ५ | ५ | ६ | ५ | २ | माता |
| १० | २७ | ५ | ६ | २१ | २ | ० | ११ | ६ | दिनानि |
| ० | ० | ० | ३० | ० | ० | ३० | ३० | ३० | घटप |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | मलानि |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | विषलानि |

शनिमन्त्रे मृगुभ्यतरम्

[illegible]

| अथ शनिमध्ये चन्द्रम्यतरम् | | | | | | | | | यहा |
|---------------------------|------------------------|-------------------------|------------------------|------------------------|-------------------------|------------------------|-----------------------|-------------------------|---|
| च० | म० | रा० | वृ० | श० | बु० | के० | गु० | सू० | |
| १ १७ ३० ० ० | १ ३ १५ ० ० | २ २५ ३० ० ० | ३ १६ ० ० ० | ४ ० १५ ० ० | २ २० ४५ ० ० | १ ३ १५ ० ० | ३ ५ ० ० ० | ० २८ ३० ० ० | माता दिनाति घटप पत्तानि विपलानि |
| अथ शनिमध्ये भौमम्यतरम् | | | | | | | | | |

[illegible]

अथ शनिमण्ड्ये राहुव्यतारम्

| रा० | हृ० | गो० | कु० | के० | मु० | सू० | ष० | म० | पहा |
|------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|--|
| ५ ३ ५४ . . | ४ १६ ४८ . . | ५ १२ २७ . . | ४ २५ २९ . . | १ २९ ५१ . . | ५ २१ ० . . | १ २१ १८ ० . | २ २५ ३० ० . | १ २९ ५१ ० . | माता दिनाति घटपा पलानि विपलानि |

अथ शनिनाथे गुरुव्यतरम्

| क्र० | श० | सु० | के० | मु० | म० | घ० | न० | रा० | ग्रहा |
|------------------------|-------------------------|------------------------|-------------------------|-----------------------|-------------------------|------------------------|-------------------------|-------------------------|---|
| ४ १ ३६ ० ० | ४ २४ २४ ० ० | ४ ९ १२ ० ० | १ २३ १२ ० ० | ५ २ ० ० ० | १ १५ ३६ ० ० | २ १६ ० ० ० | १ २३ १२ ० ० | ४ १६ ४८ ० ० | भासा दिनाति घटप पत्तानि विपत्तानि |

अथ बुधपथ्यो बुधपथ्यतरम्

| कु० | कि० | गु० | घ० | च० | म० | रा० | हृ० | ता० | ग्रहा |
|-------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|--------------------------|------------------------|-------------------------|--------------------------|--|
| ४ २ ५९ ३० ० | १ २० ३४ ० ० | ४ २४ ३० ० ० | १ २३ २१ ० ० | २ १२ १५ ० ० | १ २० ३४ ३० ० | ४ १० ३ ० ० | ३ २५ ३६ ० ० | ४ १७ १६ ३० ० | माता रिनानि घटपा पमानि विपमानि |

अथ बुधमध्यैकेतुव्यतरम्

[illegible]

अथ वेत्तुमाध्ये मृग्युज्यतरम्

| अथ केतुमध्ये मृगश्रिष्यतरम् | | | | | | | | | |
|-----------------------------|------------------------|-----------------------|-------------------------|-----------------------|------------------------|------------------------|-------------------------|-------------------------|--|
| शु० | सू० | च० | म० | रौ० | वृ० | श० | बु० | के० | ग्रहा |
| २ १० ० ० ० | ० २१ ० ० ० | १ ५ ० ० ० | ० २४ ३० ० ० | २ ३ ० ० ० | १ २६ ० ० ० | २ ६ ३० ० ० | १ २९ ३० ० ० | ० २४ ३० ० ० | माता दिनानि घटप- पत्नानि विपलानि |

अथ केतुमाष्ये सूर्यपथतरमु

| अथ केतुमध्ये सूर्यव्यतिरम् | | | | | | | | | विपलानि |
|----------------------------|-------------------------|------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|-------------------------|------------------------|------------------------|--|
| सू० | च० | म० | रा० | बु० | श० | कु० | के० | गु० | ग्रहा |
| ० ६ १८ ० ० | ० १० ३० ० ० | ० ७ २१ ० ० | ० १८ ५४ ० ० | ० १६ ४८ ० ० | ० १९ ५७ ० ० | ० १७ ५१ ० ० | ० ७ २१ ० ० | ० २१ ० ० ० | माता दिवानि घटघा पसानि विपलानि |

अथ वेतुमध्ये सङ्ख्यतरम्

[illegible]

अथ सेतुमध्ये श्रीमद्व्यतारम्

| अथ हेतुमये शीमव्यतरम् | | | | | | | | | | |
|-------------------------|------------------------|-------------------------|--------------------------|--------------------------|-------------------------|-------------------------|------------------------|-------------------------|--|--|
| स० | रा० | गृ० | श० | मु० | के० | यु० | सू० | च० | पट्टा | |
| ० ८ ३४ ३० ० | ० २२ ३ ० ० | १ १९ ३६ ० ० | ० २३ १६ ३० ० | ० २० ४९ ३० ० | ० ८ ३४ ३० ० | ० २४ ३० ० ० | ० ७ २१ ० ० | ० १२ १५ ० ० | मासा दिनाति घटपा पलाति विषमानि | |

[illegible][illegible][illegible]

| अथ भृगुनाम्ने सुषण्वतरम् | | | | | | | | | |
|--------------------------|-------------------------|------------------------|------------------------|------------------------|-------------------------|-----------------------|------------------------|-------------------------|---|
| सु० | के० | मु० | मू० | ख० | घ० | रा० | वृ० | श० | पहा |
| ४ २५ ३० ० ० | १ २९ ३० ० ० | ५ २० ० ० ० | १ २१ ० ० ० | २ २५ ० ० ० | १ २९ ३० ० ० | ५ ३ ० ० ० | ४ १६ ० ० ० | ५ ११ ३० ० ० | मासा दिनानि घटिका यमानि विधमानि |

अथ मृगुमध्ये केतुव्यतरम्

| के० | गु० | मू० | च० | म० | रा० | बु० | श० | सु० | ग्रहा |
|-----|-----|-----|----|----|-----|-----|----|-----|-----------|
| ० | २ | ० | १ | ० | २ | १ | २ | १ | मासाः |
| २४ | १० | २१ | ५ | २४ | ३ | २६ | ६ | २९ | दिनानि |
| ३० | ० | ० | ० | ३० | ० | ० | ३० | ३० | पट्टपः |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | पत्तानि |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | विपत्तानि |

अथ विदशाफलं प्रारभ्यते

लग्नेशरोगतायी च निघनेरोन संयुतौ ॥ मारकेशयुतौ वृष्टौ रोग नायांशगौ यदि ॥२॥ तस्य भुक्ती विजानीयाव्याया शस्त्रेण वैनृणाम् ॥ शुभयोगेन बाधः स्यात्पापयोगेन मृत्युकृत् ॥३॥ जीवांशे जीववर्गेण मूलांशे मूलवर्गतः ॥ रोगादिप्रवदेत्तत्र तेषां भुक्तिवशात्फलम् ॥४॥ वित्तप्रनाथस्य नवाशनायौ रघ्नोशकस्याधिपतिश्च युक्तौ ॥ भेषस्य पद्वर्गगती यदा तौ भुक्ती तयोर्जंबुकभीतितो बुधः ॥५॥ वृषवर्गगती तौ चेद्भ्रूविकाद्भयमादिशेत् ॥ गुम्भवर्गगती भोतिः कपिजा नात्र संशयः ॥६॥ कुलीरवर्गगौ तौ चेद्वासभाद्भूतिमादिशेत् ॥ सिंहवर्गगती तौ चेद्भुक्ती स्याद्वाघ्रज भयम् ॥७॥ कन्यावर्गगती तौ चेद्भ्रूलूकाद्भयमजसा ॥ वणिग्वर्गगती तौ चेतद्भुक्ती स्याद्गजाद्भयम् ॥८॥ अलिवर्गगती तेषां तेषां स्याद्गजतो भयम् ॥ यदि कार्मुकवर्गस्यौ भुक्ती स्याद्भयजं भयम् ॥९॥ मृगवर्गगती तौ चेद्भुक्ती करभजं भयम् ॥ कुम्भवर्गगती तौ चेद्गोलांगूलाद्भय भवेत् ॥१०॥ मीनवर्गगती भुक्ती तेषां स्याद्ग्राहज भयम् ॥ एव देहादिभावानां पद्वर्गगतिभिः फलम् ॥ सम्यग्विचार्य मतिमान्प्रबदेत्कालवित्तमः ॥११॥

विदशाफल

लग्नेश और पट्टेश अष्टमेश युक्त हो और मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तथा पट्टेश के नवाश में हो तो ॥२॥ उसके प्रत्यन्तर में शस्त्र के आघात से कष्ट होता है। शुभग्रह के दृष्टि अथवा योग से बाध (आघात नहीं होता या सामान्य होता है) और पापयोग से मृत्यु होती है ॥३॥ जीवांश में होने से जीव वर्ग से तथा मूलांश में होने से मूलवर्ग से रोग, आघात या मृत्यु होती है। सो प्रत्यन्तर में योगानुसार कहना चाहिए ॥४॥ लग्नेश जिस नवाश में हो उस राशि का स्वामी, अष्टमेश के या अष्टमभाव के नवाशपति से युक्त यदि भेषराशि के पद्वर्ग युक्त (एक साथ) हो तो जंबुक (मियार) का भय होता है ॥५॥ पूर्वोक्त दोनों वृश्चिक राशि के पद्वर्ग में हो तो बिच्छू से भय होता है। मिथुन के वर्ग में बदर से भय होता है ॥६॥ कर्क के वर्ग में गर्दभ (गधे) से भय और सिंह वर्ग में व्याघ्र (बाघ) से भय होता है ॥७॥ कन्यावर्ग में भालू से भय एवं तुला राशि के वर्ग में हाथी से भय होता है ॥८॥ वृश्चिक के वर्ग में हाथी से भय तथा धनुराशि के वर्ग में रथ से भय होता है ॥९॥ मकर वर्ग में हाथी के सूड से भय एवं

कुम्भ वर्ग में हो तो बैल या गौ की पूँछ से भय होता है॥१०॥ मीन वर्ग में हो तो ग्राह (मगर) से भय होता है। इस प्रकार लग्न से बारहो भावों का फल पङ्क्ति के विचार से कहा जाता है, ज्योतिर्विस् को चाहिए की भली प्रकार से विचार करके फल का निर्देश करे॥११॥

अथ सूर्यादिसर्वग्रहाणां विदशाफलमाह

(सू० सू०) उद्वेगोय बल वित्तदारार्ति शिरसि व्यथा ॥ ग्राहणेन विवादश्च सूर्य स्वविदशा गतः ॥१२॥ (सू० च०) उद्वेग कलह वित्तपीडा स्वहृतिमद्भुताम् ॥ मणिमुक्तादिनाशश्च विदशामु रवे शशी ॥१३॥ (सू० म०) राजभीति शस्त्रभीति बधन बहुसकटम् ॥ शत्रुवह्निहृता पीडा स्वदशामु रवे कुजः ॥१४॥ (सू० रा०) श्लेष्मव्याधि शस्त्रभीति धनहानि महद्भयम् ॥ राजभगस्तथा त्रासो विदशामु रवेस्तमः ॥१५॥ (सू० गु०)

सूर्यादिग्रहों का प्रत्यन्तर्दशाफल

(सू० सू० सू०) सूर्य अपनी विदशा (प्रत्यन्तर्दशा) में उद्वेग, बल, स्त्री धन कष्ट, शिरदर्द, ग्राहण से विवाद करता है॥१२॥ (सू० च०) उद्वेग, कलह, पीडा, विक्षेप, रत्ननाश यह फल सूर्य की विदशा में चन्द्रमा का है॥१३॥ (सू० न०) सूर्य में भौम की विदशा में, राजभय, शस्त्रभय, बधन, बहुसकट, शत्रु तथा अग्नि से पीडा होती है॥१४॥ (सू० रा०) सूर्य की विदशा में राहु कफरोग, शस्त्रभय, धनहानि, महाभय, ऐश्वर्यनाश तथा त्रास करता है॥१५॥ (सू० गु०)

शत्रुनाश जय वृद्धि वस्त्रहेमादिभूषणम् ॥ अभयानादि ददते गोधन च रवेर्गुरुः ॥१६॥ (सू० श०) धनहानि पशो पीडा महोद्वेगो महारुजः ॥ अशुभ सर्वमाप्नोति विदशामु रवे शनिः ॥१७॥ (सू० बु०) विद्यालाभो बधुसगो भोज्यप्राप्तिर्धनगमः ॥ धर्मलाभो नृपात्पूजा विदशामु रवेर्बुधः ॥१८॥ (सू० के०) प्राणभीतिर्महाहानी राजभीतिश्च विग्रहः ॥ शत्रुणा च महावादो विदशामु रवेः शिखी ॥१९॥ (सू० शु०) दिनानि समरूपाणि लाभोऽप्यत्यो भवेदिह ॥ स्वल्पा च सुखसंपत्तिर्विदशामु रवेर्मृगुः ॥२०॥

सूर्य की विदशा में गुरु शत्रुनाश, जय, वृद्धि, वस्त्रभूषणप्राप्ति, सुखसवारी देता है॥१६॥ (सू० श०) सूर्य विदशा में शनि धनहानि, पशुपीडा, उद्वेग, महारोग आदि सर्वप्रकार से अशुभ करता है॥१७॥ (सू० बु०) सूर्य की विदशा में बुध विद्यालाभ, बधुसग, भोगलाभ, धनलाभ, धर्मलाभ, राजपूजा, फल देता है॥१८॥ (सू० के०) सूर्य की विदशा में वेतु प्राणभय, महाहानि राजभय, लडाई, विवाद करता है॥१९॥ (सू० शु०) सूर्य की विदशा में शुक सभान है, साधारण लाभ, सम समय, साधारण सुख सम्पत्ति करता है॥२०॥

अथ चंद्रविदशाफलमाह

(च० च०) भूभोज्यधनसंप्राप्ती राजपूजामहत्सुखम् ॥ महालाभः स्त्रियो भोगो विदशामु स्वयः शशी ॥२१॥ (च० म०) मतिवृद्धिर्महापूज्य सुख बधुजनै सह ॥ धनगमः शत्रुभय

चन्द्रस्यातर्गतं कुजः ॥२२॥ (च० रा०) भवेत्कल्याणसपत्नी राजवित्तसमायाम् ॥
अशुभैरल्पमृत्युश्च चन्द्रचन्द्रातरे तमः ॥२३॥ (च० बु०) वस्त्रलाभो महत्तेजो ब्रह्मज्ञान च
सद्गुरोः ॥ राज्यालकरणावाप्तिश्चन्द्रचन्द्रातरे गुरुः ॥२४॥ (च० श०) दुर्विने लभते पीडा
वातपित्तादिशेषतः ॥ धनधान्यपशोहानिश्चन्द्रचन्द्रातरे शनिः ॥२५॥ (च० बु०)
पुत्रजन्महृषप्राप्तिर्विद्यालाभो महोन्नतिः ॥ शुक्लवस्त्राभ्रलाभश्च चन्द्रचन्द्रातरे बुधः ॥२६॥
(च० के०) ब्राह्मणेन समं पुद्गमपमृत्युः सुखसयः ॥ सर्वत्र जायते क्लेशश्चन्द्रचन्द्रातरे शिखी
॥२७॥ (च० शु०) धनलाभो महत्सौख्यं कन्याजन्म सुभोजनम् ॥ प्रीतिश्च
सर्वलोकेभ्यश्चन्द्रचन्द्रातरे भृगुः ॥२८॥ (च० सू०) अग्रागमो वस्त्रलाभः शत्रुहानि सुखायाम्
॥ सर्वत्र विजयप्राप्तिश्चन्द्रचन्द्रातरे रविः ॥२९॥

चन्द्रविदशाफलः .

(च० च०) चन्द्रमा की विदशा मे चन्द्रमा भूमि, भोग, धन की प्राप्ति, राजपूजा महान्
सुख, महालाभ, ललना भोग प्राप्त करता है ॥२१॥ (च० म०) चन्द्रमा की विदशा मे मंगल
मतिवृद्धि महापूज्यता, बन्धुजो के साथ सुख धनलाभ, तथा शत्रुभय करता है ॥२२॥ (च०
रा०) चन्द्र विदशा मे राहु, कल्याण, सम्पत्ति, राजा से धन प्राप्ति, दुःख तथा अल्प मृत्यु
करता है ॥२३॥ (च० बु०) चन्द्र विदशा मे गुरु वस्त्र लाभ, तेजोवृद्धि गुरु से ब्रह्म ज्ञान की
प्राप्ति, राजा से अलङ्कार प्राप्ति करता है ॥२४॥ (च० श०) चन्द्रमा की विदशा मे शनि
कष्ट, पीडा, वात पित्त जनित रोग, धन सम्पत्ति यश की हानि करता है ॥२५॥ (च० बु०)
चन्द्रमा की विदशा मे बुध पुत्र जन्म का हर्ष प्राप्त करता है। विद्या लाभ, महान् उन्नति, श्रेत
वस्त्र तथा अन्न का लाभ करता है ॥२६॥ (च० के०) चन्द्र विदशा मे केतु ब्राह्मण से विवाद,
अपमृत्यु, सुख हानि तथा सर्वत्र क्लेश करता है ॥२७॥ (च० शु०) चन्द्र विदशा मे शुक्र धन
लाभ, महान् सौख्य, कन्या जन्म सुभोजन तथा सब से प्रीति करता है ॥२८॥ (च० सू०)
चन्द्र विदशा मे सूर्य अन्न लाभ, वस्त्र लाभ, शत्रु हानि, सुख प्राप्ति तथा सर्वत्र विजय प्राप्ति
करता है ॥२९॥

अथ भौमविदशाफलमाह

(म० म०) शत्रुभीति कलि घोरमकस्माज्जायते भयम् ॥ रक्तप्राबोपमृत्युश्च विदशासु स्वयं
कुजः ॥३०॥ (म० रा०) बध्न राजस्य च धनहानि कुभोजनम् ॥ क्लृप्तं शत्रुभिर्नित्यं
भौमभीमातरे तमः ॥३१॥ (म० गु०) भस्तिनाश तथा दुःख सताप क्लृप्तो भवेत् ॥ विफल
चितित सर्व भौमभीमान्तरे गुरुः ॥३२॥ (म० श०) स्वामिनाशस्तथा पीडा
धनहानिर्महाभयम् ॥ वैकल्य क्लृप्तश्चासौ भौमभीमातरे शनिः ॥३३॥ (म० बु०) सर्वथा
बुद्धिनाशश्च धनहानिर्निरस्तनौ ॥ वस्त्राभ्रमुद्गदा नाशोभौमभीमातरे बुधः ॥३४॥ (म०
के०) आलस्य च शिर पीडा पापरोगापमृत्युदृष्टः ॥ राजभीतिः शस्त्रपातो भौमभीमान्तरे
शिखी ॥३५॥ (म० गु०) चाडालात्सकटस्त्रासौ राजशस्त्रभय भवेत् ॥ अतिसाहोय वमन
भौमभीमातरे भृगुः ॥३६॥ (म० सू०) भूमिलाभोर्यसपति सतोषो मित्रसगतिः ॥ सर्वत्र
सुखमाप्नोति भौमभीमातरे रविः ॥३७॥ (म० च०) याम्या दिशि भवेत्लाभः
सितवस्त्रविभूषणम् ॥ सतिद्धिः सर्वकार्पाजा भौमभीमातरे शशी ॥३८॥

मंगल विदशा फल

(म० म०) मंगल अपनी विदशा मे शत्रुभय, घोर कलह, अकस्मात् भय, रक्तस्राव तथा अपमृत्यु करता है॥३०॥ (म० रा०) मंगल विदशा मे राहु बन्धन, राजभय, धन हानि, निकृष्ट भोजन तथा शत्रु से नित्य कलह करता है॥३१॥ (म० बृ०) मंगल विदशा मे गुरु, मति-नाश तथा दुःख, सताप, कलह, चिन्तित कार्य की हानि करता है॥३२॥ (म० श०) मंगल की विदशा मे शनि स्वामी नाश, पीडा, धन हानि, महाभय, विकलता, कलह तथा कष्ट करता है॥३३॥ (म० बु०) मंगल विदशा मे बुध बुद्धिनाश, धनहानि, ज्वर, अन्नघन, वस्त्र का नाश करता है॥३४॥ (म० के०) मंगल की विदशा मे केतु आलस्य, सिरदर्द, रोग, अपमृत्यु, राजभय तथा शस्त्र से घात करता है॥३५॥ (म० शु०) मंगल विदशा मे शुक्र चाण्डाल से सकट की उत्पत्ति, भय राज से भय शस्त्र से भय, अतिसार और वमन की बिमारी करता है॥३६॥ (म० सू०) मंगल विदशा मे सूर्य भूमि लाभ, धन लाभ, सन्तोष, मित्र से सगति सर्वत्र सुख की प्राप्ति करता है॥३७॥ (म० च०) मंगल विदशा मे चन्द्रमा दक्षिण दिशा मे लाभ, श्वेत वस्त्र प्राप्ति भूषण प्राप्ति तथा सर्व कार्य सिद्ध करता है॥३८॥

अथ राहुविदशाफलमाह

(रा० रा०) बधन बहुधा रोगो बहुघात मुहूर्द्धयम् ॥ अकस्मादापदो यान्ति भय राहोर्जलाग्रित ॥३९॥ (रा० बृ०) सर्वत्र लभते लाभ गजाश्व च धनागमम् ॥ राजसन्मानद राज्य भवेद्राह्वन्तरे गुरु ॥४०॥ (रा० श०) बधन जायते घोर सुखहानिर्महूर्द्धयम् ॥ प्रत्यह वातपीडा च राहो राह्वतरे शनि ॥४१॥ (रा० बु०) सर्वत्र बहुधा लाभ स्त्रीसमग्र विशेषत ॥ परदेशगत सिद्धि राहो राह्वतरे बुध ॥४२॥ (रा० के०) बुद्धिनाशो भय विघ्न धनहानिर्महूर्द्धयम् ॥ सर्वत्र फलहोद्वेगी राहो राह्वतरे मिथी ॥४३॥ (रा० शु०) योगिनीभ्यो मय भूयादश्वहानि कुभोजनम् ॥ स्त्रीनाश कुलज शोक राहो राह्वतरे रित ॥४४॥ (रा० सू०) ज्वररोगो महाभीति पुत्रपौत्रादिपीडनम् ॥ अत्यमृत्यु प्रमादश्च राहो राह्वतरे रवि ॥४५॥ (रा० च०) उद्वेगकलही चित्ता मानहानिर्महूर्द्धयम् ॥ पितुर्विकसता देहे राहो राह्वतरे शशी ॥४६॥ (रा० म०) भगदरकृता पीडा रक्तपित्तप्रपीडनम् ॥ अर्थहानिर्महोद्वेगी राहो राह्वतरे कुज ॥४७॥

राहु विदशा फल

(रा० रा०) राहुविदशा मे राहु बधन, रोग, घात, मित्र मे भी भय, तथा अचानक आपत्ति और जल तथा अग्नि से भय करता है॥३९॥ (रा० बृ०) राहु विदशा मे गुरु सर्वत्र लाभकारी, हाथी, घोडा, धन सम्पत्तियुक्त राजा के समान प्रतिष्ठा करता है॥४०॥ (रा० श०) राहु विदशा मे शनि, घोर बधनप्रदाता सुखहानिकारक, भयदाता, प्रतिदिन वात वेदना कारक है॥४१॥ (रा० बु०) राहु विदशा मे बुध-प्राय सर्वत्र लाभकारक, स्त्री के समान भीष्म प्रकृति तथा परदेश मे सिद्धि देता है॥४२॥ (रा० के०) राहुविदशा मे केतु-बुद्धिनाश, भय, विघ्न, धनहानि, महान् भय, सर्वत्र कलह तथा उद्वेग करता है॥४३॥

॥५७॥ (श० बु०) बुद्धिनाशः कलेर्भीतिमन्नपानाविहानिकृत् ॥ घनहानिर्भयं शत्रोः शनेः शन्यंतरे बुधः ॥५८॥ (श० के०) बंधुशत्रुगृहे जातो धर्षहानिर्बहुलुघा ॥ चित्ते चिन्ता भयं त्रासः शनेः सौरांतरे शिखी ॥५९॥ (श० शु०) वितिते फलितं वस्तु कल्याणं स्वजनं जने ॥ मनुष्यकृतितो लाभः शनेः शन्यंतरे मृगुः ॥६०॥ (श० सू०) राजतेजोधिकारित्वं स्वगृहे जायते कलिः ॥ ज्वरादिव्याधिपीडा च कोणे कोणांतरे रविः ॥६१॥ (श० चं०) स्फीतबुद्धिर्महारंभो मंदतेजा बहुव्ययः ॥ बहुस्त्रीभिः समं भोगं कोणे कोणांतरे शशी ॥६२॥ (श० मं०) तेजोहानिः पुत्रघातो वह्निभीती रिपोर्मयम् ॥ वातपित्तकृता पीडा कोणे कोणांतरे कुजः ॥६३॥ (श० रा०) धननाशो वस्त्रहानिर्भूमिनाशो भयं भवेत् ॥ विदेशापमर्णं मृत्युः कोणे कोणांतरे कुजः ॥६४॥ (श० वृ०) गृहेषु स्त्रीकृतं छिद्रं ह्यसमर्थो निरीक्षणे ॥ अथ वा कलिमुद्भेगं शनेः सौरांतरे गुरुः ॥६५॥

शनि विदशा फल

(श० श०) शनि विदशा मे शनि-देहपीडा, कलह तथा शूद्र से भय, विदेश की यात्रा तथा दुःख कारक होता है ॥५७॥ (श० बु०) शनि विदशा मे बुध- बुद्धिनाश, कलह का भय, अन्नपान आदि मे हानि, धन हानि तथा शत्रु से भय करता है ॥५८॥ (श० के०) शनि विदशा मे केतु-बन्धु तथा शत्रु के घर मे आवागमन आचार धर्म की हानि, भूख से व्याकुलता, चिन्ता, भय, त्रास कारक है ॥५९॥ (श० शु०) शनि विदशा मे शुक्र-विचार मात्र से वस्तु की प्राप्ति, स्वजन से कल्याण, मानवनिर्मित वस्तु से लाभ कारक होता है ॥६०॥ (श० सू०) शनि विदशा मे सूर्य-राजा के समान तेजस्वी, परिवार मे कलह, ज्वर आदि व्याधि तथा पीडा कारक होता है ॥६१॥ (श० च०) शनिविदशा मे चन्द्र-शुद्ध बुद्धि, बड़े कार्यों का आरम्भ, मन्द तेज, विशेष सर्व, अनेक स्त्रियो से प्रेम कारक है ॥६२॥ (श० मं०) शनि विदशा मे मंगल-तेज की हानि, पुत्र द्वारा घात, अग्नि से भय, शत्रु से भय, वात, पित्त से पीडा करता है ॥६३॥ (श० रा०) शनि विदशा मे राहु-धननाश, वस्त्रहानि, भूमिनाश भय, तथा विदेश यात्रा और मृत्यु कारक है ॥६४॥ (श० वृ०) शनि विदशा मे गुरु-घर मे स्त्री के दुष्प्रिय को जानता हुआ भी देखने मे असमर्थ, यदि देखे तो कलह, उद्वेग कारक होता है ॥६५॥

अथ बुधविदशाफलमाह

(बु० बु०) बुद्धिर्बिचार्यताभो वा वस्त्रलामो महत्सुखम् ॥ स्वर्णादिघनलाभः स्यात्सौम्यसौम्यांतरे बुधः ॥६६॥ (श० के०) कठिनाग्रस्य संप्राप्तिरुदरे रोगसंभवः ॥ कामले रक्तपित्तं च सौम्यसौम्यांतरे शिखी ॥६७॥ (बु० शु०) उत्तरस्यां प्रवेत्ताभो हानिः स्यात्तु चतुष्पदात् ॥ अधिकारान्महाप्रीतिः सौम्ये सौम्यांतरे मृगुः ॥६८॥ (बु० सू०) तेजोहानिर्बिबेद्योगस्तनुपीडा तु मंदवी ॥ जायते चित्तवैकल्यं सौम्यसौम्यांतरे रविः ॥६९॥ (बु० चं०) स्त्रीलाभश्चार्थसंपत्तिः कन्यालामो महदनम् ॥ समते सर्वतः सौम्यं सौम्यसौम्यांतरे शशी ॥७०॥ (बु० मं०) धर्मधीर्घनसंप्राप्तिश्चैराग्न्यादिप्रपीडनम् ॥ रक्तवस्त्र शस्त्रघातः सौम्यसौम्यांतरे कुजः ॥७१॥ (बु० रा०) कलहो जायते स्त्रीभिरकस्माद्भयसंभवः ॥ राजशस्त्रकृता भीतिः सौम्यसौम्यांतरे तमः ॥७२॥ (बु० वृ०)

राज्यं राज्याधिकारी वा पूजा राजसमुद्भवा ॥ विद्याधराग्रगुल्मश्च सौम्यसौम्यांतरे गुरुः ॥७३॥ (बु० श०) वातपित्तमहापीडा देहघातसमुद्भवा ॥ धननाशमवाप्नोति सौम्यसौम्यांतरे शनिः ॥७४॥

बुध विदशा में फल

(बु० बु०) बुध विदशा मे बुध-बुद्धि, विद्या, धन का लाभ, वस्त्रलाभ, महान् सुख, सुवर्ण आदि धन का लाभ करता है ॥६६॥ (बु० के०) बुध विदशा मे केतु-कठिन अन्नभक्षण से पेट में रोष होता है। पीलिया रोग तथा रक्तपित्त रोष होता है ॥६७॥ (बु० शु०) बुध विदशा मे शुक्र-उत्तरदिशा मे लाभ हो और चोपाया पशु से हानि, अधिकार से प्रीति उत्पन्न करता है ॥६८॥ (बु० सू०) बुध विदशा मे सूर्य-तेजो हानि, रोग, शरीरपीडा, अग्निमाय तथा चित्त मे विकलता करता है ॥६९॥ (बु० च०) बुध विदशा मे चन्द्रमा-स्त्रीलाभ, धनलाभ, कन्यालाभ तथा बहुत धन का लाभ और सुख करता है ॥७०॥ (बु० म०) बुध विदशा मे मंगल-धर्मबुद्धि, धन लाभ, चोर तथा अग्नि-जन्य हानि, रक्तवस्त्र से लाभ तथा शस्त्र चाकू आदि से घात करता है ॥७१॥ (बु० रा०) बुध विदशा मे राहु-स्त्री जाति से कलह तथा अकस्मात् भय होता है। राजा तथा शस्त्र से भय कारक है ॥७२॥ (बु० वृ०) बुध विदशा मे गुरु-राज्य देता है या राज्याधिकारी करता है। तथा राजा से पूजा होती है। विद्याधारण मे समर्पता तथा गुल्मरोगकारक है ॥७३॥ (बु० श०) बुध विदशा मे शनि-वात, पित्त जनित पीडा या घात जनित पीडा हो। तथा धननाश कारक होता है ॥७४॥

अथ केतोर्विदशाफलमाह

(के० के०) अपो समुद्भवोऽकस्माद्देशांतरसमागमः ॥ धननाशोऽल्पमृत्युश्च केतोः केत्वंतरे शिखी ॥७५॥ (के० शु०) म्लेच्छभीत्यर्थनाशो वा नेत्ररोगः शिरोव्यथा ॥ हानिश्चतुष्पदानां च केतोः केत्वंतरे मृगुः ॥७६॥ (के० सू०) मित्रैः सह विरोधश्च स्वल्पमृत्युः पराजयः ॥ मतिभ्रंशो विवादश्च केतोः केत्वंतरे रविः ॥७७॥ (के० च०) अन्ननाशो घसीहानिर्देहपीडा मतिभ्रमः ॥ आमवातादिवृद्धिश्च केतोः केत्वंतरे शशी ॥७८॥ (के० म०) शस्त्रघातेन पातेन पीडितो वद्विपीडया ॥ नीचाद्भूती रिपोः शंका केतोः केत्वंतरे कुजः ॥७९॥ (के० रा०) कामिनीभ्यो भय भूयातया वीरिसमुद्भवः ॥ क्षुद्रादपि भवेद्भूतिः केतोः केत्वंतरे तमः ॥८०॥ (के० गु०) धनहानिर्महोत्पातो वस्त्रमिन्नविनाशनम् ॥ सर्वत्र लभते क्लेश केतोः केत्वंतरे गुरुः ॥८१॥ (के० श०) गोमहिष्यादिमरणं देहपीडा मृत्युद्वयः ॥ स्वल्पात्मलाभकरणं केतोः केत्वंतरे शनिः ॥८२॥ (के० बु०) बुद्धिनाशो महोद्देशो विद्याहानिर्महाभयम् ॥ कार्यसिद्धिर्न जायेत केतोः केत्वंतरे बुधः ॥८३॥

केतु विदशा फल

(के० के०) केतु विदशा मे केतु-अकस्मात् जलोदर आदि बीमारी, देशान्तरयात्रा, धननाश, अल्पमृत्यु कारक है ॥७५॥ (के० शु०) केतु विदशा मे शुक्र-म्लेच्छ जाति से भय, धननाश, नेत्ररोग, सिरदर्द, चौपाये पशुओं की हानि कारक होता है ॥७६॥ (के० सू०) केतु

विदशा मे सूर्य-मित्रो के साथ विरोध, स्वल्पमृत्यु, पराजय, बुद्धिनाश, विवाद कारक होता है॥७७॥ (के० च०) वेतु विदशा मे चन्द्रमा-अघ्ननाश, यशोहानि, देहपीडा, मतिभ्रम, आमवात रोग की वृद्धि करता है॥७८॥ (के० म०) वेतु विदशा मे मंगल-शस्त्र घात से घा गिरने से पीडित हो तथा अग्निभय, नीच जाति से भय, शत्रु से भय करता है॥७९॥ (के० रा०) केतु विदशा मे राहु स्त्रियो से भय, तथा शत्रु से भय, एवं मामूली आदमी मे भी डरता है॥८०॥ (के० वृ०) वेतु विदशा मे गुरु-धन हानि, महान् उत्पात, वस्त्रनाश, मित्रता की हानि, सर्वत्र क्लेश कारक है॥८१॥ (के० श०) वेतु विदशा मे शनि-गाय भैरव आदि की मृत्यु, देह पीडा, मित्र की हत्या माधारण लाभकारक है॥८२॥ (के० बु०) वेतु विदशा मे बुध-बुद्धिनाश, महान् उद्वेग, विद्याहानि महाभय कार्यहानि कारक है॥८३॥

अथ शुक्रविदशाफलमाह

(शु० शु०) श्वेताश्वस्त्रमुक्ताद्या स्वर्णमाणिक्यसम्भव ॥ लभते मुन्दरीं नारीं शुके शुक्रातरे सित ॥८४॥ (शु० सू०) घातज्वर शिरपीडा राज पीडा रिपोरपि ॥ जायते स्वल्पलामोपि शुके शुक्रातरे रवि ॥८५॥ (शु० च०) वन्याजन्म नृपाल्लामो वस्त्रामरणसपुत्र ॥ राज्याधिकारसंप्राप्ति शुके शुक्रातरे शशी ॥८६॥ (शु० म०) रक्तपितादिरोगश्च क्लहस्ताडन भवेत् ॥ महान्क्लेशो भवेदत्र शुके शुक्रातरे वृज ॥८७॥ (शु० वृ०) महद्द्रव्य महद्राज्य वस्त्रमुक्तादिभूषणम् ॥ गजाश्वादिपदप्राप्ति शुके शुक्रातरे गुर ॥८८॥ (शु० रा०) क्लहो जायते स्त्रीभिरवस्माद्रूपसम्भव राजत शत्रुत पीडा शुके शुक्रातरे तम ॥८९॥ (शु० श०) शरोद्घागसंप्राप्तिलोहमायतिलादिबन्ध ॥ लभते स्वल्पपीडादि शुके शुक्रातरे शनि ॥९०॥ (शु० बु०) धनज्ञानमहात्सामो राजराज्याधिकारता ॥ निक्षेपाडनलामोपि शुके शुक्रातरे बुध ॥९१॥ (शु० के०) अल्पमृत्युर्महाघोराद्देशादेशातरागम लामोऽपि जायते माये शुके शुक्रातरे मित्रा ॥९२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वमण्डे सूर्याष्टपदशास्त्रवचन नाम
द्विचत्वारिंशोऽध्याय ॥४२॥

अथ सूक्ष्मदशाफलमाह

लघेश्वरो रंघ्रपतिश्च मुक्तौ वृषे वृषांशे वृषमे वृषाणे ॥ स्थितौ भवेतां यदि तौ वृषे
याताभिर्मितौ भरणस्य वेद्यौ ॥२॥ वृषे पुग्मांशगौ तौ चेद्भूतलूकेन मृतिर्नृणाम् ॥
कर्कांशगौ तौ चेद्भूतलूकेन जले मृतिः ॥३॥ वृषे सिंहांशगौ तौ चेद्दद्यान्नाद्याततो मृतिः ॥
कन्यांशगौ तौ चेत्कपिना नाश्र संशयः ॥४॥ वृषे तुलांशगौ तौ चेद्दद्यान्नाद्भूतिं वदेत्तदा ॥
मीमांशगौ तौ चेद्भूतलूके चिन्ता व्यथी भवेत् ॥५॥ वृषे चापांशगौ तौ चेदभ्येन च मृतिं वदेत्
वृषे कुम्भांशगौ तौ चेद्दंतव्यापारतो भयम् ॥६॥ वृषे मृगांशगौ तौ चेन्महिषेण मृतिं वदेत्
वृषे कुम्भांशगौ तौ चेद्गोलांगूलान्मृतिं वदेत् ॥७॥ वृषे मयांशगौ तौ चेदजबस्ताद्भूयं भवेत्
एवं संचिंत्य मतिमान्भ्रात्रादीनां मृतिं वदेत् ॥८॥

सूक्ष्म दशा फल

लघेश तथा अष्टमेश दोनो वृषराशि मे वृष नवाश मे या वृष द्रेशकाण हो तो वृषभ के घा
से मरण होता है। तथा लघेशाष्टमेश वृषराशि मे निपुन नवाश मे हो तो भालू से मृत्यु होत
है, वृष के कर्काश मे हो तो जल मे मगर से मृत्यु हो॥३॥ वृष के सिंहाश मे हो तो व्या
आदि के आघात से (आगे इसी प्रकार) कन्याश मे हो तो वानर से मृत्यु हो॥४॥ तुलाश
व्याघ्र से, वृश्चिकाश मे हो तो अन्तर मे चिन्ता दुःख हो॥५॥ घनाश मे हो तो घोड़े के काए
मृत्यु हो। कुम्भाश मे हो तो हाथीदात के व्यापार के कारण मृत्यु हो॥६॥ मकराश मे हो तो
महिष (भैंसे) से मृत्यु हो तथा कुम्भाश मे गौ की घूछ की आघात से भी मृत्यु सम्भव है॥७॥
मीनाश मे बकरे से भय हो॥ इसी प्रकार भ्राता आदि के लिये भी भावेश और उसके अष्टमेश
के उपर्युक्त नवमाश की स्थिति से विचार करना॥८॥

अथ सूर्यादिग्रहाणां सूक्ष्मदशाफलमाह

(सू० सू०) नृणां भूमिपरित्यागो विगमं प्राणनाशनम् ॥ स्थानतारो महाहानि
सूर्यसूक्ष्मदशाफलम् ॥९॥ (सू० चं०) देवब्राह्मणमक्तिश्च नित्यकर्मरतस्तथा ॥ सुप्रति
सर्वमित्रैश्च रवेः सूक्ष्मगते विद्यौ ॥१०॥ (सू० म०) क्रूरकर्मरतिस्तिग्मशत्रुभिः परिपीडनम् ।
रक्तप्लावदितोगश्च रवेः सूक्ष्मगते क्रुजे ॥११॥ (सू० रा०) चौराप्रविषमीतिश्च रणे भंग
पराजयः ॥ दानधर्माविहीनश्च रवेः सूक्ष्मगते ह्यगौ ॥१२॥ (सू० वृ०) नृपसत्कारराजार्ह
सेवकैः परिपूजितः ॥ राजबभ्रुगतः शांतः सूर्यसूक्ष्मगते गुरौ ॥१३॥ (सू० श०)
चौर्यसाहसकर्मार्थं देवब्राह्मणपीडनम् ॥ स्थानच्छ्रुतिं मनोदुःखं रवेः सूक्ष्मगते शनौ ॥१४॥
(सू० बु०) दिव्यांबरदिव्यविभूतिश्च दिव्यस्त्रीपरिमोगता ॥ अक्षितार्पसिद्धिश्च रवेः सूक्ष्म गं
बुधे ॥१५॥

रत रहता है, दुष्ट शत्रुओं से पीड़ित होता है तथा रक्त साव आदि रोग होता है॥११॥ (सू० सू० सू० रा०) चौर अग्नि तथा विष से पीड़ा हो, रण में भग तथा पराजय हो, दान धर्म से हीन हो॥१२॥ (सू० ३ बृ०) राजयोग्य सत्कार सेवकरो से पूजा तथा राजसभा में प्रवेश और आत्म सतोष प्राप्त हो॥१३॥ (सू० ३ श०) चोरी आदि में उत्साह, देव ब्राह्मण की पीडा, स्थान हानि तथा मन में दुःख होता है॥१४॥ (सू० ३ बु०) सुन्दर वस्त्राभूषण प्राप्ति, सुन्दरनारी भोग तथा अचिन्तित कार्य सिद्ध होता है॥१५॥

(सू० के०) गुरुतार्तिविमोक्षाश्च मृत्युदारभयस्तथा ॥ स्वचित्सेवकसङ्घो रवे सूर्यमगते ध्वजे ॥१६॥ (सू० शु०) पुत्रमित्रकलत्रादिसौख्यसपन्न एव च ॥ नानाविधा च सपत्नी रवे सूर्यमगते मृगौ ॥१७॥

(सू० ३ के०) अधिक बीमारी, हानि स्त्री तथा नोकर से भय तथा सेवक से कभी २ मेल भी रहे॥१६॥ (सू० ३ शु०) स्त्री, पुत्र, मित्र आदि से सुख हो तथा अनेक प्रकार की सम्पत्ति प्राप्त हो॥१७॥

अथ चन्द्रसूक्ष्मदशाफलमाह

(च० च०) भूषण भूमिलाभश्च सन्मान नृपपूजनम् ॥ तामसत्वं गुरुत्वं च चन्द्रसूक्ष्मदशाफलम् ॥१८॥ (च० म०) दुःख शत्रुविरोधश्च कुक्षिरोग पितुर्मृति ॥ वातपित्तकफोद्रेक शशिसूक्ष्मगते बुधे ॥१९॥ (च० रा०) क्रोधन मित्रबधूना देशत्यागो धनक्षय ॥ विदेशाग्निगडप्रान्तिरिदुसूक्ष्मगतेप्यहौ॥२०॥ (च० बृ०) छत्रचामरसमुक्त वैभव पुत्रसपत्न्य ॥ सर्वत्र सुखमाप्नोति चन्द्रसूक्ष्मगते गुरौ ॥२१॥ (च० श०) राजोपश्रवनाश स्याद्व्यवहारे धनक्षय ॥ चौरत्वं विप्रभीतिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते शनौ ॥२२॥

चन्द्रसूक्ष्मदशाफल

(च० ३ च०) आभूषण तथा भूमिका लाभ, सन्मान, राजपूजा, तामसी बुद्धि तथा अभिमान होता है॥१८॥ (च० ३ म०) दुःख शत्रु से विरोध, कुक्षिरोग तथा पिता की मृत्यु एवं सन्निपात आदि बीमारी होती है॥१९॥ (च० ३ रा०) मित्र बन्धुओं पर क्रोध, देशत्याग, धनहानि, विदेश में कैद होना आदि होता है॥२०॥ (च० ३ बृ०) छत्र चामर से युक्त विभव, पुत्र आदि सम्पत्ति, तथा सर्वत्र सुख प्राप्त होता है॥२१॥ (च० ३ श०) राज से भय धन का नाश हो व्यापार में हानि हो चोरी तथा ब्राह्मण से भी भय हो॥२२॥

(च० बु०) राजमान वस्तुलाभो विदेशाद्वाहनादिकम् ॥ पुत्रपौत्रसमृद्धिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते बुधे ॥२३॥ (च० के०) आत्मनो दृष्टि हनन सत्यभूद्भूषादिभिः ॥ अग्निचौर्यादिभीतिः स्याच्चन्द्रसूक्ष्मगते ध्वजे ॥२४॥ (च० शु०) विवाहो भूमिलाभश्च वस्त्राभरणवैभवम् ॥ राक्षसतामश्च कीर्तिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते मृगौ॥२५॥ (च० सू०) क्लेशात्क्लेशकार्यनाश पशुछान्दधनक्षय ॥ गात्रवैद्यम्यभूमिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते रवौ ॥२६॥

(च० ३ बु०) राज से सन्मान, वस्तु लाभ, विदेश के वाहन का लाभ, पुत्र पौत्र समृद्धि प्राप्त होती है॥२३॥ (च० ३ वे०) अपनी वृत्तिका नाश, सस्य (वनस्पति) शृंग आदि से हानि, अग्नि चोर आदि से भय हो॥२४॥ (च० ३ शु०) विवाह, भूमिलाभ, वस्त्र आभूषण सम्पत्ति की प्राप्ति, राज्यलाभ और यशलाभ होता है॥२४॥ (च० ३ सू०) दुःख के बाद दुःख तथा कार्यहानि, पशुधान्य और धन का क्षय, शारीरिक स्वास्थ्य की विपमता होती है॥२६॥

अथ भौमसूक्ष्मदशाफलमाह

(म० म०) भूमिहानिर्भनं खेदो ह्यपस्मारी च बधुयुक् ॥ पुरस्त्रोममनस्तापो भौमसूक्ष्मदशाफलम् ॥२७॥ (म० रा०) अगदोपो जनाद्भूति प्रमदावशनाशनम् ॥ वह्निर्सर्पभय घोर भौमसूक्ष्मगतेष्वहौ ॥२८॥ (म० वृ०) देवपूजारतिश्चात्र मन्त्राम्युत्थानतत्प रः ॥ लोकपूज्य प्रमोद च भौमसूक्ष्मगते गुरौ ॥२९॥

भौमसूक्ष्मदशाफल

(म० ३ म०) भूमि की हानि, मन में खेद अपस्मार (मृगी) की बीमारी बधुसाहाय्यलाभ, मन में क्षोभ और दुःख होता है॥२७॥ (म० ३ रा०) किसी अग में दोग, भय, स्त्रीहानि, अग्नि सर्प से भय होता है॥२८॥ (म० ३ वृ०) देवताओं की पूजा, भक्ति मन्त्र पुरश्चरणरति, लोक पूजा तथा सुख होता है॥२९॥

(म० ३ श०) बधनान्मुच्यते बद्धो धनधान्यपरिच्छद ॥ मृत्युार्थबहुल श्रीमान्भौमे सूक्ष्मगते शनौ ॥३०॥ (म० बु०) वाहन छत्रसयुक्त राज्यभोगपर सुखम् ॥ कासश्वासादिका पीडा भौमसूक्ष्मगते बुधे ॥३१॥ (म० के०) पर प्रेरितबुद्धिश्च सर्वत्रापि च गर्हिता ॥ अशुवि सर्वकालेषु भौमसूक्ष्मगते ध्वजे ॥३२॥ (म० शु०) इष्टस्त्रीभोगसप्ततिरिष्टभोजनसंग्रह ॥ इष्टार्थश्चैव लाभश्च भौमसूक्ष्मगते भृगौ ॥३३॥ (म० सू०) राजद्वेषो द्विजात्वलेश कार्याभिप्रायवचकः ॥ लोकेऽपि निघतामेति भौमसूक्ष्मगते रवौ ॥३४॥ (म० च०) शुद्धत्व धनसंप्राप्तिर्वैषाह्यवत्सल ॥ व्याधिना परिनूयेत् भौमसूक्ष्मगते विद्यौ ॥३५॥

(म० ३ श०) वैदी वैद से दूरता है, धन, धान्य वस्त्र प्राप्त होते हैं, मोबर मित्र आदि तथा सम्पत्तिशाली होता है॥३०॥ (म० ३ बु०) छत्रयुक्त वाहन, राजासम्मान, सुख के गाय श्वारा खासी आदि बीमारी भी होती है॥३१॥ (म० ३ वे०) दूसरे की सम्पत्ति में रहना, सर्वत्र निन्दा होना, सदा मलीन रहना होता है॥३२॥ (म० ३ शु०) इच्छानुसार स्त्री, सम्पत्ति, भोग, भोजन, वस्त्र, धन, लाभ आदि होते हैं॥३३॥ (म० ३ सू०) राजासे द्वेष, शाहणमें क्लेश, कार्य की हानि, ठगी तथा लोभ में निन्दा होती है॥३४॥ (म० ३ च०) शुद्धता, धनलाभ, देवब्राह्मण पूजा तथा रोगी रहता है॥३५॥

अथ राहोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(रा० रा०) लोकोपद्रवबुद्धिश्च स्वकार्ये मतिविभ्रमः ॥ मूल्यता चित्तबोध स्याद्वाहो

सूक्ष्मदशाफलम् ॥३६॥ (रा० वृ०) दीर्घरोगी दरिद्रश्च सर्वेषां प्रियदर्शनः ॥ दानधर्मरतः
शस्तो राहो सूक्ष्मगते गुरौ ॥३७॥ (रा० रा०) कुमारार्त्तुस्तितोप्रश्नं दुष्टं परसेवकः ॥
असत्सगमतिर्मूर्खो राहो सूक्ष्मगते शनौ ॥३८॥ (रा० शु०) स्त्रीसमोगमतिर्बाग्यी
लोकसमाबन्धुः ॥ अग्रमिच्छस्तनुग्लानी राहो सूक्ष्मगते बुधे ॥३९॥ (रा० के०) माधुर्यं
मानहानिश्च बधनं चाप्रमारकम् ॥ पारुष्यं जीवहानिश्च राहो सूक्ष्मगते ध्वजे ॥४०॥ (रा०
शु०) बधनान्मुच्यते बद्धः स्थानमानार्थसंक्षयः ॥ कारणाद्द्रव्यलाभश्च राहो सूक्ष्मगते भृगौ
॥४१॥ (रा० सू०) व्यक्तार्थो गुल्मरोगश्च क्रोधहानिस्तथैव च ॥ बाहनादिमुष्टं सर्वं राहो
सूक्ष्मगते रवौ ॥४२॥ (रा० च०) मणिं रत्नघनावाप्तिर्विद्योपासनशीलवान् ॥ देवार्चनपरो
भक्त्या राहो सूक्ष्मगते विधौ ॥४३॥ (रा० म०) निर्जितं जनविद्रावो जने क्रोधश्च बधनात्
॥ चौर्यशीलरतिर्नित्यं राहो सूक्ष्मगते कुजे ॥४४॥

राहुसूक्ष्मदशाफलः

(रा० ३ रा०) जनसमाजं मे उपद्रवकारी अपने कार्यं मे अस्थिरता तथा किकर्तव्य
विमूढता होती है ॥३६॥ (रा० ३ वृ०) दीर्घरोगी, दरिद्री तथा जनप्रिय एव दान धर्म मे
रुचि होती है ॥३७॥ (रा० ३ श०) कुमार्यो, दुष्टबुद्धि, उग्रस्वभाव, दुष्ट, परसेवी, असत्सगी
तथा मूढ होता है ॥३८॥ (रा० ३ बु०) अतिकामी, वाचाल लोक निन्दानुक्त बहुभोजी तथा
मत्तिन रहता है ॥३९॥ (रा० ३ के०) माधुर्य, मानहानि, बधन उपद्रव, कठोरता एव जीव
हानि भी होती है ॥४०॥ (रा० ३ शु०) बन्धन से मुक्ति स्थान मान धन का सञ्चय तथा
कारण से द्रव्य का लाभ होता है ॥४१॥ (रा० ३ सू०) ववासीर तथा गुल्मरोग
क्रोधरहितता एव बाहनादि का मुष्ट होता है ॥४२॥ (रा० ३ च०) मणि रत्न धन की
प्राप्ति, विद्याव्यसन तथा उपासनाशीलता एव भक्ति से देव पूजनकारी होता है ॥४३॥ (रा०
३ म०) पराजय, जनसमूह से निरादर तथा बन्धुओं पर क्रोध होता है एव सदा चोरी मे चित्त
रहता है ॥४४॥

अथ गुरोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(वृ० वृ०) शोकनाशो घनाधिक्यमग्रिहोत्र शिवार्चनम् ॥ बाहना छत्रसमुक्त
जीवसूक्ष्मदशाफलम् ॥४५॥ (वृ० श०) व्रतहा सूर्य वर्तौ च विदेशे वसुनाशनम् ॥ विरोधो
घननाशश्च गुरो सूक्ष्मगते शनौ ॥४६॥ (वृ० के०) जान विमवपाडित्ये शास्त्रयोक्ता
शिवार्चनम् ॥ असिहोत्र गुरोर्भक्तिर्गुरो सूक्ष्मगते ध्वजे ॥४७॥ (वृ० शु०) रोगान्मुक्तिं सुख
भोगं घनधान्यसमागमम् ॥ पुत्रदारादिकं लीक्ष्य गुरो सूक्ष्मगते भृगौ ॥४८॥ (वृ० सू०)
वातपित्तप्रकोपश्च भ्रूजोद्रेकस्तु वारुणः ॥ रसव्याधिकृतं शूलं गुरो सूक्ष्मगते रवौ ॥४९॥
(वृ० च०) छत्रचामरसमुक्त वैभव पुत्रसपदः ॥ नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरो सूक्ष्मगते विधौ
॥५०॥ (वृ० म०) स्त्रीजनान्च विषोत्पत्तिर्बधनं चातिनिग्रहम् ॥ देशातरगमो भ्रान्तिर्गुरो
सूक्ष्मगते कुजे ॥५१॥ (वृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतः स्याच्चौरैरपहृतः महत् ॥
सर्ववृश्चिकदायकः गुरो सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ॥५२॥

सत्प्रहानिः केतोः सूक्ष्मगते शनौ ॥७८॥ (के० बु०) नानाविधजनाप्तिश्च विप्रयोगोऽरि-
पीडनम् ॥ अर्थसंपत्समृद्धिश्च केतोः सूक्ष्मगते बुधे ॥७९॥

केतु सूक्ष्मदशा फल

(के० ३के०) पुत्रस्त्रीजन्यदुःखतथाशारीरिकअस्वस्थताएवदरिद्रताकेकारणभियुवृत्तिसे
जीवनयापन होता है ॥७१॥ (के० ३ शु०) रोगका नाश तथा धनलाभ एव गुरु तथा ब्राह्मण
का भक्त, इष्टमित्रो से मेल रहता है ॥७२॥ (के० ३ मू०) युद्धमे विनाश तथा अन्य देश मे
प्रवास, मित्रो से विपत्ति, तथा क्लेश होता ॥७३॥ (के० ३ च०) दास और दासिया तथा
सम्पत्ति हो, युद्ध से लाभ और जय हो एव शुभ कीर्ति हो ॥७४॥ (के० ३ म०) रहने के स्थान
मे भय, घोड़े आदि चौपाया तथा चोर दुष्ट आदि से पीडा और गुल्मपीडा तथा सिरदर्द होता
है ॥७५॥ (के० ३ रा०) साम मसुर की मृत्यु तथा दुष्ट स्त्री के सहयोग से लघुता तथा रधिर
का वमन होता है ॥७६॥ (के० ३ वृ०) वैर विरोध तथा अवस्मात् राजभय एव पशु तथा
खेत का नाश और अरिष्ट होता है ॥७७॥ (के० ३ श०) व्यर्थ की पीडा तथा अत्यन्त
कमजोर सन्तान की उत्पत्ति, लघन, स्त्री से विरोध, सत्य की हानि होती है ॥७८॥
(के० ३बु०) अनेक अतिथि का आगमन, शत्रुपीडा, धन, सम्पत्ति की वृद्धि होती है ॥७९॥

अथ शुक्र सूक्ष्मदशा फलमाह

(शु० शु०) शत्रुहानिर्महत्सील्यं शकरालयसम्भवम् ॥ तडागकूपनिर्माणं शुक्रसूक्ष्मदशाफलम्
॥८०॥ (शु० मू०) उरस्तापो भ्रमश्चैव गतागतविचेष्टितम् ॥ स्वचिन्ताभ्रमः
स्वचिन्तानिर्भूगोः सूक्ष्मगते रवौ ॥८१॥ (शु० च०) आरोग्य धनसंपत्तिः कार्यलाभो गतागतैः
॥ विद्याबुद्धिविवृद्धिः स्याद्भूगोः सूक्ष्मगते विधौ ॥८२॥ (शु० म०) जडत्व रिपुवैषम्यं
वेशभ्रमो महद्भयम् ॥ व्याधिदुःखसममुत्पत्तिर्भूगोः सूक्ष्मगते कुजे ॥८३॥ (शु० रा०)
राज्याग्निर्षजा भीतिर्बधुनाशो गुरुव्यथा ॥ स्थानच्युतिर्महाभीतिर्भूगोः सूक्ष्मगतेऽप्यहो
॥८४॥ (शु० वृ०) सर्वत्र कार्यलाभश्च क्षेत्रार्थविभवोऽप्रति ॥ वणिग्भूतेर्महावणिग्भूगोः
सूक्ष्मगते गुरौ ॥८५॥ (शु० श०) शत्रुपीडा महद्दुःखं चतुष्पादविनाशनम् ॥
स्वगोशत्रुहानिः स्याद्भूगोः सूक्ष्मगते शनौ ॥८६॥ (शु० बु०) बाधयादिषु संपत्तिर्व्यवहारो
धनोन्नतिः पुत्रद्वारा दितः सौख्यं भूगोः सूक्ष्मगते बुधे ॥८७॥ (शु० के०) अग्निरोगो महापीडा
मुखनेत्रशिरोव्यथा ॥ सचिन्तापात्नः पीडा भूगोः सूक्ष्मगते ध्वजे ॥८८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे मूर्धादिसूक्ष्मदशाफलकथनं
नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥

शुक्र सूक्ष्मदशा फल

(शु० ३ शु०) शत्रु की हानि तथा महान् गुप्त, शिवमन्दिर निर्माण, वृक्ष तानाव निर्माण
होता है ॥८०॥ (शु० ३ मू०) छाती मे जलन, बुद्धि मे भ्रम, निद्रिष्ट पद रहना, कभी लाभ
कभी हानि होती है ॥८१॥ (शु० ३ च०) आरोग्यता, धन सम्पत्ति की प्राप्ति, व्यापार मे
लाभ, यात्रा मे लाभ, विद्या बुद्धि की वृद्धि होती है ॥८२॥ (शु० ३ म०) देश मे जडता, शत्रु मे

पूर्वपक्षे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

विषमता, देशत्याग, महान् भय, व्याधि और दुःख की उत्पत्ति होती है॥८३॥ (शु० ३ रा०) मे राज्य, अग्नि, सर्प से भय, बन्धु का नाश, माता पिता की व्यथा, स्थान से हटना तथा महान् भय होता है॥८४॥ (शु० ३ वृ०) सर्वत्र कार्य की सिद्धि तथा लाभ, खेत व्यापार और विभव की उत्पत्ति तथा व्यापार से विपुल लाभ होता है॥८५॥ (शु० ३ श०) शत्रु से पीडा, महान् दुःख, पशु का नाश, बन्धु तथा माता पिता की हानि होती है॥८६॥ (शु० ३ वृ०) बन्धु में सम्पन्नता तथा मेल, व्यापार से बहुलाभ, स्त्रीपुत्र से सुख होता है॥८७॥ (शु० ३ के०) मन्दाग्नि की बीमारी, मुख, नेत्र और सिर में व्यथा, सन्निहित धन की हानि, शरीर में पीडा होती है॥८८॥

इति श्रीबृहत्पाराशर हो० शास्त्रे पू० भावप्रका० सूक्ष्मदशाफलकथन
नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः॥४३॥

अथ प्राणदशानयनमाह

स्वसूक्ष्माख्यदशायाश्च पिण्डे विषटिकात्मके ॥ स्वाब्देस्तष्टे पुनस्तष्टे विसोत्तरशतेन च ॥ लब्ध
विषटिका ज्ञेया विपत्तानि ततः परम् ॥१॥

प्राणदशानयन

सूक्ष्मदशा की घटी, पल सख्या को पलात्मक पिण्ड (एकरस) करके जिम ग्रह की प्राणदशा देखना है उसके दशा वर्ष से गुणा करके १२० का भाग देने से सख्य पल, विपल प्राप्त होगी। पलाक ६० से अधिक होने पर ६० का भाग देने पर घटी पल, विपल ये तीन अंक प्राप्त होते हैं॥१॥

| अथ सूर्यसूक्ष्मदशा तन्मध्ये प्राणदशाचक्रम् | | | | | | | | | | |
|--|-----|----|----|-----|-----|----|-----|-----|-----|-----|
| ग्रहा | शु० | च० | म० | रा० | वृ० | श० | बु० | के० | गु० | मो० |
| घटी | ० | १ | ० | २ | २ | २ | २ | ० | २ | १६ |
| पला० | ४८ | २१ | ५६ | २५ | ९ | ३३ | १७ | ५६ | ४२ | १२ |
| विपला० | १६ | ० | ४२ | ४८ | ३६ | ५४ | ४२ | ४२ | ० | ० |

अथ प्राणदशामाह

शरीरनाशो मरणाधिपेन युक्तो मृगेद्रेण मृगाधिपारो ॥ तयोर्विपारो भयमानूनो मृनि मर्षात्तदा

प्राग्द्वारचिताः ॥२॥ सिंह कन्याशंगौ तौ चेत्कफकंपादितो मृतिः ॥ मृगराजे तुलासंस्थे तयोर्भुक्ता मृतिं वदेत् ॥३॥ अल्पांशगो मृग्रे वा तयोदयि सरीसृपात् ॥ चापाशंगो मृग्रे तु तदग्रांश्च मृतिं वदेत् ॥४॥ मृगांशगौ तौ सिंहे च तयोदयि सरान्मृतिः ॥ कुंभाशंगौ यदा तौ च मृगराजनृपाद्भयम् ॥५॥ मीनांशकण्ठौ सिंहे सारंगाद्भयमादिशेत् ॥ सिंहे मेवांशगौ तौ चेद्गोमायोर्भयमादिशेत् ॥६॥ वृषाशंगौ तौ सूर्यर्क्षे तयोदयि शुनो मृतिः ॥ युग्माशंगौ तौ सूर्यर्क्षे गोसांगूलाद्भयं भवेत् ॥७॥

प्राणदशा का नियमन में उपयोग

लघ्नेश अष्टमेश युक्त सिंह राशि नवाश मे अथवा सूर्य नवाश मे हो तो उनकी 'प्राणदशा' मे मूषक या सर्प के काटने से मृत्यु होती है ॥२॥ यदि लघ्नेशाष्टमेश दोनो सिंह राशि मे कन्या के नवमाश मे हो तो कफवृद्धि या कपरोग से मृत्यु होती है। सिंह राशि के तुलाश मे हो तो ॥३॥ उनकी 'प्राणदशामे' सर्प से मृत्यु होती है। सिंह राशि मे धनुराश मे हो तो भी सर्पवर्ग से ही मृत्यु होती है ॥४॥ सिंह राशि मे मकर नवाश मे हो तो उनकी 'प्राणदशा' मे गधे से मृत्यु होती है। इसी प्रकार कुभाश मे होने से सिंह से मृत्यु होती है ॥५॥ और सिंह राशि मे मीन नवाश मे हो तो सारग (पक्षी) से मृत्यु होती है। सिंह मे मेष नवाश मे हो तो 'गोमायु' गीदह (सियार) से मृत्यु होती है ॥६॥ सिंह मे वृष नवाश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे कुत्ते के काटने से मृत्यु होती है। इसी तरह सूर्यराशि मे मिथुनाश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे 'गोलागूल' (गी या बैल की पूँछ) से मृत्यु हो ॥७॥

कर्काशंगौ तु सिंहे तु ह्यग्निबद्धाद्गृहान्मृतिः ॥ एवं भ्रात्रादिभावानां तत्तद्भुक्ता फलं वदेत् ॥८॥ बेहाघिणौ मृत्युपतिश्च युक्तभ्रापांशगौ कर्मुकराशंगौ चेत् ॥ बाये तयोर्बाजिकृतं च मृत्यु वदति तत्कालविदो महांतः ॥९॥ चाये मृगांशगौ तौ चेत्सारंगाद्भयमादिशेत् ॥ ह्ये कुंभाशंगौ तौ चेद्राहाद्भयमादिशेत् ॥१०॥ ह्ये मीनांशगौ तौ चेत्पाके नकाद्भय तयोः ॥ मेवांशगौ तौ चाये तु तयोदयि चतुष्पदात् ॥११॥ ह्ये वृषांशगौ तौ चेद्रासभाद्भयमादिशेत् ॥१२॥ युग्माशंगौ ह्यंगेषु वानराद्भयमादिशेत् ॥ कर्काशंगौ ह्यंगे तु चालुना भयमेतयोः ॥१३॥ सिंहाशंगौ ह्यंगेषु जंबुकाद्भयमेतयोः ॥ कन्याशंगौ ह्यंगे तु सांगूलांमृतिरुच्यते ॥१४॥ तुलाशंगौ ह्यंगे तु सोष्टान्मरणमेतयोः ॥ अल्पांशगा ह्यंगेषु तयोः पाके सरीसृपात् ॥ एव भ्रात्रादिभावानां फलमाहुर्मनीषिणः ॥१५॥

सिंह मे कर्काशमे हो तो घर मे आग लगने से जलकर मृत्यु हो। यह निर्देश मात्र है। जैसे अष्टमेश लघ्नेश से जातक का निधनकारण कहा है, इसी प्रकार भ्राता, पिता, माता आदि के लिए भी उनके भावेश और अष्टमेश से पूर्वोक्त योग होने पर उपर्युक्त कारणानुसार मृत्यु होती है ॥८॥ (अब तक सिंह राशिगत का फल कहा। अन्य राशि का फल बहते हैं) लघ्नेश और अष्टमेश धनुराशि मे धनु नवाश मे ही हो तो उनकी प्राणदशा मे घुडसवारी से मृत्यु होती है ॥९॥ तथा ये दोनो धनुराशि मे मीनाश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे मगरमच्छ से मृत्यु भय है। मेष के नवाश मे चौपाये पशु से भय ॥११॥ धनुराशि के वृषाश मे गधे से भय। मिथुनाश मे वानर से भय हो ॥१२॥ कर्काश मे हो तो मूषक से भय हो ॥१३॥ धनु राशि मे

पूर्वपक्षे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

सिंहाश मे हो तो सियार से भय हो। कन्याश मे हो तो गोलागूल से भय हो॥ १४॥ इसी प्रकार धनुराशि मे तुलाश मे हो तो पत्थर की चोट से मृत्यु हो। धनुराशि के अश अत्यल्प हो तो सर्प से मृत्यु। इसी तरह भ्राता आदि के लिए भी विचार करना॥ १५॥

विलप्रयोनेर्धननायकश्च मृगे मृगांशे च गतेऽथ युक्ते ॥ भुक्तोऽथ प्रीतिश्च भवेन्नराणां विवाहहेतुः प्रवर्तन्ति संतः ॥ १६॥ कुम्भाशगौ मृगांशे च भल्लूकाद्भयमेतयोः ॥ अर्धाशगौ मृगांशे च सारंगाद्भयमेतयोः ॥ १७॥ पुष्पांशगौ मृगांशे तौ हरिणान्मृतिरेतयोः ॥ कर्काशगौ मृगांशे तौ तपोदधि मृतिर्गजात् ॥ १८॥ कौर्प्याशगौ मृगांशे तौ मकुलान्मृतिरेतयोः ॥ चापांशगौ मृगांशे तौ मार्जारान्मृतिरेतयोः ॥ १९॥ एवं निश्चित्य मतिमान्भ्रात्रादीनां फल वदेत् ॥ २०॥

तथा लग्नेश और धनेश, मकर राशिके मकरनवाशमे हो तो मनुष्योमे प्रीति और विवाहका कारण होता है॥ १६॥ तथा लग्नेश अष्टमेश मकरराशि के कुभाश मे हो तो भालू से भय हो। मकर और मीनाश मे हो तो सारंग से भय होता है॥ १७॥ मकरराशि मे मिथुनाश मे हो तो हरिण से भय होता है। कर्काश मे हो तो हाथी से मृत्यु होती है॥ १८॥ मकरराशि मे वृश्चिकाश मे हो तो नेबले से मृत्यु ॥ और धनुराश मे हो तो बिडाल से मृत्यु होती है॥ १९॥ इसी प्रकार से भ्राता आदि के लिए भी फल निश्चय करो॥ २०॥

नोट—यहां सिंह, धन, मकर राशियो मे नवाशो का फल निर्देश किया है। इसी ढंग से अन्य राशि तथा अन्य नवाश मे भी एव अन्यान्य भावो के लिए भी समझना चाहिए। 'प्राणदशा' का उपयोग ऊपर दिखाये गये 'मृत्यु' विचार मे ही मुख्य है॥

अथ सूर्यप्राणदशाफलमाह

(सू० सू०) सौमित्रविविधा बाधा मोक्षं विवमेक्षणम् ॥ सूर्यप्राणदशायां तु मरण कृच्छ्रमादिशेत् ॥ २१॥ (सू० च०) सुख भोजनसंपत्तिः संस्कारो नृपवैभवम् ॥ उदारविहृतामित्र रवेः प्राणगते विधौ ॥ २२॥ (सू० मं०) मूषोपद्रवमन्यार्थं ब्रह्मनाशो महद्भयम् ॥ महत्पुण्यप्राप्ती रवेः प्राणगते कुजे ॥ २३॥ (सू० रा०) अप्रोद्भवा महापीडा ॥ २४॥ (सू० बृ०) विषोत्पत्तिर्विरोधतः ॥ अर्धाधिराजभिः क्लेशं रवेः प्राणगतेऽप्यहो ॥ २५॥ (सू० श०) बध्न प्राणनाशश्च वित्तोद्वेगस्तथैव च ॥ बहुबाधा महाहानी रवेः प्राणगते शनौ ॥ २६॥ (सू० बु०) राजाप्रभोगः सततं राजतांछनतत्पदम् ॥ आत्मा सतर्पयेदेव रवेः प्राणगते बुधे ॥ २७॥ (सू० के०) अन्योन्यं कलहश्चैव वसुहानिः पराजयः ॥ गुहस्त्रीबन्धुहानिश्च सूर्यप्राणगते ध्वजे ॥ २८॥ (सू० रा०) रामपूजा घनाधिक्य स्त्रीपुत्रादिभवं सुखम् ॥ अन्नपानादिभोगादि सूर्यप्राणगते मृगौ ॥ २९॥

सूर्यसूर्य में प्राणदशा फल

(सू० सू०) सूर्य प्राणदशा मे व्यभिचारिणी स्त्री द्वारा विप्रयोग, नेत्रपीडा तथा कष्ट से मृत्यु होती है॥ २१॥ (सू० च०) चन्द्र प्राणदशा में सुख, भोजन मे श्रेष्ठता, शुभ संस्कार, राजसमान वैभव तथा उदारभाव होते हैं॥ २२॥ (सू० मं०) राज से भय, अन्य

निमित्त से धनहानि, महान् भय, उन्नति तथा प्राप्ति होती है॥२३॥ (सू० ४ रा०) राहु
 की प्राणदशा में अन्नजात पीडा, विशेषरूप से विष की उत्पत्ति, अग्नि तथा राजभय होता
 है॥२४॥ (सू० ४ वृ०) गुरुप्राणदशा में नाना विद्या तथा धन सम्पत्ति व्यापार तथा यात्रा से
 लाभ तथा निज देश में वास होता है॥२५॥ (सू० ४ श०) सूर्य में जनि की प्राणदशा हो तो
 धन, प्राणहानि, चित्तोद्वेग, बहुबाधा, महान् हानि होती है॥२६॥ (सू० ४ बु०) सूक्ष्मसूर्य में
 बुध प्रा० द० हो तो राजा से निरन्तर प्राप्ति तथा राजचिह्नयुक्त पद एवं आत्मसन्तोष होता
 है॥२७॥ (सू० ४ के०) सूक्ष्म सूर्य में केतु की प्रा० द० हो तो परिवार में कलह, धनहानि,
 पराजय, स्त्री बहु माता पिता की हानि होती है॥२८॥ (सू० ४ शु०) सूर्य सूक्ष्म में शुक्र की
 प्रा० द० हो तो राज पूजा, अधिक धन, स्त्री पुत्र से सुख तथा उत्तम खान पान प्राप्त होता
 है॥२९॥

अथ चन्द्रप्राणदशाफलमाह

(च० च०) योगाम्यास समाधि च वेशिकत्व च पश्यति ॥ इति सर्व समासेन
 चन्द्रप्राणदशाफलम् ॥३०॥ (च० म०) जय कुष्ठ बधुनाश रक्तस्रावाम्बहूयम् ॥
 भूतावेशादि जायेत चन्द्रप्राणगते कुजे ॥३१॥ (च० रा०) सर्पभीतिविशेषेण भूतोपद्रववासदा
 ॥ दृष्टिक्षोभो मतिभ्रशश्चन्द्रप्राणगतेऽप्यहौ ॥३२॥ (च० वृ०) धर्मवृद्धि क्षमाप्राप्तिर्देवब्राह्मण
 पूजनम् ॥ सौभाग्य प्रियदृष्टिश्च चन्द्रप्राणगते गुरौ ॥३३॥ (च० श०) सहसा देहपतन
 शत्रूपद्रववेदना ॥ अधत्व च धनक्षतिश्चन्द्रप्राणगते शनी ॥३४॥ (च० बु०)
 चामरच्छत्रसंप्राप्ति राज्यलाभो नृपातत ॥ समस्य सर्वभूतेषु चन्द्रप्राणगते बुधे ॥३५॥ (च०
 के०) शस्त्राप्रिरिपुजा पीडा विपाधि कुक्षिरोगता ॥ पुत्रदारवियोगश्च चन्द्रप्राणगते शिखी
 ॥३६॥ (च० शु०) पुत्रमित्रकलप्राप्तिर्विदेशाच्च धनगम ॥ मुत्तसपत्तिर्यश्च चन्द्रप्राणगते
 मृगी ॥३७॥ (च० सू०) तोषदोषी प्रदोषी च प्राणहानिर्मनोविषम् ॥ वेशत्यागी
 महाभीतिश्चन्द्रप्राणगते रवी ॥३८॥

सूक्ष्म चन्द्र में प्राणदशा फल

(च० ४ च०) सूक्ष्म चन्द्र में चन्द्र की प्राणदशा हो तो योगाम्यास से समाधि प्राप्त हो,
 गुरु का साक्षात्कार हो। यह सब संक्षेप में हो॥३०॥ (च० ४ म०) सूक्ष्म च० में मंगल की
 प्रा० द० हो तो जय, कुष्ठ, बधुनाश तथा रक्तस्राव से महान् भय एवं भूतावेश आदि होता
 है॥३१॥ (च० ४ रा०) सूक्ष्म च० में राहु प्रा० द० हो तो विशेष करके सर्पभय तथा भूतो का
 उपद्रव नेत्र में विकार बुद्धि में विषमता होती है॥३२॥ (च० ४ वृ०) सूक्ष्म चन्द्र में गुरु की
 प्रा० द० हो तो धर्म की वृद्धि, क्षमा प्राप्ति, देव ब्राह्मण की पूजा, सौभाग्य और प्रिय दृष्टि
 होती है॥३३॥ (च० ४ श०) सूक्ष्म चन्द्र में जनि की प्राणदशा हो तो देह में जडता, शत्रुओं
 का उपद्रव तथा शरीर में पीडा, नेत्र विकार तथा धनहानि होती है॥३४॥ (च० ४ बु०) सूक्ष्म
 च० में बुध की प्रा० द० हो तो छत्र चामर की प्राप्ति, राज्य लाभ तथा सबमें महान् भाव
 होता है॥३५॥ (च० ४ के०) सूक्ष्म चन्द्र में केतु की प्रा० द० हो तो अस्त्र अग्नि जन्तु से पीडा
 विष से भय, कुक्षिरोग तथा स्त्री पुत्र से वियोग होता है॥३६॥ (च० ४ शु०) सूक्ष्म च० में

पूर्वसूत्रे चतुर्भस्वारिगोऽभ्यास

शुक्र की प्रा० द० हो तो स्त्री पुत्र मित्र की प्राप्ति तथा विदेश से धनलाभ एवं सुख सम्पत्ति होती है॥३७॥ (च० ४ सू०) सूक्ष्म चन्द्र में सूर्य प्रा० द० हो तो तीव्ररोगी तथा वातादि दोषवान्, प्राणहानि, मन में विकार, देशत्याग एवं महान् भय होता है॥३८॥

अथ भौमप्राणदशाफलमाह

अथ भौमप्राणदशाफलनिर्णयः ॥
 (म० मं०) क्षेत्रहानिमनोदुःखम् हृत्पित्तारादिरोगकृत् ॥ परिवारकुला पीडा भौमे
 प्राणदशाफलम् ॥३९॥ (म० रा०) विच्युतः सुतदारविबधूपद्वपोदितः ॥ प्राणत्यागो
 विषेणैव भौमप्राणगतेष्यहौ ॥४०॥ (म० घृ०) देवार्चनपरः श्रीमान्मित्रानुष्ठानतत्परः ॥
 पुत्रपौत्रसुखावाप्तिर्भौमप्राणगते गुरौ ॥४१॥ (म० श०) अप्रिदाद्या भवेन्मृत्युर्यनाशः
 पदच्युतिः ॥ बहुमिर्बधुताहानिर्भौमप्राणगते शनौ ॥४२॥ (म० बु०) दिव्याबरसमुत्पत्तिर्दि-
 व्यामरणभूषितः ॥ दिव्यागनायाः संप्राप्तिर्भौमप्राणगते कुघे ॥४३॥ (म० के०)
 पतनोत्पातपीडा च नेत्रश्रोमो महद्दुःखम् ॥ भुजगाद्विषहानिश्च भौमप्राणगते ध्वजे ॥४४॥
 (म० शु०) धनधान्यादिसंपत्तिर्लोकपूजा सुखागमाः ॥ नानामोगैर्भवेद्रोगी भौमप्राणगते भृगौ
 ॥४५॥ (म० सू०) ज्वरोन्मादः क्षयर्यश्च राजविबेहसमयः ॥ दीर्घरोगी दरिद्रः
 स्याद्भौमप्राणगते रवौ ॥४६॥ (म० च०) भोजनादिसुखप्रतिर्विस्त्रामरणवाञ्छितम् ॥
 शीतोष्णव्याधिपीडा च भौमप्राणगते विधौ ॥४७॥

सूक्ष्म भौम मे प्राणदशा फल

सूक्ष्म भौम मे प्राणदशा फल
(म० ४ म०) मंगल अपनी प्राणदशा मे खेत की हानि, मन मे चिन्ता तथा मृगी आदि रोग एव परिवार के कलह से क्लेश होता है॥३९॥ (म० ४ रा०) सूक्ष्म मंगल मे राहु की प्राणदशा हो तो स्त्री पुत्र बन्ध आदि के उपद्रव से दुःखित होकर विष के द्वारा प्राणहानि करता है॥४०॥ (म० ४ वृ०) सूक्ष्म भौम मे गुरु की प्रा० द० हो तो देवपूजा निरत, श्रीमान् तथा मन्त्रानुष्ठान मे तत्पर एव पुत्र पौत्र सुख की प्राप्ति होती है॥४१॥ (म० ४ श०) सूक्ष्म भौम मे शनि की प्राणदशा हो तो मृत्यु या धननाश एव पदच्युति, तथा बन्धुओं से बन्धुता की हानि होती है॥४२॥ (म० ४ बु०) सूक्ष्म भौम मे बुध की प्राणदशा हो तो सुन्दर वस्त्र प्राप्ति तथा सुन्दर आभरण युक्तता एव सुन्दरी स्त्री प्राप्त होती है॥४३॥ (म० ४ के०) सूक्ष्म भौमदशा मे केतु की प्राणदशा हो तो ऊपर से गिरन की पीडा, नेत्र मे विकार, महान् भय तथा सर्प निमित्त से हानि होती है॥४४॥ (म० ४ शु०) सूक्ष्म म० म शुक्र की प्रा० द० हो तो धनधान्य आदि संपत्ति लोक मे पूजा सुख की प्राप्ति तथा नाना भोगों की प्राप्ति होती है॥४५॥ (म० ४ मू०) सूक्ष्म भौ० दशमे सूर्य वा प्राणान्तर हो तो ज्वर जन्य उन्माद, घनघण्ट, राजद्वेष, दीर्घरोगी और वरिष्ठ होता है॥४६॥ (म० ४ च०) सूक्ष्म भौ० दशमे चन्द्र की प्राणदशा हो तो इच्छित भोजन वस्त्र आभरण की प्राप्ति तथा सर्द गरम विकार होता है॥४७॥

अय राहो. प्राणदशाफलमाह

(रा० रा०) अन्नागने विरक्तश्च विषमीतिस्तथैव च ॥ साहसाद्धननाशश्च राहो

पूर्वकथ्ये चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

(वृ० च०) छत्र चामरसंयुक्त वैभवं पुत्रसम्पदः ॥ नेत्रकुसिगता पीडा गुरोः प्राणगते विधौ ॥६३॥ (वृ० मं०) स्त्रीजनाच्च विद्योत्पत्तिः बंधनं चातिनिग्रहः ॥ देशान्तरगमो भ्रान्ति गुरोः प्राणगते कुजे ॥६४॥ (वृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतश्च चौरैरपहं धनम् ॥ सर्पबुद्धि-
वंशश्च गुरोः प्राणगते प्यहौ ॥६५॥

सूक्ष्म गुर्वन्तर प्राणदशा फल

(वृ० ४ वृ०) गुरु की प्राणदशा में शोकनाश, धनवृद्धि, हवन, शिवपूजा तथा छत्रयुक्त सवारी होती है ॥५७॥ (वृ० ४ श०) गुरु में शनि की प्राणदशा हो तो बतहानि, धर्मलोप, विदेशगमन, धनहानि, बन्धुविरोध होता है ॥५८॥ (वृ० ४ वृ०) सूक्ष्मगुरु में बुध की प्राणदशा हो तो विद्या में अनुराग लोक में यश, धन की प्राप्ति, स्त्री पुत्र से सुख होता है ॥५९॥ (वृ० ४ के०) सूक्ष्म गु० दशा में केतु की प्रा० द० हो तो ज्ञान प्राप्ति, ऐश्वर्य, शास्त्रज्ञान, शिवपूजा, अग्निहोत्र तथा गुरुभक्ति होती है ॥६०॥ (वृ० ४ शु०) सूक्ष्म गुरु में शुक की प्राणदशा हो तो रोग से मुक्ति, सुखभोग, धनधान्यवृद्धि, पुत्रस्त्री से सुख होता है ॥६१॥ (वृ० ४ सू०) सूक्ष्म गु० दशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो त्रिदोष जनित व्याधि तथा आमरस जन्म शूल होता है ॥६२॥ (वृ० ४ च०) सूक्ष्म गुरु में चन्द्र की प्राणदशा हो तो छत्र चामरयुक्त वैभव, पुत्र तथा सम्पत्ति, नेत्र और कुक्षि में विकार होता है ॥६३॥ (वृ० ४ म०) सूक्ष्म गुरु में भीम की प्राणदशा हो तो स्त्री द्वारा विष प्रयोग, बधन, स्नेहकरनिग्रह, देशान्तर यात्रा तथा भ्रान्ति होती है ॥६४॥ (वृ० ४ रा०) सूक्ष्म गुर्वन्तर में राहु की प्रा० द० हो तो जातक, रोगों से दुस्ती, चोरी से धन की हानि, सर्प बिष्णू से दशन होता है ॥६५॥

अथ शनिप्राणदशाफलमाह

(श० श०) ज्वरेण ज्वलिता कांतिः कुष्ठरोगोदरादिषु ॥ जसाप्रिकृतमृत्युः स्यान्मंदप्राणदशाफलम् ॥६६॥ (श० बु०) धन धान्यं च मांगल्यं व्यवहारमिपूजनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनैः प्राणगते बुधे ॥६७॥ (श० के०) मृत्युवेदनदुःखं च मृतोपद्रवसंभवः ॥ परवाराभिभूतत्वं शनैः प्राणगते ध्वजे ॥६८॥ (श० शु०) पुत्रार्थविभक्तेः सौख्यं क्षितिमानादिना सुखम् ॥ अग्निहोत्रं विवाहश्च शनैः प्राणगते मृगौ ॥६९॥ (श० सू०) अक्षिपीडा शिरोव्याधिः सर्परात्रुभयं भवेत् ॥ अर्धहानिर्महास्तेषां शनैः प्राणगते रवौ ॥७०॥ (श० च०) आरोग्यं पुत्रलाभश्च शांतिपौष्टिकवर्धनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनैः प्राणगते विधौ ॥७१॥ (श० मं०) गुल्मरोगः शत्रुभौतिर्मृगया प्राणनाशनम् ॥ सर्वाग्निशत्रुतो भीतिः शनैः प्राणगते कुजे ॥७२॥ (श० रा०) देशत्यागो मृषाकूटिर्मोहनं विषमक्षणम् ॥ चातपितकृता पीडा शनैः प्राणगते प्यहौ ॥७३॥ (श० वृ०) तेजापत्यं भूमितामं संगमं स्वजनैः सह ॥ गौरवं भूपतम्भानं शनैः प्राणगते गुरौ ॥७४॥

शनि प्राणदशा फल

(श० ४ श०) शनि अपनी प्राणदशा में ज्वर की तीव्रता कुष्ठ तथा जमींदार रोग एवं जन-
— विष से मृत्यु करता है ॥६६॥ (श० ४ बु०) सूक्ष्म जनि में बुध की प्रा० द० हो तो धन,

पूर्वसन्धे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः

(बृ० चं०) छत्र चामरसंयुक्त वैभवं पुत्रसम्पदः ॥ नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः प्राणगते विधौ ॥६३॥ (बृ० मं०) स्त्रीजनारुच विषोत्पत्तिः बंधनं चातिनिग्रहः ॥ देशान्तरगमो भ्रान्ति गुरोः प्राणगते कुजे ॥६४॥ (बृ० रा०) व्याधिभिः परिसूतश्च चौरैरपहृ धनम् ॥ सर्पवृश्चिक-
वंशश्च गुरोः प्राणगते प्यहो ॥६५॥

सूक्ष्म गुर्वन्तर प्राणदशा फल

(बृ० ४ बृ०) गुरु की प्राणदशा में शोकनाश, धनवृद्धि, हवन, शिवपूजा तथा छत्रयुक्त सवारी होती है ॥५७॥ (बृ० ४ श०) गुरु में शनि की प्राणदशा हो तो व्रतहानि, धर्मलोप, विदेशगमन, धनहानि, बन्धुविरोध होता है ॥५८॥ (बृ० ४ बु०) सूक्ष्मगुरु में बुध की प्राणदशा हो तो विद्या में अनुराग लोक में यश, धन की प्राप्ति, स्त्री पुत्र से सुख होता है ॥५९॥ (बृ० ४ के०) सूक्ष्म गु० दशा में केतु की प्रा० द० हो तो ज्ञान प्राप्ति, ऐश्वर्य, शास्त्रज्ञान, शिवपूजा, अग्निहोत्र तथा गुरुभक्ति होती है ॥६०॥ (बृ० ४ शु०) सूक्ष्म गुरु में शुक्र की प्राणदशा हो तो रोग से मुक्ति, सुखभोग, धनधान्यवृद्धि, पुत्रस्त्री से सुख होता है ॥६१॥ (बृ० ४ सू०) सूक्ष्म गु० दशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो त्रिदोष जनित व्याधि तथा आमरस जन्य शूल होता है ॥६२॥ (बृ० ४ च०) सूक्ष्म गुरु में चन्द्र की प्राणदशा हो तो छत्र चामरयुक्त वैभव, पुत्र तथा सम्पत्ति, नेत्र और कुक्षि में विकार होता है ॥६३॥ (बृ० ४ मं०) सूक्ष्म गुरु में मीम की प्राणदशा हो तो स्त्री द्वारा विष प्रयोग, बधन, स्नेहकरनिग्रह, देशान्तर यात्रा तथा भ्रान्ति होती है ॥६४॥ (बृ० ४ रा०) सूक्ष्म गुर्वन्तर में राहु की प्रा० द० हो तो जातक, रोगों से दुस्ती, चोरी से धन की हानि, सर्प बिच्छू से दशन होता है ॥६५॥

अथ शनिप्राणदशाफलमाह

(श० श०) ज्वरेण ज्वलिता कांतिः कुष्ठरोगोदरादिरह् ॥ जलाप्रकृतमृत्युः स्यान्मंत्रप्राणदशाफलम् ॥६६॥ (श० बु०) धनं धान्यं च मांगल्यं व्यवहारामिपूजनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनैः प्राणगते बुधे ॥६७॥ (श० के०) मृत्युवेदनदुःखं च मृतोपद्रवसंभवः ॥ परदारामिमृतत्वं शनैः प्राणगते ध्वजे ॥६८॥ (श० शु०) पुत्रार्थविभवः सौख्यं जितिमानादिना सुखम् ॥ अग्निहोत्र विवाहश्च शनैः प्राणगते मृगौ ॥६९॥ (श० सू०) अक्षिपीडा शिरोव्याधिः सर्पशत्रुभयं भवेत् ॥ अर्षहानिर्महाक्लेशः शनैः प्राणगते रवौ ॥७०॥ (श० चं०) आरोग्यं पुत्रत्वामश्च शांतिपौष्टिकबर्धनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनैः प्राणगते विधौ ॥७१॥ (श० मं०) गुल्मरोगः शत्रुभीतिर्मृगया प्राणनाशनम् ॥ सर्पाग्निशत्रुतो भीतिः शनैः प्राणगते कुजे ॥७२॥ (श० रा०) देशत्यागो नृपाङ्गीतिर्मोहनं विषमक्षणम् ॥ वातपित्तकृता पीडा शनैः प्राणगतेप्यहो ॥७३॥ (श० बृ०) क्षेपापत्यं भूमिलाभं सगमं स्वजनैः सह ॥ गौरवं नृपसम्मानं शनैः प्राणगते गुरौ ॥७४॥

शनि प्राणदशा फल

(श० ४ श०) शनि अपनी प्राणदशा में ज्वर की तीव्रता कुष्ठ तथा जसोदर रोग एवं जल या अग्नि से मृत्यु करता है ॥६६॥ (श० ४ बु०) सूक्ष्म शनि में बुध की प्रा० द० हो तो धन,

धान्य तथा मंगल कार्य हो, व्यापार वृद्धि से यश और देव ब्राह्मण की पूजाभक्ति होती है॥६७॥ (श० ४ के०) सूक्ष्मशनि मे के० की प्रा० द० हो तो मृत्यु के समान कष्ट तथा भूतबाधा एवं परस्त्री मे आसक्ति होती है॥६८॥ (श० ४ शु०) सूक्ष्म शनि मे शुक्र का अन्तर हो तो धन पुत्रो से सुख, ऐश्वर्यवृद्धि भूमि तथा सम्मान प्राप्ति, अग्निहोत्र एवं विवाह आदि मंगल कार्य होते है॥६९॥ (श० ४ सू०) सूक्ष्म शनिदशा मे सूर्य प्राणदशा हो तो नेत्र पीडा, सिर मे दर्द, सर्प तथा शत्रु से भय, घन हानि तथा क्लेश होता है॥७०॥ (श० ४ च०) सूक्ष्म श० मे चन्द्र की प्रा० द० हो तो आरोग्य, पुत्रलाभ, गान्ति तथा पुष्टि की वृद्धि, देव ब्राह्मण भक्ति होती है॥७१॥ (श० ४ म०) सूक्ष्म शनि मे भौम की प्राणदशा हो तो गुल्मरोग तथा शत्रु से भय, शिकार खेलने मे प्राणहानि अथवा सर्प, असि और जघ्नुकृत पीडा होती है॥७२॥ (श० ४ रा०) सूक्ष्म श० दशा मे राहु की प्राणदशा हो तो देशत्याग, राजभय, मोह, विपक्षण, तथा बात पित्त जनित पीडा होती है॥७३॥ (श० ४ वृ०) सूक्ष्म श० दशा मे गुरु की प्रा० द० हो तो सेनापतित्व, भूमिलाभ, स्वजनो से मेल तथा राजमान्यता का गौरव होता है॥७४॥

अथ बुधप्राणदशाफलमाह

(बु० बु०) आरोग्यं सुखसंपत्तिर्धर्मकर्मादिसाधनम् ॥ समत्वं सर्वभूतेषु बुधप्राणदशाफलम् ॥७५॥ (बु० के०) दहनं चौर विद्वान्ग परमाधिं विषोद्भूतम् ॥ देहातकरणे दुःखं बुधप्राणगते ध्वजे ॥७६॥ (बु० शु०) प्रभुत्व धनसंपत्तिः कीर्तिर्धर्मः शिवार्चनम् ॥ पुत्रदारादिक सौख्यं बुधप्राणगते मृगौ ॥७७॥ (बु० सू०) अतर्दाहो ज्वरोन्मादौ बाधवान्तरति स्त्रिया ॥ पापनिस्तोषसंपत्तिर्बुधप्राणगते रवौ ॥७८॥ (बु० च०) स्त्रीलाभश्चार्थसंपत्तिः कन्यालाभो घनागमः ॥ लभते सर्वतः सौख्यं बुधप्राणगते विधौ ॥७९॥ (बु० म०) पतितः कुक्षिरोगी च दतनेत्रादिजा व्यया ॥ अप्राप्ति प्राणसदेहो बुधप्राणगते कुजे ॥८०॥ (बु० रा०) वस्त्राभरणसंपत्तिर्विद्यो विप्रवैरिता ॥ सन्निपातोद्भूत दुःखं बुधप्राणगतेप्यहौ ॥८१॥ (बु० गु०) गुरुत्व धनसंपत्तिर्विद्या सद्गुणसंग्रहः ॥ व्यवसायेन सत्सामो बुधप्राणगते गुरौ ॥८२॥ (बु० श०) चौर्येण निघनप्राप्तिर्विघ्नतत्त्व दरिद्रता ॥ याचकत्वं विशेषेण बुधप्राणगते शनौ ॥८३॥

बुध प्राणदशा फल

(बु० ४ बु०) बुध अपनी प्राणदशा मे आरोग्यता, सुख, सम्पत्ति, धर्मकार्य की सम्पन्नता तथा सबसे प्रेमभाव होता है॥७५॥ (बु० ४ के०) सूक्ष्म बु० मे केतु की प्रा० द० हो तो अग्नि से हानि चोरी से धाव, विष जनित पीडा, मृत्युसम दुःख होता है॥७६॥ (बु० ४ शु०) सूक्ष्म बुध मे शुक्र की प्रा० द० हो तो सम्मान, धन सम्पत्ति, यश, धर्मवृद्धि, शिवाराधन, स्त्री पुत्र से सुख होता है॥७७॥ (बु० ४ सू०) कलेजे मे जलन, ज्वर तथा उन्माद, बाधव तथा स्त्री मे प्रीति, पाप तथा चोरी मे सम्पत्ति की प्राप्ति होती है॥७८॥ (बु० ४ च०) सूक्ष्म बु० मे चन्द्र की प्राणदशा हो तो धन तथा स्त्री की प्राप्ति, कन्यालाभ, धनलाभ तथा सर्वप्रकार सुख होता है॥७९॥ (बु० ४ म०) सूक्ष्म बु० दशा मे मंगल की प्रा० द० हो तो समाज मे पतित हो, कुक्षिरोगी, दात तथा नेत्र मे पीडा हो, बवासीर तथा प्राणघातक कष्ट हो॥८०॥ (बु० ४

॥९३॥ (शु० सू०) लोकप्रकाशकीर्तिश्च सुतसौख्यविवर्जितः ॥ उष्णादिरोगश्च दुःख
शुक्रप्राणगते रवी ॥९४॥ (शु० चं०) देवार्चने कर्मरतिर्मन्त्रतोषणतत्परः ॥
घनसौभाग्यसंपत्तिः शुक्रप्राणगते विद्यौ ॥९५॥ (शु० मं०) ज्वरो मसूरिकास्कोटकंडूविषिद-
कादिकाः ॥ देवब्राह्मणपूजा च शुक्रप्राणगते कुजे ॥९६॥ (शु० रा०) नित्य शत्रुकृता पीडा
नेत्रकुक्षिरुजादयः ॥ विरोध सुहृदां पीडा शुक्रप्राणगतेप्यहौ ॥९७॥ (शु० वृ०)
आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्रस्त्रीधनवैभवम् ॥ छत्रवाहनसंप्राप्तिः शुक्रप्राणगते गुरौ ॥९८॥ (शु०
श०) राजोपद्रवजाभीतिः सुखहानिर्महाक्षयः ॥ नीचैः सह विषादं च शुक्रप्राणगते शनौ
॥९९॥ (शु० बु०) सतोष राजसन्मान नानादिभूमिसपदः ॥ नित्यमुत्साहवृद्धिं
स्याच्छुक्रप्राणगते बुधे ॥१००॥ (शु० के०) जीवितात्मपशोहानिर्घनघान्पपरिच्छदः ॥
त्यागभोगधनानि स्युः शुक्रप्राणगते प्वजे ॥१०१॥

१

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे सूर्यादिप्राणदशा फलकथन
नामचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४४॥

शुक्र प्राणदशा फल

(शु० ४ शु०) अपनी प्राणदशा में शुक्र ज्ञान और ईश्वर भक्ति, सन्तोष एवं कर्म की
सफलता तथा पुत्र पीत्र की समृद्धि कारक होता है ॥९३॥ (शु० ४ सू०) सूक्ष्म शु० की दशा
में सूर्य की प्राणदशा हो तो लोक में प्रकाश, कीर्ति तथा पुत्रहीनता एवं पिताज व्याधि होती
है ॥९४॥ (शु० ४ चं०) सूक्ष्म शु० में चन्द्र की प्राणदशा हो तो देवार्चन में भक्ति तथा मित्रों
में प्रेम, धन और सौभाग्य सम्पत्ति की प्राप्ति होती है ॥९५॥ (शु० ४ मं०) सू० शु० में भीम
की प्राणदशा हो तो ज्वर, शीतला, खजली, फोडा-कुन्सी आदि होती है। देव ब्राह्मण पूजा भी
होती है ॥९६॥ (शु० ४ रा०) सूक्ष्म शुक्र में राहु की प्रा० द० हो तो नित्य शत्रुबाधा, नेत्र
तथा कुक्षिरोग, मित्रों में विरोध तथा पीडा होती है ॥९७॥ (शु० ४ वृ०) सूक्ष्म शुक्र में गुरु
की प्राणदशा हो तो आयु वृद्धि, आरोग्यता, ऐश्वर्य, स्त्री पुत्र आदि ऐश्वर्य, छत्र तथा वाहन की
प्राप्ति होती है ॥९८॥ (शु० ४ श०) शुक्र की सूक्ष्म दशा में शनि का प्राणान्तर हो तो राजा
के उपद्रव से भय होता है। सुख की हानि तथा बीमारी एवं नीच मनुष्यों से विवाद होता
है ॥९९॥ (शु० ४ बु०) सूक्ष्म शुक्र में बुध की प्राणदशा हो तो सन्तोष, राजसन्मान, नाना
प्रकार की सम्पत्ति तथा नित्य उत्साह की वृद्धि होती है ॥१००॥ (शु० ४ के०) सूक्ष्म शुक्र में
केतु की प्रा० द० हो तो स्वास्थ्य तथा यश की हानि, घनादि वस्तु का नाश एवं भोग्य पदार्थ
अप्राप्त होते हैं ॥१०१॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया सूर्यादिप्राणदशा फलकथन
नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४४॥

अथ कालचक्रदशाप्रकरणमाह

ववेङ्ग गोपिकानाथ भारती गणनायकम् ॥ पार्वत्ये कथितं पूर्वं कालचक्रं पिताकिता ॥१॥

तत्त्वज्ञानसामुद्रित्य लघुमार्गेण कथ्यते ॥ शुभाशुभ मनुष्याणां भूत भव्य च भावि तत् ॥२॥ जूतं
५ कविंश २१ गिरयो ७ नव ९ विक् १० षोडश १६ व्याघ्रः ४ ॥ सूर्यादीनां क्रमाद्वापराशीनां
स्वामिनो वशात् ॥३॥ नरस्य जन्मकाले वा प्रश्नकाले यदंशकः ॥ तदादि नवपर्यन्तमायुष
परिचक्षते ॥४॥ अश्विन्यादितिहस्तार्जुनमूलप्रोष्ठपवामिधाः ॥ अंशकाद्गणयेन्मेघात्प्रादक्षिण्य-
क्रमेण तु ॥५॥ प्राजापत्यमघेद्राग्रिथवण च ययाकमम् ॥ अप्रदक्षिणाधिष्ण्यानि भवन्त्येतानि पार्वति
॥६॥ अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गे व्यवस्थितम् ॥ रोहिण्यादित्रयं चैव अपसव्ये व्यवस्थितम्
॥७॥ एषमूलं चतुर्मासं कृत्वा चक्रे समुदरेत् ॥ अंशावसाने जातस्य आयुर्द्वयोऽस्य कस्यचित् ॥८॥
संपूर्णमिष्वेवादावधमाशास्य मध्यमम् ॥ अपमृत्युसमं कष्टमशाते चापरे जगुः ॥९॥ शास्त्रैव
स्फुटसिद्धांतो राशमंश गणयेद्बुधः ॥ अनुपातेन बक्ष्यामि तदुपायमतः परम् ॥१०॥

कालचक्र दशा प्रकरण

प्रथम गणेश तथा शारदा एव भगवान् श्रीकृष्ण की बन्दना करते हैं। भगवान् शंकर ने जो
श्रीपार्वतीजी को कहा था, उस 'कालचक्रदशा' ॥१॥ का सारांश लेकर सजिप्त रीति से
मनुष्यो का भूत, वर्तमान तथा भविष्य शुभ और अशुभ का ज्ञापक यह 'कालचक्र'
(समयचक्र) कहा जाता है ॥२॥ सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ५, २, १, ७, ९, १०, १६, ४ ये दशा वर्ष
हैं। १२ राशियों की दशा में ये वर्ष अपने अपने स्वामी ग्रह के वर्ष जानना ॥३॥ मनुष्य के
जन्मकाल या प्रश्नकाल में जो अंश (नवांश) हो उससे आरम्भ करके नौवें अंश तक ही
परमायु जानना ॥४॥ अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, मूल, पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों में प्रथमादि पाद
में मेघादि क्रम से (सव्यःसीधे क्रम से) प्रति अंश आगे कही जानेवाली रीति से गणना
करे ॥५॥ तथा रोहिणी, मघा, विशाखा, थवण में अपसव्य (उलटे मार्ग के) मार्ग के नक्षत्र
हैं ॥६॥ (और स्पष्ट कहते हैं) अश्विनी आदि तीन नक्षत्र (अश्विनी, भरणी, कृत्तिका)
सव्यमार्ग के नक्षत्र हैं। और रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा ये अपसव्य मार्ग के नक्षत्र हैं ॥७॥ इस
उक्त प्रकार के नक्षत्रों के चार भाग करके स्पष्ट समझने के लिए चक्र में लिखे नौवें नवांश की
दशा में या अंश के शेष में जन्म लेने वाले बालको में कोई ही जीवन लाभ कर सकता है ॥८॥
अंश के आदि में जन्मने वाले की आयु पूर्ण और मध्य भाग में मध्य और अंत में जन्मने वाले
की आयु अल्प होती है। या अपमृत्यु के समान कष्ट होता है ॥९॥ इस प्रकार प्रथम जानकर
निश्चित स्पष्ट आयु जानने के लिए अनुपात (गणित) का उपाय कहते हैं ॥१०॥

गततारा त्रिभिर्मकर शेष चत्वारिंशगुणम् ॥ वर्तमान-पदेनादय राशीनामशको भवेत् ॥११॥
ये च जीवांशके जाता गतनाडिविनांशकाः ॥ स्वस्वदशाब्दगुणिताः पंचमूनि १५ विभाजिताः
॥१२॥ एवं अष्टादशा शेषाः सूर्यादीनां यथाक्रमम् ॥ गणयेन्जीवपर्यन्तमायुष्य परिचितयेत्
॥१३॥

गत नक्षत्र सख्या में तीन (३) का भाग दे, शेष सख्या को ४ से गुणा करे। वर्तमान नक्षत्र
को चरण सख्या का योग करे तो राशि का 'नवांश' होता है ॥११॥ जिनका जन्म जीवांश में
है उनकी अशरहित केवल घटिकासख्या को ग्रह के अपने अपने वर्ष सख्या से गुणा करके १५

का भाग देकर ॥१२॥ जो लब्ध वर्षादि अब प्राप्त हो वह सूर्यादि ग्रहों की महादशा जीवपर्यन्त जानना चाहिए ॥१३॥

सव्ये मेघादिरपसव्ये वृश्चिकादिरंशो जातव्यः

ये जीवा अशके जाता गतनाडीपलेन तु ॥ तदशोनहताब्दस्तु पचभूमिविभाजिता ॥१४॥ एव महादशारभो भवेदशाद्यथाक्रमात् ॥ गणपेन्नवपर्यंतमायुष्य तत्प्रकीर्तितम् ॥१५॥ सूर्यादीना क्रमावेतद्दशा सर्वदशामु च ॥१६॥ मेघगोयमकुलीरराशिषु स्वाशकेषु परमायुरुच्यते ॥ जानक १०० मद ८५ गज ८३ स्तद ८६ क्रमात्तत्त्रिकोणमधनेषु तद्भवेत् ॥१७॥ द्वादशार लिखेच्चक्र तिर्यगूर्ध्वसमानकम् ॥ गृहा द्वादश जायते सव्यचक्रे यथाक्रमम् ॥१८॥ द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेघादिकां लिखेत् ॥ एव द्वादशाराख्यायकालचक्रमुदीरितम् ॥१९॥ विश्वर्षपूर्वाभाद्र च रेवती सव्यतारक ॥ एतद्दशोदुपादीनामश्विन्यादी च वीक्षयेत् ॥ विशदस्तत्प्रकारस्तु कथ्यते शृणु पार्यति ॥२०॥ देहजीवी मेघापायौ दशाद्यचरणस्य च ॥ मेघादिचापपर्यंत राशिपात्र दशाधिपा ॥२१॥ देहजीवी मरुपुग्मी दिगीशार्काष्टमूधरा ॥ षड्वेदशरलोकाश्च राशिपात्र दशाधिपा ॥२२॥ दद्यादिदशताराणा तृतीयचरणेषु च ॥ गौर्देहो मियुन जीवो द्विकार्कशदशाशका ॥२३॥ अक्षिरामाख्यनाचास्ते दशाधिपतय क्रमात् ॥ अश्विन्यादि-दशोदूना चतुर्यचरणेषु च ॥२४॥

जिनका जन्म जीवाश में है। उनके अंश की गत नाडी पर दशावर्ष से गुणा करके १५ से भाग देने पर भुक्त महादशा प्राप्त होगी। इसी प्रकार तत् अंश से जानना और नौवें अंश तक आयु जानना ॥१४॥ १५॥ मर्क राशियों की दशा में स्वागो सूर्यादि ग्रहों के कहे हुए वर्षों के अनुसार ॥१६॥ मेघ, वृष, मिथुन वर्ष इन राशियों के अंश की परमायु क्रमशः १००, ८५, ८३, ८६ जानना और इनसे त्रिकोण स्थान में (राशि में) भी यही मर्यादा जानना ॥१७॥ (यहां पर जानक, मद, गज तद य मर्यादामूचक शब्दकल्प है। इनमें मर्यादा इस प्रकार ग्रहण की जाती है। 'ब ट प या दि अकाग्राह्या तथा 'अवाना वागतो गति' अर्थात् ब, ट, प, य से गिनकर अब लेना और उत्तरोत्तर बाये अर्थात् इबाई, दहाई, सैबडा, ब्रम से रखना। और अ, इ, न श की शून्य मर्यादा लेना यथा जानक -अ-० न-० क-१ वागतो गति १०० इसी प्रकार म से ५, द से ८ = ८५ आगे भी इसी प्रकार समझे) १२ घर का चक्र बनाना जो चारों तरफ से समान हो, यह चक्र मध्यमार्ग का होता है ॥१८॥ दूसरे कोष्ठक में मेघ आदि १२ राशियां लिखे। इस प्रकार यह १२ राशियों का 'कालचक्र' तैयार होता है ॥१९॥ उत्तराषाढा पूर्वाभाद्रपद, रेवती ये मध्यमार्ग के नक्षत्र हैं। इनकी दशा के नक्षत्रों की दशा की गणना अश्विनी में देवना ॥२०॥ मेघ और धनु राशि देह और जीव राशि है, इनकी दशा अश्विनी के प्रथम चरण में आरंभ होती है। और मेघ में धन राशि तक के स्वामी ग्रह ही दशा के स्वामी होते हैं ॥२१॥ (अश्विनी के द्वितीय चरण में) देह और जीव क्रमशः मरु और मिथुन हैं और १०, ११, १२, ८, ७, ६, ५, ४, ३ ये दशा राशि और राशियों के स्वामी ग्रह ही दशापति होते हैं ॥२२॥ अश्विनी आदि दस नक्षत्रों के तृतीय चरण में वृष राशि देह और

उत्तराभाद्रपद, अनुराधा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, शतभिषा इन ८ नक्षत्रों के देह जीव और दशाराशि मृगशिर के समान जानना ॥३७॥

देहजीवो कर्किमीनौ मृगाद्यचरणस्य च ॥ व्यस्तमीनाद्विकर्कान्तं राशिपाश्र्व दशाधिपाः ॥३८॥
गौर्देही मियुनं जीव इन्दुमस्य द्वितीयके ॥ त्रिद्व्यर्कादिगीशार्कचन्द्रार्क्षभवनाधिपाः ॥३९॥
देहजीवौ नक्रपुष्पौ मृगपादे तृतीयके ॥ त्रिवाणाब्धिरसांगाष्टसूर्यशदशराशिपाः ॥४०॥ मेघचापौ
देहजीवांबिंदुभस्य चतुर्थके ॥ व्यस्तं चापादि मेधांतं राशिपाश्र्व दशाधिपाः ॥४१॥ एवं
व्यस्ततरे ज्ञेयं देहजीवदशादिकम् ॥ स्पष्टं तवाप्रे कथितं पार्वति प्राणवल्लभे ॥४२॥

मृगशिर के प्रथम चरण के देह-कर्क। जीव मीन मीन से उलटी कर्क तक विपरीत क्रम की राशि दशाधिप है ॥३८॥ मृगशिर नक्षत्र के द्वितीय पाद में देह-वृष। जीव-मियुन। दशाराशि ३।२।१।९।१०।११।१२।१२ इनके स्वामी दशापति होते हैं ॥३९॥ मृगशिर के तीसरे चरण में देह-मकर। जीव-मिथुन। दशाराशि ३।५।४।६।७।८।१२।११।१० तथा इनके स्वामी ग्रह राशिपति=दशापति हैं ॥४०॥ मृगशिर के चौथे चरण में देह-मेघ। जीव-धनु। धनु राशि से मेघ तक विपरीत क्रम से गणना करना चाहिए। राशियों के स्वामी ही दशास्वामी होते हैं ॥४१॥ हे प्राणेश्वरि पार्वति! हमने यह अपसव्यमार्ग के देह, जीव, दशाधिप तुम्हारे सामने स्पष्ट रूप से कहे हैं ॥४२॥

कालचक्र दशा का उदाहरण

स्पष्ट चन्द्रमा १०।२६।३०।३३ इन राश्यादि की घटी की, तो १९५९०।३३ हुआ, ८०० का भाग दिया तो लब्ध २४ (गत नक्षत्र शतभिषा) यह व्यर्थ है। शेष सख्या ३९० हुई, अतः पूर्वभाद्रपद का गतकालमान है। इसको ६० से गुणा किया तो २३४०० हुआ, इसमें ८०० का भाग दिया तो २९।१५ यह स्पष्ट 'भयात काल' हुआ। यह १५ घटी से अधिक है अतः १५ का भाग दिया तो शेष १४।१५ रहा, "विश्वार्क्ष पूर्वाभाद्र प रेवती सव्यतारक ॥" इत्यादि नियमानुसार सव्यमार्ग में पूर्वभाद्रपद के द्वितीय चरण में जन्म होने से देहाधिप-शनि तथा जीवाधिप-बुध हुआ, एव वृष नवाश में ८५ वर्ष की 'परमदशा' प्राप्त हुई। अब दशकाल स्पष्ट करने के लिए पूर्वभाद्रपद के द्वितीय पाद की भुक्त घटी १४।१५ को एकरस किया तो ८५५ हुआ, अब दशा वर्ष ८५ से गुणा किया तो ७२६७५ हुए। इसमें ९०० का भाग दिया तो लब्ध भुक्त वर्षादि ८०।१०।१५ हुआ, इसको ८५ में वष किया तो ४।१।१५ वर्षादि बुध के भोग्य वर्षादि हुए। अतः कामचक्रो दशा में जन्म समय में जीवाधिप बुध की यह अन्तिमभोग्य दशा प्राप्त हुई।

[illegible]

| | | | | | |
|-----------------------|-----|--|------|------------|-----------------|
| अ देव प्र० २० च ४ अ ८ | चट | वा ४ मा ५ गा ३ र २ क १ ख १ र सु १ १ नी १० धि ९ च २१ मं ५ कु ९ शु १६ म ७ गु १० सा ४ सा ४ गु १० | गुरु | वृद्धिकाशः | दशा ८६ वर्षाणि |
| क देव प्र० २१ च १ अ ९ | भीम | पौ १ र २ भा ३ वा ४ मा ५ वा ६ म ७ हो ८ धि ९ म ७ गु १६ कु ९ च २१ र ५ कु ९ शु १६ म ७ गु १० | गुरु | धनाशः | दशा १०० वर्षाणि |
| क देव प्र० २१ च २ अ ९ | श | न १० म ११ ख १२ डा ८ सि ७ च ६ च ४ ना ५ गा ३ मा ४ मा ४ गु १० म ७ शु १६ कु ९ च २१ मं ५ कु ९ | बुध | सकरराशः | दशा ८५ वर्षाणि |
| क देव प्र० २१ च ३ अ ९ | गु | रू २ पौ १ ख १ र सु १ १ नि १० पा ९ स १ र २ म ३ गु १६ म ७ गु १० सा ४ मा ४ गु १० म ७ शु १६ कु ९ | बुध | कुभाशः | दशा ८३ वर्षाणि |
| क देव प्र० २१ च ४ अ ९ | चट | वा ४ नि ५ च ६ त्य ७ ड ८ धि ९ न १० शा ११ ख १२ च २१ मं ५ कु ९ शु १६ म ७ गु १० सा ४ सा ४ गु १० | गुरु | मीनाशः | दशा ८६ वर्षाणि |

[illegible]

[illegible][illegible][illegible][illegible]

અથ કાલચક્રમીયાદશાવર્ષાણિ ૧૦૦ તન્મધ્યે પુરોતર્વર્ષાણિ ૧૦ તસ્યોપદશાવર્ષકમ્

| પ્રુવાક | શુ૦ ૧ | મ૦ ૧ | શુ૦ ૨ | શુ૦ ૩ | ચ૦ ૪ | શુ૦ ૫ | શુ૦ ૬ | શુ૦ ૭ | મ૦ ૮ | યોગ |
|---------|-------|------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|-----|
| ૦ | ૧ | ૦ | ૧ | ૦ | ૨ | ૦ | ૦ | ૧ | ૦ | ૧૦ |
| ૧ | ૦ | ૮ | ૭ | ૧૦ | ૧ | ૬ | ૧૦ | ૭ | ૮ | ૦ |
| ૬ | ૦ | ૧૨ | ૬ | ૨૪ | ૬ | ૦ | ૨૪ | ૬ | ૧૨ | ૦ |
| ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ |
| ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ |

અથ કાલચક્રવૃષભાદશાવર્ષાણિ ૮૫ તન્મધ્યે શન્યતર્વર્ષાણિ ૪ તસ્યોપદશાવર્ષકમ્

| પ્રુવાક | શ૦ ૧૦ | શ ૧૧ | શુ૦ ૧૨ | મ૦ ૮ | શુ૦ ૭ | શુ૦ ૬ | ચ૦ ૪ | શુ૦ ૫ | શુ૦ ૩ | યોગ |
|---------|-------|------|--------|------|-------|-------|------|-------|-------|-----|
| ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૪ |
| ૧૬ | ૨ | ૨ | ૫ | ૩ | ૧ | ૫ | ૧૧ | ૨ | ૫ | ૦ |
| ૫૬ | ૫ | ૫ | ૧૯ | ૨૮ | ૧ | ૨ | ૨૫ | ૨૪ | ૨ | ૦ |
| ૨૮ | ૪૩ | ૪૫ | ૧૪ | ૩૫ | ૩ | ૨૮ | ૪૫ | ૪૨ | ૪૮ | ૦ |
| ૧૪ | ૫૩ | ૫૩ | ૪૨ | ૧૮ | ૩૨ | ૧૪ | ૫૩ | ૨૧ | ૧૪ | ૦ |

અથ કાલચક્રવૃષભાદશાવર્ષાણિ ૮૫ તન્મધ્યે શન્યતર્વર્ષાણિ ૪ તસ્યોપદશાવર્ષકમ્

| પ્રુવાક | શ૦ ૧૧ | શુ૦ ૧૨ | મ૦ ૮ | શુ૦ ૭ | શુ૦ ૬ | ચ૦ ૪ | શુ૦ ૫ | શુ૦ ૩ | શ૦ ૧૦ | યોગ |
|---------|-------|--------|------|-------|-------|------|-------|-------|-------|-----|
| ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૦ | ૪ |
| ૧૬ | ૨ | ૫ | ૩ | ૧ | ૫ | ૧૧ | ૨ | ૫ | ૦ | ૦ |
| ૨૮ | ૭ | ૧૯ | ૨૮ | ૧ | ૨ | ૨૫ | ૨૪ | ૨ | ૭ | ૦ |
| ૫૬ | ૪૫ | ૫૪ | ૩૫ | ૩ | ૧૮ | ૪૫ | ૪૨ | ૨૮ | ૪૫ | ૦ |
| ૧૪ | ૫૩ | ૪૨ | ૧૮ | ૩૨ | ૧૪ | ૫૩ | ૨૧ | ૧૪ | ૫૩ | ૦ |

અથ કાલચક્રવૃષભાદશાવર્ષાણિ ૮૫ તન્મધ્યે પુરોતર્વર્ષાણિ ૧૦ તસ્યોપદશાવર્ષકમ્

| પ્રુવાક | શુ૦ ૧૨ | મ૦ ૮ | શુ૦ ૭ | શુ૦ ૬ | ચ૦ ૪ | શુ૦ ૫ | શુ૦ ૩ | શ૦ ૧૦ | શ૦ ૧૧ | યોગ |
|---------|--------|------|-------|-------|------|-------|-------|-------|-------|-----|
| ૧ | ૧ | ૦ | ૧ | ૧ | ૨ | ૦ | ૧ | ૦ | ૦ | ૧૦ |
| ૧૨ | ૨ | ૧ | ૧૦ | ૦ | ૫ | ૭ | ૦ | ૫ | ૫ | ૦ |
| ૨૧ | ૩ | ૨૬ | ૧૭ | ૨૧ | ૧૯ | ૧ | ૨૧ | ૧૦ | ૧૯ | ૦ |
| ૧૦ | ૩૧ | ૨૮ | ૩૮ | ૧૦ | ૨૪ | ૪૫ | ૧૦ | ૦૬ | ૦૬ | ૦ |
| ૩૫ | ૪૬ | ૧૪ | ૪૯ | ૩૫ | ૪૨ | ૫૩ | ૩૫ | ૪૩ | ૪૩ | ૦ |

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भीमातर्दशावर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | म०८ | शु०७ | बु०६ | च०४ | मू०५ | बु०३ | ग १० | ग ११ | बृ०१२ | योगा |
|---------|-----|------|------|-----|------|------|------|------|-------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| २९ | ६ | ३ | ८ | ८ | ४ | ८ | ३ | ३ | ९ | ० |
| ३८ | २७ | २४ | २६ | २२ | २८ | २६ | २८ | २८ | २६ | ० |
| ४९ | ३१ | ३१ | ४१ | ३५ | १४ | ४९ | ३५ | ३५ | २८ | ० |
| २४ | ४६ | १० | २५ | १७ | ७ | २५ | १८ | १८ | १४ | ० |

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगशिरावर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | शु०७ | बु०६ | च०४ | मू०५ | बु०३ | ग १० | ग ११ | बृ १२ | म०८ | योगा |
|---------|------|------|-----|------|------|------|------|-------|-----|------|
| ० | ३ | १ | ३ | ० | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| ७ | ० | ८ | ११ | ११ | ८ | ९ | ९ | १० | ३ | ० |
| ४५ | ४ | ९ | १३ | ८ | ९ | १ | १ | १७ | २४ | ० |
| ५२ | १४ | ५२ | ३ | ४९ | ५२ | ३ | ३ | ३८ | २१ | ० |
| ५६ | ७ | ५६ | ३२ | २५ | ५६ | ३२ | ३२ | ४९ | ११ | ० |

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये कुम्भारवर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | बु०६ | च०४ | मू०५ | बु०३ | ग १० | ग ११ | बृ०१२ | म०८ | शु०७ | योगा |
|---------|------|-----|------|------|------|------|-------|-----|------|------|
| ० | ० | २ | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| ८ | ११ | २ | ६ | ११ | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ० |
| ७ | १३ | २० | १० | १३ | २ | २ | २१ | २६ | ९ | ० |
| ३ | ३ | २८ | ३५ | ३ | २८ | २८ | १० | ४९ | ५२ | ० |
| ३१ | ३२ | १४ | १८ | ३२ | १४ | १४ | ३५ | २५ | ५६ | ० |

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मघाशिरावर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | च०४ | मू०५ | बु०३ | ग १० | ग ११ | बृ०१२ | म०८ | शु०७ | बु०६ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|------|-------|-----|------|------|------|
| ० | ५ | १ | २ | ० | ० | २ | १ | ३ | २ | २१ |
| २८ | २ | २ | ० | १७ | ११ | ५ | ८ | ११ | ० | ० |
| ५६ | ७ | २४ | २० | २५ | २५ | १९ | २२ | १३ | २० | ० |
| २८ | ४५ | ४२ | २८ | ४७ | ४५ | २४ | ३५ | ३ | २८ | ० |
| १४ | ७३ | ७१ | १४ | ७३ | ५३ | ६३ | २७ | ३७ | २४ | ० |

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | २०५ | शु०३ | श १० | श ११ | शु०१२ | म०८ | शु०७ | शु०६ | च०४ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|-----|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ५ |
| २१ | ३ | ६ | २ | २ | ७ | ४ | ११ | ६ | २ | ० |
| १० | १५ | १० | २४ | २४ | १ | २८ | ८ | १० | २४ | ० |
| ३५ | ५२ | ३५ | ४२ | ४२ | ४५ | १४ | ४९ | ३५ | ४२ | ० |
| १७ | ५६ | १८ | २१ | २१ | ५३ | ७ | २५ | १८ | २१ | ० |

अथ कालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | शु०३ | श १० | श ११ | शु०१२ | म०८ | शु०७ | शु०६ | च०४ | शु०५ | योगा |
|---------|------|------|------|-------|-----|------|------|-----|------|------|
| १ | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ० | २ | ० | ९ |
| ८ | ११ | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ११ | २ | ६ | ० |
| ७ | १३ | २ | २ | २१ | २६ | ९ | १३ | २० | १० | ० |
| ३ | ३ | २८ | २८ | १० | ४९ | ५२ | ३ | २८ | ३५ | ० |
| ३१ | ३२ | १४ | १४ | ३५ | २५ | ५६ | ३२ | १४ | १८ | ० |

अथ कालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये श्रुगौरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | शु०२ | म०१ | शु०१२ | श ११ | श १० | शु०९ | म०१ | शु०२ | शु०३ | योगा |
|---------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|------|------|
| २ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ३ | १ | १६ |
| ९ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | १ | ८ | ० |
| २३ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३३ | ५ | ० | २४ | ० |
| ५१ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | २१ | ३४ | ० |
| १९ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ४१ | ४२ | ० |

अथ कालचक्रमिथुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शीर्षातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | म०१ | शु०१२ | श ११ | श १० | शु०९ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | योगा |
|---------|-----|-------|------|------|------|-----|------|------|------|------|
| १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| ० | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ७ | ४ | ९ | ४ | ० |
| २१ | २ | ३ | १ | १ | ३ | २ | ५ | ३ | ५ | ० |
| २१ | ३१ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ० |
| १७ | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ४८ | ० | १० | ० | ० |

| अथ कालवक्रमिदुतागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोस्तदशावर्षाणि १० तस्योपरशावक्रम् | | | | | | | | | | |
|--|------|------|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|------|
| मुवाक | श ११ | श १० | श ९ | श ८ | श ७ | श ६ | श ५ | श ४ | श ३ | योगा |
| १ | १ | ० | ० | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १० |
| ११ | २ | ५ | ५ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | ० |
| २२ | १३ | २३ | २३ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३ | ० |
| २४ | ४४ | २९ | २९ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ० |
| ३४ | ६ | ३८ | ३८ | ६ | ५२ | ३३ | ४२ | ३३ | ५२ | ० |
| अथ कालवक्रमिदुतागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शम्भतर्षाणि ४ तस्योपरशावक्रम् | | | | | | | | | | |
| मुवाक | श ११ | श १० | श ९ | श ८ | श ७ | श ६ | श ५ | श ४ | श ३ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | ० |
| २० | ९ | ९ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ० |
| ५७ | २३ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | ० |
| ४९ | ५२ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ० |
| अथ कालवक्रमिदुतागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शम्भतर्षाणि ४ तस्योपरशावक्रम् | | | | | | | | | | |
| मुवाक | श ११ | श १० | श ९ | श ८ | श ७ | श ६ | श ५ | श ४ | श ३ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | २ | ० |
| २० | ९ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ९ | ० |
| ५७ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | २३ | ० |
| ४९ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ५२ | ० |
| अथ कालवक्रमिदुतागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोस्तर्षाणि १० तस्योपरशावक्रम् | | | | | | | | | | |
| मुवाक | श ११ | श १० | श ९ | श ८ | श ७ | श ६ | श ५ | श ४ | श ३ | योगा |
| १ | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १० |
| १३ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | २ | ५ | ५ | ० |
| २२ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | १ | १३ | २३ | २३ | ० |
| २४ | ४४ | २९ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ४४ | २९ | २९ | ० |
| ३४ | ६ | ५२ | ३३ | ४२ | ३३ | ५२ | ६ | ३८ | ३८ | ० |

अथ कालचक्रमिधुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये सौमंतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्राक | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०४ | म०१ | शु०१२ | श०११ | श०१० | शु०९ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|-----|-------|------|------|------|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ० | ७ | ४ | ९ | ४ | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ० |
| २१ | २ | ५ | ३ | ५ | २ | ३ | १ | १ | ३ | ० |
| ४१ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ३१ | ७६ | २६ | २६ | ३६ | ० |
| १२ | ४८ | ० | १० | ० | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ० |

अथ कालचक्रमिधुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगोस्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्राक | शु०२ | शु०३ | शु०४ | म०१ | शु०१२ | श०११ | श०१० | शु०९ | म०१ | योगा |
|---------|------|------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|
| २ | ३ | १ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| ९ | १ | ८ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | ० |
| २३ | ० | २४ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० |
| ५१ | २१ | ३४ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | ० |
| १९ | ४१ | ४२ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ० |

अथ कालचक्रमिधुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्राक | शु०३ | शु०४ | म०१ | शु०१२ | श०११ | श०१० | शु०९ | म०१ | शु०२ | योगा |
|---------|------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| ९ | ११ | ८ | ९ | १ | ५ | ५ | १ | ९ | ८ | ० |
| २ | ९१ | २४ | ३ | ० | ६ | ६ | ० | ३ | २४ | ० |
| १० | १९ | ३४ | १५ | २१ | ८ | ८ | २१ | १५ | ३४ | ० |
| ७ | ३२ | ४२ | १० | ४२ | ४० | ४० | ४२ | १० | ४२ | ० |

अथ कालचक्रमिधुनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चट्टातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्राक | च०४ | शु०५ | शु०६ | शु०७ | म०८ | शु०९ | श०१० | श०११ | शु०१२ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|-------|------|
| २ | ५ | १ | २ | ३ | १ | २ | ० | ० | २ | २१ |
| २७ | १ | २ | २ | १० | १ | ५ | ११ | ११ | ५ | ० |
| २५ | १६ | १९ | ११ | २६ | १५ | ९ | २१ | २१ | ९ | ० |
| ५४ | २ | ३२ | ९ | ३ | २० | ४ | ३७ | ३७ | ४ | ० |
| ७ | ४७ | ५ | ४६ | ४२ | ५६ | ११ | ४१ | ४१ | ११ | ० |

अथ कालचक्रकर्कशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातिर्वर्षाणि ५ तस्योपदशावर्षम्

| शुक्रवार | सू०५ | सू०६ | सू०७ | म०८ | सू०९ | म०१० | म०११ | सू०१२ | च०४ | योगा |
|----------|------|------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ५ |
| २० | ३ | ६ | ११ | ४ | ६ | २ | २ | ६ | २ | ० |
| ५५ | १४ | ८ | ४ | २६ | २९ | २३ | २३ | २९ | १९ | ० |
| ४८ | ३९ | २२ | ५३ | ३० | १८ | ४३ | ४३ | १८ | ३९ | ० |
| ५० | ४ | २० | १ | ४२ | ९ | १५ | १५ | ९ | ५ | ० |

अथ कालचक्रकर्कशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातिर्वर्षाणि ९ तस्योपदशावर्षम्

| शुक्रवार | सू०६ | सू०७ | म०८ | सू०९ | म०१० | म०११ | सू०१२ | च०४ | सू०५ | योगा |
|----------|------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | २ | ० | ९ |
| ७ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ० | २ | ६ | ० |
| ४० | ९ | २ | २३ | १६ | ० | ० | १६ | ११ | ८ | ० |
| २७ | ४ | ४७ | ४३ | ४४ | ४१ | ४१ | ४४ | ९ | २२ | ० |
| ५४ | ११ | २४ | १५ | ४० | ५१ | ५१ | ४० | ४६ | ३० | ० |

अथ कालचक्रकर्कशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये श्रृंगोदत्तवर्षाणि १६ तस्योपदशावर्षम्

| शुक्रवार | सू०७ | म०८ | सू०९ | म०१० | म०११ | सू०१२ | च०४ | सू०५ | सू०६ | योगा |
|----------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|------|
| २ | २ | १ | १ | ० | १ | १ | ३ | ० | १ | १६ |
| ६ | ११ | ३ | १० | ८ | ८ | १० | १० | ११ | ८ | ० |
| ५८ | २१ | १८ | ९ | २७ | २७ | ९ | २६ | ४ | २ | ० |
| ३६ | ३७ | ५० | ४६ | ५४ | ५४ | ४६ | ३० | ५३ | ४७ | ० |
| १६ | ४१ | १४ | २ | २६ | २६ | २ | ४२ | १ | २६ | ० |

अथ कालचक्रकर्कशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमातिर्वर्षाणि ७ तस्योपदशावर्षम्

| शुक्रवार | म०८ | सू०९ | म०१० | म०११ | सू०१२ | च०४ | सू०५ | सू०६ | सू०७ | योगा |
|----------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | ० | १ | ७ |
| २९ | ६ | १ | ३ | ३ | ९ | ८ | ४ | ८ | ३ | ० |
| १८ | २ | २३ | २७ | २७ | २३ | १५ | २६ | २३ | १८ | ० |
| ८ | ६ | १ | १२ | १२ | १ | २० | ३० | ४३ | ५० | ० |
| ३२ | ५९ | २४ | ३३ | ३३ | २४ | ५६ | ४७ | १६ | ३६ | ० |

अथ कालचक्रकर्तृशाखावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरुत्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | वृ०१ | श०१० | श०११ | वृ०१२ | च०४ | सू०५ | वृ०६ | शु०७ | म०८ | योगा |
|---------|------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|
| १ | १ | ० | ० | १ | २ | ० | १ | १ | ० | १० |
| ११ | १ | ५ | ५ | १ | ५ | ६ | ० | १० | ९ | ० |
| ५१ | २८ | १७ | १७ | २८ | ९ | २९ | १६ | ९ | २३ | ० |
| ३७ | ३६ | ३६ | ३६ | ३६ | ४ | १८ | ४४ | ४६ | १ | ० |
| ४० | १६ | ३० | ३० | १६ | १३ | ९ | ४० | २ | २४ | ० |

अथ कालचक्रकर्तृशाखावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शम्भुतर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | श०१० | श०११ | वृ०१२ | च०४ | सू०५ | वृ०६ | शु०७ | म०८ | वृ०९ | योगा |
|---------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | ११ | २ | ५ | ८ | ३ | ५ | ० |
| ४४ | ६ | ६ | १७ | २१ | २३ | ० | २७ | २७ | १७ | ० |
| ३९ | ५८ | ५८ | २६ | ३७ | ४३ | ४१ | ५४ | १२ | २६ | ० |
| ४ | ३७ | ३७ | ३० | ३१ | १५ | ५१ | २६ | ३३ | ३० | ० |

अथ कालचक्रकर्तृशाखावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शम्भुतर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | श०११ | वृ०१२ | च०४ | सू०५ | वृ०६ | शु०७ | म०८ | वृ०९ | श०१० | योगा |
|---------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|
| ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | ११ | २ | ५ | ८ | ३ | ५ | २ | ० |
| ४४ | ६ | १७ | २१ | २३ | ० | २७ | २७ | १७ | ६ | ० |
| ३९ | ५८ | २६ | ३७ | ४३ | ४१ | ५४ | १२ | २६ | ५८ | ० |
| ४ | ३७ | ३० | ४१ | १५ | ५१ | २६ | ३३ | ३० | ३७ | ० |

अथ कालचक्रकर्तृशाखावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरुत्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | वृ०१२ | च०४ | सू०५ | वृ०६ | शु०७ | म०८ | वृ०९ | श०१० | श०११ | योगा |
|---------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|------|
| १ | १ | २ | ० | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १० |
| ११ | १ | ५ | ६ | ० | १० | ९ | १ | ५ | ५ | ० |
| ५१ | २८ | ९ | २९ | १६ | ९ | २३ | २८ | १७ | १७ | ० |
| ३७ | ३६ | ४ | १८ | ४४ | ४६ | १ | ३६ | २६ | २६ | ० |
| ४० | १६ | १३ | ९ | ४० | २ | २४ | १६ | ३० | ३० | ० |

[illegible][illegible][illegible][illegible]

[illegible][illegible][illegible][illegible]

| अथ कालचक्रसिंहाशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावर्षम् | | | | | | | | | | |
|--|-------|------|------|------|------|------|------|------|------|------|
| शुक्राक्ष | गु०१२ | म०८ | गु०७ | बु०६ | च०४ | गु०५ | बु०६ | गु०२ | म०१ | योगा |
| ० | १ | ० | १ | ० | २ | ० | ० | १ | ० | १० |
| १ | ० | ८ | ७ | १० | १ | ६ | १० | ७ | ८ | ० |
| ६ | ० | १२ | ६ | २४ | ६ | ० | २४ | ६ | १२ | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावर्षम् | | | | | | | | | | |
| शुक्राक्ष | ग०४ | ग०१० | गु०९ | म०१ | गु०२ | बु०३ | च०४ | गु०५ | बु०६ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| ० | २ | २ | ५ | ३ | ९ | ५ | ११ | २ | ५ | ० |
| ५६ | ७ | ७ | १९ | २८ | १ | २ | २५ | २४ | २ | ० |
| २८ | ४५ | ४५ | १४ | ३५ | ३ | २८ | ४५ | ४२ | २८ | ० |
| १४ | ५३ | ५३ | ४२ | १८ | ३२ | १४ | ५६ | २१ | १४ | ० |
| अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावर्षम् | | | | | | | | | | |
| शुक्राक्ष | ग०१० | गु०९ | म०१ | गु०२ | बु०३ | च०४ | गु०५ | बु०६ | ग०११ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| ० | २ | ५ | ३ | ९ | ५ | ११ | २ | ५ | २ | ० |
| ५६ | ७ | १९ | २८ | १ | २ | २५ | ४४ | २ | ७ | ० |
| २८ | ४५ | ५४ | ३५ | ३ | २८ | ४५ | ४२ | २८ | ४५ | ० |
| १४ | ५३ | ४२ | १८ | ३२ | १४ | ५६ | २१ | १४ | ५३ | ० |
| अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावर्षम् | | | | | | | | | | |
| शुक्राक्ष | गु०९ | म०१ | गु०२ | बु०३ | च०४ | गु०५ | बु०६ | ग०१० | ग०१० | योगा |
| १ | ० | ० | १ | १ | २ | ० | १ | ० | ० | १० |
| १२ | २ | १ | १० | ० | ५ | ७ | ० | ५ | ५ | ० |
| २१ | ३ | २६ | १७ | २१ | १९ | १ | २३ | १९ | १९ | ० |
| १० | ११ | २८ | ३८ | १० | २४ | ४५ | १० | २४ | २४ | ० |
| ३५ | ४६ | १४ | ४९ | ३५ | ४२ | ४३ | ३५ | ४३ | ४३ | ० |

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भीमातर्षर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | म०१ | शु०२ | बु०३ | च०४ | सू०५ | बु०६ | म०११ | म०१० | बु०९ | योगा |
|---------|-----|------|------|-----|------|------|------|------|------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| २९ | ६ | ६ | ८ | ८ | ४ | ८ | ३ | ३ | ९ | ० |
| ३८ | २७ | २४ | २६ | २२ | २८ | २६ | २८ | २८ | २६ | ० |
| ४९ | ३१ | २१ | ४९ | ३५ | १४ | ४९ | ३५ | ३५ | १८ | ० |
| २४ | ४६ | १० | २५ | १७ | ७ | २५ | १८ | १८ | १४ | ० |

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भुगोरतर्षर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | म०२ | बु०३ | च०४ | सू०५ | बु०६ | म०११ | म०१० | बु०९ | म०१ | योगा |
|---------|-----|------|-----|------|------|------|------|------|-----|------|
| २ | ३ | १ | ३ | ० | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| ७ | ० | ८ | ११ | ११ | ८ | ९ | ९ | १० | ३ | ० |
| ४५ | ४ | ९ | १३ | ८ | ९ | १ | १ | १७ | २४ | ० |
| ५२ | १४ | ५२ | ३ | ४९ | ५२ | ३ | ३ | ३८ | २१ | ० |
| ५६ | ७ | ५६ | ३२ | २५ | ५६ | ३२ | ३२ | ४९ | ११ | ० |

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधातर्षर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | बु०३ | च०४ | सू०५ | बु०६ | म०११ | म०१० | बु०९ | म०१ | शु०२ | योगा |
|---------|------|-----|------|------|------|------|------|-----|------|------|
| १ | ० | २ | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | १ |
| ८ | ११ | २ | ६ | ११ | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ० |
| ७ | १३ | २० | १० | १३ | २ | २ | २१ | २६ | ९ | ० |
| ६ | ३ | २८ | ३५ | ३ | २८ | २८ | १० | ४९ | ५२ | ० |
| ३१ | ३२ | १४ | १८ | २२ | १४ | १४ | ३५ | २५ | ५६ | ० |

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चट्टातर्षर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | च०४ | सू०५ | बु०६ | म०११ | म०१० | बु०९ | म०१ | शु०२ | बु०२ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|------|------|-----|------|------|------|
| ३ | ५ | १ | २ | ० | ० | २ | १ | ३ | २ | २१ |
| २८ | २ | २ | २ | ११ | ११ | ५ | ८ | ११ | २ | ० |
| ५६ | ७ | २४ | २० | २५ | २५ | ११ | २२ | १३ | २० | ० |
| २८ | ४५ | ४२ | २८ | ४५ | ४५ | २४ | ३५ | ३ | २८ | ० |
| १४ | ५३ | २१ | १४ | ४३ | ४३ | ४३ | १७ | ३२ | १४ | ० |

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशावर्षम्

| शुक्राक | सू०५ | सू०६ | श०११ | श०१० | सू०९ | म०१ | श०२ | सू०३ | सू०४ | योगा |
|---------|------|------|------|------|------|-----|-----|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ५ |
| २१ | ३ | ६ | २ | २ | ७ | ४ | ११ | ६ | २ | ० |
| १० | १५ | १० | २४ | २४ | १ | २८ | ८ | १० | २४ | ० |
| ३५ | ५२ | ३५ | ४२ | ४२ | ४५ | १४ | ४९ | ३५ | ४२ | ० |
| १७ | ५६ | १७ | २१ | २१ | ५३ | ७ | २५ | १८ | २१ | ० |

अथ कालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशावर्षम्

| शुक्राक | सू०६ | श०११ | श०१० | सू०९ | म०१ | सू०२ | सू०३ | सू०४ | सू०५ | योगा |
|---------|------|------|------|------|-----|------|------|------|------|------|
| १ | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ० | २ | ० | ९ |
| ८ | ११ | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ११ | २ | ६ | ० |
| ७ | १३ | २ | २ | २१ | २६ | ९ | १३ | २० | १० | ० |
| ३ | ३ | २८ | २८ | १० | ४९ | ५२ | ३ | २८ | ३५ | ० |
| २१ | ३२ | १४ | १४ | ३५ | २५ | ५६ | ३२ | १४ | १८ | ० |

अथ कालचक्रकुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगशिरसर्वर्षाणि १६ तस्योपदशावर्षम्

| शुक्राक | सू०७ | म०८ | सू०९ | श०१० | श०११ | सू०१२ | म०८ | सू०७ | सू०६ | योगा |
|---------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|------|
| २ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ३ | १ | १६ |
| ९ | १ | ४ | ११ | १ | ९ | ११ | ४ | १ | ८ | ० |
| २३ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० | २४ | ० |
| ५१ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | २१ | ३४ | ० |
| १९ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ४१ | ४२ | ० |

अथ कालचक्रकुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मीनातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशावर्षम् सू०५

| शुक्राक | म०८ | सू०९ | श०१० | श०११ | सू०१२ | म०८ | सू०७ | सू०६ | सू०७ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|------|------|
| १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| ० | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ७ | ४ | ९ | ४ | ० |
| २१ | २ | ३ | १ | १ | ३ | २ | ५ | ३ | ५ | ० |
| ४१ | ३१ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ० |
| १७ | ४८ | ५७ | ४५ | ४५ | ५७ | ४८ | ० | १० | ० | ० |

अथ कालचक्रनुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरेतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावर्षम्

| ध्रुवांक | वृ०९ | श १० | श ११ | वृ०१२ | म०८ | शु०७ | वृ०६ | शु०७ | म०८ | योगा |
|----------|------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|
| १ | १ | ० | ० | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १० |
| १३ | २ | ५ | ५ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | ० |
| २२ | १३ | २३ | २३ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३ | ० |
| २४ | ४४ | २९ | २९ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ० |
| ३४ | ६ | ३८ | ३८ | ६ | ५२ | ३३ | ४२ | ३३ | ५२ | ० |

अथ कालचक्रनुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावर्षम्

| ध्रुवांक | श १० | श ११ | वृ०१२ | म०८ | शु०७ | वृ०६ | शु०७ | म०८ | वृ०९ | योगा |
|----------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | ० |
| २० | ९ | ९ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ० |
| ५७ | २३ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | ० |
| ४९ | ५२ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ० |

अथ कालचक्रनुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावर्षम्

| ध्रुवांक | श ११ | वृ०१२ | म०८ | शु०७ | वृ०६ | शु०७ | म०८ | वृ०९ | श १० | योगा |
|----------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ८ | ४ | ५ | २ | ० |
| २० | ९ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ९ | ० |
| ५७ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | २३ | ० |
| ४९ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ५२ | ० |

अथ कालचक्रनुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरेतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावर्षम्

| ध्रुवांक | वृ०१२ | म०८ | शु०७ | वृ०६ | शु०७ | म०८ | वृ०९ | श १० | श ११ | योगा |
|----------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|------|
| १ | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १० |
| १३ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | २ | ५ | ५ | ० |
| २२ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३ | १३ | २३ | २३ | ० |
| २४ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ४४ | २९ | २९ | ० |
| ३४ | ६ | ५२ | ३३ | ४२ | ३३ | ५२ | ६ | ३८ | ३८ | ० |

अथ कालचक्रवृत्तिकाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भूयातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

| प्रवाक | सू० ५ | सू० ३ | सू० २ | म० १ | सू० १२ | स० ११ | स० १० | सू० ९ | स० ४ | योगा |
|--------|-------|-------|-------|------|--------|-------|-------|-------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | २ | १ | ५ |
| २० | ३ | ६ | ११ | ४ | ६ | २ | २ | ६ | ६ | ० |
| ५५ | १४ | ८ | ४ | २६ | २९ | २३ | २३ | २९ | १९ | ० |
| ४८ | ३९ | २२ | ५३ | ३० | १८ | ४३ | ४३ | १८ | ३२ | ० |
| ५० | ४ | २० | १ | ४२ | ९ | १५ | १५ | ९ | ५ | ० |

अथ कालचक्रवृत्तिकाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| प्रवाक | सू० ३ | सू० २ | म० १ | सू० १२ | स० ११ | स० १० | सू० ९ | स० ४ | सू० ५ | योगा |
|--------|-------|-------|------|--------|-------|-------|-------|------|-------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | २ | ० | ९ |
| ७ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ० | २ | ६ | ० |
| ४० | ९ | २ | २३ | १६ | ० | ० | १६ | ११ | ८ | ० |
| २७ | ४ | ४७ | ४३ | ४४ | ४१ | ४१ | ४४ | ९ | २२ | ० |
| ५४ | ११ | २६ | १५ | ४० | ५१ | ५१ | ४० | ४६ | २० | ० |

अथ कालचक्रवृत्तिकाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| प्रवाक | सू० २ | म० १ | सू० १२ | स० ११ | स० १० | सू० ९ | स० ४ | सू० ५ | सू० ३ | योगा |
|--------|-------|------|--------|-------|-------|-------|------|-------|-------|------|
| ० | २ | १ | १ | ० | ० | १ | ३ | ० | १ | १६ |
| ६ | ११ | ३ | १० | ८ | ८ | १० | १० | ११ | ८ | ० |
| ५८ | २१ | १८ | ९ | २७ | २७ | ९ | २६ | ४ | २ | ० |
| ३६ | ३७ | ५० | ४६ | ५४ | ५४ | ४६ | ३० | ५३ | ४७ | ० |
| १६ | ४१ | १४ | २ | २६ | २६ | २ | ४२ | १ | २६ | ० |

अथ कालचक्रवृत्तिकाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| प्रवाक | म० १ | सू० १२ | स० ११ | स० १० | सू० ९ | स० ४ | सू० ५ | सू० ३ | सू० २ | योगा |
|--------|------|--------|-------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | ० | १ | ७ |
| २९ | ६ | ९ | ३ | ३ | ९ | ८ | ४ | ८ | ३ | ० |
| १८ | २५ | २३ | २७ | २७ | २३ | १५ | २६ | २३ | १८ | ० |
| ८ | ६ | १ | १२ | १२ | १ | २० | ३० | ४२ | ५० | ० |
| २२ | ५९ | २४ | ३३ | ३३ | २४ | ५६ | ४२ | १५ | १४ | ० |

| अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावचक्रम् | | | | | | | | | | |
|--|--------|-------|-------|-------|-------|-------|--------|--------|--------|------|
| शुक्राक्ष | शु० १२ | श० ११ | श० १० | शु० ९ | श० ४ | शु० ५ | शु० ३ | शु० २ | श० १ | योगा |
| ० | १ | ० | ० | १ | २ | ० | १ | १ | ० | १० |
| ११ | १ | ५ | ५ | १ | ५ | ६ | ० | १० | १ | ० |
| ५९ | २८ | १७ | १७ | २८ | ९ | २९ | १६ | ९ | २३ | ० |
| ३७ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ४ | १८ | ४४ | ४६ | १ | ० |
| ४० | १६ | ३० | ३० | १६ | १३ | ९ | ४० | २ | २४ | ० |
| अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावचक्रम् | | | | | | | | | | |
| शुक्राक्ष | श० ११ | श० १० | शु० ९ | श० ४ | शु० ५ | शु० ३ | शु० २ | श० १ | शु० १२ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | ११ | २ | ५ | ८ | ३ | ५ | ० |
| ४४ | ६ | ६ | १७ | २१ | २३ | ० | २७ | २७ | १७ | ० |
| ३९ | ५८ | ५८ | २६ | ३७ | ४३ | ४१ | ५४ | १२ | २६ | ० |
| ४ | ३७ | ३७ | ३० | ४१ | १५ | ५१ | २६ | ३३ | ३० | ० |
| अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावचक्रम् | | | | | | | | | | |
| शुक्राक्ष | श० १० | शु० ९ | श० ४ | शु० ५ | शु० ३ | शु० २ | श० १ | शु० १२ | श० ११ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | ११ | २ | ५ | ८ | ३ | ५ | २ | ० |
| ४४ | ६ | १७ | २१ | २३ | ० | २७ | २७ | १७ | ६ | ० |
| ३९ | ५८ | २६ | ३७ | ४३ | ४१ | ५४ | १२ | २६ | ५८ | ० |
| ४ | ३७ | ३० | ४१ | १५ | ५१ | २६ | २३ | ३० | ३७ | ० |
| अथ कालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशावचक्रम् | | | | | | | | | | |
| शुक्राक्ष | शु० ९ | श० ४ | शु० ५ | शु० ३ | शु० २ | श० १ | शु० १२ | श० ११ | श० १० | योगा |
| ० | १ | २ | ० | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १० |
| ११ | १ | ५ | ६ | ० | १० | ९ | १ | ५ | ५ | ० |
| ५९ | २८ | ९ | २९ | १६ | ९ | २३ | २८ | १७ | १७ | ० |
| ३७ | ३६ | ४ | २८ | ४४ | ४६ | १ | ३६ | २६ | २६ | ० |
| ४० | १६ | १३ | ९ | ४० | २ | २४ | १६ | ३० | ३० | ० |

अथ कालचक्रधनोदासावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोत्तर्वर्षाणि १० तस्योपवशाचक्रम्

| ध्रुवांक | गु० १ | म० १ | गु० २ | गु० ३ | म० ४ | गु० ५ | गु० ६ | गु० ७ | म० ८ | योगा |
|----------|-------|------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|------|
| ० | १ | ० | १ | ० | २ | ० | ० | १ | ० | १० |
| १ | ० | ८ | ७ | १० | १ | ६ | १० | ७ | ८ | ० |
| ६ | ० | १२ | ६ | २४ | ६ | ० | २४ | ६ | १२ | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

अथ कालचक्रमकरादासावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपवशाचक्रम्

| ध्रुवांक | ग० १० | ग० ११ | गु० १२ | म० ८ | गु० ७ | गु० ६ | म० ४ | गु० ५ | गु० ३ | योगा |
|----------|-------|-------|--------|------|-------|-------|------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | ३ | ९ | ५ | ११ | २ | ५ | ० |
| ५६ | ७ | ७ | १९ | २८ | १ | २ | २५ | २४ | २ | ० |
| २८ | ४५ | ४५ | २४ | ३५ | ३ | २८ | ४५ | ४२ | २८ | ० |
| २४ | ५३ | ५३ | ४२ | १८ | ३२ | १४ | ५३ | २१ | २४ | ० |

अथ कालचक्रमकरादासावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपवशाचक्रम्

| ध्रुवांक | ग० ११ | गु० १२ | म० ८ | गु० ७ | गु० ६ | म० ४ | गु० ५ | गु० ३ | ग० १० | योगा |
|----------|-------|--------|------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | ३ | ९ | ५ | ११ | २ | ५ | २ | ० |
| ५८ | ७ | १९ | २८ | १ | २ | २५ | २४ | २ | ७ | ० |
| २८ | ४५ | २४ | ३५ | ३ | २८ | ४५ | ४२ | २८ | ४५ | ० |
| १४ | ५३ | ४२ | १८ | ३२ | १४ | ५३ | २१ | १४ | ५३ | ० |

अथ कालचक्रमकरादासावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोत्तर्वर्षाणि १० तस्योपवशाचक्रम्

| ध्रुवांक | गु० १२ | म० ८ | गु० ७ | गु० ६ | म० ४ | गु० ५ | गु० ३ | ग० १० | ग० ११ | योगा |
|----------|--------|------|-------|-------|------|-------|-------|-------|-------|------|
| ० | १ | ० | १ | १ | २ | ० | १ | ० | ० | १० |
| १२ | २ | ९ | १० | ० | ५ | ७ | ० | ५ | ५ | ० |
| २१ | ३ | २६ | १७ | २१ | १९ | १ | २१ | १९ | १९ | ० |
| १० | ३१ | २८ | ३८ | १० | २४ | ४५ | १० | २४ | २४ | ० |
| ३५ | ४६ | १४ | ४९ | ३५ | ४२ | ५३ | ३५ | ४३ | ४३ | ० |

अथ कालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगशिरसर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्रवारः | शु० ७ | म० ८ | बु० ९ | च० ४ | मू० ५ | बु० ३ | श० १० | श० ११ | बु० १२ | योगा |
|-----------|-------|------|-------|------|-------|-------|-------|-------|--------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | १० |
| २९ | ६ | ३ | ८ | ८ | ४ | ८ | ३ | ३ | ९ | ० |
| ३८ | २७ | २४ | २६ | २२ | २८ | २६ | २८ | २८ | २६ | ० |
| ४९ | ३१ | २१ | ४९ | ३५ | १४ | ४९ | ३५ | ३५ | १८ | ० |
| २४ | ४६ | १० | २५ | १७ | ७ | २५ | १८ | १८ | १४ | ० |

अथ कालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगशिरसर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्रवारः | शु० ७ | बु० ९ | च० ४ | मू० ५ | बु० ३ | श० १० | श० ११ | बु० १२ | म० १२ | योगा |
|-----------|-------|-------|------|-------|-------|-------|-------|--------|-------|------|
| ० | ६ | १ | ३ | ० | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| ७ | ० | ८ | ११ | ११ | ८ | ९ | ९ | १० | ३ | ० |
| ४५ | ४ | ९ | १३ | ८ | ९ | १ | १ | १७ | २४ | ० |
| ५२ | १४ | ५२ | ३ | ४९ | ५२ | ३ | ३ | ३८ | २१ | ० |
| ५६ | ७ | ५६ | ३२ | २५ | ५६ | ३२ | ३२ | ४९ | ११ | ० |

अथ कालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधशिरसर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्रवारः | बु० ९ | च० ४ | मू० ५ | बु० ३ | श० १० | श० ११ | बु० १२ | म० ८ | शु० ७ | योगा |
|-----------|-------|------|-------|-------|-------|-------|--------|------|-------|------|
| ० | ० | २ | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| ८ | ११ | २ | ६ | ११ | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ० |
| ७ | १३ | २० | १० | १३ | २ | २ | २१ | २६ | ९ | ० |
| ३ | ३ | २८ | ३५ | ३ | २८ | २८ | १० | ४९ | ५२ | ० |
| ३१ | ३२ | १४ | १८ | ३२ | १४ | १४ | ३५ | २५ | ५६ | ० |

अथ कालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये ज्येष्ठशिरसर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्रवारः | च० ४ | मू० ५ | बु० ३ | श० १० | श० ११ | बु० १२ | म० ८ | शु० ७ | बु० ९ | योगा |
|-----------|------|-------|-------|-------|-------|--------|------|-------|-------|------|
| ० | ५ | १ | २ | ० | ० | २ | १ | ३ | २ | २१ |
| २८ | २ | २ | २ | ११ | ११ | ५ | ८ | ११ | २ | ० |
| ५६ | ७ | २४ | २० | २५ | २५ | १९ | २२ | १३ | २० | ० |
| २८ | ४५ | ४२ | २८ | ४५ | ४५ | २४ | ३५ | ३ | २८ | ० |
| १४ | ५३ | ३१ | १४ | ५३ | ५३ | ४६ | १७ | ३२ | १४ | ० |

अथ कालचक्रमकरासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

| ध्रुवाक | सू० ५ | सू० ३ | श० १० | श० ११ | सू० १२ | म० ८ | सू० ७ | सू० ६ | स० ४ | योगा |
|---------|-------|-------|-------|-------|--------|------|-------|-------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ५ |
| २१ | ३ | ६ | २ | २ | ७ | ४ | ११ | ६ | २ | ० |
| १० | १५ | १० | २४ | २४ | १ | २८ | ८ | १० | २४ | ० |
| ३५ | ५२ | ३५ | ४२ | ४२ | ४५ | १४ | ४२ | ३५ | ४२ | ० |
| १७ | ५६ | १८ | २१ | २१ | ५३ | ७ | २५ | १८ | २१ | ० |

अथ कालचक्रमकरासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

| ध्रुवाक | सू० ३ | श० १० | श० ११ | सू० १२ | म० ८ | सू० ७ | सू० ६ | स० ४ | सू० ५ | योगा |
|---------|-------|-------|-------|--------|------|-------|-------|------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ० | २ | ० | ९ |
| ८ | ११ | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ११ | २ | ६ | ० |
| ७ | १३ | २ | २ | २१ | २६ | ९ | १३ | २० | १० | ० |
| ३ | ३ | २८ | २८ | १० | ४९ | ५३ | ३ | २८ | ३५ | ० |
| ३१ | ३२ | १४ | १४ | ३५ | २५ | ५६ | ३२ | १४ | १८ | ० |

अथ कालचक्रकुमासदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगशिरातर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | सू० २ | म० १ | सू० १२ | श० ११ | श० १० | सू० ९ | म० १ | सू० २ | सू० ३ | योगा |
|---------|-------|------|--------|-------|-------|-------|------|-------|-------|------|
| ० | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ३ | १ | १६ |
| २ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | १ | ८ | ० |
| ९ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० | २४ | ० |
| २३ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | २१ | ३४ | ० |
| ५१ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ४१ | ४२ | ० |

अथ कालचक्रकुमासदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

| ध्रुवाक | म० १ | सू० १२ | श० ११ | श० १० | सू० ९ | म० १ | सू० २ | सू० ३ | सू० २ | योगा |
|---------|------|--------|-------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| १ | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ७ | ४ | ९ | ४ | ० |
| २१ | २ | ३ | १ | १ | ३ | ५ | ५ | ३ | ५ | ० |
| ४१ | ३१ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ० |
| १२ | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ४८ | ० | १० | ० | ० |

अथ कालचक्रकुम्भाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये श्रीमातृदशावर्षाणि ७ तस्योपदशावर्षम्

| श्रुवाक | म०१ | शु०२ | बु०३ | शु०२ | म०१ | बृ०१२ | श ११ | श १० | बृ०९ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|-----|-------|------|------|------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ० | ७ | ४ | ९ | ४ | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ० |
| २१ | २ | ५ | ३ | ५ | २ | ३ | १ | १ | ३ | ० |
| ४१ | ३१ | ४७ | १६ | ४७ | ३१ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ० |
| १२ | ४८ | ० | १० | ० | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ० |

अथ कालचक्रकुम्भाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशावर्षम्

| श्रुवाक | शु०२ | बु०३ | शु०२ | म०१ | बृ०१२ | श ११ | श १० | बृ०९ | म०१ | योगा |
|---------|------|------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|
| ० | ३ | १ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| १ | १ | ८ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | ० |
| २३ | ० | २४ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० |
| ५१ | २१ | ३४ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | ० |
| १९ | ४१ | ४२ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ० |

अथ कालचक्रकुम्भाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधार्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशावर्षम्

| श्रुवाक | बु०३ | शु०२ | म०१ | बृ०१२ | श ११ | श १० | बृ०९ | म०१ | शु०२ | योगा |
|---------|------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| ९ | ११ | ८ | ९ | १ | ५ | ५ | १ | ९ | ८ | ० |
| २ | २१ | २४ | ३ | ० | ६ | ६ | ० | ३ | २४ | ० |
| १० | १९ | ३४ | १५ | २१ | ८ | ८ | २१ | १५ | ३४ | ० |
| ७ | ३२ | ४२ | १० | ४२ | ४० | ४० | ४२ | १० | ४२ | ० |

अथ कालचक्रकुम्भाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये चरार्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशावर्षम्

| श्रुवाक | म०४ | मृ०५ | बु०६ | शु०७ | म०८ | बृ०९ | श १० | श ११ | बृ०१२ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|-------|------|
| ० | ५ | १ | २ | ३ | १ | २ | ० | ० | ० | २१ |
| २ | १ | २ | २ | १० | ८ | ५ | ११ | ११ | ५ | ० |
| २७ | १६ | १९ | ११ | २६ | १५ | ९ | २१ | २१ | ९ | ० |
| ५४ | २ | ३२ | ९ | ३० | २० | ४ | ३७ | ३७ | ४ | ० |
| २७ | ४७ | ५ | ४७ | ४२ | ५६ | ११ | ४१ | ४१ | ११ | ० |

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातिर्वर्षाणि ५ तस्योपदशावर्षाणि

| शुक्रवार | सू०५ | सू०६ | सू०७ | सू०८ | सू०९ | सू०१० | सू०११ | सू०१२ | सू०१३ | योगा |
|----------|------|------|------|------|------|-------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ५ |
| २० | ३ | ६ | ११ | ४ | ६ | २ | २ | ६ | २ | ० |
| ५५ | १४ | ८ | ४ | २६ | २९ | २३ | २३ | २९ | १९ | ० |
| ४८ | १० | २२ | ५३ | ३० | १८ | ४३ | ४३ | ८ | ३२ | ० |
| ५० | ४ | २० | १ | ४२ | ९ | १५ | १५ | ९ | ५ | ० |

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधतिर्वर्षाणि ९ तस्योपदशावर्षाणि

| शुक्रवार | सू०६ | सू०७ | सू०८ | सू०९ | सू०१० | सू०११ | सू०१२ | सू०१३ | सू०१४ | योगा |
|----------|------|------|------|------|-------|-------|-------|-------|-------|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | २ | ० | ९ |
| ७ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ० | २ | ६ | ० |
| ४० | ९ | २ | २३ | १६ | ० | ० | १६ | ११ | ८ | ० |
| २७ | ४ | ४७ | ४३ | ४४ | ४१ | ४१ | ४४ | ९ | २२ | ० |
| ५४ | ११ | २६ | १५ | ४० | ५१ | ५१ | ४० | ४६ | २० | ० |

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये मृगतिर्वर्षाणि १६ तस्योपदशावर्षाणि

| शुक्रवार | सू०७ | सू०८ | सू०९ | सू०१० | सू०११ | सू०१२ | सू०१३ | सू०१४ | सू०१५ | योगा |
|----------|------|------|------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|------|
| २ | २ | १ | ० | ० | ० | १ | ३ | ० | १ | १६ |
| ६ | ११ | ३ | १० | ८ | ८ | १० | १० | ११ | ८ | ० |
| ५८ | २१ | १८ | ९ | २७ | २७ | ९ | २६ | ४ | २ | ० |
| ३६ | ३७ | ५० | ४६ | ५४ | ५४ | ४६ | ३० | ५३ | ४७ | ० |
| १६ | ४१ | १४ | २ | २६ | २६ | २ | ४२ | १ | २६ | ० |

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शनितिर्वर्षाणि ७ तस्योपदशावर्षाणि

| शुक्रवार | सू०८ | सू०९ | सू०१० | सू०११ | सू०१२ | सू०१३ | सू०१४ | सू०१५ | सू०१६ | योगा |
|----------|------|------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | ० | १ | ७ |
| २९ | ६ | ९ | ३ | ३ | ९ | ८ | ४ | ८ | ३ | ० |
| १८ | २५ | २३ | २७ | २७ | २३ | १५ | २६ | २३ | १८ | ० |
| ८ | ६ | १ | १२ | १२ | १ | २० | ३० | ४३ | ५० | ० |
| २२ | ५९ | २४ | ३३ | ३३ | २४ | ५६ | ४२ | १५ | १४ | ० |

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरत्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशावर्षम्

| ध्रुवांक | सू०९ | श १० | श ११ | सू०१२ | च०४ | सू०५ | सू०६ | सू०७ | म०८ | योगा |
|----------|------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|
| ० | १ | ० | ० | १ | २ | ० | १ | १ | ० | १० |
| ११ | १ | ५ | ५ | १ | ५ | ६ | ० | १० | ९ | ० |
| ५१ | २८ | १७ | १७ | २८ | ९ | २९ | १६ | ९ | २३ | ० |
| ३७ | ३६ | २६ | २६ | २६ | ४ | १८ | ४४ | ४६ | १ | ० |
| ४० | १६ | ३० | ३० | १६ | १३ | ९ | ४० | २ | २४ | ० |

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यत्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशा चक्रम्

| ध्रुवांक | श १० | श ११ | सू०१२ | च०४ | सू०५ | सू०६ | सू०७ | म०८ | सू०९ | योगा |
|----------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | १ | २ | ५ | ८ | ३ | ५ | ० |
| ४४ | ६ | ६ | १७ | २१ | १३ | ० | २७ | २७ | १७ | ० |
| ३९ | ५८ | ५८ | २६ | ३७ | ४३ | ४१ | ५४ | १२ | २६ | ० |
| ४ | ३७ | ३७ | ३० | ४१ | १५ | ५१ | २६ | ३३ | ३० | ० |

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यत्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशा चक्रम्

| ध्रुवांक | श ११ | सू०१२ | च०४ | सू०५ | सू०६ | सू०७ | म०८ | सू०९ | श १० | योगा |
|----------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | ११ | २ | ५ | ८ | ३ | ५ | २ | ० |
| ४४ | ६ | १७ | २१ | २३ | ० | २७ | २७ | १७ | ६ | ० |
| ३९ | ५८ | २६ | ३७ | ४३ | ४१ | ५४ | १२ | २६ | ५८ | ० |
| ४ | ३७ | ३० | ४१ | १५ | ५१ | २६ | २३ | ३० | ३७ | ० |

अथ कालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरत्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशावर्षम्

| ध्रुवांक | सू०१२ | च०४ | सू०५ | सू०६ | सू०७ | म०८ | सू०९ | श १० | श ११ | योगा |
|----------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|------|
| ० | १ | २ | ० | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १० |
| ११ | १ | ५ | ६ | ० | १० | ९ | १ | ५ | ५ | ० |
| ५१ | २८ | ९ | २९ | १६ | ९ | २३ | २८ | १७ | १७ | ० |
| ३७ | ३६ | ४ | १८ | ४४ | ४६ | १ | ३६ | २६ | २६ | ० |
| ४० | १६ | १३ | ९ | ४० | २ | २४ | १६ | ३० | ३० | ० |

अपसव्यकालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदेशाचक्रम्

| पुर्वार्क | म०१ | पु०२ | बु०३ | सू०५ | च०४ | बृ०९ | श०१० | श०११ | बृ०१२ | योगः |
|-----------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|-------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ७ |
| २९ | ६ | ३ | ८ | ४ | ८ | ९ | ३ | ३ | ९ | ० |
| १८ | २५ | १८ | २३ | २६ | १५ | २३ | २७ | २७ | २३ | ० |
| ८ | ६ | ५० | ४३ | ३० | २० | १ | १२ | १२ | १ | ० |
| २२ | ५९ | १४ | १५ | ४२ | ५६ | २४ | ३३ | ३३ | २४ | ० |

अपसव्यकालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदेशाचक्रम्

| पुर्वार्क | बु०२ | बु०३ | सू०५ | च०४ | बृ०९ | श०१० | श०११ | पु०१२ | म०१ | योगः |
|-----------|------|------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|
| ० | २ | १ | ० | ३ | १ | २ | २ | १ | १ | १६ |
| ६ | ११ | ८ | ११ | १० | १० | ८ | ८ | १० | ३ | ० |
| ५८ | २१ | २ | ४ | २६ | ९ | २७ | २७ | ९ | १८ | ० |
| ३६ | ३७ | ४७ | ५३ | ३० | ४६ | ५४ | ५४ | ४६ | ५० | ० |
| १६ | ४१ | २६ | १ | ४२ | २ | २६ | २६ | २ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदेशाचक्रम्

| पुर्वार्क | बु०३ | सू०५ | च०४ | बृ०९ | श०१० | श०११ | पु०१२ | म०१ | पु०२ | योगः |
|-----------|------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|
| ० | ० | ० | २ | १ | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| ७ | ११ | ६ | २ | ० | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ० |
| ४० | ९ | ८ | ११ | १६ | ० | ० | १६ | २३ | २ | ० |
| २७ | ४ | २२ | ९ | ४४ | ४१ | ४१ | ४४ | ४३ | ४७ | ० |
| ५४ | ११ | २० | ४६ | ४० | ५२ | ५२ | ४० | १५ | २६ | ० |

अपसव्यकालचक्रवृत्तिकारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदेशाचक्रम्

| पुर्वार्क | सू०५ | च०४ | बृ०९ | श०१० | श०११ | पु०१२ | म०१ | पु०२ | बु०३ | योगः |
|-----------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ५ |
| २० | ३ | २ | ६ | २ | २ | ६ | ४ | ११ | ६ | ० |
| ५५ | १४ | १९ | २९ | २३ | २३ | २९ | २६ | ४ | ८ | ० |
| ४८ | ३९ | ३२ | १८ | ४३ | ४३ | १८ | ३० | ५३ | २२ | ० |
| ५० | ४ | ५ | ९ | १५ | १५ | ९ | ४२ | ९ | २० | ० |

अपसव्यकालवक्रमुश्रिकानदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चद्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशावक्रम्

| श्रुवाक | स०४ | शु०९ | श१० | श११ | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०५ | योगा |
|---------|-----|------|-----|-----|-------|-----|------|------|------|------|
| ० | ५ | २ | ० | ० | २ | १ | ३ | २ | १ | २१ |
| २७ | १ | ५ | ११ | ११ | ५ | ८ | १० | २ | २ | ० |
| ५४ | १६ | ९ | २१ | २१ | ९ | १५ | २६ | ११ | १९ | ० |
| ५६ | २ | ४ | ३७ | ३७ | ४ | २० | ३० | ९ | ३२ | ० |
| ७- | ४७ | ११ | ४१ | ४१ | ११ | ५६ | ४२ | ४६ | ५ | ० |

अपसव्यकालवक्रमुलागदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुध्रातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशावक्रम्

| श्रुवाक | शु०६ | शु०७ | म०८ | शु०१२ | श०१३ | श०१० | शु०९ | म०८ | शु०७ | योगा |
|---------|------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| ९ | ११ | ८ | ९ | १ | ५ | ५ | १ | ९ | ८ | ० |
| २ | २१ | २४ | ३ | ० | ६ | ६ | ० | ३ | २४ | ० |
| १० | १९ | ३४ | १५ | २१ | ८ | ८ | २१ | १५ | ३४ | ० |
| ७ | ३२ | ४२ | १० | ४२ | ४० | ४० | ४२ | १० | ४२ | ० |

— अपसव्यकालवक्रमुलागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये श्रुगौरतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशावक्रम्

| श्रुवाक | शु०७ | म०८ | शु०१२ | श११ | श१० | शु०९ | म०८ | शु०७ | शु०६ | योगा |
|---------|------|-----|-------|-----|-----|------|-----|------|------|------|
| ० | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | ० | ३ | १ | १६ |
| ९ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | १ | ८ | ० |
| २३ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० | २४ | ० |
| ५१ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | २१ | ३४ | ० |
| १९ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ४१ | ४२ | ० |

— अपसव्यकालवक्रमुलागदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशावक्रम्

| श्रुवाक | म०८ | शु०१२ | श११ | श१० | शु०९ | म०८ | शु०७ | शु०६ | शु०७ | योगा |
|---------|-----|-------|-----|-----|------|-----|------|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| ० | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ७ | ४ | ९ | ४ | ० |
| २१ | २ | ३ | १ | १ | ३ | २ | ५ | ३ | ५ | ० |
| ४१ | ३१ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ० |
| १२ | ४८ | ५३ | ४५ | ४५ | ५३ | ४८ | ० | १० | ० | ० |

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | सु० १२ | श० ११ | श० १० | सु० ९ | म० ८ | सु० ७ | सु० ६ | सु० ७ | म० ८ | योगा |
|----------|--------|-------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|------|
| १ | १ | ० | ० | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १० |
| १३ | २ | ५ | ५ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | ० |
| २२ | १३ | २३ | २३ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३ | ० |
| २४ | ४४ | २९ | २९ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ० |
| ३४ | ६ | ३८ | ३८ | ६ | ५२ | ३२ | ४२ | ३३ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | श० ११ | श० १० | सु० ९ | म० ८ | सु० ७ | सु० ६ | सु० ७ | म० ८ | सु० १२ | योगा |
|----------|-------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|--------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | ० |
| २० | ९ | ९ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ० |
| ५७ | २३ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | ० |
| ४९ | ५२ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ० |

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ० तस्योपदशा चक्रम्

| ध्रुवांक | श० १० | सु० ९ | म० ८ | सु० ७ | सु० ६ | सु० ७ | म० ८ | सु० १२ | श० ११ | योगा |
|----------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|--------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | २ | ० |
| २० | ९ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ९ | ० |
| ५७ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | २३ | ० |
| ४९ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

| ध्रुवांक | सु० ९ | म० ८ | सु० ७ | सु० ६ | सु० ७ | म० ८ | सु० १२ | श० ११ | श० १० | योगा |
|----------|-------|------|-------|-------|-------|------|--------|-------|-------|------|
| १ | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १० |
| १३ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | २ | ५ | ५ | ० |
| २३ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३ | १३ | २३ | २३ | ० |
| २४ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ४४ | ३९ | ३९ | ० |
| ३४ | ६ | ५२ | ३३ | ४२ | ३३ | ५२ | ६ | ३८ | ३८ | ० |

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये क्षीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्राक | म० ८ | शु० ७ | शु० ६ | शु० ५ | म० ८ | शु० १२ | श० ११ | श० १० | शु० ९ | योगा |
|---------|------|-------|-------|-------|------|--------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ० | ७ | ४ | ९ | ४ | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ४ |
| २१ | २ | ५ | ३ | ५ | २ | ३ | १ | १ | ३ | ० |
| ४१ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ३१ | ३६ | ३६ | ३६ | ३६ | ० |
| १२ | ४८ | ० | १० | ० | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शुभोत्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्राक | शु० ७ | शु० ६ | शु० ५ | म० ८ | शु० १२ | श० ११ | श० १० | शु० ९ | म० ८ | योगा |
|---------|-------|-------|-------|------|--------|-------|-------|-------|------|------|
| ० | ३ | १ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| १ | १ | ८ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | ० |
| २३ | ० | २४ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० |
| ५१ | २१ | ३४ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | ० |
| १९ | ४१ | ४२ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ० |

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शुभोत्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्राक | शु० ६ | शु० ५ | शु० ४ | शु० ३ | शु० २ | म० १ | शु० ९ | श० १० | श० ११ | योगा |
|---------|-------|-------|-------|-------|-------|------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | २ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ९ |
| ८ | ११ | ६ | २ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ० |
| ७ | १३ | १० | २० | १३ | ९ | २६ | २१ | २ | २ | ० |
| ३ | ३ | ३५ | २८ | ३ | ५२ | ४९ | १० | २८ | २८ | ० |
| ३१ | ३२ | १८ | १४ | ३२ | ५६ | २५ | ३५ | १४ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रतुलाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शुभोत्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्राक | शु० ५ | शु० ४ | शु० ३ | शु० २ | म० १ | शु० ९ | श० १० | श० ११ | शु० ६ | योगा |
|---------|-------|-------|-------|-------|------|-------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ५ |
| २१ | ३ | २ | ६ | ११ | ४ | ७ | २ | २ | ६ | ० |
| १० | १५ | २४ | १० | ८ | २८ | १ | २४ | २४ | १० | ० |
| ३५ | ५२ | ४२ | ३५ | ४९ | १४ | ४५ | ४२ | ४२ | ४५ | ० |
| १७ | ५६ | १ | १८ | २५ | ७ | ५१ | २१ | २१ | १८ | ० |

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चर्मातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्रांक | च० ४ | शु० ३ | शु० २ | म० १ | शु० ९ | श० १० | श० ११ | शु० ६ | शु० ५ | योगा |
|----------|------|-------|-------|------|-------|-------|-------|-------|-------|------|
| २ | ५ | २ | ३ | १ | २ | ० | ० | २ | १ | २१ |
| २८ | २ | २ | ११ | ८ | ५ | ११ | ११ | २ | २ | ० |
| ५६ | ७ | २० | १३ | २२ | १९ | २५ | २५ | २० | २४ | ० |
| २८ | ४५ | २८ | ३ | ३५ | २४ | ४५ | ४५ | १८ | ४२ | ० |
| १४ | ५३ | १४ | ३२ | १७ | ४३ | ५३ | ५३ | १४ | २१ | ० |

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा च०

| शुक्रांक | शु० ३ | शु० २ | म० १ | शु० ९ | श० १० | श० ११ | शु० ६ | शु० ५ | च० ४ | योगा |
|----------|-------|-------|------|-------|-------|-------|-------|-------|------|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | २ | ९ |
| ८ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ११ | ६ | २ | ० |
| ७ | १३ | ९ | २६ | २१ | २ | २ | १३ | १० | २० | ० |
| ३ | ३ | ५२ | ४९ | १० | ५८ | २८ | ३ | ३५ | २८ | ० |
| ३१ | ३२ | ५६ | २५ | ३५ | १४ | १४ | ३२ | १८ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगशिरसर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्रांक | शु० २ | म० १ | शु० ९ | श० १० | श० ११ | शु० ६ | शु० ५ | च० ४ | शु० ३ | योगा |
|----------|-------|------|-------|-------|-------|-------|-------|------|-------|------|
| २ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ३ | १ | १६ |
| ७ | ० | ३ | १० | ९ | ९ | ८ | ११ | ११ | ८ | ० |
| ४५ | ४ | २४ | १७ | १ | १ | ९ | १८ | १३ | ९ | ० |
| ५२ | १४ | २१ | ३८ | ३ | ३ | ५२ | ३९ | ३ | ५२ | ० |
| ५६ | ७ | ११ | ४९ | ३२ | ३२ | ५६ | २५ | ३२ | ५६ | ० |

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मीनातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

| शुक्रांक | म० १ | शु० ९ | श० १० | श० ११ | शु० ६ | शु० ५ | च० ४ | शु० ३ | शु० २ | योगा |
|----------|------|-------|-------|-------|-------|-------|------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| २९ | ६ | ९ | ३ | ३ | ८ | ४ | ८ | ८ | ३ | ० |
| ३८ | २७ | २६ | २८ | २८ | २६ | २८ | २२ | २६ | २४ | ० |
| ४९ | ३१ | २८ | ३५ | ३५ | ४९ | १४ | ३५ | ४९ | २१ | ० |
| २४ | ४६ | १४ | १८ | १८ | ३५ | ७ | १७ | २५ | १० | ० |

| अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोस्तवर्षाणि १० तस्योपशतचक्रम् | | | | | | | | | | |
|--|-------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|-------|------|------|
| शुक्रांक | शु० ९ | श० १० | श० ११ | शु० ६ | शु० ५ | शु० ४ | शु० ३ | शु० २ | श० १ | योगा |
| १ | १ | ० | ० | १ | ० | २ | १ | १ | ० | १० |
| १२ | २ | ५ | ५ | ० | ७ | ५ | ० | १० | ९ | ० |
| २१ | ३ | १९ | १९ | २१ | १ | १९ | २१ | १७ | २६ | ० |
| १० | ३१ | २४ | २४ | १० | ४५ | २४ | १० | ३८ | २८ | ० |
| ३५ | ४६ | ४३ | ४३ | ३५ | ५३ | ४३ | ३५ | ४९ | १४ | ० |

| अपसव्यकालचक्रकन्याशदिशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाशुक्रम् | | | | | | | | | | |
|--|-------|-------|-------|-------|------|-------|-------|------|-------|-----|
| सुयाक | श० १० | श० ११ | शु० ६ | शु० ५ | च० ४ | शु० ३ | शु० २ | म० १ | शु० ९ | योग |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | २ | ११ | ५ | ९ | ३ | ५ | ० |
| ५६ | ७ | ७ | २ | २४ | २५ | २ | १ | २८ | १९ | ० |
| २८ | ४५ | ४५ | २८ | ४२ | ४५ | २८ | ४ | ३५ | २४ | ० |
| १४ | ५३ | ५३ | १४ | २१ | ५३ | १४ | ३२ | १८ | ४२ | ० |

| अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तत्स्योपदशाचक्रम् | | | | | | | | | | |
|--|-------|-------|-------|------|-------|-------|------|-------|-------|------|
| पुत्राक | श० ११ | सु० ६ | सू० ५ | च० ४ | सु० ३ | सु० ३ | म० १ | वृ० ९ | श० १० | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | २ | ११ | ५ | ९ | ३ | ५ | २ | ० |
| ५६ | ७ | २ | २४ | २५ | २ | १ | २८ | १९ | ७ | ० |
| २८ | ४५ | २८ | ४२ | ४५ | २८ | ३ | ३५ | २४ | ४५ | ० |
| १४ | ५३ | १४ | २१ | ५३ | १४ | ३२ | १८ | ४२ | ५३ | ० |

[illegible]

| अपसव्यकालचक्रकशिशदावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम् | | | | | | | | | | |
|---|--------|-------|-------|-------|-------|-------|--------|--------|--------|------|
| ध्रुवाक | वृ० १२ | श० ११ | श० १० | वृ० ९ | म० ८ | शु० ७ | वृ० ६ | मू० ५ | च० ४ | योगा |
| १ | १ | ० | ० | १ | ० | १ | १ | ० | २ | १० |
| ११ | १ | ५ | ५ | १ | ९ | १० | ० | ६ | ५ | ० |
| ५१ | २८ | १७ | १७ | २८ | २३ | ९ | १६ | २९ | १ | ० |
| ३७ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | १ | ४६ | ४४ | १८ | ४ | ० |
| ४० | १६ | ३० | ३० | १६ | २४ | २ | ४० | ९ | १३ | ० |
| अपसव्यकालचक्रकशिशदावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम् | | | | | | | | | | |
| ध्रुवाक | श० ११ | श० १० | वृ० ९ | म० ८ | शु० ७ | वृ० ६ | मू० ५ | च० ४ | वृ० १२ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | ३ | ८ | ५ | २ | ११ | ५ | ० |
| ४४ | ६ | ६ | १७ | २७ | २७ | ० | २३ | २१ | १७ | ० |
| ३९ | ५८ | ५८ | २६ | १२ | ५४ | ४१ | ४३ | ३७ | २६ | ० |
| ४ | ३७ | ३७ | ३० | ३३ | २६ | ५१ | ३५ | ४१ | ३० | ० |
| अपसव्यकालचक्रकशिशदावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम् | | | | | | | | | | |
| ध्रुवाक | श० १० | वृ० ९ | म० ८ | शु० ७ | वृ० ६ | मू० ५ | च० ४ | वृ० १२ | श० ११ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | ३ | १ | ५ | २ | ११ | ५ | २ | ० |
| ४४ | ६ | १७ | २७ | २७ | ० | २३ | २१ | १७ | ६ | ० |
| ३९ | ५८ | २६ | १२ | ५४ | ४१ | ४३ | ३७ | २६ | ५८ | ० |
| ४ | ३७ | ३० | ३३ | २६ | ५१ | १५ | ४१ | ३० | ३७ | ० |
| अपसव्यकालचक्रकशिशदावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम् | | | | | | | | | | |
| ध्रुवाक | वृ० ९ | म० ८ | शु० ७ | वृ० ६ | मू० ५ | च० ४ | वृ० १२ | श० ११ | श० १० | योगा |
| १ | १ | ० | १ | १ | ० | २ | १ | ० | ० | १० |
| ११ | १ | ९ | १० | ० | ६ | ५ | १ | ५ | ५ | ० |
| ५१ | २८ | २३ | ९ | १६ | २९ | ९ | २८ | १७ | १७ | ० |
| ३७ | ३६ | १ | ४६ | ४४ | १८ | ४ | ३६ | २६ | २६ | ० |
| ४० | १६ | २४ | २ | ४० | ९ | १६ | १३ | १६ | ३० | ० |

पूर्वखण्डे पञ्चवत्वारिंशोऽध्यायः

अपसव्यकालचक्रकारिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | म० ८ | शु० ७ | बु० ६ | सू० ५ | च० ४ | वृ० ३ | श० २ | म० १ | बु० १ | योगा |
|---------|------|-------|-------|-------|------|-------|------|------|-------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ७ |
| २९ | ६ | ३ | ८ | ४ | ८ | ९ | ३ | ३ | ९ | ० |
| १८ | २५ | १८ | २३ | २६ | १५ | २३ | २७ | २७ | २३ | ० |
| ८ | ६ | ५० | ४३ | ३० | २० | १ | १२ | १२ | १ | ० |
| २२ | ५८ | १४ | १५ | ४२ | ५६ | २४ | ३३ | ३३ | २४ | ० |

अपसव्यकालचक्रकारिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये ज्येष्ठातर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | शु० ७ | बु० ६ | सू० ५ | च० ४ | वृ० ३ | म० २ | श० १ | बु० १ | म० ८ | योगा |
|---------|-------|-------|-------|------|-------|------|------|-------|------|------|
| ० | २ | १ | ० | ३ | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| ६ | ११ | ८ | ११ | १० | १० | ८ | ८ | १० | ३ | ० |
| ५८ | २१ | २ | ४ | २६ | ९ | २७ | २७ | ९ | १८ | ० |
| ३६ | ३७ | ४७ | ५३ | ३० | ४६ | ५४ | ५४ | ४६ | ५० | ० |
| १६ | ४१ | २६ | १ | ४२ | २ | २६ | २६ | २ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रकारिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये मृगशिरातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | बु० ६ | सू० ५ | च० ४ | वृ० ३ | श० २ | म० १ | बु० १ | म० ८ | शु० ७ | योगा |
|---------|-------|-------|------|-------|------|------|-------|------|-------|------|
| ० | ० | ० | २ | १ | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| ७ | ११ | ६ | २ | ० | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ० |
| ४० | ९ | ८ | ११ | १६ | ० | ० | १६ | २३ | २ | ० |
| २७ | ४ | २२ | ९ | ४४ | ४१ | ४१ | ४४ | ४३ | ४७ | ० |
| ५४ | ११ | २० | ४६ | ४० | ५१ | ५१ | ४० | १५ | २६ | ० |

अपसव्यकालचक्रकारिदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये मूषातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | सू० ५ | म० ४ | वृ० ३ | म० २ | श० १ | बु० १ | म० ८ | शु० ७ | बु० ६ | योगा |
|---------|-------|------|-------|------|------|-------|------|-------|-------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ११ | ६ | ५ |
| २० | ३ | २ | ६ | २ | २ | ६ | ४ | ११ | ८ | ० |
| ५५ | १४ | १९ | २९ | २३ | २३ | २९ | २६ | ४ | २२ | ० |
| ४८ | ३९ | ३२ | १८ | ४३ | ४३ | १८ | ३० | ५३ | २० | ० |
| ५० | ४ | १५ | ९ | १५ | १५ | ९ | ४२ | १ | २० | ० |

अपराध्यकालचक्रकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये अष्टातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | च० ४ | वृ१२ | श०११ | श०१० | वृ० ९ | म० ८ | शु० ७ | वृ० ६ | म० ५ | योगा |
|----------|------|------|------|------|-------|------|-------|-------|------|------|
| ० | ५ | २ | ० | ० | २ | १ | ३ | २ | १ | २१ |
| २७ | १ | ५ | ११ | ११ | ५ | ८ | १० | २ | २ | ० |
| ५४ | १६ | ९ | २१ | २१ | ९ | १५ | २६ | ११ | १९ | ० |
| २५ | २ | ४ | ३७ | ३७ | ४ | २० | ३० | ९ | ३२ | ० |
| ७ | ४७ | ११ | ४१ | ४१ | ११ | ५६ | ४२ | ४६ | ५ | ० |

अपराध्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | शु० ३ | शु० २ | म० १ | वृ० ९ | श१० | श०११ | वृ१२ | म० १ | शु० २ | योगा |
|----------|-------|-------|------|-------|-----|------|------|------|-------|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| ९ | ११ | ८ | ९ | १ | ५ | ५ | १ | ९ | ८ | ० |
| २ | २१ | २४ | ३ | ० | ६ | ६ | ० | ३ | २४ | ० |
| १० | १९ | ३४ | १५ | २१ | ८ | ८ | २१ | १५ | ३४ | ० |
| ७ | ३२ | ४२ | १० | ४२ | ४० | ४० | ४२ | १० | ४२ | ० |

अपराध्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगशिरातर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | शु० २ | म० १ | वृ० ९ | श०१० | श११ | वृ०१२ | म० १ | शु० २ | वृ० ३ | योगा |
|----------|-------|------|-------|------|-----|-------|------|-------|-------|------|
| ० | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ३ | ० | १६ |
| ९ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | १ | ८ | ० |
| २३ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० | २४ | ० |
| ५१ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | २१ | ३४ | ० |
| १९ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ४१ | ४२ | ० |

अपराध्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | म० १ | वृ० ९ | श०१० | श०११ | वृ१२ | म० १ | शु० २ | वृ० ३ | शु० २ | योगा |
|----------|------|-------|------|------|------|------|-------|-------|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| ० | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ७ | ४ | १ | ४ | ० |
| २१ | २ | ३ | १ | १ | ३ | २ | ५ | ३ | ५ | ० |
| ४१ | ३१ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ० |
| १२ | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ४८ | ० | १० | ० | ० |

पूर्वसूच्ये पञ्चवारिणोऽध्यायः

अपसव्य काल चक्र मियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोस्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशावकम्

| शुक्राक | शु०१ | श १० | श ११ | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | म०१ | योगा |
|---------|------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|
| १ | १ | ० | ० | १ | १ | १ | १ | १ | ० | १० |
| ३ | २ | ५ | ५ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | ० |
| २२ | १३ | २३ | २३ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३ | ० |
| २४ | ४४ | ३९ | ३९ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ० |
| ३४ | ६ | ३८ | ३८ | ६ | ५२ | ३३ | ४२ | ३३ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावकम्

| शुक्राक | श १० | श ११ | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | म०१ | शु०१ | योगा |
|---------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | ० |
| २० | १ | १ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ० |
| ५७ | २३ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | ० |
| ४९ | ५२ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ० |

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशावकम्

| शुक्राक | श ११ | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | म०१ | शु०१ | श १० | योगा |
|---------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | २ | ० |
| २० | १ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | १ | ० |
| ५७ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | २३ | ० |
| ४९ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोस्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशावकम्

| शुक्राक | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | म०१ | शु०१ | श १० | श ११ | योगा |
|---------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|------|
| १ | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १० |
| १३ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | ३ | २३ | २३ | ० |
| २२ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३६ | ४४ | २९ | २९ | ० |
| २४ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३३ | ६ | ३८ | ३८ | ० |
| ३४ | ६ | ५२ | ३३ | ४१ | ३३ | ५२ | ६ | ३८ | ३८ | ० |

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि तन्मध्ये भीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | म०१ | शु०२ | बु०३ | शु०२ | म०१ | शु०९ | श १० | श ११ | शु०१२ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|-------|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ० | ७ | ४ | ९ | ४ | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ० |
| २१ | २ | ५ | ३ | ५ | २ | ३ | १ | १ | ३ | ० |
| ४१ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ३१ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ० |
| १२ | ४८ | ० | १० | ० | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगोतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | शु०२ | बु०३ | शु०२ | म०१ | शु०९ | श १० | श ११ | शु०१२ | म०१ | योगा |
|---------|------|------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|
| १ | ३ | १ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| ९ | १ | ८ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | ० |
| २३ | ० | २४ | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० |
| ५१ | २१ | ३४ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | ० |
| १९ | ४१ | ४२ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ० |

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | बु०३ | सू०५ | च०४ | बु०६ | शु०७ | म०८ | शु०१२ | श ११ | श १० | योगा |
|---------|------|------|-----|------|------|-----|-------|------|------|------|
| १ | ० | ० | २ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ९ |
| ८ | ११ | ६ | २ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ० |
| ७ | १३ | १० | २० | १३ | ९ | २६ | २१ | २ | २ | ० |
| ३ | ३ | ३५ | २८ | ३ | ५२ | ४९ | १० | २८ | २८ | ० |
| ३१ | ३२ | १८ | १४ | ३२ | ५६ | २५ | ३५ | १४ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रमियुनाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगोतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवाक | सू०५ | च०४ | बु०६ | शु०७ | म०८ | शु०१२ | श १० | श ११ | बु०३ | योगा |
|---------|------|-----|------|------|-----|-------|------|------|------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ५ |
| २१ | ३ | २ | ६ | ११ | ४ | ७ | २ | २ | ६ | ० |
| १० | १५ | २४ | १० | ८ | २८ | १ | २४ | २४ | १० | ० |
| ३५ | ५२ | ४२ | ३५ | ४९ | १४ | ४५ | ४२ | ४२ | ३५ | ० |
| १७ | ५६ | २१ | १८ | २५ | १७ | ५३ | २१ | २१ | १८ | ० |

पूर्वपक्षे पञ्चत्वारिंशोऽध्यायः

अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चद्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्राक | च०४ | बु०६ | गु०७ | म०८ | गु०१२ | श १० | श ११ | बु०३ | सू०५ | योगा |
|---------|-----|------|------|-----|-------|------|------|------|------|------|
| २ | ५ | २ | ३ | १ | २ | ० | ० | २ | १ | २१ |
| २८ | २ | २ | ११ | ८ | ५ | ११ | ११ | २ | २ | ० |
| ५६ | ७ | २० | १३ | २२ | १९ | २५ | २५ | २० | २४ | ० |
| २८ | ५४ | १८ | ३ | ३५ | २४ | ४५ | ४५ | २८ | ४२ | ० |
| १४ | ५३ | १४ | ३२ | १७ | ४२ | ५३ | ५३ | १४ | २१ | ० |

अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्राक | बु०६ | गु०७ | म०८ | गु०१२ | श १० | श ११ | बु०३ | सू०५ | च०४ | योगा |
|---------|------|------|-----|-------|------|------|------|------|-----|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | २ | ९ |
| ८ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ११ | ६ | २ | ० |
| ७ | १३ | ९ | २६ | २१ | २ | २ | १३ | ० | २० | ० |
| ३ | ३ | ५२ | ४९ | १० | २८ | २८ | ३ | ३५ | २८ | ० |
| ३१ | ३२ | ५६ | २५ | ३५ | १४ | १४ | ३२ | १८ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृगशिरावर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्राक | गु०७ | म०८ | गु०१२ | श १० | श ११ | बु०३ | सू०५ | च०४ | बु०६ | योगा |
|---------|------|-----|-------|------|------|------|------|-----|------|------|
| ३ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | ० | ३ | १ | १६ |
| ७ | ० | ३ | १० | ९ | ९ | ८ | ११ | ११ | ८ | ० |
| ४५ | ४ | २४ | १७ | १ | १ | ९ | ८ | १३ | ९ | ० |
| ५२ | १४ | २१ | ३८ | ३ | ३ | ५२ | ४९ | ३ | ५२ | ० |
| ५६ | ७ | ११ | ४९ | ३२ | ३२ | ५६ | २५ | ३२ | ५६ | ० |

अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मीनातर्वर्षाणि तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्राक | म०८ | गु०१२ | श १० | श ११ | बु०३ | सू०५ | च०४ | बु०६ | गु०७ | योगा |
|---------|-----|-------|------|------|------|------|-----|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| २९ | ६ | ९ | २८ | २८ | २६ | २८ | २२ | ३६ | २४ | ० |
| ३८ | २७ | २६ | ३५ | ३५ | ४९ | १४ | ३५ | ४९ | २१ | ० |
| ४९ | ३१ | २८ | १८ | १८ | २५ | ७ | १७ | २५ | १० | ० |
| २४ | ४६ | १४ | १८ | | | | | | | |

| अपसम्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम् | | | | | | | | | | |
|---|-------|------|------|------|------|-----|------|------|-----|------|
| शुक्रांक | सु०१२ | ग ११ | श १० | सु०३ | सू०५ | च०४ | सु०६ | सु०७ | म०८ | योगा |
| १ | १ | ० | ० | १ | ० | २ | १ | १ | ० | १० |
| १२ | २ | ५ | ५ | ० | ७ | ५ | ० | १० | ९ | ० |
| २१ | ३ | १९ | १९ | २१ | १ | १९ | २१ | १७ | २६ | ० |
| १० | ३१ | २४ | २४ | १० | ४५ | २४ | १० | ३८ | २८ | ० |
| २५ | ४६ | ४३ | ४३ | ३५ | ५३ | ४२ | ३५ | ४९ | १४ | ० |

| अपसव्यकालचक्रवृषभाशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्षाणि ४ तस्योपदशावचम् | | | | | | | | | | |
|---|------|------|------|------|-----|------|------|-----|-------|-----|
| ध्रुवांक | श ११ | श १० | सु०३ | सू०५ | च०४ | सु०३ | शु०२ | म०१ | वृ०१२ | योग |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | २ | ११ | ५ | ९ | ३ | ५ | ० |
| ५६ | ७ | ७ | २० | २४ | २५ | २ | १ | २८ | १९ | ० |
| २८ | ४५ | ४५ | २८ | ४२ | ४५ | २८ | ३ | ३५ | २४ | ० |
| १४ | ५३ | ५३ | १४ | २१ | ५३ | १४ | ३२ | १८ | ४२ | ० |

| अपसत्यकालचक्रवृद्धमासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शान्त्यर्हवर्षाणि ४ तस्योपदशावक्रम् | | | | | | | | | | |
|---|------|------|------|-----|------|------|-----|-------|------|------|
| पुष्यक | श १० | शु०३ | सू०५ | म०४ | शु०३ | शु०२ | म०१ | शु०१२ | श०१२ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | २ | ११ | ५ | १ | ३ | ५ | २ | ० |
| ५६ | ७ | २ | २४ | २५ | २ | १ | २८ | १९ | ७ | ० |
| २८ | ४५ | २८ | ४२ | ४५ | २८ | ३ | ३५ | २४ | ४५ | ० |
| १४ | ५३ | १४ | २१ | ५३ | १४ | ३२ | १८ | ४२ | ५३ | ० |

[illegible]

[illegible]

पूर्ववर्षे पञ्चवारिशीउद्याय

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोस्तर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्रा | शु०१२ | श ११ | श १० | शु०९ | म०८ | शु०७ | शु०६ | सू०५ | च०४ | योगा |
|--------|-------|------|------|------|-----|------|------|------|-----|------|
| १ | १ | ० | ० | १ | ० | १ | १ | ० | २ | १० |
| ११ | १ | ५ | ५ | १ | ९ | १० | ० | ६ | ५ | ० |
| ५१ | २८ | १७ | १७ | २८ | २३ | ९ | १६ | २९ | ९ | ० |
| ३७ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | १ | ४६ | ४४ | १८ | ४ | ० |
| ४० | १६ | ३० | ३० | १६ | २४ | २ | ४० | ० | १३ | ० |

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्रा | श ११ | श १० | शु०९ | म०८ | शु०७ | शु०६ | सू०५ | च०४ | शु०१२ | योगा |
|--------|------|------|------|-----|------|------|------|-----|-------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | ३ | ८ | ५ | २ | ११ | ५ | ० |
| ४४ | ६ | ६ | १७ | २७ | २७ | ० | २३ | २१ | १७ | ० |
| ३९ | ५८ | ५८ | २६ | १३ | ५४ | ४१ | ४३ | ३७ | २६ | ० |
| ४ | ३७ | ३७ | ३० | ३३ | २६ | ५१ | १५ | ४१ | ३० | ० |

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्रा | श १० | शु०९ | म०८ | शु०७ | शु०६ | सू०५ | च०४ | शु०१२ | श ११ | योगा |
|--------|------|------|-----|------|------|------|-----|-------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | ३ | ८ | ५ | २ | ११ | ५ | २ | ० |
| ४४ | ६ | १७ | २७ | २७ | ० | २३ | २१ | १७ | ६ | ० |
| ३९ | ५८ | २६ | १२ | ५४ | ४१ | ४३ | ३७ | २६ | ५८ | ० |
| ४ | ३७ | ३० | ३३ | २६ | ५१ | १५ | ४१ | ३० | ३७ | ० |

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोस्तर्षाणि तस्योपदशा चक्रम् ०१

| शुक्रा | शु०९ | म०८ | शु०७ | शु०६ | सू०५ | च०४ | शु०१२ | श ११ | श १० | योगा |
|--------|------|-----|------|------|------|-----|-------|------|------|------|
| १ | १ | ० | १ | १ | ० | २ | १ | ० | ० | १० |
| ११ | ० | ९ | १० | १६ | २९ | ९ | २८ | १७ | १७ | ० |
| ५१ | २८ | २३ | ९ | ४४ | १८ | ४ | ३६ | २६ | २६ | ० |
| ३७ | ३६ | १ | ४६ | ४० | ९ | १३ | १६ | ३० | ३० | ० |
| ४० | १६ | २४ | २ | | | | | | | |

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

| पुष्पांक | म०८ | शु०७ | शु०६ | सू०५ | च०४ | वृ०१२ | श ११ | श १० | वृ०९ | योगा |
|----------|-----|------|------|------|-----|-------|------|------|------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ७ |
| २१ | ६ | ३ | ८ | ४ | ८ | ९ | ३ | ३ | ९ | ० |
| १८ | २५ | १८ | २३ | २६ | १५ | २३ | २७ | २७ | २३ | ० |
| ८ | ६ | ५० | ४३ | ३० | २० | १ | १२ | १२ | १ | ० |
| २२ | ५८ | १४ | १५ | ४२ | ५६ | २४ | ३३ | ३३ | २४ | ० |

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

| पुष्पांक | शु०७ | शु०६ | सू०५ | च०४ | वृ०१२ | श ११ | श १० | वृ०९ | म०८ | योगा |
|----------|------|------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|
| १ | २ | १ | ० | ३ | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| ६ | ११ | ८ | ११ | १० | १० | ८ | ८ | १० | ३ | ० |
| ५८ | २१ | २ | ४ | २६ | ९ | २७ | २७ | ९ | १८ | ० |
| ३६ | ३७ | ४७ | ५३ | ३० | ४६ | ५४ | ५४ | ४६ | ५० | ० |
| १६ | ४१ | २६ | १ | ४२ | २ | २६ | २६ | २ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

| पुष्पांक | शु०६ | सू०५ | च०४ | वृ०१२ | श ११ | श १० | वृ०९ | म०८ | शु०७ | योगा |
|----------|------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|------|
| १ | ० | ० | २ | १ | १ | १ | १ | ० | १ | ९ |
| ७ | ११ | ६ | २ | ० | ५ | ५ | ० | ८ | ८ | ० |
| ४० | ९ | ८ | ११ | १६ | ० | ० | १६ | २३ | २ | ० |
| २७ | ४ | २२ | ९ | ४४ | ४१ | ४१ | ४४ | ४३ | २७ | ० |
| ५० | ११ | २० | ४६ | ४० | ५१ | ५१ | ४० | १५ | २६ | ० |

अपसव्यकालचक्रमीनाशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चंद्रतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

| पुष्पांक | सू०५ | च०४ | वृ०१२ | श ११ | श १० | वृ०९ | म०८ | शु०७ | शु०६ | योगा |
|----------|------|-----|-------|------|------|------|-----|------|------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ५ |
| २० | ३ | २ | ६ | २ | २ | ६ | ४ | ११ | ६ | ० |
| ५५ | १४ | १९ | ३९ | २३ | २३ | २९ | २६ | ४ | ८ | ० |
| ४८ | ३९ | ३२ | १८ | ४३ | ४३ | १८ | ३० | ५३ | २२ | ० |
| ५० | ४ | ५ | ९ | १५ | १५ | ९ | ४२ | १ | २० | ० |

पूर्वस्थे पञ्चत्वारिंशोऽध्यायः

अपसव्यकालचक्रमीनारादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये ब्रह्मतर्षावर्षाणि २१ तस्योपरशावकम्

| शुक्रांक | च०४ | वृ०१३ | श ११ | श १० | वृ०९ | म०८ | शु०७ | वृ०६ | म०५ | योगा |
|----------|-----|-------|------|------|------|-----|------|------|-----|------|
| ० | ५ | २ | ० | ० | २ | १ | ३ | २ | १ | २१ |
| २७ | १ | ५ | ११ | ११ | ५ | ८ | १० | २ | २ | ० |
| ५४ | १६ | ९ | २१ | २१ | ९ | १५ | २६ | ११ | ११ | ० |
| २५ | २ | ४ | ३७ | ३७ | ४ | २० | ३ | १ | ३२ | ० |
| ७ | ४७ | ११ | ४१ | ४१ | ११ | ५६ | ४२ | ४६ | ५ | ० |

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधतर्षावर्षाणि ९ तस्योपरशावकम्

| शुक्रांक | शु०३ | शु०२ | म०१ | वृ०९ | श १० | श ११ | वृ०१२ | म०१ | शु०२ | योगा |
|----------|------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|
| ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | ० | १ | ९ |
| १ | ११ | ८ | ९ | १ | ५ | ५ | १ | ९ | ८ | ० |
| ९ | २१ | २४ | ३ | ० | ६ | ६ | ० | ३ | २४ | ० |
| २ | २१ | २४ | ३ | २१ | ८ | ८ | २१ | १५ | ३४ | ० |
| १० | १९ | ३४ | १५ | ४२ | ४० | ४० | ४२ | १० | ४२ | ० |
| ७ | ३२ | ४२ | १० | ४२ | | | | | | |

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगशिरावर्षाणि १६ तस्योपरशावकम्

| शुक्रांक | शु०२ | म०१ | वृ०९ | श १० | श ११ | वृ०१२ | म०१ | शु०२ | वृ०३ | योगा |
|----------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|------|
| ३ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ३ | १ | १६ |
| ९ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | १ | ८ | ० |
| २३ | ० | ५ | १३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० | २४ | ० |
| ५१ | २१ | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | २१ | ३४ | ० |
| १९ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ४१ | ४२ | ० |

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये धर्म्यावर्षाणि ७ तस्योपरशावकम्

| शुक्रांक | म०१ | वृ०९ | श १० | श ११ | वृ०१२ | म०१ | शु०२ | वृ०३ | शु०२ | योगा |
|----------|-----|------|------|------|-------|-----|------|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| १ | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ७ | ४ | ९ | ४ | ० |
| २१ | २ | ३ | १ | १ | ३ | २ | ५ | १ | ९ | ० |
| ४१ | ११ | ३६ | २६ | ३६ | ३६ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ० |
| १२ | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ४८ | ० | १० | ० | ० |

अपसव्यकालचक्रकुभाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरेतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | शु०१ | श १० | श ११ | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | म०१ | योगा |
|----------|------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|
| ० | १ | ० | ० | १ | १ | १ | १ | १ | ० | १० |
| १३ | २ | ५ | ५ | २ | १० | ११ | १० | ११ | १० | ० |
| २२ | १३ | २३ | २३ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३ | ० |
| २४ | ४४ | ३९ | ३९ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ० |
| ३४ | ६ | ३८ | ३८ | ६ | ५२ | ३३ | ४२ | ३३ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रकुभाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | श १० | श ११ | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | म०१ | शु०१ | योगा |
|----------|------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | ० |
| २० | ९ | ९ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ० |
| ५७ | २३ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | ० |
| ४८ | ५२ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ० |

अपसव्यकालचक्रकुभाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | श ११ | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | म०१ | शु०१ | श १० | योगा |
|----------|------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १७ | २ | ५ | ४ | ९ | ५ | ९ | ४ | ५ | २ | ० |
| २० | ९ | २३ | १ | ७ | ६ | ७ | १ | २३ | ९ | ० |
| ५७ | २३ | २९ | २६ | ३५ | ८ | ३५ | २६ | २९ | २३ | ० |
| ४८ | ५२ | ३८ | ४५ | २५ | ४० | २५ | ४५ | ३८ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रकुभाशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरेतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

| ध्रुवांक | शु०१२ | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०२ | म०१ | शु०१ | श १० | श ११ | योगा |
|----------|-------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|------|
| ० | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १० |
| १३ | २ | १० | ११ | १ | ११ | १० | २ | ५ | ५ | ० |
| २२ | १३ | ३ | ३ | ० | ३ | ३ | १३ | २३ | २३ | ० |
| २४ | ४४ | ३६ | ५८ | २१ | ५८ | ३६ | ४४ | २९ | २९ | ० |
| ३४ | ६ | ५२ | ३३ | ४१ | ३३ | ५२ | ६ | ३८ | ३८ | ० |

पूर्वमध्ये पञ्चत्वारिंशोऽध्यायः

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मीमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

| श्रुवाक | म०१ | शु०२ | शु०३ | शु०४ | म०१ | शु०१ | श १० | श ११ | शु०१२ | योगा |
|---------|-----|------|------|------|-----|------|------|------|-------|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ० | ७ | ४ | ९ | ४ | ७ | १० | ४ | ४ | १० | ० |
| २१ | २ | ५ | ३ | ५ | २ | ३ | १ | १ | ३ | ० |
| ४१ | ३१ | ४७ | १५ | ४७ | ३१ | ३६ | २६ | २६ | ३६ | ० |
| १२ | ४८ | ० | १० | ० | ४८ | ५२ | ४५ | ४५ | ५२ | ० |

अपसव्यकालचक्रकुमारादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये मृगशिरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

| श्रुवाक | शु०२ | शु०३ | शु०४ | म०१ | शु०१ | श १० | श ११ | शु०१२ | म०१ | योगा |
|---------|------|------|------|-----|------|------|------|-------|-----|------|
| १ | ३ | १ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | १६ |
| २ | १ | ८ | १ | ४ | ११ | ९ | ९ | ११ | ४ | ० |
| ९ | १ | ० | ० | ५ | ३ | ७ | ७ | ३ | ५ | ० |
| २३ | ० | २४ | ० | ४७ | ५८ | ३५ | ३५ | ५८ | ४७ | ० |
| ५१ | २१ | ३४ | २१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ० |
| ११ | ४१ | ४२ | ४१ | ० | ३३ | २५ | २५ | ३३ | ० | ० |

अपसव्यकालचक्रमकरादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृषातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | शु०३ | शु०५ | च०४ | शु०६ | शु०७ | म०८ | शु०१२ | श ११ | श १० | योगा |
|---------|------|------|-----|------|------|-----|-------|------|------|------|
| १ | ० | ० | २ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ५ |
| ८ | ११ | ६ | २ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ० |
| ७ | १३ | १० | २० | १३ | ९ | २६ | २१ | २ | २ | ० |
| ३ | ३ | ३५ | २८ | ३ | ५२ | ४९ | १० | २८ | २८ | ० |
| ३१ | ३२ | १८ | १४ | ३२ | ५६ | २५ | ३५ | १४ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रमकरादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये मृषातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

| श्रुवाक | शु०५ | च०४ | शु०६ | शु०७ | म०८ | शु०९ | श ११ | श १० | शु०३ | योगा |
|---------|------|-----|------|------|-----|------|------|------|------|------|
| ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ५ |
| २१ | ३ | २ | ६ | ११ | ४ | ७ | २ | २ | १० | ० |
| १० | १५ | २४ | १० | ८ | २८ | १ | २४ | २४ | ६ | ० |
| ३५ | ५२ | ४२ | ३५ | ४९ | १४ | ४५ | ४२ | ४२ | ३५ | ० |
| १७ | ५६ | २१ | १८ | २५ | ७ | ५३ | २१ | २१ | १८ | ० |

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चत्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्रांक | च०४ | शु०६ | शु०७ | म०८ | शु०१२ | श ११ | श १० | शु०३ | शु०५ | योगा |
|----------|-----|------|------|-----|-------|------|------|------|------|------|
| २ | ५ | २ | ३ | १ | २ | ० | ० | २ | १ | २१ |
| २८ | २ | २ | ११ | ८ | ५ | ११ | ११ | २ | २ | ० |
| ५६ | ७ | २० | १३ | ३२ | १९ | २५ | २५ | २० | २४ | ० |
| २८ | ४५ | २८ | ३ | ३५ | २४ | ४५ | ४५ | २८ | ४२ | ० |
| १४ | ५३ | १४ | ३२ | १७ | ४२ | ५३ | ५३ | १४ | २१ | ० |

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्रांक | शु०६ | शु०७ | म०८ | शु०१२ | श ११ | श १० | शु०३ | शु०५ | च०४ | योगा |
|----------|------|------|-----|-------|------|------|------|------|-----|------|
| १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | ० | ० | २ | ९ |
| ८ | ११ | ८ | ८ | ० | ५ | ५ | ११ | ६ | २ | ० |
| ७ | १३ | ९ | २६ | २१ | २ | २ | १३ | १० | २० | ० |
| ३ | ३ | ५२ | ४९ | १० | २८ | २८ | ३ | ३५ | २८ | ० |
| २१ | ३२ | ५६ | २५ | ३५ | १४ | १४ | ३२ | १८ | १४ | ० |

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्रांक | शु०७ | म०८ | शु०१२ | श ११ | श १० | शु०३ | शु०५ | च०४ | शु०६ | योगा |
|----------|------|-----|-------|------|------|------|------|-----|------|------|
| २ | ३ | १ | १ | ० | ० | १ | ० | ३ | १ | १६ |
| ७ | ० | ३ | १० | ९ | ९ | ८ | ११ | ११ | ८ | ० |
| ४५ | ४ | २४ | १७ | १ | १ | ९ | ८ | १३ | ९ | ० |
| ५२ | १४ | २१ | ३८ | ३ | ३ | ५२ | ४९ | ३ | ५२ | ० |
| ५६ | ७ | ११ | ४९ | ३२ | ३२ | ५६ | ३५ | ३२ | ५६ | ० |

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शीमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

| शुक्रांक | म०८ | शु०१२ | श ११ | श १० | शु०३ | शु०५ | च०४ | शु०६ | शु०७ | योगा |
|----------|-----|-------|------|------|------|------|-----|------|------|------|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | ७ |
| २९ | ६ | ९ | ३ | ३ | ८ | ४ | ८ | ८ | ३ | ० |
| ३८ | २७ | २६ | २८ | २८ | २६ | २८ | २२ | ३६ | २४ | ० |
| ४९ | ३१ | २८ | ३५ | ३५ | ४९ | १४ | ३५ | ४९ | ३१ | ० |
| २४ | ४६ | १४ | १८ | १८ | २५ | ७ | १७ | २५ | १० | ० |

पूर्वसप्तमे पञ्चदत्वारिशोऽध्यायः

| अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोर्तर्द्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम् | | | | | | | | | | |
|---|-------|------|------|------|------|-----|------|------|-----|------|
| मृगशिरः | कु०१२ | श ११ | आ १० | बु०३ | सू०५ | च०४ | बु०६ | शु०७ | म०८ | मेषा |
| १ | १ | ० | ० | १ | ० | २ | १ | १ | ० | १० |
| १२ | २ | ५ | ५ | ० | ७ | ५ | ० | १० | ९ | ० |
| २१ | ३ | १९ | १९ | २१ | १ | १९ | २१ | १७ | २६ | ० |
| १० | ३१ | २४ | २४ | १० | ४५ | २४ | १० | ३८ | २८ | ० |
| ३५ | ४६ | ४३ | ४३ | ३५ | ५३ | ४२ | ३५ | ४९ | १४ | ० |

| ३५ | ४६ | ४३ | ४३ | ३५ | ३५ | ३५ | ३५ | ३५ | ३५ | ३५ |
|---|------|------|------|------|------|------|------|-----|-------|------|
| अपसव्यकालवक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्षवर्षाणि ४ तस्योपदशावक्रमम् | | | | | | | | | | |
| मुवाक | श ११ | श १० | मु०३ | मु०५ | मु०४ | मु०२ | मु०२ | म०१ | मु०१२ | योगा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | २ | ५ | २ | ११ | ५ | १ | ३ | ५ | ० |
| ५६ | ७ | ७ | २ | २४ | ३५ | २ | १ | २८ | १९ | ० |
| २८ | ४५ | ४५ | २८ | ४२ | ४५ | २८ | ३ | ३५ | २४ | ० |
| १४ | ५३ | ५३ | १४ | २१ | ५३ | १४ | ३२ | १८ | ४२ | ० |
| अपसव्यकालवक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्षवर्षाणि ४ तस्योपदशावक्रमम् | | | | | | | | | | |

| क्रमांक | श १० | मु०३ | सू०५ | च०४ | मु०३ | मु०२ | म०१ | हु०१२ | श ११ | योग |
|---------|------|------|------|-----|------|------|-----|-------|------|-----|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| १६ | २ | ५ | २ | ११ | ५ | १ | ३ | ५ | २ | ० |
| ५६ | ७ | २ | २४ | २५ | २ | १ | २८ | १९ | ७ | ० |
| २८ | ४५ | २८ | ४२ | ४५ | २८ | ३ | ३५ | २४ | ४५ | ० |
| १४ | ५३ | १४ | २१ | ५३ | १४ | ३२ | १८ | ४२ | ५३ | ० |

[illegible]

[illegible][illegible][illegible][illegible]

[illegible][illegible][illegible][illegible]

[illegible][illegible][illegible][illegible]

अथाग्रे कालचक्रमाह

मेघांशे चौरको विद्याङ्गुलीमाङ्गुलीकांशे भवेत् ॥ बुधांशे ज्ञानसंपन्नश्रंद्रे च तृपतिर्भवेत् ॥४१॥
सिंहांशे राजसः प्रोक्तः सौम्यांशे पंडितो भवेत् ॥ तुलांशे राजमंत्री च मीमांशे निर्धनो भवेत्
॥४२॥ चापांशे ज्ञानसंपुक्तो मकरांशे च पापकृत् ॥ कुम्भांशे च वणिक्कर्म मीनांशे क्लिप्त
धाम्यवान् ॥४३॥

कालचक्र ज्ञातलक्षण

मेघाश मे चोर होता है। वृषाश मे श्रीमान्। मियुनाश मे ज्ञानी तथा कर्काश मे राजा होता है॥४१॥ सिंहाश मे रजोगुणी। कन्याश मे पंडित। तुलाश मे राजमंत्री। वृश्चिकाश मे निर्धन होता है॥४२॥ धनु अश मे ज्ञानी। मकराश मे पापकर्मा। कुम्भाश मे वणिग् वृत्ति। मीनाश मे अन्नपति होता है॥४३॥

अथोदयफलमाह

आदित्यस्योदये राज्यं कृषिभद्रोदये भवेत् ॥ अगारकस्य सूरः स्यात्पापकर्मणि संगतः ॥४४॥
बुधस्य विमता बुधिरत्यंतं पंडितो भवेत् ॥ गुरुशुक्रोदये राज्यं चौरको भंडकोदये
॥४५॥

उदय फल

सूर्य राशि के उदय मे जन्म होने से राजा होता है। चन्द्रराशि के उदय मे कृषक। मंगल की राशि के उदय मे शूरवीर तथा पापकर्मरत रहता है॥४४॥ बुधोदय मे निर्मल बुद्धि तथा अति मेघावी होता है। गुरु शुक्रोदय मे राजा और शनि के उदय मे चोर होता है॥४५॥

अथ देहजीवफलमाह

देहजीवसमायोगे भौमार्करविजादिभिः ॥ एकैकयोगे मरण बहुयोगेषु का कथा ॥४६॥ यत्र स्थानेषु संजीवो देहयोगसमन्वितः ॥ तत्र पापघर्हयोगे तद्दशामरण यदेत् ॥४७॥ देहयोगे महाबाधा जीवयोगे तु मृत्युदः ॥ द्वाभ्यां सयोगमात्रेण हन्यते नात्र सरायः ॥४८॥ जीवे जीवो यदा राहुः सौरिर्वकी रविः स्थितः ॥ मृत्युकालगतिं ज्ञात्वा शान्तिं कुर्यात्तथाविधि ॥४९॥ जीवे जीवो यदा सोमे सौम्ये जीवसितः स्थितः ॥ तदा सौख्यं प्रकुर्वन्ति रोगमृत्युविनाशम् ॥५०॥ पापक्षेत्रदशायोगे देहजीवो तु दुःखिती ॥ शुभक्षेत्रदशायोगे शुभयोगे शुभं भवेत् ॥५१॥ देहे शुभघर्हयुक्ते मृषणादि भुवं भवेत् ॥ जीवे शुभघर्हयुक्ते पुत्रदारादिकालमेत् ॥५२॥

देह जीव फल

देह राशि और जीव राशि में सूर्य मंगल शनि राहु, केतु में से एक एक ग्रह भी यदि हो तो मरण होता है। अनेक ग्रह यदि देह जीवराशि में हो तो क्या कहना ॥४६॥ देह राशि में पापग्रह हो तो महाकष्ट होता है। जीव राशि में पापग्रह हो तो उसकी (उस ग्रह की) दशा में मृत्यु होती है ॥४७॥ किसी एक ग्रह द्वारा देह जीव से योग हो तो उसकी दशा में मृत्यु होती है ॥४८॥ जीवराशि में गुरुराशि तथा राहु बक्री शनि सूर्य हो तो मृत्युयोग जनना और उस दशारम्भ काल में यथाविधि श्रान्ति करना चाहिए ॥४९॥ जीवराशि में गुरु हो और चन्द्रराशि हो। एव बुधराशि में गुरुशुक्र हो तो सौख्य होता है तथा रोग और शत्रु का नाश होता है ॥५०॥ देह जीवराशि में पापग्रह का योग होने से दुःखदायक और शुभयोग होने से शुभ होता है ॥५१॥ देह राशि में शुभग्रह हो तो भूषण आदि की प्राप्ति होती है। जीव राशि में शुभग्रह हो तो स्त्री पुत्रादि की प्राप्ति होती है ॥५२॥

अथ गतिप्रकरणमाह

प्रथमे गतिर्मङ्गुली द्वितीये मर्कटी तथा ॥ बाणासनवर्षत गति सिंहावलोकनम् ॥५३॥

गति प्रकरण

प्रथम माङ्गुली और दूसरी मर्कटी गति तथा तीसरी ५।९।११ तक की सिंहावलोकन गति होती है ॥५३॥

अथ फलमाह

मङ्गुले तु महाव्याधिर्मर्कट्या तु महद्भयम् ॥ सिंहावलोकने मरणं गर्गस्य वचनं यथा ॥५४॥

गतिफल

माङ्गुली की गति महाव्याधि वायिनी होती है। मर्कटी गति में महाभय और सिंहावलोकन गति में मरण होता है। यह गर्गजी का वचन है ॥५४॥

सिंहावलोकनगतिमाङ्गुलीगतिफलान्याह

कल्याणा कर्कटे वापि सिंहमे मियुनेपि च ॥ माण्डूकीगतिसप्तो वं तादृश रोगकारणम् ॥५५॥
मीने तु क्षत्रिके वापि चापौ मेघस्तथैव च ॥ सिंहावलोकनं चैव तादृशं च फलं सप्तैव ॥५६॥
सिंहावगतिमार्गे च माङ्गुलीगतिसप्तम् ॥ अपमृत्युकरस्तस्मिन् प्रायश्चित्तेतिशोचति ॥५७॥ मीने

तु वृश्चिके याते ज्वरो भवति निश्चितम् ॥ कन्याया कर्कटे याते मातृबधुविनाशनम् ॥५८॥
 सिंहे तु मिथुने याते स्त्रिया व्याधिर्मयेद् ध्रुवम् ॥ कर्कटे तु रवौ याते बधो भवति देहिनाम् ॥
 पितृबधुमृति विद्याच्चापान्मेपगते पुन ॥५९॥

गतिफल

मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या ये माङ्गकी गति सजक है। अतएव महाव्याधिकारक है॥५९॥
 मेप, वृश्चिक धन, मीन ये सिंहावलोकन गति सजक है। अत महाभय कारक है॥५९॥
 सिंहावलोकन की राशि मे माङ्गकी गति की राशि हो तो अपमृत्यु कारक योग है। अवश्य
 प्रायश्चित्त कर्तव्य है॥५७॥ मीनराशि दशा मे वृश्चिकाधिपग्रह हो तो निश्चय ज्वर होता है।
 इसी प्रकार कन्या की दशा मे वरुण हो तो माता तथा बन्धु का नाश होता है॥५८॥
 सिंहराशि दशा मे मिथुनाश हो अथवा कन्या हो तो अवश्य व्याधि होती है। कर्क राशि दशा
 मे सूर्य हो तो बध (हत्या) होती है। मेप राशि मे धनु होने से पिता, बन्धु की मृत्यु होती
 है॥५९॥

पुन. गतिफलमाह

कन्याया कर्कटे याते पूर्वभागे महत्फलम् ॥६०॥ उत्तर देश माथित्य मुख यात्रा भविष्यति ॥
 सिंहे तु मिथुने याते पूर्वभागे विमृज्यते ॥ वायतिपि च नैर्ऋत्या मुख यात्रा भविष्यति ॥६१॥
 कर्कटे मेपसिंहे च कार्यहानिश्च योगयुक् ॥ दक्षिणा दिशमाथित्य प्रत्यब्द गमन भवेत् ॥६२॥
 कुम्भे व्याधिर्मनोदुःख मिथुने निर्धनो भवेत् ॥ मीने तु वृश्चिके याते ज्वरगच्छति सवटम् ॥
 मकरे सकट दुःख चापात्सकटमुच्यते ॥६३॥ चापे मेपे भय यात्रा बधबधौमृतिर्भवेत् ॥ तुला
 सपट्टिवाहश्च स्त्रीप्राप्तिर्वृश्चिके गति ॥६४॥ मेपे शुक्रफल विद्यादक्षिणे गमन सुखम् ॥
 बेहजीवसमायोगे भद्र स्थित्वाऽपमृत्युद ॥६५॥ (एव राशिफल मुद्राया नक्षत्रागमनं तु ॥
 जीषदेहकृमान्तैव महादशातरदशा ॥ प्रदक्षिणेन मार्गेण वृश्चिकादि विवक्षिते ॥)

पुन. गतिफल

कन्या मे कर्क राशि हो तो प्रयमार्द्ध मे अतिथेष्ट॥६०॥ उत्तर दिशा की यात्रा मुमूर्ख
 होती है। सिंह राशि मे मिथुन हो तो पूर्वाह्न नेष्ट। और उत्तरार्द्ध मे नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा
 सुखकर होती है॥६१॥ कर्क राशि मे मेप और सिंह राशि होने से कार्य हानि होती है। और
 दक्षिण दिशा मे प्रतिवर्ष यात्रा होती है॥६२॥ कुम्भ मे व्याधि और महादुःख तथा मिथुन मे
 निर्धन हो। मीन राशि वृश्चिक राशि हो तो उत्तर दिशा मे सवट होता है। मकर राशि में
 सकट दुःख तथा धनु राशि होने से सवट होता है॥६३॥ धनु और मेप राशि मे भय और
 यात्रा बध और बधन तथा मृत्यु होती है। तुलाराशि दशा मे विवाह, स्त्रीप्राप्ति तथा वृश्चिक
 में यात्रा होती है॥६४॥ मेप राशि मे वनवृद्धि और दक्षिण दिशा मे यात्रा होती है। देह और
 जीवराशि के योग मे यदि शनि हो तो अपमृत्युकारक होता है॥६५॥ (इम प्रकार नक्षत्र के

अश से राशि की दशा तथा अतरदशा जानकर जीव और देह का योग विचार करे। गति विचार मे सप्तम्यन्त राशि पद से मूलदशा और प्रथमान्त से अन्तर जानना चाहिए। केवल सप्तम्यन्त से अन्तर दशा जानना। दोनो का देह जीव योग देखना।)

अथ महादशाफलमाह

रक्तपिताधिकव्याधिर्नृणामर्कफल भवेत् ॥ धनकीर्तिप्रजावृद्धिवस्त्राभरणद शशी ॥६६॥
ज्वरमाशु दिशोत्पत्य ग्रन्थिस्फोट कुजस्य तु ॥ प्रजावृद्धिर्धने बुद्धिर्बुधे भोगफल भवेत् ॥६७॥
धन कीर्तिं प्रजावृद्धिं नानाभोगं बृहस्पति ॥ विद्या विवाहं सुखेन गृहं धान्यं भृगो फलम् ॥६८॥
तापाधिक्यं महाबुधं बन्धुनाशं शने फलम् ॥ एवमर्कादियोगेन राशियोगेन सपुते ॥६९॥
शुभयोगे शुभं ब्रूयाद्दशुमे त्वशुभं फलम् ॥ मिथे मिथफलं ब्रूयाद्ग्रहाराशिसमुद्भूतम् ॥७०॥
द्वादशाष्टमजन्मर्क्षवशाद्योगेन निर्णयः ॥ मृत्युकाल इति ज्ञात्वा शांतिं कुर्याद्विचक्षणः ॥७१॥

कालचक्रमहादशाफल

सूर्य महादशा मे-रक्तपित्त की बीमारी विशेषरूप से होती है।
चन्द्रमहादशा मे-धन कीर्ति तथा प्रजा की वृद्धि तथा वस्त्राभरण प्राप्त होता है॥६६॥

भौमदशा मे-पित्तज्वर, ग्रन्थि का फटना आदि होता है।
बुधदशा मे-प्रजा तथा धन की वृद्धि एवं ऐश्वर्य प्राप्त होता है॥६७॥
गुरुदशा मे धन कीर्ति तथा प्रजा की वृद्धि और अनेक भोग मिलते हैं।
शुक्र दशा मे- विद्या, विवाह सुवास मकान आदि शुभ फल होता है॥६८॥
शनि दशा मे-विशेष ज्वर महाबुध तथा बन्धुनाश होता है।

इस प्रकार दशा की राशि मे सूर्यादि ग्रहो के योग से॥६९॥ देखकर शुभग्रह के योग से शुभ फल और अशुभ ग्रह के योग से अशुभफल बहना चाहिए। मिश्रित योग हो तो फल भी मिश्रित होता है॥७०॥ अशुभ योग के लिए १२।८ अंशको का योग आवश्यक है। यदि मृत्यु कारक दशा हो तो शान्ति करना चाहिए॥७१॥

अथाशायुर्निर्णयमाह

भाद्रपदपटिका हतायुषा षाणचद १५ विधिरायुषः क्रमात् ॥ स्वत्यवर्षविहता स्वकीयजा कालचक्रविधिरायुषः क्रमात् ॥७२॥
भुक्त्याविहतावर्षास्तिस्राऽष्टौ १५ भाजिता ॥
वर्षमासाहपटिका स्वविकल्पविभाजिता ॥७३॥
अस्मिप्रवासके षष्टे स्थिते तस्मात्प्रवासकालः ॥ न वा नवांशराशेनामते मृत्युर्मविष्यति ॥७४॥

अंशाद्यु निर्णय

भुक्त तथा भोग्य अणायु स्पष्टीकरण। नक्षत्र के जिस पाद में जातक का जन्म है, उसकी भोग्य घटी पल को एकरस करके अपनी प्राप्त आयु के घुवाक से गुणा करके १५ से भाग देने पर कालचक्र दशा की भोग्य दशा होती है॥७२॥ अथवा इसी प्रकार भुक्त घटी पलको एक रस करके अपने २ दशा वर्ष से गुणा कर १५ का भाग देने से भुक्त दशा होती है॥७३॥ यह विधि चन्द्र स्पष्ट से भी की जा सकती है। यदि इस नवांश राशि के मध्य में मारक नहीं हो तो अत की दशा में मृत्यु होती है॥७४॥

अथांतर्दशाफलमाह

तत्प्रसंवीक्षितो यश्च येन केन समायुतः ॥ यस्य राशिः स्थितो जातस्तादृशं फलमाप्नुयात् ॥७५॥ अथाज्जो देवदेवेशि ह्यंशकांतर्दशाफलम् ॥ यथाविधि प्रवक्ष्यामि धूमतां कमलानने ॥७६॥ प्रयमांशे बधो भीमे ज्वरश्च व्रणसम्भवः ॥ बुधशुकेदुर्जीवेषु वस्त्राभरणमादिरोत् ॥७७॥ लभते स्वांशके देवि निश्चयः सुरवदिते ॥ राश्यातिकल्हः सौरेः शत्रुक्षोभं महद्भयम् ॥७८॥ मेघांशस्थे तथादित्येऽनुक्रमात्फलनिश्चयः ॥ राजप्रसादमाप्नोति मेघस्वांशगते गुरौ ॥७९॥ विद्यालाभो महत्प्रीतिः शारीरः सुखमेव च ॥ वृषभस्वांशके देवि गुरौ तत्र गते फलम् ॥८०॥ देशत्यागश्च मरणं ज्वरः शस्त्रघातः तथा ॥ वृषभस्वांशके देवि कुजे तत्र गते फलम् ॥८१॥ वस्त्राभरणलाभः तु स्त्रियां योगः महत्फलम् ॥ शुकेदुर्गुतचट्टाणां स्वांशके वृषभे फलम् ॥८२॥ नृपाङ्गुलं पितृमृतिर्मृगाद्यैश्च महद्भयम् ॥ कुद्वारो गच्छेत्तत्र वृषभस्वांशके रविः ॥८३॥

अन्तर्दशा फल

जो राशि लग्नेश दृष्ट हो अथवा शुभ या पाप जैसा ग्रह में युक्त हो, अथवा जिस ग्रह की राशि में जन्म हो इत्यादि सब योग देखकर ही फल बहना चाहिए॥७५॥ हे पार्वति! अब दशा के अन्तरदशाओं का फल यथाविधि बड़ा जाता है॥७६॥ मेघ राशि दशा अन्तर में भीम हो तो ज्वर तथा व्रण का सम्भव है। और बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र हो तो (इनकी राशि का अन्तर हो तो) वस्त्र, आभरण आदि प्राप्त होते हैं॥७७॥ हे देवि! शनि अपने अश्वदशा में राजा से कलह करता है। शत्रु में भय करता है॥७८॥ मेघ राशि नवांशदशा में मूर्खादि ग्रहों का हम से फल का निश्चय करना चाहिए। गुरु अपने अश्व में राजमहल प्राप्त करता है॥७९॥ यदि गुरु वृषराशि की दशा के अपने अन्तर में हो तो विद्यालाभ, महान् प्रेम तथा शारीरिक सुख करता है ॥८०॥ और वृष के स्वांश में भग्न हो तो देशत्याग, मरण, ज्वर, शस्त्राघात करता है॥८१॥ वृष के अन्तर में शुक्र, बुध चन्द्रमा हो तो गुन्दर वस्त्र, आभूषणों का लाभ तथा स्त्री वीर्य देते हैं॥८२॥ वृष के अन्तर में मूर्ख राजभय, पितृमरण, पशु में भय करता है॥८३॥

भौक्तिकामरणादीनि दारावस्त्रफलादि च ॥ लभते स्वांशके देवि मियुनस्वांशके भृगो ॥८४॥
 पितृमातृभयं चैव ज्वरञ्च वृणसंभवः ॥ प्रयाणं कुरुते देवि मियुनस्वांशके कुजः ॥८५॥
 विद्यालाभं द्रव्यलाभं महाविभवसंभवम् ॥ समस्तप्रीतिमाप्नोतिमियुनस्वांशके गुरो ॥८६॥
 प्रयाणं च महाव्याधिर्मरणं चार्थनशानम् ॥ बंधुनाशो भवेद्देवि मियुनस्वांशके शनी ॥८७॥
 वस्त्रलाभ पुत्रलाभं विद्यालाभं तथैव च ॥ समस्तप्रीतिमाप्नोति मियुनस्वांशके बुधे ॥८८॥
 ऐश्वर्यं धनलाभं च पुत्रपत्नीसमागमम् ॥ मनः प्रीतिमवाप्नोति कुलीरस्वांशके शशी ॥८९॥
 नृपाङ्गुलं शत्रुभयं मृगेभ्यश्च महद्भयम् ॥ ज्वरव्याधिश्च दाहश्च कुलीरस्वांशके रवौ ॥९०॥
 पुत्रलाभं बंधुलाभं रत्नविद्यार्थमेव च ॥ कुलीरस्वांशके देवि बुधशुक्रसमागमे ॥९१॥
 विषशस्त्रमृति घोरं ज्वरदाहसमुद्भयम् ॥ सर्वदुःखमवाप्नोति कुलीरस्वांशके कुजे ॥९२॥

(मियुन राशि दशा का फल-शुक्र के अन्तर दशा में मोती आदि रत्नों की प्राप्ति, स्त्री, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते हैं ॥८४॥ मियुनान्तर में मंगल की राशि दशा हो तो पिता माता को भय, ज्वर, पाव तथा यात्रा का योग होता है ॥८५॥ गुरु हो तो विद्यालाभ, धन लाभ, महान् वैभव तथा सबसे प्रेम होता है ॥८६॥ मियुन के स्वीय अंश में शनि हो तो यात्रा, महाव्याधि, मृत्यु, धननाश तथा बंधुनाश होता है ॥८७॥ मियुन में स्वाश में बुध हो तो वस्त्रलाभ, पुत्रलाभ, तथा विद्यालाभ और मित्रों में प्रीति होती है ॥८८॥ यदि चन्द्रमा स्वाश में हो तो ऐश्वर्य, धनलाभ तथा स्त्री पुत्र से मिलाप और मन की प्रसन्नता होती है ॥८९॥ (अब कर्क दशा फल कहते हैं) कर्क राशि दशा में मूषाशि हो तो राजभय, शत्रु तथा पशु में भय, ज्वर, व्याधि तथा दाह होता है ॥९०॥ तथा उसमें बुध या शुक्र के अंश की दशा हो तो पुत्र, विद्या, बन्धु, रत्न, धन का लाभ होता है ॥९१॥ यदि मंगल स्वाश में हो तो विष या शस्त्र से मृत्यु तथा घोर ज्वरदाह तथा सर्वप्रकार दुःख होता है ॥९२॥

विभवस्यात्तितामं च धनलाभं तथैव च ॥ नृपप्रसादमाप्नोति कुलीरस्वांशके गुरो ॥९३॥
 वातव्याधिश्च निर्पातममूराविषदाहकम् ॥ सर्वक्लेशमवाप्नोति कुलीरस्वांशके शनी ॥९४॥
 ज्वरपित्तविमृशं च शस्त्रघातविपूचिकाः ॥ मुखरोगमवाप्नोति मृगेन्द्रस्वांशके कुजे ॥९५॥
 वस्त्रामरणविद्याश्च सुतस्त्रीलाभमेव च ॥ मृगेन्द्रस्वांशके देवि भाग्ये च बुधगमे ॥९६॥
 आह्वयपतनं चैव देशत्यागं महद्भयम् ॥ महाधनविघातं च सिंहस्वांशगतः शशी ॥९७॥
 महाशत्रुभयं चैव ज्वरञ्च व्याधिरेव च ॥ अज्ञानं मरणं शनी मृगेन्द्रस्वांशगे च वै ॥९८॥
 धनधान्यमहालाभं प्रसादं द्विजदेवयोः ॥ विद्यालाभमवाप्नोति मृगेन्द्रस्वांशगे गुरो ॥९९॥
 प्रयाणं च ज्वरं चैव सुदुःखं वैक्लवं तथा ॥ व्याधिरुःखमवाप्नोति ज्ञन्यास्वांशगते शनी ॥१००॥
 नृपप्रसादनं लाभमैश्वर्यं बंधुसंभवम् ॥ विद्यालाभमवाप्नोति ज्ञन्या स्वांशगते गुरो ॥१०१॥ प्रयाण
 च ज्वरं चैव ममूरोषहृन्ना भयम् ॥ शस्त्रघातं च मरणं ज्ञन्यास्वांशगते कुजे ॥१०२॥

कर्क के अपने अश में गुरु हो तो अति विभव लाभ धनलाभ तथा राजमैत्री प्राप्त होती है॥१३॥ इसी प्रकार शनि हो तो वातव्याधि, तथा घात एव मसूर (जंगली पशु) का विषयुक्त दशन तथा अन्य अनेक क्लेश प्राप्त होते हैं॥१४॥ (अब सिंह राशि के अन्तर कहते हैं) सिंहदशा में कुजान्तर में ज्वर, पित्त, रोग, शस्त्राघात, हैजा तथा मुख के रोग होते हैं॥१५॥ शुक्र तथा बुध में सुन्दर वस्त्र, भूषण, विद्या, पुत्र, स्त्री का लाभ होता है॥१६॥ सिंह की दशा में चन्द्र हो तो उन्नत अवस्था से पतन, देशत्याग, महाभय, विशेष धनहानि होती है॥१७॥ महाशत्रु का भय ज्वर तथा व्याधि, अज्ञान और मृत्यु होती है॥१८॥ (सूर्य से उपर्युक्त फल जानना) सिंह राशि की अन्तर दशा में गुरु अपने अश में हो तो धन सम्पत्ति का लाभ द्विज, देवता की कृपा तथा विद्या लाभ होता है॥१९॥ (कन्या राशि दशा में अन्तरदशा फल) शनि स्वाश में हो तो यात्रा, ज्वर, भूख प्यास से कष्ट तथा रोग दुःख प्राप्त होता है॥१००॥ स्वाश में गुरु हो तो राजकृपा, लाभ, ऐश्वर्य, बन्धु प्राप्ति तथा विद्या का लाभ होता है॥१०१॥ मंगल स्वाश में हो तो व्यर्थ की यात्रा, ज्वर, मसूरी रोग, अग्नि भय, शस्त्र से घाव तथा मृत्यु होती है॥१०२॥

मृत्युपुत्रार्थलाभ च वस्त्राभरणमेव च ॥ शुक्रेन्दुसुतचंद्राणां कन्यास्वांशगते फलम् ॥३॥ प्रयाण च ज्वरश्लेष् पुत्रहानिस्तथैव च ॥ शस्त्रघातेन मरणं कन्या स्वांशगते रवौ ॥४॥ स्त्रीलाभ धनलाभं च पुत्रलाभं तथैव च ॥ वस्त्राभरणलाभं च तुलास्वांशगते भृगौ ॥५॥ पिता सुहृद्घनं चैव शिरोरोगं ज्वर तथा ॥ शस्त्राप्रक्षतघातं च तुलास्वांशगते कुजे ॥६॥ धनं रत्नं महालाभं धर्मं चेष्टा नृपायहम् ॥ सर्वसंपत्समृद्धिश्च तुलास्वांशगते गुरौ ॥७॥ प्रयाणं च महाव्याधि मेघं क्षेत्रभयं तथा ॥ शत्रुबाधा महादुःखं तुलास्वांशगते शनौ ॥८॥ पुत्रलाभ धनं स्त्रीणां लाभं चैव मनः प्रियम् ॥ सीमाभ्यं बंधुलाभं च तुलास्वांशगते बुधे ॥९॥ व्याधिनाशं महतीत्यं नानासर्वार्थसिद्धिदम् ॥ मृगुसीम्यशशांकानां वृश्चिकस्वांशगते फलम् ॥१०॥

शुक्र, बुध तथा चन्द्रमा स्वाश में हो, तो स्त्रीपुत्र, नौकर आदि की प्राप्ति तथा वस्त्रभूषण का लाभ होता है॥१०३॥ सूर्य में यात्रा, ज्वर, पुत्रहानि, शस्त्राघात होता है॥१०४॥ (तुला राशि दशा के अन्तर) स्वाश में शुक्र हो तो स्त्री, पुत्र, धन, वस्त्र, सम्पत्ति का लाभ होता है॥१०५॥ मंगल हो तो पिता, मित्र, धन की हानि, सिर दर्द, दुखार, शस्त्र से आघात तथा अग्नि का भय होता है॥१०६॥ गुरु स्वाश में हो तो धन, रत्न, धर्म, सर्व सम्पत्ति तथा राजकृपा का लाभ होता है॥१०७॥ शनि स्वाश में हो तो यात्रा, महाव्याधि, शत्रुबाधा तथा हानि होती है॥१०८॥ बुध स्वाश में हो तो स्त्रीपुत्र, धनलाभ, इच्छित वस्तु की प्राप्ति, सीमाभ्य और बन्धु लाभ होता है॥१०९॥ बुध, शुक्र, चन्द्रमा स्वाश में हो तो व्याधि का नाश, महान् सुख, सम्पूर्ण अर्थ की सिद्धि होती है॥११०॥

शत्रुलोभं भय व्याधिर्मर्धनाशं पितुर्भयम् ॥ मृगाद्वयमवाप्नोति वृश्चिकस्वांशगते रवौ ॥११॥ वातपित्तभयं चैव मसूरीव्याधिमेव च ॥ अधिराश्यादिभोतिं च वृश्चिकस्वांशगते कुजे ॥१२॥ धनं रत्नं च धान्यं च देवदाहणपूजनम् ॥ राजप्रसादमाप्नोति वृश्चिकस्वांशगते गुरौ ॥१३॥

घनबधुविनाशश्च मनोबधस्तथाकुलम् ॥ शत्रुबाधा महाव्याधिर्दृष्टिकत्वाशने शनौ ॥१४॥
 अतिदाह ज्वर छर्दिमुखरोग च कष्टताम् ॥ शरीरक्लेशमाप्नोति चापस्वाशगते कुजे ॥१५॥
 श्रीविद्याना च सौभाग्य शत्रुनाश नृपाद्भयम् ॥ भार्गवेदुजचद्राणा चापस्वाशगते फलम् ॥१६॥
 स्त्रीनाश वित्तनाश च कलह च नृपाद्भयम् ॥ प्रयाण समवाप्नोति चापस्वाशगते रवौ ॥१७॥
 दानधर्मतपोलाम राजपूजनमेव च ॥ स्त्रीलाम, धनलाम च चापस्वाशगते गुरौ ॥१८॥
 द्विजदेवनृपात्कोप बधुभिश्च विनाशनम् ॥ देशत्यागमाप्नोति मृगस्वाशगते शनौ ॥१९॥

(वृश्चिक राशि दशा के अन्तर फल) - सूर्य मे शत्रु से भय, भय, व्याधि, घननाश, पिता से भय होता है। एव पशु से क्षति होती है ॥१११॥ मंगल के अश मे वातपित्त की बीमारी, शीतला की बीमारी, अग्नि तथा मस्त्र से भय होता है ॥११२॥ गुरु के अश मे धनसम्पत्ति रत्न की प्राप्ति, देव ब्राह्मण पूजा तथा राजकृपा प्राप्त होती है ॥११३॥ शनि के अश मे घन, बन्धु का नाश, चिन्ता व्याकुलता, शत्रुबाधा, महाव्याधि होती है ॥११४॥ मंगल के अश मे दाह, ज्वर, वमन, मुख रोग, दर्द और क्लेश होता है ॥११५॥ बुध, शुक्र तथा चन्द्रमा के अश मे धन, विद्या, सम्पत्ति प्राप्त होती है। शत्रु नाश तथा राजभय होता है ॥११६॥ (घन राशि दशा के अन्तर फल) सूर्य के अश मे स्त्रीनाश, घन हानि, कलह, राजभय तथा यात्रा होती है ॥११७॥ गुरु के अश मे दान, धर्म, तप, स्त्रीघन का लाभ तथा राज सम्मान होता है ॥११८॥ (मकर राशि दशा के अन्तर फल) शनि के अश मे देव, ब्राह्मण, राजा का कोप, बन्धुवो से नाश तथा देशत्याग होता है ॥११९॥

देवार्चनै तपो ध्यान द्विजपूजादिसमवम् ॥ भार्गवेदुजीवाना मृगस्वाशगते फलम् ॥१२०॥
 शिरोरोग ज्वर चैव करपादगतक्षतम् ॥ रक्तपित्तातिसाराश्च मृगस्वाशगते कुजे ॥१२१॥
 बधुपुत्रपितुनाश ज्वररोगसमाचयम् ॥ नृपराद्रुभय चैव मृगस्वाशगते शनौ ॥१२२॥
 नानाविद्यार्थलाम च पुत्रस्त्रीमित्रसमवम् ॥ ऐश्वर्यं धनलाभ च घटस्वाशगते मृगौ ॥१२३॥
 ज्वराग्निचोरघात च शत्रूणा च महद्भयम् ॥ मनोदुःखमाप्नोति घटस्वाशगते कुजे ॥१२४॥
 दुःखव्याधिहर चैव देवब्राह्मणपूजनम् ॥ मनःप्रीतिसमाप्नोति घटस्वाशगते गुरौ ॥१२५॥
 त्रिदोषकुपित चैव कलह देशविभ्रमम् ॥ क्षयव्याधिमाप्नोति घटस्वाशगते शनौ ॥१२६॥
 पुत्रमित्रघनस्त्रीणा लाभ चैव मनः प्रियम् ॥ सौभाग्य वस्त्रलाभ च घटस्वाशगते
 कुजौ ॥१२७॥

शुक्र, बुध, चन्द्र, बृहस्पति के अशो मे देवार्चन, तप ध्यान, द्विजपूजा आदि होता है ॥१२०॥ मंगल के अश मे सिरदर्द ज्वर हाथ पैर मे घाव, रक्त पित्त, अतिसार की बीमारी होती है ॥१२१॥ शनि के अश मे बन्धु, पुत्र, पिता की हानि, ज्वर, राजा तथा शत्रु से भय होता है ॥१२२॥ (कुम्भ राशि दशा के अन्तर फल) शुक्र के अश मे अनेक विद्या तथा धन लाभ, स्त्रीपुत्र, मित्र का सुख तथा ऐश्वर्य होता है ॥१२३॥ मंगल के अश मे ज्वर अग्नि, चोर से हानि, शत्रु से भय, मन मे दुःख होता है ॥१२४॥ गुरु के अश मे दुःख, व्याधि का नाश, देव ब्राह्मण की पूजा, मन मे सन्तोष होता है ॥१२५॥ शनि के अश मे सत्रिपात, बन्ध, देवयात्रा,

क्षय रोग होता है॥१२६॥ बुध के अश में पुत्र, मित्र, धन, स्त्री का लाभ, वस्त्र प्राप्ति, मन में सन्तोष और सौभाग्य होता है॥१२७॥

स्त्रीविद्यालाभमाप्नोति ह्याश्रितव्याधिनाशनम् ॥ महापीडामवाप्नोति मीनस्वांशगतः शशी ॥२८॥ कलहं चौरभीतिं च बंधुभिः क्षयकारणम् ॥ स्थानभ्रशमवाप्नोति मीनस्वांशगते रवौ ॥२९॥ शत्रुनाशं च विजयं नृपगोभूसुतागमम् ॥ रत्नलाभं च मीने च स्वांशगे बुधगुरुयोः ॥३०॥ विवाद पितरोग च जंतोर्जारणमारणम् ॥ शत्रुलयमवाप्नोति मीनस्वांशगते कुजे ॥३१॥ धनधान्यकलत्राणि लभते राजपूजनम् ॥ वस्त्राभरणलाभं च मीनस्वांशगते गुरौ ॥३२॥ ऐश्वर्यस्य प्रणाशश्च वैश्यादीनामुपद्रवः ॥ देशत्यागो दरिद्रं च मीने स्वांशगते शनौ ॥३३॥ एव यथाक्रमेणैव विज्ञेयं स्वांशगते फलम् ॥ वामर्क्षेऽप्येवमेव च फलं तत्रैव योजयेत् ॥३४॥ दशाफलमहं वक्ष्ये धर्मकर्मकृतं पुरा ॥ तत्सर्वं प्राणिभिर्मित्यं प्राप्यते नात्र संशयः ॥३५॥ सुहृदतर्दशा भव्या विवृता शत्रुसंभवा ॥ मध्यमा मध्यखेटस्य दशादीनामिदं विदुः ॥३६॥

चन्द्रमा के अश में स्त्री, विद्या लाभ, आश्रित मनुष्य की व्याधि का नाश तथा पीडा होती है॥१२८॥ (मीन राशि दशा के अन्तरफल) सूर्य के अश में कलह, चोर मय, बन्धुओं से हानि, स्थान नाश होता है॥१२९॥ बुध, गुरु के अश में शत्रु नाश, विजय, राजा, गौ, ब्राह्मण की कृपा तथा मिलाप एव रत्न लाभ होता है॥१३०॥ मंगल के अश में विवाद, पितरोग, सीसाधातु का भस्म करना, शत्रु क्षय आदि होते हैं॥१३१॥ गुरु के अश में धन सम्पत्ति, स्त्री का लाभ, राजपूजा, वस्त्राभरण का लाभ होता है॥१३२॥ शनि के अश में वैश्या सग से समस्त ऐश्वर्य का नाश, देशत्याग, दरिद्र होता है॥१३३॥ इस प्रकार क्रम से ग्रहों का फल सव्य मार्ग का कहा गया है। इन्हीं फलों को अप-सव्य मार्ग में भी समझना चाहिए॥१३४॥ मनुष्यों के पूर्व जन्मकृत धर्म, कर्म के फल से इस जन्म में जो सुख दुःख प्राप्त होते हैं, वे सब इस दशा के रूप में प्राप्त होते हैं यह नि सन्देह है॥१३५॥ मित्रग्रह की अन्तरदशा शुभ, शत्रुग्रह की अशुभ, समग्रह की मध्यम समझना चाहिए॥१३६॥

अथ नवांशफलमाह

मेघे तु रत्नपीडा च वृषभे धान्यवर्धनम् ॥ मिथुने जानसपद्मभ्रटे धनपतिर्भवेत् ॥१३७॥ सूर्यस्य शत्रुबाधा च कन्यास्त्रीणां च नाशनम् ॥ तीतिके राजमित्रित्वं वृश्चिके मरणं भवेत् ॥१३८॥ अर्यत्ताभो भवेज्जापे मेघस्य नवभागके ॥ मकरे पापकर्माणि कुंभे वाणिज्यमेव च ॥१३९॥ मीने सर्वार्यसिद्धिश्च वृश्चिकेऽप्यप्रितो भयम् ॥ तीतिके राजपूज्यश्च कन्यायां शत्रुवर्धनम् ॥१४०॥ शशिभे दारसबाधा सिंहो च त्वक्षिरोगकृत् ॥ मिथुने वृत्तबाधा स्याद्वृषभे च नवांशके ॥१४१॥ वृषभे अर्यत्ताभः च मेघे तु ज्वररोगकृत् ॥ मिथुने मारुतप्रोतिः कुंभे शत्रुप्रवर्धनम् ॥१४२॥ मृगे चौरस्य संबाधा धनुषि शस्त्रवर्धनम् ॥ मेघे तु शस्त्रतंत्रांधो वृषभे बलहृत्प्रियः ॥१४३॥ मिथुने सुखमाप्नोति मिथुनस्य नवांशके ॥ कर्कटे सखटप्राप्तिः सिंहो राजप्रकोपकृत् ॥१४४॥

नवांश फल

(इन पूर्वोक्त राशि दशाओं में प्रत्येक अन्तर में जो राशि होगी, केवल उस राशि के

अनुसार फल कहा जाता है।) मेष अश में रत्नपीडा। वृष में धान्य वृद्धि मिथुन में ज्ञान। कर्क में धनपति होता है॥१३७॥ सिंह में शत्रु बाधा। कन्या में स्त्रीनाश। तुलामें राजमन्त्री। वृश्चिक में मृत्यु हो॥१३८॥ धनु के अश में धनलाभ। ये मेष के नौ अश की राशियों के फल हैं॥१३९॥ (वृषराशि के अतर) मकर में पापकर्मा। कुभ में व्यापार॥१४०॥ मीन में सर्वसिद्धि। वृश्चिक में अग्नि भया। तुला में राजपूज्यता। कन्या में शत्रुभया॥१४०॥ कर्क में स्त्री से कलहा। सिंह में नेत्ररोग। मिथुन में वृक्ष से हानि। ये वृषराशि के ९ नवाश राशि का फल है॥१४१॥ (मिथुनान्तर फल) वृष में अर्धलाभ। मेष में ज्वर। मिथुन में मामा का प्रेमा। कुम्भ में शत्रुभया॥१४२॥ मकर में चौर भया। धन में शस्त्रवृद्धि। मेष में शस्त्र योग। वृष में कलहा॥१४३॥ मिथुन में सुख होता है। ये मिथुनाश दशा के ९ नवाशराशि का फल है। कर्क में सकटा। सिंह में राजकोप॥१४४॥

कन्याया भ्रातृपूजा च तौलिके प्रियकृत्तर ॥ वृश्चिके पितृबाधा स्यात्कर्कटस्य नवाशके ॥४५॥ वृश्चिके कलह पीडा तौलिके ह्यधिक फलम् ॥ कन्यायामतिलाभश्च शशके मृगबाधिका ॥४६॥ सिंह च पुत्रलाभश्च मिथुने शत्रुवर्द्धनम् ॥ मीने तु दीर्घयात्रा स्यात्सिंहस्य नवभागके ॥४७॥ कुम्भे तु धनलाभश्च मकरे द्रव्यलाभकृत् ॥ धनुषि भ्रातृससर्गो मेषे मातृविवर्द्धनम् ॥४८॥ वृषभे पुत्रवृद्धि स्यान्मिथुने शत्रुवर्द्धनम् ॥ शशिभे तु स्त्रिया प्रीति सिंह व्याधिविवर्द्धनम् ॥४९॥ कन्याया पुत्रवृद्धि स्यात्कन्याया नवमाशके ॥ तुलायामर्थलाभश्च वृश्चिके भ्रातृवर्द्धनम् ॥१५०॥ चापे च ततसौख्यं च मृगे मातृविरोधिता ॥ अस्ती जायाविरोध च तुले च जलबाधताम् ॥१५१॥ कन्यावृद्धिकर विद्यास्तुलाया नवभागके ॥ कर्कटे ह्यर्थनाशश्च सिंह राजविरोधिता ॥१५२॥

कन्या में भ्रातृपूजा। तुला में सुखा। वृश्चिक में पितृबाधा होती है॥४५॥ वृश्चिक में कलह पीडा। तुला में अधिक फल। कन्या में अतिलाभ। कर्क में पशु से हानि॥४६॥ सिंह में पुत्रलाभ। मिथुन में शत्रुवृद्धि। मीन में दीर्घ यात्रा। सिंह राशि के नवाश का फल है॥४७॥ कुभ में धनलाभ। मकर में द्रव्य लाभ। धनु में भ्रातृ सयोग। मेष में मातृकुल में वृद्धि॥४८॥ वृष में पुत्रवृद्धि। मिथुन में शत्रुवृद्धि। कर्क में स्त्री से प्रेमा। सिंह में व्याधिवृद्धि॥४९॥ कन्या में पुत्रवृद्धि। ये कन्या नवाश दशा के अतर के फल है। तुला में धनलाभ। वृश्चिक में भ्राता वृद्धि॥१५०॥ चाप (धनुराशि) में पितृ सुखा। मकर में माता से विरोध। तुला में जलबाधा। कन्या में वृद्धि। ये तुला के नवाश का फल हुआ। कर्क में धननाश। सिंह में राजविरोध॥१५२॥

मिथुने भूमिलाभश्च वृषभे चार्थलाभकृत् ॥ चापे तु धनलाभ स्याद्वृश्चिकस्य नवाशके ॥१५३॥ मेषे तु धनलाभ स्याद्वृषे भूमिविवर्द्धनम् ॥ मिथुने सर्वसिद्धि स्यात्कर्कट सर्वसिद्धिकृत् ॥१५४॥ सिंह तु पूर्ववृद्धि स्यात्कन्याया कलहो भवेत् ॥ तौलिके चार्थलाभ स्याद्वृश्चिके रोगमाप्नुयात् ॥१५५॥ चापे तु सुतवृद्धि स्याच्चापस्य नवमाशके ॥ मकरे पुत्रलाभ स्यात्कुम्भे धान्यविवर्द्धनम् ॥१५६॥ मीने कन्याणमाप्नोति वृश्चिके मृगबाधिता ॥ तौलिके त्वर्यलाभश्च कन्याया शत्रुवर्द्धनम् ॥१५७॥ शशिभे श्रियमाप्नोति सिंह तु मृगबाधिता ॥ मिथुने वृक्षबाधा च मृगस्य नवभागके ॥१५८॥ वृषभे त्वर्यलाभ च मेषस्य त्वक्षिरोगकृत् ॥ सिंहस्य च

स्यात्कुम्भे स्वस्य विवर्द्धनम् ॥५९॥ मकरे सर्वसिद्धिः स्याच्चापे शत्रुविवर्द्धनम् ॥ मेघे
सौख्यविनाशश्च वृषभे मरणं भवेत् ॥१६०॥

मिथुन मे भूमिलाभः। वृष मे धनलाभः। धन मे अर्थलाभः। ये वृश्चिक के नवाश के फल
हे॥५३॥ मेघ मे धनलाभः। वृष मे भूमिवृद्धिः। मिथुन मे सर्वसिद्धिः। कर्क मे भी सर्व
सिद्धिः॥५४॥ सिंह मे वृद्धिः। कन्या मे कलहः। तुला मे धनलाभः। वृश्चिक मे रोगः॥५५॥ धन मे
सुतवृद्धिः। ये धनराशि के नवाश के फल है। मकर मे पुत्र वृद्धिः। कुम्भ मे धान्यवृद्धिः॥५६॥ मीन
मे कल्याणः। वृश्चिक मे पशु से हानि होती है। तुला मे धनलाभः। कन्या मे शत्रुवृद्धिः॥५७॥ कर्क
मे धनाप्तिः। सिंह मे पशु से भयः। मिथुन मे वृक्ष से हानिः। ये मकर नवाश का फल है॥५८॥ वृष
मे धन लाभः। मेघ मे आख बी बीमारी। मिथुन मे लवी यात्रा। कुम्भ मे वृद्धिः॥५९॥ मकर मे
सर्व सिद्धिः। धन मे शत्रु वृद्धिः। मेघ मे सुखनाशः। वृष मे मृत्युः॥१६०॥

युग्मे कल्याणमाप्नोति कुम्भस्य नवमाशके ॥ कर्कटे धनवृद्धिः स्यात्सिंहे तु राजपूजनम् ॥६१॥
कन्यायामर्थलाभस्तु तुलाया लाभमाप्नुयात् ॥ वृश्चिके ज्वरमाप्नोति चापे शत्रुविवर्द्धनम्
॥६२॥ मृगे जायाविरोधः कुम्भे जलविरोधता ॥ मीने तु सर्वसौभाग्यं मीनस्य नवभागके ॥६३॥
दशाष्टशक्रमेणैव ज्ञात्वा सर्वफलं वदेत् ॥ क्रूरग्रहदशाकाले शान्तिं कुर्याद्विचक्षणः ॥१६४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे कालचक्रदशाफलकपर्व नाम
पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५॥

मिथुन मे कल्याणः। ये कुम्भराशि के नवाश का फल है। कर्क मे धनवृद्धिः। सिंह मे राजा का
आदरः॥६१॥ कन्या मे धनलाभः। तुला मे लाभः। वृश्चिक मे ज्वरः। धन मे शत्रुवृद्धि होती
है॥६२॥ मकर मे भार्या से विरोधः। कुम्भ मे जल से हानिः। मीन मे सर्व सौभाग्यः। ये मीन
राशि दशा के नवाश राशियों के फल है॥६३॥ दशा के आदि के अक्ष के क्रम मे फल कहना
चाहिए। क्रूरग्रह की दशा के समय शान्ति करनी चाहिए॥१६४॥

इति श्रीवृ० पा० हो० ना० पू० भावप्रका० कालचक्रदशाफलकपर्व नाम
पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५॥

अथ चरदशाफलमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि चरपर्यादशाफलम् ॥ यस्य विज्ञानमग्रेण देवतो जायते द्विज ॥१॥
नराणां सर्वमायुश्च शुभदुःखशुभाशुभम् ॥ सर्ववेत्ता निर्विशकः भवतोह म मगधः ॥२॥
जन्मसंप्राप्तपारम्यं भानुभावे द्विजोत्तम ॥ आपूर्वप्रदा ज्ञेया फल तस्या वदाम्यहम् ॥३॥
यदा दशाप्रदो राशित्तस्य रक्षत्रिकोणः पण्डितेषुते विप्र सा दशा दुःखदायिका ॥४॥
तृतीयपञ्चमे पापे जयादिः परिकीर्तिता ॥ शुभ सेटपुते तत्र जायतेऽपि पराजयः ॥५॥ सामन्ते
शुभपापश्च साधो भवति निश्चितम् ॥ यदा दशाप्रदो राशिः शुभसेटपुतो द्विज ॥६॥ शुभसेत्रे

हि तद्वाशिः शुभकर्ता दशाफलम् ॥ पापयुक्ते शुभसेमपूर्वयुक्तं सुखोत्तमे ॥७॥ पापसं शुभसंयुक्ते पूर्वसौख्यं ततो न्यसेत् ॥ पापक्षेत्रे पापयुक्ते सा दशा सर्वदुःखदा ॥८॥ शुभक्षेत्रदशा राशौ युक्ते पापशुभौ द्विज ॥९॥ पूर्व कष्टं सुखं पश्चाद्विर्विशंकं प्रजायते ॥ पापसं पापशुभगौ पूर्वसौख्यं सप्तेन तत् ॥ शुभक्षेत्रे शुभं वाच्यं पापसं स्वशुभं फलम् ॥१०॥

चरणपादशाफल

अब चरणपादशा का फल कहते हैं। जिसके जानने से मनुष्य दैवज्ञ होता है ॥१॥ मनुष्यो की सम्पूर्ण आयु के शुभाशुभ सुख दुःख आदि का निश्चय रूप से जाता होता है ॥२॥ जन्म समय के लग्न से आरम्भ करके १२ भावों में पूर्वोक्तानुसार आयु के वर्ष होते हैं, उनका फल कहते हैं ॥३॥ जब जिस भाव का विचार करना है, तब देखना चाहिए कि-उस राशि से ५।८।९ स्थान में पापग्रह हो तो उम राशि की दशा दुःखदायक होती है ॥४॥ विचार्य राशि से ३।६ स्थान में पापग्रह हो तो जय आदि शुभ फल और शुभग्रह युक्त हो तो पराजय होती है ॥५॥ लाभ स्थान में शुभ और पाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो निश्चय लाभ होता है। हे द्विज! जब दशास्वामिनी राशि शुभ ग्रह युक्त हो ॥६॥ तथा राशि भी शुभस्थान में हो तो दशा का फल शुभ होता है। राशि यदि पापग्रह युक्त शुभस्थान में हो तो कल्याणकारी है ॥७॥ राशि पाप हो और उसमें शुभग्रह हो तो पहिले सुख होता है। पापराशि में पापग्रह हो तो वह दशा सर्वदुःख दाता है ॥८॥ शुभक्षेत्र की दशा राशि की हो उसमें शुभपाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो ॥९॥ पहिले कष्ट और पश्चात् सुख होता है। पापराशि में शुभ और पापग्रह हो तो प्रथम सौख्य होता है। राशि यदि शुभ हो तो शुभ और पाप हो तो अशुभ फल होता है ॥१०॥

द्वितीये पंचमे सौम्ये राजप्रीतिर्जयो ध्रुवम् ॥ पापे तृतीयो सेटे शत्रोर्निग्रहण जयः ॥११॥ चतुर्थे तु शुभे सौख्यमारोग्य त्वष्टमे शुभे ॥ धर्मवृद्धिर्गुह्यजनात्सौख्यं च नवमे शुभे ॥१२॥ विपरीते विपरीतो मिश्रेमिश्र प्रकीर्तितम् ॥ पापे भीमे च पापादेर्दहपीडा मनोज्ञया ॥१३॥ सप्तमे पापयोगाभ्यां पापे दारार्तिरीरिता ॥ चतुर्थे स्थानहानिः स्यात्पचमे पुत्रपीडनम् ॥१४॥ दशमे कीर्तिहानिः स्यान्नवमे पितृपीडनम् ॥ पापाद्दुद्रगते पापे पीडा सर्वाभ्यवाधिका ॥१५॥ उत्तस्थानगते सौम्ये तत्तः सौख्यं विनिर्दिशेत् ॥ केद्रस्थानगते सौम्ये लाभशुभजयप्रदः ॥१६॥ जन्मकालग्रहः स्थित्वा अगोचरग्रहैरपि ॥ विचारितैः प्रयत्नव्य तत्तद्वागिदशाफलम् ॥१७॥ यस्परान्तिः शुभाकांतो यस्य पश्चाद्व्यमणः ॥ तद्दशा शुभदर प्रोक्ता विपरीते विपर्ययः ॥१८॥

द्वितीय, पचम में सौम्यग्रह हो तो राजप्रीति और जय होती है। तृतीयभाव में पापग्रह हो तो शत्रु की पराजय तथा वधन और अपनी जय होती है ॥११॥ चतुर्थ भाव में शुभग्रह हो तो सुख और अष्टभाव में शुभग्रह हो तो आरोग्यता होती है। और नवमभाव में शुभग्रह हो तो पुत्र जनो में धर्मवृद्धि और सौम्य होता है ॥१२॥ विपरीत परिस्थिति हो तो विपरीत कष्टना। पापराशि में पापग्रह हो तो दहपीडा और मनोज्ञया होती है ॥१३॥ सप्तमभाव में पापग्रह के योग में या स्थिति में भार्या को कष्ट होता है। चतुर्थभाव में पापयोग हो तो स्थान हानि तथा पचमभाव में पापयोग में पुत्र को पीडा होती है ॥१४॥ दशमभाव में पापयोग में कीर्तिहानि

तथा नवम मे पापयोग से पितृपीडा होती है। और यदि पापग्रह से ११वे भाव मे भी पापग्रह हो तो अवाध पीडा होती है॥१५॥ तथा ११ मे सौम्य ग्रह हो तो सौख्य होता है। यदि केन्द्र स्थान मे सौम्य ग्रह हो तो लाभ और शत्रु पर जय होती है॥१६॥ इस प्रकार जन्मकाल की ग्रह स्थिति तथा वर्तमान ग्रहस्थिति का विचार करके ही तत् २ राशि दशा का फल कहना चाहिए॥१७॥ जिस जातक की राशि ग्रह युक्त हो और राशि के पृष्ठभाग मे भी शुभग्रह हो वह दशा शुभ फलदायिनी होती है और विपरीत होने से विपरीत फल होता है॥१८॥

त्रिकोणरंध्ररिष्कस्थैः शुभपापैः शुभाशुभम् ॥ तद्दशा प्रदरशीषु वक्तव्यं फलमन्यथा ॥१९॥
मेघकर्कतुलानकराशीनां च यथाक्रमम् ॥ बाधास्थानादिसप्तोक्ता कुम्भोसिंहवृश्चिकाः ॥२०॥
पाकश्वरांतराशौ वा बाधास्थाने शुभोत्तरे ॥ स्थिते सति महाशौको बंधनं व्ययनाशनम् ॥२१॥
उच्चस्वर्क्षग्रहे तस्मिञ्छुभं सौख्यं घनागमः ॥ तच्चक्षुष्यं चेदसौख्यं स्यात्तद्दशा न फलप्रदाः ॥२२॥
बाधकव्ययपङ्कध्रे राहुयुक्ते महद्भयम् ॥ प्रस्थानं बंधन-प्राप्ती राजपीडा रिपोर्भयम् ॥२३॥
रव्यारराहुशनयो भुक्तिराशौ स्थिता यदि ॥ तद्वाशियुक्ताः पतनं राजकोपान्महद्भयम् ॥२४॥
भुक्तिराशित्रिकोणे तु नीचखेटः स्थितो यदि ॥ तद्वाशौ वा युते नीचे पापे मृत्युभयं बदेत् ॥२५॥
भुक्तिराशौ स्वतुगस्थे त्रिकोणे वापि तुंगमे ॥ यदा भुक्तिदशा प्राप्ता तदा सौख्यं लभेन्नरः ॥२६॥
नगरग्रामनाथत्व पुत्रताम घनागमम् ॥ कल्याणभौमभाग्यं च सेनापत्य महोन्नतम् ॥२७॥

‘५।८।९।१२’ भावो मे शुभ तथा पाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो मिश्रित फल होता है उस राशि दशा मे मिश्रित फल कहना चाहिए॥१९॥ मेघ, कर्क, तुला, मकर राशियों के फल के प्रतिबधक स्थान क्रम से कुम्भ, वृष, सिंह, वृश्चिक है॥२०॥ दशाप्रद राशि स्थिर द्विस्वभाव हो और उसके बाधा स्थान मे पापग्रह हो तो महाकलेश, बंधन, व्यय और नाश होता है॥२१॥ तथा उस दशाराशि मे उच्च का या स्वगृही ग्रह हो तो शुभ, सौख्य और धनलाभ होता है। यदि वह राशि ग्रह शून्य हो तो अशुभ या फलहीन होती है॥२२॥ बाधक स्थान से ६।८।१२ राहुयुक्त हो तो महान् भय होता है। यावा बंधनप्राप्ति, राजा तथा शत्रु से पीडा और भय होता है॥२३॥ सूर्य, मंगल, शनि, राहु ये ग्रह यदि दशा राशि मे या अन्तरदशा राशि मे हों तो पतन और राजकोष से भय होता है॥२४॥ दशाराशि से त्रिकोण मे यदि नीच राशिगत ग्रह हो अथवा उस राशि मे ही नीचस्थ या पापग्रह हों तो उसके भोगकाल मे मृत्यु का भय होता है॥२५॥ भुक्तिराशि मे उच्चस्थ ग्रह हो अथवा उससे त्रिकोणभाव मे उच्चस्थ ग्रह हो तो उस दशा के भोगकाल मे मनुष्य को बहुत सुख होता है॥२६॥ वह मनुष्य नगर तथा ग्राम का स्वामी, धन, पुत्र प्राप्ति, सेनापति का बड़ा ऊँचा पद प्राप्त करता है॥२७॥

पाकेश्वरो जीवदृष्टः शुभराशिस्थितो यदि ॥ तद्दशाघनप्राप्तिर्मंगल पुत्रसमत् ॥२८॥
सितासितापुराण्यश्च सूर्यस्य रिपुराण्यः ॥ कौर्मितीलपटश्रेदोर्भीमस्य रिपुराण्यः ॥२९॥
घटमीननृकुस्तौलिकन्या तस्य ततः परम् ॥ कर्कमीनालिकुम्भाश्च राशयो रिपुवत्समृताः ॥३०॥
मेघसिंहधनुः कौर्मिकर्कटाः शनिशत्रवः ॥ वृषतौलिनृयुक्कन्याराशयो रिपवोगुतो ॥३१॥
सिहालिकर्कचापाश्च शुक्रस्य रिपुराण्यः ॥ एव ग्रहांतरदशां चिंतयेत्कोविदो द्विज

॥३२॥ ये राजयोगदा ये च शुभमध्यगता ग्रहाः ॥ यस्माद्वाऽपित्रिकोणाः स्युः शुभाशुभफल
ग्रहाः ॥३३॥ तद्दशायां शुभं ब्रूयाद्वाजयोगादिसंभवम् ॥ शुभद्वयांतरगतः पापोपि शुभदः फलम्
॥३४॥ गताशुभदशामध्यं दशासौम्यस्य शोभना ॥ शुभं यस्य त्रिकोणस्य तद्दशापि शुभप्रदा
॥३५॥ आरंभांतौ मित्रशुभराशयोर्वेदि फलं शुभम् ॥ प्रतिराश्यैककोब्ध स्याच्चासनीयं शुभ
द्विज ॥३६॥

दशा स्वामी गुरुदृष्ट हो या शुभराशि स्थित हो तो उसकी दशा में धन प्राप्ति तथा पुत्रोत्पत्ति होती है ॥३८॥ (ग्रहों की शत्रुराशि) सूर्य की शत्रुराशि २।६।७।१०।११ हैं। चन्द्रमा की शत्रुराशि ७।८।११ तथा मंगल की शत्रु राशि २।९।१०।११।१२ हैं। इसके बाद बुध की शत्रु राशि ४।८।११।१२ हैं ॥३०॥ गुरु की शत्रुराशि २।७।३।६ हैं। और शनि की शत्रुराशि १।५।८।९।४ हैं ॥३१॥ तथा शुक्र की शत्रु राशि ४।५।८।९ हैं। इन शत्रु राशियों को ध्यान में रखते हुए अन्तरदशा का विचार करें ॥३२॥ जो ग्रह १-राजयोगकारक है तथा २-जो ग्रह शुभ ग्रहों के मध्य में है एवं ३-जिस ग्रह से त्रिकोण में शुभग्रह हो वह ग्रह शुभफल देता है ॥३३॥ १-राजयोग कारक ग्रह की दशा में राजयोग के अनुसार जो शुभ फल होना संभव है वह शुभ फल होता है। २-इसी प्रकार दो शुभग्रहों के मध्य में जो पापग्रह है वह भी शुभफलकारक ही है ॥३४॥ अशुभग्रह की दशा में शुभ ग्रह का अंतर शुभ होता है। ३-इसी प्रकार जिस ग्रहके त्रिकोणस्य शुभग्रह हो उसकी दशा भी शुभफलदात्री होती है ॥३५॥ जिस पापदशाका आरंभ (दशा) और अंत (दशा) शुभ या मित्रराशिकी दशामें हों तो वह दशा भी शुभफल देनेवाली होती है। इसी प्रकार प्रति राशि एक २ वर्ष चलाना चाहिए ॥३६॥

आरंभात्त्रिकोणे तु सौम्ये तु शुभमावहेत् ॥ शुभराशौ शुभारभे दशा स्यादितिशोभना ॥३७॥ शुभादिराशौ पापश्रेद्दशारंभे शुभौ द्विज ॥ शुभारंभे वा कथेति आरंभस्य शुभं भवेत् ॥३८॥ नीचादौ तद्दशादत भातं भाग्यविपर्ययः ॥३९॥ यत्र स्थितो नीचलेटस्त्रिकोणे वाय राशियः ॥४०॥ तदा राशेश्वरे नीचे संबधो नीचलेटकैः ॥ भाग्यस्य विपरीतत्व करोत्येव द्विजोत्तम ॥४१॥ राहोः केतोश्च कुंभादि वृश्चिकादि चतुष्टयम् ॥ कुंभे तत्र सभारभस्तद्दशायां शुभं भवेत् ॥४२॥ यद्दशायां शुभं ब्रूयात्संचेन्मकरसंस्थितः ॥ यस्मिन्राशौ दशांतः स्फुल्लस्मिन्दृष्टे पुतेपि वा ॥४३॥ शुक्रेण विपुला वा स्याद्वाजकोपाद्वनस्य ॥ दशांतश्रेदरिलेने राहुदृष्टिपुतेपि वा ॥४४॥ इदं फल शनेः पाके न विचिन्त्य द्विजोत्तम ॥ दशाप्रदे नकराशौ न विचित्यमिदं फलम् ॥४५॥

आरंभिक राशि में त्रिकोण में शुभग्रह हो तो शुभफल होना है। मूलदशा भी शुभ हो और अन्तरदशा भी शुभ हो तो अतिशुभ फल होता है ॥३७॥ शुभराशि में पापान्तर भी जब शुभ हो सकता है। तब शुभराशि में शुभान्तर के शुभ होने में तो सन्देह ही क्या है ॥३८॥ दशा के आदि तथा अन्त में नीच, शत्रुस्य ग्रहयोग युक्त राशि का अन्तर हो तो भाग्य का विपर्यय (उल्टा निकृष्ट होना) ही जानना ॥३९॥ जिस राशि में अथवा जिस राशि के त्रिकोण

नीचस्य ग्रह हो॥४०॥ तथा जब दशाराशि का स्वामी नीच ग्रह हो, अथवा नीचग्रहो से सम्बन्ध हो तब हे द्विजोत्तम! भाग्यभाव की हानि ही करता है॥४१॥ राहु तथा केतु के लिए क्रमशः कुभादि चार तथा वृश्चिकादि चार राशियों में दशा का आरम्भ हो तो दशा शुभ होती है॥४२॥ जिस दशा को शुभ माना जाय वह दशा यदि मकर राशि की हो अथवा दशात राशि यदि राहु केतु से दृष्ट या युक्त हो॥४३॥ अथवा शुक या चन्द्रमा से युक्त या दृष्ट हो तो राजा के कोप से धन क्षयकारी दशा जानना। यही फल जहां शत्रुराशि में दशा का अंत होता हो अथवा राहु की दृष्टि से युक्त या दृष्ट हो तो भी जानना॥४४॥ यह फल शनि की दशा में तथा मकर राशि दशा में नहीं देखना॥४५॥

राहोर्दशांते सर्वस्य नाशो मरणवधने । देशाग्निर्वासनं वा स्यात्कण्टं वा महदश्नुते ॥४६॥ तत्त्रिकोणगते पापे निश्चयाद्दुःखमादिशेत् ॥एवं शुभाशुभं सर्वं निश्चयेन ब्रवेद्बुधः ॥४७॥ राह्णादिस्थितराशिः स्याद्दशाप्रदो भवेन्नरः ॥ तत्र कालेपि पूर्वोक्तं चितनीयं प्रपन्नतः ॥४८॥ दशारंभो दशांतो वा मकरे चेतुशोभनम् ॥ तस्मिन्नेव च राहुश्रेत्रिरोधी द्रव्यनाशनः ॥४९॥ यत्र क्वापि च मे राहो दशारंभे विनाशनम् ॥ गृहभ्रंशः समुद्दिष्टो धने राहुधनीभृतः ॥५०॥ चंद्रशुक्रौ द्वावशे चेद्राजकोपो भवेद्ध्युवम् ॥ भीमकेतु तत्र यदि वधाप्रेर्महती व्यया ॥५१॥ चंद्रशुक्रौ धनेष्विप्र यदि राजा प्रयच्छति ॥ दशारंभेन्तरस्याश्च द्वितीयस्थितिर्द फलम् ॥५२॥ एवमर्गलफलार्थे च ब्रह्मदेवप्रदर्शितः ॥ यस्य पापः शुभो वापि ग्रहस्तिष्ठेच्छुभार्गले ॥५३॥ तेन दृष्टेक्षित लग्न प्राबल्यायोपकल्पते ॥ यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलस्थितिः॥५४॥ सौमि दृष्टस्थिते लग्ने विपरीते फल भवेत् ॥ तद्दृष्टेऽपि शुभं सूयाग्निर्विशक द्विजोत्तमा॥५५॥

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे चरदशाफलकथनं नाम
पद्मचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥

राहु की दशा के अन्त में सर्वस्य का नाश तथा मरण एवं वधन होता है। या देशत्याग अथवा महान् कष्ट होता है॥४६॥ और राहु या दशाप्रद राशि से त्रिकोण स्थान में पापग्रह हो तो निश्चय ही दुःख होता है। इस प्रकार कही हुई रीति से सब योगायोगों का विचार करके निश्चित फल कहना चाहिए॥४७॥ यदि दशाप्रद राशि राहु आदि पापग्रह युक्त हो तो उस दशा में भी पूर्वोक्त अशुभ फल होता है॥४८॥ दशा का आरम्भ और अन्त मकर राशि में हो तो शुभफल होता है। और उसी राशि में यदि राहु हो तो शुभफल का निरोध करके धननाश कारक होता है॥४९॥ जिस राशि में राहु हो उस राशि की दशा नाशकारक होती है। यदि राहु धन स्थान में हो तो धनी मनुष्य के भी घर का नाश करता है॥५०॥ चन्द्र तथा शुक्र जिस राशि के १२ भाग में हो तो राजकोप होता है। यदि १२ स्थान में भीम और केतु हो तो अग्नि से मृत्यु या व्यथा होती है॥५१॥ चन्द्रमा और शुक्र यदि धन राशि में हो तो राजा से धनलाभ होता है। दशा के आरम्भ तथा अन्त में भी धनलाभ होता है॥५२॥ जैसे स्थान आदि के द्वारा जो योग और फल दशाप्रद राशि के लिए कहे गये हैं, वे सब योग अर्थात् योग के विचार में भी प्रयुक्त करना चाहिए। ऐसा ही प्रथम ब्रह्मा ने कहा है। जिस दशाप्रद राशि में

अर्गला मे पाप या शुभ ग्रह हो॥५३॥ उस ग्रह से यदि लग्न दृष्ट या युक्त हो तो योग की प्रबलता समझना। इसी प्रकार अर्गला के प्रतिबन्धक योग मे भी यदि कोई ग्रह की दृष्टि हो तो ॥५४॥ वह योग भी दृष्ट या युक्त लग्न के लिए विपरीत योग होने पर विपरीत फलकारक होता है॥ और शुभयोग यदि प्रतिबन्धित नहीं हो तो शुभ फल निःसन्देह होता है॥५५॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० चरदशाफलकथन नाम
पट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥

अथ दशावाहनमाह

अधुना सप्रवक्ष्यामिवशावाहनभुक्तमम् ॥ प्राणिना च हितार्थं कथयामि तवाग्रतः ॥१॥
गर्दभो घोडको हस्ती महिषो जम्बुसिंहकौ ॥ काको हंसो मयूरश्च नवैते नरवाहनाः ॥२॥
स्वकीयजन्मनसत्राद्गणयेत्प्रभावधि ॥ नवमिस्तु हरेद्भाग्यं शेषं तु राशिवाहनम् ॥३॥
दशाप्रवेशे खरवाहनश्च उत्पन्नभोगी जडतासमेतः ॥ लज्जाविहीनो धनधान्यहीनः स्थान्मानको
वस्त्रविवर्जितश्च ॥४॥ चपलचचलता बहुभक्षकः प्रकटबुद्धिसंशयवभूषति ॥ दृढतनुर्ब
हुकार्यकरः परस्तरगयोर्वि वाहनसंस्थितः ॥५॥

दशावाहन कथन

अब दशा वाहन का उत्तम प्रकरण कहते हैं जिससे प्राणियों का हित हो॥१॥ गर्दभ घोडा, हाथी, महिष, जम्बु (सियार) सिंह काक (कौवा), हंस, मयूर ये नौ दशा के वाहन है॥२॥ अपने जन्म नक्षत्र से सप्तस्वष्ट के नक्षत्र तक गणना करके ९ का भाग देना। शेष रह सो वाहन जानना॥३॥ दशाप्रवेश मे यदि गर्दभ वाहन हो तो कमाई होने पर खानेवाला भूख, लज्जाहीन, धनधान्यहीन, वस्त्रादि हीन दीन होता है॥४॥ यदि अश्व हो तो चपल, चचल, बहुभक्षी, बुद्धिमान्, शब्दकारी, सेनापति तथा रक्षणरीरवाला परम उद्यमी होता है॥५॥

नानाकार्यकृतो हि भूर्जननो देवाधिपो वाहनः सत्पतो यद्गठानताशुभगतिः सेनापतिः शोभनः ॥६॥ सर्वं सौख्यकरः सुभूषणधरः स्याच्चचलो दुष्टता पाकोय यदि वाहनो गजपतेर्नाकलाकौशलः ॥७॥ महिषयोर्वलबुद्धिविहीनता जयभय प्रबलाग्रिमयातुरम् ॥ कटकमो प्रवले बलसंपुतो महिषयोर्विदि वाहनता भवेत् ॥८॥ जवुके बहुरैव चचला व्याधिरुक्षपरिपीडितागता ॥ स्तेशता रिपुजनाच्च पीडनं धान्यनाशमतिप्रसन्नो भवेत् ॥९॥
दशाप्रवेशे यदि वाहनश्च सिंहो बलिष्ठो विविधे प्रकारे ॥ उत्पन्नभोगी रिपुनाशकारी स्वाहाहने केसरिणा विशेषः ॥१०॥ काके वाहनसंस्थिते यदि दशा स्याच्चचलो निर्भयो वासरो मलिनः कुबेधपरितो नोर्चर्जेन पूजितः ॥ स्थाने राजभय तवारिपुभय मानापमान नरा दुष्टार्तिः बह्वु कुबेष्टितनरः स्त्रीद्वेषकारी भवेत् ॥११॥ जनकलानिधिकैलिसमन्वितो द्विजपतेर्वहुजात्मसुखान्वितः ॥ सदशने मतिना प्रबलायिता मुकयिता सलुहसपवाहनः ॥१२॥

मधुरवाहनतो बहलं सुखं धृतिफलाकुरालोऽमलकेलिकृत् ॥ मधुरवाक्ययुतो मधुरप्रियः
सदसमेन नरस्य समन्वितः ॥१३॥

यदि जातक की दशा का वाहन हाथी हो तो अनेक कार्याकार्यकारी मूर्ख चिन्तित हठी
किन्तु शुभगति तथा योग्य सेनापति सुन्दर सजीला ॥६॥ सुखकारी, चंचल एवं अनेक कला
कौशल वाला होता है ॥७॥ यदि दशा का वाहन महिष हो तो जातक बुद्धिबल से हीन प्रबल
अग्निभय से आतुर, दो लड़नेवाले साधो की तरह लड़ाई में सबसे आगे रहता है ॥८॥ यदि
सियार दशावाहन हो जो जातक अतिचंचल व्याधि दुःखपीडित स्त्रीवाला, क्लेशयुक्त तथा
शत्रु से पीडित तथा धनधान्यहीन होता है ॥९॥ यदि सिंह दशावाहन हो तो जातक बलवान्
तथा अनेक रीति से भोगो को प्राप्त करनेवाला, शत्रुहन्ता होता है ॥१०॥ यदि कौवा वाहन
हो तो जातक चंचल निर्भय पर्यटनप्रिय मलिन कुवेशधारी नीचजनो में सगतिवाला तथा राज
एवं शत्रुभययुक्त, मानापमान में समान, रोगी, कलह कामी, कुचेष्टाकारी तथा स्त्री का द्वेषी
होता है ॥११॥ यदि हंस वाहन हो तो अतीव सुन्दर कलाप्रेमी, बहुत सन्तान सुखयुक्त सभा
चतुर, प्रबल मतिमान् होता है ॥१२॥ मयूर वाहन हो तो बहुत सुखी, धैर्यवान्, कलाकुशल,
क्रीडा प्रेमी, मधुरभाषी मधुरभोजन प्रिय होता है ॥१३॥

अथ सुदर्शनचक्रमाह

विश्वचक्र कालचक्र दिव्यचक्र सुदर्शनम् ॥ विष्णोः कराबुजावासमीडे तज्जानमद्भुतम् ॥१४॥

पुनः समस्तज्योतिःशास्त्रतत्त्वकामधेनुरूपं सुदर्शनचक्रमाह

सुदर्शनं द्वादशारं जन्मभेद्वर्कराशितः ॥ केद्रकोणाष्टगो राहुः पापात्यं च शुभो मुदे ॥१५॥
तत्त्वाद्यैर्वर्षमासाद्यद्वेघेकघट्टान्प्रवर्तयेत् ॥ विरिष्कारिशुभैः पार्ष्णिपडायेषु वै शुभम् ॥१६॥ तं त
भाव प्रकल्प्यांगं तत्तत्तन्वादिज फलम् ॥ गुरुपदेशात्संवाच्यं भोजन स्वप्नपूर्वकम् ॥१७॥
भावैशादिद्वादशानां दशवर्षेषु कल्पयेत् ॥ तदाद्यतर्दं शास्तद्वन्मासादी तद्वलैः शुभाः ॥१८॥ सुदर्शनं
द्वादशारं वृत्तत्रयसमन्वितम् ॥ पूर्ववृत्ते जन्मलप्राप्तावा खेचरसयुताः ॥१९॥ तदूर्ध्ववृत्ते चद्राक्ष
भावाः खेटसमन्विताः ॥ तदूर्ध्ववृत्ते सूर्याच्च भावाः लेख्याः सखेचराः ॥२०॥

सुदर्शन चक्र

जो विश्व-ससार वा चक्र समयफलमूचक है, देवता भी जिसे चाहे ऐसा यह सुदर्शन नामक चक्र
के समान ज्योतिषशास्त्र का सारभूत चक्र है, अतः सर्वप्रेष्ठ होमों से इसकी प्रशंसा करते हैं। भगवान्
विष्णु के करकमल में रहनेवाले चक्र की बन्दना करते हैं ॥१४॥ समस्त ज्योतिषशास्त्र वा तत्त्व
कामधेनु के समान यह सुदर्शन चक्र है। १२ कोण्टक का चक्र बनावे। उसके (अतर्वाह्यरूप से तीन
विभाग करे) अन्तर के भाग में जन्मकुडली, मध्य में चन्द्रकुण्डली, बाह्यचक्र में सूर्यकुण्डली लिखे। उ
समें देखना कि केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम भाग में राहु या पापग्रह हों तो दुःखदायी और शुभग्रह हो
तो सुखदायक होते हैं ॥१५॥ प्रत्येक कोण्टक में प्रति कोण्टक १-१ वर्ष तथा मास एवं २॥-२॥ दिन
की आवृत्ति करे। छठे तथा बारहवें घर में शुभग्रह न हो और ६।३।११ में पापग्रह हो तो शुभ

है॥१६॥ प्रत्येक भाव को तद्भावज फल विचारार्थ तत्र कल्पना करके उस उस भाव से उसके फल का निर्देश करे। गुरु के उपदेशानुसार प्रातःकाल से शयनकाल तक का फल कहना चाहिए॥१७॥ द्वादश भावों में प्रथम प्रत्येक भाव में १०-१० वर्ष की कल्पना करे। पश्चात् उनमें १०-१० मास की अन्तर्दशा जिस भाव की दशा होगी उसी भाव से आरम्भ होगी॥१८॥ यह सुदर्शन चक्र बारह कोष्टक का है। तीन वृत्त (घेरे) से युक्त है। पहले वृत्त में जन्मलग्न से १२ भाव लिखे और यथास्थान ग्रह लिखे॥१९॥ उसके ऊपर के वृत्त में चन्द्रराशि में भाव और ग्रह लिखे। उसके ऊपर सूर्यराशि से भाव और ग्रह लिखे॥२०॥

वृत्तत्रयेऽपि ये खेटा यत्र राशो व्यवस्थिता ॥ ते तत्र सत्वेत्यास्तस्माद्भ्रातृवन्निरीक्षयेत् ॥२१॥ यद्यद्भूते तु यद्भ्रातृवत्केन्द्रकोणाष्टमस्तम् ॥ पापा वा यत्र बहवस्तत्तद्भ्रातृविनाशनम् ॥२२॥ यत्र भावे संहिकेयोऽवश्य तद्भ्रातृहानिद ॥ यस्माद्भ्रातृवत्केन्द्रकोणाष्टमे सौम्या शुभप्रदा ॥२३॥ तदा तद्भ्रातृवृद्धिः स्यात्त्रिवृत्तेऽपि शुभा ग्रहा ॥ केन्द्राद्विस्वानगास्ते चेच्छुभाधिस्यफलप्रदा ॥२४॥ तथा पापक्षणास्तत्र पापापरिष्टफलप्रदा ॥ शुभेन वीक्षिता सौम्य फल तद्भ्रातृज समम् ॥२५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे चरदशाफलादि कथन
नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४७॥

(पूर्वखण्ड समाप्त)

तीनों वृत्तों में जो ग्रह जिस भाव में हो वही लिखे। पश्चात् देखो॥२१॥ जिस जिस वृत्त में जिस जिस भाव से केन्द्र त्रिकोण तथा अष्टमभाव में राहु हो या बहुत पापग्रह हो तो उस उस भाव का नाश होता है॥२२॥ और जिस भाव में राहु हो उसका अवश्य ही नाश होता है। जिस भाव से केन्द्र त्रिकोण तथा अष्टम में सौम्य ग्रह हो वह भाव श्रेष्ठ है॥२३॥ तो उस भाव की वृद्धि होती है। तीनों वृत्तों में यदि शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण भाव में हो तो अधिक शुभ फलप्रद होते हैं॥२४॥ यदि उन स्थानों में पापग्रह हो तो दुःख अरिष्ट फल देनेवाले होते हैं। और यदि वे पापग्रह शुभग्रहों में दृष्ट हो तो समान फल होता है॥२५॥

अद्वैतराज चक्र

सुदर्शन चक्र सम्बन्धी श्लोकों का तात्पर्यार्थ—

एक चक्र इस प्रकार बनाना चाहिए जिसमें १२ १२ घरों के ३ चक्र हों जिसका चित्र इसमें दिखाया गया है। उसमें भीतर के १२ घरों में ग्रह सहित सप्तकुण्डली, बीच के १२ घरों में ग्रह सहित चन्द्र कुण्डली तथा ऊपर के १२ घरों सहित सूर्य कुण्डली लिखना। अब यह चक्र तैयार है। इसमें अपने शरीर के लिये लग्न से तथा अन्य विचार के लिये उन उन पदार्थों के भाव को लग्न कल्पना करके तत् तत् भावों से विचार करना चाहिए। यह ऊपर कहा जा चुका है कि केन्द्र त्रिकोण तथा अष्टम भाव में राहु और पापग्रह अशुभ है। तथा शुभग्रह शुभ है। इस ग्रह स्थिति के विचार में स्वगृही मित्रगृहो, उच्च परमोच्चस्थ, मूल त्रिकोणस्थ स्वगदाशस्थ तथा शुभ वर्ग आदि ग्रह से सत्तत् भाव का फल शुभ एव नीच परम नीच, शत्रु राशिस्थ अमा, शत्रु

नवाशस्थ, शत्रु वर्गस्थ, पापयुत अथवा दृष्ट ग्रह अशुभ फलदायक होता है। इस विचार में शुभ, पापग्रहों की दृष्टि का भी विचार करना चाहिए। प्रत्येक ग्रह की दृष्टि जितने पाद हो, शुभ और पाप की अलग अलग योग कर, शुभ और पापग्रहों की दृष्टि का अन्तर करके जो अधिक रहे उसके अनुसार शुभाशुभ फल कहना चाहिए।

इस चक्र में मनुष्य की पूर्णायु १२० वर्ष की सख्या को प्रथम १२ भागों में बांट कर चक्र के १-१ घरमें १०-१० वर्षकी कल्पना करे। प्रत्येक घरके वर्षों में उपर्युक्त ग्रह स्थिति के अनुसार शुभाशुभ फल का निर्णय करे तथा प्रत्येक १० वर्ष में अन्तरदशा रूप से १०-१० मास उस उस भाव से १२वें भाव तक कल्पना करे और ग्रह स्थिति के अनुसार फल का निर्णय करे। यह एक प्रकार है।

दूसरा प्रकार—चक्र के १२ भागों में जन्मलग्न से प्रत्येक भाव में ११ वर्ष की कल्पना करे। इस प्रकार १० आवृत्ति होने से १२० वर्ष की सख्या पूरी होती है। इसकी अन्तरदशा प्रत्येक भाव के १-१ वर्ष के १२ भाग कल्पना करके १-१ मास १-१ भाव पर रागझना चाहिए। इसका आरम्भ अपने उसी भाव से करना चाहिए कि जिसकी अन्तरदशा देखनी हो। इसी प्रकार १ मास के भी १२ भाग करने से २॥-२॥ दिन होते हैं। उनका विचार भी १२ भागों पर पूर्ववत् प्रत्यन्तर दशा के रूप में करना चाहिए। इसी प्रकार सूक्ष्मान्तर १२॥ घटिका और प्राणान्तर प्रायः १-१ घटिका का तत्त्वत् भाव पर कल्पना करके उपर्युक्त ग्रह योगानुसार वर्ष, मास, दिन, घटी तक का शुभाशुभ फल निर्णय कर सकते हैं। यह सुदर्शन चक्र सरल रूप से जातक का भूत भविष्य तथा वर्तमान सुख दुःख निर्णय करने में अत्यन्त उपयोगी है। और ज्योतिर्विदों के लिये कामधेनु रूप है।

अथ राहुदृष्टिमाह

सुतमदननवाते पूर्णदृष्टि तमस्य युगतदशमगेहे चार्धदृष्टि ददति॥ सहजरीपुविपश्यन्पाददृष्टि मुनीन्द्रा निजभवनमुपेतो लोचनाथ प्रदिष्टि ॥२६॥

राहु दृष्टि

राहु की दृष्टि पंचम, सप्तम नवम में पूर्ण। २।१० में अर्ध दृष्टि। ३।६ में पाप दृष्टि। और अपने भाव में दृष्टि हीन होता है॥२६॥

अथ ग्रहाणामुदयवर्षाण्याह

आकृत्यो २२ जिन २४ समिता गजकरा २८ नेत्राग्रय ३२ घोडश १६ स्यत्वा २४ न्यगुणा ३६ द्विवेद ४२ प्रमिता सूर्यादिकाना सभा ॥ यथेष्ट स्वगृहे स्वतुगमयने षड्वर्षाशुद्धश्रवस्त-
स्याब्दे हि नृणा भवेदतिमुत्त भाग्योदयो निश्चितम्॥२७॥

ग्रहों के भाग्योदय वर्ष

सूर्यादि ग्रहों के ये वर्ष भाग्योदय के लिये नियत हैं॥ २२, २४, २८, ३२, ३६, २४, ३६ और ४२ हैं॥ जो ग्रह अपने घर में उच्च स्थान में, षड्वर्ष में शुभ हो, उसी ग्रह के अनुसार उम जातक का भाग्योदय ऊपर कथित ग्रह के वर्ष में निश्चित जानना॥२७॥

इति श्रीबृहत्साराशरह राशास्त्रे पूर्वखण्डे ज्योतिर्विदो श्रीरामनारायणात्मजताराचन्द्र-
शास्त्रिविरचिताया भावप्रकाशिकाटीकाया सप्तचत्वारिंशोऽध्याय ४७॥

समाप्तश्चायं पूर्वखण्डः ॥ श्रीरस्तु ॥

अथ उत्तरखण्ड प्रारम्भ्यते

मैत्रेय उवाच—भगवन्सर्वमाख्यातं जातकं विस्तरेण मे ॥ सहस्रव्यापुतप्रंयरशीत्याध्यापयंत्युतः ॥१॥ संकरात्तत्फलानां तु ग्रहाणां गतिसंकरात् ॥ नान्येन हीदृशस्येदमिति वस्तुमलं नराः ॥२॥ क्लीं पुगे ततोऽप्येव बुद्धिः पापोत्तरा नराः ॥ अतो न चास्य प्रचयगमनं न प्रयोजनम् ॥३॥ अत्र त्रेतायुगे केचिद्ब्रह्मपरे च कृते पुगे ॥ कुशाग्रमतयः सर्वे पुण्यमाजश्चिरायुयः ॥४॥ अतोऽप्यबुद्धिगम्यं यच्छास्त्रमेतद्वदस्व मे ॥ लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ॥५॥

उत्तरखण्ड प्रारंभ

मैत्रेयजी ने कहा—हे भगवन्! पूर्वभाग में आपने ८० अध्यायों के ११,००० श्लोकों से जातकशास्त्र का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है ॥१॥ किन्तु ग्रहों की गति आदि का विचार अति कठिन होने से फलनिर्णय करना अति कठिन है ॥२॥ क्योंकि-फलनिर्णय के प्रकार अति विस्तृत और दुरूह है, अतः सरल सुबोध प्रक्रिया युक्त फलनिर्देश का प्रकार कहिये कि जिसके अनुसार कार्य करने से फलज्ञानरूप प्रयोजन सिद्ध हो ॥३॥ सत्ययुग, त्रेता, द्वापरयुगी में तो मनुष्य दीर्घायु परम मेधावी तथा पुण्यात्मा थे अतः वे इस गहन ग्रन्थ से फलनिर्देश करने में भी समर्थ थे ॥४॥ परन्तु इस कलियुग में तो (वैसे दीर्घायु और तीक्ष्ण बुद्धि सम्पन्न मनुष्य न होने से) सर्वसाधारण बोधगम्य सरल मार्ग का उपदेश करिये, जिससे मनुष्यों को सुख दुःख का ज्ञान हो और आयु के निर्णय का प्रकार भी विस्तार पूर्वक कहिये ॥५॥

पराशर उवाच—साधु पृष्टं त्वया ब्रह्मन्वदामि तव सुव्रत ॥ लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ॥६॥ सकरस्याविरोधं च शास्त्रस्यापि च सिद्धये ॥ प्रयोजनस्य लोकानामुपकाराय तच्छृणु ॥७॥ सप्तविधव्ययपर्यन्ता भावाः सत्तानुरूपतः ॥ फलदाः शुभसदृष्टा युक्ता वा शोभना मताः ॥८॥ पापदृष्टयुता भावाः कल्याणोत्तरदायकाः ॥ नितरां शत्रुनीचस्पर्शे च मिश्रोच्चगैश्च तैः ॥९॥ एवं सामान्यतः प्रोक्तं होराविद्भिस्तु मूर्धिरभिः ॥ मयैतत्प्रोक्तं प्रोक्तं पूर्वाचार्यानुवर्तिना ॥१०॥ आपुश्च लोकयात्राश्च शास्त्रेऽस्मिन्स्तत्प्रयोजनम् ॥ निश्चेतुं तत्र शक्नोति वसिष्ठो वा बृहस्पतिः ॥११॥ किं पुनर्मनुजास्तत्र विशेषात् कर्तुं पुगे ॥ नष्टादिषु च नातीय द्रेष्काणादिकलेषु च ॥१२॥

पराशरजी ने कहा—हे मैत्रेय! आपने सुन्दर प्रश्न किया है, अब हम वह शास्त्र कहते हैं कि जिससे जातक का शुभाशुभ तथा आयु का ठीक ठीक ज्ञान हो ॥६॥ और तुमने जो यह कहा है कि-पूर्वभाग में वर्णित रीति से फलनिर्णय अति कठिन हो गया है सो उसकी भी स्पष्टता के लिए तथा विरोध परिहार के लिए भी विशेषरूप से वर्णन करते हैं ॥७॥ इस शास्त्र में लग्न आदि १२ भाव ही फलनिर्देश के मूल हैं। वे शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो शुभफल, अशुभ (पाप) ग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल देते हैं ॥८॥ उसमें भी शत्रु, नीच अस्त में युक्त दृष्ट में नष्ट फल की अधिकता और मित्र, उच्च, स्वर्गही आदि युक्त, दृष्ट में शुभ फल की अधिकता होनी

है॥१॥ जैसे पूर्वाचार्यों ने कहा है उसी प्रकार से हमने कहा है॥१०॥ यह ज्यौतिष शास्त्र अति गम्भीर और दुर्बोध है, मनुष्यों का शुभाशुभ तथा आयुनिर्णय में महान् आचार्य भी असमर्थ हैं, साधारण मनुष्य तो कैसे समर्थ हो सकते हैं॥११॥ और नष्ट वस्तु ज्ञान में तो द्वेषाण, नवाश आदि के विचार द्वारा फल कहना तो अतिकठिन है॥१२॥

आचार्यस्य मुखादेतच्छास्त्रं तु शृणुयाद्बुधः ॥ संप्रदायेन यः श्रांतश्चास्मिच्छास्त्रे महानतिः ॥१३॥ कर्मज्ञानविदा वेदो द्विधा यद्वत्तदाऽऽह्वये ॥ होराशास्त्रं द्विधा प्रोक्तं सकीर्णनिश्चयादिति ॥१४॥ प्रोक्तः संकीर्णभागस्तु निश्चयांस्तु कथ्यते ॥ यो वेति सम्यगेतत्तु दैवज्ञः स उदाहृतः ॥१५॥ भावदृष्ट्यादिषु प्रोक्तानर्थान्मसम्यग्विचार्य च ॥ समीचीनास्तु संगृह्य विरुद्धास्तु परित्यजेत् ॥१६॥ आयुर्दयैः परं योगैः फलान्यष्टकवर्गतः ॥ तन्वादीनां तु भावानां सूक्तेर्भावादभिः फलैः ॥१७॥ ज्ञात्वाऽऽदौ करणं स्थानं विंदुरेखे च वर्णणाम् ॥ क्रमादष्टकवर्गस्य पृथक्कृत्य फलं वदेत् ॥१८॥

अतः यह शास्त्र गुरुमुखद्वारा अध्ययन करके परिशीलन करने से उत्तरोत्तर ज्ञान विशद होगा॥१३॥ यह शास्त्र वेद के समान ही है, जैसे वेद ज्ञान और कर्म का प्रतिपादक है उसी तरह यह शास्त्र भी १—‘सकीर्ण’ और २—‘निश्चय’ भेद से दो प्रकार का है॥१४॥ उसमें सकीर्ण भाग पूर्वखण्ड में कहा जा चुका है और ‘निश्चय’ भाग अब कहते हैं॥१५॥ जन्मलग्न आदि १२ भावों पर जो सप्तम आदि स्थानों में पूर्णदृष्टि आदि दृष्टि कही गई है, उसका स्पष्ट करके शुभ दृष्टि में पापदृष्टि हीन करके शुभफल निर्णय करना॥१६॥ पश्चात् प्राप्त शुभाशुभ के निर्णय के लिए प्रथम आयु का परिमाण देखना चाहिए (नबोकि आयु ही नहीं होगी तो शुभाशुभ फल को भोगेगा ही कौन?) बाद शुभाशुभयोग और अष्टकवर्ग जन्म फल बलानुसार मिश्रित करना॥१८॥

तनुस्यायुस्त्रिररिण्येषु पंच कामे सुखेर्णवाः ॥ अरौ भाग्ये त्रयः पुत्रे षट् करी खे भवे च भूः ॥१९॥ तर्प्रेदुजीवशुक्रजास्तनी खेमरणेषि च ॥ रविभौमाकिंचदार्था ध्यये जेदुसितार्थकाः ॥२०॥ सुखे होरेदुसुखाश्च धर्मेर्काकिंकुजा अरौ ॥ होरजायन्दवः कामे भवे दैत्येद्रपूजितः ॥२१॥ सहजेर्काकिंकुकार्यभौमाः खे गुरुभार्गवी ॥ सुतेर्काकिन्दुलप्रारशुकाः स्युः करणं रवैः ॥२२॥

(अब ‘अष्टक वर्ग’ का फलाफल निर्णय करने के लिए सूर्यादि सात ग्रह और लग्न इनकी विन्दु तथा रेखा के स्थान सबके भिन्न भिन्न कहते हैं। इस प्रकरण में विन्दु की ‘करण’ सजा है। और रेखा की ‘स्थान’ सजा है। प्रथम सूर्य की करण सख्या वही जाती है। सूर्य में प्रथम, द्वितीय, तृतीय, अष्टम, द्वादश भाव में पांच पांच करण हैं। चतुर्थ, सप्तम में चार चार करण। तथा छ नी में तीन २ करण। पचममें छ करण। दशममें दो करण। एकादशमें एक करण होता है॥१९॥ अब नाम कहते हैं। सूर्य में-प्रथम, द्वितीय, अष्टम में लग्न, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ये ५ करण देते हैं। चतुर्थ में चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ये चार ग्रह करण देते हैं। नवम में-लग्न, चन्द्र, शुक्र ये तीन। छठे भाव में सूर्य, मंगल, शनि ये तीन करण देते हैं। सप्तम भाव में लग्न, चन्द्र, बुध,

गुरु ये चार करणदाताः तृतीय मे सूर्य, मंगल, गुरु, शुक्र, शनि ये पांच ग्रह। दशम मे गुरु, शुक्र ये दो पंचभाव मे लग्न, सूर्य, चन्द्र, मंगल, शुक्र, शनि ये छ करण देनेवाले ग्रह है। बारहवे मे सू० च० म० गु० श० ये ५ हैं। ग्यारहवे मे शुक्र १। यह सूर्य की करण सख्या तथा नाम हैं॥२०॥२१॥२२॥

भाग्यस्वयोश्च षड्वेदमृतिहोरासु पंच च ॥ मानदुश्चिक्योरेकः सुते वेदा अरिस्त्रियो ॥२३॥
त्रयो व्येष्टावापे च शून्य शीतकरस्य तु ॥ होराकारार्किमृगबोगताकैन्द्वार्किमार्गवा ॥२४॥
जीवोर्काकौन्दुलप्राराहोरेदुगुरुभास्करी ॥ सितज्ञार्पा कुजतनुर्मदास्ते सितशीतगु ॥२५॥

चंद्रमा की करण सख्या—चंद्रमा से २।९ मे करण सख्या छ है। १।४।८ भाव मे पांचा ३।१० मे १। पंचमभाव मे ४.६।७ भाव मे ३ है। १२ वे भाव मे करण सख्या ८ है। तथा ११ भाव मे करण सख्या नहीं है। १२३॥ (करण नाम) करण देनेवाले के नाम—चंद्रमा से प्रथम घर मे लग्न, सूर्य, मंगल, शुक्र, शनि ये पांच हैं। दूसरे घर मे लग्न, सू० च०, बु०, शु० श० ये छ हैं। तीसरे मे गुरु एक ही है। चौथे मे लग्न सू० च० म० श० ये ५ हैं। पांचवे घर मे लग्न सू०, च०, गु० ये ४ हैं। छठे घर मे बु० वृ० गुरु ये ३ हैं। सातवे घर मे लग्न म० श० ये ३ हैं। आठवे घर मे लग्न च०, शु०, म०, श० ये ५ हैं। नवें घर मे लग्न सू० म० बु० गु० श० ये ६ हैं। दसवे घर मे श० १ है। ग्यारहवे घर कोई नहीं तथा बारहवे घर मे लग्न सहित सातो ग्रह करण देनेवाले हैं॥२४॥२५॥

होराकारार्किविज्जोवा शनि ख सकला ग्रामात् ॥ व्ययवेदममुतस्त्रीषु षट् सप्त धनधर्मयो ॥२६॥ होरासुख्यो शरा वेदा विक्रमे से त्रय क्षते ॥ द्वौ भवे शून्यमेव स्यात्करण भूमिस्थस्य तु ॥२७॥ कुजस्यार्कदुविज्जोवसिता लग्नशमी च से ॥ सितारगुरुमदा स्युर्धर्मोक्तेषु कुजविना ॥२८॥ चंद्रारगुरुशुक्रार्किलप्रानि कुजभास्करी ॥ कैन्द्वर्कसितलग्नार्पा एषु शुक्रविना सत ॥२९॥ बिना शनि सप्तधर्म सितेन्दुता विपतत ॥ अर्काकिजेदुसप्रारा करण प्रोच्यते कमात् ॥३०॥

| अथोराकारार्क सप्तवारणधोकात्म | | | | | | | | | | |
|------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| | रा० | सू० | च० | म० | बु० | शु० | शु० | म० | म० | स० |
| १ | स० | ० | ० | | ० | ० | ० | | | ५ |
| २ | हि० | ० | ० | | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ३ | गु० | | ० | ० | ० | ० | ० | | | ४ |
| ४ | बु० | ० | ० | | ० | ० | ० | | ० | ६ |
| ५ | स० | | ० | ० | | ० | ० | ० | ० | ५ |
| ६ | बु० | | | ० | | | | ० | | २ |
| ७ | स० | ० | ० | | ० | ० | ० | | ० | ६ |
| ८ | म० | ० | ० | | ० | ० | ० | | ० | ५ |
| ९ | म० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | | ० | ७ |
| १० | बु० | | ० | | | | | | | ३ |
| ११ | स० | | | | | | | | | ० |
| १२ | हि० | ० | ० | ० | ० | | | ० | ० | ६ |

मगल की करण सख्या—मगल से ४।५।७।१२ वे भाव में करण सख्या ६, २।९ में ७, १।८ में ५, ३ में ४, २ में ३, ६ में २, ११ में कोई नहीं॥

बिन्दु देनेवाले ग्रहों के नाम—मगल से पहिले भाव में सू० च० बु० वृ० शु० ये ५। दूसरे में सू० च० बु० वृ० शु० श० और लग्न ये ७। तीसरे घर में म० गु० शु० श० ये ४। चौथे घर में सू० च० बु० वृ० शु० और लग्न ये ६। पाचवे घर में च० म० गु० शु० श० लग्न ये ६। छठे घर में म० श० २। सातवे घर में सू० च० बु० वृ० शु० लग्न ये ६। आठवे घर में सू० च० बु०, गु० लग्न ये ५। नवे घर में सू० च० म० बु० वृ० शु० लग्न ये ७। दसवे घर में च० बु० शु० ये ३, ग्यारहवे में कोई नहीं। बारहवे घर में सू० च० म० बु० श० लग्न ये ६

तनुस्वगृहकर्मारिधर्मेष्वग्निर्मृतौ करौ ॥ मातृस्त्रियो रसा तामे शून्य पुत्रेव्यये शरा ॥३१॥

बुधस्यार्केन्दुपुरवो गुरुसूर्यबुधा क्रमात् ॥ लग्नार्कार्किचद्रार्था ज्ञार्कार्या हि बुधस्य तु ॥३२॥

जीवारेन्द्वार्किलग्नानि शुक्रमदधरासुता ॥ जेन्दुलग्नार्कशुक्रार्था ज्ञार्की जीवेन्दुलग्नका ॥३३॥

| अयोदाहरणार्थं बुधकरणकोष्ठकम् | | | | | | | | | | |
|------------------------------|------|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| | भा० | सू० | च० | म० | बु० | शु० | शु० | श० | ल० | स० |
| १ | स० | ० | ० | | | ० | | | | ३ |
| २ | हि० | ० | | | ० | ० | | | | ३ |
| ३ | शु० | ० | ० | ० | | ० | | ० | ० | ६ |
| ४ | च | ० | | | ० | ० | | | | ३ |
| ५ | प० | | ० | ० | | ० | | ० | ० | ५ |
| ६ | प० | | | ० | | | ० | ० | | ३ |
| ७ | स० | ० | ० | | ० | ० | ० | | ० | ६ |
| ८ | प्र० | ० | | | ० | | | | | २ |
| ९ | न० | | ० | | | ० | | | | २ |
| १० | व० | ० | | | | ० | ० | | | ३ |
| ११ | शु० | | | | | | | | | ० |
| १२ | दा० | | ० | ० | | | ० | ० | ० | ५ |

अर्कार्यशुक्राः शून्य च होरेन्द्वारार्किर्भागवाः ॥ रूपधनादयोः से द्वौ व्यये सप्तकृतेऽर्णवाः ॥३४॥

बुध की बिन्दु सख्या-बुध से १।२।४।६।९।१० वे घर में ३, ८ में २, ३।७ भाव में ६, ११ में कुछ नहीं। ५।१२ में ५ ॥ करण देनेवाले ग्रहों के नाम-बुध से पहिले घर में सू० च० गु० ३। दूसरे भाव में सू० बु० गु० ३। तीसरे भाव में सू० च० म० गु० श० लग्न ये ६। चौथे भाव में सू० बु० गु० ये ३। पाचवे घर में च० म० गु० श० लग्न ये ५। छठे घर में म० शु० श० ये ३। सातवे घर में, सू० च० बु० वृ० श० लग्न ये ६। आठवे घर कोई नहीं। बारहवे में च० म० शु० श० लग्न ये ५॥

गुरु की करण सख्या-गुरु से २।११ में १, १० में २, १२ में ७, ६ में ४, ३।८ में ५, १।४।५।७।९ में ३-३ सख्या जानना ॥३१-३४॥

मृतिविक्रमयोः पञ्च गुरो रोषेषु बह्वय ॥ शुक्रेन्दुमदा लग्ने स्व आप्ये मदश्च विक्रमे ॥३५॥ लग्नारेन्दु-
जमृगवः सुतेर्कार्यकुजा गृहे ॥ शुक्रमदेदवो शून्ये बुधशुक्रार्गश्चरा ॥३६॥ जीवारार्कैन्दवः शत्रौ मद
सर्वे बिना व्यये ॥ कमणोन्दुशनी धर्मे मदारगुरवो मृती ॥३७॥

| अपोदाहरणार्थं गुरुकरणकोटकम् | | | | | | | | | | |
|-----------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| | मा० | सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | व० | स० |
| १ | ल० | | ० | | | | ० | ० | | ३ |
| २ | दि० | | | | | | | ० | | १ |
| ३ | रु० | | ० | ० | ० | | ० | ० | | ५ |
| ४ | च० | | ० | | | | ० | ० | | ३ |
| ५ | प० | ० | | ० | | ० | | | | ३ |
| ६ | ष० | | ० | ० | | ० | ० | | | ४ |
| ७ | स० | | | | ० | | ० | ० | | ३ |
| ८ | ल० | | ० | | ० | | ० | ० | ० | ५ |
| ९ | म० | ० | | | | | | | | १ |
| १० | द० | ० | ० | ० | ० | | | | ० | ५ |
| ११ | ए० | | | | | | | | | ० |
| १२ | झ० | | ० | ० | | | ० | ० | ० | ५ |

गुरु से करण सख्या देनेवालों के नाम गुरु से पहले घर में च० शु० श० ये ३, २।११ में श० १, ३ में लग्न च० म० बु० शु० ये ५, ४ में च० शु० श० ये ३, ५ में गू० म० गु० ये ३, ६ में च० म० गु० शु० ये ४, ७ में बु० शु० श० ये ३। आठवे में लग्न च० बु० शु० श० ये ५। नवें में

म० गु० श० ये३। दसवे मे च० श०२। ग्यारहवे मे श० १। बारहवे मे श० को छोड़ सब॥३५॥३६॥३७॥

तप्तार्किततचद्वजाः करणं च गुरोरिदम् ॥ मुतायुर्विक्रमेष्वसितनुस्वव्ययलेष्विषुः ॥३८॥
अष्टौ स्त्रियामरौ षड्भूर्धर्म मित्रेप्रिलं भवे ॥ तप्रे स्वेऽकारविज्जीवमदाः सर्वे च कामभे
॥३९॥ अर्कार्यो विक्रमस्थाने सुतेऽकारौ शुभे रविः ॥ मुखेऽर्कबुधजीवाः स्युर्भोमजौ भृतिभे
द्विज ॥४०॥ शुक्रार्कैन्दार्किलप्रार्थाः शत्रौ शून्य भवे व्यपे ॥ होराकिंबुधशुक्रापस्तिन्वारजे-
न्दिनाश्च ले ॥४१॥

| अथ उदाहरणार्थं शुक्रकरणकोटकम् | | | | | | | | | | |
|-------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| | भा० | सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | स० | स० |
| १ | स० | ० | | ० | ० | ० | | ० | | ५ |
| २ | दि० | ० | | ० | ० | ० | | ० | | ५ |
| ३ | तृ० | ० | | | | ० | | | | २ |
| ४ | च० | ० | | | ० | ० | | | | ३ |
| ५ | प० | ० | | ० | | | | | | २ |
| ६ | ष० | ० | ० | | | ० | ० | ० | ० | ६ |
| ७ | स० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ८ |
| ८ | अ० | | | ० | ० | | | | | २ |
| ९ | म० | ० | | | | | | | | १ |
| १० | द० | ० | ० | ० | ० | | | | ० | ५ |
| ११ | ए० | | | | | | | | | ० |
| १२ | आ० | | | | ० | ० | ० | ० | ० | ५ |

शुक्र की करण सख्या-शुक्र से ५।३ मे २ दो करण है। १।०।१०।१२ घर मे ५-५ करण है।
सातवे मे ८ है। तथा ६ मे ६ करण है। नवे मे १ तथा चौथे मे २ है। ११ वे मे नहीं है॥३८॥

ग्रहो के नाम १२ घर में सू० म० बु० गु० श० ये ५ है। ७ वे घर में सब हैं। तीसरे में सू० बु० ये दो है। ५वे में सू० म० ये दो हैं। नवे में सू० बु० गु० ये ३ हैं। ८ में म० बु० ये दो हैं। ६ में सू० च० गु० शु० श० ल० ये ६ हैं। ११वे नहीं है। १२ वे घर में बु० गु० शु० श० ल० ये ५ है। १० में सू० च० म० बु० लग्न ये ५ है॥३९॥४०॥४१॥

स्वस्त्रीधर्मेषु सप्ताग मृतिहोरागृहेषु च ॥ आताभ्रातृव्यये वेदा रूप शत्रौ सुते शरा ॥४२॥
आपे शून्य शनेरेव करण प्रोच्यते बुधै ॥ गृहे तनौ च सप्राकीं स्वस्त्रियोश्च रवि बिना ॥४३॥
हित्वा धर्मं बुध माने सप्राररविचन्द्रजान् ॥ ततो भ्रातरि जीवार्कबुधशुक्रा शते रवि ॥४४॥
व्यये ज्येष्ठमदार्का सितार्कन्दुस्तप्रका ॥ सुते मृतौ बुधार्की च हित्वाऽऽपे स शनेर्विद ॥४५॥

| अयोदाहरणार्थं शनिचिदु कोष्ठाक्षरम् | | | | | | | | | | |
|------------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| | मा० | सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | ल० | म० |
| १ | स० | | ० | ० | ० | ० | ० | ० | | ६ |
| २ | दि० | | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ३ | तु० | ० | | | ० | ० | ० | | | ४ |
| ४ | च० | | ० | ० | ० | ० | ० | ० | | ६ |
| ५ | ष० | ० | ० | | ० | | ० | | ० | ५ |
| ६ | व० | ० | | | | | | | | १ |
| ७ | स० | | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ८ | म० | | ० | ० | | ० | ० | ० | ० | ६ |
| ९ | न० | ० | ० | ० | | ० | ० | | ० | ७ |
| १० | ह० | | ० | | | ० | ० | ० | | ४ |
| ११ | ए० | | | | | | | | | ० |
| १२ | इ० | ० | ० | | | | | ० | ० | ४ |

शनि की करण सख्या—शनि से २।७।९ मे ७।७ है। तथा ३।१०।१२ मे ४।४ है। ६ मे १ तथा ५ मे ५ है। तथा १।४।८ मे ६ है। ११ मे नहीं है॥४२॥ वरणदाता के नाम—शनि से चौथे मे १,४ मे च० म० बु० गु० शु० श० ये छ है। २।७ घर मे च० म० बु० गु० शु० श० ल० ये ७ है। १० मे च० गु० शु० श० ये ४ है। ३ मे सू० बु० गु० शु० ये ४ है। ६ मे सू० यह १ है। वारहवे मे सू० च० श० ल० ये ४ है। ५वे मे सू० च० बु० गु० ल० ये ५ है। ८ मे च० म० गु० शु० ल० ये छ है। ११ वे मे नहीं है॥४३॥४४॥४५॥

उक्ताऽन्ये स्यान्दातार इति स्यान् विदुर्बुधा ॥ अय स्यान्ग्रहान्वक्ष्ये मुखबोधाय सूरिणान् ॥४६॥ स्वायुस्तनुषु मदारमूर्याजीवबुधौ सुते ॥ विक्रमे जेन्दुलपानि सप्राकीर्तिकुजा गृहे ॥४७॥ ते च जेन्दुस्वभेवाऽऽप्ये सर्वे शुक्र बिना व्यये ॥ सप्रशुक्रबुधा शत्रौ ते च जीवमुधाकरौ ॥४८॥

| अथ उदाहरणार्थं सूर्यरेखाचक्रम् | | | | | | | | | | |
|--------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| गु० | भा० | सू० | च० | म० | बु० | शु० | शु० | श० | ल० | स० |
| १ | ल० | । | | । | | | | । | | ३ |
| २ | वि० | । | | । | | | | । | | ३ |
| ३ | वृ० | | । | | । | | | | । | ३ |
| ४ | च० | । | | । | | | | । | । | ४ |
| ५ | प० | | | | । | । | | | | २ |
| ६ | प० | | । | | । | । | । | | । | ५ |
| ७ | स० | । | | । | | | । | । | | ४ |
| ८ | अ० | । | | । | | | | । | | ३ |
| ९ | न० | । | | । | । | । | | । | | ५ |
| १० | द० | । | । | । | । | | | । | । | ६ |
| ११ | ए० | । | । | । | । | । | | । | । | ७ |
| १२ | हा० | | | । | । | | । | | । | ४ |

चन्द्रमा के भावो मे रेखा दाताओ के नाम—चन्द्रमा से प्रथम मे च० बु० गु०। दूसरे मे म० गु०। तीसरे मे सू० च० म० बु० शु० श० लग्न। चौथे मे बु० वृ० शु०। पाचवे मे म० बु० शु० श०। छठे मे सू० म० श० लग्न। सातवे मे सू० च० बु० गु० शु०। आठवे मे सू० बु० गु०। नवे मे च० शु०। दशवे मे सू० च० म० बु० गु० शु० लग्न। ग्यारहवे मे सू० च० म० बु० गु० शु० श० लग्न॥४९-५१॥

लग्नमदकुजा भीमो होराज्ञेन्दुदिनाधिपा ॥ मन्दाराक्षरविज्ञेन्दुजीवार्कतनुभार्गवा ॥५२॥
मदारौ तौ सितश्रार्किकुजाकार्याकिलप्रकाः ॥ सर्वे गुरुसितौ स्थान भीमस्यैव विदुर्बुधा ॥५३॥

| अथोदाहरणार्थे मगलरेखाधक्रमम् | | | | | | | | | | |
|------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| गु० | भा० | सू० | च० | म० | बु० | गु० | गु० | श० | ल० | स० |
| १ | ल० | | | । | | | । | | । | ३ |
| २ | दि० | | | । | | | | | | १ |
| ३ | वृ० | । | । | | । | | | | । | ४ |
| ४ | च० | | | । | | | | । | | २ |
| ५ | ष० | । | | | । | | | | | २ |
| ६ | म० | । | । | | । | । | । | | | ५ |
| ७ | स० | | | । | | | | । | | २ |
| ८ | अ० | | | । | | | । | । | | ३ |
| ९ | न० | | | | | | | । | | १ |
| १० | व० | । | | । | | । | | । | । | ५ |
| ११ | ए० | । | । | । | । | । | । | । | । | ८ |
| १२ | इ० | | | | | । | । | | | २ |

मगल के १२ भावो मे रेखादाताओ के नाम—प्रथम मे लग्न म० म० ये ३ है। २ रे मे म० १। ३ रे मे लग्न सू० च० बु० ये ४, ४ वे मे म० श० २, ५ वे मे सू० बु० २, ६ टे मे सू० च० गु०

शु० लग्न ५, ७ वे मे, म० श० २, ८ वे मे म० शु० श० ३, ९ वे मे श० १, १० वे मे सू० म० शु०
श० लग्न ५, ११ वे मे सब ८, १२ वे मे शु० शु० २॥५२-५३॥

सप्तमंदारशुक्रजा लग्नारेन्दुसितार्कजाः ॥ शुक्रजो लग्नचन्द्रार्कसिताराजार्कभार्गवाः ॥५४॥
जीवजार्कन्वुलप्राणि भूमिपुत्रशतश्रवः ॥ तौ च लग्नरेन्दुशुक्रार्पा मंदारार्कजभार्गवाः ॥५५॥
लग्नमंदारविज्जन्दाः सर्वे जीवजभास्कराः ॥ गुरोर्लग्न सुखे जीवतप्रारार्कबुधा धने ॥५६॥
चन्द्रशुक्रौ च बुध्रिक्ये मंदारार्काः शनिर्व्यये ॥ सुते शुक्रन्वुललग्नमन्दार्कान्दं विना त्वरौ ॥५७॥
लग्नारायाऽर्कदेवोऽस्ते मृतीजीवार्कमूसुताः ॥ धर्मे शुक्रार्कलग्नरेन्दुबुधा मद विनाऽप्यमे ॥५८॥

अयोदाहरणार्थं बुधरेतावकम्

| गु० | मा० | सू० | च० | म० | बु० | गु० | गु० | श० | स० | स० |
|-----|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| १ | स० | . | | । | । | | । | । | । | ५ |
| २ | दि | | । | । | | | । | । | । | ५ |
| ३ | तृ० | | | | । | | । | | । | २ |
| ४ | च० | | । | । | | | । | । | । | ५ |
| ५ | प० | । | | | । | | । | | । | ३ |
| ६ | घ० | । | । | | । | | | । | | ५ |
| ७ | स० | | । | | | | । | | | २ |
| ८ | अ० | | । | । | | । | । | । | । | ५ |
| ९ | न० | । | | । | । | | । | । | । | ५ |
| १० | र० | | । | । | । | | । | । | । | ८ |
| ११ | ए० | । | । | । | । | । | । | । | । | ३ |
| १२ | श० | । | | | । | । | | | | |

| अथ उदाहरणार्थं गुरुरेखाचक्रम् | | | | | | | | | | |
|-------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| गु० | भा० | सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | ल० | स० |
| १ | ल० | । | | । | । | । | | | । | ५ |
| २ | दि० | । | । | । | । | । | । | | । | ७ |
| ३ | तृ० | । | | | | । | | । | | ३ |
| ४ | च० | । | | । | । | । | | | । | ५ |
| ५ | प० | | । | | । | | । | । | । | ५ |
| ६ | घ० | । | | | । | | | । | । | ४ |
| ७ | स० | । | । | । | | । | | | । | ५ |
| ८ | म० | । | | । | | । | | | | ३ |
| ९ | न० | । | । | | । | | । | | । | ५ |
| १० | द० | । | | । | । | । | । | | । | ६ |
| ११ | प० | । | । | । | । | । | । | | । | ७ |
| १२ | हा० | | | | | | | । | | १ |

बुध के १२ भावों के रेखादाताओं के नाम—बुध से पहिले घर में म०, बु०, शु०, श०, लग्न ये ५ रेखा देते हैं। दूसरे में लग्न च० म० शु० श० रेखा देते हैं। तीसरे में बु० शु० ये दो। चौथे में च० म० शु० श० ल० ये ५, ५ में सू० बु० शु० ये ३। छठे में सू० च० बु० शु० ये ४ हैं। सातवें में म० श० ये २ हैं। आठवें में च० म० गु० शु० श० ल० ये छ हैं। नौवें में सू० म० बु० शु० श० ये ५ हैं। दशवें में च० म० बु० श० ल० ये ५ हैं। एकादश में आठो ही रेखा देते हैं। १२ में सू० बु० गु० ये ३ हैं। ॥५४॥५५॥

गुरु के १२ भावों के रेखादाताओं के नाम—गुरु से १४ घर में सू० म० बु० गु० ल० ये ५ हैं। दूसरे में सू० च० म० बु० बृ० शु० ल० ये ७ हैं। तीसरे में सू० गु० श० ये ३ हैं। ५ वें में च० बु० शु० श० ल० ये ५ हैं। छठे में बु० शु० श० ल० ये ४ हैं। ७ वें में च० म० गु० ल० ये ४ हैं। ८ में सू० म० गु० ये ३ हैं। नौवें घर में सू० च० बु० शु० ये ४ हैं। ११ वें में शनि रहित सब रेखा देते हैं। १० में सू० म० बु० बृ० शु० ल० ये ६ हैं। ॥५६॥५७॥५८॥

माने गुरुधाराकशुक्रहोरास्तया विदुः ॥ सप्तशुक्रदेवस्ते ज्ञाकारास्ते नवर्जिताः ॥५९॥
 सुतमे सप्तशशिजशशांकार्थकिंमार्गवाः ॥ ज्ञातौ सून्यं तिताऽर्केन्दुगुल्लप्रशनेश्वराः ॥६०॥ सर्वे
 रविं विना शुक्रगुरुमन्दाश्च मानभे ॥ सर्वे कुजेन्दुरवयः क्रमाद्मृगमुतस्य च ॥६१॥

| अथ उदाहरणार्थं शुक्ररेखाचक्षम् | | | | | | | | | | |
|--------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| गु० | मा० | सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | त० | स० |
| १ | स० | | १ | | | | १ | | १ | ३ |
| २ | वि० | | १ | | | | १ | | १ | ३ |
| ३ | सू० | | १ | १ | १ | | १ | १ | १ | ६ |
| ४ | च० | | १ | १ | | | १ | १ | १ | ५ |
| ५ | म० | | १ | | १ | १ | १ | १ | १ | ६ |
| ६ | बु० | | | १ | १ | | | | | २ |
| ७ | स० | | | | | | | | | ० |
| ८ | मा० | १ | १ | | | १ | १ | १ | १ | ६ |
| ९ | न० | | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | ७ |
| १० | ह० | | | | | | १ | १ | १ | ३ |
| ११ | ए० | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | ८ |
| १२ | झ० | १ | १ | १ | | | | | | ३ |

शुक्रः के रेखा दाताओ के नाम—शुक्र से च० गु० त० ये ३ रेखादाता प्रथम तथा द्वितीय
 भाव के है। तीसरे मे च० म० बु० श० त० गु० ये ६ है। ४ मे सू० च० म० गु० त० ये ५ है।
 ५ वे मे म० च० बु० गु० श० ये ६ है। छठे घर मे म० बु० मे दो। मानवे मे नहीं है। ८वे
 मे सू० च० गु० श० त० ये ६ है। नौवे मे च० म० बु० श० गु० श० न० ये ७ है। १० वे
 घर मे गु० श० ये दो है। ११वेमे सब रेखा देने है। १२ वे मे सू० च० म० ये ३
 है॥५९॥६०॥६१॥

शने रवितनू सूर्यो लग्नेन्दुकुजसूर्यजाः ॥ लग्नार्को जीवमदाराः सर्वे सूर्यं विना क्षते ॥६२॥
 अर्कोऽर्कजौ बुधोऽर्कारतनुजाः सकलास्ततः ॥ कुजजगुहशुक्राश्च क्रमात्स्थानमिव विदुः ॥६३॥ तनौ
 सूर्ये च बलिः स्यादृश्चिक्ये द्वौ धने शराः ॥ बुद्धिमृत्त्विकरिः फेयु षट् शेषशतराशिषु ॥६४॥

| अधोराहरणार्थं शनिरेखाचक्रम् | | | | | | | | | | |
|-----------------------------|-------|-----|----|----|-----|-----|-----|-----|----|----|
| प्र० | भा० | मू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | रा० | स० | स० |
| १ | स० | १ | | | | | | | १ | २ |
| २ | द्वि० | १ | | | | | | | | १ |
| ३ | तृ० | | १ | १ | | | | १ | १ | ४ |
| ४ | च० | १ | | | | | | | १ | २ |
| ५ | प० | | | १ | १ | १ | १ | १ | | ३ |
| ६ | ष० | | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | ७ |
| ७ | स० | १ | | | | | | | | १ |
| ८ | अ० | १ | | | १ | | | | | २ |
| ९ | म० | | | | १ | | | | | १ |
| १० | ह० | १ | | १ | १ | | | | १ | ४ |
| ११ | ए० | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | १ | ८ |
| १२ | वा० | | | १ | १ | १ | १ | | | ४ |

शनि रेखाशतश्री के नाम—शनि मे प्रथम भाव मे मू० म० ० है। दूसरे मे मू० एष ही है। तीन मे च० म० ग० म० ४ है। ४ मे मू० न० ० है। ५ वे मे म० गु० श० ३ है। ६ मे च० म० बु० वृ० शु० म० म० ३ है। ८ मे मू० बु० ० है। ९ मे मू० १ है। ९ वे मे बु० १ है। १० वे मे मू० म० बु० न० ४ है। एकादश मे म० ८ है। १० वे मे म० बु० गु० शु० ४ है। ॥६२॥६३॥

लग्न के बिन्दु तथा रेखा विन्यास—प्रथम बिन्दु विराग्न-लग्न तथा ४ मे ३ है। तीसरे मे ७। दूसरे मे ५। पाँच, आठ, नौवे द्वाव्य मे ६ है। छठे, ग्याह्रवें, दसवे मे १-१ है। तथा मान्य मे ७ बिन्दु है। ॥६४॥

रूपं स्त्रिया गुरु त्यक्त्वा लग्नस्य करणं त्विदम् ॥ होरासूर्येन्दवो लग्ने लग्नारेन्द्विनसूर्यजा ॥६५॥
गुरुतो लग्नचद्वारा लग्नचमबुसौरय ॥ सते शुक्रस्तथा चैकं कामे सर्वे गुरु बिना ॥६६॥ मृतौ
भृगुबुधौ त्यक्त्वा धर्मे गुरुसितौ बिना ॥ कर्मण्याये तथा शुक्रो ध्ये सूर्येन्दुवर्जिता ॥६७॥

| अयोदाहरणार्थं लग्नविदुस्तोऽयम् | | | | | | | | | | |
|--------------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| सू० | भा० | मू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | ल० | स० |
| १ | ल० | ० | ० | | | | | | ० | ३ |
| २ | दि० | ० | ० | ० | | | | ० | ० | ५ |
| ३ | वृ० | | | | ० | ० | | | | २ |
| ४ | च० | ० | ० | | | | | | ० | ३ |
| ५ | प० | ० | ० | ० | ० | | | ० | ० | ६ |
| ६ | ध० | | | | | ० | | | | १ |
| ७ | स० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ७ |
| ८ | अ० | ० | ० | ० | | ० | | ० | ० | ६ |
| ९ | न० | ० | ० | ० | ० | | | ० | ० | ६ |
| १० | व० | | | | | | ० | | | १ |
| ११ | ए० | | | | | | ० | | | १ |
| १२ | इ० | | | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ६ |

लग्न मे विन्दुदाताओ के नाम—लग्न मे लग्न तथा मू० च० ये ३ है। दूसरे मे न० मू० च० म० न० ये ५ है। ३ मे बु० गु० ये २ है। ४ मे च० म० ल० ३ है। ५ मे ल० मू० च० म० बु० न० ये ६ है। ६ मे शु० यह १ है। ७ वे मे मू० च० म० बु० शु० न० ये ७ है। ८ मे मू० च० म० गु० न० ल० ये ६ है। ९ वे मे मू० च० म० बु० न० ल० ये ६ है। १० मे तथा ११ मे शु० यह १-१ ही है। १२ वे मे म० बु० गु० शु० न० ल० ये ६ है ॥६५॥६६॥६८॥

लग्नस्येव तु लग्नोक्तं करणं द्विजपुण्य ॥ अथ स्वान् प्रवक्ष्यामि लग्नस्य द्विजपुण्य ॥६८॥
आर्क्षितशुक्रपूर्वाराः सौम्यदेवेभ्यर्भागाः ॥ हित्वा सौम्यगुरुः शेषा भूमेन्यभृगुसूर्यजा ॥६९॥

तथा जीवभृगु शुद्धौ सर्वे शुक्रं विना क्षते ॥ जीव एकस्तथा दूने मृतौ सौम्यभृगु तथा ॥७०॥ धर्मे
गुरुसितावेव से सर्वे शुक्रमतरा ॥ सूर्यचन्द्रौ तथा रिष्के स्थान लग्नस्य कीर्तितम् ॥७१॥

| अथ उदाहरणार्थ लग्नेखाचक्रम् | | | | | | | | | | |
|-----------------------------|-----|-----|----|----|-----|-----|-----|----|----|----|
| गु० | भा० | मू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | ल० | स० |
| १ | ल० | | | । | । | । | । | । | | ५ |
| २ | दि० | | | | । | । | । | | | ३ |
| ३ | तृ० | । | । | । | | | । | । | । | ६ |
| ४ | च० | । | | | । | । | । | । | | ५ |
| ५ | प० | | | | | । | । | | | २ |
| ६ | द० | | । | | । | । | । | | । | ५ |
| ७ | स० | | | | | । | | | | १ |
| ८ | अ० | | | | । | | । | | | २ |
| ९ | न० | | | | | । | । | | | २ |
| १० | र० | । | । | । | । | । | | । | । | ७ |
| ११ | ए० | । | । | । | । | । | | । | । | ७ |
| १२ | हा० | । | । | | | | | | | २ |

लग्न के १२ भावों में रेखाप्रदों के नाम—लग्न में म० बु० गु० शु० श० ये ५ हैं। दूसरे में बु० गु० शु० ये ३ हैं। तीसरे में मू० च० म० गु० श० ल० ये ६ हैं। चौथे में मू० बु० गु० शु० श० ये ५ हैं। ५ वे में गु० शु० ये दो हैं। ६ में मू० च० म० बु० गु० श० ये ६ हैं। सातवें में गु० यहाँ १ है। ८ वे में बु० गु० ये दो हैं। नौवें में गु० शु० दो हैं। १०-११ भाव में मू० च० म० बु० गु० श० ल० ये ७-७ हैं। १२ वे में मू० च० ये दो हैं ॥६८॥६९॥७०॥७१॥

करण बिंदुवत्प्रोक्त स्थान रेखा तयोच्यते ॥ मुनिदिग्यमुषेदादिगित्वद्वष्टघनबेषव ॥७२॥
रुद्राकार्वाणो मेघाद्विषयेष्वष्टबाषव ॥ पक्षित्वरेषव सूर्याद्विगोणा प्रोच्यते बुधे ॥७३॥ अष्ट

रेखा लिखेद्वर्षास्तिर्यगेखास्त्रयोदश ॥ तदा चतुरशीति. स्युर्ग्रहयोगे पदानि तु ॥७४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागोऽष्टकवर्गप्रधान प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

उपदेश—

करण से बिन्दु जानना। स्थान नाम से रेखा समझना चाहिए। सूर्यादि ग्रहों के ध्रुवाक और १२ भावों के ध्रुवाक कहते हैं। मेष ७, वृ० १० मि० ८, क० ४, सि० १०, क० ५, तु० ७, वृ० ८, ध० ९, म० ५, कु० ११, मी० १२। ये मेषादि १२ राशियों के ध्रुवाक हुए। अब सूर्यादि ग्रहों के ध्रुवाक कहे जाते हैं—सू० ५ च० ५, म० ८, बु० ५, गु० १०, शु० ७, श० ५ ध्रुवाक हैं ॥७२॥७३॥ अष्टकवर्ग के चक्र की रीति कहते हैं। खड़ी ९ रेखा करना। तिरछी १४ रेखा करना। तो १२X ८= ९६ कोष्टक होंगे। उनमें ८ घरों में ग्रह तथा लग्न और १२ घरों में लग्न आदि १२ भाव लिखना चाहिए। बीच के कोष्टकों में ऊपर कहे अनुसार 'बिन्दु' 'रेखा' लिखनी चाहिए ॥७४॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे अष्टकवर्ग निरूपण
नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

अथ त्रिकोणशोधनमाह

राशिचक्र ययामार्ग निलिप्याष्टग्रहस्य च॥त्रिकोणशोधनं कुर्यादादौ सर्वेषु राशिषु॥१॥

त्रिकोण शोधन प्रकार

सूर्य से शनि तक सात ग्रह और लग्न (८) इनका शून्य रेखात्मक 'अष्टक वर्ग' स्थापित करके त्रिकोण शोधन करना चाहिए ॥१॥

| अथ रत्नरष्टकवर्गः ४८ | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|----|
| सू० | च० | म० | बु० | वृ० | शु० | श० | त० |
| १ | ३ | १ | ३ | ५ | ६ | १ | ३ |
| २ | ६ | २ | ५ | ९ | ७ | २ | ४ |
| ४ | १० | ४ | ६ | ९ | १२ | ४ | ६ |
| ७ | ११ | ७ | ९ | ११ | ० | ७ | १० |
| ८ | ० | ८ | १० | ० | ० | ८ | ११ |
| ९ | ० | ९ | ११ | ० | ० | ९ | १२ |
| १० | ० | १० | १२ | ० | ० | १० | ० |
| ११ | ० | ११ | ० | ० | ० | ११ | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

| अथ चद्राष्टकवर्गः ४९ | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|------|-----|----|----|
| सू० | च० | म० | बु० | प्र० | शु० | श० | त० |
| ३ | १ | २ | १ | १ | ३ | ३ | ३ |
| ६ | ३ | ३ | ३ | २ | ४ | ५ | ६ |
| ७ | ६ | ५ | ४ | ४ | ५ | ६ | १० |
| ८ | ७ | ६ | ५ | ७ | ७ | ११ | ११ |
| १० | ९ | १० | ७ | ८ | ९ | ० | ० |
| ११ | १० | ११ | ८ | १० | १० | ० | ० |
| ० | ११ | ० | १० | ११ | ११ | ० | ० |
| ० | ० | ० | ११ | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

उदाहरण रेखास्थापन की विधि यह है कि-जो ग्रह जिस भाव में हो उस ग्रह की रेखा उस भाव में गणना करके चक्र में लिखित स्थानों में रेखा लिखना बाकी स्थानों में शून्य लिखना। जैसा कि-(चक्र में देखें) सूर्याष्टक वर्ग चक्र में सूर्य ११ भावों में है और सूर्य के रेखा स्थान १।२।४।७।८।९।१०।११ है अतः एकादश भाव में इन स्थानों में रेखा और बाकी स्थानों में शून्य रेखा गया है। चन्द्रमा पंचमभाव में है अतः चन्द्रमा में २।६।१०।११ भावों में रेखा और अन्य भावों में शून्य है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह तथा लग्न के चक्रों में लिखे अवशेष स्थानों में रेखा लिखना बाकी में शून्य लिखना। इसका तात्पर्य यह है कि अमुक ग्रह अमुक ग्रह और भाव में अमुक (अर्थात् रेखांकित) स्थानों में शुभफलदाता है और शून्यांकित स्थानों में अनुशफलदायक है।

| अथ भौमस्याष्टकवर्गः ३९ | | | | | | | |
|------------------------|----|----|-----|-----|-----|----|----|
| र० | च० | म० | बु० | पु० | शु० | श० | त० |
| ३ | | | | | | | |
| ५ | ३ | १ | ३ | ६ | ६ | १ | १ |
| ६ | ६ | २ | ५ | १० | ८ | ४ | ३ |
| १० | ११ | ४ | ६ | ११ | ११ | ७ | ६ |
| ११ | ० | ७ | ११ | १२ | १२ | ८ | १० |
| ० | ० | ८ | ० | ० | ० | ९ | ११ |
| ० | ० | १० | ० | ० | ० | १० | ० |
| ० | ० | ११ | ० | ० | ० | ११ | ० |

| बुधस्याष्टकवर्गः ५४ | | | | | | | |
|---------------------|----|----|-----|-----|-----|----|----|
| १० | च० | म० | बु० | गु० | गु० | म० | च० |
| ५ | ० | १ | १ | ६ | १ | १ | १ |
| ६ | ४ | २ | ३ | ८ | २ | २ | २ |
| ९ | ६ | ४ | ५ | ११ | ४ | ४ | ४ |
| ११ | ८ | ७ | ९ | १२ | ५ | ८ | ६ |
| १२ | १० | ९ | १० | ० | ८ | ९ | ८ |
| ० | ११ | १० | ११ | ० | ९ | १० | १० |
| ० | ० | ११ | १२ | ० | ११ | ११ | ११ |

| गुरोरष्टकवर्गः ५६ | | | | | | | |
|-------------------|----|----|-----|-----|-----|----|----|
| १० | च० | म० | बु० | गु० | गु० | म० | च० |
| १ | २ | १ | १ | १ | २ | ३ | १ |
| २ | ५ | २ | २ | २ | ५ | ५ | २ |
| ३ | ६ | ४ | ४ | ३ | ६ | ६ | ४ |
| ४ | ९ | ७ | ५ | ४ | ९ | १२ | ५ |
| ७ | ११ | ८ | ६ | ७ | १० | ० | ६ |
| ८ | ० | १० | ९ | ८ | ११ | ० | ७ |
| ९ | ० | ११ | १० | १० | ० | ० | ८ |
| १० | ० | ० | ११ | ११ | ० | ० | १० |
| ११ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ११ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

शुक्रस्याष्टकवर्गः ५२

| र० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | ल० |
|----|----|----|-----|-----|-----|----|----|
| ८ | १ | ३ | ३ | ५ | १ | ३ | १ |
| ११ | २ | ४ | ५ | ८ | २ | ४ | २ |
| १२ | ३ | ६ | ६ | ९ | ३ | ५ | ३ |
| ० | ४ | ९ | ९ | १० | ४ | ८ | ४ |
| ० | ५ | ११ | ११ | ११ | ५ | ९ | ५ |
| ० | ८ | १२ | ० | ० | ८ | १० | ८ |
| ० | ९ | ० | ० | ० | ९ | १२ | ९ |
| ० | ११ | ० | ० | ० | १० | ० | ११ |
| ० | १२ | ० | ० | ० | ११ | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

शनिरेष्टकवर्गः ३९

| र० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | ल० |
|----|----|----|-----|-----|-----|----|----|
| १ | ३ | ३ | ६ | ५ | ६ | ३ | १ |
| २ | ६ | ५ | ८ | ६ | ११ | ५ | ३ |
| ४ | ११ | ६ | ९ | ११ | १२ | ६ | ४ |
| ७ | ० | १० | १० | १२ | ० | ११ | ६ |
| ८ | ० | ११ | ११ | ० | ० | ० | १० |
| १० | ० | १२ | १२ | ० | ० | ० | ११ |
| ११ | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

लग्नाष्टकवर्गः ५२

| र० | च० | म० | यु० | मु० | शु० | स० | ल० |
|----|----|----|-----|-----|-----|----|----|
| ३ | ३ | १ | १ | १ | १ | १ | ३ |
| ४ | ६ | ३ | २ | २ | २ | ३ | ६ |
| ५ | १० | ६ | ४ | ४ | ३ | ४ | १० |
| १० | ११ | १० | ६ | ५ | ४ | ६ | ११ |
| ११ | १२ | ११ | ८ | ६ | ५ | १० | ० |
| १२ | ० | ० | १० | ७ | ८ | ११ | ० |
| ० | ० | ० | ११ | ९ | ९ | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | १० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ११ | ० | ० | ० |

डादशभावाष्टकम्

| ल० | स० | घ० | म० | स० | म० | मु० | स० | शु० | स० | श० | स० | भा० |
|-----|----|----|----|----|----|-----|----|-----|----|------|----|-----|
| ६ | ७ | ७ | ८ | ८ | ८ | ९ | ९ | १० | ११ | ११ | ० | रा० |
| १६ | ०० | १५ | ०० | १४ | २९ | १४ | २९ | १४ | ०० | १५ | ०० | अ० |
| १७ | ५५ | ३४ | १२ | ५१ | २९ | ०८ | २९ | ५१ | १२ | ३४ | ५५ | क० |
| १९ | ५० | २१ | ५२ | २३ | ५४ | २५ | ५४ | २३ | ५२ | २१ | ५० | वि० |
| जा० | स० | आ० | स० | घ० | स० | क | स० | ला० | स० | व्य० | स० | भा० |
| ० | १ | १ | २ | २ | २ | ३ | ३ | ४ | ५ | ५ | ६ | रा० |
| १६ | ०० | १५ | ०० | १४ | २९ | १४ | २९ | १४ | ०० | १५ | ०० | अ० |
| १७ | ५५ | ३४ | १२ | ५१ | २९ | ८ | २९ | ५१ | १२ | ३४ | ५५ | क० |
| १९ | ५० | २१ | ५२ | २३ | ५४ | २५ | ५४ | २३ | ५२ | २१ | ५० | वि० |

तात्कालिका स्पष्टा षट्

| शु० | च० | म० | यु० | मु० | शु० | स० | रा० | के० |
|-----|-----|----|-----|-----|-----|----|-----|-----|
| ४ | १० | ४ | ४ | ५ | ६ | ७ | ६ | ० |
| २३ | २६ | २७ | २१ | १३ | ०१ | १५ | २० | २० |
| २८ | ३० | ४५ | ३४ | २७ | ५८ | ०५ | ०५ | ०५ |
| १८ | ३३ | ३८ | ४५ | ३६ | ३४ | १२ | १५ | १५ |
| ५७ | ७२७ | ३९ | १९ | १३ | ७१ | २ | ३ | ३ |
| २२ | ५० | ३६ | ४८ | १८ | २२ | ४२ | ११ | ११ |

जमलत्रम्

| | | | |
|------|-------|-----|----------|
| ८ स० | रा० | मु० | शु० |
| १ | ७ शु० | ६ | मु० ५ स० |
| १० | | ६ | |
| व० | के० | १ | ३ |
| ११ | १ | २ | |

उदाहरण

| सूर्यरेखावचम् | | | | | | | | | | | | |
|---------------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|
| भावा | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
| सू० | ० | १ | ० | ० | १ | १ | १ | १ | १ | ० | १ | १ |
| च० | ० | १ | १ | ० | ० | ० | १ | ० | ० | १ | ० | ० |
| म० | ० | १ | ० | ० | १ | १ | १ | १ | १ | ० | १ | १ |
| बु० | १ | ० | १ | १ | ० | ० | १ | १ | १ | १ | ० | ० |
| वृ० | ० | ० | ० | १ | १ | ० | ० | १ | ० | १ | ० | ० |
| शु० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | १ | ० | ० | ० | ० | १ |
| ग० | ० | १ | १ | ० | १ | ० | ० | १ | १ | १ | १ | १ |
| ल० | ० | ० | ० | १ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ० | १ |
| यो० | १ ७ | ४ ४ | ३ ५ | ३ ५ | ५ ३ | ४ ४ | ५ ३ | ५ ३ | ५ ३ | ५ ३ | ३ ५ | ५ ३ |

सूर्यत्रिकोणकाधिकार्यशोधनचक्रम्

| राशि | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ |
|-------|------------|-----|------------|----|---|----|----|----|-----|---|---|---|
| ग्रहा | सू० बु० | वृ० | रा० शु० | ग० | | | च० | | के० | | | |
| रेखा | ५ | ४ | ५ | ५ | ५ | ५ | ३ | ५ | १ | ४ | ३ | ३ |
| त्रि० | ४ | ० | २ | २ | ४ | १ | ० | २ | ० | ० | ० | ० |
| एका० | ४ | ० | २ | २ | २ | १ | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

पिण्ड

राशिपिण्ड ८३ ग्रहापिण्ड ९४ यो० १७७

चन्द्ररेखावचम्

| भावा | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
|------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|--------|
| सू० | | | १ | १ | १ | | १ | १ | | | | १ |
| च० | १ | १ | १ | | १ | | १ | | | १ | १ | |
| म० | | | १ | | | | १ | १ | | | १ | १ |
| बु० | १ | १ | | १ | १ | | १ | १ | | १ | | १ |
| वृ० | १ | | १ | | | | १ | | १ | १ | | १ |
| शु० | | | १ | १ | १ | | १ | | १ | १ | १ | |
| ग० | | | | १ | | १ | १ | | | | | १ |
| ल० | | | | १ | १ | | | | १ | | | १ |
| यो० | ३ ५ | २ ६ | ५ ३ | ५ ३ | ५ ३ | १ ७ | ७ १ | ३ ५ | ३ ५ | ४ ४ | ३ ५ | ६ ३ |

| बुधरेखाष्टकचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
|-------------------|---|---|---|---|---|---|---|---|---|----|----|----|
| भा० | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
| सू० | | | १ | १ | ० | | १ | ० | १ | १ | ० | |
| च० | | | १ | १ | | १ | | १ | | १ | | १ |
| म० | | १ | ० | | १ | १ | १ | १ | १ | | १ | १ |
| बु० | १ | | १ | १ | ० | | | १ | १ | १ | १ | |
| वृ० | | | | | १ | | १ | | १ | १ | १ | |
| शु० | | १ | | १ | १ | | १ | १ | १ | १ | १ | |
| श० | | १ | १ | | १ | | | १ | १ | १ | १ | १ |
| ल० | | १ | | १ | १ | | १ | १ | | १ | | १ |
| रे०पो | १ | ४ | ४ | ५ | ५ | २ | ४ | ६ | ५ | ६ | ५ | ४ |
| वि०पो | ७ | ४ | ४ | ३ | ३ | ६ | ४ | २ | ३ | २ | ३ | ४ |

| बुधत्रिकोणकाधिपत्यशोधनचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
|------------------------------|-----|-----|-----|-----------------------------------|---|----|----|----|---|---|---|---|
| राशिप | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ |
| पहा | सू० | बु० | शु० | श० | | | च० | | | | | |
| म० | बु० | | | | | | | | | | | |
| रेखा | ५ | २ | ४ | ६ | ५ | ६ | ५ | ४ | १ | ४ | ४ | ५ |
| त्रि० | ४ | ० | ० | २ | ४ | ४ | १ | ० | ० | २ | ० | १ |
| ऐका० | ४ | ० | ० | २ | ४ | ३ | १ | ० | ० | २ | ० | १ |
| पिण्ड | | | | राशि पिंड १४२ गृह पिंड ९५ योग २३७ | | | | | | | | |

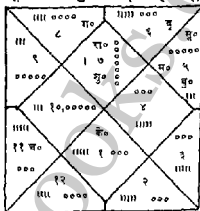
| गुरुरेखाष्टकचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
|--------------------|---|---|---|---|---|---|---|---|---|----|----|----|
| मावा | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
| सू० | १ | १ | ० | ० | १ | १ | १ | १ | १ | ० | १ | १ |
| च० | ० | १ | ० | ० | ० | १ | ० | १ | १ | ० | ० | १ |
| म० | ० | १ | ० | ० | १ | १ | ० | १ | १ | ० | १ | १ |
| बु० | ० | १ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | १ | ० | १ | १ |
| वृ० | १ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ० | १ | १ | ० | १ |
| शु० | ० | १ | ० | १ | ० | १ | ० | ० | १ | १ | १ | ० |
| श० | १ | ० | ० | १ | ० | १ | १ | ० | ० | ० | ० | ० |
| ल० | १ | १ | ० | १ | १ | ० | १ | १ | ० | १ | १ | १ |
| रे०पो | ४ | ७ | २ | ४ | ३ | ६ | ५ | ५ | ६ | ३ | ५ | ६ |
| वि०पो | ४ | १ | ६ | ४ | ५ | २ | ३ | ३ | २ | ५ | ३ | २ |

| शनिरेखाष्टकचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
|-------------------------------|------------------------------------|---|----|----|----|---|---|---|--------------|-----|-----|----|
| भावा | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
| सू० | ० | १ | ० | ० | १ | १ | ० | १ | १ | ० | १ | १ |
| च० | ० | ० | १ | ० | ० | ० | १ | ० | ० | १ | ० | ० |
| म० | १ | ० | १ | १ | ० | ० | ० | १ | १ | १ | ० | ० |
| वृ० | १ | ० | १ | १ | ० | ० | ० | १ | १ | १ | ० | ० |
| बृ० | ० | ० | ० | १ | १ | ० | ० | ० | ० | १ | १ | ० |
| शु० | ० | ० | ० | ० | ० | १ | ० | ० | ० | ० | १ | १ |
| श० | ० | ० | ० | १ | ० | १ | १ | ० | ० | ० | ० | १ |
| ल० | ० | ० | ० | १ | १ | ० | १ | ० | १ | १ | ० | १ |
| रे०यो०२ | १ | ३ | ५ | ३ | ३ | ३ | ३ | ३ | ४ | ५ | ३ | ४ |
| वि०यो०६ | ७ | ५ | ३ | ५ | ५ | ५ | ५ | ५ | ४ | ३ | ५ | ४ |
| शनित्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
| राशय | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ |
| ग्रहा | श० | | | | | | | | सू०म० बु० | वृ० | शु० | |
| रेखा | ३ | ४ | ५ | ३ | ४ | ३ | १ | ३ | ५ | ३ | ३ | ३ |
| त्रि० | ० | ३ | ४ | ० | १ | ० | ० | ० | २ | १ | २ | ० |
| ऐका | ० | १ | ४ | ० | ० | ० | ० | ० | २ | १ | २ | ० |
| मिष्टः | राशि विष्ट ४७ ग्रह विष्ट ३८ योग ८५ | | | | | | | | | | | |
| सप्तरेखाष्टकचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
| भा० | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ |
| सू० | १ | १ | ० | १ | ० | ० | ० | १ | १ | १ | ० | ० |
| च० | ० | १ | १ | १ | ० | ० | १ | ० | ० | १ | ० | ० |
| म० | १ | ० | ० | १ | ० | ० | ० | १ | १ | ० | १ | ० |
| वृ० | १ | ० | १ | ० | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १ | ० |
| बृ० | १ | ० | १ | १ | १ | १ | ० | १ | १ | १ | ० | १ |
| शु० | १ | १ | १ | १ | १ | ० | ० | १ | १ | ० | ० | ० |
| श० | ० | १ | ० | १ | १ | ० | १ | ० | ० | ० | १ | १ |
| ल० | ० | ० | ० | १ | १ | ० | ० | ० | १ | ० | ० | १ |
| रे०यो० | ५ | ४ | ४ | ६ | ५ | १ | ३ | ५ | ६ | ३ | २ | ३ |
| वि०यो० | ३ | ४ | ४ | २ | ३ | ७ | ५ | ३ | २ | ५ | ५ | ५ |

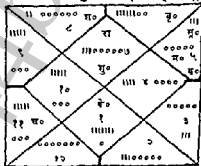
| तत्त्वत्रिकोणकाध्याप्यशोधनचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
|----------------------------------|-----|----|---|----|----|----|---|---|---|---|-------|-----|
| राशयः | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ |
| ग्रहाः | शु० | श० | | | ब० | | | | | | म० म० | बु० |
| रेखा | ३ | ५ | ६ | ३ | ३ | ३ | ५ | ४ | ४ | ६ | ५ | १ |
| त्रि० | ० | २ | १ | २ | ० | ० | ० | ३ | १ | ३ | ० | ० |
| दि० | ० | २ | १ | २ | १ | ० | ० | ३ | १ | ३ | ० | ० |

विशदः राशि पिड ४७ ग्रह पिड ३८ योग ८५

सूर्याष्टकवर्गकुण्डली (उदाहरणम्)



चन्द्राष्टकवर्गकुण्डली (उदाहरणम्)



अथ लग्नत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनम्

| ल० | | | | | | | | च० | श० | बु० | सू० | गु० | गु० | म० | ग्रहा |
|-----|-----|-----|----|-----|----|-----|-----|----|----|-----|-----|---------|-----|----|-------|
| मे० | वृ० | मि० | क० | सि० | क० | तु० | वृ० | ध० | म० | कु० | मी० | राशयः | | | |
| ४ | ५ | ५ | ३ | ३ | २ | ५ | ६ | ३ | ५ | ४ | ४ | रेखा | | | |
| १ | ३ | १ | २ | २ | २ | १ | ३ | ० | ३ | ० | १ | त्रिको० | | | |
| १ | २ | ० | ० | ० | ० | १ | २ | ० | ३ | ० | १ | ६० | | | |

ग्रहपिंड ४५ राशि पिंड ७७ उ०यति पिंड २२

त्रिकोण तु कथं प्रोक्तं मेघसिंहादयः क्रमात् ॥ वृषकन्यामृगश्र्वेषु तुलाकुम्भपुणेषु च ॥२॥
 कर्कवृश्चिकमीनास्ते त्रिकोणाः स्युः परस्परम् ॥ त्रिकोणेषु च यन्मूलं तत्तुल्यं त्रिषु शोधयेत् ॥३॥
 एकस्मिन् भवने शून्यं तत्त्रिकोणं न शोधयेत् ॥ समत्वे सर्वगोत्रेषु सर्वं सशोध्यं
 बुद्धिमान् ॥४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उ० ख० त्रिकोणशोधन
 नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

त्रिकोणं कैम जानना मो कहते है। मेघ सिंह धनु इमी प्रकार वृष कन्या, मकर और
 मिथुन तुला कुम्भ, कर्क वृश्चिक मीन ये चारो विभाग परस्पर त्रिकोण है। (१) इनमे जो
 न्यून सख्यावाली राशि है उसकी स्पष्टसख्या अधिक सख्यावाली राशियों की स्पष्ट में
 घटाना (२) यदि एक राशि में शून्य है तो नहीं घटाना (३) और सब राशि में समान
 सख्या हो तो सबसंख्याओं में शून्य अंक प्राप्त होगा। इन तीन प्रकारों को ध्यान में रखकर
 त्रिकोण शोधन करें ॥२-४॥

त्रिकोण शोधन का उदाहरण—त्रिकोण शोधन में जो कम सख्या वाली राशि है, उसका
 फलान् तीनो जगह घटाना (१) यथा—सूर्य के अष्टक वर्ग में—१-मेघ के नीचे २-सिंह के नीचे
 ३ धन के नीचे ४-यहा २ की संख्या को तीनो जगह घटाया तो मेघ के नीचे-० । सिंह के
 नीचे-१। धन के नीचे २ । २-नीमग प्रवाह-विमी एक राशि के नीचे शून्य हो तो यथास्थित
 रहता है। जैसे-कल्पित उदाहरण वृष के नीचे का रेखाफल-३ । कन्या के नीचे-५। मकर के
 नीचे-० । यहा मकर राशि के नीचे रेखाफल-० है, अतः यथास्थित अंक रहे ॥ ३-नीमग
 प्रकार-यदि तीनो राशियों में रेखाफल समान हो तो सबसे नीचे शून्य होगा। जैसे गुरु के
 अष्टक वर्ग में वृष के नीचे रेखाफल-५-कन्या के नीचे-५ मकर के नीचे भी-५ तो ५ में शोधन
 होने पर तीनो जगह शून्य प्राप्त हुआ वृष-० । कन्या-० । मकर-० ।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उ० ख० भा० प्र० त्रिकोणशोधननाम
 द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

अथैकाधिपत्यशोधनमाह

एव त्रिकोण सशोध्य पञ्चादेकाधिपत्यता ॥ क्षेत्रद्वये फलानि स्युस्तदा सशोधयेद्बुध ॥१॥
 क्षीणेन सह चान्यस्मिन्शोधयेद्ग्रहवर्जिते ॥ ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ॥२॥ अनेन
 सह चान्यस्मिन्शोधयेद्ग्रहवर्जिते ॥ फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन्सर्वमुत्सृजेत् ॥३॥
 उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न सशोध्य कदाचन ॥ उभयत्रग्रहाभावे समत्वे सफल त्यजेत् ॥४॥
 सग्रहाग्रहयोस्तुल्ये सर्व सशोध्यमग्रहे ॥ कुलीरसिंहयो राश्योऽपृथक् क्षेत्र पृथक् फलम् ॥५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे एकाधिपत्यशोधन

नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

पूर्वोक्त प्रकार से त्रिकोण शोधन करने के बाद ऐकाधिपत्य शोधन करना चाहिए। (यहाँ ध्यान रखना चाहिए कि 'फल त्रिकोण-शोधित अंक का नाम है।)

ऐकाधिपत्यशोधन के नियम—

- (१) क्षीणेन सह चान्यस्मिन् शोधयेद् ग्रहवर्जिते ।
 १-दोनों राशि ग्रहरहित हो तो अधिक में न्यून का शोधन करना।
- (२) उभयोर्ग्रहसंयोगे न सशोध्य कदाचन।
 २-दोनों राशि स्वग्रह हो तो शोधन नहीं करना ।
- (३) ग्रहयुक्ते फलेहीने ग्रहाभावे फलाधिके। ऊनेन सममन्यास्मिन् शोधयेत् ग्रहवर्जिते।
 ३-ग्रहयुक्तराशि कमफल हो, अग्रह अधिक हो तो अधिक में अल्प घटाना, सग्रह का फल यथावत् रखना।
- (४) फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन् सर्वमुत्सृजेत्।
 ४-सग्रह राशि फलाधिक हो तो अग्रह राशि का फल शून्य होता है।
- (५) उभयत्र ग्रहाभावे समत्वे सकल त्यजेत्।
 ५-दोनों अग्रह हो, फल तुल्य हो तो दोनों में शून्य होगा।
- (६) सग्रहाग्रहयोस्तुल्ये सर्व सशोध्यमग्रहे।
 ६-यदि एक सग्रह दूसरी अग्रह हो, फल समान हो तो अग्रह के फल का शून्य कर देना।

(७) कुलीरसिंहयो राश्योऽपृथक् क्षेत्र पृथक् फलम्।

७-कर्क और सिंह अपने स्वामी की १-१ राशि होने से शोधन नहीं होता॥१-५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे षाडशब्रह्मविद्याया एकाधिपत्यशोधन नाम तृतीयोऽध्यायः॥३॥

अथ पिंडोत्पत्तिमाह

शोध्यावशेष सत्त्वाप्य राशिमानेन बद्धयेत् ॥ ग्रहयुक्तेऽपि तद्वत्प्रमाणेन बद्धयेत् ॥१॥

अथ गुणकध्रुवाकानामह

गोसिंही दशगुणितौ वसुभिर्मिथुनातिनी ॥ वणिग्मेघौ तु मुनिभिः कन्यकामकरौ शरः ॥ शेषा
 स्वमानगुणिता राशिमाना इमे जमात् ॥१॥ जीवारशुक्रमौम्याना दशवमुमुनीन्द्रिय
 क्रमाद्गुणका ॥ बुधस्य सत्या शेषाणां ग्रहगुणैर्गुणयेत् पृथक् पृथक्कार्या ॥२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेभारगो पिंडोत्पत्तिश्च

नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

अष्टकवर्ग फल

सूर्य में विचारणीय फल, अपना प्रभाव, शक्ति तथा अपने पिता का स्वास्थ्य, जीवन, मरण आदि। चन्द्रमा से मानसिक स्थिति बुद्धि (बोध=ज्ञान) तथा माता के विषय में स्वास्थ्य, जीवन आदि विचारना चाहिए। भग्न में बल साहस, भ्राता सम्बन्धी विचार, भूमि तथा गुणों का विचार। बुध से व्यापार वृत्ति शुभाशुभ कर्म का विचार करना। वृहस्पतिसे शरीरकी पुष्टता तथा पुत्रसन्तान सम्बन्धी विचार धन तथा बुद्धि का विचार करना। शुक से विवाह, भोग तथा वाहन का विचार एवं भार्या का स्वप्न आदि का विचार करना। शनि में आयु का विचार स्वास्थ्य दुःख, शोक भय हानि आदि का विचार करना। ग्रहों में स्थिरकारकता-सूर्य-पिता। चन्द्रमा मातृकारक। भग्न भ्राता। बुध मित्र। वृहस्पति मामा। शुक स्त्री एवं ज्ञान और गुण्य। शनि मृत्युकारक है। आगे जो इन ग्रहों के नक्षत्र बताये जायेंगे उनमें उपर्युक्त फल का विचार करना चाहिए। ये बताये गये कारक यह तथा भावोंके गुणक से शोधित पिण्ड सख्या को गुणा करके २७ का भाग देने पर जो शेष रहे उस सख्या के नक्षत्र पर जब शनि हो तब भावानुसार जननी, बधु महोदर भ्राता, पुत्र स्त्री आदि का नाम एवं मध्य जातक की मृत्यु का विचार करना। ७॥ (शार्दूलविक्रीडित)

आदिप्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु ॥ अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ॥८॥ तद्वाशिफलसख्याभिर्वर्द्धयेद्योगापिडकम् ॥ सप्तविशोद्धृतं शेषं नक्षत्रं याति भानुजम् ॥९॥ तस्मिन्काले तस्य तस्य भावस्यातिं विनिर्दिशेत् ॥ तस्मिन्काले पितृक्लेशो भवतीति न तस्य ॥१०॥ तत्त्रिकोणगते वापि पितापितृसमोऽपि वा ॥ मरणं तस्य जानीयाद्दशादिरेषु कल्पयेत् ॥११॥ अर्कात्तु तुर्यगे राहौ मदे वा भूमिनदने ॥ गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः ॥१२॥ लग्नाच्चद्रादुपस्थाने याते सूर्यगुते यदि ॥ पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसमुते ॥१३॥ दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तम् ॥ लग्नात्सुखेशराशीशदराया च पितृक्षयः ॥१४॥ सुखनायदराया तु बहुभ्रान्तेऽत्र तस्य ॥ पितृजन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नेपि वा ॥१५॥ तेनैव पितृकार्याणि कारयेन्नात्र तस्य ॥ सुखेऽपि सामलग्नस्ये चद्रतद्रादिसोपतः ॥१६॥ पितृगृहं समायुक्ते जातं पितृवशानुय ॥ तेनैव पितृकार्याणां कर्मसोप समापयेत् ॥१७॥

(अब फलाफल विचार की गति कहते हैं गणित मिष्ट ग्रहों द्वारा सूर्याष्टक वर्ग के पिण्डाव सख्या पर विचार करने के लिए) सूर्य में नवमभावराशि पिता का स्थान है, उन नवमभाव की राशि के फलाफल में सूर्याष्टक वर्ग के पिण्डों की गुणा करने २७ का भाग देने पर जो शेष रहे सो सूर्य का नक्षत्र जानता। उस नक्षत्र पर सूर्य का (गोचर) मचार होने पर सूर्य जब तक उस नक्षत्र पर रहे तब तक कथित भाव की हानि तथा पिता को क्लेश, या बर्ष होता है इसमें बौद्ध मण्य नहीं है। और उस नक्षत्र में ५१९ नक्षत्र पर भी सूर्य मचार होने पर पिता या चाचा, ताऊ (पिता के ज्येष्ठ भ्राता) को मण्य या बर्ष निश्चय होता है। यह समस्त विचार सूर्य की दशा अथवा उस भाव की चण्यदिशा के वर्ग में अवश्य करना चाहिए। (जब कुछ विशेष योग कहते हैं) सूर्य में चतुर्थ भाव में गृह हो या मग्न अथवा शनि हो और गुरु तथा शुक की दृष्टि नहीं हो तो (दशानुकूल समय में) पिता की मृत्यु होती है॥

लग्न से या चन्द्रमा से नवम स्थान पर शनि हो तो दशानुकूल समय पर पिता की मृत्यु होती है परन्तु पापग्रह की दृष्टि अवश्य होनी चाहिए॥ इसी प्रकार लग्न से चतुर्थ भाव राशि के स्वामी की दशा में भी पितृक्षय जानना। चतुर्थेश की दशा में बहुत द्रव्य आदि की प्राप्ति में सशय जानना। पिता के जन्म लग्न से ८वीं राशि में जातक का जन्म हो अथवा अष्टमभाव का स्वामी लग्न में हो तो उसीसे पिता सम्बन्धी कार्य हो (पिता की मृत्यु हो)। चतुर्थेश लाभ राशि में हो विशेषकर के चन्द्रमा से चतुर्थेश लाभ भाव में या दशम भाव में हो तो जातक पिता का आज्ञाकारी होता है। और उसी से पिता सम्बन्धी सब कार्य होते हैं ॥८-१७॥

पितृजन्मतृतीयर्धे जातः पितृधनाश्रित ॥ पितृकर्मगृहे जातः पितृतुल्यगुणान्वित ॥१८॥
तदीशे सप्रसस्येपि पितृश्रेष्ठो भवेत्सुत ॥ सूर्याष्टवर्गे यच्छून्य मासः सवत्सरः प्रति ॥१९॥
विवाहव्यवहारादि मासे ऽस्मिन्वर्जयेत्सदा ॥ कलहो मासदुःखानि शून्यमासे भवति च ॥२०॥
एषमादिफलं ज्ञात्वा मासः प्रति समाचरेत् ॥ सशोध्य पिंडं सूर्यस्य रध्रमानेन वर्द्धयेत् ॥२१॥
द्वादशादिहुताच्छेषं मेपादि गणयेत्पुनः ॥ तस्मिन्मासे मृति विद्यात्तत्रिकोणगतेपि वा ॥२२॥
सूर्यादि कल्पयेत्स्वन्त्ये परतो मासकरे स्मृति ॥ विशेषं भावसूत्रेऽपि पितुर्वापादिकं दिशेत् ॥२३॥

पिता के जन्म लग्न से तीसरी राशि में जन्म हो तो जातक पिता के धन पर आश्रित रहता है तथा १०वीं राशि पर जन्म हो तो पिता के बराबर विद्या और गुणयुक्त होता है। और वही दशमेश यदि लग्न में हो तो पिता से भी बढ़कर गुणवान् होता है। सूर्याष्टक वर्ग में जो शून्य सख्या है उस सख्या के महीने और वर्ष में विवाहादि, शुभ कार्य नहीं करने चाहिए। क्योंकि उस महीने में कलह दुःख होते हैं। इस प्रकार अष्टक वर्ग के विचार से महीना जानना। सूर्याष्टक वर्ग के पिण्ड की अष्टमभाव के नीचे के अंक में गुणाकर १२ का भाग देने में जो सख्या बाकी रहे, मेप आदि क्रम से गिनकर जो महीना प्राप्त हो उस महीने में जब सूर्य हो तो पूर्वोक्त कहे हुए सब फल प्राप्त होने की संभावना है। और इसका विशेष विचार आगे कहा जायेगा। १८-२३॥

उदाहरण-सूर्य में ९वीं राशि पिता का घर है यह कह चुके हैं। यहाँ सूर्य बुम्भ राशि में है। उसकी ९वीं राशि तुला है। उसके नीचे अष्टक वर्ग का फल ६ है। और पिण्ड योग ९१ है। ६ से गुणा किया तो ५४६ हुआ। इसमें २७ का भाग किया तो लब्धि २० हुई जिसे छोड़ दिया। बाकी अंक ६ प्राप्त हुआ। अश्विनी में गिना तो आर्द्रा नक्षत्र हुआ। अतः आर्द्रा नक्षत्र में शनि के आने पर पिता को कष्ट या मृत्यु हो। इसी तरह आर्द्रा के त्रिकोण नक्षत्र स्वाती और शतभिषा नक्षत्र होने पर भी पिता को कष्ट या मृत्यु हो। अथवा सूर्य का पिण्ड ९१ को ३ से गुणा किया तो २७३ हुआ। इसमें १० का भाग किया तो लब्धि २२ व्यर्थ और शेष ९ बचे, तो धन राशि प्राप्त हुई। अतः ज्ञात हुआ कि धन राशि में शनि होने पर और धन के त्रिकोण मेघ और मित्र राशि में शनि होने पर पिता को कष्ट या मृत्यु हो। पिता के अभाव में पिता के समान चाचा आदि को कष्ट या मृत्यु हो।

अथ चन्द्रफलमाह

चन्द्राच्चतुर्यगे मातुः प्रासादशामचित्तनम् ॥ चन्द्राष्टवर्गं शून्यं च शून्यराशिगते विधी ॥२४॥
तन्मक्षत्रं परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत् ॥ चन्द्राष्टमे शनिक्षेत्रेऽत्रितयेषु विशेषतः ॥२५॥
अध्यामव्याधिदुःखानि लभते नात्र सशयः ॥ चन्द्रात्सुखफलात्पिण्डं वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ॥२६॥
शेषे मृगे शनौ धाते मातृहानि विनिर्दिशेत् ॥ तत्त्रिकोणेषु वा केचिद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत् ॥२७॥
चन्द्रात्सुखफलात्सुतस्याने भौमे वा भास्करात्मजे ॥ दृश्यते वा तयोः स्थानं पूर्वोक्ते
कालसंगते ॥२८॥ तदभावे स्वयं मृत्युर्देशान्तरगतेऽपि वा ॥ चन्द्रात्सुखेष्टमे राशेऽत्रिकोणे
दिवसाधिपे ॥२९॥ मात्रा वियोगाव्हास्तीति निर्दिशेत्प्रतः-पितुः ॥ पितुर्वा मातृविन्ताया
भास्करादीन् प्रकल्पयेत् ॥३०॥

चन्द्रमा का फल

चन्द्रमा से चौथे भाव में माता, मकान, ग्राम भूमि आदि का विचार करना चाहिए।
चन्द्राष्टक वर्ग में यदि शून्य सत्त्वा हो और चन्द्रमा भी शून्य राशि पर हो तो चन्द्रमा के नक्षत्र
को छोड़कर बाकी नक्षत्रों में शुभ काम करे। चन्द्रमा से ८व नक्षत्र से तीन नक्षत्रों में शनि के
नक्षत्र है। उनमें रोग, व्याधि दुःख आदि होता है। चन्द्रमा से ४थे भाव के पिण्ड को चौथे भाव
के फलसे गुणा करने पर शेष नक्षत्र प्राप्त होगा। शेष नक्षत्र यदि मृगसिर हो और उसमें शनि
आये तो माता की मृत्यु होती है। तथा उसके त्रिकोण नक्षत्रों में भी शनिचारसे माता की मृत्यु
होती है। और चतुर्यभाव राशि की दशा में भी ऐसा ही समझना। चन्द्रमा या तन्म से ४थे
स्थान में मंगल या शनि हो अथवा पूर्वोक्त रीति से मंगल शनि चन्द्र नक्षत्र पर आते हो तो
जातक को कष्ट या मृत्यु प्राप्त होती है। चन्द्रमा से ४थे ८वे भाव अथवा ९वे ५व भाव पर
सूर्य हो तो माता से वियोग होता है। ऐसे ही चन्द्रमा से माता और चन्द्रमा से सूर्य पूर्वोक्त इसी
रीति से पिता के लिये फलकारक है ॥२४-३०॥

उदाहरण (कल्पित उदाहरण में) चन्द्रमा धन राशि में है। अष्टम सिंह राशि। उसका स्वामी
सूर्य धनिष्ठा नक्षत्र में हो, रेवती तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में हो तो रोग, व्याधि, दुःख देता है।
इसलिये इन नक्षत्रों में विवाह आदि शुभ कार्य न करे। चन्द्रमा से सुखस्थ स्थान १२ इसका
अष्टक वर्ग से प्राप्त हुआ फल ३। शेष पिण्ड ९१ को ३ से गुणा किया तो २७३ हुआ। २७ का
भाग दिया तो शेष ३ बचा। अतः कृत्तिका नक्षत्र और उसका त्रिकोण उत्तरा फाल्गुनी और
उत्तराषाढा नक्षत्र पर शनि होने पर माता को कष्ट या मृत्यु हो। राशि के लिये योग पिण्ड
९१ को २से गुणा किया तो १८२ हुआ। १२ का भाग दिया तो २ शेष रहा। इस प्रकार वृष
राशि तथा उसकी त्रिकोण राशि कन्या और मकर राशि के शनि में माता को कष्ट या मृत्यु
हो। माता के अभाव में माता के समान गौरी आदि को फल हो॥

अथ भौमफलमाह

भौमाष्टवर्गं सचिन्त्य भ्रातृविक्रमधैर्यकम् ॥ भौमस्थितस्य सहजो राशिभ्रातृगृह स्मृतम् ॥३१॥
त्रिकोणे शोधनं कृत्वा यत्र भूयांसि तत्र च ॥३२॥ भौमो बलविहीनश्चेद्दीर्घाभ्रातृको भवेत् ॥

फलानि यत्र क्षीयन्ते तत्र भूमितराः स्मृताः ॥३३॥ तद्वाशिफलसख्यैश्च वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ॥
शेषमृक्षं शनौ पाते भ्रातृहानिं विनिर्दिशेत् ॥३४॥

भौम फल

भौमाष्टक वर्ग में भ्राता, पराक्रम, साहस का विचार करना चाहिए। मंगल से ३ग भाव भ्राता का घर है। त्रिकोण शोधन करके विचार करना चाहिए। मंगल यदि बलहीन हो तो भ्राता दीर्घायु होता है। मंगल बलवान् हो तो भ्रातृभाव की हानि करता है। पूर्ववत् पिण्ड में नक्षत्र निकाल कर देखना चाहिए। उस नक्षत्र पर शनि हो तो भ्राता की मृत्यु होती है ३१-३४॥

उदाहरण (कल्पित) मंगल मीन राशि का है, इससे ३रा राशि वृष हुआ। उसका फल २ है। मंगल का योग पिण्ड ५९ इसको २ से गुणा किया तो ११८ हुआ। २७ का भाग किया तो शेष १० रहे। अतः मघा नक्षत्र और इसका त्रिकोण नक्षत्र मूल और अश्विनी इनमें शनि होने पर भ्राता को कष्ट हो। राशि के लिये पिण्ड ५९ अष्टमभाव राशि अक ३ से गुणा किया तो १७७ हुआ। १२ का भाग किया, शेष ९ धन राशि हुआ। अतः धन, भेष, सिंह राशि के शनि होने पर भ्राता को कष्ट हो।

अथ बुधफलमाह

बुधातुर्यं कुटुंबं च धनपुत्रादिमातुला तत्पंचमे मन्त्रविद्यालिपिबुद्ध्यादि चितयेत् ॥३५॥
बुधाष्टवर्गे संशोध्य शेषमृक्षगते शनौ ॥ बहुमित्रविनाशादीर्त्तलभते नात्र संशयः ॥३६॥

बुध फल

बुध से दूसरा और चौथा स्थान धन, पुत्र और मामा का होता है। पाचवा स्थान मन्त्र सिद्धि विद्या, कला-कौशल का है। अतः उपर्युक्त स्थानों से उनके फलों का विचार करना चाहिए। बुध के अष्टक वर्ग का शोधन करके बताये हुए भाव की राशि से गुणाकर २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र में शनि हो तो बन्धु, मित्र आदि का विनाश करता है, इसमें कोई संशय नहीं।

उदाहरण (कल्पित) बुध मकर में है, इसका ४था भेष राशि है। इसके नीचे का फल ४ है। बुध का योग पिण्ड १३२ है। इसे ४ से गुणा किया तो ५२८ हुआ। २७ का भाग किया तो शेष १५ रहा। अतः स्वाती (त्रिकोण नक्षत्र शतभिषा और आर्द्रा) नक्षत्र में शनि होने पर बन्धु, मित्र आदि को कष्ट होता है। राशि निकालने के लिये योग पिण्ड १३२, अष्टम भाव का फलाङ्क ५ से गुणा किया तो ६६० हुआ। १२ का भाग दिया, शेष शून्य रहा। अतः मीन, र्च वृश्चिक राशि के शनि होने पर बन्धु, पिता, मित्र आदिको कष्ट हो। इसी प्रकार पंचम स्थान से विचार करना चाहिए।

अथ गुरुफलमाह

जीवात्पंचमतो भान पुत्रधर्मधनादिकम् ॥ गुरोरष्टकवर्गेषु सताममपि कल्पयेत् ॥३७॥

सिताराकप्रमाणिका स्त्रियो भवति सङ्गुणा ॥ चराससमितास्तथास्वनायतुल्यसङ्गुणा ॥६०॥ शुक्रान्मवे त्रिकोणस्थे नेष्ट जीवे सुखप्रदम् ॥ तेषा बलाबलत्वेन भाषाया लक्षण वदेत् ॥६१॥ एवमादि फल ज्ञात्वा निर्दिशेच्छुक्रवर्गत् ॥६२॥

आरुह लग्न के नवांश में पापग्रह युक्त चन्द्रमा ७वे या १२ वे स्थान में हो, शुरु भी पापग्रहयुक्त हो तो जातक स्त्री के कारण दुःखी रहता है। स्त्री का वर्ण, रूप और गुण शुक्र के नवमाश के समान होना चाहिए। अथवा सप्तमेश के गुणों से युक्त चन्द्रमा के समान होना चाहिए। चन्द्रमा पापग्रह युक्त पापग्रह के नवांश में १२वे या ७वे स्थान में हो और शुरु पापग्रह सहित हो तो स्त्री के कारण दुःखी रहता है। शुरु के नवमाश के अनुसार स्त्रियाँ होती हैं। चर नवमाश के अनुसार उनके गुण होते हैं। अथवा नवमाश स्वामी के अनुसार उनके गुण कहने चाहिए। शुरु से शनि त्रिकोण में हो तो नेष्ट है। बृहस्पति त्रिकोण में हो तो सुख देनेवाला होता है। इस प्रकार शनि और शुरु का बलाबल देखकर स्त्रीका लक्षण कहना चाहिए। ऐसे शुक्राष्टक वर्ग का फल कहा गया।

उदाहरण (कल्पित) शुक्राष्टक वर्ग का पिण्ड ४१ है। शुरु स सप्तमभाव की राशि कन्या है जिसका फल ४ है उसमें ४१ को गुणा किया तो १६४ हुआ। २७ का भाग देन पर शेष २ रहा। अतः भरणी, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढा नक्षत्र पर शनि होने से स्त्री को कष्ट सम्भव है। तथा योग पिण्ड ४१ को ४ से गुणा किया तो १६४ हुआ उसमें १२ का भाग दिया तो शेष ८ रहा। अतः वृश्चिक, मीन, कर्क राशि में शनि होने से स्त्री को कष्ट हो ॥५७-६२॥

अथ शनिफलमाह

शनिश्चरस्थितस्थानादष्टम मृतिरुच्यते ॥ शनैरष्टकवर्गं च स्वस्यापुष्यं विनिर्दिशेत् ॥६३॥ लग्नात्प्रमृति मदात् फलान्येकप्रकारयेत् ॥ लग्नादिफलतुल्याब्दे व्याधिर्वरं समादिशेत् ॥६४॥ मन्दादिलग्नप्रवर्तं फलान्येकं सपुत्तम् ॥ मन्दादिफलतुल्याब्दे व्याधि तस्य समादिशेत् ॥६५॥ तयोपयोगसमाब्दे तु मृत्युयोग प्रचक्षते ॥ शोध्यादिगुणन कृत्वा पिडं सस्याप्य यत्नतः ॥६६॥

शनि फल

शनि के अष्टम स्थान से मृत्यु का निर्देश किया जाता है इसलिये शनि के अष्टक वर्ग से जातक की आयु का विचार करें। लग्न से आठवे स्थान तक के फलांशों को जोड़ना, उस जोड़ में आई हुई सख्या के वर्ष में व्याधि या द्वेष (लडाई-अगड) होना है। शनि के स्थान से लग्न तक की राशियों के फल का योग (जोड़) करें। आई हुई सख्या के वर्ष में व्याधि (रोग) होती है। और आई हुई इन दोनों सख्याओं का जोड़ जो सख्या हो उस वर्ष में मृत्युयोग है। शनि के अष्टक वर्ग के पिण्ड की सख्या को गुणन में गुणा करेंगे ॥६६॥

अष्टमस्थफलैर्हृत्वा सप्तविंशतिभाजितम् ॥ शताधूर्ध्वं तु तद्विंशं शतमेवाप्रतप्तयेत् ॥६७॥ आयुः पिडं तु जालीयात्प्राग्बुद्धेर्लां तु कल्पयेत् ॥ त्रिकोणैकत्रिपत्यर्कशोचन विरचय्य च ॥६८॥ पिडं सस्याप्य गुणयेत्तत्रादष्टमं फलं ॥ सप्तविंशतिहृज्जेय मृत्युकालं वदेद्गुणः ॥६९॥

समूलाष्टकवर्गं च यत्र नास्ति फल गृहे ॥ तत्र नास्ति फल तस्य यदा याति शनैश्चर ॥७०॥ तद्गृहे
रविचन्द्रौ चेद्दशाष्टिरे मृति वदेत् ॥ दशाष्टिदसमायोगे मृत्युरेव न सशय ॥७१॥
मदाष्टवर्गराशीना हीनराशी क्षयो भवेत् ॥ तद्गृहे भास्करे मदे तस्मिन्काले मृति वदेत् ॥७२॥
मदाष्टवर्गाद्यपरिष्टयोगे दुष्टानि वर्षाणि विचारयति ॥ पूर्वोक्तसरोधनतो हि शुद्ध पिंड
सुधीमान्विलिखेत्ययस्यम् ॥७३॥ तत्रात्तु मदान्तमयोफलानामैक्य शनैर्लग्नमुपात्यमेव ।
तद्योगतुल्ये शरदीहकाले व्याधि मृति वा परदेशायानम् ॥७४॥ धनक्षय तत्प्रतितुल्यवर्ष
तद्योगयोगाब्दसमे तु कष्टम् ॥ सामर्थ्यहीनप्रहृषाककाले प्राप्ते तदा निश्चयतो मृति स्यात् ॥७५॥
बिलग्रशनिमध्यगानिच फलानि सताडयेन्नगैर्भविहृतानि शेषमितभे खले याति चेत् ॥ तदा
धनमुखसति तदनुचागभादष्टमस्थितैर्विगुणयेद्गण भपरिशेषमस्थे शनौ ॥७६॥

अर्थात् अष्टमराशि के फलाक से गुणा करके २७ का भाग देने से। और गुणा किया हुआ
अब सौ (१००) से अधिक हो तो १०० की सख्या घटाने से आयु का पिण्ड होता है।
(अर्थात् लग्न में शनि के अष्टकवर्ग की राशियों के फलाक योग और शनि में लग्न तक की
राशियों के फलाक योग का जोड़ आयु के वर्ष है।) इस प्रकार आयु का समय की कल्पना करो।
त्रिकोण शोधन के बाद एकाधिपत्य शोधन किये हुए भावों की राशियों में पिण्डसख्या लेकर
अष्टमराशि के फलाक से गुणा करके २७ का भाग देने पर जो सख्या प्राप्त हो उस सख्या के
नक्षत्र में शनि के संचार में मृत्युकाल जानना। अष्टकवर्ग में जिस राशि के नीचे शून्य
(फलाक) हो उस भाव की दशा में जब गोचर में शनि का संचार हो। और सूर्य तथा चन्द्रमा
को योग हो तो राशि की दशा या अन्तर में निश्चय मृत्यु होती है। शनि के अष्टकवर्ग में जो
हीन (बलहीन) राशि हो तो भी उस दशा में शनि का संचार हो तो मृत्यु जानना। इस
प्रकार शनि के अष्टकवर्ग में व्याधियोगों के दुष्ट वर्षों का विचार किया जाता है। अतः पूर्वोक्त
निकोण शोधन और एकाधिपत्य शोधन करके शुद्धता पूर्वक पिण्ड का आगमन करना चाहिए।
पूर्वोक्त त्रियानुसार लग्न से शनि तक और शनिसं लग्न तक की जो योग सख्या होती है उस वर्ष में
रोग मृत्यु या परदेश यात्रा (चिन्ताकारी यात्रा) हाती है। या तो हानि, चोरी आदि में
धनक्षय होता है या शारीरिक व्याधि होती है। और बलहीन ग्रह की दशा हो तो उसकी दशा
में मृत्यु होती है। लग्न में शनि तक की फलाक सख्या को ७ में गुणा कर २७ का भाग देने में
जो नक्षत्रसख्या प्राप्त हो उस नक्षत्र पर शनि (या गृह मंगल) का संचार होने पर धनहानि
मुखस्य होता है। इसी पिण्ड की सख्या को अष्टमराशि के फलाक में गुणा कर २७ का भाग
देने में जो ज्ञेय सख्या हो उस नक्षत्र पर शनि का संचार होने में उपर्युक्त पत्र जानना
॥श्लोक ६७ से ७६ तक॥

उदाहरण (कल्पित)-लग्न में शनि तक की फलाक १४,४,३ ४३२३४ इनका योग २८
हुआ अतः २८वें वर्ष में रोग या मृत्यु हानि परदण यात्रा हो। शनि में लग्न तक की फलाक
४५२ इनका योग ११ हुआ इस वर्ष में भी पूर्व के समान व्याधि हानि यात्रा आदि का
योग है। और इन २८ ११ सख्या का योग ३९ हुआ इस वर्ष में भी शनि चिन्ता बल
आदि जानना परन्तु मृत्युरोग नहीं है। लग्न में शनि तक की फलाक योग २८ का ७ में गुणा किया

उदाहरण- (कल्पित)

चन्द्राष्टकवर्गमे चन्द्रमा से लग्न तक फलयोग १५ और लग्न से चन्द्रमा तक फलयोग ३४ हुआ, अतः १५वें और ३४वें वर्ष में धन, पुत्रादि की प्राप्ति का मुख हो। इसी प्रकार बुध्वाष्टकवर्गमें बुध से लग्न तक का फलयोग १४ और लग्न से बुध तक का फलयोग ४२ हुआ, अतः १४ या ४२वें वर्ष में धन प्राप्ति आदि का योग है। एवं गुरु के अष्टकवर्ग में गुरु से लग्न तक का योग ८ लग्न से गुरु तक का फलयोग ४८ है, अतः इन वर्षों में धन, पुत्र, मुख हो। इसी प्रकार शुक्राष्टकवर्ग में शुक्र से लग्न तक योग ४ आदि से तथा लग्न की राशि भी यदि शुभ हो तो उससे भी शुभफल का निश्चय करे। शनि के अष्टकवर्ग को राशियों में फलांक सख्या शून्य उक्त उदाहरण में नहीं है। अतः नहीं लिखा।

अथ सर्वाष्टकवर्गफलमाह

मेघादिभानां सकलाष्टवर्ग उत्पन्नरेखागणमेव कुर्यात् ॥ धृत्यादि १८ तत्त्वांतमितं कनिष्ठं त्रिंशावसानकित् मध्यबोधाः ॥८१॥ त्रिंशाधिकं तूतमबोध्यदाः स्युः शरीरसौख्यार्थयो- विशेषाः ॥ स्वस्वाष्टवर्गे यदि वेदहीनाः क्लेशाय सौख्याय च वेदपुष्टाः ॥८२॥ दशमभवन्नरेखाभ्योधिक लाभमान भवति यदि विहीन स्याद्विषयास्य ततोपि ॥ अधिकतरविलग्न भोगसंपत्तिमुक्तं विनिमयवशतस्तद्विपरीत्यं जनस्य ॥८३॥ मध्या १० त्फलाधिको लाभो मध्यात्क्षीणफलो व्ययः ॥ यस्य रेखाधिकं लग्न भोगवानर्थाय भवेत् विपरीते तु दारिद्र्यं भवत्येष न संशयः ॥८४॥ प्रादक्षिण्यादिभानां सकलफलपुति विस्वतुष्कमेण कृत्वा तद्भागतो यः समधिकफलतः शोभन हानिमत्यात् ॥८५॥ सौम्या स्वोन्मत्स्वगेहोदितसचरयुते दिग्भिभागे स्वकार्ये वित्तेशाशासु वित्त भृतिपतिगतदिग्भागे देहनाशः ॥८६॥

सर्वाष्टकवर्गफल

सर्वाष्टकवर्ग में मेघ आदि १२ राशियों की रेखा सख्या को एकत्र योग करे। वह योग यदि १८ से २५ तक हो तो 'कनिष्ठ' है। २५ से ३० तक हो तो 'मध्य' है। ३० से अधिक हो तो 'अधिक बली' है। शरीरसुख, धनसमृद्धि और यश वृद्धि करने वाली है। अपने अपने वर्ग में ४ रेखा से कम रेखा क्लेश और ४ या अधिक हो तो शुभकारिणी है। ॥८२॥ (अन्यमत से-)
दशमभाव की रेखा सख्या में लाभस्यान की रेखा अधिक हो और उसमें व्यवभाव की कम हो तथा लग्न की भी रेखा अधिक हो तो सम्पत्ति और भोग में युक्त हो। तथा इसमें विपरीत हो तो फल भी विपरीत हो होता है। ॥८३॥ (स्वमत में भी—यही कहा है, अन्य की केवल सम्मति दी गई है) ॥८४॥

| | ल० | द्रा० | ए० |
|-----|----|-------|----|
| दि० | | पू | व |
| तृ० | तर | | द० |
| च० | ३ | | लि |
| | | प | |
| | प० | प० | त० |

चक्र में दिखाये हुए क्रम में चार दिशाओं में प्रदक्षिण क्रम से ३-३ भाव रखना, जिस दिशा के भावों का फल अधिक हो, वह दिशा लाभकारी होती है और फल अल्प हो तो हानिकारी माने। और जिस दिशा के भावों में सौम्यग्रह उच्च, स्वर्गहीन तथा उदित ग्रह हो, वह दिशा अपने व्यापार में धननाभकारी है। इसी प्रकार अष्टमभाव की दिशा भृत्यकारिणी है ॥८६॥

अथ भावफलमाह

भाव विलोक्ष्य सदसफलदायक यत्तद्राशिसमवफलैश्च तदुक्तपिंडम् ॥८७॥ पिंडे रेखाताडिते भावशेषे १२ राशौ तस्मिन्प्राति सौरि समाप्राप् ॥ यस्या तत्तद्भावहानि च विद्यात्प्राहुर्वैशे वाज्यवा तत्त्रिकोणे ॥ कृत्वा विदुभ्यस्तु काल मुधोमास्तस्माद्वाच्यप्राप्तिकाल शुभत्वे ॥८८॥

भावफल

शुभ और अशुभ फलदायक भावों का फल प्राप्त करके पिंड करे, उसमें से इष्टभाव के पिंड को रेखा की सख्या से गुणा करके १२ का भाग दे, जो सख्या शेष रहे, उस सख्या के शेष में जब गोचर में शनि, उस भाव की राशि में अथवा त्रिकोण राशि में संचार करे तो उस भाव की हानि होती है, और पिंड को बिन्दु सख्या से गुणा करके १२ का भाग देकर भी यह फल जाने। और गुरु आदि शुभग्रह संचार करे तो शुभफल प्राप्त होता है ॥८७॥८८॥

तथा च

मृत्युभाववेशभात् कोणनिघ्नफल, मृत्युज सूर्योर्ध्वपुक्ते रवौ ॥ तत्त्रिकोणेऽथवा रिष्टमास वदेत्, तातमातृगृहाद्येऽथवा कल्पयेत् ॥ सूर्यजातप्रमृत्स्वीधरान्त च तत्, पिण्डक ताडित मृत्युमानेन च ॥ सूर्य शेषर्षगे भास्करे नागान तत्त्रिकोणेऽथवा स्याद्विधिः सदैव ॥८९॥९०॥

अष्टमभाव का स्वामी जिस राशि में हो उससे त्रिकोण शोधित फल से अष्टमभाव के फल को गुणा करे पश्चात् १२ का भाग दे जो अवशेष शेष रहे उस राशि में सूर्य हो अथवा उससे त्रिकोण राशि में सूर्य हो उस सौरमास में अरिष्ट कहना चाहिये। इसी रीति से पिता के लिए दशम से अष्टमभाव तथा माता के लिए चतुर्थ से अष्टम भाव एवं भ्राता के लिए तृतीय से अष्टमभाव से अरिष्टमास की कल्पना करे ॥८९॥ अथवा शनि से लग्नपर्यन्त या अष्टमभाव पर्यन्त के त्रिकोणशोधितफल के योग को अष्टमभाव के फल से गुणा करे, पश्चात् १२ का भाग देने से जो सख्या शेष रहे उस सख्याक राशि में सूर्य हो तब अथवा उससे त्रिकोण राशि में सूर्य हो तब हानि तथा वष्ट होता है। यह विधि पिता माता आदि भावों में भी समस्तना ॥९०॥

मीनाद्य मियुनान्तक प्रथमक प्रोक्त यम प्राक्तनै, कर्काद्य यमिजान्तक तरणतातज च मध्य बुधे ॥ कुम्भान्त स्थविराह्वय च बह्विर्मित् तत् फले सयुत तत्सौर्यार्य विरोधक यत् पुने नैतद्विरोधाच्छुभम् ॥९१॥

आयु के तीन भाव के अनुसार 'मीन, मेष, वृष, मिथुन' ये चार राशियाँ आयु के प्रथमभाग में तथा 'कर्क, सिंह, कन्या, तुला' ये चार राशियाँ आयु के द्वितीयभाग में तथा 'वृश्चि, धनु, मकर, कुम्भ', ये चार राशियाँ आयु के तृतीय भाग में समस्तना । जिस भाग की राशि में फल अधिक हो आयु के उस भाग में अधिक सुख, धन आदि विशेष होता है। ऐसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है ॥९१॥

अथ राहुयुक्तगुरुफलमाह

राहुयुक्तगुरुराशिगे १।१२ गुरौ तत्रिकोणमथ रिष्टकारकम् ॥ अल्पमृत्युरिषुभावनायको
योगकृत्तदिह मृत्युसंभवः॥१२॥ तत्रेदुतस्त्रिंशतिमे वृकाणे गुरौ त्रिकोणेपि तदीश्वरस्य ॥ वर्षे
विषादो परदेशायानं शरीरपीडा मृतिसन्निभास्यात् ॥१३॥

राहुयुक्त गुरुफल

जन्मलग्न यदि गुरुराशि १।१२ हो, और उसमे राहु स्थित हो तो गोचर मे जब बृहस्पति इस
राहुस्थित राशि मे या उससे त्रिकोण राशि मे संचार करे तब अरिष्ट होता है। और यदि पटेश से
सम्बन्ध हो तो मृत्यु भी संभव है॥१२॥ जन्मलग्न या चन्द्रलग्न से तीसरे द्वेकाण मे गुरु हो अपवा
स्येश या चन्द्रस्येश के साथ ५।९ (त्रिकोण) स्थान मे जिस वर्ष मे गुरु संचार करे तो उस वर्ष मे
पारिवारिक कलह, विदेश यात्रा, शरीर पीडा व मृत्युतुल्य कष्ट होता है॥१३॥

अथ निधनार्कमाह

मृत्युपद्मादशाशत्रिकोणेऽसुरो मृत्युनाथत्रिकोणस्थसूर्ये मृतिः ॥ अर्कलिप्ताहतो
राहुलिप्तागणश्चकलिप्ता २१६०० प्तयुक्तो रविमृत्युदः ॥१४॥
भौममार्तंडलिप्ताहति.कारयेच्चकलिप्ताहताल्लब्धयुक्तो रविः ॥ याति यस्मिस्तदा तत्रिकोणेपि
या क्लेशमाहु धय मासि धोमान्वदेत् ॥१५॥

अथ श्लोकद्वयं लग्नविषयकमाह

निधनेशद्वादशाशत्रिकोणे मास्करे मृतिः ॥ निधनेशत्रिकोणे वा सूर्याविष्ठागतेष्वपि ॥१६॥
षष्ठ्याष्टमव्ययेशाना स्फुटयोगगते धनौ ॥ मृतिः तत्र विजानीयास्तत्रिकोणगतेऽपि वा ॥१७॥

निधनार्क साधन (अवश्य ज्ञातव्य)

निधनार्क—अर्थात् जातक की मृत्यु किस सूर्य (भौरमास) मे होगी, यह निश्चय करना।

अष्टमेश जिस द्वादशाश मे हो उस राशि से त्रिकोण राशि मे (गोचर मे) जब राहु हो
तब अष्टमेश से सूर्य जब त्रिकोण राशि मे (गोचर मे) संचार करे तब मृत्यु होती है। (इस
नियम से मृत्यु का मास परिज्ञान हुआ, अब दिन और समय का ज्ञान कहा जाता है) सूर्य की
राशि, अश, घटी तथा राहु की राशि, अश, घटी को घटघातमक एकरस करे, इस घटघातमक
संख्या मे से सूर्य के घटघातमक अंक को पृथक् भी रसे, बाद सूर्य राहु की घटघातमक संख्या का
योग करे तथा इस योग पिण्ड मे २१६०० (१२ राशि X ३० X ६०) का भाग दे, भाग देने से
जो लब्ध घटघातमक अंक संख्या प्राप्त हो, वह पृथक् स्थित सूर्य की घटघाति मस्या से युक्त
करे, बाद ६० का भाग देकर अश और अशो मे ३० का भाग देने से राशि, अश, कलादि सूर्य
स्फुट होगा। उपर्युक्त नियमानुसार सूर्य जिस मास मे जिस दिन और जिस समय उर्त
रादयादि के समान हो उस मास के उन दिन में सूर्यागत समय मे जातक की मृत्यु
होगी॥१४॥

उदाहरण—(कल्पित)

कल्पना किया कि किसी जन्मपत्र मे सूर्य स्पष्ट ५।३।१४।३० है तथा राहु २।४।३०।१०
है, इन दोनों को कलादि पिण्ड किया तो सूर्य ९४०० और राहु ३८४० हुआ। इनको परस्पर

नवाश में हो उससे ५।९ नवाश राशि में जब चन्द्रमा सञ्चार (गोचर में) करे तथा चन्द्रराशि की रेखासंख्या कम हो तो निश्चय मृत्यु बहना चाहिए। (समयज्ञान रीति पूर्ववत्) ॥९॥

निधनलक्षणानि

१-जन्म लग्न अथवा जन्मकालीन चन्द्रमा जिस नवाश में हो, उससे ६४वीं नवाश राशि को लग्न में मृत्यु हो। २-अथवा लग्न या अष्टमभाव के त्रिकोण ५।९ राशि के लग्न में से जिस राशि में कम रेखा हो उस राशि के स्वामी की दशान्तर्दशा में मृत्यु जानना ॥९९॥

इसी प्रकार यात्रा तथा विवाह समय में भी इस समुदायाष्टक वर्ग चक्र के अशुभ या शुभ राशियों के रेखा बिन्दु के फलाफल जन्मचक्र के समान ही विचार करना चाहिए ॥१००॥

सर्वकर्मफलोपेते ह्यष्टवर्गक उच्यते ॥ अन्यथा फलविज्ञान दुर्ज्ञेय गुणदोषजम् ॥१०१॥
त्रिंशदधिकफला ये स्युः राशयस्ते शुभप्रदा ॥ त्रिंशत् पञ्चविंशदिराशयो मध्यमा स्मृता ॥१०२॥ अतिक्षीणफला ये च राशयः कष्ट दुःखदा ॥ श्रेष्ठराशिषु सर्वेषु शुभकार्याणि कारयेत् ॥१०३॥ श्रेष्ठान् राशीन्मुहूर्तेषु योजयेन्मतिमाश्रय ॥ तत्तज्जन्मप्रभावास्तु पुंसस्तैः सार्द्धमाचरेत् ॥१०४॥ कष्टराशिमुहूर्तेषु वर्जयेन्मतिमाश्रय ॥ मध्यात्फलाधिके लाभो लाभक्षीणफले व्यय ॥१०५॥ लग्न फलाधिकं यस्य भोगयानर्थवान् हि स ॥ विपरीतेन दारिद्र्यं भविष्यति न सशय ॥१०६॥ लग्ने यावत्फलं चास्ति तद्दशया फलं वदेत् ॥ मूर्त्यादिद्वयपर्यन्तं ह्यद्वा भावफलानि वै ॥१०७॥

इस सर्वाष्टकचक्रमे त्रिकोणशोधनादि सम्पूर्ण क्रिया कर सब राशियों की संख्या का योग करके विचार करना चाहिए। अन्यथा शुभाशुभफल का ज्ञान होना कठिन है ॥१०१॥
फलाफल-३० की संख्या से अधिक फलवाली राशिया (भाव) शुभ है और २५ से ३० तक की संख्यावाली राशि मध्यम है। इससे कम संख्या की राशिया वनिष्ट है। जो राशिया बहुत कम फलवाली हो वे कष्ट और दुःख देनेवाली होती हैं। अतः श्रेष्ठ राशियों में ही शुभकर्म करना चाहिए ॥१०२॥१०३॥ तथा मुहूर्तों में भी (तात्कालिक ग्रहस्पष्ट और भावस्पष्ट तथा अष्टकवर्गस्पष्ट करके तद्वारा) श्रेष्ठ राशि निश्चित करके लेना चाहिए जन्मकाल से ज्ञात श्रेष्ठ राशि का ही योग करना ॥१०४॥ और जन्मकाल से ज्ञात दुर्द नेष्टराशि का परित्याग करना चाहिए। जिसके जन्मकालिक अष्टकवर्ग में दशमभाव से एकादशभाव के राशि फल अधिक हो और लाभ भावसे रेखाफल व्ययभावका कम हो ॥१०५॥ तथा लग्न भी रेखाफल अधिक हो तो वह मनुष्य अपने जीवन में भोगी और धनी होता है। विपरीत हो तो निश्चय ही दरिद्री होता है ॥१०६॥ लग्न से व्यवभाव पर्यन्त के फल (रेखासंख्या) देखकर जिस भाव की अधिक संख्या हो उसका श्रेष्ठ और न्यून का न्यून फल बहना चाहिए, यदि अत्यल्पफल हो तो क्षय और मृत्यु होती है ॥१०७॥

अधिके शोभन विद्यात्क्षीणे हीने च मृत्यवे ॥ मध्यमे मध्यम याति विचार्य भावसप्तमम् ॥१०८॥
सदृश्यं विनिश्चिप्य दशानयनवत्तया ॥ पापग्रहसमाहृतं सप्त श्लेशरश्मि स्मृतम् ॥१०९॥

सौम्यैर्जुष्ट शुभ ज्ञेय मिथीर्मिश्रफल वदेत् ॥ खण्डत्रयफल ज्ञात्वा दशाफलमुदीरयेत् ॥११०॥
 लग्नात् प्रभृति मदात्तमेकीकृत्य फलानि वैसप्तभिर्गुणयेत्पश्चात्सप्तविशोद्धृतात्फलम् ॥१११॥
 तत्समानगते पापे दुःख वा रोगमाविशेत् ॥ मन्दात्प्रभृति लग्नान्तमेवमेव प्रकल्पयेत् ॥११२॥ भीमा
 च्चलप्रपर्यन्तमेकीकृत्य तु बिन्दवः पूर्ववद्गुणित कृत्वा वर्षमेव प्रकल्पयेत् ॥११३॥ तद्वर्षे पापसमुत्ते
 व्याधिमृत्युभय भवेत् ॥ वर्षेण ह्रीन्भागेषु तद्भाव वर्जयेत्तदा ॥११४॥ गोष्ठ क्षेत्रं कुपि वापि
 श्रेष्ठराशौ स्थित शुभम् ॥ क्षीणराशौ स्थित द्रव्यं तद्द्रव्यं नाशता व्रजेत् ॥११५॥

मध्यम श्रेणी का फल हो तो भाव के अनुसार मध्यम फल होता है ॥१०८॥ अष्टवर्ग के
 १२ भावों के ३ खण्ड कल्पना करे, लग्न से ४ पर्यन्त प्रथम खण्ड, तथा ५ से ८ तक द्वितीय
 खण्ड और ९ से १२ तक तृतीय खण्ड कल्पना करे एवं इन खंडों में पापग्रह युक्त खण्ड को
 क्लेशकारी समझना ॥१०९॥ तथा शुभग्रहयुक्त खण्डको शुभ एवं शुभ पापमिश्रितसे मिश्रित फल
 जानना ॥ इस प्रकार तीनों खंडों के फल जानकर दशा का फल कहना चाहिए ॥११०॥ लग्न स
 रानिराशि तक के रेखा फल का योग करके सात से गुणा करके २७ का भाग देना ॥१११॥
 भाग से जो लब्ध संख्या हो उस संख्या के वर्ष में दुःख या रोग होता है, इसी प्रकार शनि स
 लग्न तक देखना ॥११२॥ तथा भीम से लग्न तक की बिन्दुसंख्या का योग करने ७ से गुणा कर
 २७का भाग देना ॥११३॥ और लब्ध (तथा शेष) वर्षमें पापग्रहका संचार होने पर व्याधि तथा
 मृत्युभय होता है ॥ जित वर्षों में पापफल हो, उन वर्षों में शुभकार्य नहीं करना
 चाहिए ॥११४॥ जमीन मुधारना तथा खेती आदि कार्य श्रेष्ठ राशि में शुभ होते हैं ॥ क्षीण
 राशि में व्यापार आदि कार्यों में लगाया हुआ द्रव्य नष्ट होता है ॥११५॥

वितेश्वरस्य विभागे वित्तमाप्नोति निश्चितम् ॥ रश्मेश्वरस्य दिग्भागे देहस्तत्र विनश्यति
 ॥११६॥ मेघादिषद्गृहगता वसुसंख्यया तास्तद्भावपुष्टिबलबुद्धिकरा भवति ॥ पटपक्षसप्तस
 हितानि शुभप्रदानि त्रिद्विधेकर्णयुतभानि न शोभनानि ॥११७॥ मिथ फल भवति
 सागरकर्णयोगे रोगापवादावयदा यदि शून्यभावा ॥ एकादिकर्णयुतभानुमुखप्रहाणा
 भिन्नाष्टवर्गजनि सर्वफल प्रवर्त्ति ॥११८॥

अथ मासफलमाह

सकर्मदिने प्रहाणाष्टकवर्गेषु चारवशात् ॥ रेखेक्याच्छुभमशुभ मासफल तद्वशाद्दिनफल
 च ॥११९॥

द्वितीय भाव का स्वामी जिस दिशा में हो उस दिशा से अवश्य धन की प्राप्ति होती है, एवं
 अष्टमेज जिस दिशा में हो उस दिशा में देह का नाश (मृत्यु) होता है ॥११६॥ अब इस
 अष्टकवर्ग के प्रत्येक भाव का मिश्र मिश्र फल कहते हैं कि—मेघ आदि ६ राशियों में यदि आठ
 रेखाएँ हो तो उस भाव की पुष्टि तथा ऐश्वर्य की बुद्धिकारक होती है, और इसमें कम ५-६-७
 रेखाएँ भी शुभफलदायक ही हैं ॥ एक दो और तीन रेखाएँ अथवा बिन्दु शुभ नहीं हैं ॥११७॥
 और सुख दुःख मिश्रित फल होता है और यदि ७ बिन्दु हो तो रोग, निन्दा तथा भयकारक
 होती है ॥ इसी प्रकार एक आदि बिन्दु के अनुसार फल जानना ॥११८॥

मासफल

सूर्य-के राशि संचार के समय अष्टवर्ग म फल का विचार पूर्वोक्त रीति म करना रेखाओ के योग से एक मास के फल का निर्णय तथा चन्द्रसंस्कार स दिन व फल का निर्णय करना चाहिए॥११९॥

अथ रेखाशातिफलमाह

रेखाभि सप्तभिर्युक्ते मासे मृत्युर्नृणा भवेत् ॥ सुवर्णं विंशतिपलं दद्याद्द्वौ तिलपर्वतौ ॥१२०॥
 वसुभिर्जातिहीनं स शीघ्रं मृत्युवशो नर ॥ असत्फलविनाशाय दद्यात्कर्पूरजां तुलाम ॥१२१॥ रेखाभिर्नवभिः सर्पांश्चिन्त्यते मनुजो ध्रुवम् ॥ अश्वेश्वतुर्भिः समुक्तं रथं दद्याच्छुभाप्तये ॥१२२॥ रेखाभिर्दशभिः शस्त्रात्प्राणास्त्यजति मानव ॥ दद्याच्छुभफलावाप्तये कवचं वज्रसमुतम् ॥१२३॥ रुद्रं प्राप्याभिशापं च प्राणैर्मुक्तो भवेन्नर ॥ विष्पलैः स्वर्णघटिता प्रदद्यात्प्रतिमां विष्णो ॥१२४॥ आदित्यैर्जलदोषेण मानवस्य मूर्तिं वदेत् ॥ भूमिं दद्याद्ब्राह्मणाय दद्याच्छुभफलं भवेत् ॥१२५॥ त्रयोदशमितैर्व्याघ्रात्मानवो मृत्युमाप्नुयात् ॥ विष्णोर्हिरण्यगर्भस्य दानं कुर्याच्छुभाप्तये ॥१२६॥

रेखा के दुष्ट फल की शान्ति

जिस मास म ७ रेखा हा तो मृत्यु का भय होता है उराकी शान्ति के लिए २० पल सुवर्ण और दो डेरी तिल की दान करे॥१२०॥ यदि आठ रेखा हा तो स्वजाति स अपमान और मृत्युभय हाता है। इस दोष की शान्ति के लिए वपूर स तुलादान करे॥१२१॥ यदि नौ रेखा हो तो सर्प से मृत्यु का भय होता है शान्ति के लिए ४ घोड़े युक्त गय का दान करे॥१२२॥ दस रेखा हो तो शस्त्राघात म मृत्यु होती है शुभफल प्राप्ति के लिए हीरा म युक्त कवच का दान करे॥१२३॥ ११ रेखा हो ता किसी क शाप स मृत्युभय होता है शान्ति के लिए १० पल की सुवर्णनिर्मित चन्द्रमाकी मूर्ति का दान करे॥१२४॥ १२ रेखा हो तो जलसे मृत्यु का भय है शान्ति के लिए ब्राह्मण को भूमि का दान करे॥१२५॥ तर्ह रेखा म व्याघ्र का भय होता है शान्ति के लिए विष्णु की सुवर्ण की प्रतिमा का दान करे॥१२६॥

अचिराज्जीवितं जह्याच्छक्रे कालेन मक्षित ॥ बराहप्रतिमां दद्यात्कनकेन विनिर्मिताम् ॥१२७॥ रातो भयं तिर्यमितैस्तथ हस्ती प्रदीयते ॥ रिष्टभूयै कल्पतरौ प्रतिमां च निवेदयेत् ॥१२८॥ ऋषिचंद्रव्याघ्रभयं गुडघ्नेन निवेदयेत् ॥ कलहोष्टेदुर्भिक्षाद्रत्नगोमूत्रं हिरण्यकम् ॥१२९॥ वेश्यागोर्ज्ज्वरं स्याच्छातिं कुर्याद्विधानतः ॥ विगत्या बुद्धिना स्यात्कुर्यात्सज्जमितं जपम् ॥१३०॥ भूमिपक्षे रोगपीडा दद्याद्वायस्य पर्वतम् ॥ यमानिभिर्यं घुपीडा दद्यादादर्शकं बुधं ॥१३१॥ रामपक्षपुते मासे नानाक्लेशा प्रपद्यते ॥ सौवर्णं प्रतिमां दद्याद्भवे सप्तपलं क्रमात् ॥१३२॥ वेदाग्निभिर्वन्धुहीनो दद्याद्गोदानकं दश ॥ सर्वरोगादिनाशाय जपहोमादि कारयेत् ॥१३३॥

यदि १४ चीदह रेखा हा ता शीघ्र ही मृत् का भय है। शान्ति के लिए सुवर्ण की बराह मूर्ति का दान करे॥१२७॥ पन्द्रह रेखा हो तो राजा से भय होता है शान्ति के लिए

हापी का दान करना चाहिए। १६ रेखा से अरिष्ट होता है, शान्ति के लिए कल्पतरु की सुवर्ण मूर्ति का दान करो॥१२८॥ सप्तह रेखाओं से व्याधि का भय होता है, शान्ति के लिए गुड की गौ का दान करो। १८ रेखाओं से कलह होती है, शान्ति के लिए रत्न, गौ, पृथ्वी तथा सुवर्ण का दान करो॥१२९॥ १९ रेखाओं से देशत्याग होता है, उसकी विधिबत् शान्ति करनी चाहिए॥ २० रेखाओं से बुद्धि का नाश होता है। शान्ति के लिए लक्ष जप करना चाहिए॥१३०॥ २१ रेखाओं से रोग और दर्द आदि पीडा होती है, शान्ति के लिए धान्य की ढेरी का दान करना चाहिए। २२ से बन्धुओं से पीडा होती है, शान्ति के लिए दर्पण का दान करो॥१३१॥ २३ रेखा से नाना प्रकार के क्लेश होते हैं, शान्ति के लिए ७ पल की सुवर्ण मूर्ति का दान करो॥१३२॥ २४ रेखाओं से बन्धु की हानि होती है, शान्ति के लिए १० गौ का दान करो, तथा सम्पूर्ण रोग आदि की निवृत्ति के लिए जप होम आदि करो॥१३३॥

ऋतुपक्षैर्बुद्धिहीनः पूज्या वागोश्वरो तथा ॥ धनक्षयः स्यान्नलत्रैः श्रीमूक्तं तत्र सजपेत् ॥१३४॥
 वसुपक्षे मृते मास न लाभो हानिसेचरैः ॥ सूर्यहोमश्च विधिना कर्तव्यः शुभकाक्षिभिः ॥१३५॥
 एकोनत्रिंशता चापि चिताभ्याकुलितो भवेत् ॥ घृतवस्त्रसुवर्णानि तत्र दद्याद्विचक्षणः ॥ त्रिंशता
 धनधान्यान्तिरिति जातकनिर्णयः ॥१३६॥ नूतनैर्होमैर्होद्योगः पुत्रसंपदगणाग्निभिः ॥
 सहेमवस्त्रताम्रश्च चतुस्त्रिंशत्समन्विते ॥१३७॥ पञ्चरामैर्भवेद्धीमान्यद्भिरास्तुतवित्तदा
 ॥१३८॥ सप्तत्रिंशद्धनस्यापि रष्ट्रिंशत्सुखार्थदा ॥ द्रव्यरत्नान्तिरेकोनचत्वारिंशद्वि विधत्ते
 ॥१३९॥ धनवान्कीर्तिमांश्चैव चत्वारिंशति वर्द्धते॥ अत ऊर्ध्वं यशोयप्तिः पुण्यश्रीरुपसीयते
 ॥१४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अष्टकवर्गफलकथन
 नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

२५ तथा २६ रेखाओं से बुद्धिहीनता होती है, शान्ति के लिए सरस्वती का पूजन करो। २७ हो तो धनक्षय होता है, शान्ति के लिए 'श्रीमूक्त' का पाठ करो॥१३४॥ २८ रेखा से लाभ नहीं होता और हानि होती है, शान्ति के लिए विधिपूर्वक सूर्य का होम करो॥१३५॥ २९ रेखा से चिन्ता की वृद्धि हो, शान्ति के लिए घृत, वस्त्र और सुवर्ण का दान करो ॥ ३० रेखा से धन और धान्य की प्राप्ति होती है, ऐसा जातक शास्त्र का निर्णय है॥१३६॥ ३१ रेखा से भारी उद्योग (बड़े व्यापार) हो, ३३ से पुत्र, सप्तति के द्वारा सुवर्ण वस्त्र का लाभ होता है॥१३७॥ यदि ३४-३५ रेखा हो तो श्रेष्ठ बुद्धि हो, ३६ रेखा हो तो धन-पुत्र हो॥१३८॥ ३७ हो तो धनप्राप्ति और ३८ हो तो धन मुख हो। ३९ हो तो द्रव्य-रत्न की प्राप्ति हो॥१३९॥ ४० रेखा हो तो धनवान् तथा यशस्वी होता है। इससे अधिक रेखा हो तो यश और धन की प्राप्ति तथा श्रेष्ठ सन्ध्या की वृद्धि होती है॥१४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशनाया
 पञ्चमोऽध्यायः ॥५॥

अथ ग्रहयत्नाबलमाह

सप्तं मुखात् मुखं कामात् कामं ज्ञात् खं च तपतः ॥ अशमेकदिगुणितं पुंम्यास्तप्रविषु कमात्
 ॥१॥ पूर्वापरपुनरेर्षं संधिस्थाद्भावयोर्दोषोः ॥ एवं द्वादशा भावास्तु भवन्ति च सप्तम्यः ॥२॥

ग्रह तथा भावों के बलाबल का लक्षण कहा जाता है। बल ६ प्रकार के होते हैं। (१) दृष्टिबल (२) स्थानबल (३) दिग्बल (४) कालबल (५) निसर्गबल (६) चेष्टाबल। इन ६ प्रकार के बलों के लिये प्रथम ग्रहस्पष्ट तथा भावस्पष्ट जानना आवश्यक है। अतः जन्मसमय के इष्टघटी, पलपर नवग्रहस्पष्ट तथा स्पष्ट सूर्य से लग्नस्पष्ट एवं नत तथा उन्नत से दशम भावस्पष्ट पूर्वखण्ड में कहे अनुसार करना चाहिए। पश्चात् लग्न और दशम भाव में छ छ राशि का संयोग करके क्रमशः सप्तम और चतुर्थ भाव स्पष्ट करना। इस रीति से लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम ये चार भाव स्पष्ट हुए। अब चतुर्थ में लग्न घटाकर जो शेष रहे उसका तृतीयांश भाग लग्न में जोड़ने से द्वितीय भाव तथा तृतीयांश को दो से गुणा कर लग्न में जोड़ने से तृतीय भाव होता है। इसी प्रकार सप्तम भाव में चतुर्थ, दशम भाव में सप्तम और लग्न में दशम भाव घटाकर पूर्वोक्त रीति से तृतीयांश लेकर चतुर्थ में जोड़ने से पाचवां द्विगुणित तृतीयांश चतुर्थ में जोड़ने से छठा भाव होगा। इसी प्रकार आगे के ६ भाव स्पष्ट करना। यह बारह भाव स्पष्ट हुए। इन भावों की सन्धिस्पष्ट करने के लिए प्रथम और द्वितीय दो भावों को जोड़कर आधा करने से प्रथम द्वितीय भाव की सन्धि होगी। इसी प्रकार आगे भी द्वितीय तृतीय भाव को जोड़कर आधा करने से, इसी प्रकार बारह भावों की सन्धि करना। बताई हुई रीति के अनुसार जन्मलग्न कुण्डली सूर्यादि नवग्रहों का स्पष्ट तथा सन्धि सहित बारह भावों का स्पष्ट सिद्ध होता है॥१॥२॥

दृष्ट्याद्विशोध्य द्रष्टार पङ्काशिन्योऽधिका भवेत् ॥ दिग्न्यो विशोध्य द्वाभ्यां तु भागीकृत्य च दृष्टयः ॥३॥ शराधिके बिना राशि भागाद्विभ्राश्च दृष्टयः ॥ वेदाधिकं त्यजेद्भूताङ्गानां दृष्टित्त्रिभाधिके ॥४॥ विशोध्यार्णवतो द्वाभ्या सन्धिप्रशद्युत भवेत् ॥ कराधिके बिना राशिभागास्तिथियुतास्तथा ॥५॥

अब दृष्टिबल कहा जाता है। ग्रहों की ग्रहों पर तथा भावों पर दृष्टि स्पष्ट करने की रीति देखनेवाले का नाम दृष्टा है। जो देखा जाय, वह दृश्य कहा जाता है। जैसे-सूर्य, चन्द्रमा को देखता है तो सूर्य दृष्टा और चन्द्रमा दृश्य है। दृश्य में से दृष्टा को घटाना चाहिये। शेषांक ६ राशि से अधिक हो तो दस राशि में घटाना। जो शेष रहे उसके अङ्क करके २ का भाग देना, यही स्पष्ट दृष्टिबल है। (१) यदि शेषांक ५ में अधिक हो तो राशि अङ्क को त्यागकर अशादि को द्विगुणित करना दृष्टि होती है। (२) इसी प्रकार शोधित अङ्क चार से अधिक हो तो पांच में घटाना। शेष रहे वही दृष्टि है। (३) शोधित अङ्क तीन से अधिक हो तो चार में घटाकर आधा करना तथा तीन और मिलाना तो दृष्टि होती है। (४) शेषांक २ से अधिक हो तो राशि अङ्क छोड़कर अङ्क में १५ और मिलाना तो दृष्टि होती है। (५) शेषांक १ से अधिक हो तो राशि को त्यागकर अशादि अङ्क को आधा करना तो दृष्टि स्पष्ट होगी है॥३॥४॥५॥

ह्वाधिके बिना राशि भागा द्वाभ्यां विभाजिताः ॥ त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्रे षमादयः ॥६॥ शरवेदाः शरामाश्च तिथयो योजिताः षमात् ॥ शनिरेवेत्यसौमानामादी दृष्टिः स्पष्टा भवेत् ॥७॥

अथ ग्रहदृष्टिचक्रमाह

| | सु० | च० | म० | बु० | शु० | गु० | रा० | मो० |
|----------|--------------|---------------|---------------|--------------|--------------|---------------|--------------|---------------|
| सु० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० |
| च० | ० ४ २२ | ० ० ० | ० ४४ १३ | ० ० ० | ० १० ४ | ० २६ ४५ | ० ० ० | ० ० ० |
| म० | ० ० ० | ० १५ ४७ | ० ० ० | ० ८ १५ | ० ० ० | ० ० ० | ० १ ११ | ० ० ० |
| बु० | ० ० ० | ० ० ० | ० ३१ ३४ | ० ० ० | ० ० ० | ० १३ २० | ० ० ० | ० ० ० |
| शु० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० |
| गु० | ० ० ० | २ ५ ५२ | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० |
| रा० | ० ० ० | ० ० ० | ० ५७ ३७ | ० ० ० | ० ० ० | ० ५२ २९ | ० ० ० | ० ० ० |
| मो० | ० ४ २२ | ० ५ ५२ | ० १५ ३२ | ० ० ० | ० १० ४ | ० ४० ५ | ० ० ० | ० १५ ४५ |
| ० पाप | ० ० ० | ० १५ ४७ | ० ५० ३७ | ० ८ १५ | ० ० ० | ० ५७ ५४ | ० १ ११ | ० १० ४४ |

नीचोनं तु ग्रहं भार्वाधिके शक्राद्विशोधयेत् ॥ भागीकृत्यत्रिभिर्भक्तं फलमुच्चबलं भवेत् ॥८॥

शनि, गुरु, मंगल की दृष्टि का विशेष प्रकार कहा जाता है। पहले कही हुई रीति से यदि शनि की दृष्टि सिद्ध करना हो तो शनि से ३ और दसवे भाव की प्राप्त दृष्टि में ४५ और मिलाना। गुरु से पंचम, नवम भाव की दृष्टि हो तो ३० और मिलाना। मंगल से चौथे, आठवे भाव की दृष्टि हो तो १५ और मिलाना तो स्पष्ट दृष्टि होती है।

अब उच्चबल कहा जाता है। ग्रहस्पष्ट में उसी ग्रह की नीच राशि और अश घटाकर शेषांक ६ से अधिक हो तो १२ राशि में घटाना। शेष का अशादि करके ३ का भाग देना। लब्ध अशादि उच्चबल होता है॥६-८॥

अथोच्चबलचक्रम्

| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | धो० |
|-----|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ३ |
| ३८ | १७ | ४० | २१ | १३ | ६३ | ३३ | ३८ |
| ४ | २९ | १९ | २९ | ३२ | २४ | ५४ | २ |

अथ सप्तवर्ग बलचक्रम्

| सू० | स्व० | जि० | मि० | स० | श० | शा० |
|-----|------|-----|-----|----|----|-----|
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ४५ | ३० | २० | १५ | १० | ४ | २ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

अथ तात्कालिकमैत्रीचक्रम्

| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | ध० |
|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|--------|
| च० | सू० | सू० | सू० | च० | गू० | सू० | |
| म० | च० | च० | च० | म० | च० | म० | |
| शु० | बु० | बु० | म० | शु० | बु० | गु० | मित्र |
| श० | गु० | गु० | शु० | बु० | गु० | शु० | |
| बु० | श० | श० | गु० | श० | श० | | |
| गु० | ० | शु० | श० | सू० | म० | बु० | शत्रु० |

अथ नैसर्गिकमैत्रीचक्रम्

| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | ग्रहा |
|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-----|-------|
| च० | सू० | सू० | सू० | सू० | च० | बु० | मित्र |
| गु० | गु० | गु० | गु० | म० | श० | बु० | |
| बु० | म० | शु० | शु० | म० | श० | म० | तम० |
| शु० | गु० | गु० | श० | श० | गु० | गु० | |
| श० | ० | बु० | च० | शु० | च० | म० | शत्रु |

मूलत्रिवेणस्वर्भादिमित्रमित्रसमारिपु ॥ अधिशत्रुगृहेचापि स्थितानां क्रमशो बलम् ॥९॥

अब सप्तवर्ग बल कहा जाता है। जिस ग्रह का वर्गबल कमना हो, वह यदि मूल त्रिवेण में हो तो बल ४५ (घटी) होता है। स्वराशि में हो तो बल ३०, अधिमित्र में हो तो बल २० मित्रराशि में हो तो बल १५, समराशि में हो तो बल १०, शत्रुराशि में हो तो बल ४, अधिशत्रु में हो तो बल ० होता है॥९॥

अथ पचधा मैत्रीचक्रम्

| | | | | | | | |
|----------|------------|----------|--------|-----------|-------|------------|----------|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | प्रहा |
| च म० | सू बु० | सू च गु० | सू शु० | च म० | बु श० | शु० | ऽमित्र |
| बु० | म गु शु श० | बु श० | म गु० | श० | गु० | गु० | मित्र |
| गु शु श० | ० | ० | च० | सू शु बु० | सू च० | य बु सू च० | सम |
| ० | ० | शु० | श० | ० | म० | ० | शत्रु |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ऽतिशत्रु |

अथ सप्तवर्गचक्रम्

| | | | | | | | |
|------------------|-----------------|------------------|------------------|------------------|------------------|------------------|-------|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | प० |
| ११ श० स्व० | ९ गु० चि० | १२ गु० चि० | १० श० स्व० | ११ श० स्व० | १२ गु० चि० | १० श० स्व० | गु० |
| ५ सू० स्व० | ४ च० स्व० | ५ सू० स्व० | ४ च० चि० | ४ च० चि० | ४ च० चि० | ४ च० चि० | ह्री० |
| ११ श० स्व० | ५ सू० श० | ८ म० चि० | २ गु० चि० | ३ बु० श० | १२ गु० चि० | १० श० स्व० | हे० |
| ११ श० स्व० | ३ गु० चि० | १२ गु० चि० | ६ बु० श० | २ गु० चि० | ७ गु० चि० | ५ सू० श० | म० |
| ८ म० ऽचि० | ८ म० ऽचि० | १२ गु० चि० | ६ बु० श० | ११ श० स्व० | ६ बु० श० | १२ गु० चि० | न० |
| १३ गु० चि० | ७ गु० चि० | १० म० स्व० | २ गु० चि० | ५ सू० श० | २ गु० चि० | १ म० ऽचि० | वा |
| १ म० ऽचि० | ७ गु० चि० | ८ म० चि० | ९ बु० श० | ९ गु० चि० | ९ बु० श० | ९ बु० श० | चि० |

अथ सप्तवर्गबलचक्रम्

| सू० | च० | स० | शु० | गु० | शु० | ग० | प्रहा |
|--------------|--------------|--------------|--------------|--------------|--------------|--------------|-------|
| ० ३० ० | ० १५ ० | ० १५ ० | ० ३० ० | ० ३० ० | ० १५ ० | ० ३० ० | गृ० |
| ० ३० ० | ० १५ ० | ० १५ ० | ० ३० ० | ० ३० ० | ० १५ ० | ० ३० ० | हो० |
| ० ३० ० | ० १० ० | ० २० ० | ० १५ ० | ० ४ ० | ० १५ ० | ० ३० ० | ३० |
| ० ३० ० | ० १५ ० | ० १५ ० | ० ४ ० | ० १५ ० | ० १५ ० | ० १५ ० | स० |
| ० ३० ० | ० २० ० | ० १५ ० | ० २० ० | ० ३० ० | ० ४ ० | ० १५ ० | न० |
| ० १५ ० | ० १५ ० | ० ३० ० | ० १५ ० | ० १० ० | ० १५ ० | ० २० ० | द्वा |
| ० २० ० | ० १५ ० | ० २० ० | ० ४ ० | ० १५ ० | ० ४ ० | ० ४ ० | त्रि० |
| ३ ५ १ | १ ४५ ० | २ १० ० | १ ५८ ० | २ १४ ० | १ २३ ० | १ २४ ० | योग |

मृताब्धयः खराभाश्च नखास्तिथिर्दिशो युगा ॥ द्वाविंशशुक्रौ युग्मासौ तिथिरोजारायाः
परे ॥१०॥

सम विषम बल। चन्द्रमा और शुक्र ये दो ग्रह समराशि और समनवाश में हो तो बल १५, विषम राशि और विषम नवाश में हो तो बल शून्य होता है। विषम ग्रहों का बल इससे विपरीत अर्थात् विषमराशि नवाश में हो तो बल १५ एवं समराशि नवाश में हो तो बल शून्य होता है॥१०॥

| अथ युगायुग्मबलचक्रम् | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| मू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | स० | यो० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | १५ | ० | १५ | १५ | १५ | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

| अथ केन्द्रादिवलचक्रम् | | | | | | | |
|-----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| मू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | स० | यो० |
| ० | ० | ० | १ | ० | ० | १ | ३ |
| ३० | १५ | १५ | ० | ३० | १५ | ० | ४५ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

केन्द्रादिषु स्थिता सप्तार्याष्टिस्त्रिंशत्तिथिः क्रमात् ॥ आदिमध्यावसानेषु द्देष्याणेषु स्थिताः
क्रमात् ॥११॥ युग्मपुस्तकयोपार्या द्युस्तिथिस्ततः प्रहाः ॥ स्वपद्वर्गगतान्त्रिंशदेव स्थानबल
विदुः ॥१२॥

ग्रहो वा केन्द्र बल-जगत् तत्र मे ग्रह केन्द्र मे (१।४।७।१०) हो तो बल ६० होता है। तथा
पूर्णफल (२।५।८।११) मे हो तो बल '३०' होता है। एवं आपोन्मिम (३।६।९।१२) में हो
तो बल '१५' होगा।

द्देष्याण बल पुनश्च यद् (मू० म० गु०) प्रथम द्देष्याण मे (दम अश तव) हो तो बल '१५'
इसमे अधिक अश हो तो बल शून्य। तथा नपुनश्च यद् (बु० म०) द्वितीय द्देष्याण मे (१०
अश मे अधिक २० अश तव) हो तो बल '१५' अन्यथा शून्य। तृती यद् (च० गु०) तीसरे
द्देष्याण मे (२० अश मे अधिक) हो तो बल '१५' अन्यथा बल शून्य होता है।

विशेष-जो ग्रह यद् वर्ग मे अपने ही वर्ग का हो तो उसका बल '३०' होता
है॥११॥१२॥

| अथ द्रेष्काणबलचक्रम् | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | शु० | शु० | श० | यो० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| १५ | १५ | ० | १५ | ० | ० | ० | ४५ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

| अथ पंचानां योगचक्रम् | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | शु० | शु० | श० | यो० |
| ४ | २ | ३ | ३ | ३ | २ | ३ | २४ |
| २८ | ४७ | २५ | ४५ | १२ | ४६ | ५७ | २७ |
| ४ | २९ | १९ | २९ | ३३ | २४ | ५४ | १२ |

अर्कत्किंजातुल जीवाज्जाज्वास्त लग्नमार्कितः ॥ मध्यलग्न भृगोश्चंद्रादित्वा षड्भाधिके सति ॥१३॥

| अथ दिग्बलचक्रम् | | | | | | | |
|-----------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | स० | म० | बु० | शु० | शु० | श० | यो० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ३ |
| ४९ | १ | ३२ | ३१ | ४३ | २१ | २९ | २८ |
| १ | ५६ | २५ | ३० | १२ | ५८ | १५ | १७ |

चक्राद्विशोध्य रामान्तं भागोक्त्य च तद्वलम् ॥ आमाप्याह्नादर्धरात्राद्विबारात्रिरिति ज्ञेयम् ॥१४॥ अर्कमार्गवसूरीणाद्विष्टा नाड्यो गता दिवा ॥ भीमघटशनीनां तु षट्मियो बर्जयेदिमाः ॥१५॥

दिशावल-सूर्य तथा मंगल के राश्यादि में चतुर्य भाव घटाना, बुध, गुरु में मध्यम भाव घटाना और शनि में लग्न तथा चन्द्र, शुक में दशम भाव घटाना। शेष अर्क ६ राशि में अधिक

हो तो १२ राशि में घटाना और ३ का भाग देना। लब्धाक 'दिवाबल' होता है॥१३॥

नतोनत बल-(प्रथम 'नत' का ज्ञान होना आवश्यक है। नतसाधन "पूर्व नत स्याद् दिन-रात्रिखण्ड, दिवानिशोरिष्टघटी विहीनम् ।" अर्थात् दिनार्द्ध या रात्र्यर्द्ध में इष्टघटी पल घटाने से पूर्व नत या 'नत' होता है। और नत (घटी पल) को ३० (घटी) में घटाने से उन्नत होता है) (श्लोकार्थ) मध्याह्न से मध्यरात्रि तक इष्टकाल हो तो दिनबल और मध्यरात्रि से मध्याह्न तक इष्टकाल हो तो रात्रि बल कहा जाता है। उन्नत की घटी पल को द्विगुणित करने से (दिवाबल में) सूर्य, गुरु, शुक्र का दिवाबल होता है। और ६० में घटाने से चन्द्र, मंगल, शनि का दिवाबल होता है। और ६० में घटाने से चन्द्र, मंगल शनि का दिवाबल होता है। यदि रात्रिबल हो तो इससे विपरीत - अर्थात् उन्नत द्विगुणित चन्द्र, मंगल, शनि का रात्रिबल और ६० में से घटाने पर सूर्य, गुरु, शुक्र का रात्रिबल होता है। बुध का दिवाबल और रात्रिबल ६० ही रहता है॥१४॥१५॥१६॥

दिवाबलमिति प्रोक्त बल नैरा ततोऽन्यथा ॥ पष्टिरेव सदा अस्य ॥ चन्द्रादकं विशोध्य च ॥१६॥ अगाधिके विशोध्यार्काद्भागीकृत्यत्रिभिर्मजेत् ॥ पक्षज बलमिदुप्तशुक्रार्थाणां तु षष्टित् ॥१७॥

| अथ नतोनतबलचक्रम् | | | | | | | |
|------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सु० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | म० | पो० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ४ |
| ४८ | ११ | ११ | ० | ४८ | ४८ | १६ | ० |
| ४४ | १६ | १६ | ० | ४४ | ४४ | ११ | ० |

| अथ पक्षबलचक्रम् | | | | | | | |
|-----------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सु० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | म० | पो० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ३ |
| ४० | १२ | ४७ | १२ | १२ | १२ | ४७ | ११ |
| ५ | ५५ | ५ | ५५ | ५५ | ५५ | ० | १५ |

पक्ष बल-चन्द्रस्पष्ट राश्यादि मे सूर्य स्पष्ट राश्यादि घटाना (यदि सूर्यस्पष्ट राश्यादि अधिक हो तो चन्द्रराशिमे १२ राशि बड़ाकर सूर्य घटाना) शेष अकसख्या ६ राशिते अधिक हो तो १२ राशी मे घटाना। शेषाक को अश करके ३ का भाग देना जो लब्ध हो वह चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र का पक्षबल होता है। उस बलको ६० मे से घटाने से सूर्य, मंगल, शनि का बल होता है॥१६॥१७॥

हित्वान्येषामहोरात्रि त्रिभागीकृत्य यत्र तु ॥ जन्मलक्षतदशाधिपते दृष्टिबल भवेत् ॥१८॥
आधाने चित्प्रवेशे तु त्रिशद्भूतार्णवा बलम् ॥ जाडर्कमवेदुशुक्रारा पतय सर्वदा गुरु ॥१९॥

| अथ दिनरात्रित्रिभागचक्रम् | | | | | | | |
|---------------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | म० | यो० |
| १ | ० | ० | ० | १ | ० | ० | २ |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

| अथ वर्षमासादि चक्रम् | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | म० | यो० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| ३० | ० | ० | ० | ४५ | ० | १५ | ३० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |

दिन रात्रि बल दिन तथा रात्रिके ३-३ भाग नरो। दिन के तीन भागों के स्वामी ब्रह्म बुध, सूर्य, शनि है। और रात्रि के तीन भागों के स्वामी ब्रह्म चन्द्र, शुक्र, मंगल है। जिन भाग में जातक का जन्म हो उस भाग के स्वामी ग्रह का बल ६० होता है। एक आधान बल के बल विचार मे ६० की जगह ३० बल होता है तथा चित् प्रवेश या चैतन्य काय के विचार मे ४५ बल होता है। इस बल मे गुरु का मदा ६० (घटी) अथवा १ (अश) बन होता है॥१८॥१९॥

वर्ष पति, मास पति दिनपति का वन (वर्ष पति तथा मासपति मिद्व बरन के त्ति अहर्गण की तथा तदग चक्र की आवश्यकता है) अहर्गण बनाने की गीति ग्रह नाचव म निगी जाती है॥

अहर्गण साधन, प्रहलाधव मध्यमाधिकार श्लोक ४१५

छत्रचक्रोन्वोदित शक ईश कृत् कल स्या, चक्राख्यं रविहृतशेषकं तु युक्तम् । चैत्रांशं पृथगमुत्त
सहस्रं चक्रा, द्विगुणादमरफलाधिमासयुक्तम् ॥४॥ सत्रिप्रं गततिथि युद् निरप्रचक्रां, गांशा
३३ पृथगमुत्तोऽधिषट्कलब्धैः । ज्नाहैर्विपुत महर्गणो भवेद्, वारः स्याच्छर-हृतचक्रयुग्
गणोऽज्जात् ॥५॥

अर्थ-शालवाहनीय शक सख्या मे १४४२ कम करना जो शेष रहे उसमे ११ का भाग देना। जो लब्धि प्राप्त हो वह 'चक्र' कहाता है। भाग देने से जो वर्ष सख्या शेष है उसको १२ से गुणा करना और अपने दृष्ट से शुक्ल प्रतिपदादि जो गत मास मे हो, सो युक्त करना पश्चात् दो जगह रखना। एक जगह चक्र को द्विगुण करके १० जोडकर ३३ का भाग देना जो लब्ध हो वह 'अधिमास' है। इस अधिमास सख्या को पृथक् स्थित मे युक्त करना तो 'मासगण' होता है ॥४॥ पश्चात् ३० से गुणा करे तथा शुक्ल प्रतिपद से दृष्ट काल की गततिथि युक्त करे और चक्र का छठा भाग युक्त करे बाद दो जगह रखे। एक जगह ६४ का भाग देने से 'ज्नाह' सख्या प्राप्त होगी वह दूसरी जगह की सख्या मे घटाने से 'अहर्गण' होता है। बार जानने के लिए चक्र को ५ से गुणा करके जोडकर ७ का भाग दे शेष सख्या बार है। सोमवार से गणना करे। नभी २ एक कम या अधिक भी होता है ॥५॥

उदाहरण -धीस० २०१८ शक सम्वत् १८८३ है। शकारभ मे वैशाख कृष्ण १३ गुरुवार को अहर्गण स्पष्ट करना है। शक १८८३ मे १४४२ घटाया तो शेष ४४१ रहा, इसमे ११ का भाग दिया तो लब्ध '४०' यह 'चक्र' हुआ। शेष १ है। इसको १२ मे गुणा किया तो १२ हुआ इसमे चैत्र शुक्ल प्रतिपद से गतमास '०' से युक्त किया तो १२ हुआ, इसको २ जगह रखा एक जगह चक्र को द्विगुण ८० मे १० युक्त ९० करके १२ मे योग किया तो १०२ हुआ ३३ का भाग दिया ३ अधिमास प्राप्त हुआ इसको दूसरे मे युक्त किया तो १५ हुआ। इसको ३० से गुणा किया तो ४५० और चक्र ४० का छठा भाग ६ युक्त किया तो ४५६ हुआ अकारभ उपर्युक्त तिथि मे ही माना गया है अत गततिथि ० युक्त की तो यही रहा, दो जगह रखा। एक जगह ६४ का भाग दिया तो ७ 'ज्नाह' प्राप्त हुए, इसको दूसरी जगह घटाया तो ४४९ शेष रहा। यह अहर्गण हुआ। बार जानने के लिए चक्र ४० को ५ से गुणा करके २०० अहर्गण मे युक्त किया तो ६४९ हुआ। इसमे ७ का भाग दिया तो शेष ५ यह बार हुआ। इसमे १ कम करके सोमवार गणना किया तो गुरुवार हुआ।

वर्षमासदिनेशाना तिथिस्त्रिंशच्छरार्णवः ॥ कालहोराधिपस्यैव पूर्णं बलमुदाहृतम् ॥२०॥

| अथ कालवत्तचक्रम् | | | | | | | |
|------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| गु० | श० | म० | पु० | दु० | गु० | म० | घो० |
| ३ | ० | ० | १ | २ | २ | १ | १२ |
| ४५ | २४ | ५८ | ४० | ४९ | १ | १३ | १० |
| ४९ | ११ | ३१ | ५ | ३९ | ३८ | २१ | ४ |

वर्षपति तथा मासपति स्पष्ट—केशवी जातक बलाध्याय से-

“द्विष्टोज्यं ग्रहलाघवद्युनिचय श्रक्ताहतैः षट्शरैः षट् दशैश्च पुतः सबाणतपनः सेषुष्र
खांगाग्निभिः । खाग्रैश्च विहृतं फले गुणयमद्वे चक्रनिघ्राक्षसोपेतैः सत्रियुगे नगोर्वीरितके
स्तोऽर्कात् समामासपौ ॥”

वर्षपति-अर्थ-इष्ट चक्र को ५६ से गुणा कर अहर्गणा में युक्त करना। पुनः १२५ जोडकर ३६० का भाग देना। लब्ध अंक को ३ से गुणा करे अब इसमें-चक्र को ५ से गुणा करके ३ जोडकर जो सख्या हो वह जोड कर ७ का भाग दे, जो शेष रहे वह रविवार से गिनकर ‘वर्षपति’ प्राप्त करे।

मासपति स्पष्ट-अहर्गण मे-२६ से गुणित चक्र सख्या युक्त करना। पुन ५ और जोडना, ३० का भाग देना। लब्धवाक द्विगुणित करना ४ और जोडकर ७ का भाग देना, शेषाक रविवार मे मासपति होता है॥

दिनपति स्पष्ट-जिस दिन जो वार हो वही ग्रह दिनपति होता है। और दिनपति का बल ४५ होता है। दिनबल चक्र में ग्रहों का बल गूण्य रखना॥

होरा बल-इष्ट काल में जिस ग्रह की होरा हो वह होरापति होता है। उसका बल पूर्ण (१) होता है। इस प्रकार वर्ष, मास, दिन, होरा, ये चारो प्रकार के प्रत्येक ग्रह के स्पष्टकर के चारो बलों का योग करता, तब चक्र में जिस ग्रह का जितना बल प्राप्त हो सो लिखना। यह काल बल सम्पन्न हुआ॥२०॥

अयन बल-तात्कालिक ग्रह स्पष्ट करके अयनाश युक्त करना। (अयनाश “वेदाध्यव्यून खरसहूत शकोयनाशा ।” (ग्रहला०) अर्थात् शाका में ४४४ घटाकर ६० का भाग देने में लब्ध अंश और शेष घटी। यह अयनाश होते है।) पश्चात् ‘भुज’ करे। (भुज साधन-ग्रह लाघव-द्वितीय अधिवार-श्लोक १ “दो स्त्रिभोन त्रिभोर्द्वे विशेष्य रसैः श्रवतोऽजाधिक स्याद् भुजोन त्रिभम् ।” ग्रहस्पष्ट सायन करने पर तीन राशि में कम हो तो वही भुज है। तीन राशि से अधिक हो तो ६ राशि में शोधित करने से भुज होता है।

आधाने चित्रवेशे तु त्रिंशच्छरजलाकरा . ॥ सायनांशग्रहभुजराशौनिष्वब्धिभिः सुरैः ॥२१॥
सूर्यैर्हत्वा क्रमाद्राशिभागः स्यादनुपाततः ॥ एवं राश्यादिके युज्यादर्कारापोशनः सु च ॥२२॥
राशित्रयमयो युज्यान्नेपादिस्थेषु तेष्वथ ॥ तुलादिस्थेषु राश्यादीस्त्रिराशिम्यस्तु घटयेत् ॥२३॥
चन्द्रास्योर्विपरीति स्यात्तदा युज्याद्बुधस्य तु ॥ भागीकृत्य त्रिभिर्मत्तं ग्रहाणामायन बलम् ॥२४॥

छ राशि से अधिक हो तो छ राशि बम करना तो भुज होगा ९ राशि में अधिक हो तो १२ राशि में घटाना तो भुज होता है। ध्रुवाक तीन है-४५, ३३, १२ भुज में जो राशि हो उस ध्रुवाक में (अर्थात् राशिस्थान में गूण्य हो तो ४५ में, १ हो तो ३३ में, और २ हो तो १२ में) यह के अंशदि अंक को गुणा करना। और गुणित अंश में २० का भाग देना जो लब्ध

अशादिक ही सो गत खड मे जोडना। बाद राश्यादि अक करके ग्रह यदि तुलादि छ राशि मे हो तो तीन राशि घटाना तथा मेपादि छ राशि मे हो तो ३ राशि जोडना। यह मेप तुलादि सस्कार चन्द्रमा तथा शनि मे विपरीत करना। और बुध के अयन बल मे ३ राशि सदा जोडना। पश्चात् अशादि करके ३ का भाग देना तो अयन बल स्पष्ट होता है। केवल सूर्य का अयन बल द्विगुण करना॥२१॥२२॥२३॥२४॥

| अथ अयनबलचक्रम् | | | | | | | |
|----------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | सु० | गु० | शु० | श० | मो० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० |
| २७ | ५७ | ३९ | ५५ | १८ | १८ | ५५ | २३ |
| १५ | ४० | ३२ | ९ | ५० | ४५ | ५३ | ४ |

रवोर्द्विगुणमेव स्याद्युध्यतोर्ग्रहयोरथ ॥ विभूष्य बलयोश्चापि निर्जितस्य बल भवेत् ॥२५॥
अपनीते योजिते तु जितस्य च बल भवेत्॥ घटित्वरुगतेर्वीर्यमनुवरुगते दलम् ॥२६॥ पाद
विकलभूक्त स्याद्वलमेव समागमे ॥ पाद भदगतेस्तस्य दल मन्दतरस्य च ॥२७॥

ग्रहो का युद्ध बल इष्टकाल के ग्रहस्पष्टो मे कोई भी २ ग्रह राशि अश बता विबला म समान हो तो उन दोनो ग्रहो का युद्ध समझना चाहिये। इस युद्ध बल के जानन की रीति यह है कि उन दोनो ग्रहो का आधा हुआ बल परस्पर घटाकर जो अन्तर हो वह हीन बल मे घटाना और अधिक बल मे युक्त करना। तो हीनबली ग्रह दक्षिण दिशा का निर्जित बल कहलाता है। और बधाधिकग्रह उत्तर दिशा का विजयी कहलाता है॥२५॥

गतिबल जो ग्रह बली है उसका बल ६०। और मार्गी ग्रह का बल ३०। तथा सूर्य युक्त का बल १५। चन्द्रयुक्त का ३०। भदगति का १५। अन्य गति का ७।३०। शीघ्रगति का ६५। अति शीघ्रगति का ३० बल लेना चाहिए॥२६॥२७॥

शीघ्रभूतेस्तु पादोन दल शीघ्रतरस्य तु ॥ मध्यमस्फुटविभूषदलयुक्तोन्नित स्फुटात् ॥२८॥
मध्यमे त्वधिरे न्यूनै शीघ्रावध्रास्फुट त्यजेत् ॥ चेष्टाकेन्द्र भवेदानी रवीन्दोरयनांशयुक् ॥२९॥

सूर्यादिग्रहो का चेष्टाबल—प्रथम सूर्यादि ग्रहो को “मध्यम” करना और पश्चात् स्पष्ट करना। ग्रहो के मध्यम तथा स्पष्ट करने की रीति ‘ग्रह लापव या गार्गिणी मे करना हो तो ‘बेगवी जातव’ मे करना। पश्चात् मध्यम और स्पष्ट यह का अन्तर करने जो अन्तर हो उसको आधा करने। मध्यम ग्रह स्पष्ट ग्रह मे अधिक हो तो मध्यम ग्रह मे जोडना और कम हो तो घटाना पश्चात् शीघ्रोच्च पत्र मे घटाना तो चेष्टा चेन्द्र होता है। बाद अंग करने ३ का भाग देना तो चेष्टाबल होता है। सूर्य चन्द्र मे यह विधि करने ३ राशि मिथान म चेष्टा बल होता है॥२८॥२९॥

| अथ चेष्टाकेन्द्रचक्रम् | | | | | |
|------------------------|---------------|----------------|---------------|---------------|-----------|
| म० | बु० | गु० | शु० | श० | पह |
| ० १६ ४१ | १० २ ३२ | १० २१ ४७ | १० २ ३२ | ९ ११ १८ | मध्यम |
| ११ २७ ४ | ९ १० ३४ | १० १५ ३९ | ११ ७ १४ | ९ ८ ४७ | स्पष्ट |
| ११ १० २२ | ० २१ ५८ | ० ६ ८ | १ ४ ४२ | ० २ ३१ | अतर |
| ५ २० ११ | ० १० ५९ | ० ३ ४ | ० १७ २१ | ० १ १५ | इल |
| १० २ ३२ | ५ १३ ३० | १० २ ३२ | ० २५ १६ | १० २ ३२ | शीघ्रोष्ण |
| ३ ६ २ | १ २१ ५७ | ५ १३ ४९ | ३ २४ ३७ | ५ ७ १५ | केन्द्र |

अगाधिकेऽर्कात्सशोध्य भागीकृत्य त्रिभिर्भजेत् ॥ सूर्यचद्री सत्रिराशीकृत्या प्रोक्तविधिसंस्था
॥३०॥ एव चेष्टादल प्रोक्त नैसर्गिकमयो भृशु ॥ यष्टिरेकेष्व सप्त दश षड्विरातिस्तत्
॥३१॥

निर्गम (स्वाभाविक) मन—सूर्यादिग्रहो वा ब्रमण ६०।५१।१७।०३।३४।४३।९ यह निर्गम
बन होता है॥३०॥३१॥

चतुस्त्रिंशत्त्रिबेदाका सूर्यादीना निर्गमजा ॥ शुभपापराग्यसामुत्तहीनानि तानि च ॥३२॥

पञ्चबल (स्थान बल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, नैसर्गिकबल) के योगमें युक्त करना। और पापदृष्टि अधिक हो तो चतुर्थांश पञ्चबल योग में हीन करना। यह दृष्टिवन वा संस्कार है। उस प्रकार सूर्य आदि ग्रहों का षड् (प्रकार) बल विचार समाप्त हुआ ॥३२॥

षड्बलानि ग्रहाणां स्पृश्यमेकीकृतानि तु ॥ शुभदृष्टिचतुर्थांशयुत स्वतार्यदर्शने ॥३३॥
हीनपाप द्वाव्यशैर्युत स्वामिबल बलम् ॥ गुरुज्ञाभ्यां तु युक्तस्य पूर्णमेकतु योजयेत् ॥३४॥
मदाररविपुक्तस्य बलमेकेन वर्जितम् ॥ दिवा शीर्षोदयाश्रय सध्यायानुमयोदय ॥३५॥

अथ षड्बलचक्रमाह

| सू० | च० | म० | मु० | पु० | शु० | रा० | ग्रह० |
|-------------------|--------------------|--------------------|-------------------|--------------------|--------------------|--------------------|----------------|
| ४ २८ ४ | २ ४७ १९ | ३ ५ १९ | ४ ४९ २९ | ३ १२ ३३ | २ ४६ २४ | ३ ५७ ५४ | स्थान |
| ० ४९ १ | ० १ ५६ | ० ३१ २५ | ० ३१ ३० | ० ४३ १२ | ० २१ ५८ | ० २९ १५ | दिग्बल |
| ३ ५ ४९ | ० २४ ११ | ० ५८ २१ | ० ४७ ५ | २ ४६ ३९ | २ १ ३८ | २ १३ २१ | कालबल |
| ० २७ १५ | ० ५७ ४० | ० ३२ ० | १ १२ २८ | १ १३ २६ | ० ५९ ५७ | १ ४८ ४८ | चेष्टाबल |
| १ ० ० | १ ५१ ० | १ १७ ० | १ २६ ० | १ ३४ ० | १ ४३ ० | ० ९ ० | नैसर्गिक बल |
| ० ० ५ ७० | ० २ ३९ ४० | ० ६ १३ ७० | ० २ ४ ४० | ० २ ३१ ७० | ० ४ २७ ४० | ० २ १८ ४० | स्वामि |
| ९ ५१ १४ | ४ ४९ ४७ | ५ ३० १८ | ४ ४४ २८ | ८ ३२ २१ | ६ ४५ ३० | ७ ३९ ३० | ऐश्वर्यबल |

अब भावबल कहा जाता है। जिस भाव में बुध या गुरु स्थित हो उसके पूर्वोक्त भावबल १ युक्त करना और शनि, मंगल युक्त हो तो भावबल में १ कम करना॥३३॥३४॥
 भाव का कालबल-दिन का जन्म हो तो शीर्षोदय राशि-मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक कुम्भ ये राशि बलवान् होती है। रात्रि का जन्म हो तो मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर भावराशि बलवान् होती है। प्रातः सायं जन्म हो तो मोन बली है। कथित समय में कथि राशि बलवान् और अन्य राशि बलहीन होती है॥३५॥

| अथ भाववृष्टिचक्रम् | | | | | | | | | | | | |
|--------------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|---------------|--------------|---------------|
| | स० | घ० | स० | सु० | सु० | रि० | जा० | भु० | घ० | क० | म० | म० |
| सु० | ० १५ ४९ | ० ३० ५३ | ० ३० ४१ | ० २ २५ | ० ५० १८ | ० ४४ ५३ | ० २९ ६ | ० १४ ५३ | ० ४१ | ० ३० | ० ३० | ० ३० |
| घ० | ० ३९ ४३ | ० २१ १ | ० १४ २८ | ० ५० ५ | ० ४१ १८ | ० २५ ३१ | ० १ ४३ | ० ० ० | ० ० ० | ० ३ ४५ | ० ३ | ० २३ ५९ |
| स० | ० ० ० | ० ३ ४३ | ० ३३ ४४ | ० ५५ ४५ | ० २४ ११ | ० १४ ४८ | ० १ ० | ० ५२ ३६ | ० २० ६ | ० १२ ५३ | ० ० ० | ० ० ० |
| सु० | ० ४० २९ | ० ३३ ३ | ० ७ ४१ | ० ४१ ३० | ० ४८ ५१ | ० ३ ३३ | ० १० १६ | ० ३ ३ | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ११ ५७ |
| सु० | ० १० १२ | ० ३३ ४९ | ० ५३ ३० | ० २८ ४० | ० ३४ २८ | ० ५० ३६ | ० ५५ १२ | ० ३१ ४६ | ० ६ २३ | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० |
| सु० | ० ० ० | ० १३ ३७ | ० ४० ३९ | ० ३२ ५८ | ० ५ १ | ० ५४ २८ | ० ४५ ३६ | ० २८ ३१ | ० १० ११ | ० २ ५८ | ० ० ० | ० ० ० |
| स० | ० ४६ ७ | ० ३१ ५५ | ० ५ २६ | ० ४६ ४ | ० ४० ४२ | ० ३१ ५५ | ० ५४ १४ | ० ७ २८ | ० ० ० | ० ० ० | ० ० ० | ० ५२ २२ |
| सु० | ० १० २८ | ० ४१ ३० | ० ५६ २५ | ० ४० १३ | ० १ ३८ | ० १४ १० | ० ७ ४७ | ० ३ २० | ० १० ३४ | ० २ ५८ | ० ३ ४२ | ० ५ ४६ |
| स० | ० २ ५६ | ० १३ ३० | ० ५९ ४५ | ० ४४ ५१ | ० १ ५१ | ० ३० ३६ | ० २१ २७ | ० १५ ७ | ० २७ ४७ | ० १२ ५३ | ० ० ० | ० ५२ ५९ |
| स० | ० २० ३२ | ० २८ ० | ० ५६ ४० | ० ५५ ५१ | ० ० १३ | ० ४३ ३४ | ० १३ ३३ | ० ११ ५३ | ० १० १३ | ० ५ ५५ | ० ३ ४२ | ० १३ १७ |

नक्त पृष्ठोदयाश्रय बलाधिक्य उदीरिता ॥ नृपुनज्जकारायोनचापपूर्वार्द्धकुभमात् ॥३६॥
 मृगबापपराधार्थमेवसिहवृषादपि ॥ अस्ते कर्कट काच्चापि मृगात्पराधार्थं मीनमात् ॥३७॥
 अस्त सुख क्रमाल्लप्र ख हित्वागाधिके सति ॥ चक्राद्विशोध्य रामैश्च भजेद्भ्रागीकृत
 बलात् ॥३८॥

भावो का दिग्बल—मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वार्द्ध, कुभ इन राशियों के भाव में राप्तमभाव कम करना, जोपाक छ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटाना, जोप के अश करके ३ का भाग देना। लब्ध अक 'दिग्बल' होता है। इसी प्रकार मकरराशि का पूर्वार्द्ध, धन का उत्तरार्द्ध, मेष, वृष, सिंह इन राशियों के भावों में चतुर्थ भाव घटाकर और कर्क, वृश्चिक राशि के भावों में लग्न घटाकर तथा मकर का उत्तरार्द्ध और मीन में दशमभाव घटाकर छ राशि से अधिक हो तो १२ में शुद्ध करके अश कर ३ का भाग देने से दिग्बल प्राप्त होता है ॥३६॥३७॥३८॥

भावाना च ग्रहाणा च बलान्येव विदुर्बुधा ॥ अकाग्रयोऽग्निरामाश्च साग्नि करजलाकरा ॥३९॥ नवाग्रय सारा साग्निर्दशतगुणिता क्रमात् ॥ रथ्यादयस्सुबलिनो राशीनां स्वायिनो
 घशात् ॥४०॥ अधिक पूर्णमेव स्याद्वल चेद्वलिनो मता ॥ गुहसीम्परवीना तु भूतपदेकद्वो
 द्विज ॥४१॥ पञ्चाग्नय समूतानि करमूमिसुघाकरा ॥ साग्रयश्च क्रमात्स्थानदिकचेष्टासमपा
 यने ॥४२॥ सितेन्द्रोऽस्म्यग्निचक्राश्च खेपव साग्रय शतम् ॥ चत्वारिंशत् क्रमाद्भूमिमन्दपोषण
 वक्रमात् ॥४३॥

सात ग्रहो तथा १२ भावो का 'सुबल' तथा 'पूर्णबल' विचार

सूर्य आदि ग्रहों के पूर्णबल के ध्रुवाक—मू० ३९, च० ३६ म० ३०, बु० ४० गु० ३९, शु० ३३, श० ३०, इन अंकों को १० गुणित ध्रुवाक जानना। यथा मू० ३९०। च० ३६०। म० ३००। बु० ४२०। शु० ३९०। श० ३०० य पूर्णबल के ध्रुवाक है। (इन अंकों में ६० से अधिक होने से ६० का भाग देकर क्रम से सूर्यादि ग्रहों के—मू० (६।३०) च० (६।०), म० (५।०), बु० (७।०), शु० (६।३०), श० (५।०) पूर्ण बलाक हुए। इतने या इसमें अधिक हो तो पूर्ण बली और कम हो तो सुबली जानना। ये बल सूर्यादि ग्रहों के हैं। तथा १२ भावों का बल अपने अपने स्वामी के बल से जानना। भावों में भी कथित ध्रुवाकों से कम बल हो तो बली समान हो तो सुबल अधिक हो तो पूर्ण बल जानना। भावों का बल ग्रहों के समान ही जानना क्योंकि—राशि का बल अपने स्वामी के आधीन होता है ॥३९॥४०॥ अथ भिन्न भिन्न ग्रहों का स्थानबल, दिग्बल, चेष्टाबल, बालबल तथा अपन बल के पूर्णत्व के ध्रुवाक बहते हैं। इ मैत्रेय! सूर्य, बुध, गुरु का स्थानबल ध्रुवाक १६५ है। (६० से भाग देने पर २।४५) इगम अधिक हो तो पूर्ण बली होता है। इसी प्रकार दिग्बल अक ३५ है। इससे अधिक हो तो पूर्ण बनी। चेष्टा बलाक ५० है अधिक हो तो पूर्णबली। बालबल ११० है, अधिक हो तो पूर्णबली (६० से भाग देने पर १।५० होता है) अपन बल ३० है। इसी प्रकार शुक्र, चन्द्रमा के क्रमज १३३ (२।१३) ५०।३०।४०।४० है। और मंगल, शनि के क्रमज ९६ (१।३६) ३०।४०।६७ (१।७) २० ये पूर्ण बलाक हैं।

अथ भावषड्वलचक्रम्

| त० | ध० | स० | मु० | मु० | रि० | जा० | मृ० | घ० | क० | आ० | व्य० | नाम |
|--------------------|-------------------|---------------------|---------------------|--------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|---------------------|--------------------|---------------------|-----------------------|
| ८ ४ २० | ६ ४५ ३० | ८ ४४ २८ | ४ ४९ ४७ | ९ ४९ १४ | ८ ४४ २८ | ६ ४५ ३० | ८ ४ २० | ८ ३२ २१ | ७ ३५ ३० | ७ ३५ ३० | ८ ३२ २१ | भाव- स्वाभि- बल |
| ० २८ २५ | ० १८ ५७ | ० ४१ ३ | ० २८ २५ | ० १० ३१ | ० १० ३१ | ० ० ० | ० ५० ३१ | ० १८ ५६ | ० ० ० | ० ३८ ५६ | ० ११ ३ | दिग्बल |
| ८ ३२ ४५ | ७ ४ २७ | ९ २८ ४१ | ५ २८ १२ | ९ ५१ ४५ | ८ ५४ ५९ | ६ ४५ ३० | ८ ३२ ४५ | ८ ५१ १७ | ७ ३५ ३० | ८ १४ २६ | ८ ४३ २४ | योगबल |
| ० ६ ५३ ध० | ० ७ ० ध० | ० १४ १० ध० | ० १३ ५९ ध० | ० ० ३ शु० | ० १० ५३ ध० | ० ३ २३ शु० | ० २ ५८ शु० | ० २ ३३ शु० | ० ९ २९ शु० | ० ० १५ ध० | ० ३ १९ शु० | वृग्बल |
| ९ २९ ३८ | ७ ११ २७ | ९ ३९ ४१ | ५ ४२ ११ | ९ ५१ ४२ | ९ ५ ५२ | ६ ४२ ७ | ९ २९ ३८ | ८ ४८ ४४ | ७ ३३ १ | ८ १४ ४१ | ८ ४६ ४३ | घ० योगबल श० |
| ० ५० ४१ | १ ६ ५२ | १ १ १८ | १ १० १० | १ २७ १९ | ० ५४ ९ | १ १२ २८ | ० ३४ ४९ | ० ६ २३ | ० ० ० | ० ० ० | ० ४८ ४३ | जेन्मपु- बल |
| १० २० १९ | ८ १८ १९ | १० ४० ५९ | ६ ५२ २१ | ११ १५ १ | १० ० १ | ७ ५४ ३५ | १० २० १९ | ६ ५५ ७ | ७ ३३ १ | ८ १४ १४ | ९ ३० २८ | पद्मलीक्य |

| अथ चेष्टारश्मिवक्तम् | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| २ | २ | ३ | २ | ६ | ४ | ६ | २८ |
| ५२ | १७ | ८ | ४३ | २७ | ४९ | १४ | २३ |
| ३० | ३० | ४० | ५४ | ३८ | १४ | ३० | ५६ |

उच्चरश्मिवल-जिस ग्रह का उच्चरश्मि बल स्पष्ट करना हो उसके राश्यादि स्पष्ट में से उसकी नीचराशि अश घटाना, शेष अंक ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में से घटाना, बाद राशि में १ जोड़ना और अशादि द्विगुण करना (अश कलादि में ३०-६० का भाग देकर यथास्थित करना) तो 'उच्चराशि' स्पष्ट होती है॥१॥ चेष्टारश्मि बल-चेष्टारश्मि साधन के लिए प्रथम चेष्टाकेन्द्र कहते हैं। स्पष्टसूर्य को सायन करके ३ राशि जोड़ने से सूर्य का 'चेष्टाकेन्द्र' होता है। सूर्य में चन्द्रस्पष्ट घटाने से चन्द्रमा का चेष्टा केन्द्र होता है। मंगल आदि ५ ग्रहों का चेष्टाकेन्द्र पहिले कहा गया है॥२॥

उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मि द्वयोर्बुते ॥ दल तु शुभरश्मि स्यादष्टम्यो वर्जितोऽशुभः ॥३॥
उच्चचेष्टाकरी व्येकौ दिग्भिर्हत्वा तु योजयेत्॥ दलवेदिष्टमन्यत्स्यात्पठिन्म्यो वर्जित फलम्॥४॥

| अथ इष्टवक्तम् | | | | | | | | अथ कष्टवक्तम् | | | | | | | |
|---------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|---------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | यो० | सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| २८ | १५ | ३० | १९ | ३४ | ४५ | ४३ | २१६ | ३१ | ४४ | २९ | ४० | २५ | १४ | १६ | २०२ |
| ५४ | १२ | ५२ | २३ | ४ | ४८ | १९ | ५६ | ३५ | ४७ | ७ | ३६ | ५५ | ११ | ४० | ५३ |
| ५० | २० | ५० | ५० | ४० | ३० | ४० | ४० | १० | ४० | १० | ४० | १० | ३० | २० | १० |

चेष्टारश्मि, शुभरश्मि, अशुभरश्मि स्पष्टीकरण-चेष्टाकेन्द्र से चेष्टारश्मि साधन करने का प्रकार उच्च रश्मि की तरह ही जानना। इस प्रकार स्पष्ट की हुई चेष्टा रश्मि और उच्च रश्मि दोनों को जोड़कर आधा करना तो शुभ रश्मि होती है। और ८ में घटाने से अशुभ रश्मि होती है॥३॥

इष्ट बल और कष्ट बल-उच्च रश्मि में १ घटाना, बाद १० से गुणा करना तथा चेष्टा रश्मि में भी १ घटाकर दस से गुणा करना, बाद दोनों को जोड़कर आधा करना तो इष्टबल होता है। इसको ६० में घटाने से कष्ट बल होता है॥४॥

स्वोच्चे भूतश्रिकोणे च स्वर्गोऽधिमुहुर्दि क्त्वात् ॥ मित्रर्षौ च समर्षौ च शत्रुमे चातिशत्रुमे ॥ नीचे च पठिरिष्वधि क्षात्रि करकरास्तिथिः ॥ नागा वेदा करो मृत्यु शुभमेतत्फलं विदुः ॥६॥
पठिन्म्यो वर्जिताश्चेते गिष्ट स्यादशुभ फलम् ॥ तवर्धं तु फलं प्रोक्तमन्यवर्णं शुभाशुभम् ॥७॥

त्रिंशत्खवेदाः सप्तांगा नखाश्च यत्नितो विदुः ॥ भावस्यानग्रहैः प्रोक्तयोगे ये योगहेतवः ॥४४॥
 तेषां यतो यः कर्तासौ स एवास्य फलप्रदः ॥ योगव्याप्तेषु बहुषु न्याय एवं प्रकीर्तितः ॥४५॥
 गणितेषु प्रवीणश्चशब्दशास्त्रे कृतभ्रमः ॥ न्यायविद्वद्धिमान् होरास्फंधश्रवणसम्मतः ॥४६॥
 देवदिदेशिको देवसंमतो देशकालवित् ॥ ऊहापोहपटुः प्राज्ञः पटुः स्वजनसंमतः ॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकाया भावप्रद्वलादिवर्णननाम पष्ठोऽध्यायः॥६॥

यदि अनेक ग्रह पूर्णवर्सी हो तो ग्रह के स्वगृही, उच्चराशिस्थ, मूलत्रिकोणस्थादि से विशेष
 बल का निश्चय करना चाहिए॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥
 अधिकारी लक्षण—गणित में कुशल, व्याकरण में व्युत्पन्न न्याय निपुण, साहित्यविज्ञ,
 देवाराधन तत्पर, देशकालज्ञान में चतुर तर्क समर्थ, जनहितैषी, मधुरभाषी दैवज्ञ इस शास्त्र
 के पठन तथा फलादेश कहने में समर्थ होता है॥४६॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकाया भावप्रद्वलादिवर्णननाम पष्ठोऽध्यायः॥६॥

अथ रश्मीष्टकष्टवर्णनग्रह

नीचोनं तु ग्रहं भार्गविक्ये चक्राद्विशोधयेत् ॥ उच्चरश्मिर्भवेदांशः सैको द्विजांशसंप्रभुतः ॥१॥

| अयोज्यरश्मिचक्रम् | | | | | | | |
|-------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | दु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| ४ | २ | ५ | ३ | २ | ६ | ४ | २८ |
| ४८ | ४४ | १ | ८ | २१ | २० | २३ | ४९ |
| २८ | ५८ | ५२ | ५२ | १८ | २८ | २६ | २२ |

सायनागार्क इदुश्च सत्रिमो भानुवर्जितः ॥ चेष्टाकेंद्रः कुजादीनां पूर्वाध्याये समीरितम् ॥२॥

| अथ शुभरश्मिचक्रम् | | | | | | | | अथशुभरश्मिचक्रम् | | | | | | | |
|-------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | दु० | गु० | शु० | श० | यो० | सू० | च० | म० | दु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| ३ | २ | ४ | २ | ४ | ५ | ५ | २८ | ८ | ५ | ३ | ५ | ३ | २ | २ | २६ |
| ५० | १ | ५ | ५६ | २४ | ३४ | १८ | ४१ | ९ | २८ | ५४ | ३ | ५ | २५ | ११ | १८ |
| २० | १४ | १६ | २३ | २८ | ५१ | ५८ | ३९ | ३१ | ४६ | ४४ | ३७ | ३२ | ९ | २ | २१ |

| अथ चेष्टारश्मिवक्रम् | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | दु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| २ | २ | ३ | २ | ६ | ४ | ६ | २८ |
| ५२ | १७ | ८ | ४३ | २७ | ४९ | १४ | २३ |
| ३० | ३० | ४० | ५४ | ३८ | १४ | ३० | ५६ |

उच्चरश्मिवल-जिस ग्रह का उच्चरश्मि बल स्पष्ट करना हो उसके राश्यादि स्पष्ट में से उसकी नीचराशि अश घटाना, शेष अंक ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में से घटाना, बाद राशि में १ जोड़ना और अशादि द्विगुण करना (अश कलादि में ३०-६० का भाग देकर पथास्थित करना) तो 'उच्चराशि' स्पष्ट होती है॥१॥ चेष्टारश्मि बल-चेष्टारश्मि साधन के लिए प्रथम चेष्टाकेन्द्र कहते हैं। स्पष्टसूर्य को सायन करके ३ राशि जोड़ने से सूर्य का 'चेष्टाकेन्द्र' होता है। सूर्य से चन्द्रस्पष्ट घटाने से चन्द्रमा का चेष्टा केन्द्र होता है। मंगल आदि ५ ग्रहों का चेष्टाकेन्द्र पहले कहा गया है॥२॥

उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मि द्वयोर्भुजैः ॥ दलं तु शुभरश्मिः स्यादष्टम्यो वर्जितोऽशुभः ॥३॥
उच्चचेष्टाकरी व्येकौ विनिर्मुहत्वा तु योजयेत्। दलपेविष्टमन्यत्स्यात्पष्टिम्यो वर्जितं फलम्॥४॥

| अथ इष्टवक्रम् | | | | | | | | अथ कष्टवक्रम् | | | | | | | |
|---------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|---------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | दु० | गु० | शु० | श० | यो० | सू० | च० | म० | दु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| २८ | १५ | ३० | १९ | ३४ | ४९ | ४३ | २१६ | ३१ | ४४ | २९ | ४० | २५ | १४ | १६ | २०२ |
| ५४ | १२ | ५२ | २३ | ४ | ४८ | १९ | ५६ | ३५ | ४७ | ७ | ३६ | ५५ | ११ | ४० | ५३ |
| ५० | २० | ५० | ५० | ४० | ३० | ४० | ४० | १० | ४० | १० | ४० | १० | ३० | २० | १० |

चेष्टारश्मि, शुभरश्मि, अशुभरश्मि स्पाटीकरण-चेष्टाकेन्द्र से चेष्टारश्मि साधन करने का प्रकार उच्च रश्मि की तरह ही जानना। इस प्रकार स्पष्ट की हुई चेष्टा रश्मि और उच्च रश्मि दोनों को जोड़कर आधा करना तो शुभ रश्मि होती है। और ८ में घटाने से अशुभ रश्मि होती है॥३॥

इष्ट बल और कष्ट बल-उच्च रश्मि में १ घटाना, बाद १० से गुणा करना तथा चेष्टा रश्मि में भी १ घटाकर दससे गुणा करना, बाद दोनों को जोड़कर आधा करना तो इष्टबल होता है। इससे ६० में घटाने से कष्ट बल होता है॥४॥

स्वोच्चे मूलत्रिकोणे च स्वर्क्षेऽग्निमुद्दि कमात् ॥ मित्रक्षे च तमक्षे च शत्रुमे चाग्निशत्रुमे ॥ नीचे च पश्चिरिच्छिः क्षाप्रिः करकरास्तिथिः ॥ नागा वेदाः करौ शून्यं शुभमेतत्फलं विदुः ॥५॥
पश्चिम्यो वर्जिताश्रेते शिष्ट स्यादशुभ फलम् ॥ तदर्थं तु फल प्रोक्तमन्यवर्गं शुभाशुभम् ॥७॥

हृत् इष्ट-कष्ट फल-उच्च राशि के ग्रह का बल ६०। मूल त्रिकोण का ४५। स्वराशि का ३०। अतिमित्र का २२। मित्र राशि का १५। समराशि का ८। शत्रुराशि का ४। अतिशत्रु का २। नीच का ०। यह शुभग्रह का इष्ट बल कहा। इस बल को ६० में घटाने से अशुभ या कष्टबल होता है। और होरा, द्रेष्काण, सप्तमाश, नवमाश, द्वादशाश, त्रिंशाश इन वर्गों की राशियों में उच्चादिक ही तो जितना बल कहा है उसका आधा लेना। और पापवर्ग में हो तो पापग्रह का आधा लेना। इसप्रकार शुभवर्ग में हो तो शुभग्रह का आधा और अशुभ वर्ग में हो तो अशुभ ग्रह का आधा बल लेना॥५॥६॥७॥

| अथ अशुभसप्तकवर्गकष्टबलवक्तव्यम् | | | | | | | |
|---------------------------------|----|----|-----|-----|-----|----|----------|
| सू० | च० | म० | बु० | शु० | शु० | श० | पहा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ग्रहः |
| ३० | ४५ | ४५ | ३० | ३० | ४५ | ३० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| २८ | २२ | २२ | २६ | २२ | २२ | २२ | होरा |
| ० | ३० | ३० | ० | ३० | ३० | ३० | |
| १५ | २६ | १२ | २२ | २८ | २२ | १५ | द्रेष्का |
| ० | ० | ० | ३० | ० | ३० | ० | |
| १५ | ० | २२ | २८ | ० | ० | २६ | सप्ता |
| ० | ० | ३० | ० | ० | ० | ० | |
| १९ | १९ | २२ | १८ | १६ | २८ | २२ | नवा |
| ० | ० | ३० | ० | ० | ० | ३० | |
| २२ | ० | १५ | ० | २६ | ० | १९ | द्वाद |
| ३० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| १९ | ० | १९ | २८ | २२ | २८ | २८ | त्रिंशा |
| ० | ० | ० | ० | ३० | ० | ० | |

| अथ शुभसप्तकवर्गइष्टबलवक्तव्यम् | | | | | | | |
|--------------------------------|----|----|-----|-----|-----|----|----------|
| सू० | च० | म० | बु० | शु० | शु० | श० | पहा |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | ग्रह |
| ३० | १५ | १५ | ३० | ३० | १५ | ३० | |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ३ | ७ | ४ | ७ | ७ | ७ | ७ | होरा |
| ० | ३० | ० | ३० | ३० | ३० | ३० | |
| १५ | ४ | ११ | ७ | २ | ७ | १५ | द्रेष्का |
| ० | ० | ० | ३० | ० | ३० | ० | |
| १५ | ३० | ७ | २ | ३० | ३० | ४ | सप्ता |
| ० | ० | ३० | ० | ० | ० | ० | |
| ११ | ११ | ७ | ११ | १५ | २ | ७ | नवा |
| ० | ० | ३० | ० | ० | ० | ३० | |
| ७ | ३० | १५ | ३० | ४ | ३० | ११ | द्वाद |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | |
| ११ | ३० | ११ | २ | ७ | २ | २ | त्रिंशा |
| ० | ० | ० | ३० | ० | ० | ० | |

पचस्विष्टफल चादौ षष्ठं सममुदाहृतम् ॥ अशुभास्तु त्रयं प्रोक्ता इति शास्त्रेषु निश्चयः ॥८॥
 दिग्बल दिक्फल तस्य तथा दिनफलं भवेत् ॥ तयोः फलं शुभं प्रोक्तं षष्ठ्या वर्ज्यं तथेतरत् ॥९॥
 शुभादिके शुभं नेष्टमशुभे चादिके शुभात् ॥ बलैरेव हते स्याता दृष्टिं हन्यात्स्फुटैव सा ॥१०॥ बलं
 षड्भिः समेधित्वा समानोतं पृथक् पृथक् ॥ बलिनश्चोक्तसंज्ञैश्च बलैरेव हरेत्ततः ॥११॥
 ततद्वत्फलानि स्युरशुभानि शुभानि च ॥ शुभयापक्तान्या च दृष्टिं हन्याद्वनं तथा ॥१२॥

प्रथम जो उच्चादि ९ प्रकार का बल कहा है उसमें इतना विशेष जानना कि उच्च, मूलत्रिकोण, स्वगृह, मित्रक्षेत्र, अतिमित्र क्षेत्र, इन ५ स्थानों के ग्रहों का बल शुभ होता है। और सम क्षेत्री ग्रह का बल सम एव नीच शत्रु अति शत्रु राशिगत ग्रह का बल अशुभ जानना ॥८॥

दिग्बल आदि से बृहत् इष्ट-कष्ट बल लाने का प्रकार—

दिग्बल का दशम भाग लेकर फल स्पष्ट करना। इसी तरह दिग्बल का १५ में भाग लेकर फल लेना। दोनों को जोड़ने से जो अंक आये वही इष्ट बल होता है। ६० में घटाने से कष्टबल होता है। इनमें शुभ बल अधिक हो तो शुभ एव अशुभ बल अधिक हो तो अशुभ होता है। इष्ट-कष्ट दृष्टि साधन—प्रथम सख्या ४५ श्लोक में जो दृष्ट कष्टबल कहा है उससे दृष्टि को गुणा करने से इष्ट दृष्टि, कष्ट दृष्टि होती है ॥९॥१०॥ प्रथम जो होरा, द्वेष्याण आदि पदबल कहा गया है वह प्रत्येक ग्रह का भिन्न भिन्न जोड़ने से जो अंक होगा उसकी पिण्डक संज्ञा है। पूर्वोक्त इष्ट कष्ट बल से भाग देने से जो फल प्राप्त हो वह बृहत् इष्ट एव बृहत् कष्ट बल होता है। इष्टबल को शुभ तथा कष्ट बल को अशुभ समझना। इस शुभ और अशुभ फलाद् से दृष्टि को गुणा करता और बल को गुणा करना ॥११॥१२॥

दृष्टैश्चशुभपापोत्थे बले स्याता तथैव च ॥ भावानां च फले प्रोक्ते पतीनां च फले उभे ॥१३॥
 सराशिर्गृहयुक्तश्चेद्भावसाधनसगुणे ॥ फले तस्य शुभे युज्यावाशुभे वर्जयेच्छुभे ॥१४॥
 पापश्चेदन्यथा चैव बले दृष्ट्या च तैः तु ॥ युज्यादुच्चाविषु फलममित्रादिषु वर्जयेत् ॥१५॥

जो फल प्राप्त हो वह दृष्टि का और बल का शुभ तथा अशुभ फल होता है। प्रथम जो ग्रहबल और भाव बल कहा है उसमें जो भाव जिस ग्रह से युक्त हो उस ग्रह वी राशि बल स भाव के बल को गुणा करना। यदि शुभ बल हो तो गुणन फल जोड़ना अशुभ फल हो तो घटाना। बल के फल में बिपरीत करना। पाप हो तो युक्त करना और शुभ हो तो हीन करना। दृष्टि बल में भी यही क्रिया करना। अर्थात् फल उच्चादिव का हो तो युक्त करना शत्रु आदि का हो तो हीन करना ॥१३॥१४॥१५॥

स्थाने चैव क्रमात्प्रोक्तं करणे चाप्यथा क्रमः ॥ राशिद्वयगते भावे तत्राश्वघ्निते क्रिया ॥१६॥ स्थानाधिकस्तु भावेन नामभावं प्रकीर्तितं ॥ तत्समाने च तद्भावे तदानीं स्थानदान् ग्रहान् ॥१७॥ सत्येव स्थानसख्याया बलमेतत्समं भवेत् ॥१८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे इष्टकष्टवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अष्टक वर्ग में जो रेखा का फल कहा है बिन्दु में उससे विपरीत जानना। और भावों में जो ग्रह सधिगत हों उस भाव की राशि को ग्रह के बल में जोड़ने से स्थान बल के समान हो तो लाभदायक होता है और आघात करने से यह फल स्पष्ट होता है।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० इष्ट कष्ट
वर्णन नाम सप्तमोऽध्याय ॥७॥

अथ रश्मिफलवर्णनाध्याय

विधातृलिखिता या सा ललाटक्षरमालिका ॥ तस्या शरीरकथनं ब्रूयामि च पृथक्पृथक् ॥
लप्लाच्छरीरचिन्ता च द्वितीयात्स्व च पैतृकम् ॥ भरणीय कुटुम्ब च पञ्चादि च वदेद्बुध ॥२॥
तृतीयात्सोदर बुद्धि दुःपूर्वा विक्रम विदुः ॥ चतुर्थीत्यन्तर वेश्म मुख लालित्यमेव च ॥३॥
सौमनस्यमपत्यानि प्रज्ञा मेधा च पञ्चमात् ॥ हानि व्याधिमरि षष्ठान्मैश्वर्यं स्त्री जय
ततः ॥४॥

रश्मि फल वर्णन

जातक के ललाट में विधाता की लिखी हुई प्रारब्ध भोग की जो अक्षर माला है वह प्रत्यक्ष नहीं देखी जा सकती। अतः उसके ज्ञान के लिये लग्न आदि १२ भावों का फल कहा जाता है। लग्न से शरीर के मुख दुःख का विचार करना। धन भाव से स्वोपार्जित धन का तथा पितृधन संवत् परिवार पशु स्त्री आदि का विचार करना ॥१॥२॥ तीसरे भाव से भ्रातृवर्ग दुष्ट बुद्धि और पराक्रमका विचार। चौथे भाव से भक्त भूमि मुख सुन्दरता तथा पिताका विचार पंचम भाव से मन की प्रसन्नता पुत्रादिका का सद्विचार का स्मृति शक्ति का विचार। छठे भाव से हानि रोग और शत्रु का विचार। सप्तम भाव में भार्या का भार्या मुग का जय का विचार करना ॥३॥४॥

मृति पराजय दुःख हानि व्याधि तथाष्टमात् ॥ सौशील्यभाग्य धर्माश्च नवमाद्गमात्तथा ॥५॥
मानास्त्रादाज्ञाकर्माणि आयुर्दण्य व्ययद्विषयम् ॥ दिग्भवेज्जिगुसप्तप्राष्टशरा स्वोच्छेदरा रवे
॥६॥ नीचे न चातरा प्रोक्ता रश्मयस्त्वनुपातजा ॥ नीचोन तु ग्रह भार्याधिके चक्राद्विशो-
धयेत् ॥७॥

| अथ रश्मिचक्रम् | | | | | | | |
|----------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | शु० | शु० | श० | धो० |
| ५ | २ | ३ | १ | १ | ६ | २ | २४ |
| ४० | ३१ | ४५ | ४३ | २२ | ५३ | २६ | २३ |
| २३ | १२ | ४६ | ४१ | २५ | ३८ | २६ | ३० |

| अ० न० मा० मू० त्रिकोणरश्मि चक्रम् | | | | | | | |
|-----------------------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| १३ | ० | ८ | ५ | २ | ० | ५ | ३३ |
| १४ | ० | २ | १० | ५६ | ० | १३ | ३८ |
| १३ | ० | ४७ | ४३ | ३६ | ० | ४७ | ६ |

| अथ द्रष्टाणरश्मिचक्रम् | | | | | | | |
|------------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| ० | ५ | ११ | ४ | ० | ० | ० | २१ |
| ० | ५९ | १७ | १० | ० | ० | ० | २७ |
| ० | ३० | १८ | २२ | ० | ० | ० | १० |

| अथ होरारश्मिचक्रम् | | | | | | | |
|--------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| १७ | ७ | ८ | ० | ० | ० | ० | ३४ |
| १ | ३३ | ४६ | ० | ० | ० | ० | २१ |
| १ | ३९ | ४७ | ० | ० | ० | ० | ३५ |

| अथ त्रिंशत्शरश्मिचक्रम् | | | | | | | |
|-------------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | यो० |
| ० | ५ | ११ | ० | ६ | ० | ० | २२ |
| ० | २४ | १७ | ० | ५२ | ० | ० | ३३ |
| ० | २ | १८ | ० | ५ | ० | ० | २५ |

अरावध्परिनीचे च वेदद्वयसितहीनकाः ॥ उच्चै च त्रिगुणं प्रोक्तं स्वत्रिकोणे द्विसंगुणम् ॥११॥ स्वर्गे त्रिधा द्विसंभक्तास्त्वधिमित्रगृहेषि च ॥ वेदघ्ना रामसंभक्ता मित्रमे वदगुणास्ततः ॥१२॥ पंच भक्तास्तथा शत्रुगृहे द्विधाश्रतुर्हताः ॥ अतिरात्रोः करघ्नाश्च पंचभक्ता न नीचमे ॥१३॥

मित्रराशिमे ५/६ शत्रुराशिमे २/४ अतिशत्रुमे २/५ भाग। यहा ऊपर का अक गुण और नीचे का अक भाग का द्योतक है॥

उक्त रश्मि स्पष्ट मे अन्य विशेष सस्कार—

अशपति उच्च वर्ग मे हो तो प्राप्त रश्मि बलको ३ से गुणा करना। तथा रश्मिपति त्रिकोण मे हो तो पूर्वरश्मि को द्विगुणित करना। यदि अतिमित्र वर्ग मे हो तो चतुर्गुणित कर तीन का भाग देना तो रश्मि स्पष्ट होती है। इसी प्रकार मित्रगृह मे हो तो छ से गुणा कर ५ का भाग देना। शत्रु राशि मे हो तो दो से गुणा कर चार का भाग देना। अतिशत्रु के वर्ग मे हो तो दो से गुणा कर पाचका भाग देना तथा नीचवर्ग मे हो तो कोई विशेष सस्कार नहीं करना। सङ्क्षेप—उच्च मे ३। मूल त्रिकोण मे X २। अतिमित्र मे ३/४ ॥११-१३॥

शनि सित विना ताराग्रहा अस्तगता यदि ॥ विरश्मयो भवत्येव वक्रादौ द्विगुणास्ततः ॥१४॥ अनुपातोऽन्तरे वक्र त्यागेऽष्टांशविहीनकाः ॥ मदायां दशमागोना वस्वशोनाः कराः स्मृताः ॥१५॥ तथा शीघ्रतरायां च वेदाशोनाः कराः स्मृताः ॥ अपांशोनाश्च शीघ्रायां केचिदेव वदन्ति हि ॥१६॥

| अथ मतान्तररश्मिचक्रम् | | | | | | | |
|-----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| मू० | च० | म० | बु० | शु० | गु० | श० | यो० |
| ० | ३ | ५ | ० | १ | २० | ३ | ३४ |
| ० | १ | १ | ५१ | ३८ | ४० | ३९ | ५१ |
| ० | २७ | १ | ५१ | ५४ | ५४ | ३९ | ४६ |

वक्रानुवक्रा विकला शीघ्रा शीघ्रतरा गतिः ॥वृद्धिहीने तु शिष्टे द्वे बर्जनीये समासमा ॥१७॥

मतान्तर से हानि वृद्धि—

म०, बु० गु० अस्त हो तो रश्मि बलहीन होते है, किन्तु शुक्र, शनि रश्मिबल हीन नहीं होते एवं रश्मिपति वक्रारभ मे हो तो रश्मिबल द्विगुण होगा। वक्रान मे अष्टमाणा मध्य मे त्रैराशिकमे स्पष्ट करना। रश्मिपति मव हो तो दशमाश हीन होता है। अतिमन्द हो तो अष्टमाश हीन। शीघ्रगति पष्ठमाश हीन। शीघ्रतर हो तो चतुर्माश हीन करना॥१४॥१५॥१६॥

ग्रह-गति के आठ भेद—

वक्र, अनुवक्र, विकल, शीघ्र, शीघ्रतर मन्द, मन्दतर, सम ये आठ प्रकार की ग्रहो की गति होती है। इनमें दो गति वर्ज्य है, क्योंकि-शीघ्रतर गति वृद्धि हीन होने से मन्द और शीघ्रगति वृद्धिहीन होने से मन्दतर कही जा सकती है॥१७॥

योगेषु ये ग्रहाः प्रोक्तास्तेषां योगे च रश्मयः ॥ पापसौम्यारिमित्राणां योगे हानिश्च कीर्तिता ॥१८॥ उच्चादिषु च पूर्वोक्तं पापो बलवशाद्भवेत् ॥१९॥ चतुर्गुणा राजयोगे पूर्वव्यायेन बोधिता ॥ पचाष्टपञ्चवाष्टाकवेदा स्तू रश्मयः स्वका ॥२०॥ द्विग्रहादिषु योगेषु ग्रहभावफलाहता ॥ गतिसंज्ञानुदयेण फलानां निर्णयः स्मृतः ॥२१॥ इष्टकष्टफलसंगुणा-स्तत्तत्तत्करानयच संपुतास्तुतान् ॥ निश्चितार्थमखिलं समीक्ष्य तत्प्रस्तुतं तु सर्वसं वदेद्युध ॥२२॥

राजयोग, दरिद्रयोग वारक आदि में विशेष संस्कार—

राजयोग वारक तथा दरिद्रयोग वारक ग्रहों का यदि एक राशि में सम्बन्ध हो तो दरिद्रयोग वारक ग्रह की रश्मि राजयोग वारक ग्रह में पडाना, जो बायीं रहे तो राजयोगवारक की रश्मि होती है॥१८॥

उच्चादिस्थानगत रश्मिनिर्णय—

शुभग्रहों की उच्चादि स्थानगत रश्मि मघावत् रसना किन्तु पापग्रहों की रश्मि में बमोवेशी बनावल के अनुसार होती है॥१९॥ प्रथम बहे गये (श्लोक म० ६७ में) राजयोग के सम्भारों में प्राप्त रश्मि में विशेष संस्कार

यदि राजयोग वारक ग्रह हो तो सूर्य के ५, चन्द्र के ८, भीम के ६, बुध के ७, गुरु के ८, शुक्र के ९, शनि के ४ इन भुजाओं में पूर्व बधित गति में रश्मि स्पष्ट बरने चतुर्गुणित बना में रश्मि स्पष्ट होती है॥२०॥ जो योग दो तीन या चार आदि ग्रहों में होता है वही उन ग्रहों की रश्मियों में भावांक गुणा बरने ६० का भाग देना जो खलि प्राप्त हो वह पत्र होगा। आगे कहा गया रश्मि का पत्र गति के अनुसार बहना चाहिए॥२१॥

इष्ट, कष्ट बल का गुणन में उपयोग—

इष्टपत्र और कष्ट पत्र में रश्मि को गुणा बरने परम्पर गुण बरने उस पत्र के अनुसार आगे बहा गया इष्ट या अनिष्ट पत्र बहना चाहिए॥२२॥

एवमिदं पञ्चर भावहरिदं भृगुदुर्गता ॥ नीचानां दानतां याता अविज्ञानां कृतोत्तमे ॥२३॥

| अथ इष्टबलचक्रमाह | | | | | | | |
|------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | रू० | दू० | दु० | ग० | ले० |
| २ | ० | १ | ० | ० | ५ | १ | १४ |
| ४१ | ३८ | ५६ | ३३ | ४६ | १७ | ५५ | ३७ |
| १२ | १८ | १२ | ११ | ४७ | ४४ | ४३ | २७ |

| अथ कष्टबलरश्मिचक्रम् | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|-----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | रा० | यो० |
| २ | १ | ४ | १ | ० | १ | ० | १० |
| ५९ | ५२ | ४९ | १० | ३५ | ३७ | ४० | ४५ |
| १० | ५१ | २३ | ९ | ३६ | ४७ | ४० | ४६ |

परतो दशके यावत्केवल जठराद्य वै ॥ निःस्वाः कदाचिदासाश्च भारवाहाः कदाचन ॥
स्त्रीपुत्रगृहहोनाश्च वशायोग्यक्रियारताः ॥२४॥ एकादशोऽल्पपुत्राः स्वल्पधनाः स्त्रीविमानिता
मनुजाः ॥ बिभ्रति कृच्छ्रेण निज स्वल्पं च कुटुबमेव तदा ॥२५॥ द्वादशे निर्धना मूर्खा धूर्ताः
सत्त्वविनाशकाः ॥ त्रयोदशे च चोराः स्पृन्धिनाः कुलपांसनाः ॥२६॥

रश्मिफल कथन—

रश्मि सख्या १ से ५ तक हो तो जातक दरिद्र तथा महादुखी रहता है। उत्तमकुल में जन्म होने पर भी नीच आदमी का नौकर ही होता है ॥२३॥ और ५ से '१०' रश्मि तक रश्मियोग हो तो केवल उदर भरणयोग्य ही रहता है कभी दरिद्री, कभी दास, कभी भारवाही तथा कुल को अपकीर्ति कारक कार्यरत रहता है ॥२४॥ यदि रश्मियोग '११' हो तो कम पुत्रवाला साधारण आमदनीवाला, और सम्पत्तिरहित, अपने परिवार के भरण पोषण में भी असमर्थ रहता है ॥२५॥ यदि रश्मियोग '१२' हो तो मनुष्य, निर्धन, मूर्ख, धूर्त, असत्यभाषी होता है। '१३' रश्मियोग हो तो चोर, दरिद्री तथा कुलहीन होता है ॥२६॥

विद्वांश्चतुर्दशे धर्म रतो मर्षी धनार्जकः। कुटुबभरणे सक्तः कुलयोग्यक्रियो भवेत् ॥२७॥
रश्मिभिः पंचदशभिरेवं गुणपुतोऽपि सन् ॥ स्ववंशमुख्यो धनवानित्याह भगवान्मुनिः ॥२८॥
आविंशतेः कुलेशाना बहुभृत्याः कुटुबिनः ॥ कीर्तिमत्तश्च पूर्णाश्च स्वजनेन च घोडरा ॥२९॥
एकविंशतिबिख्यातः पंचाशन्जनपोषकः ॥ दामशीलः कृपायुक्तो द्वाविंशे लोभसंयुतः ॥३०॥
धनवानल्परिपुश्च प्रभुः स्वल्पगुणी भवेत् ॥ त्रयोविंशे तु मुख्यश्च विद्याहीनो धनी मुनी ॥३१॥
आत्रिशत्परतः श्रीमान्सर्वसत्त्वतमन्वितः ॥ राजप्रियश्च चंडश्च जनश्च बहुभिर्दत्तः ॥३२॥

योग '१४' हो तो धर्मात्मा, शान्तस्वभाव, उद्यमी, कुटुम्बपालक, तथा उच्चित् धर्म करनेवाला होता है ॥२७॥ '१५' योग हो तो धर्मात्मा, ज्ञान्, उद्यमी, परिवार पालन में समर्थ, धनी तथा कुल मुख्य होता है ॥२८॥ १६ से २० तक रश्मि योग हो तो परिवार पोषण समर्थ कीर्तिमान, धनी, प्रसिद्ध होता है ॥२९॥ रश्मि योग '२१' हो तो ५० मनुष्यों तक का पालन करनेवाला, दानी, दयावान् होता है। '२२' योग हो तो लोभी, धनी, गृहहीन, समर्थ तथा अल्पगुणी होता है ॥३०॥ रश्मियोग २३ हो तो विद्याहीन होने पर भी समाज में आदरणीय, धनी तथा सुखी होता है ॥३१॥ २४ से ३० तक रश्मियोग हो तो धन, ऐश्वर्यवान्, सर्वज्ञ सम्पन्न, राजप्रिय, प्रतापी तथा समाज सेवित होता है ॥३२॥

एकत्रिंशे च सच्चिवो द्वात्रिंशे वाहिनीपति ॥ पूर्वभागे समुद्दिष्टफलानि परतो विदुः ॥३३॥
 पक्ति सूर्या तिथिनृपात्यष्टिधृतिश्च विशति ॥ नखा भूर्च्छा जिनास्तत्त्व त्रिशद्वात्रिशदेव च
 ॥३४॥ पचाशच्चैव षष्टिश्च शत चैव मुतादय ॥ आरभ्य विश्वसख्याया क्रमात्स्वजनपोषका
 ॥३५॥ अत ऊर्ध्वं नृपे श्रात आपचत्रिशत क्रमात् ॥ शतपचक्रमारभ्य सहस्रावधि पोषक
 ॥३६॥ अत ऊर्ध्वं तु देशाना सख्या स्युः पचविशति ॥ षड्विंशतिश्च भानि स्युस्त्रिशत्
 षट्त्रिशदेव च ॥३७॥

रश्मियोग ३१ हो तो प्रधान मन्त्री तथा ३२ हो तो सेनापति होता है। इससे अधिक
रश्मियोग का फल पूर्वखण्ड में कहा है ॥३३॥

रश्मियोग के अनुसार सन्तान सख्या का विचार—

३३ रश्मियोग हो तो १० पुत्र हो। इसी प्रकार ३४ योग से १२। ३५ से १५। ३६ से १६।
 ३७ से १६। ३८ से १७। ३९ से १८। ४० से १८। ४१ से २०। ४२ से २१। ४३ से २४। ४४ से
 २५। ४५ से ३०। ४६ से ३२। ४७ से ५०। ४८ से ६०। ४९ से १०० से सन्तान होती है। १००
 से ऊपर सख्या कही नहीं गई है तथापि ५० या ५० से अधिक रश्मियोग हो तो सन्तान भी
 १०० से अधिक समझना चाहिए ॥३४॥३५॥

रश्मि के प्रमाण से बहुजन पोषक योग—

३२ रश्मि के योग से ४५ मनुष्यों तक पोषक होता है। ३५ रश्मियों से ५०० से १०००
 मनुष्यों तक का पोषण करनेवाला होता है ॥३६॥

रश्मियोग से देशाधिपतित्व विचार—

३६ रश्मि योग हो तो २५ गावों का अधिपति हो। ३७ रश्मि योग हो तो २६ गावों का
 अधिपति हो। इसी प्रकार ३८ योग से २७ गाव ३९ योग से ३० गाव, ४० रश्मियोग से ३६
 गावों का अधिपति होता है ॥३७॥

अत ऊर्ध्वं नृपा सात्रधर्मिणः सत्रियोज्य वा ॥ भूद्विष्यन्धीषु षट्सप्तभूमृज्जनपदाधिया
 ॥३८॥ पचाशद्रश्मिसंयोगे सत्राट् स्यादनुपातत ॥ अत ऊर्ध्वं तु देवेन्द्रतुल्या स्युरिति पञ्चमू
 ॥३९॥ उच्चचैष्टोत्थयोगार्धगुणिता षष्टिभाजिता ॥ नरादीनां तु सख्या स्युः स्पष्टा
 इत्याह पञ्चमू ॥४०॥ सूत्रादयः वली राजधर्मिणो म्लेच्छधर्मिणः ॥ विप्राश्चेष्टीधर्मेयुता
 यत्तकर्मक्रियारता ॥४१॥

४१ रश्मि योग से एक देश का राज्या ४२ रश्मियोग से २ देशों का राज्या ४३ से ३ देशों का।
 ४४ से ४ देशों का। ४५ से ५ देशों का। ४६ से ६ देशों का। ४७ रश्मियोग से ७ देशों का राज्य
 करनेवाला होता है ॥३८॥ ५० रश्मियोग से सार्वभौम राजा। इसी प्रकार ४८ और ४९ रश्मि योग
 हो तो ७ देश और सार्वभौम के मध्य में जानना। ५० में ऊपर रश्मियोग हो तो इन्द्र के समान
 विभूतिवाला होता है ॥३९॥ अब रश्मि सम्बन्ध में विशेष पत्र कहा जाता है। उच्च रश्मि और
 चेष्टा रश्मि दोनों का योग करना उसे दो जगह रखना। एक जगह आधा करना उस आधे नियम
 अङ्गुले दूसरे जगह रमे हुए योगको गोमूत्रिका न्याय से गुणा करना। बाद ६० का भाग देना। नक्षत्र
 जो अङ्गु हो उतनी ही सख्या के नीचे चाकर गी घोड़े आदि होंगे ऐसा जानना ॥४०॥ पूर्व वर

राजयोग कलियुगमे धर्महीन क्षत्री आदिक के लिये जानना। यदि वे राजयोग ब्राह्मण के हो तो उनके प्रताप से यज्ञ याग आदि कर्मनिष्ठ होकर विद्वान् और सुखी होगा। और ज्ञान तथा पुण्य के प्रताप से अन्त में स्वर्ग राज्य भोगनेवाला होगा ऐसा जानना॥४१॥

योगरश्मिसमायोगे तदानीं तत्कल विदुः ॥ नामसादिषु योगेषु राजयोगे स्थित तु तत् ॥४२॥
योगकर्तारमारभ्य बलिन च विनिर्णयेत् ॥ पुर्य भागे समुद्दिष्टभाग्यकर्मफलानि तु ॥४३॥
अनुपातेन विज्ञाय धोजपेद्वर्जपेद्वुधः॥ स्थानबीमादिके देशे मुख्यः स्यादनुपाततः ॥४४॥
दिग्बले विजयश्चेष्टा वीर्ये तु प्रभुता भवेत् ॥ कालवीर्याधिके कार्ये सदोत्साही तयायने ॥४५॥

जो रश्मियोग का फल कहा गया है वह फल राजयोग सहित रश्मि योग हो तो राज्य फलदायक होगा, ऐसा समझना चाहिए। और नाभस आदिक जो योग है उनमें भी रश्मियोग होने से यथार्थ फल प्राप्त होगा॥४२॥ प्रथम भाग में भाग्य और कर्मभाव का जो फल कहा गया है वह फल रश्मियोग के अनुपात से न्यूनाधिक शुभाशुभ समझना चाहिए॥४३॥

सप्तबल विचार—

स्थान बल १, दिग्बल २, चेष्टाबल ३, कालबल ४, अयन बल ५, उच्चबल ६, नैसर्गिक बल ७ ये सात बल होते हैं। इनका फल—स्थान बल अधिक हो तो देश में मुख्य पुरुष हो। दिग्बल अधिक हो तो विजयी हो। चेष्टाबल अधिक हो तो नेता हो। कालबल अधिक हो तो सर्वकार्य में चतुर हो। अयन बल अधिक हो तो जीवन भर सुखी रहे॥४४॥४५॥

स्ववंशोत्कर्षता स्वोच्चे नैसर्गे जातिनिर्णयः ॥ राशीनां च ग्रहाणां च स्वभावाः कथिता मया ॥४६॥ ये चात्र योजनीयाश्च दैवजेन मुमुक्षिता ॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे रश्मीष्टकष्टादिशासने

अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

उच्चबल अधिक होने तो अपने बशमें मुख्य हो। नैसर्गिक बल अधिक हो तो स्वजाति धर्म का व्याख्याता हो॥४६॥

इस प्रकार भाव और ग्रहों का फल बहा गया। जहां जैसा उचित हो वहां वैसे फल का निर्देश करे॥४७॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्रका० रश्मि, इष्ट, कष्टादि
वर्णन नाम अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

अथ लोकयात्रावर्णनाह

मूलस्थानाधिके स्थाने स भावः शुभ इष्यते ॥ न्यूनैः शुभः समे मातृपितृवंधून्वदिष्यते ॥१॥

स्ववेदम धर्मकर्मयिलप्रैर्द्युमं पतिं वदेत् ॥ मृतिव्ययारिभिस्तेषां व्ययं हानिं पृथग्बदेत् ॥२॥ ये
योगाः पूर्वभागे तु द्विग्रहाद्या नभादयः ॥ राजयोगादयः सर्वेयथान्यायं प्रयोजयेत् ॥३॥
भरणीयकुटुंबस्य द्वितीयेन शुभाशुभे ॥ अन्येषां चैव भावानां स्वनामसदृशं फलम् ॥४॥ सूर्येण
वेदम स्यानेन पितुर्मृतिपदं वदेत् ॥ चंद्रेण पचमेनैव मातुर्मृतिपदं वदेत् ॥५॥

लोकयात्रा वर्णन

अष्टक वर्ग फल कहा जाता है। जिस ग्रह की रेखा जिस भाव में कही है वहां देखना चाहिए कि
रेखा अधिक हो तो फल शुभ जानना और कम हो तो अशुभ, सम हो तो सम जानना ॥१॥
दूसरा, चौथा, नवा, दशवा, ग्यारहवा और लग्न में ६ भाव अपने स्वभाव से ही श्रेष्ठ है और
उत्तम फल देनेवाले हैं। तथा आठवा, बारहवा ये दोनों भाव हानि तथा खर्च करनेवाले हैं ॥२॥
प्रथम जो नाभस आदि जो राजयोग कहे हैं उनका फल इष्ट, कष्ट, रश्मि तथा अष्टकबल का
बलाबल विचार कर कहना ॥३॥ दूसरे भाव से रेखा और शून्य की न्यूनाधिकता से कुटुम्ब
पोषण का शुभाशुभ देखना। तथा अन्य भावों का फल भी उनके नाम के अनुसार जानना
चाहिए ॥४॥ सूर्य से तथा चतुर्थ भाव से पिता की मृत्यु का विचार करना ॥५॥

सूर्ये चंद्रे सपापे च तयोश्च मरणं भवेत् ॥ तयोर्ंतरलिप्ताश्च शतद्वयविभाजिताः ॥६॥
अब्दादयोऽशुभस्यापि दृष्ट्या संगुणयेत्ततः ॥ षट्पचाविभज्याब्दाद्याश्च तस्मात्पापे ब्रूतोत्तरे
॥७॥ तदामृतिर्भवेन्न्यूनेतद्वलेनैव वर्धयेत् ॥ तदा मृत्युस्तयोर्मृत्युस्याने पापग्रहे सति ॥८॥
तस्याशुभस्य विन्यस्य चाष्टवर्गं ततः क्रमात् ॥ त्रिकोणेकाधिपस्यास्य कुर्वच्छोधनक मुधः
॥९॥ त्रिषु द्वयोर्वा यन्मृणमितरज्ज्वसम भवेत् ॥ एकस्मिन् भवनेशून्यं तत्रिकोणं न
शोधयेत् ॥१०॥

मृत्युकाल निर्णय करने के लिये चतुर्य और पचम भाव तथा सूर्य चन्द्रमा की राशि अथवा
कला करके २०० का भाग देना। लब्धि अथवा सख्या मृत्यु के वर्षों की होती है। यह त्रिया
समबल अवस्था में जानना। यदि न्यूनाधिक बल हो तो भिन्न त्रिया है। न्यूनाधिक बल में सूर्य
चन्द्र से पापग्रह बलवान् हो तो पूर्व प्राप्त फल को पापग्रह की दृष्टि से गुणा करना और ६०
का भाग देना। लब्ध वर्षादिक जानना। पापग्रह अल्पबली हो तो सूर्यचन्द्र बल से गुणा करना
और ६० का भाग देना। लब्ध वर्षादिक होते हैं। और यदि अष्टमभाव में पापग्रह हो तो
उसीसे माता पिता का अष्टि कहना ॥६॥७॥८॥
अष्टक वर्ग के बिन्दु और रेखा में भावफल का निर्णय—

सूर्य, चन्द्र तथा ४५५८ भावस्थित पापग्रह इनका अष्टकवर्ग रसकर त्रिकोणशोधन तथा
एकाधिपत्यशोधन करना ॥९॥ त्रिकोण शोधन में जित् स्थान की मर्याद कम हो वह पटाना
तीन स्थानों में एक स्थान शून्य हो तो शोधन नहीं होता और तीनों स्थान में बराबर मर्याद
हो तो सब स्थान में शून्य रचना ॥१०॥

समत्वे सर्वगोहेषु सर्वं संशोधयेद्बुधः ॥ क्षीणेन सह चान्यस्मिन्शोधयेद्ग्रहवर्जितम् ॥११॥
ग्रहमुक्ते फले हीने ग्रहामावे फलाधिके ॥ अनेन सह चान्यस्मिन्शोधयेद्ग्रहवर्जितम् ॥१२॥

फलाधिके ग्रहयुक्ते चान्यस्मिन्सर्वमुत्सृजेत् ॥ उभयोर्ग्रहतंयुक्ते न सरोध्यः कदाचन ॥१३॥
 उभयोर्ग्रहहीनान्यां समत्वं सकलं त्यजेत् ॥ सग्रहाग्रहसुत्यत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात् ॥१४॥
 एकत्र नास्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र कीर्तितः ॥ कलोरसिहयो राशयोः धृयक् क्षेत्रं धृयक्
 फलम् ॥१५॥

एकाधिपत्य शोधन—

जहाँ एक ग्रह की दो राशि हो वहाँ यह विचार करना होता है। एक राशि में रेखा कम और दूसरी में अधिक हो, और दोनों राशि ग्रह रहित हो तो-रेखाधिक में न्यूनरेखा की सख्या कम करके शेष अंक रखना। न्यून रेखास्थान में शून्य रखना। यदि दोनों राशियों में समान रेखा हो तो दोनों स्थान में शून्य होगा। एक राशि ग्रहयुक्त रेखाधिक हो तो अन्य राशि का फल त्याग करना। दोनों राशि ग्रह युक्त हों तो संशोधन नहीं होता। दोनों राशि ग्रहहीन हों रेखा सम हो तो दोनों स्थान में शून्य होगा। सग्रह राशि ग्रह के समान होने से ग्रहरहित से हीन होती है। एक राशि में रेखा नहीं हो तो दूसरी राशि की सख्या का भी त्याग करना। कर्क मिह राशि में एकाधिपत्य शोधन नहीं होता ॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥

ग्रहयोगेन हानिः स्यात् वर्गणात्पृथक् ततः ॥ सयोज्य सप्तभिर्हत्वा सप्तविंशतिनाजिताः
 ॥१६॥ अब्दादयस्तदा देहनाशः करणदे सति ॥ तस्मिन् पापे ग्रहे तस्मादतिन्येव विधिः स्मृतः
 ॥१७॥ ब्रह्महीनेषु त हन्यात्तान्तिभिः पञ्चभिर्भजेत् ॥ आयुस्तयोः स्यात्स्थानस्य प्रवे चेदशुभे
 सति ॥१८॥ मुनिभक्त यमुद्र स्यान्नैव चेन्नैतयोर्मतिः ॥ वक्ष्यमाणेन विधिना बदेदाह पराशरः
 ॥१९॥ सूर्यादायुः करौ भूपा मनवोर्का नवार्णवाः ॥ वेदालीणि तु लग्नस्य वक्ष्याम्यायुस्तथैव
 तत् ॥२०॥ ।

एकाधिपत्यशोधन के अंको से माता पिता का स्पष्ट मरणकाल जानने की रीति—

मेपादि राशियों में जो अंक एकाधिपत्य शोधन द्वारा प्राप्त हुए हैं सो चतुर्थ भाव से अष्टम भाव के बल को तथा ग्रह बल को मेपादि राशि के वर्गणांको से गुणा करे तथा ग्रह ध्रुवांको से भी गुणा करके अलग २ योग करके फिर दोनों का योग करे पश्चात् ७ से गुणा कर २७ का भाग दे, लब्धांक वर्ष, मास, दिनार्दि अंक माता पिता के अस्पष्ट काल का होगा। या उनकी आयु का अंक समझना। यह रीति कारण (विन्दु) से कही गई है। यदि पापग्रह बनवान् हो तो पूर्वोक्त रीति से निश्चय करना। और पापग्रह बनहीन हो तो ७ से गुणा कर ५ से भाग देना। लब्ध वर्षादिक माता पिता की आयु जानना यदि रेखाग्रद पापग्रह बनवान् हो तो पिण्ड को आठ से गुणा करके ७ का भाग देना, लब्ध सख्या माता पिता की आयु होती है। शून्य गणित से प्राप्त आयु से रेखा गणित वा प्रमाण अधिक हो तो माता पिता को कोई भय नहीं समझना। "एषा भगवान् पराशरजी का मत है ॥१६॥१७॥१८॥१९॥ (कारण का त्रिकोणैकाधिपत्य शोधित चक्र आगे देखें)।

प्रथम सूर्य, चतुर्थ और अष्टमभाव में आयु विचार कथन करके अब सूर्य तथा चतुर्थ भाव से आयु विचार करने के लिए सूर्यादि ग्रहों के क्रमशः २१६॥१४॥१२१॥४॥३॥ तथा अंतिम ध्रुवांक लग्न का जानना ॥२०॥

अथ रवेस्त्रिकोणैकाधिपत्यशोधितकरणचक्रम्

| र०गु० | शु०म० | स० | | | | | | | | च० | श० | बु० |
|-------|-------|-----|-----|-----|----|-----|----|-----|-----|----|----|---------------------------|
| कु० | मौ० | मे० | वृ० | मि० | क० | सि० | क० | तु० | वृ० | घ० | म० | राशयः |
| ३ | ४ | ६ | ५ | ४ | ५ | ५ | १ | २ | ४ | ४ | ५ | मूलभान्ता करणविशेष |
| १ | ० | २ | ४ | २ | १ | १ | ० | ० | ० | ० | ४ | त्रिकोणशोधनेना कशिप्टा |
| १ | ० | ० | ० | ० | १ | १ | ० | ० | ० | ० | ३ | एकाधिपत्यशोध नाकशिप्टा |

स्वोच्चे नीचे तु पात स्याद्वरणादिविधिस्ततः ॥ आयुस्तयो स्याती तस्मिन् भवने तु तथा स्थितौ ॥२१॥ न कश्चित्स्थानद स्याच्चेत्तत्काले च मृतिर्भवेत् ॥ शुभयोगे शुभा प्रोक्ता तयो स्याद्रश्मिसम्भवः ॥२२॥ अष्टभिर्गुण्येत्यङ्गमिर्विभज्यायु पर भवेत् ॥ चेदमनि स्थानदा न स्युर्जन्मकाले स्फुटीकृतः ॥२३॥

यदि ग्रह उच्चराशि का हो तो उक्त ध्रुवाक ही स्पष्ट आयु समझना चाहिए। यदि ग्रह नीच राशि का हो तो नैराश्रिक गणित से स्पष्ट आयु लाना चाहिए ॥२१॥ और यदि कोई ग्रह रेखा दाता नहीं हो तो उसी समय मृत्युकाल जाने। शुभग्रह का सम्बन्ध या योग हो तो उत्तम रीति से और पापग्रह का योग हो तो निकृष्टरीति से मृत्यु जानना ॥२२॥ रश्मि से आयुसाधन सूर्य तथा चतुर्थ भाव की रश्मिको ८ से गुणा करके ६ में भाग देना। लब्ध वर्ष आदि माता पिता की आयु की अवधि समझना ॥२३॥

कलीकृतश्च सततैर्विभज्याम्यादयः क्रमात् ॥ एव शुभाशुभ ब्रूयान्मातापित्रोर्द्विजोत्तमः ॥२४॥ करणस्थानदातारः पापपुण्यफलप्रदाः ॥ पुनश्चोच्चादिषु तथा त्रिगुणादास्तु पूर्ववत् ॥२५॥ शत्रुनीचाधिशात्रूणां स्थानेष्वपि तु पूर्ववत् ॥ राशि हित्वा तु भावानां सर्वत्रैव श्रिया भवेत् ॥२६॥ द्वितीयभावलिप्ताश्च राशिलिप्ता विमाजिताः ॥ स्ववर्गणाहतास्तत्स्वसेटानां वर्गणाहताः ॥२७॥ भावरश्मिभिराह्न्यात्सप्तभिश्च विमाजयेत् ॥ मूलरश्मिसमूहेन शिष्ट ह्न्यात्तथैव तान् ॥२८॥ इष्टानिष्टफलाम्या च हत्वातरमय द्वयोः ॥ सप्तदशरतिभिर्हत्वा सप्तभिश्च विमाजयेत् ॥२९॥

हे द्विजोत्तम! चतुर्थ भाव में रसाग्रद ग्रह नहीं हा तो चतुर्थ भाव स्पष्ट की वला (पत्नी) करके २०० का भाग देना। लब्ध वर्ष मातादि माता पिता का शुभ या अशुभ योग

समझना॥२४॥ सो इस प्रकार समझना कि-शून्यप्रदग्रह पापफल देते हैं और वे ग्रह उच्चादि स्थान में हो तो त्रिगुण, द्विगुण आदि पूर्वोक्त (उच्चे च त्रिगुण प्रोक्त स्वत्रिकोणे द्विसगुणम् इत्यादि) रीति से आयु विचार करना॥२५॥ जहां भाव स्पष्ट से आयु का विचार करना हो वहां भावस्पष्ट को राशि छोड़कर केवल अंशदिक से पूर्व कही रीति से संस्कार करना॥२६॥

मूलकार का ही उदाहरण

यथा द्वितीय भाव की राशि त्यागकर अंशदि की लिप्ता (घटी) की गई। पश्चात् द्वितीय भावराशि की वर्गणा से गुणा किया बाद द्वितीयभावस्थ ग्रह की वर्गणा से गुणा किया, और भाव की रश्मि में गुणा करके ७ से भाग दिया शेष अंक की मूलरश्मि योग से गुणा किया पश्चात् इष्ट, कष्ट फल से गुणा करना (अलग २) बाद दोनों के अन्तर को २७ से गुणा करके ७ का भाग दिया तो भाव द्वितीय का फल (भरणीय कुटुम्बीजनों की) सख्या प्राप्त हुई॥२७॥२८॥२९॥

भरणीयकुटुम्बाना पुस्त्रियस्तत्समा बिदु ॥ राशीन् हित्वा तु तन्नादिभावभागादिकान् पृथक् ॥३०॥ गुणयेद्विभक्तिं स्वैश्च भावभगादयो बिदु ॥ कलीकृत्य मलिप्तार्थिविभज्याप्त फल ततः ॥३१॥ सूर्यभक्तावशिष्टं तु भावाना साधनं बिदु ॥ राशीन् हित्वा ततो लिप्ता खलनेत्रविभाजिता ॥३२॥ साधनमा विभक्ताश्च वर्गणाभि फलहता ॥ उच्चादिवृद्धिहानि च कुर्यात्तत्सख्यका भवेत् ॥३३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेलोकप्रावर्णनं
नाम नवमोऽध्याय ॥९॥

इसी प्रकार राशि त्याग करके लग्न आदि भाव के अलग २ अंशदि को भावस्वामी की रश्मि से गुणा करो पुन घटी करो। पश्चात् दो जगह रखकर १२ का भाग देना तो भावसाधन फल होता है॥३०॥३१॥

पूर्वोक्त गणित की सुलभ रीति-

भाव की राशि त्यागकर अंशदि की घटी करके २०० का भाग दे। जो लब्ध हो उसको भावसाधन से गुणा करके ध्रुवांक का भाग देना। बाद फल में गुणा करना तो भरणीय कुटुम्ब पोषण की सख्या होती है॥३२॥३३॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भावप्रका० लोकप्रावर्णनं
नाम नवमोऽध्याय ॥९॥

पुन लोकप्रावर्णनाह

भाग्योत्कर्ष भाग्यहानि कुटुम्ब दुःख हानि शत्रुमाय व्यय च ॥ उद्वाह स्त्रीपुत्रलाभादिक च वृषादेव चाब्दचर्याक्रमेण ॥१॥ अष्टमासदिनचर्यविधानं ब्रूयते तनु मया मुमते ते ॥ पञ्चमाणाविधिना परमायुः सख्येव विदधीत महात्मन् ॥२॥ भावाना साधनं हत्वा दृष्टिमिथ बलेन च ॥ पञ्चगार्गदिपतीना च भावे भावे पृथक् पृथक् ॥३॥ सेया च दृग्बलाना च

सहत्या भाजयेव ॥ स्वामिदृष्टिस्थितानां तु काले भावफल विदुः ॥४॥ ज्ञानसमयकालस्तु
जन्मकालादला यदा ॥ लग्नादिव्ययपर्यन्ता भावा काले तथा विदुः ॥५॥

छठे अध्याय मे वर्षचर्यास्ति से भाग्योदय, अवनति, परिवार का सुख दुःख, शत्रुचिन्ता
लाभ, खर्च पुत्रादि का विवाह आदि कहा जाता है॥१॥ है मैत्रेय! अब वर्षचर्या, मासचर्या,
तथा दिनचर्या और आयु का निश्चय भी उत्तररूप से कहते हैं॥२॥
द्वादश भावों मे भावफल के समय का निर्णय

जिस भाव के फल का समय निर्देश करना हो उस भाव को प्रथमदृष्टि से पञ्चात् भावबल
से गुणा करे बाद षड् वर्ग के स्वामी की दृष्टि तथा बल का योग (जोड़) करके भाग दे सब्ध
वर्षादि अक उस भाव के फल का समय होगा। इस प्रकार सप्तमभाव से स्त्री, पंचमभाव से
पुत्रादिको आदि तत् २ भाव से फल का समय निर्देश करना॥३॥४॥५॥

लग्नषड्वर्गहोराणा भोक्तार पतय स्मृता ॥ त्रिपचवेददिकसप्तमुनिरामाशके फलम् ॥६॥
शुभग्रहास्तु द्रष्टार स्थानदा सकलग्रहा ॥ युक्ता सदा तु सद्भावा सज्जानुफलदास्तदा ॥७॥
पापान् हानिकरान्हित्या स्वोच्चे कोणसुहृत्स्वितान् ॥ तद्वाशिर्यस्य शत्रुर्वा नीचयोर्वा ग्रहो यदि
॥८॥ हानि कुपतिता तस्य दृष्टियोगानुपातत ॥ उद्वाहकारकौ चद्रशुक्रौ भो वा तपोऽय वा ॥९॥
शनिर्मृत्तिकरो भीमरवी नीचासतीपती ॥ गुरु शुभकर पुत्रे कुजो भ्रातरि शत्रुमे ॥१०॥ मदभ्राते
शुभा सर्वे स्वोच्चगौ भीमसूर्यजौ ॥ भाग्येशुभा शुभा पापा अशुभा स्वपति विना ॥११॥

भावों के षड्वर्गपति की दशा मे भावोक्त फल होता है। भावराशीष अपनी दशा के तृतीयांश
मे तथा इसी प्रकार होरापति त्रेष्काणपति सप्ताशपति नवाशपति, द्वादशाशपति और
त्रिशाशपति क्रमश अपनी २ दशा के ५।४।१०।७।७।३ के अंश मे अपना २ फल देते हैं। यह
शुभग्रहों की अवधि कही। अष्टक वर्ग मे रेखा दाता शुभ या पाप कोई भी दोनों का शुभाशुभ
फल होता है। जिस २ भाव मे उस भाव का पति उच्च मूलत्रिकोण आदि शुभ स्थान युक्त हो
उनका शुभफल और शत्रु राशि आदिवा हो तो अशुभ फल होता है॥६॥७॥८॥
ग्रहों की नैसर्गिक कारकता—

शुक्र और चन्द्रमा विवाह कारक हैं। मतान्तर से बुध गुरु भी विवाह कारक हैं। शनि मृत्यु
कारक है। मंगल कुलटा कारक तथा सूर्य पतिव्रता कारक है॥९॥ कौन ग्रह किस भाव मे
निसर्गत शुभ हैं, यह कहा जाता है। गुरु ५ भाव मे शुभ है। मंगल ३ मे शुभा। शनि ६ मे तथा
अन्य ग्रह एकादश भाव मे शुभ हैं। मंगल शनि उच्च के शुभ तथा नवमभाव मे शुभग्रह शुभ
होते हैं। पापग्रह हो तो अशुभ होते हैं किन्तु नवमभाव मे पापग्रह स्वगृही हो तो शुभ है और
भाग्य वृद्धिकारक है॥१०॥११॥

पूर्वभागे समुद्दिष्टदृग्बलेन फलानि तु ॥ विरुद्धानि परित्यज्य समीचीनानिसंग्रहेत् ॥१२॥
ग्रहराशिस्वभावेन पुस्त्रियोराशिमैव च ॥ स्वभाव च वदेद्वुदधा देशकालकुलानुग ॥१३॥
तेषामिष्टफले वृद्धिस्त्वगुभास्यफलौदय ॥ अन्यथा त्वसदेवस्यातस्तत्तस्मान्मूर्तोफलम् ॥१४॥
रविस्तु पाचको भेयश्चंद्रमा दोघक सदा ॥ पाचको दोघश्चैव कारको वेधक
क्रमात् ॥१५॥

पूर्व भागमें जो दृष्टि से फल बढ़ा है। उसमें से पापदृष्टिका फल त्यागकर शुभ ग्रहण करना चाहिए॥१२॥ तथा भनुष्यो का स्वभाव और रूप रंग आदि भी देश, काल, कुल आदि के अनुसार ग्रह, भाव, स्थिति का ध्यान रखते हुए सूक्ष्म विचार कर निर्देश करना॥१३॥ जिस भाव का दृष्ट बल (शुभवल) अधिक हो उस भाव की उत्तरोत्तर वृद्धि और जिस भाव का कष्ट बल अधिक हो उस भाव की उत्तरोत्तर हानि होती है॥१४॥ सूर्य पाचक सजक है। चन्द्रमा बोधक सजक है। तथा सूर्य कारक सजक एवं चन्द्रमा वेधक सजक भी है। यह इनकी नैसर्गिक (स्वाभाविक) सजा है॥१५॥

रव्यादीनाञ्च विज्ञेया मदारैर्यसितास्तथा ॥ शुक्रारमबरवयो रवीन्दुशनिचन्द्रजा ॥१६॥
चदेर्यसितामौमाश्र मदारेन्दुदिनेश्वरा ॥ भौमजसूर्यमदा स्यु सितेन्दुगुरुभूमिजा ॥१७॥
यदसप्तनवरद्रेषु सप्त मयमवशिषु ॥ द्विषडाप्यव्ययेष्वेवद्विवेदेन्द्रिषवद्विषु ॥१८॥ यदपचसप्त
रिक्तेषुद्विषद्व्यपचतुष्वपि ॥ त्रिषद्वयदसप्तमेषु स्थिता स्थानेषु ते ग्रहा ॥१९॥ पाचका-
द्यास्तु चत्वार सूर्यादिभ्य क्रमादिह ॥ पीडसं बाप्यपीडसं केद्रेलप्र विना तथा ॥२०॥ यद्
सप्तधर्मकामायमृतिष्वेव गता क्रमात् ॥ पाचकाद्याश्रतुर्थं च बलवत समोरिता ॥२१॥
कारको मद फलदो वेधको विप्रकृत्स्नुत ॥ बोधको शीघ्रफलद पाचको विफलप्रद
॥२२॥ तदशकालस्यान्ते बाप्यादावत्याशकेऽपि च ॥ अत्याशकेऽपि फलदा पाचकाद्या
क्रमादिह ॥२३॥

अब आगे सूर्यादि सातों ग्रहों की स्थानभेद से पाचक बोधक कारक वेधक सजा यही जाती है-

१-सूर्यादि सातों ही ग्रह चतुर्थ सप्तम दशम भाव में हो तो बलवान् होत है।
२-तथा सूर्य द्ष्टे भाव में, चन्द्रमा ७ में म० ९ में बुध १० में गुरु ११ में शु० ८ में, श० ४ भाव में बलवान् होते हैं। अन्यथा समान है। अब सूर्यादि ग्रहों से कौन ग्रह किस स्थान में होने से पाचक, बोधक, कारक तथा वेधक होता है। यह भिन्न २ कहा जाता है। सूर्य से द्ष्टे भाव में शनि पाचक, मंगल ७वे भाव में बोधक तथा गुरु ९ भाव में कारक एवं शुक्र ११ भाव में वेधक होता है। अब आगे इसी प्रकार क्रमशः समझना। चन्द्रमा से शु० म० श० गू० ७।९।११।३ स्थानों में पाचक, बोधक, कारक वेधक सजक होते हैं। मंगल म मू० च० श० बु० २।६।११।२ स्थान में पा० बो० का० वे० होते हैं। बुध से च० गु० शु० म० क्रमशः २।४।५।३ स्थानों में पा० बो० का० वे० होते हैं। गुरु से श० म० च० मू० क्रमशः ६।५।७।२ भाव में पा० बो० का० वे० होते हैं। शुक्र से म० बु० मू० श० २।६।१२।४ भाव में पा० बो० का० वे० होते हैं। शनि से शु० च० वृ० म० क्रमशः ३।१।६।७ भाव में पा० बो० का० वे० होते हैं। इनका फल नामानुरूप ही है। यथा-कारक ग्रह अपने नियामक ग्रह का साधारण फल कारक होता है तथा वेधक ग्रह अपने नियामक के फल में विप्रकारक होता है। बोधक ग्रह अपने नियामक का ही फल शीघ्र देता है। पाचक ग्रह नियामक के फल को विफल करता है। ये पाचक आदि ग्रह अपने नियामक ग्रह के आदि नवाण या अन्तिम नवाण में फलदाता होते हैं। किन्तु यह नियम नहीं है, मध्य में भी फलदायक हो सकते हैं॥१६ से २३ तक॥

| पाचकादि ग्रह निर्माण चक्रम् | | | | | | | |
|-----------------------------|-----|-----|-----|-----|-----|-----|------|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | प्र० |
| श० | शु० | सू० | च० | श० | भी० | गु० | पाचक |
| ६ | ७ | २ | २ | ६ | २ | ३ | |
| भी० | भी० | च० | गु० | भी० | बु० | च० | बोधक |
| ७ | ९ | ६ | ४ | ५ | ६ | ११ | |
| गु० | श० | श० | शु० | च० | सू० | बु० | कारक |
| १ | ११ | ११ | ५ | ७ | १२ | ६ | |
| शु० | सू० | बु० | भी० | सू० | श० | भी० | वेधक |
| ११ | ३ | १२ | ३ | १२ | ४ | ७ | |

| सूर्यादिपाचकादि चक्रम् | | | | | | | |
|------------------------|-----|----|-----|-----|-----|----|------|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | प्र० |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | पाचक |
| ० | ० | ० | ० | ० | ० | ० | बोधक |
| ० | ० | श० | ० | ० | सू० | ० | कारक |
| शु० | सू० | ० | म० | ० | ० | ० | वेधक |

आदौ फलप्रदौ भीमरवौ मध्ये सितार्दकौ ॥ सर्वदा न शशी मवस्त्वयसाने फलप्रदौ ॥ २४ ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकन्याश्रावर्णन
नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

स्वाभाविक कार्यकाल-

सूर्य, मंगल यदि राशि के प्रथम त्रिभाग में हों तो फल देते हैं। गुरु, शुक्र मध्य त्रिभाग में फलदायक होते हैं। चन्द्र, शनि अन्तिम त्रिभाग में फलदाता तथा बुध सर्वकाल फलदाता है॥२४॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उ० ख० भावप्रका० लोकयात्राफलनियम
वर्णन नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अथ मासचर्यादि फलमाह

धनहानिमयानां च व्याधीनां दिवसास्तथा ॥ शुभाशुभानि कर्माणि यात्रादि विजयादि च ॥१॥ मासचर्याविधानेमब्रूयादन्येनचेतरान् ॥ लक्षारिमृतिरिःकेषु वर्गणा च पत्नीस्तथा ॥२॥ करणेशान्समातोच्य कथं न्मुनिपुंगव ॥ रसेष्वेव भुक्तिः खाण्डो रविमूपा दिशस्तथा ॥३॥ द्विशतचक्रमात्सूर्यादिवसाश्चाष्टमे स्थिताः द्वितीयार्धे त्वतरे च त्रैराशिकवशेन तु ॥४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे मासचर्यादिवशात्फलज्ञानकथनं
नाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥

धनहानि, भय, रोग इनका विचार दिनचर्या से करना तथा शुभाशुभ कर्म, यात्रा, विजय इनका विचार मास चर्या विधि से कहना॥१॥ लग्न, पण्ड, अष्टम और व्ययभाव की वर्गणा सख्या तथा इन भावों के स्वामियों की वर्गणा सख्या॥२॥ तथा करण- (विन्दु) दाता ग्रहों की सख्या अर्थात् किस भाव में कितनी है आदि विचार करने फल कहना। सूर्यादि ग्रहों की दिन सख्या कही जाती है। सु० ५६। च० ७। म० ८०। बु० १२। गु० १६। शु० १०। श० २०० यह सख्या अष्टम भाव की है। द्वितीय भाव की इससे आधी जानना। मध्यराशियों की सख्या त्रैराशिक से जानना॥३॥४॥

इति श्रीवृ०पा०हो०शा०उ०ख० भाव प्रकीर्णककथननाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥

अथ लोकयात्रामाह

तथा भगवतो वक्ष्ये यथाह कमलासनः ॥ गार्ग्य भगवान्सोऽपि ममाहाह तव द्विज ॥१॥ तथा च रिःफण्डाष्टस्थानानां करणाधिपाः ॥ तत्तद्भावस्य भगव्य वतरिः सति सभवे ॥२॥ तत्तद्भावाष्टवर्गोत्पत्त्यसख्या तद्वर्गणाहता ॥ रविभक्ता तत् शिष्टा राशिर्भेषादिका भवेत् ॥३॥ पण्डाष्टरिःके राशिश्चैद्भूग एष प्रकीर्तितः ॥ फलं च मुनिसद्बुद्ध रविभक्त तथा भवेत् ॥४॥

हे मैत्रेय! अब योगभग कहा जाता है। यह रीति ब्रह्माजी ने गर्गजी को बही थी और गर्गजी ने हमें कही सो वही रीति अब तुम्हें बहते हैं॥१॥ लग्न से ६।८।१२ भावों में विन्दु देनेवाले ग्रहविचारणीयभावों में हों या ६।८।१२ के स्वामी के साथ मयोग हों तो उन भावों के

भग करनेवाले होते है॥२॥ जिस भाव का फल विचार करना हो उस भाव की अष्टक वर्ग की विन्दु सख्या को उस भाव की वर्गणा से गुणा करना और १२ का भाग देना जो अक शेष रहे वह मेपादि क्रम से राशि जानना। वह राशि यदि ६।८।१२ भाव में हो तो उस भाव का भग (हानि) होता है॥३॥ और लब्धाक को सात (७) से गुणा कर १२ से भाग देना जो शेष रहे वहराशि यदि ६।८।१२ भाव में हो तो भी उस भाव का भग होता है॥४॥

शिष्टमेव यदि तदा शत्रुभ वाय भगवम् ॥ तद्भावानिष्टफलक तच्छत्रुफलसगुणम् ॥५॥ सप्तान्त शिष्टमेवात्र पापरश्मिगुण तत ॥ अर्कशिष्ट यदि भवेत्पठरिकाष्टमेऽपि वा ॥६॥ शत्रुभ वापि भगवर्ष हानिस्तस्य प्रकीर्तिता ॥ ययोत्तरमितीवाप्त स्यवृद्धिस्ततो भवेत् ॥७॥ षष्ठ्यशो च कलाशे च त्वप्रकाराग्रहोदये ॥ राहुकालसमायोग तद्भावफलभगद ॥८॥ अनिष्टाख्य च रश्मि च तद्भावफलसगुणम् ॥ द्वादशाप्तावशेष च पूर्ववत्फलमीरितम् ॥९॥

और दूसरी बार जो शेष रहे वह यदि पष्ठभाव राशि हो तो भावफल की भगकारक है। तथा इसी प्रकार कष्टफल से गुणाकर ७ से भाग देना जो शेष रहे तो शत्रु ग्रह की रश्मि से गुणा करना और १२ का भाग देना जो शेष राशि यदि ६।८।१२ में हो तो उस भाव का भग करती है। यहा अनेक भगकारक रीति दिखाने का यह प्रयोजन है कि जितनी बार भग प्रद राशि प्राप्त हो उतनी अधिक हानिकारी है॥५॥६॥७॥

अन्य प्रकार-विचारणीय भाव के षोडशांश या पष्ठघण में धूम, पात, परिधि, चाप, ध्वज इनमें से किसी का उदय हो तो उस भाव का भग होता है॥८॥

प्रकारान्तर-विचारणीय भाव की अनिष्ट रश्मि को इष्टबलाक से गुणा कर १२ से भाग देना जो राशि प्राप्त हो उसका पूर्ववत् फल जानना॥९॥

यद्यत्फल प्रोक्तमथोत्तरत्र तत्सर्वमन्यत्र च योजनीयम् ॥ भग च भग च भुनिश्च गर्ग प्रोवाच यद्वन्मुनिपुगवाहम् ॥१०॥ पष्ठ्यशो च कलाशे च त्रिष्वेकोऽपि पदा न चेत् ॥ अधिमित्र च मित्र च भगभग प्रकीर्तित ॥११॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकयात्राया
भावभगोपदेशोद्वादशोऽध्याय ॥१२॥

यह जो भग विचार कहा गया है, वह हर एक भाव में देखना चाहिए॥१०॥ इस भग का सडक योग भी है। यदि षोडशांश या पष्ठघण अथवा शत्रुराशि में धूमादि ग्रहों का (अप्रवाज ग्रहों का) योग अथवा काल राहु का योग न हो और राशि मित्र, अधिमित्र हो तो भग का भी भग योग होता है॥११॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० ख० भा० प्र० भगादियांग कथन
नाम द्वादशोऽध्याय ॥१२॥

अथ लोकायात्राया ग्रहभावफलमाह

आत्मा शरीर होरा च कल्प-लग्ने च मूर्तयः ॥ स्व कुटुम्ब च दुश्चिक्रय विक्रम सहज सहः ॥१॥
 पाताल हिवुक वेश्म मित्रबधूदक सुखम् ॥ त्रिकोण प्रतिभा बुद्धिमातृविद्यामुतास्ततः ॥२॥
 व्याधिक्षतारिभगाश्च क्रोधो लामोऽथ मत्सर ॥ कामो विवाहो यात्रा स्त्री रतिधून मदोज्ञता ॥३॥
 परामर्शो मृतिर्बधो रधायुर्निधन च्युति ॥ शुभ धर्मस्ततो भाग्य त्रिकोण च गुरुर्बिभुः ॥४॥
 व्यापारास्पदमेधूरणमानाज्ञा च कर्म लम् ॥ भावाय लाभाय तपो रिफ हानिर्व्ययः स्मृतः ॥५॥
 यात्राया दशमेनैव निवृत्तिः सप्तमेन तु ॥ वृद्धिश्चतुर्थलग्नेन त्रितय सप्रकीर्तितम् ॥६॥
 स्वोच्चमित्रस्ववर्गस्या एवमर्थाश्च सप्तति ॥ नीचार्थिर्वर्गगात्रान्यत्पुष्ट चापुष्टमेव च ॥७॥

अब अन्वर्थक नामोसे १२ भावोंके विचारणीय पदार्थ कहे जाते हैं। लग्न सजा आत्मा, शरीर, होरा, कल्प, लग्न, मूर्ति, (अग) द्वितीयभावसजा-स्व, कुटुम्ब। तृतीयभावसजा-दुश्चिक्रय, विक्रम, सहज, सह।

चतुर्थभावसजा पाताल, हिवुक वेश्म, मित्र, बन्धु, उदक, सुख। पञ्चमभाव के नाम त्रिकोण प्रतिभा, बुद्धि, मातृ विद्या, मुता पण्डभाव के नाम-व्याधि, धन, अरि, भग, क्रोध, लोभ मत्सर। सप्तमभाव के नाम-काम विवाह स्त्री, रति धून मद, अज्ञता। अष्टमभाव के नाम परामर्श, मृति, बध, रध, आयु, निधन, च्युति। नवमभाव के नाम-शुभ धर्म, भाग्य त्रिकोण, गुरु, विभु। दशमभाव के नाम- व्यापार, आस्पद, मेधूरण, मान, आज्ञा, कर्म रव। एकादशभाव के नाम भाव आय, लाभ, अप, तपा व्ययभाव के नाम-रिफ, हानि, व्यय। इस प्रकार वे ६७ सजाएँ नामानुरूप तात्पर्यवाली हैं। दशमभाव से यात्रा सम्बन्धी विचार करना तथा सप्तमभाव से निवृत्ति और चतुर्थभाव से वृद्धि का विचार करना चाहिए। इस प्रकार यात्रा, निवृत्ति, वृद्धि ये तीन नाम और मिलाने से ७७ नाम सख्या होती है। जो ग्रह उच्च मित्र या स्ववर्ग में हो तो पूर्वोक्त फल उत्तम और नीच शत्रु आदि में हो तो नेष्ट फल होता है। इस प्रकार बलाबल का विचार करके फल कहना चाहिए॥१ से तक॥

रवि शरीरे होराया स्वे च भ्रातरिबेष्मनि ॥ सुते व्याधी अते शत्रौ मृतौ तपसि कर्मणि ॥८॥
 आये व्यये फल दद्याच्छीतगुर्विज्ञे सुले ॥ कुटुबे भ्रातरि क्रोधे प्रतिभाया शुभे मृतौ ॥९॥
 भाग्ये त्रिकोणे व्यापारे लाभे रिफे फलप्रदः ॥ कुस शरीरे होराया कल्पविक्रमबधुषु ॥१०॥
 सहजे च सहे शत्रौ क्रोधे लोभे च रधके ॥ क्रियायामापतौ हानौ जये भगे फलप्रदः ॥११॥
 बुधो मनसि विद्याया बुद्धौ हिवुकवेश्मनि ॥ लाभे शिल्पे च गानादिप्रिये स्वे लाभरि फये ॥१२॥

जैसे लग्नादिभावों से तत् २ फल का विचार होता है, इसी प्रकार सूर्यादि ग्रहों से भी फल विषयक विचार होता है। यही कहा जाता है। सूर्य से शरीर का विचार, धनभाव में हो तो धन का और भाई, भक्त, पुत्र, व्याधि, शत्रु, मृत्यु, धर्म, कर्म, लाभ, सर्व आदि का विचार सूर्य में करना। चन्द्रमा से पराक्रम, सुख, कुटुम्ब, भ्राता, क्रोध, प्रतिभा, शुभ, मृत्यु, भाग्य, व्यापार, लाभ, सर्व का विचार चन्द्र से भी करना। मंगल से लग्नभाव का फल, विक्रम प्रताप, बन्धु, भ्राता, शत्रु, क्रोध, लोभ, प्रभाव आदि का विचार। बुध से मानसिक चेट्टा, विद्या, मुय, लाभ, शिल्प, गायन विद्या, धन, लाभ, व्यय आदि का विचार॥८ से १२ तक॥

गुरुर्धमे च तपसि त्रित्रिकोणे त्रिकोणके ॥ आज्ञायां च मुते हानौ कारागृहनिवेशने ॥१३॥
अभिशापे तथा व्याधौ स्वे कल्पे मूर्तिवेश्मसु ॥ विद्याबुद्धिमुखे भावे शांत्यादिषु फलप्रदः
॥१४॥ कामान्यस्त्रीविवाहेषु गीतनृत्यप्रियादिषु ॥ मुखे वेश्मनि दुश्चिक्से स्वे कुटुंबे च
वेश्मनि ॥१५॥ आज्ञाक्रियातपोभाग्ये लाभव्ययहानिषु बदान्यत्वे दयायां च भार्गवः फलदः
सदा ॥१६॥ शनिमृतौ व्यये रिःफे दुश्चिक्से क्षतचेतसि ॥ सहजे च सहे भावे बंधने फलदो
भवेत् ॥१७॥

बृहस्पति से नवम भाव तथा पंचमभाव आज्ञा, पुत्र, हानि, कारागृह प्रवेश, अभिशाप,
व्याधि, सकल्प, गृह, विद्या चतुर्थ भाव शान्ति, पुष्टि, कर्म आदि का विचार
करना ॥१३॥१४॥ शुक से काम, अन्य स्त्री समागम, विवाह, गायन, नृत्य, प्रिय, सुख, गृह,
तृतीय भाव, धन, द्वितीयभाव, चतुर्थ भाव, आज्ञा, क्रिया, तप, भाग्य, लाभ, व्यय, हानि, दान,
दया आदि का विचार करना ॥ शनि से मृत्यु, नाश, व्यय भाव, तृतीय भाव, चित्त, सहजभाव,
बन्धु, बन्धन का विचार करना ॥१५॥१६॥१७॥

कालहोरावृत्तेशः क्षत्रार्कतवमागपाः ॥ सप्ताशत्रिसादशेशा होरेशाष्टमो भवेत् ॥१८॥
क्रमादावृत्तितः प्रोक्ता बलिष्ठः पूर्वतो यथा ॥ सूर्यादयो ग्रहा लघ्वपतिश्चावृत्तितः क्रमात् ॥१९॥

श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकयात्राया
ग्रहभावफलविचारे त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

सूर्यादिग्रहो से होरा, द्रेष्काण, भावेश, नवमाश, द्वादशाश, त्रिशाश, होरेश यह क्रम से
अधिकाधिक बलवान् है। सूर्यादिग्रह तथा अष्टम और लघ्वपति इनमे जो बलवान् हो वह प्रथम
फल देगा, बाद उससे हीन उसमे हीन फल दाता होते है ॥१८॥१९॥

इति धीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० लोकयात्रा

ग्रहभावफल विचारे त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

अथ आयुर्दायाह

वक्ष्येऽहमथ दायोत्थं नृणामायुः परं मुने ॥ पैडथो द्वादशधा प्रोक्तो ध्रुवरश्मिसमुद्भवो ॥१॥
अशकाष्टकवर्गोत्थो प्रत्येकं तु चतुर्विधम् ॥ विपयोक्तो द्विधा प्रोक्तो नक्षत्राशकतमवो ॥२॥
द्वात्रिंशद्देवभिन्न स्यात्परमायुर्नृणामिह ॥ अतिधृतिरर्कस्येन्दोस्तत्त्वानि भूमिमुत्तमं पचदश
॥३॥ द्वादश बुधस्य च गुरोस्तिथिः कवेर्मूर्धना नक्षत्रार्कः ॥ परमोच्छेदो नीचेर्धं परेषु भावेषु
वा तथा प्रोक्तः ॥४॥ अनुपातः कर्तव्यस्त्वतः सत्येषु सेतेषु ॥ एतन्मूमे, लघुर्मेढ्रोः स्वांशा
पूर्ववत् कृत्तौ च विजयी ॥५॥ कृतिरेको यमी रत्नमष्टादश नक्षः क्रमात् ॥ रीकतानमिनादीनां
दाये नैसर्गिके स्मृतम् ॥६॥ षोडश विंशतिरेको नवाष्टनवर्षचविंशतिः क्रमशः ॥ षड्विंशतिस्त-
थोच्छेदो नीचे चार्धं त्वमेऽय इतरे वा ॥७॥

आयुर्दाय विचार

हे मेनेय! अब आयु का निर्णय कहा जाता है। हमने निर्णय की रीति के प्रधानतया २०

भेद है। उनमें पिण्डायुर्दायि १२ प्रकार का है। अशायु, ध्रुवायु, निसर्गायु, रश्मिआयु, स्वराशायु, अष्टकवर्गायु। इनके ४-४ भेद हैं। नक्षत्रायु, अशायु को कालचक्रायु भी कहते हैं। इनके २-२ भेद हैं। इस प्रकार यह सब ३२ भेद होते हैं॥१॥२॥

पिण्डायु के ध्रुवाङ्क-सूर्य १९, चन्द्र २५, मंगल १५, बुध १२, गुरु १५, शुक्र २१, शनि २० ये ध्रुवाङ्क परमोच्च ग्रह के जानना। परम नीच के अर्ध भाग लेना। मध्य में त्रैराशिक से समझना। यह शतायु अथवा १२० वर्ष की आयु के लिये कहा गया है॥३॥४॥५॥

ध्रुवायुर्दायि के ध्रुवाङ्क-सूर्य २०, चन्द्र १, मंगल २, बुध ९, गुरु १८, शुक्र २०, शनि ५०, इसको निसर्गायुर्दायि या स्वाभाविक आयुर्दायि भी कहते हैं॥६॥

रश्म्यायुर्दायि के ध्रुवाङ्क-सूर्य १६, चन्द्रमा २०, मंगल १, बुध ९, गुरु ८, शुक्र ९, शनि २५, अथवा २६ ये ध्रुवाङ्क उच्च के हैं। नीच राशि में आधा और मध्य में अनुपात से जानना॥७॥

कलीकृतं ग्रहं व्योमसाब्धिनेत्रावशेषितम् ॥ शतद्वयेनाभिभजेदम्बमासादयः क्रमात् ॥८॥

मध्यमपिण्डायुश्चक्रमाह

| सू० | ख० | म० | बु० | गु० | शु० | म० | यो० |
|-----|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| १२ | १९ | १२ | २ | १७ | ८ | २० | १३ |
| १ | ३ | ९ | ० | ८ | ७ | ९ | ४ |
| २९ | १७ | १९ | १७ | ६ | २२ | ० | २३ |
| २० | ४४ | ४८ | ३८ | ३ | ५५ | ० | ३१ |
| २४ | ३६ | ० | २४ | ३६ | १३ | ० | २ |

मध्यमध्रुवायुर्नमिनिसर्गायुश्चक्रम्

| सू० | ख० | म० | बु० | गु० | शु० | म० | यो० |
|-----|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| १२ | ७ | ११ | १ | २२ | ८ | ३५ | १९ |
| ५ | ७ | २ | ६ | ६ | ५ | ४ | ३ |
| ७ | २३ | २६ | १३ | २६ | २० | १५ | ११ |
| १३ | २ | ३८ | १३ | ९ | २४ | ० | ३९ |
| ० | २४ | २४ | ४८ | १८ | ० | ० | ५४ |

| म० सत्तायुनमिस्वरांशायुश्चक्रम् | | | | | | | |
|---------------------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | बु० | गु० | शु० | श० | मो० |
| ११ | १९ | १२ | १ | १५ | ६ | २३ | ९१ |
| ४ | ११ | ५ | ६ | ७ | ६ | ८ | १ |
| ५ | १० | ९ | १३ | १ | २२ | ३ | ६ |
| ४५ | ४८ | ५० | १३ | ४० | ४० | ० | ५९ |
| ३६ | ० | २४ | ४८ | ४८ | ४८ | ० | २४ |

ऊपर बताई हुई तीनों आयु के वर्षादिक लाने की रीति सूर्यादि ग्रह के स्पष्ट की बता करके २४०० का भाग देकर शेष में २०० का भाग देना। लब्धि वर्ष होते हैं। अब जो शेष रहे उसको पिण्डायु प्रकरण में कहे हुए ग्रह के ध्रुवाङ्क से गुणाकर २०० का भाग देकर प्राप्त हुए लब्धि अङ्क पूर्व वर्ष सख्या में नियुक्त करें। शेष अङ्क को १२ से गुणाकर २०० का भाग देने से मासाङ्क मिलेगा। शेषाङ्क को ३० से गुणा कर २०० का भाग देने से दिनाङ्क प्राप्त होगा। शेष को ६० से गुणा कर २०० का भाग देने से घटी और इसी प्रकार पल प्राप्त करना। इस रीति से सूर्यादि ७ ग्रहों की पिण्डायु, ध्रुवायु तथा रश्म्यायु स्पष्ट करना॥८॥

सूर्यादिगुणिताच्छेषाद्बृद्धिं कुर्याद्यथोत्तरम् ॥ स्वेच्छहीनं ग्रहं ज्ञात्वा कर्कादि च भृगादि च ॥९॥ गृहीत्वा तु भुजं कोटिं कृत्वा लिप्तीकृतं तु तम् ॥ हत्वा नवाशदायेन भजेद्भुजपलित्तिम् ॥१०॥ यत्तराद्या भवत्येते वर्जयेन्मकरादिके ॥ केन्द्रे नवाशदाये स्वे त्रिमे कर्कादिके ॥११॥

कोटी करना। (भुज को ३ राशि में घटाने से कोटी होती है।) जो शेष बचे उसकी बता करना। नवाश के ध्रुवाङ्क से गुणा करना। ५४०० का भाग देना। जो लब्धि हो वह वर्ष सख्या होगी। शेष को १२ से गुणाकर ५४०० का भाग देना। लब्धि मास सख्या। शेष को ३० से गुणा कर ५४०० का भाग देना। लब्धि दिन सख्या। शेष को ६० से गुणाकर ५४०० का भाग देना। लब्धि घटी सख्या। और इसी प्रकार पल सख्या लेना। अब जो प्राप्त हुआ वर्ष, मास, दिन घटी, पल अब उसको ग्रह यदि मकर आदि ६ राशियों में हो तो ऋण और कर्कादि ६ राशियों में हो तो धन होता है। इसमें मकर आदि केन्द्र हो तो ध्रुवाङ्क को ३ गुणा करके वर्ष सख्या में घटाना और कर्कादि केन्द्र हो तो ध्रुवाङ्क का आधा वर्ष सख्या में जोड़ना तो नवाश आयु स्पष्ट होती है॥९॥१०॥११॥

युज्यावधोक्तं तस्मिन् प्रक्रमानुगतो मतः॥१२॥ द्विमे त्वपनयेतस्मिन्युज्यादेव इतीदृते ॥ निक्षिप्याष्टकयर्गे तु राशिचक्रे तु पूर्ववत् ॥ त्रिकोणेष्वप्युद्धि च कृत्वा तु गुणयेद्गुणैः ॥१३॥

| मध्यम अंशायुश्रक्रमः | | | | | | | |
|----------------------|----|----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च० | म० | सू० | सू० | सू० | श० | यो० |
| ३ | १९ | १८ | ७ | १० | २५ | ११ | ११६ |
| ८ | ३ | ७ | ० | ५ | ६ | ५ | ० |
| १ | ० | १ | २९ | २३ | ४ | २३ | १६ |
| ५२ | ४४ | ५३ | ९ | ३२ | ७ | २० | ९ |
| ४० | ४८ | ५२ | २४ | ० | ४ | २ | ८ |

सर्वद्विमतमन्दाद्या क्रमाद्भिन्नाष्टवर्गजा ॥ एवकृत्वा तु सप्तोत्तर भागमन्दाद्यः स्मृता ॥१४॥ कृत्वा करणदैरेव स्वोत्पन्नौ दायस्ततितौ ॥ प्रत्येक भिन्नदापोत्था एव त्रिंशद्भिदा मता ॥१५॥

इसी प्रकार क्रमानुगत आर्युदाय स्पष्ट करना। नवम आर्यु प्राप्त आयु मकर आदि ६ राशि में हो तो मूल ध्रुवाङ्क को द्विगुण करके हीन करना। कर्कादि ६ राशि में हो तो मूल ध्रुवाङ्क को आधा करके जोड़ना चाहिये ॥१२॥

अष्टक वर्गयु प्रकार प्रथम अष्टक वर्ग सिद्ध करके त्रिकोण शोधन और एकाधिपत्य शोधन करना। और पूर्वोक्त रीति न प्रत्येक राशि गुणक में गुणाकर पिण्ड सम्यक् स्पष्ट करना। शोध ३० का भाग देना तो वर्षादिव भिन्नाष्टक वर्गयु होती है।

समुदायाष्टक वर्गयु की रीति भिन्नाष्टक वर्गयु के अब जोड़कर २७ का भाग देना तो वर्ष, मास, दिनादिव समुदायाष्टक वर्गयु होती है। इस प्रकार रेखा पिण्ड में तथा हिन्दु पिण्ड में रेखाष्टक वर्गयु तथा वर्षाष्टक वर्गयु होती है। इस प्रकार अब तक ३० भेद सिद्ध हुए जिसमें पिण्डायु ७ प्रकार की ध्रुवायु ७ रश्मायु ७ और अंशायु ७ रश्माष्टक वर्गयु १ और वर्षाष्टक वर्गयु १ य ३० भेद स्पष्ट हुए ॥१३ १५॥

पच भूच्छा सप्त रत्न दश धोडम वारिधि ॥ नवम विधित प्रोक्ता अत्पात्रोक्तास्तु भासित ॥१६॥ रवीन्द्रारहिजीवार्निधुक्केतुसिता वभात् ॥ आप्रेपाङ्गणेशो स्पु स्वामिनो वत्सरा क्रमात् ॥१७॥ घडारा सप्त धृतयो नृपो एकीनयिशति ॥ अत्यष्टि सप्त च मन्था उच्चै नोचेर्धमुच्यते ॥१८॥ अस्मिन् हरण तस्मात्पूर्वस्मिन् इय हितम् ॥ अनयो पापदायादावते पुरपपुत्रव ॥१९॥ द्वात्रिंशद्भेदभिन्नोद्यमायुषो निर्णय कृत ॥ सोऽयमापपरिज्ञानहेतवे तपतिर्णय ॥२०॥ भावाना सप्रवस्थामि गृणुष्व मुनिपुत्रव ॥ आयुश्च परम हवा स्येन स्येन तेन च ॥२१॥ विमज्जैतस्ययोगेन भावाना दाय एव म ॥ अय वारापदायेन बागाना घतेन तु ॥२२॥ स्थानात्तत्र समुद्भूत पद्विधो दाय उच्यते ॥२३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे आयुर्दायधन्ये
चतुर्विंशोऽध्यायः ॥१४॥

नवाशायुर्दाय के ध्रुवाङ्क- (इनको कालचक्र भी कहते हैं।) सूर्य ५, चन्द्र २१, मंगल ७, बुध ९, बृहस्पति १०, शुक्र १६, शनि ४ यह सूर्यादि ग्रहों के ध्रुवाङ्क हैं॥१६॥

नक्षत्र आयुर्दाय प्रकार-कृतिका नक्षत्र से ३ बार आवृत्ति करने से सूर्यादि ग्रहों के नक्षत्र होते हैं। ग्रहों के वर्ष-सूर्य के ६, चन्द्रमा के १०, मंगल के ७, राहु के १८, गुरु के १६, शनि के १९, बुध के १७, केतु के ७ तथा शुक्र के २०। ये ध्रुव परमोच्च के हैं। ग्रह नीच राशि का हो तो पूर्वोक्त ध्रुवों का आधा लेना। बीच की राशियों में त्रैराशिक से समझना। पापग्रहों की आयु में आदि या अन्त में अपमृत्यु होती है। शुभग्रहों की आयुर्दाय शुभफल कारक हैं॥१७॥१८॥१९॥ पूर्वोक्त ३० प्रकार की आयु तथा नवाश आयु और नक्षत्र आयु ये सब ३२ प्रकार के आयुर्दाय हुए। इस तरह यह आयु का निर्णय लोकयात्रा के ज्ञान के लिये कहा गया। इसमें कुछ विशेष कहते हैं। प्रथम जो ७ प्रकार का आयुर्दाय कहा उनमें प्रत्येक आयुर्दाय को अपने भावबल से गुण कर भावबल योग से भाग देना। लब्ध वर्षादि आयुर्दाय होती है। दूसरा प्रकार-नवाश आयुर्दाय से परमायु को गुणकर पद्वर्ग पति बल योग से भाग देना। लब्ध वर्षादि भावायु होती है। इस प्रकार ६ भेद होते हैं। भावायु, नक्षत्रायु, नवाशायु, अष्टवर्गायु, अशायु तथा पैण्ड्यायु। अर्थात् अनेक भेद होते हुए भी सभी भेद इन ६ भेदों के अन्तर्गत हैं। हे मैत्रेय! इस आयुर्दाय विचार को स्पष्ट रीति से जानना चाहिए॥१६ से २३ तक॥

इति धीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्रका० आयुर्दाय
वर्णननाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

अथदायवर्णनाह

आराकौ वक्रिणौ मृत्युश्रान्त्योन्यभवनस्थितौ ॥ वेदमयमृत्युरिःफस्याः क्षीणेन्द्रत्यतिपाटमा-
॥१॥अष्टमस्या ग्रहा सर्वे पापघट्टियुतास्तु वा ॥ भीममवर्क्षणाश्रेत्तु शुभघट्टिविवर्जिताः ॥२॥
केन्द्रत्रिकोणे च शुभाश्र पापाः पट्टे तृतीये न च मृत्युसस्याः ॥ अष्टोत्तर जीवति वर्षमायुर्नरो
गुणाढ्यो नवतिः सुशीलः ॥३॥ तप्रे गुरो दैत्यगुरो चतुर्थे बुधे सुते पट्टगते च सूर्ये ॥ स्यान् च
शत्रोश्च मृति च हित्वा त्वन्ये ॥ स्थिताश्रेभवतिश्चा पट् च ॥४॥

इस एकादश अध्याय में मारक योग में आयु में हानि तथा कारक योग से वृद्धि होती है। उन योगों में प्रथम मारक योग कहे जाते हैं। जनि, मंगल वक्त्री होकर परस्पर एक दूसरे के भाव में हो, तो मृत्युकारक होते हैं। क्षीण चन्द्र, लग्नेश तथा अष्टमेश ये तीनों ४।६।८।१२ स्थानों में हों तो मृत्युकारक होते हैं। अथवा सब अष्टमभाव में हो तो मृत्युकारक होते हैं। अथवा सब मृत्युकारक ग्रह १।८।१०।११ राशियों में हो तो मृत्युकारक होते हैं॥१॥२॥

आयुर्दायक योग-शुभग्रह केन्द्रत्रिकोण में हो तो १०८ वर्ष की आयु तथा कोई भी पापग्रह ३।६।८ में न हो तो ९० वर्ष की आयु हो तथा सुशील, सुखभाव एवं गुणमय हो॥३॥ लग्न में गुरु, चतुर्थभाव में शुक्र, पञ्चम में बुध तथा अष्टमभाव में सूर्य हो तो ९० वर्ष की आयु होती है। चन्द्र, मंगल शनि ये तीनों ग्रह शत्रुराशि तथा अष्टमभाव में न हो तो ९६ वर्ष की आयु होती है॥४॥

सुखाधिकेष्टेषु गुरु स्थितश्रेष्ठतपचमे जे तु भृगौ तु पठे ॥ षड्वत्तरा सप्ततिरष्टयुक्ता
 त्वशातिरेकोत्तरत प्रदिष्टा ॥५॥ केन्द्रादिस्या शत दशुर्नवाष्टादींश्च दिग्गुणान् ॥ मिथ
 सयुज्य दलिता अनुपातेन वत्सरा ॥६॥ शत्रुनीचसमाशेषु दिग्बिधेषु न चेत्स्थिता ॥
 शतायुर्योगहीनास्तु सर्वे प्रोक्ता कलौ युगे ॥७॥ वायाना हरण वक्ष्ये भृगुभ्य मुनिपुंगव ॥
 आयुदधि तु हरण षड्विध सप्रकीर्त्यते ॥८॥ व्ययादिहरण पूर्वमस्तारिहरणे तथा ॥
 क्रूरोदयस्थहरण चद्रयुक्तमस्तथा ॥९॥

सप्त से ४ भाव मे गुरु हो गुरु से पचम बुध हो और छठे घर मे शुक्र हो तो ७६ वर्ष की आयु होती है। सप्त से सप्तमभाव मे गुरु गुरु से ५ बुध और छठे शुक्र हो तो ८८ वर्ष की आयु। अथवा सप्त से १० भाव मे गुरु और गुरु से ५ भाव मे बुध और छठे शुक्र हो तो ८१ वर्ष की आयु होती है ॥५॥

केन्द्रादिभाववश से आयुनिर्णय—यदि सभी ग्रह केन्द्र मे हो तो १०० वर्ष की आयु होती है। और पणकर मे हो तो ९० वर्ष की आयु एवं आयोक्लिम मे हो तो ८० वर्ष की आयु होती है। और यदि केन्द्र पणकर आदि आदि स्थानों मे ग्रह हों तो दो स्थानों की आयु जोड़ कर आधा करता तो आयु जाने। और तीन स्थानों मे ग्रह हो तो तीनों सख्या जोड़ कर तृतीयांश आयु प्रमाण जानना। इस प्रकार जो दशयोग जन्म आयु का प्रमाण कहा अर्थात् १०८।९०।९०।९६।९६।७६।८८।८८।८१।१००।९०।८०। इन दशयोगोंके कर्ता ग्रह शत्रु नीच, सम आदि अशो मे न हो तो पूर्ण आयु होती है नहीं तो उक्त योगों का भग होता है। प्राय कलियुग मे ज्ञतायुहीन ही मनुष्य होते हैं ॥६॥७॥

उक्त आयुयोगों मे कमीकारक योग—चारहवे घर से सातवे घर तक हारक योग १, अस्तंगत योग २ शत्रुक्षेत्र गत ग्रहयोग ३ क्रूरोदयस्थ योग ४ राहुयुक्त चन्द्र ५ द्वादश भावगत पापयोग ६ ये छ योग हैं इनसे आयु का हरण होता है ॥८॥९॥

पापों व्यग्रस्थो हरति सर्ववाय द्विजोत्तम ॥ अपहृत्त्रिचतुःपचषडशोन क्रमादमी ॥१०॥

| अय स्पष्टायापुञ्जम् | | | | | | | | |
|---------------------|----|----|-----|-----|-----|-----|----|-----|
| सू० | च | म० | बु० | गु० | शु० | रा० | स० | यो० |
| ६ | १६ | ० | ३ | ५ | १७ | ७ | १ | ५९ |
| १० | १० | ० | ६ | २ | ९ | ७ | ९ | ८ |
| ० | ४ | ० | १४ | २६ | २ | २५ | २४ | ८ |
| ५६ | २४ | ० | ३४ | ४६ | ३ | ३३ | १९ | ३७ |
| २० | १२ | ० | ४२ | ० | ३२ | ० | ३६ | ३२ |

लाभादिसंस्थिता सैता वामत प्रक्रिया भृगु ॥ हरति सौम्या प्रोक्तार्थ सप्तद्वादशसधियु ॥११॥ पापश्रेष्ठसकल हति शुभो दलमयोत्तरम् ॥ सप्तद्वादशसधौ च पदान्यापान्विबर्जयेत्

॥१२॥ राश्यभावे तु भागादीन् दायघ्नान् पष्टिभाजितान् ॥ दाये द्विप्ने तु सौम्यस्य राशिरेको बलपदि ॥१३॥ अधिकेनापहस्तनु क्माद्राशिंबिना कृतम् ॥ दायद्विगुणया सौम्यो लब्धवाऽपचये समाः ॥१४॥

द्वादश भाव में पापग्रह हो तो उसकी सम्पूर्ण आयु का ह्रास होता है। ११ भाव में अर्धभाग का ह्रास होता है। दशमभाव में पापग्रह हो तो तृतीयांश, नवमभाव में पापग्रह हो तो चतुर्थांश, आठवे भाव में पचमांश, सातवे में पष्ठांश, आयु का भाग हरण करता है। और शुभग्रह हो तो उक्त भाग का आधा भाग हरण करते हैं॥१०॥ सधिगत ग्रह यदि पाप हो तो उक्त मान आयु और शुभ हो तो आधा हरण करते हैं॥११॥ बारहो सधियो में स्थित शुभ या पापग्रहों के अशादि को अपने अपने आयुवर्ष सख्या से गुणा करके ६० का भाग देने से जो लब्धि प्राप्त हो वह सधि में कम करने से जो शेष रहे वह आयु का हरण फल हुआ। यह सस्कार ग्रह के स्पष्ट में राशि होने पर ही करना चाहिए। राशि न होने पर पापग्रह का तो यही सस्कार है। शुभग्रह में आयु के अंको को द्विगुणित करके उससे अशादि को गुणा करना। बाद ६० का भाग देकर लब्धि को सधि में घटाना तो आयु का हरण फल होता है। अथवा एक जगह राशि हो अन्यत्र नहीं हो तो अधिक में से कम को घटाकर शेष बचे सो आयु हरणफल होता है॥१२॥१३॥१४॥

बहवो बलिनो घति समाश्रेत्प्रथमो मतः ॥ अशकं ग्रहयोगे च द्वयोः पापे हरत्युत ॥१५॥ सौम्योपि पापवर्गे च स्थितो रिफादिपदसु चेत् ॥ त्रिपुभावगतानां च पापानां करणं स्मृतम् ॥१६॥ कुटुंबभरणं चापि दुश्चित्त लाभमेव च ॥ मेधां च प्रतिभा शान्ति मंदक्रोधं करिष्यति ॥१७॥ अस्तगतानां सर्वेषां दत्त दायः स्मृतस्तदा ॥ राशिसख्यासमाश्रान्दा सप्रेक्ष्ये बलवत्तरम् ॥१८॥ अशान् लिप्ताहतान् कृत्वा खलासिम्यां समाहृताः ॥ शेषा मासादयः प्रोक्ता वर्तमानाब्दयोजने ॥१९॥

इस प्रकार सधिगत एक एक ग्रह का फल कहा गया। यदि एक ही सधि में अनेक ग्रह हो तो उनमें पाप ग्रह आयु का हरण करता है, शुभग्रह नहीं॥१५॥ दो शुभग्रहों का योग हो तो जो ग्रह पापवर्ग में हो अथवा ७वे से १२वे भाव तक हो तो आयु का हरक (हरण करने वाला) होता है। इसी प्रकार ७वे से १२वे घर तक रवि, मंगल, शनि हो तो भी आयु का हरण करते हैं॥१६॥

बिन्दु के सम्बन्ध में विचार—पापग्रह १२वे भाव में हो तो कुटुम्ब का पोषण वाग्व होता है। ११ वे भाव में हो तो दुश्चित्त करे। १०वे घर में लग्ना। ९वे घर में ज्ञान का उदय। ८वे घर में शान्ति। ७वे घर में क्रोध का रक होता है॥१७॥ जो ग्रह अस्त हो उनका जो फल प्राप्त हो उसका आधा भाग हरण होता है। यदि लग्न में चन्द्रमा वलवान् हो तो लग्न की राशि की मर्या ही आयु के वर्ष जानना। लग्न में चन्द्रमा वलहीन हो या न हो तो अशो वी ६० में गुणा कर २०० में भाग देकर लग्न वर्षादिक आयु जानना॥१८॥१९॥

कूरेकूरोदयधं समष्टोत्तरशतैर्हृतम् ॥ लग्न चापचये दाये ह्ये तथा परमायुषि ॥२०॥ स्वोच्चे

मूलत्रिकोणे च लब्धस्यार्धं विवर्जयेत् ॥ मित्रैश्चिमुहृदि प्रोक्त पादोनेनापनायनम् ॥२१॥
 भावेष्वेव विधिः प्रोक्तो वर्गाणामधिपेषु च ॥ तिष्ठती शुभपापौ चेत्यापोदयविधिः स्मृतः ॥२२॥
 क्रूरेष्टमेष्टमाशेन भावस्याप्यनुपाततः ॥ लग्नाधिपेतराष्टाश पापो हरति मृत्युगः ॥२३॥
 बह्वश्वेद्वतीसौम्यपापेष्वेवविधिः स्मृतः ॥ तयोर्दायातर दाय केन्द्रस्य च विधीयते ॥२४॥

लग्न में पापग्रह हो तो लग्न के अशादि को पापग्रह की नवाश राशि से गुणा करके १०८ का भाग देना। जो लब्ध हो सो आयु में से कम करना तो स्पष्ट आयुर्दाय होती है। लग्न में पापग्रह उच्च राशि या मूल त्रिकोण में हो तो पूर्वोक्त रीति से जो लब्धाङ्क प्राप्त हुआ है उसको आधा करके परमायु में घटाना। यदि पाग्रह मित्र या अधिमित्र का हो तो चतुर्थांश कम करके बाकी स्पष्ट आयु जानना। यदि लग्न में शुभ और पाप दोनों ग्रह हो तो जो बलवान हो उसके अनुसार क्रिया करना ॥२० २२॥

आठवे भाव में पापग्रह हो तो लग्नेश को छोड़कर और भावों के स्वामी की अष्टमाश आयु का हरण करता है ॥२३॥ यदि अनेक पापग्रह हो तो जो बलवान हो उसमें पूर्वोक्त विधि से आयु हरण करे। अथवा शुभ पाप दोनों प्रकार के ग्रह हो तो दोनों ग्रहों के आयुफल का अन्तर करके जो बाकी रहे वह आयुफल होता है। इसी प्रकार केन्द्रस्थित ग्रहों के लिये भी समझना चाहिए ॥२४॥

सेन्द्री राहौ दशा राहोरानीता मूलदायवत् ॥ चद्रायुपिडित शोभ्या तद्राहुकरण स्मृतम् ॥२५॥
 अशदायक्रमेणैव तमसोऽब्दा समीरिता ॥ तस्मिन्सचन्द्रे तत्त्वप्रभावसाधनतस्ततः ॥२६॥
 तत्तद्बृष्टिहत कृत्वा पष्ट्याप्त धनशोधने ॥ सौदये च सराहिदादेव न्यायः समीरितः ॥२७॥
 स्थानवृद्धिं क्षय कार्यो द्रेष्काणर्क्ष सराशिकम् ॥ अस्तगतानामर्ध स्याद्विना मृगुसुत शनिम् ॥२८॥
 तयोर्वेदागहीन स्यात्प्रशोनशत्रुगस्य तु ॥ अगारक वर्जयित्वा शत्रुक्षेत्रगतैर्ग्रहैः ॥२९॥

अब चन्द्रयुक्त राहु का विचार कहते हैं चन्द्रयुक्त राहु हो तो पूर्वोक्त रीति से दशा स्पष्ट करके चन्द्रमाकी आयु घटाना जो शेष रहे वह राहु का वर्षादि स्पष्ट होता है ॥२५॥ यदि चन्द्र सहित राहु लग्न में हो तो लग्न के आयु स्पष्ट से राहु दृष्टि और चन्द्र दृष्टि को गुणाकर ६० से भाग देना। शेष मकरादि में धन तथा कर्कादि में ऋण करना तो आयु स्पष्ट होती है ॥२६॥२७॥

द्रेष्काण योग से आयु की वृद्धि तथा ह्रास—द्रेष्काण तथा भाव की राशि एक हो तो भाव स्थान फल की वृद्धि होती है। मित्र हो तो क्षय होता है। अस्तगत ग्रहों का आयुर्दाय आधा होता है ॥२८॥ शुक्र शनि अस्तगत हो तो ३/४ (पौना) होता है ॥२८॥ शत्रु क्षेत्री ग्रह का आयुर्दाय मगल विना तृतीयांश कम होता है। मित्र क्षेत्रीग्रह का पष्टांश कम होता है ॥२९॥

सुहृद्वर्गगताना तु तद्वल हरति स्वकम् ॥ एव भावेषु सर्वेषु यद्विधि हरण न हि ॥३०॥ हरण नैव कर्तव्यमशदावेष्टवर्गजि ॥ स्वोच्चे च त्रिगुणे प्रोक्त स्वयमे द्विगुण तथा ॥३१॥ अधिमित्रग्रहे सार्धे त्र्यश मित्रग्रहे द्युतम् ॥ भरावध्यरिभावे च त्र्यशखडविवर्जितम् ॥३२॥ अष्टवर्गोत्पदापेषु प्रोक्तोऽयं विधिर्जज्ञता ॥ भावदापेषु सर्वेषु प्रोक्तोऽयं विधिरुत्तमः ॥३३॥ दायगस्य तु सर्वस्य सहास्य दत्त भवेत् ॥ मुतधर्मगयोस्त्रयश पाद मृतिमुखस्थयोः ॥३४॥

पूर्वोक्त ६ प्रकार के जो आयु हरण की रीति बही है वह ग्रहा के विषय में जानना भावा

के विषय में नहीं॥३०॥ अष्टक वर्गोत्पन्न अशायु में हरण नहीं होता। प्रत्युत योग करना। उच्च का ग्रह हो तो प्राप्त आयु को त्रिगुणित करना। स्व राशि का हो तो द्विगुणित। अधिमित्र का हो तो अर्धधिक (ड्योढा)। मित्र राशि का हो तो तृतीयांश युक्त। शत्रु राशि अथवा अधिशत्रु राशि का हो तो तृतीयांश हीन करना। यह रीति अष्टकवर्गोत्पन्न आयु तथा भावायु में भी समान रीति से करना। आयुर्दाय का जो स्वामी है उसका जो दाय भाग है उसका आधा भाग दायपति के साथ रहनेवाला ग्रह लेता है। दायेश से त्रिकोण में स्थित ग्रह तृतीयांश हरण करता है। राप्तमस्थ ग्रह सप्तमांश हरण करता है॥३४॥

सप्तांशं सप्तमस्यस्य प्रक्रिया प्रोच्यतेऽधुना ॥ अशान्तरस्वरहताञ्छेदेनैव विभाजितम् ॥३५॥ तत्तदंशविभक्तं च स्वस्य स्वस्य समं भवेत् ॥ नीचार्धपक्षे सर्वत्र विधिरेव विधीयते ॥३६॥ नीचाभावेष्टवर्गोत्थ भावदायेऽशकृत् ॥ नाय विधिः स्मृतस्तत्र बहवश्चेतु तेऽस्तितम् ॥३७॥ केन्द्रादिगा ग्रहाः सर्वे ददत्येवापहत्य च ॥ अर्धत्रयशच पाद च हरणाभावसम्मतौ ॥३८॥

अन्तरदशा का प्रकार—अशच्छेद और समच्छेद करके मूल दशा को गुणा करना और अशच्छेद तथा समच्छेद का भाग देना। तो स्पष्ट अन्तरदशा प्राप्त होगी॥३५॥३६॥ यह पूर्वोक्त प्रकार वही होया जहा ग्रह नीच का न हो। तथा अष्टक वर्गायु और अशायु में भी नहीं होता॥३७॥ सम्पूर्ण ग्रह केन्द्र में अर्ध, पणफर में तृतीयांश तथा आपोक्लिम में चतुर्थांश आयु देते है॥३८॥

| अथ दशाक्रमवक्रमाह | | | | | | | | |
|-------------------|------|------|------|------|------|------|------|------|
| शु० | म० | पु० | म० | ल० | म० | शु० | च० | योग |
| १७ | ७ | ५१ | ० | १ | ६ | ३ | ६ | ५९ |
| ९ | ७ | २ | ० | ९ | ९ | ६ | १० | ८ |
| २ | २५ | २६ | ० | २४ | २७ | १४ | ४ | ७ |
| ३ | ३३ | ४६ | ० | १९ | ३८ | ३४ | २४ | ३४ |
| ३२ | ० | ० | ० | ३६ | ० | ४२ | १२ | १२ |
| १९०० | १९१८ | १९२६ | १९३१ | १९३१ | १९३३ | १९४० | १९४३ | १९६० |
| १० | ७ | ३ | ५ | ५ | ३ | १ | ८ | ६ |
| ४ | ६ | १ | २८ | २८ | २२ | २५ | ५ | ९ |
| १४ | १७ | ५० | ३६ | ३६ | ५६ | ३४ | ९ | ३३ |
| २२ | ५४ | ५४ | ५४ | ५४ | ३० | ३२ | १२ | २४ |

| अश्लेषाचक्रम् | | | | अन्तरदशाचक्रम् | | | | |
|----------------|----|-----|-----|----------------|------|------|------|------|
| च० | स० | शु० | मौ० | व | स० | शु० | मौ० | योग |
| १ | १ | १ | १ | ९ | ३ | २ | २ | १६ |
| १ | ३ | ४ | ४ | ७ | ० | ३ | ३ | १० |
| | | | | ५१ | २२ | १६ | १६ | ४ |
| | | | | २३ | ३७ | ५७ | ५७ | २४ |
| | | | | | १ | ५४ | ५४ | १२ |
| सप्तमोदचक्रमाह | | | | | | | | |
| च० | स० | शु० | मौ० | १९४३ | १९५२ | १९५५ | १९५८ | १९६० |
| | | | | ८ | १० | ११ | १ | ६ |
| ४८ | १६ | १२ | १२ | ८ | १६ | ८ | २५ | १२ |
| ४८ | ४८ | ४८ | ४८ | २७ | १८ | ५५ | ५३ | ५१ |
| | | | | ३२ | ५५ | ५६ | ५० | ४४ |

सर्वद्वित्रिजिदेवाश्च त्रिपदसप्ताष्टपाणय ॥ स्वर्कहोरादकाणेशास्त्रिशशेशाद्विभागया ॥३९॥
 नवार्ककालहोरेषा षष्ट्यशेषकलाशयी ॥ भुजते च क्रमात्सर्वे त्वतर्दयिविधी तथा ॥४०॥
 ग्रहाभ्यावात्ततस्तस्मात्स्थिताना द्वादशस्वपि ॥ भावान च क्रमात्प्रोक्ता भागाशाश्च स्वयम्भुवा
 ॥४१॥ सर्वद्विदेसप्ताष्टषट्त्रिरत्नदिशाऽय ॥ वेदाया हारका एव ग्रहाणा समुदीरिता
 ॥४२॥ हत्वा दाय बले स्वैस्तु बल योगेन भाजयेत् ॥ आपव्यये तु भावाना ग्रहाणा
 विपदाविषु ॥४३॥ सर्वाद्वित्रीषुवेदत्रिष्व सप्त तत क्रमात् ॥ स्थानातरे तु भागाशा सर्वभावेषु
 कीर्तिता ॥४४॥ सर्वत्रिसप्तरत्नेषुषट्त्र्याग्निद्विपमा क्रमात् ॥ कालाशा अर्धहोराशा पतयोऽय
 हरा यथा ॥४५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेदायवर्णन नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

अन्तरदशा का स्वामी स्वराशि मे हो तो पूर्ण आयु, होरा मे आधा, द्वेष्वाज मे तृतीयाज कम तथा त्रिशाज मे तीसरा भाग, सप्ताशक मे चतुर्थाज भोगता है। नवमाज मे तृतीयाज तथा द्वादशाज मे हो तो छठा अंश, होरापति हो तो सातवा भाग, षष्ट्यज का स्वामी हो तो आठवा भाग भोगता है। षोडशाज मे आधा भाग भोगता है। यह अन्तरदशा का पाचव क्रम कहा गया है ॥३९॥४०॥ ग्रहों के और भावों के भागाज जो ग्रहा ने कहे हैं मौ कहे जाते हैं ॥४१॥ प्रथम भाव का गपूर्ण आयु, दूसरे भाव की आधी, तीसरे भाव की चतुर्थाज, चौथे की सप्तमाज, पंचम की अष्टमाज, छठे की षष्ट्याज, सातवे की तृतीयाज आठव की नवमाज, नवम की दशमाज, दशम की गप्तमाज, ग्यारहवे की चतुर्थाज, बारहवे भाव की आयु का षष्ट्याज भाग हारक जानना ॥४२॥

भावो के भागांश—११, १२ भाव का निर्णय यह है कि पूर्वोक्त रीति से हरण करके जो शेष रहा उसको अपने अपने बल से गुणा करे, सर्व बलयोग से भाग देना जो लब्ध हो, वह स्पष्ट अन्तरदशा है। इसी प्रकार तीसरे भाव का सर्वांश, चौथे भाव का आधा, पाचवे का तीसरा, छठे का पाचवा, सातवे का चौथा, आठवे का तीसरा, नवे का पाचवा, दशवे का ७ वा. भाग, भागांश कहे जाते हैं तथा प्रथम भाव का सम्पूर्ण भाग, दूसरे भाव का आधा भाग भागांश होता है। कालांश तथा अर्ध होरांश पति कहते हैं— सम्पूर्ण, तृतीयांश, सप्तांश, तृतीयांश, पचमांश, षष्ठांश, तृतीयांश, द्वितीयांश और द्वितीयांश ये अधिपति और हारक होते हैं॥३९-४५॥

इति श्रीबृहत्सारासहोराशास्त्रेउत्तरखण्डे भावप्रकाशिकायादायवर्णन पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

पुनः दायवर्णनाह

ग्रहेषु सर्वेषु बलोत्तरेषु स्वोच्चाशयेषु प्रबलस्य वर्गो ॥ दिग्वीर्यचेष्टाबलपूर्तिर्युक्ते षण्डयेषु नीचार्थकृतापहाराः ॥१॥ अष्टत्रिंशद्भूदा सति ता. स्वोच्चादिसुसंस्कृताः ॥ लघादिभावगानां च ग्रहाणां स्थितिभेदतः ॥२॥ द्विमाश्रुतुरशोतिश्रमिदा संतिद्विजोत्तम ॥ स्वोच्चादिस्थितिभेदेन मित्राः सूर्येषुभूमयः ॥३॥

पुनः दायवर्णन

पिंडायु की विविध भेद प्रकार सख्या—पहले पिंडायु प्रकरण में पिंडायु के १२ भावों की आधा, तिहाई, चौथाई घटाने से $१२ \times ३ = ३६$ तथा २ अन्य भेद, इस प्रकार ३८ भेद यह आये हैं। ये ३८ भेद उच्च स्कार होने से $३८ \times २ = ७६$ भेद होते हैं। तथा १२ भावों में उच्चांश, अधिक बल, दिग्बल, चेष्टाबल, वर्ग बल आदिक ७ ग्रहों के भेद में $१२ \times ७ = ८४$ भेद होते हैं। और हे मैत्रेय! इन ७ ग्रहों के स्वरांश, उच्च, मूल, त्रिकोण आदि ९ गुणयोग तथा ९ अगुण योग मिलाकर १८ गुणित होने पर $८४ \times १८ = १५१२$ भेद होते हैं। इस प्रकार ७६ और १५१२ भेद पिंडायु के होते हैं॥१॥२॥३॥

सप्तप्रानां बलैः सर्वैरधिकानां क्रमाद्द्विज ॥ अगोऽवस्तया षण्डयो निसर्गोत्थाभिधः परः ॥४॥ शतस्वरांशो भौमाच्च नक्षत्रांशकसज्जको ॥ स्वरांशश्चेतरो दायः करदायस्तथेततः ॥५॥ स्वोच्चनीचमुहुच्छुद्रवर्गीश्व नतुर्विधः ॥ अतिनीचातिशयोश्च भागराशिगतस्य च ॥६॥ समुदायाष्टवर्गश्च मित्राष्टक उदीरितः ॥ तत्र भूलत्रिकोणे च मित्रवर्गो च वृद्धिकृत् ॥७॥ तथा समारिवर्गो च न वृद्धिहरणे तथा ॥ सूर्यादयः क्रमात्तत्प्रगताश्चेद्वलवन्तराः ॥८॥

जिस बल से कौनसी आयु लेना, यह कहा जाता है। है मैत्रेय! लग्न बलवान् हो तो अशायु लेना, सूर्य बलवान् हो तो पिंडायु लेना, चन्द्र बलवान् हो तो निमर्गायु लेना, मंगल बलवान् हो तो स्वराशायु लेना, बुध बलवान् हो तो नक्षत्रायु, गुरु बलवान् हो तो नवांशायु, शुक्र बलवान् हो तो स्वराशायु, शनि बलवान् हो तो वर दाय आयु लेना॥४॥५॥

उच्चादि बल के कारण आयु के ग्रहण या विचार—उच्च वर्ग में हो तो पिंडायु, नीच वर्ग

मे हो तो निसर्गायु, त्रिवर्ग मे हो तो स्वराशायु, शत्रुवर्ग मे हो तो नक्षत्रायु, अति नीच नवाश मे हो तो समुदायाष्टक वर्गायु, अति शत्रु नवाशक वर्ग मे हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु लेना॥६॥ जो ग्रह मूल त्रिकोण के त्रिवर्ग मे हो तो पूर्वोक्त रीति से वृद्धि करना। नीच तथा शत्रु वर्ग मे हो तो कम करना। सम शत्रु वर्ग मे हो तो कम करना। सम शत्रुवर्ग मे यथा प्राप्त आयु ग्रहण करना॥७॥ सूर्यादिग्रह बलवान होकर लग्न मे स्थित हो तो उनके बल के अनुसार आयु लेना। यथा सूर्य से पिण्डायु, चन्द्र से ध्रुवायु, मंगल से समुदायाष्टक वर्गायु, बुध से भिन्नाष्टक वर्गायु, गुरु से क्रमानुगत आयु, शुक्र से अशायु, शनि से करदाय आयु ग्रहण करना॥८॥

पैडघो ध्रुवोऽष्टवर्षोत्थं प्रक्रमानुगतोऽशकः ॥ करदायकमाल्लग्नं रव्यादीं तु स्थिते सति ॥९॥ पैडघः स्वरांशो ध्रुवोय एव तत्प्रक्रमांशश्च तथोशकोत्थः॥ भिन्नाष्टवर्गः समुदायतन्तः करोत्य उच्चादिषु योजनीयः ॥१०॥ ध्रुवः सुप्तस्यस्य तु सप्तमस्य पैडघः स्वरांशः सप्तु कर्मगतस्य ॥ द्वितीयस्यस्य च पैडघ उक्तस्तृतीयधीर्धर्मगतस्य चैव ॥११॥ षष्ठव्ययस्यस्य तु भिन्नसप्तत-
थेतरो मृत्युगतस्य चैवम् ॥ पैडघः स्वरांशो ध्रुव आयु उक्तं पैडघौ भवेदाद्यगतस्य चैव ॥१२॥

लग्न मे उच्चादि भेद से स्थित ग्रह से आयु का ग्रहण लग्न मे उच्चराशि का ग्रह हो पिण्डायु लेना। त्रिकोण मे उच्चराशि का ग्रह हो तो स्वरायु लेना। स्वराशि का हो तो ध्रुवायु लेना। अधिमित्र का हो तो प्रक्रमाश आयु। मित्रक्षेत्री हो तो अशायु। शत्रु क्षेत्री हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु। अधिशत्रु क्षेत्री हो तो समुदायाष्टक वर्गायु। नीच का हो तो अशायु लेना चाहिए॥९॥१०॥

मतान्तर-लग्न से चौथे घर मे ग्रह हो तो ध्रुवायु, ७वे हो तो पिण्डायु, २,१०वे घर मे स्वराशायु, ३,५,९वे घर मे हो तो पिण्डायु, ६ठे घर मे हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु ८वें घर मे हो तो समुदायाष्टक वर्गायु, लग्न मे हो तो पिण्डायु, ११ वे घर मे हो तो पिण्ड, स्वर, ध्रुव इन ३ आयु मे से एक आयु लेना॥११॥१२॥

लाभेरवीं द्वारबुधेज्यशुक्रमदा. स्थिताः प्रक्रमदाय एव ॥ लग्नार्थमीमजरवीन्दुमन्दशुक्रास्तृतीये सुतमे च धर्मे ॥१३॥ स्वेशुक्रमदार्थबुधार्थमीमचद्रा. सुतेज्जते निधनेऽपिचैव ॥ बुधात्क्रमाद्व्यु-
त्क्रमतश्च चन्द्राद्भीमार्थमदार्थसितजचद्राः ॥१४॥ षष्ठे व्यधे कर्मणि लाभगा वा रवीन्दुशुक्रा-
र्किकुजार्थसौम्याः ॥ सौम्यात्कुजाद्भारगवतः क्रमात्स्युमिन्ने तु बाये क्रमशः प्रदिष्टम् ॥१५॥ नक्षत्रदापोऽशकपिडदापो भिन्नाष्टवर्गः समुदायतन्तः ॥ स्वराशदापो क्रमशः प्रदिष्टो विशेष-
तस्तत्र वदामि यस्मात् ॥१६॥

वारह भावो मे मित्रायु लेने का प्रकार-एकादश स्थान मे ७ ग्रहो की आयु लेना। लग्न तथा ३,५,९ भाव मे गुरु, मंगल, बुध, सूर्य, चन्द्र, शनि, शुक्र, इस क्रम से आयु लेना। २७ भाव मे शु० श० गु० बु० सू० म० च० इस क्रम से आयु लेना। ४वे घर में बुध, सू० म० च० शु० श० गु० इस क्रम से, ७ वे भाव मे च० म० सू० बु० गु० श० शु० इस क्रम से, ८वे भाव में म० सू०

श० गु० शु० बु० च० इस क्रम से, ६ठे भाव में सू० च० शु० श० म० गु० बु० क्रम से, १२वें भाव में बु० सू० च० शु० श० म० गु० क्रम से, १०वें भाव में म० गु० बु० सू० च० शु० श० क्रम से, ११वें भाव में शु० श० म० गु० बु० सू० च० इस क्रम से आयु देने वाले कहे गये हैं॥१३॥१४॥१५॥

आयुर्दाय की गणना—नक्षत्रायु, अशायु, पिण्डायु, मिश्राष्टक, वर्गायु, समुदायाष्टक वर्गायु, स्वराशायु, इनके भेद आगे कहे जाते हैं॥१६॥

अष्टत्रिंशदभिधे तु अकसूर्यकलाशकं ॥ मूर्छालिणी भिदा सति रश्मिजास्त्रिंशदेव हि ॥१७॥
 एकस्य विषये द्वौ चेदाययोगदत्त भवेत् ॥ ज्यादयश्चेद्युतास्त्रिंशदिसंख्याप्ताश्च वशा भवेत् ॥१८॥
 रवावुच्चगते चान्ये बलिष्ठा मूलकोणगा ॥ स्वोच्चस्थेषु बलिष्ठेषु सर्वेषु शशहसके ॥१९॥
 एष चिरायुषा योगेष्वन्येषु गणितेषु च ॥ चद्रयोगेषु त्रिषु च चद्रे तु बलवत्तरे ॥२०॥
 राजयोगेषु सर्वेषु पैडघमाह पराशर ॥ लग्न गुरौ कर्मगते च भानी चद्रे सुख वास्तगतं बलिष्ठे ॥ पूर्वे त्रिकोणोपचये शुभेषु पापेष्वप्यत्रोक्तमस्त्यतेषु ॥२१॥
 शुभाश्च केद्रे त्रिषडायभेदस्ये विपर्यये पैडघमतः प्रदिष्टम् ॥ रिफाष्टधष्ठेषु सहस्ररश्मौ भौमे क्रमाच्छ्रीतकरे तु पैडघ ॥२२॥
 पापाल्लग्रे चाष्टमे सप्तमे वा सौम्या धष्ठे कर्मभिरिफभेदा ॥ नीचाभावे पैडघाय प्रदिष्टो मदे लग्ने स्वोच्चगते च ध्रुवास्य ॥२३॥

अभिधित आयु के भेद ३८ होते हैं उनमें नवाश, द्वादशाश, पौडशाश के भेद में २२१ भेद होते हैं। रश्मि आयु के ३० भेद हैं॥१७॥ एक भाव में २ ग्रह आयु दाता हो तो दोनों का योग करके उसका आधा लेना। ३ आदि अधिक ग्रह हो तो सबकी आयु का योग करके ग्रह संख्या से भाग देना। जो लब्धि हो सो वही आयु भाव की होती है॥१८॥

पिण्डायु ग्रहण में विचार—सूर्य उच्च वा हो और ग्रह बलवान् हो तथा शश योग हस योग, दीर्घायु योग, सुनका योग, अमका, दुर्धरा, चन्द्र, राज आदि योग हो तथा चन्द्रमा बलवान् हो तो पिण्डायु ग्रहण करना ऐसा परावर भगवान् कहते हैं॥१९॥२०॥२१॥२२॥

प्रकारान्तर से पिण्डायु ग्रहण का विचार—गुरु लग्न म सूर्य १० चन्द्र ४ अथवा ७, शुभग्रह त्रिकोण या त्रिषडाय में, १, २, ७, ८, १२ में अथवा शुभग्रह केन्द्र, त्रिषडाय में, गुरु १२, मंगल ८, चन्द्र ६ अथवा पापग्रह १, ७, ८, शुभ ग्रह ६, १०, १२ इन भावों में नीच वर्जित हो तो पिण्डायु लेना॥२१॥२२॥ जन्म लग्न म तुलाराणि का जनि स्थित हो तो ध्रुवायु लेना॥२३॥

वीणाया कार्मुके चक्रे गदायामर्धचन्द्रके ॥ रवौ पैडघोऽशको लग्ने ध्रुवश्चन्द्रे च भूमिजे ॥२४॥
 मिश्राष्टवर्ग सौम्ये तु नक्षत्राशसमुद्भूत ॥ गुरौ नक्षत्रदाय स्यात्प्रश्नानुगत सिते ॥२५॥
 समुदायाष्टवर्गस्तु मदे तु बलवत्तरे ॥ वाप्या पाशे शरे पथे समुदायाष्टिषु जमात् ॥२६॥
 बलिष्ठेषु नवाशोक्त्यो ध्रुव पैडघस्वराशक ॥ मिश्राष्टवर्गो ह्यशोक्त्यो नक्षत्राशक ईरित ॥२७॥
 रज्जो विहने मालाया नले च मुसले जमात् ॥ पैडघो ध्रुव जमात्प्रोक्तो रथ्यादौ तु बलोत्तरे ॥२८॥
 गडे शक्ती च मकटे पूषे वेदारशूलयो ॥ प्रश्नानुगतश्राव रश्मिजौ ध्रुवसज्जितौ ॥२९॥
 अष्टवर्गसमुद्भूतौ क्रमादेव बलोत्तरे ॥ नौदत्रवज्रदामान्ये

स्वरदायोऽतिनीचगे ॥३०॥ कूटे गडे शरे नागे गोले शृगाटकं पुनः ॥ कालकूटे क्रमात्प्रोक्ता
पैङ्गाद्याः सप्त वै द्विज ॥३१॥ पैङ्गास्त्रयो ध्रुवाश्रांशवायाश्राष्टकवर्तकौ ॥ द्वेष्काणेषु
नवांशेषु द्वादशांशेषु च क्रमात् ॥ कलांशेषु नव प्रोक्ता दायार्धेव पुनः पुनः ॥३२॥

योग विशेष से आयु ग्रहण—वीणा, कार्मुक, चक्र, गदा, अर्धचन्द्र योग हो, सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु लेना। केवल सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु लेना। लग्न की बलवत्ता में अशायु। चन्द्र बलवान् हो तो ध्रुवायु। मंगल बली हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, बुध बली हो तो नक्षत्रायु, गुरु बली हो तो नक्षत्रायु, शुक्र बली हो तो क्रमानुगतायु, शनि बली हो तो समुदायाष्टक वर्गायु लेना॥२४॥२५॥

प्रकारान्तर—वापी, पाश, शर, पद्म, समुद्र, इनमें से कोई योग हो तथा सूर्य बली हो तो नवाशायु। चन्द्र में ध्रुवायु, मंगल में पिण्डायु, बुध में स्वराशकायु, गुरु में भिन्नाष्टक वर्गायु, शुक्र में अशायु, शनि में नक्षत्राशायु लेना॥२६॥२७॥

अन्य प्रकार—जन्म कुण्डली में रज्जु योग हो तो पिण्डायु, विहग योग हो तो ध्रुवायु, माला हो तो पिण्डायु, नलयोग हो तो ध्रुवायु, मुराल योग हो तो पिण्डायु, गण्ड योग हो तो क्रमायु, शक्ति में रश्म्यायु, शकट में ध्रुवायु, यूप में अशायु, केदार में भिन्नाष्टक वर्गायु, शूल में समुदायाष्टक वर्गायु लेना तथा सूर्यादिग्रह की बलवत्ता भी होनी चाहिए॥२८॥२९॥ नौका, छत्र, वज्र, दामयोग हो, सूर्यादि ग्रह नीच के हो तो स्वराशायु लेना॥३०॥ हे मैत्रेय! कूट योग में पिण्ड, गण्ड योग में ध्रुव, शर में अष्टक वर्ग, नाग में प्रक्रम, गोल में अशायु, शृगाटक में स्वराशायु तथा कालकूट में रश्म्यायु लेना॥३१॥

प्रकारान्तर—लग्न में प्रथम द्वेष्काण हो तो पिण्ड, दूसरे द्वेष्काण में ध्रुव, तीसरे में स्वराश आयु लेना। तवाश में ध्रुवादिक क्रम से ९ आयु लेना। द्वादशांश में अशादिक क्रम से लेना। उच्च आदिक ९ स्थानों में ग्रह हो तो भिन्नाष्टक, समुदायाष्टक, आदि क्रम से आयु ग्रहण करना॥३२॥

त्रिंशत्सवेदाः स्वरपावकाश्च मुराश्च दत्ताः क्षितिपावकाश्च ॥ पट्त्रिंशदिष्वग्नय एव भानि
छदासि भूर्क्षाश्च जिनाः कराश्चेत् ॥३३॥ पैङ्गस्तया द्वादशाधा प्रभिन्नः क्रमेण दायो नियतः
प्रविष्टः ॥ तत्त्वाग्निदाप्रय एव रत्नबलास्त्रिदत्ता ध्रुवदायभेदाः ॥३४॥ एकस्त्रयश्चेत्समु-
दाय सप्तस्तत्सु वेदा इतरोऽष्टवर्गः ॥ पचादिकेष्वशकदाय जक्तौ द्वादश सूर्या यदि पैङ्ग
आद्यः ॥३५॥ विंशे मनुश्चेत्स्वरभागदायो नक्षत्रदायस्यतिसप्तकश्चेत् ॥३६॥ नृपेत्पाष्टित्रये
प्रोक्ता आद्यपैङ्गमिहास्तथा ॥ प्रक्रमानुगतो विशत्याष्टत्रिशोऽष्टवर्गजः ॥३७॥ चत्वारिंशत्त्रये
पैङ्गो नक्षत्राशस्त्रये ततः ॥ गोपेयु पट्सुपैङ्गः स्यादाद्यो गर्गोपमाह च ॥३८॥ इष्टरश्म्यधिक
प्रोक्तक्रम एव कराधिकं ॥ कैद्रादिषु ग्रहाणां च बलीतरवशात्क्रमः ॥३९॥

अब रश्मि के भेद से आयु का भेद कहा जाता है। रश्मि के योग की संख्या २१।२४।२६।२७ तथा ३० से ३७ तक हो तो पिण्डायु लेना। और २५।२९।२३।२९ योग हो तो ध्रुवायु लेना। तथा १।२।३ योग हो तो समुदायाष्टक वर्गायु लेना। ४ का योग हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, ५ से १० तक योग हो तो अशायु, ११।१२ में पिण्डायु, १३।१४ में

स्वरानायु, १५ मे नक्षत्रायु, १६ से १९ तक पिण्डायु, २० मे प्रक्रम आयु, ३८ मे अष्ट वर्गायु, ४०।४१।४२ मे पिण्डायु, ४३।४४।४५ मे नक्षत्रायु, २२।२८ तथा ४६ से ४९ तक रश्मि योग हो तो पिण्डायु लेना। यह गर्ग ऋषि का कथन है॥३३ से ३९ तक॥

बलौत्तरवशादेव स्थानेतरवशात्तथा ॥ इष्टात्फलक्रमादेव रश्म्युक्तविधिना क्रमात् ॥४०॥
कल्पादौ भगवान् गर्ग प्रादुर्भूय महामुनि ॥ ऋषिभ्यो जातक सर्वमुवाच कलिमाश्रित ॥४१॥
अस्मिन्नुत्तरभागे तु मयानुक्तं च यद्भवेत् ॥ तत्सर्वं गर्गहोराया मैत्रेय त्व विलोक्य ॥४२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे दायप्रकरण नाम षोडशोऽध्याय ॥१६॥

यह आयुर्दाय के भेद बल की न्यूनाधिकता से तथा मित्रादि भेद एवं स्थान बल के तारतम्य से इष्ट, कष्ट, बल योग से एवं रश्मि के निमित्त से कहे गये हैं॥४०॥ बलिपुत्र के प्रारम्भ मे गर्ग मुनि ने अपने शिष्यों को बहा था। जो इस विषय मे हमने नहीं बहा है वह गर्ग होरा मे देख लेना॥४१॥४२॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उ० म० भावप्रवा० आयुर्दायप्रकरणे

षोडशोऽध्याय ॥१६॥

अथ कलांशादि फलमाह

भाग्य कर्म च यक्ष्यामि मैत्रेय भृशु सुप्रत ॥ भाग्योदेव नृणा सिद्धिभाग्यदेव धनायतौ ॥१॥
यशासि भाग्यतो भाग्यविपर्यासाद्विपर्ययः ॥ करिष्यमाणकर्मणि ज्ञातव्यानि प्रयत्नतः ॥२॥
तत्प्रादिन्वोश्च नवम भाग्य बलवगाद्भवेत् ॥ शुभपापारिमित्राख्यैर्ग्रहेरेव शुभाशुभे ॥३॥
उच्चादिपञ्चकाद्बुद्धिरन्यस्माद्वानिरिष्यते ॥ स्वस्मिन्नन्यत्र विषये स्वदेशेतरदेशयो ॥४॥

बलांशादि फल

हे मैत्रेय! ऐश्वर्य तथा शुभाशुभ व्यापार का माघन धन, तथा यशप्राप्ति यह सब भाग्योदय से होती है अतः भाग्योदय का लक्षण कहा जाता है॥१॥२॥ नक्ष तथा चन्द्रमा में नवम भाव, भाग्य का स्थान है। इसमे वनायल के अनुसार भाग्य की वृद्धि या हानि का विचार करना। उच्च स्वर्गही, मित्र देशी अग्निमित्रदेशी भूतमित्रदेशी होकर जो छह भाग्यभाव मे स्थित हो तो भाग्य की वृद्धि होती है। नीच भूभुदेशी अग्निभूभुदेशी तथा समराणि मे होकर भाग्यम्भान मे हो तो भाग्य की हानि करता है। भाग्येश स्वर्ग मे हो तो स्वर्ग मे एवं परवर्ग मे हो तो परदेज मे भाग्योदय होता है॥३॥४॥

स्वेव्यन्येषु तु वर्गेषु ज्योतिर्विद्भाग्यु स्थिते ॥ अष्टमो रागिनिज्जाया मन्त्राग मन्त्रोर्जित ॥५॥
अष्टादशार्धकालास्तु बलरा इति कीर्तित ॥ चन्द्रपक्ष एवं चन्द्रपक्ष इमे पक्ष स्मृता ॥६॥
भाग्यप्रबोधोपगतैः शुभ स्याद्भाग्य तु वेन्द्रोपगतैः शुभम् ॥७॥
पारैरन्यथा स्यादशुभं च भाग्य मित्रादिभिः स्याद्विषयो विगिष्टान् ॥८॥
एवं भाग्यविपर्यासौ भावनां च वदेत्तथा ॥

भावग्रहातरकला द्विशत्यान्ता समादय ॥९॥ द्विमाद्विमा करमाश्च षष्ट्यान्ताश्च समादय ॥ अयेष्टादिकलत्र च समयो भाग्यभावयो ॥१०॥

सप्ताश षोडशाश, षष्ठ्यश-राशि, अश की कला करके ७ का भाग देना, लब्ध सप्तमाश, १८ १२ का भाग षोडशाश तथा ६० का भाग षष्ठ्यश कहाता है। अथवा राशिचक्र को २९ से भाग देना तो षोडशाश होता है ॥५-७॥

लत्र तथा चन्द्रमा से जो नवम् स्थान हो उससे केन्द्र १४।७।१०) त्रिकोण (५।९) भाव में शुभग्रह हो तो भाग्य उत्तम और पापग्रह हो तो अशुभ होता है। परन्तु यह विशेष है कि उपर्युक्त राशिपौ में स्थित ग्रह स्वराशि मित्रराशि आदि के होने चाहिये। नीचादि होने से नेष्ट फल समझना चाहिये ॥८॥

भाग्योदय वर्ष-भावस्पष्ट और ग्रहस्पष्ट राश्यादि का अन्तर करना। पश्चात् कला करके २०० का भाग देना। लब्ध वर्ष, मासादिक जानना, पश्चात् द्विगुणित करके दो जगह रखना। एक जगह के अंक को द्विगुण करके ६० का भाग देकर दूसरी जगह के अंक में कम करना। शेष रहे वह भाग्योदय का वर्षादि समय होगा ॥९॥१०॥

फलेन च दशमेन रश्मिना च हुतास्तया ॥११॥ भावाष्टवर्गोत्थसमाहिततत्प्रधान्तरोत्थास्तु समादय स्यु तत्तदग्रहोत्थाब्दहुतास्तया स्पुरेव तथा भाग्यफलानि तत्र ॥१२॥ स्थानानि नववर्गाश्च तेषां भाग्यफल शृणु ॥ रव्यादीनां क्रमाच्छृण्वामरादेश्च विज्ञये ॥ कृषिकर्मणि सेवाया पैशुन्ये लिपिकर्मणि ॥१३॥ धनार्जने व्यये व्याधौ गमनागमनविज्ञये ॥ विवादे प्रेतकार्ये च भ्रातृणां कलहे तथा ॥१४॥ धनार्जने सुते दारग्रहणे लिपिकर्मणि ॥ उन्वादिस्थानवर्गेषु लाभदश्च रवि क्रमात् ॥१५॥

प्रकारान्तर-ग्रह, भाव के अन्तर को १० से गुणा करना। बाद उसी ग्रह की रश्मि से भाग देना। शेष वर्ष मासादि भाग्योदय का समय होता है ॥११॥ इस प्रकार प्रत्येक भाव के फलप्राप्ति का ऊपर कही रीति से जानना और भाव के फल का विशेष निर्णय आगे कहे अनुसार नी वर्ग से कहना ॥१२॥

अब ग्रहों के उच्चरदि वर्ग बिचार से फलविशेष का निर्देश किया जाता है।

सूर्य का फल-सूर्य यदि उच्च, त्रिकोण, स्वगृही, मित्रराशि, अतिमित्रराशि अथवा इनके वर्ग में हो तो निम्नलिखित वस्तुओं के व्यापार से लाभ होगा। शृण, चामर, कृषिकर्म, सेवा दुर्जनकर्म, लिपिकर्म, व्याज, वैद्यक वणिज, बकालत, प्रेतकार्य, भ्रातृकलह, पुत्र से विवाह आदि कार्य से लाभ होगा ॥१३-१५॥

शस्त्रमाणिक्वपुस्तानां लामे तत्कर्मविज्ञये ॥ सुरते स्त्रीषु मैत्रे च राज्ञ पुरुषमित्रता ॥१६॥ धनार्पितस्तया तत्र मैत्र च कृषिकर्मणि ॥ वस्त्रादिधनसिद्धिश्च बाह्यणेन विरोधता ॥१७॥ धननाशो भवेच्छुद्धे पराजयपरामर्श ॥ कलासाधार्थहोरासाफलानि क्रमशः स्थिते ॥१८॥ स्वर्णसिद्धिर्जयो वस्त्रतामो मित्रसमागमः ॥ विवादो भ्रातृभिः शत्रुकर्म स्त्रीचञ्चलादयः

॥१९॥ स्त्रीलाभो दासलाभश्च कृत्स्नेहा च बलक्षयः ॥ बलैर्घनायतिः स्वोच्चे क्षेत्राद्यैर्न्यायितो भवेत् ॥२०॥ मूलत्रिकोणे क्षेत्रेण राज्ञो वाय धनायतिः ॥ स्वर्गे वस्त्रं काचनादिसिद्धिश्चाय सुहृत्फलम् ॥२१॥ धान्यायतिश्च मैत्री च क्रूर कर्मप्रवर्तनम् ॥ कुष्ठ चाप्यग्निमीतिश्च गृह्वाहोर्जितशत्रुभे ॥२२॥

चन्द्रमा उच्चादि राशि या वर्ग (उच्चादि) मे हो तो क्रम से शत्रु, मैथुन, स्त्रीमैत्री, राजपुरुष मित्रता, धननियोग, कृषिकर्म, वस्त्रव्यापार, द्विजविरोध, नीचकर्म से हानि, स्वदेश त्याग, धनहानि, बलहानि यह फल होता है। (यहा शूल से तात्पर्य शस्त्रनिर्मित वस्तु और मणि मुक्तादि है) ॥१६-१८॥

यदि मंगल उच्चादि राशि या वर्ग मे हो तो क्रमशः सुवर्ण सिद्धि, जय, वस्त्रलाभ मित्रसमागम, बन्धुविवाद, शत्रुविद्वेष, चाञ्चल्य, स्त्रीलाभ, दासलाभ, इच्छापूर्ति, बलक्षय, बलप्रयोग से लाभ, यह फल जानना। यदि मंगल भाग्य स्थान मे मूलत्रिकोणी हो तो राज से धनप्राप्ति, स्वराशि का भाग्यभाव मे हो तो वस्त्रादि की प्राप्ति, मित्रराशिगत हो तो अन्नादि की प्राप्ति, यदि अतिशत्रु राशिगत होकर भाग्यभाव मे हो तो क्रूर कर्म प्रवृत्ति, अग्निभय, कुष्ठ, सग्रहणी, गुल्म आदि रोग हो ॥१९-२२॥

ग्रहणी गुल्मरोगश्च धननाशश्च तत्र तु ॥ विद्यार्जने सुखे स्त्रीभिः कलहश्च धनायतिः ॥२३॥ क्षेत्रदासादिलाभं च कृषिकृत्यं धनायतिः ॥ विवादो बहुभिर्गुह्ये जयश्चैव पराजयः ॥२४॥ विद्याबुद्धिधनक्षेत्रवशांसि च फलंति च ॥ राजस्तत्पुरुषेष्वेव स्वर्णक्षेत्रायतिस्तथा ॥२५॥ स्वर्गे धनायतिः प्रोक्ता लिपिना शिल्पकर्मणा ॥ वस्त्रस्वर्णादिसिद्धिश्च राजस्त्रीभिर्धनायतिः ॥२६॥ कायस्य कर्मणा त्वाम्यो विद्यानाशः स्वकर्मणा ॥ धननाशोऽश्मरी कुष्ठं कलांशादिफलं ततः ॥२७॥ विद्यादाद्बुभिर्दायो वेशपर्यटनादनम् ॥ क्षेत्रसिद्धिर्जयो विद्यालाभो धान्य-विबर्धनम् ॥२८॥

बुध का फल कहा जाता है। यदि बुध भाग्यभाव मे उच्चराशि का हो तो विद्या तथा सुख प्राप्त हो। शत्रुराशि का हो तो स्त्रियों से कलह, मित्रराशि मे धनलाभ, भूमि आदि लाभ, कृषि से लाभ। नीचराशि का हो तो बहुविरोध, कलह, हानि, पराजय, आदि हो। यदि उच्चादिगत हो तो विद्या, बुद्धि, धन, यश, सुवर्ण, भूमि तथा राजपुरुष से लाभ हो। स्वराशि का हो तो लेखन, शिल्पकर्म, राजस्त्रीनियोग, वस्त्र, सुवर्ण आदि से लाभ। समराशि मे हो तो शारीरिक परिश्रम से, अति शत्रुधेनी हो तो विद्याविस्मृति, व्यापारनाश, अश्मरी (पथरी) रोग, कुष्ठ आदि रोग हो। अपने पौडशाश मे हो तो बन्धुविद्रोह मे धनप्राप्ति, देशाटन से लाभ तथा भूमि, विद्या, धन, जय लाभ हो। सेती से लाभ, विद्याप्राप्ति के सुयोग की प्राप्ति हो ॥२३-२८॥

कृषिकर्मसमुद्योगः सेवाकरणकौशलम् ॥ विद्यार्जनमथ प्रोक्तं गुरोः श्रीमान् सुखो गुणी ॥२९॥ बह्नायतिरमात्यत्वं सर्वसंपत्तमन्यतः ॥ धननाराः प्रमोहेण क्षेत्रनाराः परामयः ॥३०॥

विद्यार्जन तथा सेवाकरण सपदस्तथा ॥ पुत्रैर्धनापत्तिर्मित्रैः स्त्रीभिश्च कृतकर्मणा ॥३१॥
 विवाहो धनलाभश्च क्रमादेवफल भवेत् ॥ राज्ञा कृत्यकर श्रीमान्पुत्रबधुसम्पत्ति ॥३२॥
 सेनानायस्तथामात्यो विद्यार्जनपरो धनी ॥ पाठको याजकश्चाथ बहुस्त्रीकोऽतिशयुभे ॥३३॥
 स्त्रीसक्तो निर्धनो मूर्ख पातकी भारको भवेत् ॥ सेनाधिकारी राज्ञश्च प्रियैर्बधुभिरापत्ति-
 ॥३४॥ सेवावृत्त्या च कृष्या च विद्यायाः पूर्वकर्मणा ॥ सर्वसंपद्युत श्रीमान् गुरुस्यैव फल
 सभेत् ॥३५॥

गुरु भाग्य स्थान में हो तो धनी गुणी, सुखी, प्रधान, सर्वसंपत्तिमान् हो। शत्रुधेत्री हो तो धन, क्षेत्र नाश, पराजय हो। मित्रगृही हो तो विद्याप्राप्ति सेवक हो और अतिमित्र हो तो ऐश्वर्य प्राप्ति, पुत्रादि से लाभ, धनप्राप्ति, स्त्रीजाति से लाभ, विवाह आदि होता है॥३१॥३०॥३१॥

शुक्रफल—शुक्र उच्चादि स्थानगत भाग्यभाव में हो तो राजसेवी, श्रीमान्, परिवार से सुखी, सेनापति, प्रधान, विद्यासेवी, धनी, अध्यापक, ऋत्विक्, अनेक स्त्रीभोगी होता है। अतिशत्रु राशि में हो तो कामातुर, दरिद्री, बुद्धिहीन, पातकी, भारवाहक होता है। स्वधेत्री हो तो सेनाधिकारी, बन्धुओं से लाभ, सेवा से लाभ, कृषीकर्मी, विद्यासेवी, इष्टापूर्त, दत्त, वापी, फूप, तालाब आदि युक्त सर्वसम्पत्तिमान् होता है॥३१-३५॥

कुजोच्चादिफल चार्हे कलाशादिफल भवेत् ॥ कलाशादिषु यत्प्रोक्त कलाशादि फल त्विदम् ॥३६॥ उच्चादिषु तथा प्रोक्त फलमेव विचितयेत् ॥ स्वभाग्यक्षेपतानृक्षान्यूनान्नाप्यधि-
 कास्तत ॥३७॥ स्वरश्मिध्वान् ग्रहे युक्ते तद्विधिमाम्नास्तपोत्तरम् ॥ त्रिभिर्विभज्य निशेषे
 त्वोजराशी नवाशके ॥३८॥ आदिमध्यावसाने स्याद्युग्मे तत्र नवाशके ॥ आदौ मध्येऽवसाने
 स्याद्युग्मे चोजे नवाशके ॥३९॥ मध्येऽवसाने चाद्ये च युग्मे मध्यातिमादिमे ॥ आदौ
 मध्येऽवसाने स्यादेव चेद्भाग्यलक्षणम् ॥४०॥ ओजराशी नवाशे चेलुग्मे मध्यातिमादिमे ॥
 युग्मे राशी नवाशे चेदोजे मध्येऽन्तिमेऽपि च॥४१॥ प्रथमेऽपि ययस्येव युग्मे मध्येऽतिमादिमे॥
 शेष द्वय चेदेक स्यात्कालोप्यत्यासतो भवेत्॥४२॥ कलाभ्या चाहते तद्वच्चराशौ चरे च भे ॥
 आदौ मध्येऽवसाने स्यात्तिथ्यरेज्जे मध्यमादिमे ॥४३॥

शनिग्रह का फल मंगल के समान जानना॥३६॥

पूर्वोक्त फल प्राप्ति समय जान—भाग्यभाव की नवमाश राशि को भाग्यभाव की रश्मि से गुणा करना, बाद भाग्यभाव स्थितग्रह रश्मि से गुणा करना, पञ्चात् ३ का भाग देना, भाग देने पर शून्य शेष रहे तो नीचे लिखे अनुसार फल की अवधि जानना। भाग्यराशि विषम तथा नवाश राशि भी विषम हो तो चर, स्थिर, द्वि स्वभाव के अनुरार क्रम से आदि, मध्य अंत में फल होता है। नवाश राशि सम हो और भावराशि विषम ही हो तो चरादि राश्यानुसार आदि, मध्य, अंत में फल होता है। और भाग्यराशि सम हो तथा नवाश राशि विषम हो तो चरादि के अनुसार क्रमशः मध्य, अन्त, आदि में फल होता है। नवाश राशि भी सम हो तो चरादि के अनुसार मध्य, अन्त, आदि या आदि, मध्य, अन्त में फल होता है। अथवा विषम

राशि नवाश सम हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल होता है और सम राशि में विषम नवाश हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल होता है। कुमार या युवावस्था में भी इसी प्रकार दोनों युग्म राशि हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल जानना। यदि ३ के भाग देने पर १ या २ शेष रहे तो पूर्वोक्त समय विपरीत जानना॥३७-४३॥

उभये मध्यमे ज्ञेये च आदावेव प्रकीर्तिता ॥ भावाना चैव सर्वेषा चदलशासु लग्नत ॥४४॥
अशदायोक्तवत्कृत्वा शुभपापदगाहृतम् ॥ पण्ट्याप्त तद्वलाप्त स्याद्भ्रात्रादीना च सख्यका ॥४५॥ रश्मिघ्न च बलाप्त च त्वनिष्टमपवादगम् ॥४६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे कलाशादिफले सप्तदशोऽध्याय ॥१७॥

बारहो भावों का विचार जन्म लग्न से तथा चन्द्र लग्न से इस रीति से करना कि प्रथम पूर्वोक्त रीति के अनुसार अंशामुदाय की गणित करके दो स्थान में रखना। एक जगह शुभ दृष्टि योग से दूसरी जगह पापदृष्टि योग से गुणा करना और ६० का भाग देना तथा इसी प्रकार भाव बल से गुणा कर ६० का भाग देना। शेष रहे वह भावबलकी सख्या समझना। अथवा रश्मि योग से गुणा कर भावबल से भाग देना। शेष शुभाशुभ फल जानना॥४४-४६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकाया सप्तदशोऽध्याय ॥१७॥

अथ अन्धवर्णनाह

नाडीद्वयं मुहूर्तं स्याद्दिनाडीद्वयमेव च ॥ रवेरुदयतो मेधात्कृमात्सर्वजितं स्मृतं ॥१॥ आर्द्रां
श्लेषपुराधाश्च मघाश्चाथ धनिष्ठिका ॥ उत्तराषाढसजश्च सर्वजिद्रोहिणी तथा ॥२॥
विशाखा च ततो ज्येष्ठा मूल च शततारकम् ॥ भरणीपूर्वफाल्गुन्यौ विश्वजिच्च ततो भवेत् ॥३॥
उत्तराश्लेषाश्चैव रेवती च तत परम् ॥ अभिजिच्चोत्तरा चाथ कृत्तिका रोहिणी तत ॥४॥
मूल च रोहिणी चाथ मृगशीर्षं च हस्तकम् ॥ पुष्यश्च श्रवणो हस्तवित्रे स्वाति क्रमात्स्मृता ॥५॥

अन्धवर्णन

मुहूर्त लक्षण २ घड़ी का एक मुहूर्त होता है। पूरे दिन के १५ मुहूर्त। इसी प्रकार पूरी रात्रि के १५ मुहूर्त होते हैं। दिनमान तथा रात्रिमान के न्यूनाधिक होने से मुहूर्त काल की २ घड़ी में भी न्यूनाधिकता होती है। मूर्य जिस राशि का होता है प्रातः काल वही लग्न होता है। बाद अपने २ क्रम से दूसरे दिन के प्रातः काल तक १२ लग्न भुक्त होते हैं। दिन रात्रि के ३० मुहूर्त हैं उनमें दिन के १५ मुहूर्तों के नाम क्रम से—आर्द्रा १, आश्लेषा २, अनुराधा ३, मघा ४, धनिष्ठा ५, उत्तराषाढा ६, सर्वजित् या अभिजित् ७, रोहिणी ८, विशाखा ९, ज्येष्ठा १०, मूल ११, शतभिषा १२, भरणी १३, पूर्वाफाल्गुनी १४, अभिजित् १५। ये दिन के मुहूर्त हैं। रात्रिके मुहूर्त—उत्तरा भाद्रपद १, रेवती २, अभिजित् ३, उत्तरा ४, कृत्तिका ५, रोहिणी ६, मूल ७, रोहिणी ८, मृगशिर ९, हस्त १०, पुष्य ११, श्रवण १२, हस्त १३, चित्रा १४, स्वाति १५॥१ से ५ तक॥

नाडीद्वयमुहूर्तानां सप्ता एता क्रमाद्विहज ॥ सर्वजिह्वरणीहस्तविश्वजिह्वोहिणी तथा ॥६॥
दक्षश्च मृगशीर्षश्च शर्व पुष्योऽथ रुद्रभम् ॥ उत्तरा विश्वजिह्वोहिणी चित्रा पुष्यश्च वायुभम् ॥७॥
अभिजिह्वमुष पौष्ण कृत्तिका च पुनर्वसु ॥ पूर्वोत्तरप्रोष्ठपदौ शततारा च विश्वभम् ॥८॥
ज्येष्ठा सूर्य च मूल च भाग्यश्च क्रमशः स्मृता ॥ ज्येष्ठा चाथ विशाखा च मूल च शतताराका ॥९॥
नामानि च मुहूर्तानां विनाडीद्वयरूपिणाम् ॥ आवृत्या द्रष्टि ता प्रोक्ता कालाशा नादिरूपिण ॥१०॥

विनाडी मुहूर्त-दिन-रात के ३२ मुहूर्त होते हैं। भरणी १ हस्त २, विश्वजित् पूर्वाषाढा ३, रोहिणी ४, दक्ष-अश्विनी ५ मृगशीर्ष ६ (शर्व) आर्द्रा ७ पुष्य ८, (रुद्रभम्), आर्द्रा ९, उत्तरा १०, (विश्वजित्) पूर्वाषाढा ११ (शोणी) श्रवण १२ चित्रा १३, पुष्य १४, (वायु) स्वाती १५, अभिजित् १६, (वसु) धनिष्ठा १७ (पौष्ण) रेवती १८, कृत्तिका १९, पुनर्वसु २०, (पूर्वप्रोष्ठपत्) पूर्वाभाद्रपद २१, (उत्तरप्रोष्ठपत्) उत्तरभाद्रपद २२, शतताराका २३, (विश्वभम्), स्वाती २४, ज्येष्ठा २५ (सूर्य) हस्त २६ मूल २७ (भाग्य) पूर्वा फाल्गुनी २८, ज्येष्ठा २९, विशाखा ३० मूल ३१ शतताराका ३२ ये विनाडी मुहूर्त कहे गये ॥६॥७॥८॥९॥

१ एक नाडी मुहूर्त-प्रथम जो दिन रात के ३० मुहूर्त कहे गये हैं उन्हीं की २ आवृत्ति करने से ११ घटी का १-१ मुहूर्त होता है। इसी का दूसरा नाम कला मुहूर्त भी है ॥१०॥

नक्षत्रसप्तम्या प्रोक्ता द्रष्टव्यावृत्या कलाशका ॥ मेघो यमो मृगकुम्भो श्रवणं जूकश्च कर्कट ॥११॥ सिंहोऽथ वृश्चिकश्चापौ मृग कन्या क्रमाद्भवेत् ॥ राशिचक्रकालो तु क्रमादेव प्रकीर्तिता ॥१२॥ मेघो गौरीमर्कको च तेषां कन्यामुलालय ॥ धनुर्मृगपटोमीनमुदयाद्-घटिकासु च ॥१३॥

१ कलाश मुहूर्त-जो प्रथम ३२ मुहूर्त कहे हैं उन्हीं की द्वितीयावृत्ति करने से ६४ मुहूर्त नक्षत्र के ६४ भाग करके १-१ भाग का ११ मुहूर्त जानना।

१ राशिचक्र कलाश मुहूर्त-सूर्योदय से ५-५ घटी पर १-१ राशि का मुहूर्त समझना। मेघ १, मिथुन २, वृष ३, कुम्भ ४, मीन ५, तुला ६, कर्क ७, सिंह ८, वृश्चिक ९, धनु १०, मकर ११, कन्या १२, इस क्रम से राशि कलाश मुहूर्त होते हैं ॥११॥१२॥

१ नित्योदय सप्तक्रम-मेघ, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन ये बारह राशियां अपने २ स्वान के पलायक भोग के अनुसार (पूर्वसंख्य में कहा गया है) नित्य उदय होती हैं ॥१३॥

सिंहान्मेघाच्च चापाश्च नक्षत्रक्रम ईरित ॥ चन्द्रजगुज्जुमार्कवरिवेयारकार्युका ॥१४॥ गुरु पातः शनिः केतुर्द्विः स्युर्द्विदशमात् ॥ चक्राविस्तारके चैव केवादिस्तारकाशके ॥१५॥

कालान्तरिक नक्षत्रक्रम प्रत्येकाल में द्रष्टव्य नहीं है। यह ग्रह ग्रहण करना और जो ग्रह आये उसके अनुसार फल जानना। यदि द्रष्ट पर आया हुआ लग्न सिंहदि ४ राशियों में हो तो

मेषा से आश्लेषा तक और धन राशि से ४ राशि में हो तो मूल से ज्येष्ठा तक गणना करन मेपादि ४ राशि में लग्न हो तो अश्विनी से रेवती तक ग्रहण करना। इन नक्षत्रा में क्रम चन्द्रमा बुध, शुक्र, धूम, सूर्य, परिवेष, मंगल कार्मुक गुरु पात, शनि, केतु ये १२ ग्रह (ग्रह तथा अप्रकाश ग्रह) बारह राशियों में अर्थात् सिंहादि, धनुरादि, मेपादि क्रम गणना में जो राशि (काल्पनिक) प्राप्त हुई है उसमें जानना। यदि मेपादि लग्न हो तो केतु से विपरीत क्रम गणना करना। और अन्य में क्रम गणना सूर्य से करना। जो ग्रह प्राप्त हो उसके अनुसार शुभाशुभ फल जानना। श्लोक १४ से १५ तक॥

अर्कादिधूमपर्यन्ता क्रमात्स्युर्घटिकाशके ॥ सत्र्यशा घटिकास्तिद्यो मेपानिभिषयोर्दिज्जि ॥१६॥
चतस्र कुम्भवृषयोस्तथा मकरपुग्मयो ॥ वित्र्यशा पच सत्र्यशास्ता वार्किधनुषो स्मृता ॥१७॥
सिंहवृश्चिकयो षट् च अशोना सप्त शेषयो ॥ नित्य मानमिदं प्रोक्तं मेपादुदयराशिजम् ॥१८॥
रव्याक्रातास्तथा प्रोक्ता एकद्वित्रिचतुर्घटी ॥ मानानि मेघतः सिंहाच्चापादकौदपास्त ॥१९॥
दशवर्गाधिपाश्चित्वा प्रोक्ताश्चेदुनवाशका ॥ अन्यत्र कीर्तिता प्रश्ने नष्टद्रव्यविनिश्चये ॥२०॥

नित्य लग्न का परिमाण मेघ और मीन का ३ घटी २० पल। वृष कुम्भ का ४ घटी ० पल मिथुन मकर का ४।४० कर्क धन का ५।० सिंह वृश्चिक का ६।० कन्या तुला का ६।४०॥१६॥१७॥१८॥

प्रकारान्तर उदय लग्न से मेघ वृष मिथुन कर्क इन ४ राशियों में १ २ ३ ४ घटी क्रम से काल प्रमाण जानना। इसी प्रकार आगे भी सिंह से ४ राशि तथा धन से ४ राशियां १ २ ३ ४ घटी रूप काल प्रमाण जानना। नष्ट द्रव्य के प्रश्न में इसका तथा दश वर्ग और चतुर्नवाश का प्रयोजन है॥१९॥२०॥

श्रीमान् रिक्तश्च मूर्खश्च कुशलो वचनं पटु ॥ स्त्रीसक्तो वेदविद्विरो मदाग्रिस्तीव्ररोषण ॥२१॥
मूलरोगी च पिशुनः सदाऽऽनपरोऽशुचिः ॥ सेवाकरः सुभाषी च धनवान् लोभसमुत् ॥२२॥
प्रख्यातो विद्याया भोर्बुद्धिशीमान् सुशीलकः ॥ परदाररतः श्रीमान् सुशीलो बलवान् गुणी ॥२३॥
अध्वन्यो निगमव्यग्रः पातकी च तपोयुतः ॥ परदाररतः वेद्यासक्तोऽस्तप्लवाशन ॥२४॥
सिंहासनस्यो रिक्तश्च जटिलः कुलपाशनः ॥ योगी बुद्धश्च सन्ध्यासी सेनानी बुद्धिमान् सुखी ॥२५॥
कुण्ठीमूतकरः श्रीमानेकपुत्रसमन्वितः ॥ शास्त्रज्ञो दासकुल्यश्च चट्टरोषसमन्वितः ॥२६॥ स्त्री
सक्तः परदारोक्तो भृत्यः पदुरोपवान् ॥ कुरुपश्चापि कुशलो जितारिः पुत्रवर्जितः ॥२७॥ शूरो
वीरश्च चट्टश्च कुशलः कुशिरोगवान् ॥ ग्रामणीर्विदपो धूर्तः सतीपतिररिदमः ॥२८॥
वध्यापतिः मुरापी च रिक्तसाध्यपतिः सुखी ॥ विजयी युद्धभीरुश्च चोरोऽमर्षी धनार्जनः ॥२९॥
धनार्जनाय सततमकृत्यशतकारकः ॥ वृषलीपतिरिन्द्रश्च सेनानी सत्यवाक्कुचिः ॥३०॥
शिरोरोगी च कुण्ठी च मेही च पिशुनः सुखी ॥ जलबदोगसमुत्तः कृतज्ञो निर्धृणो घृणी ॥३१॥
विषादरोगी सुपुतः क्रोधनः कामुकः पटुः ॥ चलचित्तो धनी वागमी विद्यार्जनपरः सुखी ॥३२॥
अपुत्रः कृपिकृद्भीरुः परदाररतः शुचिः ॥ विद्याहीनश्च मूर्खश्च बुद्धिमाज्ज्वालाश्च पारयः ॥३३॥
सदाभीर्हर्षो वागमी कृत्येषु कुशलः सुखी ॥ नीतिज्ञो तेजस्वी भीमहातिः कृत्यपरः

पटु ॥३४॥ प्रेय्यो गोमयविक्रेता वदान्यो धनबचक ॥ सेनानी क्षेत्रवाञ्छीरो लेखवृत्त्या च
जीवति ॥३५॥ मूर्खो जितेन्द्रियो वाग्मी सदा कृत्यपर सुखी ॥ अन्नदाता च मिष्टाशी
शिवभक्तो जितेन्द्रिय ॥३६॥ कुञ्जो वक्रशरीरश्च जात्यधो बधिर शठ ॥ अमर्षो नर्तक क्रुद्धो
दुर्जनो वेदपारग ॥३७॥ वक्ता च गायक श्रीमान् सर्वदा च धनार्जक तालज्ञो विद्यया युक्त
पचपचाशदुत्तरम् ॥३८॥ शत गुणाश्च श्रीयोगा एकयोगावसानकम् ॥ पूर्वपूर्वयुता ओजे युग्मे
राशौ तु वामत ॥३९॥ चरे क्रम स्थिरे वाममुभयोर्धपदादित ॥ आदौ त्रिंशद्गुणा अते
वामतस्त्रिंशदेव हि ॥४०॥

अब १५५ योग कहे जाते हैं। इनका फल नामानुरूप ही है। श्रीमान् १। रिक्त २। मूर्ख ३।
कुशल ४। बचन ५। पटु ६। स्त्रीसक्त ७। वेदवित् ८। धीर ९। मदाग्नि १०। क्रोधी ११।
अतिक्रोधी ११। मूलरोगी १२। पिशुन १३। भ्रमणशील १४। शुचि १५। दास १६। सुभाषी
१७। धनी १८। लोभी १९। विद्वान् २०। भीरु २१। बुद्धिधन २२। सुशील २३। पारदागामी
२४। श्रीमान् २५। सुशील २६। बलवान् २७। गुणी २८। भ्रमणशील २९। वेदाभ्यासी ३०।
पात की ३१। तपस्वी ३२। परदारगामी ३३। वेश्यागामी ३४। मनमोदकी ३५। पदाधिकारी
३६। निरुद्योगी ३७। जटाधारी ३८। नीच ३९। योगी ४०। प्रबुद्ध ४१। सन्यासी ४२।
सेनापति ४३। बुद्ध ४४। सुखी ४५। कोटी ४६। सेबडा ४७। धनी ४८। एक पुत्रवाला ४९।
शास्त्रज्ञ ५०। दास ५१। महाक्रोधी ५२। कामी ५३। परस्त्रीसक्त ५४। नौकर ५५। चतुर ५६।
नीरोगी ५७। कुरूप ५८। कुशल ५९। जितशत्रु ६०। पुत्ररहित ६१। शूर ६२। वीर ६३।
अतिकोपी ६४। कुशल ६५। जठररोगी ६६। ग्रामणी ६७। स्वैज्ञ ६८। धूर्त ६९। सतीपति ७०।
शत्रुहर्ता ७१। वन्द्यापति ७२। मुरायी ७३। कुलटारत ७४। सुखी ७५। विजयी ७६। युद्धभीरु
७७। चोर ७८। क्रोधी ७९। उपार्जनरत ८०। पाप उपार्जन रत ८१। शूद्रस्त्रीसेवी ८२। इन्द्र
८३। सेनानी ८४। सत्यवादी ८५। शुचि ८६। शिरोरोगी ८७। कुन्डी ८८। प्रमेही ८९।
चुगलखोर ९०। सुखी ९१। जलोदरी ९२। कुतज ९३। निर्दय ९४। घृणी ९५। झगडालू ९६।
सुमुख ९७। क्रोधी ९८। कामी ९९। कुशल १००। चंचल १०१। धनी २। वक्ता ३। विद्यासेवी
४। सुखी ५। अपुत्र ६। सेतीहर ७। परदारत ८। शुचि ९। विद्याहीन ११०॥ मूर्ख ११।
बुद्धिमान् १२। शास्त्रज्ञ १३। सदाभीरु १४। मूर्ख १५। वाग्मी १६। कार्यपुट १७। सुखी १८।
नीति चतुर १९। लेखक १२०। नीच कार्यरत २१। चतुर २२। दूत २३। गोमयविक्रेता २४।
दानी २५। वक्ता २६। सेनानी २७। क्षेत्रवान् २८। वीर २९। लेखक १३०। मूर्ख ३१।
जितेन्द्रिय ३२। वाग्मी ३३। उद्योगी ३४। सुखी ३५। अन्नदाता ३६। मिष्टभाषी ३७।
शिवभक्त ३८। जितेन्द्रिय ३९। कुबडा १४०। कुञ्ज ४१। क्रोधी ४२। बधिर ४३। धूर्त
४४। क्रोधी ४५। नट ४६। सदाशी ४७। दुष्ट ४८। वेदपारगामी ४९। व्याख्याता १५०।
गायक ५१। श्रीमान् ५२। सर्वजनप्रेमी ५३। तालज्ञ ५४। विद्वान् १५५। ये १५५ श्रीयोग नाम
के योग हैं। विषमराशि के नवाश में क्रम से, समराशि के नवाश में विपरीत क्रम से जानना। चर
राशि में क्रम से, स्थिर राशि में विपरीत क्रम से द्विस्वभाव राशि में अर्द्धभाग में गणना
करनी चाहिए। श्लोक २१ से ४० तक॥

षष्ठ्यो तु गुण प्रोक्ता प्राग्ज्योतिषरादिका ॥ मेयादृक्कृते राह केतुर्पाति द्यातन्मा

॥४१॥ ऋक्षसंध्यंतरे जातः प्रष्टाऽसौ त्रिपते मृशम् ॥ केतुराहुस्थिते राशौ भसंधौ मरणं
भवेत् ॥४२॥ इतरेषां त्रयाणां च प्रकाशे व्याधिपीडितः ॥ दुर्बलो बुद्धिहीनश्च जायते न मृतो
यदि ॥४३॥ कलाशराशितोऽरिष्टे नक्षत्रारिष्टसंभवे ॥ पित्रादीनां सुतस्यापि तद्वशाच्चिंतयेत्तुष्टीः
॥४४॥ पापशत्रुप्रहाकांता भावास्तद्वष्टिसंयुताः ॥ सौम्यपापादयश्चैवं शुभाशुभफलप्रदाः ॥४५॥
एकद्वित्रिचतुः पंचपदसप्तष्टादिकदिग्धराः ॥ सूर्येन्दुनृपमूर्च्छेन्द्रनृपमार्कनृपा जिनाः ॥४६॥
पंचाष्टवसुसूतेषु सुरदंताजिनादयः ॥ नक्षत्रिंशस्तत्वेदाः षट्सप्ततिः पण्डिरद्विपुक् ॥४७॥
नवतिश्च शत मूर्च्छाजिना दंता जिना दिशः ॥ एव नवशत प्रोक्ताः क्रमादेवं तु तत्र तु ॥४८॥
पूर्वपूर्वयुता संख्या लक्ष्मीयोगफलप्रदा ॥ नक्षत्रे राशिचक्रे तु दिवसे वामतः स्मृता ॥४९॥

(प्रश्नकालिक कल्पित राहु केतु की गति)

राहु मेष से विपरीत क्रम से तथा केतु वृष से क्रम से चलता है॥४१॥ राहु केतु का प्रश्नकाल के सप्त में योग हो तो प्रश्नकर्ता का मरण जानना। धूम, कार्मुक, परिवेष का भी यही फल जानना॥४२॥४३॥

पिता भ्राता आदि का शुभाशुभ विचार कहा जाता है-

पौडशाश से या नक्षत्र (पूर्वकथित) से अथवा भावग्रह सम्बन्ध से नीचे लिखी सख्या के योग में शुभग्रह सम्बन्ध से शुभ और अशुभग्रह सम्बन्ध से अशुभ कल समझना चाहिए। गण सख्या ये हैं। १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २१, २२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५० इन योगों पूर्वपर विचार से शुभाशुभ का निर्णय करना। ४४-४९॥

शुभमित्रप्रहाकांता भाषास्तद्बृष्टिसंपुताः ॥ द्वित्रिपञ्च च षट् सप्त वसुनन्दिशोऽद्वयः ॥५०॥
त्रिशद्विशो नखाः षष्टिसूर्यमूच्छाजिनाजिना ॥ आकृतिर्भाभिभाकीर्गिनखाश्छदः शतं नखाः
॥५१॥ त्रिंशत्खवेदा दिग्विधे शतं षष्टिः शतं जिनाः ॥ वेदाः खवेदाः पूर्वार्धे परार्धे प्राखद्वय
व ॥५२॥

तथा ये योग भी विचारणीय है, २, ३, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ७, ३०, १०, २०, ६०, १२, २१, २४, २४, २१, २७, १२, ३, २०, २६, १००, २०, ३०, ४०, १०, १३, १००, ६०, १००, २४, ४, ४० राजि के पूर्वार्द्ध में क्रम से, और परार्द्ध में उत्क्रम से यदि उपर्युक्त योगनम्ब्या प्राप्त हो तो अशुभ है॥५० से ५२ तक॥

एते योगबलाच्चैव केवल दुर्गतिप्रदाः ॥ दिनकं चक्रसख्याः स्युरादिमाध्यावसानिकाः ॥५३॥
सप्तविंशतिसप्तत्यां शते षष्ठ्या शतद्वये ॥५४॥ कुब्जः कलाश मूकस्तु शतद्वयशतत्रये ॥५५॥
संहमे द्विशते जातः पंचमे पापसमुत्ते ॥द्विषिषचाष्टदिग्विघ्नपतिपृतिभूमयः ॥५६॥
नवदिग्गमुर्दस्तानैस्तिषिषिषाष्टकेः कमात् ॥गुणेन दामतः प्रोक्तो सधूम्यो श्योसमन्वितः ॥५७॥

दिन की मूहूर्त सख्या, नक्षत्र सख्या तथा राशिसख्या के योग से निम्नलिखित योग सख्या प्राप्त हो तो कुम्ह कुम्हडा होगा। योग सख्या ये हैं - २७, ७०, १००, ६०, २००, ६, ५०, २०, १६।

८०,६०,२०,१००,६०,२००॥ ये सख्या कुब्ज की और २००,३००,१०००,२०० मे सख्या तथा पचमभावे पर पापदृष्टि हो तो मूक हो॥ और २,३,५,८,१०,१३,१६,१८,१,९,१०,२७, ३३,४९,१५,१३,८ ये सख्या हो तो धनी हो॥५३-५७॥

रविचंद्रतम पातकालेष्वरिभवेषु च ॥ पचाशीतिशते वेदे मनी द्वित्रिशते पुन ॥५८॥
 खाब्धिपचसु दिग्भागे सहस्रे चात्रिचद्रे ॥ षष्ठानि रूप विश्वाष्टत्रिचंद्रसूत्रमिमे ॥५९॥
 शताधिके च जातोस्मिन्बधिर पण्डितपुते ॥ कर्कवृश्चिकमीनो तद्वाशीशाशके तथा ॥६०॥
 पातकोत्थोश्च शत्रुवृत्तगतयोरशके पुन ॥ एकाद्वित्रिशतैर्वावत्क्रमस्तास्तु सुमाजिता ॥६१॥
 आकाशपूर्णधृतयो नि शेष सव्यसत्यके ॥ सदोषेऽन्तराशे तु जातस्यैतेऽपमृत्यव ॥६२॥

सूर्य, चन्द्र, राहु काल पात मे ६,११ ८५,१००, ४ १४,२,३,१००,४०,५,१०,१०००,३०, १००,१३,८,३,१, इन योगो मे बधिर हो॥५८॥५९॥

कर्क, वृश्चिक, मीन के च० म० गु० स्वामी है, अतः च० म० गु० की राशि मेय, कर्क वृश्चिक, धन मीन इन राशियो मे तथा पात मे एव शत्रुराशि के अश मे तीन सौ तक के अको से १८०० मे भाग देना, जब तक नि शेष न हो तब तक भाग देना। सव्य अक तुल्य अश यदि पापग्रह युक्त हो तो अपमृत्यु जानना॥६०॥६१॥६२॥

पचाशत षडावृत्त्या स्वल्पमाध्यचिरायुष ॥ क्रमेणोत्क्रमशस्ते तु धैराशिकविधानत ॥६३॥
 खाक्ष्यद्वयस्तु षष्ट्यशस्त्रिंशशाः खरसाग्रय ॥६४॥ अष्टपदसूत्रमण कालहोरा सप्तदिनेषु च ॥
 वेदेद्वा द्वादशाशा स्युर्नवाशा गजलेखव ॥६५॥ सप्ताशा वेदनागास्तु द्वेष्काणास्तु षडग्रय ॥
 अर्द्धहोरा जिना प्रोक्ता नक्षत्राणि च राशयः ॥६६॥ भुजते च ग्रहाश्चैव मनुसख्याश्च भुजते ॥
 राशयश्च ग्रहाश्चैव नक्षत्राणि च भुजते ॥ रव्यादिराशिसिपर्यंतानव भूमेद्रकार्मुकी ॥ पातश्चपरिवेषश्च
 कालश्चेति चतुर्दश ॥६८॥

पचास की सख्या से ६ बार आवृत्ति करना। प्रथमावृत्ति मे अल्प मध्य, दीर्घ और वाद २ आवृत्ति मे दीर्घ, मध्य, अल्प अथवा प्रथमावृत्ति मे अल्पायु द्वितीयावृत्ति मे मध्यायु एव तृतीयावृत्ति मे दीर्घायु बाद दीर्घ मध्य अल्प क्रम से आयु का निर्णय करना॥६३॥
 चौदह ग्रहो के तथा नवग्रहो के अश कहते हैं -

षष्ठ्यक्ष को १२ राशि सख्या से गुणा करने से ७२० होते हैं। इसी प्रकार त्रिंशश के ३६०, कालहोरा के १६८, द्वादशाश के १४४, नवाश के १०८, सप्ताश के ८४, द्वेष्काण के ३६, होरा के २४, यह क्रम से नक्षत्र, राशि सू० १ च० २ म० ३ बु० ४ वृ० ५ शु० ६ श० ७ रा० ८ के० ९ भूम १० इन्द्रजाप ११ पात १२ परिवेष १३ काल १४ इनके अगो मे पूर्वोक्त फल जानना॥६४॥६५॥६६॥६७॥६८॥

तेषां प्रादुर्भवे क्षेममन्यदा तु नवग्रहाः। द्वात्यच मणात् षट् च पचाद्विंशतिरपि ॥६९॥ कृत्वास्तत्त
 क्रमात्प्रोक्तास्तत्तदशेषु सर्वदा ॥ अशिनो पचदश च नखास्तत्त्व तयामरा ॥७०॥ सभ्यशाश्र
 षडशोनाश्रत्वारिराशकमादय ॥ रात सेष्विदय प्रोक्ता विनादीतनयोऽपि च ॥७१॥

अब नक्षत्रों से सख्या कहते हैं, अश्विनी से ५ पूर्वा से ६ आर्द्रा से ५ शतभिषा से ४ अनुराधा से ७ इस क्रम से तारासख्या जानना। कलाश सख्या २, १५, २०, २५, ३३, ३३, ३३, ४०, १००, १५०, यह भाग काल के ध्रुवाक है ॥६९॥७०॥७१॥

कलाशाद्यर्धहोराशभोगकालः प्रकीर्तितः ॥ प्रमाणराशयश्चैते भागहारा कलात्मकाः ॥७२॥
तत्तदशकला इच्छाराशयो गुणराशयः ॥ कटुको मधुरस्तित्त कपायो लवणाम्लकौ ॥७३॥ कलाशे
क्रमशो गण्था षष्ठ्यशे व्युत्क्रमात्स्मृताः ॥ त्रिशाशे तु कपायादि कालहोराशके पुनः ॥७४॥
तित्तादि द्वादशाशेषु मधुरादि नवाशके ॥ अम्लादि मुनिभागे तु द्वेष्काणे मधुरादितः ॥७५॥

अब इन अंशों में उत्पन्न जातक का फल कहते हैं -

क्रम से-कटुक, मिष्ट, तित्त कपाय, लवण, अम्ल ये क्रम से रस कहे हैं। त्रिशाश में कपाय से तित्त तक गणना करना, कालहोरा में तित्त से, द्वादशाश में मधुर से नवाश में अम्ल से सप्ताश, होरा तथा द्वेष्काणमें मधुर से गणना करना। फल जातककी प्राप्ति रसमें रुचि का जाना ॥७२ से ७५ तक॥

अर्धहोराशके तद्वज्जातस्यैवैव जायते ॥ वेदाष्टदशभैराने प्रपष्ट्यशे च भास्करे ॥७६॥
त्रिपट्नवत्रिंशत्कार्त्तिकजिनदत्तसुरा क्रमात् ॥ नवदिग्भैर्जिनाकैश्च सूर्यस्तानैस्त्रिपचभिः ॥७७॥
पचाशद्भिः क्रमाद्गुण्या वध्यावध्या प्रकीर्तिता ॥ त्रिवेदाद्यकविश्वेद्रनखच्छदोजिनायमा ॥७८॥
पचाशच्च शत पूर्वयुता मृतमुता स्मृता ॥ पुत्राणां तु कलाशे तु शेये जाता मृता द्विज ॥७९॥ द्वादशे
च चतुर्विंशे चतुस्त्रिंशे सुराशके ॥ द्विसप्ताशे नवाशारे षष्ठ्युत्तरशताशके ॥८०॥ पट्शते च सहस्रे
च सखाहीद्विशके पुनः ॥ खाशतिष्यशके जातो भवेत्प्रजितो नरः ॥८१॥

पष्ट्यश राजात कन्या का बन्ध्यायोग ४८ १२ २७ ३ इन अंशों में सूर्य हो तो बन्ध्या जानना। तथा ३६।१।३।०।१२।१४।२४।३२।३३ इनमें क्रमशः ९।१०।२७।२४।१२।१२।४९।३।५।५० इन पष्ट्यश में उत्पन्न कन्या बन्धनीया होती है ॥७६॥७७॥ तथा ३।४।७।९।१३।१४।२०।२६।२४।२।५०।१०० इन अंशों में पूर्वोक्त सख्या योग प्राप्त सूर्य में मृतवत्मा जानना ॥७८॥

मृत पुत्रज्ञान के लिए-षोडशांश में इन अंशों पर सूर्य में विचार करना ॥७९॥

सन्यासयोग-१२।२४।३३।७२।९।१६०।६००।१०००।१८००।१५।१० इन सख्या तुल्य अंशों में जन्म हो तो सन्यासी होता है ॥८०॥८१॥

गुरुशुक्रोदये राशौ तयोः परमहंसकः ॥ शक्रराशिगतौ तौ चेदप्रकाशयुतौ तु वा ॥८२॥ भ्रष्टः स्वातु
तपा नै तु त्रिदशौ वा बहूदकः ॥ रवौ जटाधरः शैवः कुजे नम्रोत्तनः स्मृतः ॥८३॥ मदे बौद्धोऽप्य
यागमी स्याद्वाही केतौ तथैव च ॥ धूम्रे वापालिकश्चापे काले तु परिवेषके ॥८४॥ गुरुपाशे यथा
लिप्ति कुलमार्गगतस्तथा ॥ षष्ठ्यशे ऋक्षसप्त्यशे सार्ये पौष्णेद्रभाशके ॥८५॥ त्रिशाशे कालहोराशे
तत्तदशाशकेऽपि च ॥ नव मूर्छागुराशे तु यथा षष्ठ्यतमे युतः ॥८६॥ मुक्ताशे क्षाम्यतिष्यगे

द्वादशांशे नवांशके ॥ राश्यतांशे तु सप्तांशे ऋजसधिमृगांतिके ॥८७॥
मृगश्रकृत्तिलसिंहादिमीनतूलांशकादिमे ॥ अत्याशेषि च जातस्य षड्भांशं जिते रवे ॥८८॥
द्रेष्काणेनार्धहोरायां त्रिसन्नेन नक्षत्रे तु ॥ जातः प्रवर्जितश्चेत् सर्वत्रैक्युत्तेष्वपि ॥८९॥

(श्लोक ४४ से ८९ तक का भाग अनुपगुक्त है)

परमहंस योग-लग्न (जन्मलग्न में) गुरु या शुक्र हो तो जातक परमहंस होता है, यदि गुरु, शुक्र 'धूम' आदि अप्रकाश ग्रहयुक्त हो तो 'धर्मभ्रष्ट परमहंस' होता है। यदि गुरु, शुक्र, बुध ये तीनों जन्मलग्न में हो तो विदण्डी सन्यासी होता है, अथवा बहूदक होता है। सूर्य हो तो शिवभक्त, मंगल हो तो दिगम्बर, शनि हो तो बौद्ध तथा केतुयोग से भी बौद्ध और 'धूम' योग हो तो कापालिक एवं चाप, कास, परिवेष हो तो क्रमशः गुप्तपापी, पावण्डी, कौतिक (वाममार्गी) होता है ॥८२॥८३॥८४॥

सन्यासी के अन्य योग-जन्मलग्न के षष्ठ्यश में आश्लेषा, रेवती, ज्येष्ठा, नक्षत्रों के अश में और विशाख में या कालहोरा, नवाश में अथवा राशि के अन्तिम अश में, सप्ताश में नक्षत्रसंघि में (इन उपर्युक्त अशों में) यदि मकर, कर्क, वृश्चिक, सिंह, मेष, मीन, तुला के आदि या अन्त के अश में जन्म हो तो सन्यासी होता है। अथवा २५।६।२४।३२ इन अशों में इनकी होरा या द्रेष्काण में या इन पूर्वोक्त सख्या में एक योग करने से जो अंक हो उस सख्या में जन्म हो तो सन्यासी होता है ॥८५ से ८९ तक॥

पापप्रकाशसंयोगे कलत्रे त्वष्टुम भवेत् ॥ रघौ वध्या तु शीतशी क्षीणे तु व्यभिचारिणी ॥९०॥ कुजे तु श्रियते भवेत् दुर्भगा राहस्युते ॥ परदाररतिः स्वीयनिषेकामावतोऽमुता ॥९१॥ धूमे विवाहहीनः सन श्रियते कार्मुके सति ॥ परिवेधे तु दुःशीता केतौ वध्याऽसती भवेत् ॥९२॥ कालेऽभावस्तु पापे तु गर्भदावेण समुता ॥ सुशीला स्त्रीप्रसूता च पूर्यमाने तु शीतशी ॥९३॥ बुधे त्वष्टुना जीवे तु पुण्युक्ता सुपुत्रिणी ॥ शुके सौभाग्यसमुक्ता श्रीमती पुत्रिणी भवेत् ॥९४॥

स्त्रीके लक्षण-सुप्तमभावमें पापग्रह या धूमादि नेष्ट ग्रह हो तो स्त्री दुष्टा होती है। अब प्रत्येक ग्रह के अनुसार अलग २ फल कहा जाता है। सूर्य से वन्ध्या, शीथ चन्द्रमा सं व्यभिचारिणी, मंगल से स्वीनाज, शनि से दुर्भागिनी, राहु से परदार रति, धूम हो तो अविवाहित मृत्यु, कार्मुक हो तो पूर्वोक्त फल, परिवेध हो तो दुःशीला, पात हो तो गर्भश्राविनी, केतु हो तो वन्ध्या या दुष्टा, कास हो तो स्त्री हानि, पूर्ण चन्द्र मन्त्रम स्थान में हो तो कन्या प्रजावती, बुध हो तो अपुत्रा, गुरु हो तो सुपुत्रा, शुक्र हो तो सौभाग्यवती होती है ॥९० से ९४ तक॥

एष्येयं दशमे पापपुण्यकर्मरतो भवेत् ॥ पवासद्भिः सुरैस्तत्त्वैर्नृपैश्च मुनिभिर्हरेः ॥९५॥ अष्टमि षड्भिरैवाथ सप्तादिभिरनुक्रमत् ॥ पद्मादिभिश्च होराः स्युरैकोत्तरचरैरथ ॥९६॥ पापपुण्यक्रियाकर्ता क्रमात्संख्यातरांशः ॥ आर्षतिरक्षरा शीला पापपुण्यक्रिया रतिः ॥९७॥

दशमभाव का विशेष फल-दशम भाव शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो शुभ फल, पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल होता है। शुभ, पाप, समान हो तो मिश्र फल, न्यूनाधिक हो तो जो अधिक हो उसका विशेष फल होता है। तथा जो अश्रु दिये जाते हैं ५०, ३३, २५, १६, ७, ८, ९, ६, ५ और इनमें १ १ जोड़ने पर जो संख्या हो उसमें पापग्रह आदि के योग से शुभाशुभ कर्मफल जानना ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

मित्रे तु मित्र त्वधिकबशादेव तु निर्णय ॥ वर्णाश्रमाचारविहीनबुद्धि स्त्रिया च पापी परदारसक्त ॥ क्षेत्रापहारी च परस्वसर्वं निहत्य योग सकल करोति ॥ ९८ ॥ परस्व चोत्कर्षविघातकारी विपाप्रिद पातककर्मकृच्च ॥ ९९ ॥ ग्रामस्य देशस्य च विप्रवर्षघनापहारी व्यसने कृतार्थ ॥ मृत्तिप्रद कर्म करोति सूर्यात्पाप्यप्रकाश सितशीतयोश्च ॥ १०० ॥ दयारतो दानरत मुतेजा स्वाचारपाती विजितेन्द्रियश्च ॥ इष्टं च पूर्णं च करोति जीवे शुक्ले वदान्य कृतदारशील ॥ १०१ ॥

शुभ योग में शुभ फल अशुभ योग में अशुभ फल होता है। अशुभ योग का फल दिखाते हैं-वर्ण और आश्रम के धर्म से हीन परस्त्री सम्पत्त दुमरे का धन तथा भूमि हरण करनेवाला, पर निन्दक विप देनेवाला ग्राम जलानेवाला, ब्राह्मणों का धन हरनेवाला। गुरु के योग में हत्याकारी युध में पापकर्मी होता है। चन्द्र योग से विख्यात और यशस्वी माल गं दयावान् गुरु में इष्टापूर्त कर्म कर। शुक्र से दानी मति से स्त्री स्वभाव वाला होता है ॥ ९८ ग १०१ तक ॥

मेये त्वगम्यागमनप्रियश्च त्वमक्ष्यमक्ष्यो वृषभे सुशील ॥ देवेशदेवालयधर्मकारी ध्याने विरक्तोऽप्यधर्मेर्विहीन ॥ १०२ ॥ छात्रे च तोत्रं च करोति पाप परस्वहर्तापि च पूर्णशरीर ॥ सिंहे तु देवस्य विघातकारी पापीनके धर्मरति मुमुक्षु ॥ १०३ ॥ जूके परेषा धनदश्च पूर्णं करोति क्षायेऽपि च वृश्चिके तु ॥ परस्वहर्ता परदारमक्तो मृगेऽपि चैव घटभे कृतज्ञ ॥ १०४ ॥

मेघ राशि में जन्म हो तो अगम्यागामी अमक्ष्य भक्षणशील। वृष राशि में जन्म हो तो श्रेष्ठ स्वभाव देवभक्त। मिथुन में वैराग्य सम्पन्न दग्धि। बर्ष में पापी और पौर तथा बावडी, बूवा बनाने। मित्र में दयमान का नाश कर। कन्या में धर्म वर्मन्त। मृग में दानी। धन में महादानी। वृश्चिक में पर मन्तोपी परस्त्री सम्पत्त। मकर में दानी। कुम्भ में यज्ञकर्ता तथा उपवागी। मीन में तालाब आदिक श्रेष्ठ कर्म वर्ता हो ॥ १०२ ग १०४ तक ॥

पक्षस्य कर्ता श्रमभेतथैव पुनर्दिशारी बहूपोजकः स्यात् ॥ नर्तको गायको बदी गान्धी यात्रापरस्ततः ॥ १०५ ॥ गायको नर्तको भारवाही प्रणतिपोजकः ॥ प्रेक्ष्यश्च भाग्यो बदी याचको धातुवाहकः ॥ १०६ ॥ वेदाध्यायी स्मृतिगन्तु शेषाश्रमकृतधमः ॥ शिष्यतेतनकर्ता च मीमांसान्यायतर्षवित् ॥ १०७ ॥ पञ्चशतार्चमास्त्रज्ञ इतिज्ञानपुराणविन् ॥ आपुण्यमरेतुश्च आपुण्यैदकृतधमः ॥ १०८ ॥

सूर्यादि ग्रहो का कलाश अनुसार फल-क्रम से प्रति अश नर्तक १, गायक २, बदी ३, शिल्पी ४, याचक ५, गायक ६, नर्तक ७, भारवाही ८, नम्र ९, दूत १०, भारवाही ११, बदी १२, याचक १३, धातुवादी १४, वेदाध्ययनशील १५, स्मृति शास्त्रज्ञ १६, शिवभक्त १७, शिल्पी अथवा लेखक १८, मीमांसक या नैयायिक १९, आगम तंत्री २०, पौराणिक २१, शस्त्र करनेवाला २२, वैद्य २३, यह फल सूर्य से शनि पर्यन्त ग्रहो के कलाश क्रम से जानना ॥१०५॥ से १०८ तक॥

अर्ककलाशतश्चैव क्रमादेव प्रकीर्तिता ॥ अध्यापकस्तु वेदानां सेवकः शास्त्रपाठकः ॥१०९॥
अश्वसादीमसादी च लिपिलेखनतत्परः ॥ मधुराब्रधको नद्यो देशिको याज्ञिको गुरुः ॥११०॥
दानशीलस्तु तृणको ग्रामणीर्व्यसनाधिपः ॥ आरामकरणीद्युक्तः पुष्पविक्रयतत्परः ॥१११॥
राजकार्यरतः सेनालतापुष्पफलकपी ॥ नृत्यगीते च कुशलस्ताम्रफलविक्रयी ॥११२॥
निषिद्धविक्रयकरो ग्रामाणामधिकारकुत् ॥ बदी च देशिकः प्राज्ञो धूपकञ्चौषधिक्रियः ॥११३॥
कायस्य करणीद्युक्तो भारको भाठविक्रयी ॥ कृषिकृच्च वणिग्धातुचर्मकारी च कर्षकः ॥११४॥
शास्त्राधिकारी विज्ञानो पुस्तको रजको वणिक् ॥ वेदवेदागवेता च शास्त्रज्ञो बदिपाठकः ॥११५॥
ग्रामणीरधिकारी च गणको दंडकारकः ॥ मारकश्चैधनाहारी फलमूलादिविक्रयी ॥११६॥
शातकृत्स्वर्णकारी च कृषिकृत्फलविक्रयी ॥ याज्ञकोऽध्यापकोऽध्यायः प्रतिग्रहपरफलो ॥११७॥

पण्ड्यश फल-वेद पढ़ना १, सेवा करना २, शास्त्र पढ़ना ३, पुंडसवार ४, पीलवान ५, लेखक ६, साहीम ७, नर्तक ८ अध्यापक ९, ऋत्विज १०, गुरु ११, दानी १२, विक्रयकारी १३, चौधरी १४, दुसदाता १५, माली १६, मासी १७, राजकर्मचारी १८, बनस्पति व्यवसायी १९, नृत्यगीत कुशल २०, फल व्यापारी २१, निन्दित व्यापारी २२, ग्रामाधिकारी २३, राजसेवक २४, देशिक २५, बुद्धिमान २६, मौगन्धिव २७, पसारी २८, बहुव्रिया २९, भारवाही ३०, धातु व्यापारी ३१, धूपक ३२, व्यापारी ३३, धातुचर्म व्यापारी ३४, धूपक ३५, शास्त्राधिकारी ३६, अनुभवी ३७, ग्रन्थ चुम्बक ३८, रंगरेज ३९, व्यापारी ४०, महाविद्वान ४१, शास्त्री ४२, राजसेवक ४३, चौधरी ४४, ग्रामाधिकारी ४५, गतिगज ४६, जज ४७, जल्लाद ४८, काष्ठ चोर ४९, फल विक्रयी ५०, ज्ञानकर्मी ५१, मुनार ५२, धूपक ५३, नाम विक्रयी ५४, ऋषिष् ५५, अध्यापक ५६, हाकिम ५७, दानी ५८, अन्तर्यामी ५९, मम्मनित ६०। विषम राशि में ब्रम से और सम राशि में उत्क्रम में यह फल होने हैं ॥१०९-११७॥

इमाद्विभुक्तमतश्चैव षष्टिः स्यादश्वेषु तु ॥ रवीसहस्रविष्ण्वीमादुर्गणपतिष्वया ॥११८॥
चंद्रिकाया च चंद्रेशचंद्रविष्ण्वीमायावरे ॥ त्रिपुरावेदिराविष्णुहरिशकराभय ॥११९॥
लेत्रेणो गण्डे स्वदे शास्त्ररि चतुर्णोऽधरे ॥ विद्यापहरणोद्युक्ते त्रिने मुष्टे इमातया ॥१२०॥
ज्वरभूष्मातिसारागृजडरम्याधिभूतर्क्ष ॥ मेरुप्रहर्णिपटिहापावकावनिगच्छन् ॥१२१॥
वाह्यवरविद्याभ्यां तु सूर्यात्वासंतिमे मृतिः ॥ रागी प्रहारावे नितवानभूष्मन्-
रोगतः ॥१२२॥

त्रिशाश फल—त्रिशाश मे क्रमानुसार प्रत्येक अश मे जातक किस देवता का भक्त होगा यह कहा जाता है। प्रथम अश मे सूर्य भक्त। द्वितीय मे महादेव। तृतीय मे हरि। चतुर्थ मे विष्णु, पंचम मे ब्रह्मा। षष्ठ मे दुर्गा। सप्तम मे गणपति। अष्टम मे चण्डिका। नवम् मे चण्डिका। दशम मे महादेव। ग्यारहवे मे चन्द्र। १२ मे विष्णु। १३ मे ईश। १४ मे अग्नि। १५ मे त्रिपुरा। १६ मे इन्दिरा। १७ मे विष्णु। १८ मे हरि। १९ मे तथा २० मे शक्र। २१ मे क्षेत्रपाल। २२ मे गरुडा। २३ मे स्कन्द। २४ मे सरस्वती। २५ मे ब्रह्मा, २६ मे ईश्वर। २७ मे गरुडा। २८ मे जैन। २९ मे बौद्ध। ३० मे सर्वमतावलम्बी होता है॥११८॥११९॥१२०॥

मरण निमित्त—सूर्य से काल नामक ग्रह तक १४ ग्रह होते है। जन्मराशि मे जो ग्रह हो उसके अनुसार क्रम से ये रोग जानना। सूर्य से ज्वर, चन्द्र से कफ, अतिसार ३, रक्तव्याधि ४, उदरव्याधि ५, मूलव्याधि ६, प्रमेह ७, सग्रहिणी ८, पित्त रोग ९, अग्नि १०, अबनी ११, वायु १२, अग्नि १३, ज्वर या विष १४ ॥१२१॥

प्रकारान्तर—सूर्य से पित्त, चन्द्र से वायु, मंगल से कफ, बुध से पित्त, गुरु से वायु, शुक्र से कफ, शनि से कफ, राहु से पित्त, केतु से वायु रोग से मृत्यु होती है॥१२२॥

पित्तवातकफश्लेष्मपित्तवातः क्रमात्स्मृतः ॥ ज्वरसन्निपातजठराभयात्रकग्रामप्रमेहजलकाज्जलाग्निः ॥ ज्वरसन्निपाततोत्रभवेन्मृतिः क्रियपूर्वकस्तु निघर्नाशकेषु तु ॥१२३॥ गुल्मोदरज्वरविषाग्निजलादिपातशस्त्रादिपातगुदकीलभगदरोत्था ॥ रक्तातिसारजठरज्वरमेहगुल्मकुष्ठतिसारपित्कादिभिरश्मरीयै ॥१२४॥ शूलाशनिक्षतजपित्तसमावृतानि शीतज्वरप्रभृतिराशियशात्क्रमेण ॥१२५॥ कालादिरव्यतसगोक्तजाता चेद्गुर्गपातपतनज्वरसन्निपातात् ॥ गोपातसत्त्वजनिता च मृतिः क्रमेण वामेन चापि पुनरेवमर्थाशकेषु ॥१२६॥

नवाश के कारण मृत्यु के निमित्त—प्रथम नवाश मे जन्म हो तो ज्वर से मृत्यु। २ मे सन्निपात से। ३ मे उदर रोग से। ४ मे अन्त्र रोग से। ५ मे प्रमेह से, ६ मे जल से, ७ मे अग्नि से, ८ मे ज्वर से, ९वे नवाश मे सन्निपात से मृत्यु होती है॥१२३॥

जन्मलग्नराशि से मरणनिमित्त—मेघ मे गुल्मरोग से, वृष मे ज्वर या उदररोग से, (आगे क्रम से) विष, अग्नि, जल से ३, शस्त्र से ४, गुदरोग या भगदर से ५, रक्तातिमार, ज्वर या उदररोग से ६, प्रमेह या गुल्मरोग से ७, कुष्ठ या अतिसार से ८, पित्त या अश्मरी से ९, शूल या वज्रपात से १०, पित्तरोग से ११, शीतज्वर से १२ मृत्यु होती है॥१२४॥१२५॥

कालादि सूर्यान्ति व्युत्क्रम गणना मे मरणनिमित्त—कालग्रह के अश मे दुर्गपात से १ (आगे क्रम से) पतन से २, ज्वर से ३, सन्निपात से ४, वृषभनिमित्त से ५, पतन से ६, प्राणीनिमित्त से ७। ८, वृषभनिमित्त से ९। १०, सन्निपात से ११, ज्वर से १२, पतन से १३, दुर्गपात से १४, ये १४ कारण ग्रह तथा उनके नवाश के भी जानना चाहिए॥१२६॥

आचतुर्यात्समूतानि त्रयो द्वादश हारकाः ॥ अथ स्वादष्टमात्पट्टिः पंचाष्टी दशमाततः ॥१२७॥ पञ्चपञ्चाशदब्दाः स्युस्त्रयोदशानि हारकाः ॥ एषादशोऽष्टपट्टिः स्वात्पातकाष्टात्र

हारका ॥१२८॥ त्रयोदशे च ताना स्युर्द्विसप्ततिरथो मनौ ॥ रश्मय पञ्चदश
चेत्यचसप्ततिरेव च ॥१२९॥ वेदपचरसा हारा दश द्वादशरश्मय ॥ आश्रितः क्रमादब्दा
अशीतिरथ सप्तति ॥१३०॥ सैषव साध्य साद्विचैवादिवेदसप्तति ॥ यष्टिरष्टाद्विरष्टेषु
पञ्चसप्ततिरद्विभुक् ॥१३१॥ एकाशीतिश्चतुर्भुक्ता चत्वारिंशत्समृता समा ॥ सप्ताकरसतर्क्यु
नवाद्विरसप्तद्विकरा ॥१३२॥

रश्मिसंख्या से वर्णनियन- तथा हार-रश्मिसंख्या ४ से ३० तक वर्ष संख्या तथा
हारसंख्या-चक्र में देखे ॥ श्लोक १२७ से १३२ तक ॥

अथ रश्मिवर्षाहाराज्ञानचक्रम्

| रश्मयः | १ | २ | ३ | ४ | ५ | ६ | ७ | ८ | ९ | १० | ११ | १२ | १३ | १४ | १५ |
|--------------|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|----|
| वर्षा० | ० | ० | ० | ५० | ५० | ५० | ५० | ६० | ० | ५५ | ६८ | ० | ४९ | ७५ | ७५ |
| हार- कोका | ० | ० | ० | ३ | ३ | ३ | ३ | ५ | ० | ३ | ७ | ० | ७२ | ५४ | १० |
| ० | ० | ० | ० | १२ | १२ | १२ | १२ | ८ | ० | ९ | १० | ० | ० | ६ | ११ |
| रश्मयः | १६ | १७ | १८ | १९ | २० | २१ | २२ | २३ | २४ | २५ | २६ | २७ | २८ | २९ | ३० |
| वर्षाणि | ८० | ७० | ५० | ४० | ७ | ७४ | ७४ | ६० | ७८ | ५८ | ७५ | ७७ | ८१ | ८५ | ४० |
| हार- कोका | ७ | ९ | ६ | ६ | ५ | ९ | ७ | ६ | ६ | २ | ११ | १० | ९ | ६ | १२ |

यदा विद्वन्वतर्काकां अष्टहारा ज्ञमादमौ ॥ यदा र्कमनुविश्वद्विष्टिः सप्तारैध्वर्कविश्वरा
॥१३३॥ वेदेयुर्बेदकाका स्युरगहारा प्रकीर्तिता ॥ पचाना च चतुर्णा च ततत्पण्यवति
शतम् ॥१३४॥ दश यदा नखा मूर्छा हारा स्युः क्रमशः स्मृता ॥ शते रसार्कद्वारा
दशविशोत्तर शतम् ॥१३५॥ एते हारा ज्ञमात्प्रोक्ता केवाचित्परमायुष ॥
केवाचिदमयोयोगदलमष्टा विशेषतः ॥१३६॥

अमायु के हाराव-१११२१३१४१५१६१७१८१९२०२१२२२३२४२५२६२७२८२९३० ये अमायु के
हाराव है ॥१३३॥

नवायामयु के हाराव-५१४१६१९०११०१११२०१२१ य ग्रम न हाराव है ॥१३४॥
जहा आयुयोग में १०० वर्ष की आयु हो यहा १२११११०११२० इन हारावों का प्रयोग
करना ॥१३५॥ मनानार-हार, शतायु का योग करके आधा करना, वह वर्णमय्या होती
है ॥१३६॥

दशम यावदायात स्वकुटुम्ब विभर्ति च ॥ कृच्छ्रेण दशमे पुत्रबाहुल्यानेकसमुत् ॥१३७॥
एकादशे तु विद्वांसो निर्धना जगती सदा ॥ अटति द्वादशे नित्य निर्धना कुलपासना ॥१३८॥
स्वदेहार्थधना दासा अतो यावत्तु विशति ॥ अत पर मृति याता बाल्य एव
प्रयागता ॥१३९॥

रश्मिफल-रश्मियोग १० हो तो बहुत पुत्र हो और कठिनाई से परिवार का भरण पोषण करे।
११ रश्मि योग हो तो पुत्र विद्वान् तो हो परन्तु दरिद्री हो। १२ हो तो जातक दरिद्र और
नीचवृत्ति होता है। १३ रश्मि से २० तक योग हो तो कठिनाई से या नोकरी से आजीवन हो
या बाल्य अवस्था में ही मृत्यु हो॥१३७-१३९॥

एव प्राग्वत्सरा प्रोक्ता प्रथमेचोत्तरेस्मृता ॥१४०॥ केन्द्रत्रिकोणेष्वशुभा ग्रहास्तु
त्रितामयष्टाष्टमगा शुभाश्रेत् ॥ द्वितीयवेदमास्तगताश्च भीमक्षीणेबुमदा यदि वा च वामम्
॥१४१॥ स्थानेषु धनदेव्येषु शत्रुवर्गगता यदि ॥ रव्यारार्किंम क्षीणचन्द्रा स्यू रेकदा इमे ॥
एव त्रिकादियोगाना सयोगो रेकदो गुणै ॥१४२॥ अन्यथा तारतम्येन कादाचित्को भवेद्द्विज
॥ लग्ने द्विधर्मकर्मसुखपुत्रास्तविक्रमे ॥१४३॥ स्थित स्थितौ स्थिता-सेटा शत्रु
ग्रहनिरीक्षिता ॥ आदौ वयसि मध्येऽन्ते दरिद्रा- स्यू क्रमाद्भवेत् ॥१४४॥

शुभाशुभ योग-केन्द्र या त्रिकोण में पापग्रह तथा त्रिपटाय और आठवे में शुभग्रह हो अथवा
२४।७ में क्षीणचन्द्र मंगल शनि हो या सू० म० श० रा० क्षीणचन्द्र हो तो दरिद्र योग होता
है। अथवा १।२।९।१०।११।४।५।७।३ अर्थात् १ से ५ तक तथा ७ तथा ९ से ११ तक के भावों में १-१
ग्रहो हो शत्रु या पापदृष्टि हो तो प्रथम अवस्था में दरिद्र और दो ग्रह हो तो मध्य अवस्था में
तथा तीन आदि ग्रह हो तो अन्तिम अवस्था में दरिद्र योग होता है॥१४०-१४४॥

नव योगा इमे प्रोक्तास्त्रिषु स्थानेषु रेकदा ॥ कर्कटाद्वृत्रिकान्भीनान्चतुर्व्येव क्रमास्थिता
॥१४५॥ शत्रुगेहे स्थिता पापा मध्येऽन्ते प्रथमे क्रमात् ॥ मुखान्मृत्योर्ध्वयात्पुत्राद्धर्माल्लप्राप्तये-
व च ॥१४६॥ एवमज्ञा यदि न्यूनाश्राष्टवर्गसमुद्भवा ॥ केद्रेषु च त्रिकोणेषु शुभा उपचये परे
॥१४७॥ धनदेयु शुभाश्रान्ये परेषु च यदि स्थिता ॥ इष्टरश्मिफलाधिस्यैकश्च द्वौ च त्रयोऽपि
वा ॥१४८॥ उच्चादिपचक्रस्थाने नवाशेष्वेव वा यदि ॥ लक्ष्मीयोगा इमे
प्रोक्तास्सुहृद्दृष्टास्तवा परे ॥१४९॥

अन्य योग-वर्ष राशि से ४ राशियों में शुभ पापग्रह हों तथा शत्रुदृष्टि हो तो मध्य अवस्था में
फल हो और वृश्चिक आदि ४ राशियों में शुभ पाप ग्रह हो तो अन्त्य अवस्था में योगफल,
भीतादि चार राशियों में शुभ पापयोग हो तो प्रथम अवस्था में योगफल होता
है॥१४५॥१४६॥

शुभयोगविचार-केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह और त्रिपटाय में पापग्रह हो तथा धनस्थान में
शुभग्रह हो और इष्टरश्मियोग अधिक हो उच्च और मूलत्रिकोण में १ या २-३ ग्रह हो अथवा
उच्चादि नवाश में हो तो लक्ष्मीवान् योग होता है॥१४७ १४९॥

रेके प्रोक्ताधिकांशश्च शुभारि फाष्टपद्विना ॥ उच्चौ द्वौवा त्रय कोणे
 चत्वारोऽंशमुहृत्स्विता ॥१५०॥ मित्रेण पञ्च पद सप्त खेटाश्चेच्छीप्रदा स्मृता ॥ द्विर्द्विदशे
 शुभौ चद्रात्सप्तमे वा तनोस्तथा ॥१५१॥ गुरौ त्रये द्वितीये जे व्यये शुकेऽप्यवा भवेत् ॥
 भावदृढतकष्टेऽफलभावस्त्वभावत ॥१५२॥ दापना च फलैरेव भाववर्गेशसमुते ॥
 रश्म्यशसमवादेव वर्षचर्या तु दैववित् ॥१५३॥ एषामशाश्च समूता कारकादिग्रहैरपि ॥
 मासचर्यां दिनोत्था चाप्पष्टवर्गसमुद्भवात् ॥१५४॥

अन्य योग-दरिद्र योग में जो अक्षांश कह है, वे ६।८।१२ भावों के विना हों और उच्च या
 त्रिकोण के १ से ४ तक ग्रह हो तथा ५।६।७ ग्रह अतिमित्र राशि या वर्गगत हो तो धनी योग
 होता है ॥१५०॥

अन्य योग-चन्द्रमा से २।१२ में शुभग्रह हो, लग्न से ७ चन्द्र हो, लग्न में गुरु हो २ में बुध तथा
 १२ भाव में शुक्र हो तो श्रीमान् योग होता है, परन्तु भावबल दृष्टिबल इष्टकष्ट बल के
 न्यूनधिक्य से फल में तारतम्य होता है ॥१५१॥१५२॥

अन्य योगान्तर-आयुर्दायि फल भावफल वर्गफल रश्मिफल इन सबके विचार में वर्ष तथा
 रश्मिविचार से मासफल अष्टवर्ग में दिनचर्या बहना ॥१५३॥१५४॥

भावदृष्टयो प्रधानत्वात्कारको बोधको बले ॥ इष्टकष्टफले त्वन्ये पाचको रश्मिसमवे
 ॥१५५॥ अतदपि तु भावाना प्रधानो बोधक स्मृत ॥ अन्तदपि दशाना तु कारको
 बोधकस्तथा ॥१५६॥ भावस्त्वभावविषये पाचकस्त्वन्यथा भवेत् ॥ पाचकस्त्वन्यथा
 सूर्यश्रद्धमा बोधक स्मृत ॥१५७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अष्टवर्णवर्णन

नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

वसायत ग्रहण विचार-भाव तथा दृष्टिविचार में मुख्य कारक ग्रहण करना वसायत विचार
 में 'बोधक' लेना ॥ इष्टकष्ट विचार में पाचक लेना ॥ अन्तर्दशा विचार में वधक लेना ॥ दशा के
 अन्तर्दयि विचार में बोधक कारक लेना ॥ भावविचार में पाचक लेना ॥ सूर्य स्वभाव में ही
 पाचक और चन्द्रमा बोधक है ॥१५५-१५७॥

इति श्रीवृ०पा०हो०ना०उ०य०भावप्रवा० योगवर्णननाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

पुनः अष्टवर्णनाह

यष्टादिरश्मिप्राप्तेषो जन्मो जन्मतोभूयम् ॥ घनादिर्हो रितश्च द्वितीयोऽपि पुनर्भूतिः ॥१॥
 निःस्वस्तुतोये दामश्च चतुर्थे रश्मिपुनः ॥ प्याधिभिः पीडितस्मद्वन्द्वमे भृगुदुर्गितः ॥२॥ त्रयमे
 दशमे चैव षष्ठोऽपि सप्तमेऽपि च ॥ प्याधिपुनो हरिद्रश्च यदि जीवति तौषति ॥३॥ एषादशोऽपि
 रश्मौ चेष्टाद्योऽपि तुलातिनः ॥ पितृव्यवपश्चरौ द्वितीये वधकपतिः ॥४॥ वेदपातस्मृतोये

स्यान्निर्धनः कुलपासन ॥ मृतपुत्रोऽथ वाऽभाग्यश्रुतये स्त्रीविमानित ॥५॥ पचमे त्वत्पुत्र
स्यात्पण्डे चाप्यरुजा पुत ॥ श्रीयोगे धनवान्कश्चित्तप्तमे दु खितोऽधन ॥६॥ आद्येऽंशे द्वादशे
रश्मौ नैव तस्य शुभाशुभौ ॥ द्वितीये बलवान्मूर्खश्चौरद्वयेण जीवति ॥७॥ तृतीये च चतुर्थे च
वैश्यापतिररिदमः ॥ नृपपुरुषमृत्युश्च भार्याहीनोऽसुतोऽधनी ॥८॥

रश्मिकल तथा वर्षचर्या-छठी रश्मि के प्रथमांश में जन्म हो तो पिता दरिद्र हो, द्वितीयांश में
पिता की मृत्यु हो। तीसरी में दरिद्र और नीकर हो, चौथी में दरिद्री और रोगी, पाचवी में
अति पीडित, ६।७।८।९।१० में रोगी, दरिद्री तथा जीवन में भी सशय हो। ११ वीं रश्मि के
आद्यंश में मातृहीन तथा दरिद्र, द्वितीयांश में पुत्रहीनपति, वैश्यागामी, ३ में निर्धन, कुलहीन,
अभागी या मृतपुत्र हो, चौथे में स्त्रीजित, पाचवे में अल्पपुत्र, छठे में नीरोगी, स्त्रीयोग से
धनी, ७वे में दुःखी निर्धन हो। १२ रश्मि के प्रथमांश में शुभाशुभ समान हो, दूसरे में बलवान्
तथा मूर्ख चोर हो, तीसरे चौथे में वैश्यापति, शत्रुनाश हो तथा राजपुरुष के द्वारा मृत्यु हो या
जीवित रहे तो धन, पुत्र, भार्याहीन हो॥१८॥

विद्याश्रुतये त्वाद्ये पितृभ्या लालितः सुखी॥ द्वितीये क्लेशभाग्यापि शत्रुजिच्च रणाजिरे ॥९॥
पितृभ्या हीन एवाथ सव्यकिंचिद्वनार्जकः ॥ देशादेशमटत्येव तृतीये धनतत्पर ॥१०॥
सद्भिरोड्य सुखी स्यात् शातबुद्धिररिदमः ॥ चतुर्थे धनवान् क्षत्री विद्यार्जितपोषकः
॥११॥ सतिश्रीयोगसयुक्तः पचमे दुःखभाग्यधनी ॥ पुत्रादिसप्तसयुक्त एव पचदशे भवेत् ॥१२॥
अस्मिन्पण्डे धनी प्राज्ञो विद्यया सद्यशो भवेत् ॥ एवं च दोडशे चाशे त्वतीवधनवान्भवेत्
॥१३॥ स्वबधुभ्योऽधिकोऽन्येऽंशे विद्ययाऽय धनेन वा ॥ पुत्रादिसयुक्त श्रीमास्थशे
स्यात्स्वजनेश्वरः ॥१४॥ इष्टापूर्तेन सयुक्तस्त्वष्टादशोतविशके ॥ पूर्ववद्विशरश्मौ तु
सव्यधामपरायणः ॥१५॥ बदान्य पूर्वधर्माणा मनुबद्धपुत्रकः ॥ एकविशे धनेयुक्तमाद्येऽनतर
भागके ॥१६॥ तृतीये तु भुवि स्यातो दानेन च धनेन च ॥ द्विनामत्व तु वा यज्वा
यानवाहनसयुक्तः ॥१७॥ श्रीमान्वद्वृधनानां च साधकश्च चतुर्थेके ॥ अग्रिमाद्येन रोगार्तश्रुतये
धनवान्सुखी ॥१८॥ पचमे वैशयोर्विद्वान्वदान्यो हनुरोऽथवा ॥ तप्तमे धनहानि
स्याद्वाजयोगैश्च मृत्युपुङ्गुः ॥१९॥ अष्टमे निर्धनस्थाना जनानां पोषणे रतः ॥ द्वाविशे प्रथमेशे
तु पितुः पुत्रो धनस्थः तु ॥२०॥

चौदहवीं रश्मि के १ अंश में विद्वान् २ में मातृ पितृयुक्त सुखी। ३ में क्लेश, शत्रुजित्,
मातृपितृ हीन, भ्रमणशील, चौथे में धनी, सुखी, प्रसिद्ध, शान्तबुद्धि, शत्रुनाशवागी,
गज्जनानुरक्त, ५वे धनी भूमिपति, विशोपजीवि, धेष्टभार्यापति, छठे में दुःखी, आगे धन पुत्र
में सुखी हो। १५वीं रश्मि का फल ५ अंश तक उपर्युक्तानुसार है, छठे में बुद्धिमान् धनवान् हो।
१६-१७ रश्मि में प्रथम अंश में अतिधनी, दूसरे में प्रतापी, तीसरे में धन, विद्या पुत्र में सुखी,
चौथे में पदाधिकारी, ५-६ में यज्ञ, पुण्य, कृपादि का वर्ता हो। १८-१९ रश्मि का फल मयहवीं
रश्मि के समान जानना। बीसवीं रश्मि में वासभूमिसुख्य, दानी, पुत्रवान् हो। २१ रश्मि में
१-२ अंश में धनी, ३ में दान धर्म में विन्यात, वाहनवान्, यज्ञवर्ता, धनी, सुखी हो, चौथे में

अध्मिमास्य का रोगी, धनी हो। ५ मे प्रतिष्ठित, दन्तुर हो, ७ मे धनहीन हो, राजनिमित्त से मृत्यु हो। ८वे अश मे निर्धन दरिद्रो का पोषण कर्ता हो॥१-२०॥

द्वितीये धनहीनश्च किञ्चित्कृषिकर सुखी ॥ तृतीये राजकार्याणि तत्कर्मार्जितवित्तक ॥२१॥
चतुर्थे तु प्रभुश्चान्यनामभाग्ददवधनात् ॥ पचमे तद्वदेव स्यात्पण्डे कार्यस्य हानिक ॥२२॥
सर्वव्ययश्च रिक्तश्च सप्तमे रोगपुग्धनी ॥ त्रयोविशे तु जनकलातितश्च सुखी भवेत् ॥२३॥
तृतीये मूर्खकृत्येन परामवसमन्वित ॥ चतुर्थे चौरकृत्येन पचमे व्याधिसम्भव ॥२४॥ पण्डे
दरिद्र मुख्यो व्याधिना पीडितो भवेत् ॥ श्रीमान्पुत्रश्चतुर्विधे प्रथमे लातितो भृशम् ॥२५॥
स्वजात्यनुगुणो विद्वान्प्रथमे च द्वितीयके ॥ तेन स्यात्तस्तृतीये स्यात्स्वतत्र सर्वसमत ॥२६॥
क्षेत्रदारमुह्यत्युत्रकलत्रैर्बहुभिर्वृत ॥ पचमे व्याधित पण्डे बहुव्ययपरायण ॥२७॥

वाईसवी रश्मि के प्रथम अश मे पितृघन से धनी, दूसरे मे निर्धन, कृषक, सुखी हो, तीसरे मे राजसेवी चौथे मे समर्थ, अन्यनाम से प्रसिद्ध, पाचवे मे चौथे फल के अनुसार, छठे मे कार्य हानिकर, ७वे मे रोगी और धनी हो॥ तेईसवी रश्मि के प्रथमाश मे पितृमुख, २मे मुखी, तीन मे मूर्खता से हार, चौथे मे चोर, पाच मे रोगी, ६मे दरिद्री, रोगी हो॥ चौबीसवी रश्मि के प्रथम अश मे धनी, विद्वान् पिता से सुख स्वजाति गुणयुक्त हो, दूसरे अश मे प्रथम के समान ही फल है। तीसरे अश मे स्वतंत्र तथा सर्वसम्मत हो। चौथे अश मे पूर्ण परिवार वाला सुखी ५वे मे रोगी, छठे मे अधिब व्ययशील हो॥२१-२७॥

पचविशे तु पण्डाशे फलहीनस्तु जीर्यति ॥ षड्विंशे प्रथमाशे तु दरिद्रस्यात्सुतोऽपि मन् ॥२८॥ पितु कार्ये तु वृद्धिं स्याद्द्वितीये पितृवेऽस्मत ॥ अन्यत्र गत्वा तत्रैव स्वद्योग्येन च कर्मणा ॥२९॥ स्वदेहपोषकोऽप्येते धनी च कृत्यवित् स्थित ॥ चतुर्थे पचमे चैव पट्टवधादिसमुत् ॥३०॥ अतोऽघ्नवान्स स्यात्पण्डे त्वशे स्वदेहभाक् ॥ क्षेत्रदारदिबद्धपा तु व्याध्याधिसमन्वित ॥३१॥ नवमे धनहानि स्यात्पुत्रदारविवर्जित ॥ यावद्ग्न नवागाश्च षड्विंशवदथ द्वये ॥३२॥

पच्चीसवी रश्मि के छठे अश मे जीवन निष्पन्न हो, छब्बीसवी रश्मि के १ अश मे अन्य देश मे जीवनयापन हो तीसरे अश मे धनी चतुर हो, ४-५ मे दीक्षित, छठे मे धनी मानवे मे साधारण आजीवन ८वे मे भूमि स्त्री का मुख ९वे मे मानसो चिन्ता रोगी हो। १० वे अश मे स्त्री, पुत्र, धनहीन हो २७ २८ रश्मियोग मे भी पूर्वोक्त फल होता है॥शाव २८ मे ३० तक॥

राजप्रियस्ततश्च गुह्यं स्यादशके तत ॥ एकोनविंशे रश्मौ तु सुखी स्याच्च द्वितीयके ॥३३॥ राजसेवी तृतीयेऽपि कृत्याकृत्यविदीधर ॥ बहुबपुपुत्र श्रीमान्गानवाहनमयुज ॥३४॥ देशपामाधिकारो च त्रिंशे त्वेतै समन्वित ॥ सेनानीनोतिमालूर पचमाशे भवेद्विदम् ॥३५॥ पण्डे तु वित्रयो मुढे सप्तमेऽपि रक्षा युक्त ॥ न्यूनापतिस्तु वस्त्रशे नवमो त्वधिराश्रितः ॥३६॥ अश्वत्थिरो तु राजान पण्डाशे वा तृतीयके ॥ अभिपत्ति भवेच्छा पट्टबपुत्रु धोगतः ॥३७॥ रश्मौ तथा चतुत्रिंशे चतुर्विंशे पराजय ॥ तृतीयं पचमे पण्डे मुढे तु वित्रयो भवेत् ॥३८॥ अष्टमे नवमेऽपि तु वृद्धिं स्याद्गमे न हि ॥ षड्विंशवदथ घस्माच्चत्वारिंशततपरे ॥३९॥

द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे चाद्यके तथा ॥ राजा स्यात्पंचमे पण्डे सप्ताष्टनवमे ततः ॥४०॥
दशमे च क्रमाद्युद्धव्याधिर्वाज्य पराजयः॥ इतरांशेषु संख्यातः सर्वसंपत्समन्वितः ॥४१॥
ततः परं च सम्राट् स्यात्चतुर्थे पचमे जयी ॥ अशास्तुत्यास्तु तेज्वेवं विपरीतफल
विदुः ॥४२॥ व्याधिरुक्तदेव स्याद्वावद्विंशतिरश्मयः ॥ यद्यप्यंशाः पर नाज्य अधिकारं भजन्ति
ते ॥४३॥

२९वी रश्मि के प्रथमांश में सुखी, दूसरे में राजसेवी, ३ में सत्कर्मी, ४ में पदाधिकारी, ५ में बन्धु समागम, छठे में श्रीमान्, ७ में सम्मान पावे, वाहन हो, ८वे में देशाधिपति हो, नवम में ग्रामाधिपति हो, इसी प्रकार ३०वी रश्मि का भी फल है। ३१वी रश्मि के ५वे अंश में सेनाधीश, नीतिमान्, शूर हो। छठे में युद्ध में विजयी, ७ में रोगी, ८ में किञ्चित् लाभवान्, नवम में बहुलाभवान् होता है। ३२ वी रश्मि में पूर्वोक्त फल जानना। ३३वी रश्मि में तीसरे, छठे, अंश में राजा होता है। ३४वी रश्मि के ४ थे अंश में पराजय। ३५।६ में जय हो। ८।९ में वृद्धि हो। ३५ वी रश्मि से ४० वी रश्मि तक के १।२।३।४ अंशों में राजा होता है। ७ में युद्ध, ८ में व्याधि, ९वे में व्याधि, तथा दशम अंश में पराजय होती है। बाकी के अंशों में सर्व सम्पत्तिवान् होता है। श्लोक ३३ से ४३ तक॥

अथ स्थानगतानां तु रव्यादीनां क्रमात्फलम् ॥ ततो रवि शिरोरोग बधूना च विरोधताम् ॥४४॥ द्वितीये धनहानिश्च तृतीये मित्रवर्द्धनम् ॥ धनलाभ सुखे सौख्य शत्रुभिश्च समागमम् ॥४५॥ पचमे पुत्रलाभ च बुद्धिमुद्यमसिद्धिर्भूत ॥ पण्डे धन जय कुर्यात्सप्तमे स्त्रीविरोधनम् ॥४६॥ अष्टमे व्याधि हानि च नयमे मित्रवधनम् ॥ भाग्यहानि च दशमे धनलाभं सुखं जयम् ॥४७॥ एकादशे धनानां च सिद्धि मित्रसमागमम् ॥ द्वादशे धनहानि च व्यय वा कुक्षिरुक् क्रमात् ॥४८॥ त्रयोदशे च क्लेश द्वितीये धनयोजनम् ॥ तृतीये भ्रातृमित्रांश्च धनवस्त्राविसंग्रहम् ॥४९॥ चतुर्थे धनवस्त्रादिवाहनादिगुप्तयुतम् ॥५०॥ तीक्ष्णे धनी सुतपुतः परिपूर्णसंपत्पण्डे तु रोगसहित कुमति च कामे ॥ विद्याधनक्षितिमुखादिसमन्विश्च मृत्यौ च मृत्युविषयः खलु कुक्षिरोगी ॥५१॥ स्त्रीस्वर्णदासापतिरेव धर्म माने मुचारित्रगुण धन च ॥ लाभे तु चैतत्सकल व्यये तु धनस्य रिफ कुरुते शशी तु ॥५२॥

सूर्यादि ग्रहों का १२ भावों का फल-सूर्य १ भाव में-शिरोरोग, विरोधा २ में धन हानि। ३ में मित्र, धनलाभ, ४ भाव में सौख्या ५ में पुत्रवृद्धि, बुद्धि का विकास, उद्योग की सिद्धि। ६ में जय धन, ७ में स्त्री विरोधा ८ में व्याधि, हानि। ९ में मित्र वधन, भाग्यहानि। ९ में धनलाभ, सुख, जय, १० में भाग्यहानि, ११ में धनसिद्धि, मित्रसमागम। १२ में धनहानि, व्यय, कुक्षिरोग कारक होता है॥४४ से ४८ तक॥

चन्द्रफल-१ भाव में क्लेश। २-धनलाभ। ३-भ्राता से वस्त्रादि का लाभ। ४ में धन, वस्त्र, वाहन प्राप्ति। ५ में धन, पुत्र, सम्पत्तिवी प्राप्ति। ६ में रोग, वृद्धि। ७ में विद्या, धन, भूमि,

सुख प्राप्तिः ॥ ८ मे मृत्यु दुःख, कुक्षिरोगः ९ मे स्त्री, सुवर्ण, दास प्राप्तिः १० मे उत्तमगुण धन की प्राप्तिः ११ वे मे दसके समान फलः १२ वे मे द्रव्यनाश होता है ॥ ४९-५२ ॥

कुजे लग्ने तु चापत्यात्कृत स्वे धननाशनम् ॥ विक्रमे भ्रातृमरण धनलाभ सुख यशः ॥ चतुर्थे बहुमरण शत्रुवृद्धिर्धनव्ययम् ॥ ५३ ॥ पञ्चमे पितृहानि च धनापतिमुत्ती यशः ॥ षष्ठे रिपुसमृद्धि च जय बहुसमागमम् ॥ ५४ ॥ अथवृद्धि स्त्रिया वारमरण नीचतेवनम् ॥ नीचस्त्रीलग्नो मृत्यो धननाश पराभवम् ॥ ५५ ॥ पराभवमनर्थं च धर्म पापकचिक्रिया ॥ धनव्यय च दशमे धनलाभ कुर्म च ॥ ५६ ॥ लाभे धन सुख वस्त्र स्वर्णक्षेत्रादिसंग्रहम् ॥ व्यये नेत्ररुज भ्रातृनाश च कुल्ले कुल ॥ ५७ ॥

मंगल का फल-१ मे सफलतावश क्षता २ मे धनहानि ३ मे भ्रातृनाश, धनलाभ, सुख, यशः ४ मे वन्धुमरण, शत्रुवृद्धि, धन का लक्ष ५ मे पितृहानि, धनसुख, पुत्र, यश प्राप्तिः ६ मे-शत्रुवृद्धि, जय, वन्धु-समागम, धनवृद्धि ७ मे-स्त्री की मृत्यु, नीच सेवा नीच स्त्रीसगा ८ मे धनहानि, पराजय, अनर्थ ९ मे पापवृद्धि पापकर्म धनव्यय १० मे-धनलाभ कुर्म ११ मे धन सुख सुवर्णलाभ, भूमिलाभा १२ मे नेत्ररोग, भ्रातृनाश करता है ॥ श्लोक ५३ से ५७ तक ॥

बुधः षष्ठेऽरिबृद्धि च युद्धे सति पराजयम् ॥ मृत्तौ बहुबिहीनत्व बधन व्ययमे व्ययम् ॥ ५८ ॥ भावोक्तफलवृद्धि तु परे तु कुल्ले तथा ॥ गुरुशुक्रौ तृतीये तु शत्रुवृद्धि धनक्षयम् ॥ ५९ ॥ षष्ठे पराजय व्याधिमष्टमे बधन तथा ॥ रिफे चोरहृतस्व तु नेत्ररोगपराजयम् ॥ ६० ॥ सप्तमे च चतुर्थे च सेनापत्यधनापति ॥ सर्वसपत्नसमृद्धि च नवमे राजमपदम् ॥ ६१ ॥

बुध का फल-बुध ६ ठे भाव मे शत्रुवृद्धि और मर्दाई होने पर पराजय। अष्टमभाव मे वन्धुहानि, वन्धन। १० भाव मे सर्व करता है। अन्यभावो मे अन्यभावो की वृद्धि करता है ॥ ५८ ॥

गुरु और शुक्र का फल-गुरु, शुक्र, तीसरे भाव मे हो तो शत्रुवृद्धि और धनक्षय करते हैं। छठे भाव मे पराजय तथा व्याधि। आठवे मे बधन करते है। १२ वे मे चोरी नेत्ररोग पराजय कारक है। ४ तथा ७ मे सेनापतित्व, धनलाभ, सर्वगम्यति वृद्धि और नवम भाव मे राजममान गम्यति देते है। अन्य भावो मे भावोक्त फल की वृद्धि करते है ॥ ५९ मे ६१ तक ॥

पूर्वोक्तफलसंयोगमन्येष्वपि सम भवेत् ॥ कुजबद्धविबन्धन पापप्रयश दल गतः ॥ ६२ ॥ पादोनमेक मित्राधिमित्रस्त्वर्थं च बोधये ॥ उल्ले तु नीचे त्रिगुणमध्यरी द्विगुण ततः ॥ ६३ ॥ अतो साधं जमात्वातफलतस्त्येव निर्णयः ॥ शुभैर्दृष्टो रवी राजसेवाक सधनापतिः ॥ ६४ ॥ राश्रमि बतह दुःख रज जठरनेत्रयो ॥ मित्रदृष्टी जय बहुलाभ पापप्र रोगिणाम् ॥ ६५ ॥

जति वा पञ्च मूर्ध, मगन के गमान ही जानना ॥ इनमे से कोई भी पद मित्रश्रेणी होने मे

चतुर्धाश फल, अतिमिश्रक्षेत्री तृतीयाशफल, स्वक्षेत्री हो तो ३ पाद, इसी प्रकार त्रिकोणी भी ३ पाद फल, उज्ज्वराशि में सम्पूर्णफल समझना। नीचराशि का त्रिगुण हीन फल अधिशत्रु में द्विगुण और शत्रुक्षेत्री हो तो आधा फल करता है॥६२॥६३॥

दृष्टिफल-सूर्य पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो राजसेवा तथा धनप्राप्ति होती है। शत्रुग्रहों की दृष्टि हो तो कलह, दुःख, नेत्ररोग हो। मित्रग्रहों की दृष्टि हो तो जय, बहु-लाभ हो। पापग्रहों की दृष्टि हो तो रोगी हो॥६४॥६५॥

धनहानि शशी पापै शिरोमेष्टरुज तथा ॥ शत्रुभि पापकरण धननाश गमागमी ॥६६॥
शुभैररोगता सौख्य धनलाभ च बंधुभि ॥ मित्रलाभ जय क्षेत्रदेशलाभ करोति हि ॥६७॥
पार्षदृष्ट कुज क्षेत्रधनधान्यादिनाशनम् ॥ शत्रुभिर्वन्धन रोग चाह्व दूरवासनम् ॥६८॥
शुभैस्तु विजय देशक्षेत्रलाभ सुहृच्छुभम् ॥ मित्रैश्च धनसंसिद्धि करोति हि न सशय ॥६९॥
शुभैर्बुधो लिपिज्ञान विद्यालाभ च कौशलम् ॥ मित्रैर्भूपाधनक्षौमरत्नलाभ च शत्रुभि ॥७०॥
अतिसार च दुर्बुद्धि प्रतीकेषु सद्योद्यमम् ॥ पार्षदहाविषाद च कुक्षौ शूल च चर्द्धते ॥७१॥

चन्द्र पर दृष्टिफल-चन्द्रमा पर पापदृष्टि हो तो सिर में नेत्र में पीड़ा, धनहानि हो। शत्रुदृष्टि हो तो पापकर्म करता है धनहानि भ्रमण हो। (शुभाशुभमिश्रित दृष्टि हो तो मिश्रित फल हो) शुभदृष्टि हो तो नीरोगता सुख बन्धुतामागम धनलाभ मित्रलाभ, जय, भूमि आदि का लाभ करे॥६६॥६७॥

मंगल पर दृष्टिफल मंगल पर पापदृष्टि से भूमि धन धान्यहानि तथा शत्रुदृष्टि हो तो वधन, रोग कलह करे। शुभदृष्टि हो तो विजय पराक्रम दश भूमि मित्रवर्ग से सुख हो। मित्रगृहदृष्टि हो तो धनप्राप्ति हो॥६८॥६९॥

बुध पर दृष्टिफल बुध पर शुभदृष्टि हो तो विद्यालाभ लिपिज्ञान हो। मित्रदृष्टि से धन वस्त्र रत्न लाभ हो। शत्रुदृष्टि हो तो अतिमार रोग दुर्बुद्धि उद्योग तत्पर रह। पापग्रह दृष्टि से महाक्लेश तथा कुक्षिशूल हो॥७०॥७१॥

गुरु शभैस्तु सद्यो धर्मकार्योद्यमं सुखम् ॥ जय धनायतिर्मित्रैदारक्षेत्रादिसग्रहम् ॥७२॥ शत्रुभि कुष्ठरोग च त्वग्दोषकलह रणम् ॥ पापै पराजय बुद्धे केदारादिबिषयोजनम् ॥७३॥ शुभै शुक्र सुख योषालाभ भूपा धनायतिम् ॥ मित्रैस्तु पट्टवधादि देशलाभादि चात्तिलम् ॥७४॥ पापै पराजय योषावियोग धननाराजम् ॥ शत्रुभिर्वाप्यरोग च मूत्रकृच्छ्रादिक तथा ॥७५॥ मरु पार्षस्तया कुक्षिरोग बन्धनक्ष क्षयम् ॥ शत्रुभि शत्रुबाधा च पराभवमश्वामयम् ॥७६॥

गुरु पर दृष्टिफल गुरु पर शुभ दृष्टि हो तो उद्योग सुख जय धन प्राप्ति हो। मित्रदृष्टि से स्त्री भूमिका लाभ हो। शत्रुदृष्टि हो तो कुष्ठ त्वचारोग, कलह सग्राम हो॥७२॥७३॥

शुक्र फल-शुक्र पर शुभदृष्टि से सुख, स्त्रीलाभ, अन्न धन की प्राप्ति कर। मित्रदृष्टि से भूमि आदि का लाभ हो। पापदृष्टि हो तो पराजय, स्त्रीवियोग, धननाश हो। शत्रुदृष्टि हो तो कष्टसाध्य रोग मूत्रकृच्छ्रादि हो॥७४॥७५॥

शनि फल-पापदृष्टि से-कुक्षिरोग, बन्धन, क्षय हो। शत्रुदृष्टि से बाधा, पराभव, रोग हो। शुभदृष्टि से रोग दूर हो। मित्रदृष्टि से बन्धु समागम हो॥७६॥

शुभैररोगतां मित्रैर्दृष्टो बंधुसमागमम् ॥ रवौ स्थानबले पूर्णं स्वदेशे विद्यया बली ॥७७॥ चंद्र प्रभुतया भौमे ग्रामण्येन बुधे सति ॥ श्रौतया विद्यया वाऽऽर्जलिपिलेखनकर्मणा ॥७८॥ जनैर्धनैरभात्येषु बुद्ध्या च बलवान्गुरौ ॥ यद्वा स्वदेशराजस्तु कार्येणैव बली मतः ॥७९॥ शुके स्वदेशमुख्यो वा त्वाधिपत्येन योषिताम् ॥ मदे भृतकदासानां मुख्यः स्याद्वलवानपि ॥८०॥ उक्तैस्तु पीडितः प्रेष्यः स्थानवर्षोन्तिषे तु ॥ समन्यूनाधिकाद्वीर्यदृष्ट्योत्कर्षात्फलं बवेत् ॥८१॥

सूर्यादि ग्रहों का स्थान बल से फल-सूर्य स्थान बल से पूर्ण बली हो तो अपने देश में ही विश्वाबल से प्रख्यात हो। चन्द्रमा बली हो तो अधिकारी पद प्राप्त हो। मंगल बली हो तो ग्रामाधिकारी हो। बुध बली हो तो वेदविद्या तथा लेखन कर्म से प्रसिद्ध हो। गुरु बली हो तो निज देश में प्रतिष्ठित हो। शुक बली हो तो स्वदेश में प्रधान हो। शनि बली हो तो शरीर से पुष्ट तथा बैतनिकों में मुख्य हो, बलहीन हो तो दासत्व करे॥७७ से ८१॥ तका॥

दिग्बलेनाधिके सूर्ये वाणिज्येन धनायतिः ॥ यशश्च धनवृद्धिश्च चन्द्रे तु राजसेवया ॥८२॥ भौमे तु सेवया ख्यातिर्वेदान्यासेन सर्वदा ॥ बुधे धनायतिः कृष्या यशः स्याद्बुद्धिमत्तया ॥८३॥ गुरौ धनायतिस्तेन वीर्येण धनशुभ्रता ॥ राजकार्येण शुके च बवान्यत्वेन वा यशः ॥८४॥ मदे दासाधिपत्येन धनायतिररिबलान् ॥ कालायनबलाधिक्ये रवौ भौमे शनैश्चरे ॥८५॥ मंत्रोपदेश-विधिना पातद्विपदसम्प्राप्त् ॥ दासभावेन कृष्णादौ कृपितो विद्ययान्यया ॥८६॥ गुरौ शुके बुधे पायोनिधिजे चात्रिसप्तभवे ॥ विद्याया बाधने सस्याबलदिग्बलवृद्धितः ॥८७॥ नानाविधायतिः प्रोक्ता इति चेष्टाधिकेषु तु ॥ कविद्वयो ययापूर्य विशेषादेव निर्णयः ॥८८॥ बलिष्ठो दायरश्म्युक्तफलं सर्वं करोति वै ॥ न्यूनाधिकेनुपातेन फलमेव विचिन्त्यताम् ॥८९॥

सूर्यादिग्रहों का दिग्बल से फल-सूर्य दिग्बल से पूर्ण बली हो तो व्यापार से धनी और यशस्वी होता है। चन्द्रमा दिग्बल में पूर्णबली हो तो राजसेवा से प्रतिष्ठित और मंगल पूर्णबली हो तो वेदान्यास तथा सेवा से सुखी हो। बुध पूर्णबली हो तो बुद्धिमत्ता से यशस्वी हो और गुरु पूर्णबली हो तो धनी और कीर्तिमान् हो। शुक दिग्बल में पूर्णबली हो तो दानशीलता से यशस्वी हो। शनि पूर्णबली हो तो शूरवीर्यता से ख्यातिमान् होता है। कालबल तथा अयनबल में अधिक होने का फल-सूर्य, मंगल, शनि, कालबल तथा अयन बल में अधिक हो तो पातण्ड तथा दास्य वृत्ति से निर्वाह हो। क्षीण चन्द्र बली हो तो सेती से निर्वाह। बुध, बृहस्पति, शुक तथा पूर्ण चन्द्र बली हो तो विद्या, धन से निर्वाह हो। सूर्यादि सभी ग्रह चेष्टाबल में बलवान् हो तो अनेक विद्या से धन की प्राप्ति होती है॥८२-८९॥

सौम्येऽप्यष्टफलाधिकेषु नितरा श्रीमान्शुशीलो गुणी। मित्रेष्वेवमतीव धर्मनिरतो दाता मुक्ता सत्त्ववान् ॥ पापेष्वेवमथापि पापनिरतः शत्रुष्वेव शत्रुभिर्बोर्षेणाय पराजयो जय इमान्य-यतिः प्राप्नुयात् ॥९०॥

ईष्ट, कष्ट बलाधिक का फल बुध गुरु शुक तथा चन्द्रमा ईष्ट बल म अधिक हो तो महाधनी, सुशील धर्मरत दानशील सुखी और बलवान् होता है। पापग्रह ईष्टबल मे अधिक हो तो पापबुद्धि शत्रुओं से पराजय पाता है॥९०॥

अधिकेष्वशुभेष्वेवमनिष्टाख्यफलानि तु ॥९१॥ व्याधिभि कलहैर्मित्रे पीड्यते नात्र सशय ॥ एव पापेषु दुश्चेष्ट पातकी भवति ध्रुवम् ॥९२॥ शत्रुष्वेव सदा रोगी मित्रैर्बन्धुविवर्जित ॥ सर्वद्वेष्यबलाधिस्ये सर्वत्राफलदो ग्रह ॥९३॥ शुभेषु च फलेष्वेव स्पष्टमेव फलप्रद ॥ अत्यनिष्टफल खेट शुभेषु त्वफलप्रद ॥९४॥ अनिष्टफलदोऽन्येषु खेट सर्वत्र सर्वदा ॥ स्वोच्चादिस्थानपदस्था स्युस्तथा दिग्दर्गगा अपि ॥९५॥ क्षेत्रपुत्रकलत्रादिधनधान्यसमृद्धिदा ॥ यदि मित्रादिवर्गस्था धनधान्यविवर्द्धना ॥९६॥

अन्य फल पापग्रह बलाधिक हो ता रोगी पातकी दुश्चेष्टावान होता है। शत्रुगृही हो तो सदा रोगी मित्र-बन्धु रहित सर्व द्वेषी होता है। उच्च राशि मूल त्रिकाण स्वक्षेत्र मित्रक्षेत्र अतिनिज क्षेत्र अथवा समक्षेत्री हो ता स्त्रीपुत्र धनधान्य की समृद्धि होती है॥९६॥

व्याधिदुर्गतिदा प्रोक्तादशारम्भे तु शीतगो ॥ स्वोच्चादि सस्थिता दायप्रारम्भे शुभदा दशा ॥९७॥ अन्यथाशुभदा प्रोक्ता प्रारम्भे ज्योतिषा दशा ॥ केन्द्रधूम्रगता खेटा दशाया शुभदा सदा ॥९८॥ द्रव्यकर्मगुणा यस्य स्वभावा कथिता पुरा ॥ ते सर्वे स्वदशाकाले योन्या भावदृगादियु ॥९९॥ भावदृष्टिबलेष्टानि फलानि कथितानि च ॥ भावाध्यायोत्तरव्यादि-फलान्यत्रैव योजयेत् ॥१००॥

दशा का फल चन्द्रमा की दशा आरम्भ म व्याधि दुर्गति दती है। इसी प्रकार उच्चादि ६ स्थानों मे जो ग्रह हा उनकी दशा आरम्भ म शुभ फल देनेवाली होती है। अन्यथा अनिष्टफल देनेवाली होती है। केन्द्रादि शुभ स्थान म स्थित ग्रह की दशा अपनी दशा के सम्पूर्ण काल म शुभ फल देनेवाली है। सूर्यादिग्रहों के गुण कर्म स्वभाव द्रव्य जा पूर्व कह है उनका विचार करके अपने २ दशाकाल म फल की योजना करनी चाहिए। भावबल पदवर्ग बल इष्टकष्टबल का फल भी दशाकाल म ही होता है॥९७ से १०० तक॥

आदी बलफल प्रोक्त ततो दृष्टिफल स्मृतम् ॥ ततो भावफल प्रोक्तमिष्टानिष्टफलावहम् ॥१०१॥ चेष्टाबलफल चादौ स्थानवीर्यं ततो भवेत् ॥ दिग्बलं च तत प्रोक्तं कालादनबले तत ॥१०२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अब्धचर्यादि फलवर्णनं
नाम उल्लिखितोऽध्यायः ॥१९॥

बला का क्रम प्रथम निमग्नबल मुख्य है। तदनन्तर दृष्टि बल बाद भावबल इष्टानिष्ट

बल, चेष्टा बल, स्थान बल, कालबल, अयनबल ये उत्तरोत्तर बलवान्
है॥१०१॥१०२॥

इति श्री० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भाव प्रका० फलवर्णननाम

ऊनविंशोऽध्याय ॥१९॥

अथ मासचर्याफलमाह

भावाशौ समता गत खलु खग पूर्ण विधत्ते फल सधिस्यो न फलप्रदोऽन्तरगतस्त्वेराशिकेनैव च
॥ भावन्यूनमथ ग्रहस्य गुणपेदशादिक चार्णवैर्हिंत्वा चास्य च सधितोऽधिकमयो प्रोक्त फल
भावजम् ॥१॥ ऊर्ध्वमुत्तो रविपुक्तो राशिसमेतस्त्वधोमुखो ज्ञेय ॥ तीर्थदुमुखोजिलपुतो
राशिभावा परोऽप्येवम् ॥२॥

मासचर्याफल

भावफल-जो ग्रह जिस भाव में है उम भाव के अंश के समान ग्रह के अंश हो तो पूर्ण फल
होता है। संधि के अंश के समान अंश हो तो निष्फल जानना। भाव के अन्य अंशों में ग्रह हो तो
अनुपातसे फलकी न्यूनताधिकता जानना। भावाशसे ग्रहाश कम हो तो ४ से गुणा करना। भावाश से
ग्रहाश अधिक हो तो ऋण, नहीं तो धन करना, तो भावभ्रम रपट होता है। जो भाव सूर्ययुक्त हो वह
भाव ऊर्ध्व मुख, ग्रह रहित हो तो अधोमुख अन्य ग्रहयुक्त हो तो तीर्थदुमुख होता है॥१-२॥

अन्यजातीययोगे तु तत्तद्भावफल वदेत् ॥ स्वजातीयेषु योगेषु त्रिंशद्यशा भवत्युत ॥३॥
तत्त्वमाकृतिरेकाक्षिच्छदस्तस्य चतुस्त्रय ॥ एकोनविंशतिच्छन्दो नवाक्षी यद् उपस्तथा ॥४॥
वेदेयवो नृपा स्थाने भावसख्या प्रकीर्तिता ॥ एकत्रिंशत्त्रयस्त्रिंशद्भानि त्रिंशतयैव च ॥५॥
एकत्रिंशद्विनेत्रे च मुनिरामा खपावका ॥ भानि त्रिंशतिरेकद्वौ खवेदा करणस्य
तु ॥६॥

भाव का जो शुभाशुभ फल भाव दृष्टि के अनुसार पूर्णफल होन पर ३० अंश
जानना॥३॥

वारह भावों के स्थानाङ्क-क्रम से १२ भावों के ये स्थानाङ्क हैं
३१२२२१२६१२५३४११२६१२९३६१५४१६१४॥

भावों के कर्णाङ्क क्रम से ३१३३१२७३०३१२२३७३०१२७२०१२१४०॥
श्लो० ५॥६॥

धिपमाया क्रमादोजे युग्मे स्याता शुभायुग्मे ॥ समाया भयतस्तद्वत्पापसौम्यफले क्रमात् ॥७॥
ओजे व्याधि सभे हानिर्धावितु दशक भवेत् ॥ परत पचक चौजे सभे व्याधिरधान्यया ॥८॥
यावत्तु दशक प्रभवत्तत्तद्वत्फल वदेत् ॥ शिरोरोगाक्षिरोगाश्च रक्तातृक्कामताम्बर ॥ ग्रहणौ
शीतको मेहप्लेहो पुत्तमस्त क्रमात् ॥९॥ रत्नैर्धर्म्यैश्च हैमैश्च गोभि क्षेत्रैश्च राजभि ॥
दासैश्च महिषैर्ध्वर्जजाभैर्बृहस्प स्मृता ॥१०॥ जात्या देशस्य कालस्य स्थानुरूप फल वदेत् ॥
तत्तद्भावानुसप्त च ग्रहानुगुणफल वदेत् ॥११॥ उज्जवादिषु नवस्त्वेव कलाशादिषु यत्फलम् ॥
भाष्याध्यायीतकमप्यत्र योजयेत् विनेपत ॥१२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे मासचर्याफल

वर्णननाम विंशोऽध्याय ॥२०॥

स्थानकरण के सम विषम सख्या के अनुसार शुभाशुभ फल-विषम राशि में स्थान सख्या विषम हो तो शुभ होती है। सम राशि में स्थान सख्या सम हो तो अशुभ होती है। और विषम राशि में कर्ण सख्या सम हो तो अशुभ और विषम हो तो शुभ होती है॥७॥ विषम राशि में स्थान करण सख्या १० तक हो तो व्याधि का नाश हो। सम राशि में १० तक हो तो हानि। १५ तक व्याधि, २५ तक सम राशि में व्याधि, विषम राशि में हानि॥८॥ विषम राशि में स्थान करण सख्या २६ हो तो सिरदर्द, २७ में नेत्र रोग, २८ में रक्त विकार, २९ में कामला ज्वर, ३० में ज्वर, ३१ में राग्रहिणी, ३२ में शीतज्वर, ३३ में प्रमेह, ३४ में प्लीहा, ३५ में गुल्म रोग होता है॥९॥ सम राशि में स्थान करण सख्या ३६ हो तो रत्न वृद्धि, ३७ में धान्य वृद्धि, ३८ में सुवर्ण वृद्धि, ३९ में पशु वृद्धि, ४० में भूमिवृद्धि, ४१ में राजा से लाभ, ४२ में दास वृद्धि, ४३ में पशु वृद्धि, ४४ में निकृष्ट पशुवृद्धि, ४५ में उत्कृष्ट पशु वृद्धि ॥१०॥ स्थान करण सख्या का फल देश, काल, जाति, स्वरूप, स्वभाव आदि के अनुसार समझना चाहिए। पूर्वोक्त उच्चादि स्थानगत फल, कलाशादि स्थित ग्रह फल, भाग्याध्यायोक्त सर्व फल स्थान करण विचार में भी युक्त करना चाहिए ॥७-१२॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० मासचर्याफल

वर्णन नाम विशाखाया ॥२०॥

अथ दिनचर्यादिफलमाह

अर्केन्दुगुरुः शुक्रः क्रमादन्ये बलक्रमात् ॥ भवति स्थानदाः खेटाश्रितवारश्च पदैकदा ॥१॥
धनादीनां यथा लब्धिः पच चेत्पूज्यतायुतः ॥ आरोग्य वस्त्रलाभश्च पदसु पदस्य बन्धनम् ॥२॥
सप्त खेटाज्यलाभः स्यादेव करणदा यदि ॥ धनहानिस्ततो व्याधिस्ततस्तु विपदादयः ॥३॥
सप्तभिर्मरण प्रोक्तमज्ञाभावे मृतिर्भवेत् ॥ तत्र तिष्ठति चेत्येते त्वन्यस्मिन्यदि वामतः ॥४॥
उच्चसख्याधिका अराश्रदस्य स्थानदा परे ॥ शुभाख्या. शुभदाः प्रोक्ता राशिनात्र क्रमात्फलम् ॥५॥

स्थानादिवल से ग्रहों का फल-सूर्य, चन्द्रमा, गुरु, शुक्र और मंगल, बुध, जनि, एवं समय स्थानप्रद हो तो धन प्राप्ति। पचम भाव में स्थानप्रद हो तो पूज्य, लाभ, धन प्राप्ति होती है। ६ ग्रह स्थानप्रद हो तो राजा होता है। ७ ग्रह रेखाप्रद हो तो राज्य लाभ होता है। करणफल-४ ग्रह करणप्रद हो तो धन हानि ५ हो तो व्याधि, ६ हो तो विपत्ति, ७ हो तो मृत्यु, करण का सर्वथा अभाव हो तो भी मृत्यु। चन्द्रमा वा उच्चाश ३ है। इनमें अधिक हो तो स्थानफल दायक जानना॥१ से ५ तक॥

होराशास्त्रमिदं सर्वं भाषितं तव सुव्रत ॥ पुण्यं यशस्य धन्यं च त्रिकालज्ञानकारणम् ॥६॥
विनामनुतपस्ये च शास्त्रज्ञानेन केवलम् ॥ हस्तामलकबलावर्जिता लोकप्रेतफलम् ॥७॥
पुत्राय शिष्याय च धीमते च तपस्विने मन्त्रविदे च दात्रे दद्यादिमराशास्त्रमहासमुद्रं पर्येवशम्भुं
शिखिवेपथोधिम् ॥८॥ बुद्धिहीनाय दाम्भाय दाम्बिकाय त्वमर्पिणे ॥ न दद्याद्यदि दद्याच्चेद्विष्टा
स्वस्य विनश्यति ॥९॥ एवं ते कथितं शास्त्रं त्वयि श्रेहाद्विजोत्तम ॥ जातकांशं विद्यात् किं
भूपस्त्वं श्रोतुमिच्छसि ॥१०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे दिनचर्यादिफलवर्णनं

नाम एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

शास्त्र का फल और उपमहार-हे मैत्रेय! यह होराशास्त्र तुमको कहा, यह पवित्र, कीर्तिदाता, धनधान्य सम्पादक, भूत, भविष्य, वर्तमान काल का शुभाशुभ सूचक है। इसका ज्ञान प्राप्त करके मन्त्रादि द्वारा देवता की आराधना करो। हथेली पर रखे हुए आवने के समान सम्पूर्ण जगत् का शुभाशुभ फल इस शास्त्र से जाना जाता है। यह शास्त्र अशाकारी पुत्र को, योग्य शिष्य को, मन्त्रवेत्ता पुरुष को देना चाहिए। यह शास्त्र समुद्र के समान अगाध है। यह शास्त्र दम्भी, क्रोधी, दुष्ट को नहीं देना चाहिए, देने से विद्या नष्ट होती है। पूर्वोक्त दोष रहित बालक भी हो तो यत्न से पढ़ाना चाहिए। जैसे कि शिवजी ने तपस्वी अभिमन्यु को दिया। हे मैत्रेय! तुम्हारे स्नेह से यह जातकाश तुमको कहा और क्या सुनने की इच्छा है तो कहो ॥६-१०॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० दिनचर्याफलवर्णन

नाम एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

अथ प्रश्नप्रकरणम्

मैत्रेय उवाच-भगवन्प्रश्नशास्त्रं तु सूचिकानांप्रकाशितम् ॥ कलौ युगे तु मदानां यज्ज्ञातु
तद्वदस्व मे ॥१॥ कृते युगे तु धर्मस्य पूर्णत्वात्तपसान्विता ॥ सर्वे जानति भूतं च भवद्भूति
द्विजोत्तम ॥२॥ त्रेतायां तपसा युक्ता केचिज्जानन्ति वै द्विजा ॥ पश्यन्ति द्वापरे शास्त्रज्ञानेन
तपसाऽपि च ॥३॥ कलौ युगे तु धर्मस्य पादमात्रव्यवस्थिति ॥ तपः शक्त्या तु तज्ज्ञातु न
शक्ता मानवा भुवि ॥४॥

प्रश्नप्रकरणम्

मैत्रेयजी ने कहा-हे भगवन्! आपन जो प्रश्नज्ञान का उपाय कहा वह अतिदुरूह सूक्ष्मबुद्धि
गम्य है, अतः इस कलियुग में उसका ज्ञान होना कठिन है। जो मरल प्रश्नशास्त्र विषयक ज्ञान
हो सो कहिये ॥१॥ धौपराश्वरजी ने कहा-हे मैत्रेय! सत्ययुग में धर्मपूर्ण होने से प्रायः सभी
तपस्वी होते थे, अतः भूत भविष्य का ज्ञान रहता था त्रेता में भी कुछ तपस्वी शास्त्र यत्न से
भूत भविष्य जानते थे, द्वापरे में कुछ तपोबल और शास्त्रज्ञान से युक्त थे अतः भूत भविष्य
ज्ञान में समर्थ थे, परन्तु इस कलियुग में धर्म की तो १ पादमात्र स्थिति है, अतः तपोबल और
ज्ञानबल क्षीण हुए मनुष्य शास्त्रज्ञान में कुशल नहीं हैं। अतः तुम्हारा यह प्रश्न उचित ही
है ॥२॥३॥४॥

तथाऽत्र परमं शमुलोकानुग्रहकाक्षया ॥ सक्षोकृत्य निजा शक्तिं विद्यामाधात्स ईश्वरः ॥५॥
कलावधिं च भक्तानां प्रिकालज्ञानदायिनी ॥ वेदादि वागमव गौरिवद्वचमयो गिरि ॥६॥
परमैश्वर्यसिद्धयर्थं वागमव स्यादयं मनु ॥ सर्वज्ञेति पदं पूर्वं नायं तं पार्वतीपते ॥७॥
सर्वलोकगुरो पञ्चाब्धिर्वेति द्वयमक्षरम् ॥ शरणं तु पदं पञ्चात्स्वा प्रपन्नोऽस्मि
तत्परम् ॥८॥

अतः शास्त्रज्ञान के लिये उपाय बहूते हैं कि इस पृथ्वी में मन्दबुद्धि पुराणों के ज्ञान के लिए
महादेवजी के परोपकारार्थे शिव शक्ति दोनों के मन्त्र का निर्माण किया। वे मन्त्र ये हैं—“ॐ
ऐं गौरि वद २ गिरि परमैश्वर्यं सिद्धयर्थे ऐं” यह शक्ति मन्त्र और “ॐ सर्वज्ञ नायं पार्वती
पते शिव, शरणं त्वा प्रपन्नोऽस्मि पालय ज्ञान प्रदायक” यह शिव मन्त्र है ॥५-८॥

पालयेति पदं ज्ञानं प्रदापय ततः परम् ॥ ऋषिस्तु दक्षिणामूर्तिर्गौरी परमेश्वरी तथा ॥९॥
 सर्वज्ञश्च शिवो देवो गायत्री च्छद ईरितम् ॥ अनुष्टुप् च षडङ्ग स्याद्वाग्भवेन हृदादि च ॥१०॥
 अनेनाभ्या द्विजश्रेष्ठ बुद्धिस्तु विमला भवेत् ॥ जपमात्रेण सिद्धिः स्यादैवजत्व प्रकाशते ॥११॥
 उद्यानस्यैकवृक्षाद्य परे हेमवते द्विज ॥ क्रीडतौ भूषिता गौरी शुक्लवस्त्रा शुचिस्मिताम् ॥१२॥
 देवदारुवने तत्र ध्यानस्तिमितलोचनम् ॥ चतुर्भुज त्रिनेत्र च जटिल चद्रशेखरम् ॥१३॥

दोनों मन्त्रों के छन्द आदि "अनयो मन्त्रयो दक्षिणा मूर्तिं ऋषि गौरी परमेश्वरी सर्वज्ञ शिवश्च देवते गायत्र्यनुष्टुभौ छन्दसी मम त्रिकालदर्शक ज्योतिः शास्त्रज्ञानप्राप्तये जपे विनियोगः ॥" यह विनियोग करके 'ऐ' इस बीज मन्त्र से ही करन्यास, अग्न्यास करो। इन दोनों मन्त्रों के पुरश्चरण करने से बुद्धि निर्मल होकर इस शास्त्र का वयार्थ ज्ञान होगा ॥९॥१०॥११॥ न्यास के बाद मूलोक्त श्लोक पाठ करके ध्यान करो। यथा-हिमालय पर्वत पर अति सुन्दर गङ्गीके में बट वृक्ष के नीचे उत्तम आसन पर स्थित जोभायुक्त, श्वेतवस्त्र सम्पन्न, हंसमुख, श्रीभगवती गौरी तथा ध्यानस्थ त्रिनेत्र चतुर्भुज भालचन्द्र, जटाधारी, सर्वजगन्निपता, देवाधिदेव महादेव साक्षात् परब्रह्मस्वरूप शिव का ध्यान करो ॥१२॥१३॥

शुक्लवर्ण महादेव ध्यायेत्परममीश्वरम् ॥ द्विविधं गणितं ज्ञात्वा शाखास्कन्धं विमृश्य च ॥१४॥
 होरास्कन्धस्य शकले श्रुत्वायमवधार्य च ॥ वागी द्विजवरो यः स्यान्न वध्या तस्य भारती ॥१५॥
 अनुष्टोमो नैष्ठिक शुद्धो विनयप्रथयान्वित ॥ रत्न स्वर्णं धनं वस्त्रं पुण्यमूलफलानि तु ॥१६॥
 दैवजपुरतो दत्त्वा पृच्छेदपिष्टं प्रियान्वित ॥ अथ प्रादुर्मुख आसीन शुचिर्दैवविदप्रत ॥१७॥
 तिर्यग्पूर्वाश्रितस्तु रेखा रज्जुसमा लिखेत् ॥ एकीकुर्वाणं चत्वारि मध्यस्थानि पदानि च ॥१८॥
 तत्र पश्य लिखेद्वैशाखप्रमध्यं सकर्णिकम् ॥ ईशान्यकोष्ठादारभ्य मोनाद्यां राशयः क्रमात् ॥१९॥
 मेघवीथीं वृषाद्यास्तु कौर्ष्माद्यां मिथुनस्य तु ॥ वीथयो मोनमेघौ तु तुलाकन्ये वृषस्य तु ॥२०॥
 आरुढाद्दीपिम यावत्तावच्छत्रं तु तत्रतः ॥ आरुढराशिर्लघु चेच्छत्रं चापि भवेत्तथा ॥२१॥
 जन्मलग्नं समासाद्य यद्यत्रोक्तं तु जातके ॥ तत्सर्वं प्रश्नलग्नेन प्रश्नकालाद्देद्वुध ॥२२॥

इस प्रकार उपासना करके गुरुद्वारा भूगोल मंगोल की गणित का अभ्यास करके इस होराशास्त्रका जातकफल सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करे वह सर्वहितैषी, मिष्टभाषी ब्राह्मण दैवज्ञ और त्रिकालदर्शी होता है। जगदी वागी मिथ्या नहीं होती ॥१४॥१५॥ इसी प्रकार पूछनेवाला भी निष्ठावान्, निष्कपट, मन्त्र लोभरहित होकर द्रव्य (शेट) रमकर, यदि दग्ध हो तो पत्र पुष्प आदि दैवज्ञ को पूजित करके प्रमत्त चित्त में प्रश्न करे ॥१६॥ दैवज्ञ को चाहिए कि-पूर्वाभिमुख बैठकर प्रथम राशिचक्र लिखे और आरुढ लग्न का विचार करे। मो इन रीति से कि-पृच्छक जिस दिशा में बैठा हो वह आरुढ लग्न जाने या पृच्छक जिस राशि का स्पर्श करे वह आरुढ लग्न जाने और वृषादि चार राशि में मेघवीथी और वृश्चिवादि चार राशि मिथुन

बीथी तथा शेष राशि वृषबीथी में जानना। आरुढ लग्न से प्रश्नलग्न तक जो सख्या हो उतनी सख्या की राशि बीथी में देखना, उस बीथी की राशि छत्र सजक होती है॥ श्लोक० १७ से २२ तक॥

| बीथीज्ञानवक्रम् | | | अथ राशिचक्रम् | | | |
|-----------------|-------|-----|---------------|---|---|---|
| २ | ८ | १ | १२ | १ | २ | ३ |
| ३ | ९ | १२ | ११ | | | ४ |
| ४ | १० | ७ | १० | | | ५ |
| ५ | ११ | ६ | ९ | ८ | ७ | ६ |
| मेघ | मिथुन | वृष | | | | |

यत्कालावधि लग्न तत्तत्कालावधि चेत्स्थिते ॥ तेषां बलवता चैव निर्णयः स्वायुषः स्मृतः ॥२३॥ आद्यद्रेष्काणमन्य च मृत्युद च क्रमाद्भवेत् ॥ मृगादिकर्कटाणां च मीनस्यारुढतन्त्रतः ॥२४॥ लग्ने पृष्ठोदये क्रूरवेदमास्तव्यमाणा यदि ॥ धने धर्मे कुजे मदे चन्द्रे रश्मे भृतिर्भवेत् ॥२५॥ पार्ष्वर्दुर्धरे जाते लग्नकाममुद्गृह्णन्ति ॥ चन्द्रेऽर्के च विलग्नस्थे प्रियते व्याधिना मृगम् ॥२६॥

आरुढलग्न से आयु निर्णय तथा द्रेष्काण पाल-तत्काल लग्न से आयु का निर्णय करे। मकर, वृश्चिक, कर्क, मीन इनका आरुढ लग्न से आद्यन्त द्रेष्काण हो वह लग्न मृत्युकारक होता है॥२३॥२४॥ प्रश्नकाल में पृष्ठोदय लग्न हो लग्न से पापग्रह ४।७।१२ स्थान में या २।९ में गति मगत हो और ८ में चन्द्रमा हो तो मृत्युकारक होता है॥२५॥

अन्य योग-पापग्रही से दुर्धरा योग हो, ४।७ में चन्द्रमा और लग्न में सूर्य हो तथा प्रश्न समय में राहुकाल का समायोग हो तो व्याधि से मृत्यु होती है॥२६॥

राहुकालसमायोगे मरण निश्चित भवेत् ॥ मेघाद्विच्युत्कमतो राहुर्वृषात्कालः क्रमाच्चरेत् ॥२७॥ राशी राशी तु पञ्चाशद्भोगकालो विनाडिका ॥ अर्कोदयादितश्चोभौ भुजाते च पुनः पुनः ॥२८॥ एकवृत्तचन्द्रिरामेषु षडष्टौ नाडिका क्रमात् ॥ अर्कवारावितो राहु रात्रावेवमृदिरितः ॥२९॥ राहुवृत्तमशः प्राच्या कालश्च क्रमशश्चरेत् ॥ उभौ सार्धविनाडयेन राशिषु द्वादशस्थितिः ॥३०॥ इदं द्विप्रतिनाचरशमवारीशवायव ॥ हृद्वज्जतेः शेषपापकेद्रममस्ति ॥३१॥ रक्तो वायुस्ततोऽग्नीशयमवारुणराजसा ॥ वायुसोमशचीनाधरजोप्रिजलपेदधः ॥३२॥ वाय्वीरोद्रयमा पञ्चाशुर्मेढौ च निशाचरः ॥ मरुद्वृत्तचन्द्रेण पावको वरुणो यमः ॥३३॥ वायुवृत्तशशीन्द्राग्रिरालताश्च ततः परम् ॥ वायुरक्षः शशीवृत्तपावकालकवारुणः ॥३४॥

राहु काल समायोग का विचार-‘राहु’ की गति वक्र है और ‘वाल्’ की गति मार्गी है। मृत्योदय

से ५०-५० पल प्रतिराशि का भोग करते हैं। अतः एक राशि पर दिन रात में बारम्बार समायोग होता है। सूर्यादि चारों में १।२।३।४।५।६।८ घटिकाओं के हिसाब से 'राहु' पूर्व आदि दिशाओं में विपरीत क्रम से 'काल' ग्रह मार्गी क्रम से २॥-२॥ घटी (या १-१ घटा) चलते हैं। वारके क्रम से दिशा का संचार क्रम-रविवार को पूर्व से, सोमवार को उत्तर से, मंगल को आग्नेय से, बुध को नैऋत्य से, गुरु को दक्षिण से, शुक्र को पश्चिम से, शनि को वायु कोण से १-१ घटा क्रम, व्युत्क्रम से चलते हैं॥ रविवार को पूर्व उत्तर, आग्नेय, नैऋत्य, दक्षिण, पश्चिम। सोमवार को ईशान, उत्तर, पश्चिम ईशान दक्षिण। मंगल को नै० वा० आग्ने० ईशा० दक्षि० क्रम से। बुध को-वा० उत्त० पू० नै० द० अग्नि० प० उत्त० क्रम से। गुरुवार को वा० ई० पू० द० प० नै० इस क्रम से। शुक्रवार को वा० प० उ० ई० अ० प० द० इस क्रम से, शनिवार को वा० ई० उ० पू० अग्नि० नै० वा० इस क्रम से अथवा-उ० पू० ई० आग्ने० द० प० इस क्रम से चलते हैं॥ २७-३४॥

अर्कवारादितो वाम राहु सचरति क्रमात् ॥ रुद्र समीर सोमाग्री यमोऽथ निर्ऋतिर्जलम् ॥
नक्षत्रेऽपि च वारे च तिथौ चोत्क्रमत क्रमात् ॥ ३५॥ अतिमादादिमाद्राहु कालश्च चरतस्तथा ॥
द्वयोयोगे तु मरणमेकस्मिन्व्याधिरुच्यते ॥ ३६॥

नक्षत्र, तिथि, वार क्रम से संचरण-

संचरण दिशाओं का क्रम-ईशान वायु उत्तर आग्नेय दक्षिण नैऋत्य, पश्चिम इन ७ दिशा विदिशाओं में अश्विनी से वर्तमान नक्षत्र तक जानना। राहु अंतिम दिशा में उलटा और काल आरंभ से क्रम से चलता है। नक्षत्र तिथि वार पर चलाना। यदि वर्तमान (प्रश्न दिन) दोनों का संयोग हो तो मृत्यु तथा एक का योग हो तो व्याधि जानना ॥ ३५॥ ३६॥

नृपा मूर्छा शरास्तत्त्व तिथियोद्भवा पञ्च च ॥ द्वितीये त्वष्टमे भावस्तत्त्वतरे त्वनुपातत ॥ ३७॥
नागाब्देऽपि गुणा रुद्रा बाजिवेदागपत्तय ॥ दशपचाष्टका मेघाद्रश्मय सप्रकीर्तिता ॥ ३८॥
एकयोगे तु सर्वेषु व्याधिर्द्विभ्या भवेन्मृति ॥ लक्ष्मीयोगेषु सर्वेषु व्याधिस्तस्य त्वार्गपि वा ॥ ३९॥
वैधृती च व्यतीपाते सार्पभेतिमसंज्ञिते ॥ कुलीरे विपनाडीसु सूर्यदुष्टेषु पञ्चसु ॥ ४०॥
पापयुक्ते च नक्षत्रे राशौ तत्संयुक्तेऽपि च ॥ सधौ च मातृशून्यर्क्षे तिथिराशिषु जन्मभे ॥ ४१॥
व्यापष्टमे च क्षीणेदौ शत्रुग्रहनिरीक्षिते ॥ पाद षष्ठे च जघा च जानु नाभि च गुल्फके ॥ ४२॥
कर्णौ च चक्षुषौ भालमास्थ कण्ठ स्पृशेद्यदा ॥ व्याधिर्वा म्रियते तद्वन्मृति राशि स्पृशेत्तु वा ॥ ४३॥
अष्टमर्क्षे स्पृशेद्यदा कलाशादिषु वा तथा ॥ विषद्वधप्रत्यूषे च वेनाश प्रलयेव वा ॥ ४४॥
सस्पृशेत्प्रश्नकाले तु व्याधिर्वा तस्य वा मृति ॥ ४५॥

१२ भावों की रश्मि- द्वि० १६, तृ० २१, च० ५, ष० २५, प० १५, म० १६, अ० ५ रश्मि है, अन्य भावों की पूर्व कथित वेना। बाग्रह राशियों की रश्मि-क्रम से-८।८।५।३।११।७।४।६।१०।१०।५।८ है॥अपवाद॥ वे जो मृत्युयोग बने गये हैं इनमें यदि प्रश्नलग्न में शुभयोग या धनयोग भी हों तो मृत्यु न होकर केवल व्याधि या मुग ही होता है॥ ३७॥ ३८॥ ३९॥ यदि प्रश्नकाल में वैधृति, व्यतिपात, आश्लेषा, नैऋती, कर्क नवांग,

विषयटी तथा म० बु० शु० श० पापग्रह युक्त नक्षत्र सध्या, प्रातः या मध्याह्न काल, मास
शून्य तिथि, वार, नक्षत्र, या जन्म नक्षत्र हो अथवा प्रश्नलग्न से ८।१२ में चन्द्र हो या शुक्रद्विष्ट
हो। काल—राहु समायोग हो, तो व्याधि या मृत्यु होती है। अथवा राहु अष्टम राशि में या
पौडशाश में हो या 'विपत्' तारा हो वैनाशिक नक्षत्र में हो व्याधि या मृत्यु
हो॥४०-४५॥

शिरोललाटभूनेत्रनासाकर्णकपोलकाः ॥ ओष्ठ च चिबुकं कठमसौ हृदयमेव च ॥४६॥ पार्श्वौ
च वक्षः कुक्षिश्च नाभिश्च कटिरेव च ॥ जघनं च नितंबं च लिङ्गमडं च वस्ति च ॥४७॥

नक्षत्र क्रम से श्लोकोक्त २७ अंग—सिर, ललाट, भू, नेत्र, नासिका, कर्ण, कपोल, ओष्ठ,
ठोड़ी, कठ, कंधे हृदय॥४६॥ पांशू, वक्ष, कुक्षि, नाभि, कटि, जाघ, नितंब, उपस्थ, अङ्ग और
वस्ति, ये अंग नक्षत्र पर से जानना॥४७॥

अहं च जानू जंघा च गुल्फाग्रौ चाश्विभातक्रमत् ॥ तैलाभ्यक्तोऽथ वा शुद्धो जलगर्तसमीपगः ॥
प्रष्टा दैवविदे वाय मरणं तस्य निर्दिशेत् ॥४८॥ लग्नत्रिभुक्तकामारिधर्मकर्मायगः शुभः ॥
रोगशांतिकरा नोचेद्रिपुनोवग्रहस्थिताः ॥४९॥ एषु पापा मृतिकरा नोचेत्स्वर्गोच्चमित्रगाः ॥
यस्य यस्य शुभं वाय रिः फस्यानगताः शुभाः ॥५०॥ यद्वा त्रिकोणकेद्रस्थास्तस्य तस्य शुभप्रदाः ॥
मृगकन्यादितः सूर्यो राशिपूर्वापरार्धतः ॥ शनियुक्कारचंद्रतगुरवः शिशिरादिषु ॥५१॥

यदि प्रश्नकर्ता तैलाभ्यक्त, मृतकवाला, तालाब के पाम बैठा हुआ हो तो पृच्छक की मृत्यु होती
है॥४८॥ प्रश्नलग्न से ५।३।६।९।१०।११ इन भावों में शुभग्रह हो तो रोग-शान्ति होगी और
पापग्रह हो तो मृत्यु होगी। परन्तु शुभग्रह बलहीन तथा पापग्रह बलवान न हो॥४९॥ जन्मलग्न या
प्रश्नलग्न में १।५।७।९।१०।११ स्थानों में शुभग्रह हो तो शुभदायक होते हैं॥५०॥ प्रश्नलग्न या
जन्म-लग्न से जन्मसमयकाज्ञान-कुंडली में सूर्य गकर से ६ राशि तक हो तो उत्तरायण कर्कादि ६
राशि तक हो तो दक्षिणायन जानना। इसी प्रकार मकर आदि ६ राशि के पूर्वार्द्ध में जनि हो तो
शिशिर, शुक्र हो तो वसंत, मंगल हो तो ग्रीष्म, चन्द्र हो तो वर्षा, बुध हो तो शरद, गुरु हो तो हेमन्त
जानना, कर्कादि ६ राशि के उत्तरार्द्ध में पूर्वोक्त ग्रहों में पूर्वोक्त ऋतु जानना॥५१॥

अर्कं ग्रीष्मस्ततोऽन्यैर्वा वाऽयनास्तुरेव च ॥ शुक्रारमदचंद्रशनीशश्च परिवर्तिताः ॥५२॥
लग्नद्रेष्काणपाः श्रोक्ता नवांशैर्नैव चापरे ॥ तत्पूर्वपरतो मासौ तिथिः स्यात्सुपाततः ॥५३॥
लग्नत्रिकोणगो जीयो नवांशस्योऽथ वा भवेत् ॥ ज्ञात्वा यद्येतुल्येण ह्यनुमानयशास्तमाः ॥५४॥
सूर्यस्त्वितारास्तुल्या वा तिथिं प्रोवाच भार्गवः ॥ रासौ रात्रिदिवाख्ये च जन्म स्यात्तु वित्तोमतः
॥५५॥

प्रश्नलग्न में—लग्न में सूर्य से ग्रीष्म, चन्द्र से वर्षा, मंगल से शरद, बुध से हेमन्त, गुरु से शिशिर, शुक्र
से यमन्त जानना। अथवा शु० म० श० व० बु० ये ग्रह लग्न के द्रेष्काणपति हो तो क्रम में ग्रीष्म
आदि ऋतु या नवांश में ऋतु लेना॥५२॥

मास तिथिज्ञान—पूर्व में जो ऋतुज्ञान कहा गया है उसके पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध के विभाग से पूर्वोत्तर मास ज्ञान होगा। इसी अनुपात से तिथि जानना॥५३॥

वर्षज्ञान—प्रश्नलग्न से त्रिकोणस्थान गुरु हो तो जिस राशि का गुरु हो उस राशि का गुरु पूर्वकाल में जिस वर्ष में हो वह जन्म का वर्ष पृच्छक की अवस्था देखकर अनुमान से जानना। यदि १२ वर्ष के गुरुराशि भ्रमण में बीच में बही हो तो नवाश से वर्ष जानना॥५४॥

तिथिज्ञान—सूर्य के अंश के अनुरूप (तुल्य) तिथि और लग्न (प्रश्न) राशि का हो तो दिन का जन्म और दिन का प्रश्नलग्न हो तो राशि का जन्म जानना॥५५॥

गतप्राणैर्जन्मकाले ते च प्राणा भवत्यथ ॥ यदाशिशु शशी माससम वाऽत्युशदगकम् ॥५६॥
तत्त्रिकोणवलाधिक्य राशिर्लघात्तु यावति ॥ चद्रस्तावतिभ चापि जन्मलग्न विनिर्दिशेत् ॥५७॥
मीने मीन तु लग्न वा तथा न्यैस्त्वन्यत्लग्नभम् ॥ छापया सयुता यामवारर्क्षतिथिराशय ॥५८॥
यावतस्तु धनिष्ठादिजन्मर्क्ष तद्विनिर्दिशेत् ॥ कलाशादिषु पक्षोक्तमूल तद्वा भवेदिदम् ॥५९॥

प्रश्नकाल में जिस राशि का चन्द्रमा हो वह मास (चैत्रादि) चन्द्रमा सम या विषम जिस राशि में हो उससे ५।९ राशि चलवान हो तो प्रश्नलग्न से उतनी ही सख्या राशि में जन्मलग्न जानना॥५६॥५७॥

जन्मनक्षत्रज्ञान—प्रश्नसमय के छायापादकी सख्या में ग्रहण वार नक्षत्र सख्या का योग करना २७ का भाग देना जो शेष रहे वह धनिष्ठादि नक्षत्र होता है॥५८॥
प्रकारान्तर—कलाश से हारा तक की सख्या में जानना॥५९॥

कलाशाद्यर्थहोरात प्रोक्तहौरैर्विभावयेत् ॥ प्रथमिप्तीकृत लग्न वर्णनाभिहत पुन ॥६०॥
आरुद्धच्छत्रयोर्वीर्यबलस्य वर्णनाहतम् ॥ ओजे योग समे हानिरिति तस्य विशीयते ॥६१॥
स्वै स्वभागेश्च भक्त तत्तथा मासादय स्मृता ॥ यद्वा कलीकृत लग्न तथा कुर्याद्विचक्षण ॥६२॥
भावकस्य च शुद्धि च योग चैव करोत्यत ॥ नवभिश्च कलाशाद्यैस्तथैवोच्चादिभि ॥६३॥
एकाशोक्तिभिदा सति नयकाद्यशोधने ॥ येषां योगगते काने समातेषु सता पत ॥६४॥

मासज्ञान में प्रकारान्तर—लग्नराशि की क्या वर्ण द्वा जगह ग्यना। एवं ग्यना में स्ववर्ग में गुणा कर आरुद्ध छत्र में जा चलवान हो उमक वर्ग में गुणा करना पश्चान्न पश्चराशि विषम हो तो दूसरी जगह रम हूण में युक्त करना। सम हो तो हीन करना। १२ का भाग देना तो मास तथा ३० का भाग में दिन जाना है॥६०॥६१॥ अथवा पूर्वोक्त गीति के पश्चात् नव कलाशरीति में ९ का भाग में जहा अवमान हो वह लग्न जाना॥६२॥६४॥

राशिस्तु क्षलवान्स्यामिगुरन्तप्रेषणान्वित ॥ अन्ये पारैरत्पट्ट स्याच्छुभरत्पट्टा प्रयोजयत ॥६५॥
चद्रार्काचार्यशुभज्ञा पाद मित्रमकर्मणी ॥ पश्यति च भनि पूर्णमय धर्ममुती गुरु ॥६६॥
सर्वैर्धनधुमुत्तू च पूर्ण पश्यति भूमिज ॥ परे त्रिपाद पूर्ण च सर्वे पश्यति सप्तभम ॥६७॥

उच्चमूलसुहृत्स्वर्कस्वद्रेष्काणनवाशके ॥ स्थितस्य स्थानवीर्यं स्यात्कुजाकीं दशमे शनिः ॥६८॥
सप्तमे जगुरुः लग्ने चन्द्रशुक्रौ तु वेश्मनि ॥ दिग्वीर्यसंपुता एते नाज्यत्र प्रश्न कर्मणि ॥६९॥

लग्नबल जान-लग्न को गुरु, बुध पूर्णदृष्टि देखते हो तो बली किन्तु पापदृष्टि रहित हो ॥६५॥

ग्रहदृष्टि-सू० च० म० बु० गु० शु० ये ग्रह ३।१० वे भाव को १ पाद दृष्टि से और शनि पूर्णदृष्टि से देखता है। ९।५ को और सब २ पाद गुरु पूर्ण दृष्टि में तथा ४।८ को और सब ३ पाद, मंगल पूर्णदृष्टि से देखता है। सप्तमभाव को सभी ग्रह पूर्णदृष्टि से देखते हैं ॥६६॥६७॥

ग्रहों का स्थानादिबल-जो ग्रह स्वक्षेत्र, उच्च, मूलत्रिकोण मित्र अतिमित्र राशि का हो या स्वनवाश, स्वद्रेष्काण में हो तो स्थानबल से बली होता है। प्रश्नलग्न से १० भाव में सूर्य मंगल दिग्बली तथा ७ में शनि बली, प्रथम में बु० गु० बली ४ में च० शु० दिग् बल से बलवान् होते हैं। यह प्रश्न लग्न का ही बल विचारना, अन्य जातक में नहीं ॥६८॥६९॥

मृगादिराशिषट्कस्थानाश्चार्कजार्धार्धभावा ॥ बलवत् कुजाकीं तु कर्कटादिगती तथा ॥७०॥
पूर्वपक्षे शुभे कृष्णे पापस्तु बलिनस्तथा ॥ बह्विणो बलिनः खेटाश्रेष्ठाबलसमन्विता ॥७१॥
शुभा पापा दिवा रात्रौ बलिनः स्युः क्रमात्समृता ॥ निसर्गबलिनः प्राग्बदेव स्युः प्रश्नकर्मणि ॥७२॥
लग्नहोराद्रेष्काणार्कनवाशां सप्तमाराकः ॥ कलाशः कालहोरा च त्रिंशशः पट्टि-
भागकः ॥७३॥

अयन बल-मकरादि ६ राशि में सू० च० बु० गु० शु० अयनबली और कर्कादि ६ में म० श० अयन बली होते हैं ॥७०॥

पशवबल-शुक्लपक्ष में शुभग्रह बलवान् तथा कृष्णपक्ष में पापग्रह बलवान् होते हैं।
चेष्टाबल-बली ग्रह चेष्टाबली होता है। शुभग्रह दिवाबली और पापग्रह रात्रिबली होता है। निसर्ग बल पूर्ववत् जानना ॥७१॥७२॥

१० वर्ग बल-लग्न, होरा, द्रेष्काण, द्वादशांश, नवांश, सप्तांश, षोडशांश, कालहोरांश, त्रिंशांश पट्टयज्ञ में उत्तरोत्तर डीन बल है ॥७३॥

पूर्वपूर्वों बली प्रोक्तो न बली चोत्तरोत्तरः ॥ प्रश्नलग्न क्लीकृत्य नवघ्न भेदभाजितम् ॥७४॥
संघ नवांशक ज्ञेय शिष्टमात्मकसंस्थिते ॥ संघ सप्तगुण बेदभक्त शिष्टमिहाराकः ॥७५॥
नवांशसदृश लग्न यद्वा त्रिंशार्कभाजितम् ॥ सप्तान्तरशिष्ट लग्न च सप्तमे भासि निश्चिते ॥७६॥
सौम्ये तदेव कर्मैव जन्मैव वा भवेद्भूतम् ॥ इदं शास्त्रं मया प्रोक्तमाद्यन्तं त्वं भुवतः ॥७७॥
नाशिष्याय प्रदातव्यं नापुत्राय कदाचन ॥ गुणशोलपुतापैव शिष्यापैव द्विजातये ॥ दातव्यं तु
प्रमत्नेन वेदापमिदमुच्यते ॥७८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे प्रश्नप्रकरणे नामद्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

ज्योतिष शास्त्र संबंधी हमारे कुछ अन्य प्रकाशन

केरलीय प्रश्न रत्न-हिन्दी टीका सहित
 केरल तत्त्व प्रश्नसंग्रह-हिन्दी टीका सहित
 गर्ग मनोरमा-हिन्दी टीका सहित
 ग्रह लाघव-हिन्दी टीका सहित
 चमत्कार चिन्तामणि-हिन्दी टीका सहित
 चमत्कार ज्योतिष-हिन्दी टीका सहित
 जातकाभरण-हिन्दी टीका सहित
 ज्योतिषसागर-हिन्दी टीका सहित
 ज्योतिष श्याम संग्रह-चक्रोदाहरणयुक्त
 हिन्दी टीका सहित
 ज्योतिर्गणित कोमुदी-शुद्ध ग्रह गणित का
 अपूर्व ग्रन्थ
 प्रश्नवर्णय-हिन्दी टीका सहित
 प्रश्न ज्ञान प्रदीप-हिन्दी टीका सहित
 बालबोध ज्योतिष-हिन्दी टीका सहित
 बृहद्यवन जातक-हिन्दी टीका सहित
 भाव पुस्तुहल-हिन्दी टीका सहित
 भुवन दीपक-संस्कृत टीका व हिन्दी
 टीका सहित
 भृगु सूत्र-हिन्दी टीका सहित
 रमलरत्न-हिन्दी टीका सहित
 सामुद्रिक शास्त्र-हिन्दी टीका सहित
 रमल गुलजार भाषा
 वसन्तराजशाकुन्तल-संस्कृत व हिन्दी
 टीकासहित

ताजिक नीलकण्ठी-हिन्दी टीका सहित
 पञ्चमार्ग प्रदीपिका-हिन्दी टीका सहित
 प्रश्न चण्डेश्वर-संस्कृत व हिन्दी टीका
 सहित
 प्रश्न शिरोमणि-हिन्दी टीका सहित
 श्रीवेकटेश्वर शताब्दि पंचांग-विक्रम सम्वत्
 २००१ से २१०० तक पूरे एक सौ वर्ष का
 पंचांग एक ही जिल्द में। सम्पादक
 नवलगढ निवासी प० ईश्वरदत्तजी शर्मा
 बृहद् यवन जातक-हिन्दी टीका सहित
 बृहद्देवजरजन-मूल मात्र
 भविष्य फल भास्कर-हिन्दी टीका सहित
 मानसागरी-हिन्दी टीका सहित
 मुहूर्त चिन्तामणि-हिन्दी टीका सहित
 मुहूर्त प्रकाश-हिन्दी टीका सहित
 लीलावती-हिन्दी टीका सहित
 वर्णयोग समूह-हिन्दी टीका सहित
 वर्ष प्रबोध-हिन्दी टीका सहित
 वाराही (बृहत्) सहिता-हिन्दी
 टीका सहित
 विश्वकर्माप्रकाश-हिन्दी टीका सहित
 शम्भुहोरा प्रकाश-हिन्दी टीका सहित
 सर्वार्थ चिन्तामणि-हिन्दी टीका सहित
 समरसार-संस्कृत व हिन्दीटीकासहित

उक्त पुस्तकों के अलावा ज्योतिष व मंत्र, स्तोत्र वर्मकाण्ड, धर्मशास्त्र आदि विषयों के
 हमारे लगभग तीन हजार प्रकाशनों की विस्तृत जानकारी के लिये बृहत्सूचीपत्र मुफ्त मंगा
 देखिये।